Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

ed by Arya Samaj Foundation Chennai and eGa

BHARTI

1964

JAN-MAY

G. K. U.
HARIDWAR LIB.

n Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Ha

113531
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

२६ जनवरी
१९६४

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती

COMPILED

मूल्य : ३० न. पै.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

वर्ष ८ : अंक १०]

भारती

[२६ जनवरी १९६४

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

●

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

●

प्रकाशक :
. रामकृष्णन्

●

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

●

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

●

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

●

प्रति अंक : ३० न.पै.
वार्षिक : ६.५० न.पै.
अर्धवार्षिक: ३.५० न.पै

ऋग्वेद	: प्रार्थना	३
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	४
महिपति	: नाम संकीर्तन	७
श्री अरविन्द	: हमारी अभीप्सा	८
महात्मा गान्धी	: कला : मेरी दृष्टि में	१४
स्वामी नित्यबोधानन्द	: हमारा एकाकीपन : क्या वेदान्त उसे मिटा सकता है ?	१४
रमेशचन्द्र शाह	: अनाग्रह मौन	१७
एक परिचर्चा	: शिक्षा, जो हम भारत के लिए चाहते हैं	१८
वीरेन्द्रकुमार जैन	: ओ मेरी दूरान्तिनी प्रिया	२४
पियर लुई	: देमेत्रियोस का स्वप्न	२८
अनामिका	: चाँदनी	३३
—	: अयोध्या	३४
नरेशचन्द्र मिश्र	: ब्रह्म-वादन और साम-गायन	३८
श्याम मोहन दुबे	: सूर्योदय की प्रतीक्षा	४१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी ९ फरवरी के अंक में

- स्वप्नों और भविष्य-वाणियों का रहस्य : श्री माँ
- राजा अश्वद्वन : महर्षि टाल्स्टॉय
- अब आप धातु के सूट और कागज़ के कपड़े पहनेंगे : एन. डोरवील
- भारतीय संस्कृति की अमर ज्योति : डा. एस. राधाकृष्णन्
- पद्मिनी : लीलावती मुन्शी
- आप भी सोना बना सकते हैं : रस शास्त्र का पूर्व रंग : सी. डी. सोनवणे
- शिव का नटराज स्वरूप : अशोक महाजन
- भारत के भव्य मन्दिर : अयोध्या [सचित्र]

विष्णु प्रभाकर : मैं यहीं मरना चाहता हूँ ४२
डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय : नयी कविता में चित्रित मानव ४८
कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार ५५
डॉ. कैलाशनाथ मिश्र : सूक्ष्म शक्ति के चमत्कार और विज्ञान ६२

इस अंक के सज्जाकार :
सर्वश्री अमृता भारती, ज्योतीन्द्र जैन, पवन कुमार

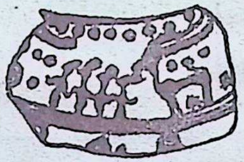

आवरण-चित्र :

आकर्षण

चित्रकार :

कमलाक्ष शेनॉय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

113531

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः ।

भारती

भवन की पत्रिका

आगामी विश्व विकास का सूचक :
जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

113531

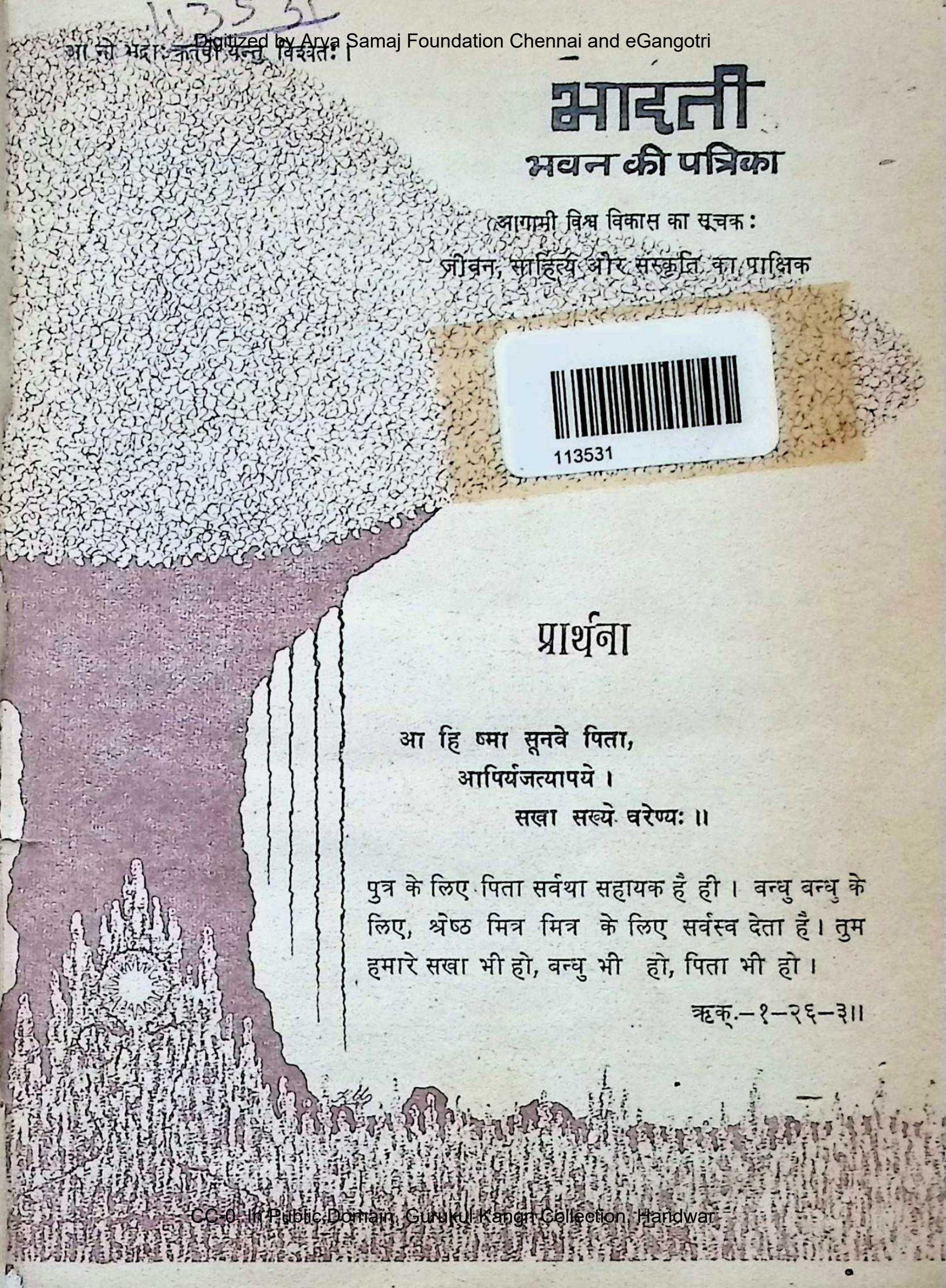

प्रार्थना

आ हि ष्मा सूनवे पिता,
आपिर्यजत्यापये ।
सखा सख्ये वरेण्यः ॥

पुत्र के लिए पिता सर्वथा सहायक है ही । बन्धु बन्धु के लिए, श्रेष्ठ मित्र मित्र के लिए सर्वस्व देता है । तुम हमारे सखा भी हो, बन्धु भी हो, पिता भी हो ।

ऋक्.–१–२६–३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

- प्राचीन चीनी परिवार और हमारी परिवार प्रणाली
- उनकी समानताएं और विषमताएं

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बंबई,
२६ जनवरी १९६४

मेरे युवा मित्र,

प्राचीन चीनी परिवार और हमारी परिवार-प्रणाली में इतना अधिक साम्य था कि यहाँ मैं केवल उनकी विषमताओं का ही वर्णन नहीं करूँगा, बल्कि यह भी दिखाना चाहूँगा कि किस प्रकार चीनी साम्यवादियों ने चीन में पुरानी परिवार-प्रथा को नष्ट भ्रष्ट कर व्यक्ति को तानाशाही के सिकंजों में जकड़ दिया है। व्यक्ति का जैसा सम्बन्ध राज्य से हो, उसी से उस राज्य का अनुमान लगाया जा सकता है।

एक जनतांत्रिक सरकार व्यक्तिगत विकास का पूरा अवसर देती है। उसके अधीन हम अपने परिवार, जाति तथा धर्म के प्रति निष्ठावान बने रह कर भी राष्ट्र के प्रति वफ़ादार रह सकते हैं। इसके प्रतिकूल तानाशाही राज्य अथवा पार्टी व्यक्ति की सम्पूर्ण निष्ठा की मांग करती है। व्यक्तिगत प्रगति राज्य द्वारा निर्धारित अवस्थाओं और लक़ीरों पर ही संभव है। ये दो पथ, समानान्तर रेखाओं की भांति, कभी आपस में मिल नहीं सकते।

चीन और भारत की पारिवारिक प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन करने से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है। साम्यवादी राज्य होने के पहले चीन की परिवार-प्रथा प्रायः चार हज़ार वर्षों तक अक्षुण्ण बनी रही। भारत में व्यक्तिगत विकास के लिए पूर्ण अवसर प्रदान करती हुई यह प्रथा युग-युग से विस्तृत होती गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर भी, ऊपरी तौर पर चीनी तथा स्वाधीनतापूर्व भारत की परिवार-प्रथा एक-सी ही दिखायी पड़ती है। दोनों ही जगह, विवाह सम्बन्ध दो परिवारों के बीच जन्मपत्री इत्यादि मिलाने पर हुए एक आपसी समझौते पर आधारित था। बहू, सास के अधिकार में रहती थी और बहुधा सतायी भी जाती थी। पुत्र पिता के अधिकार में रहता था।

दोनों ही जगह, पूरा परिवार कर्ता अथवा परिवार के मुखिया के अधीन एक ही घर में रहता था। संयुक्त परिवार की प्रथा के अनुसार परिवार का प्रत्येक सदस्य परिवार की संयुक्त आय का उपभोग करता था और रुपये-पैसे का सब प्रबंध परिवार के सबसे बड़े व्यक्ति के जिम्मे रहता था।

दोनों ही स्थानों पर एक वृहत् परिवार की व्यवस्था थी, जिसे चीन में ता-चिआ-तिंग और भारत में गोत्र कहा जाता था। परन्तु भारत में गोत्र का महत्त्व इतना भर रह गया था उसमें विवाह-सम्बन्ध नहीं होता था। चीन में पुत्र पर पिता का अधिकार भारत से कुछ अधिक था। प्राचीन रोम की भांति, हिन्दू क़ानून इस अधिकार को सैकड़ों वर्ष पूर्व से ही मान्यता नहीं देता आया है। चीनी महिलाएँ सम्पत्ति-अधिकार से प्रायः वंचित थीं। भारत में बहुत पुराने समय से ही स्त्रियाँ, स्त्री-धन की अधिकारिणी मानी जाती थीं।

पूर्वजों की पूजा की चीन में प्रधानता थी और धर्म का प्रमुख अंश भी वही था। भारत में पितृपूजा केवल औपचारिक रह गयी थी और धार्मिक पर्वों पर ही उसका विशेष महत्व था। चीन में परिवार के सदस्य की परिवार के प्रति एकनिष्ठ श्रद्धा थी। भारत में ऐसा नहीं था। यहाँ पर व्यक्ति का अपने परिवार के अतिरिक्त अपनी जाति, चातुर्वण्य तथा धर्म के प्रति भी धार्मिक तथा आध्यात्मिक कर्तव्य रहता था।

इसमें सामान्य धर्म का महत्व सर्वाधिक था, क्योंकि हिन्दू धर्म का मौलिक दर्शन मनुष्य को ईश्वर का अंश बताता है और इसलिए व्यक्ति का सर्वोच्य कर्तव्य जन्म-मरण के बंधन से छूटने के लिए आत्म-नियंत्रण अथवा नैतिक और आध्यात्मिक तपस्या द्वारा परिपूर्णता प्राप्त करना था। यह सही है कि देश के सर्वोच्च संवेदनशील व्यक्ति ही इस सिद्धान्त से प्रभावित थे, परन्तु स्वयं उनका प्रभाव समाज पर इतना था कि प्रत्येक व्यक्ति आध्यात्मिक गौरव का अनुभव करता था।

चीनी परिवार की प्ररचना साम्यवादियों के प्रभुत्व प्राप्त करने के पूर्व अक्षुण्ण बनी रही। भारत में समय-समय पर धर्मशास्त्रों और रिवाजों के अनुसार उसमें परिवर्तन होते रहे, ताकि बदलती हुई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिस्थितियों में व्यक्ति को विकास का पूर्ण अवसर मिलें।

चीन में जब साम्यवाद आया, तो उसे अपना सबसे बड़ा शत्रु यही पारिवारिक प्रथा लगी। उसने पत्नी को पति से विलग किया, बच्चों को अपने माता-पिता से दूर किया। पारिवारिक नैतिकता के प्रति अविराम प्रचार किया गया। युवकों को वृद्धों की अवहेलना करना सिखाया गया। परिवार का अनुशासन बुरा बताया जाने लगा। भाइयों को भाइयों के खिलाफ किया गया। बच्चों को अपने माता-पिता की और सम्बंधियों को अपने सम्बंधियों की शिकायत करने को कहा गया। विवाह के क़ानून एकाएक बदल दिये गये। पितृ-पूजा बन्द कर दी गयी और जब पूर्वजों के प्रति सम्मान हट गया तो, चीनी धर्म का आधार ही खिसक गया।

परिवार के सदस्य भ्रांत हो कर तथा अपनी निष्ठा का पात्र किसी को न पाकर पार्टी अथवा राज्य का नियन्त्रण स्वीकार कर बैठे। पार्टी के अधिकारी ही पितृ-स्थान पर आसीन हो गये, यहाँ तक कि शादियों की व्यवस्था भी वे करने लगे। कहीं-कहीं तो जिन व्यक्तियों को ये शादियाँ स्वीकार नहीं थीं, वे आत्महत्या करने पर मजबूर हुए।

भारत में जो-कुछ हुआ, वह उससे सर्वथा भिन्न था। राष्ट्रीय जागरण के समय मातृभूमि की पूजा धर्म का अविच्छिन्न अंग बन गयी और राष्ट्र के प्रति निष्ठा में अन्य निष्ठाओं का समावेश भी हो गया। इसके फलस्वरूप, स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारत में सामाजिक प्ररचना का शनैः-शनैः आधुनिकरण प्राकृतिक विकास के रूप में हुआ। अपने परिवार के प्रति व्यक्ति की निष्ठा बनी रही। शादियाँ, कम से कम पढ़े-लिखे लोगों में तो, अपनी पसन्द से ही की जाने लगीं। जातियों का बंधन धीरे-धीरे ढीला पड़ता जा रहा है, फिर भी सामूहिक सुरक्षा की भावना जो एक विशाल परिवार या एक जाति अथवा एक गोत्र का सदस्य होने से मिलती है, वह अब भी है। राज्य का अपना कोई धर्म नहीं है, परन्तु चीन की तरह वह अधार्मिक भी नहीं है। वह सभी धर्मों का समान रूप से आदर करता है, जिसके परिणामस्वरूप धार्मिक संगठनों का विकास हुआ है। इन जातिगत निष्ठाओं से राष्ट्र के प्रति निष्ठा में कोई कमी नहीं आती, बल्कि वह और मज़बूत होती है।

इस प्रकार, जैसा कि मैंने कहा, तानाशाही और जनतंत्र प्रणाली के ये दो मार्ग एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। और, हमने राष्ट्रीय निष्ठा के अन्तर्गत स्वाधीनता के माध्यम से व्यक्तिगत पूर्णत्व प्राप्त करने का मार्ग चुना है।

आपका

कन्हैयालाल मुन्शी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम संकीर्तन

साईं अलख पलख में झलके, लहलहाट बिजली चमके ।

मन गरक़ हुआ, मन गरक़,
गुरु साईंनाथ आज पाया, मुझ पकड़ दस्त बैठाया,
दो अच्छर बीज पढ़ाया, मेरे सिर पर हाथ चढ़ाया ।
अब तू सच्चा गुरु का बच्चा, देख परीच्छा,
छइ बदन जुगुल से जखड़,
मत डर जोर से पकड़,
जो आवे उसे दे छकड़,
आगे पीछे मोर की पाँखें, लहलहाट बिजली चमके ।

नीचे धरनि ऊपर असमाना, दोऊ छोड़ बीच में जाना,
चल सरक आगे चल सरक,
प्यारे, उलट पुलट से चलना, साहब से जुगुत से मिलना
भृकुटी ऊपर, त्रिकुटी शीखर, ध्यान लगाकर,
खब देख नजर से अभी,
रज सोना बिखरा सभी,
मल माया की जो छबी,
छोड़ माया स्वरूप परखे, लहलहाट बिजली चमके ।

—महिपति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री अरविन्द

हमारी अभीप्सा

इसके लिए जिस चीज़ की आवश्यकता है, वह है आध्यात्मिक नव जन्म अर्थात् आन्तरिक परिवर्तन, आत्मा का शुद्धीकरण, द्वन्द्व और कामना से मुक्ति, हमारे मानवीय अहं भाव का उसी तरह उसके पूर्ण व्यक्तित्व के सनातन सत्य में रूपान्तर, जिस तरह हमारे मन का अति में रूपान्तर !

हम अपने तीस करोड़ बहन-भाइयों तक फिर से आत्मा का ज्ञान पहुँचाना, उनके हृदयों में सोये हुए देवत्व को जगाना, उन्हें महान, समृद्धि और शक्तिशाली होने में सहायता देना, उनके लिए शिक्षा, ज्ञान और संस्कृति का दरवाज़ा खोलना, उन्हें विज्ञान के सत्यों और उनके व्यवहारों को सिखाना, उन्हें कला का सौन्दर्य और महत्त्व दिखाना तथा जीवन में संगठन के उपयोग और आत्मा के मिलन के मूल्य का अनुभव कराना चाहते हैं।

अपने समूचे समाज को हम एकता, प्रेम और भ्रातृत्व के नये आधार पर फिर से संगठित करना और अन्त में उन भगवान का आदर्श वाहन बनाना चाहते हैं, जिनका दूसरा नाम है ज्योति, जीवन, शान्ति और अमरत्व, जिसमें कि यह (समाज) पृथ्वी पर भी वैसा ही हो, जैसा कि वह स्वर्ग में है।

इसके लिए जिस चीज की आवश्यकता है, वह है आध्यात्मिक नवजन्म, अर्थात् आन्तरिक परिवर्तन, आत्मा का शुद्धीकरण, द्वन्द्व और कामना से मुक्ति, हमारे मानवीय अहंभाव का उसी तरह उसके पूर्ण व्यक्तित्व के सनातन सत्य में रूपान्तर, जिस तरह हमारे मन का अति मन में रूपान्तर।

हमारे जीवन के प्रत्येक अंग को इस महान परिवर्तन में भाग लेना चाहिए, हमारी सत्ता के सभी भागों को शरीर, प्राण, मन, हृदय और बुद्धि को उनकी सच्ची और समुचित संसिद्धि प्राप्त होनी चाहिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा उन्हें शक्ति और परिपूर्णता के उच्चतम शिखर पर उठा ले जाना चाहिए। आन्तरिक व्यक्तित्व और यंत्र-रूप प्रकृति दोनों का ही पूर्ण रूपान्तर साधित होना चाहिए।

इसके लिए फिर आवश्यक है, सामाजिक नव-जन्म। एक सर्वव्यापी परिवर्तन होना चाहिए, एक नयी सामाजिक व्यवस्था उत्पन्न होनी चाहिए, धनी और मजूर, ब्राह्मण और शूद्र के बीच की सभी प्राचीन, अन्यायपूर्ण दीवालें और विभेद दूर हो जाने चाहिए, सब को समान पद-प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए, सबकी आत्मोन्नति और आत्माभिव्यक्ति के लिए एक समान सुविधा, सुयोग और सुअवसर प्राप्त होना चाहिए। अब दासत्व और प्रभुत्व के लिए सनातन सेवक और सनातन सेव्य के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए—सब के अन्दर एक ही भगवान निवास करता है, जो प्रत्येक के भीतर से अपनी अलग-अलग पर, मर्यादा युक्त अभिव्यक्ति करना चाहता है। संस्कृति को सार्वजनीन बनाना, विभिन्न हितों का सहयोग, श्रम की एक समान प्रतिष्ठा और विभाजन—ये तीन उपाय हैं, जिनसे एक नयी समाज-व्यवस्था लायी जा सकती है। इसका मुख्य मंत्र होगा, प्रत्येक व्यक्ति और सम्पूर्ण समाज की सतत उन्नति, इसकी अभीप्सा की धुरी और केन्द्र होगा, सत्य और इसकी चालक शक्ति तथा इसे धारण करने वाला जीवनानन्द होगा, सामंजस्य और प्रेम। इसके चार अमर पथ-प्रदर्शक तत्व होंगे— ज्ञान, शक्ति, स्वतंत्रता और एकता।

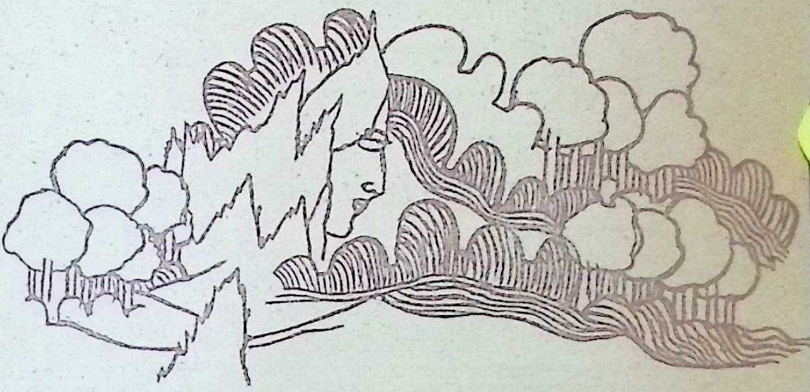
चित्र : अमृता भारती

इसके साथ ही साथ आवश्यक है राष्ट्रीय और जातीय पुनर्जन्म।

हम अपने राष्ट्र को बनायेंगे स्वतंत्र, महान, मनुष्य जाति की स्वतंत्रता और महानता का स्तम्भ, नवीन युग और नवीन राष्ट्रों का नवजात सन्देश वाहक—उसे ऐसा बनाना होगा कि वह राष्ट्र के रूप में इस आदर्श को जीवन में उतारे, जिसमें कि यह आदर्श मनुष्य जाति के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन में उतरने और अभिव्यक्त होने में समर्थ हो।

हमें भारत को फिर से ऐसा गढ़ना होगा, जिसमें वह मनुष्य-जाति के सामने सत्य, स्वातंत्र्य और सिद्धि का अग्रदूत बन सके—भविष्य की एक जाति बन सके, जो विभिन्न जातियों के नवीन भविष्य को उद्घोषित करे।

हम मनुष्य और जातियों की भगवत्ता में सदा-सर्वदा विश्वास करते रहे हैं।

हम सत्य के विधान में विश्वास रखते आ रहे हैं और उसे ही सृष्टिकारिणी भागवत-चेतना का विधान मानते आ रहे हैं। अब उसी की भावना और शक्ति के द्वारा हम अपने क्रम-विकास का फिर से संशोधन और संगठन करेंगे।

हम नये सिरे से अपनी राजनीति का निर्माण करेंगे, जो कि राष्ट्र का संघर्ष-कारी धर्म है; हम नये रूप में नीति और सदाचार का निर्माण करेंगे, जो कि मानव समाज का प्रयास-लब्ध धर्म है, हम सभ्यता का नवनिर्माण कर उसे सत्य की शक्ति और अभिव्यक्ति बना देंगे, जो कि सबके लिए और सब धर्मों का धर्म है।

हमारे सामने भगवान ने जो महान समीकरण हल करने के लिए रखा है, उसके चार पद हैं— मनुष्य, मनुष्य जाति, दिव्य जीवन और दिव्य सत्य। हम सब लोगों को इसे हल करना ही होगा। और एक मात्र सत्य-ज्ञान के द्वारा ही, कर्म में मुक्त हुए अतिमानस के द्वारा ही यथार्थ और पूर्ण, सं ेषकारी और सर्वांग-पूर्ण समाधान प्राप्त और संसिद्ध किया जा सकता है।

*

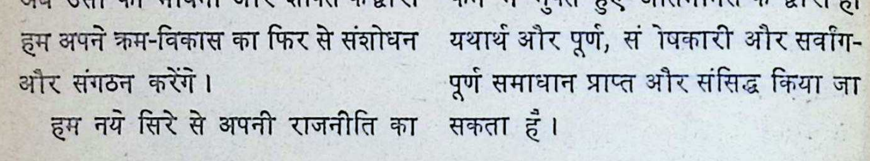

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

सोल एजेन्ट्स :
दी युनायटेड कन्सर्न
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास—१

बम्बई—शाखा—२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"माँ, मेरी कितनी अच्छी माँ!

उस दिन पूरा परिवार हर्ष से फूला नहीं समाता था जिस दिन घर में रेडियोग्राम आया। सभी का मन चाहता था कि रेडियोग्राम आये, परन्तु पूरी क़ीमत चुकाने के लिए पिताजी के पास पैसों की कुछ कमी पड़ती थी। लेकिन माँ ने मौक़े को साध लिया। जितने पैसों की ज़रूरत थी उन्होंने पूरे कर दिये। पहले तो माँ ने छुपाया कि पैसे कहाँ से आये पर बाद में भेद खोल दिया। उन्होंने बताया कि वे घर-खर्च में से बचाया हुआ पैसा छुपा-छुपा कर देना बैंक के सेविंग्ज़ एकाउण्ट में जमा करती रहती थीं। परमात्मा उन्हें सुखी रखे। माँ हो तो ऐसी हो। जब पूरे परिवार ने उनकी तारीफ़ की तो उनकी खुशी का ठिकाना न रहा।

इस योजना के अधीन, हर महिला लाभपूर्ण ढंग से पैसे बचा सकती है।

✽ सेविंग्ज़ एकाउण्ट पर ब्याज ३%
साल में १०० चेक तक भुनाये जा सकते हैं

देना बैंक
देवकरण नानजी बैंकिंग कं. लिमिटेड

रजिस्टर्ड ऑफ़िस : देवकरण नानजी बिल्डिंग्स,
१७, हॉर्निमेन सर्कल, फोर्ट, बम्बई – १

१२५ से भी अधिक आफिस तथा ४० सेफ डिपोजिट वाल्ट। आम बैंकिङ्ग तथा विदेशी मुद्रा विनिमय का व्यवसाय संतोषजनक रीति से होता है।

प्रवीनचन्द्र वी. गांधी, मैनेजिंग डायरेक्टर

DB/SH/19A

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

मुझे सुन्दरता का बोध सत्य में या सत्य के द्वारा होता है। सभी सत्यों में महान सुन्दरता है। जब आदमी सत्य में सुन्दरता के दर्शन करेगा, तभी वास्तविक कला का जन्म होगा।

महात्मा गान्धी

कला : मेरी दृष्टि में

मेरी दृष्टि से कला, यदि वास्तव में उसमें महानता पैदा करनी है, नैसर्गिक सौन्दर्य की तरह अपनी अभिव्यक्ति में सार्वभौमिक होनी चाहिए। प्रकृति की भाषा की तरह उसे अपने प्रदर्शन में सरल और भाव में प्रत्यक्ष होना चाहिए।

जब मैं सूर्यास्त के चमत्कार और चन्द्रमा की सुन्दरता पर विचार करता हूँ, तो मेरा हृदय इनके सृजनकर्त्ता के प्रति भक्ति से भर जाता है। मैं उसका और सारी सृष्टि पर की गयी उसकी दया के साक्षात्कार का प्रयत्न करता हूँ। किन्तु सूर्योदय और सूर्यास्त भी मेरे लिए विघ्न-स्वरूप ही होंगे, यदि वे उस नियन्ता से साक्षात्कार करने में मेरी सहायता नहीं करते।

कोई भी चीज़ जो हमारी आत्मा की मुक्ति के प्रयत्न में बाधक है, मोह और भ्रम को पैदा करने वाली और हमें फन्दे में जकड़ने वाली है, यहाँ तक कि शरीर का मोह भी, जो मुक्ति के रास्ते में प्रायः बाधा पहुँचाता है, ठीक नहीं है।

ज्ञान, संस्कृति और सभ्यता की पूर्णता, "कला, कला के लिए है" कह देने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं आ सकती, क्योंकि यह मनुष्य के हृदय में कभी भी गहरी जड़ें नहीं बैठा सकती और जल्दी ही वह इसे भुला देता है। इसका निश्चित और स्थायी प्रभाव तभी संभव है, जब यह जीवन का नैतिक प्रतिनिधित्व भी करे।

केवल कला से किसी विशिष्ट कलात्मकता की उत्पत्ति कभी नहीं हुई है। दूसरे शब्दों में, यह आवश्यक नहीं है कि यदि किसी चीज़ के पीछे कोरी बौद्धिकता हो, तो वह हर हालत में युक्तियुक्त होगी। किसी भी महान ललितकला की उन्नति के पीछे ठोस नैतिक उद्देश्य का होना आवश्यक है।

'कला, कला के लिए है' का सिद्धान्त बहुत अच्छा सिद्धान्त है, यदि इसका अर्थ यह है कि पृथ्वी और पेड़ में बहुत भिन्नता है, जबकि पेड़ अपनी जड़ें पृथ्वी में ही रखता है। किन्तु यह सिद्धान्त तब बिलकुल बकार होगा यदि इसका अर्थ यह हो कि पेड़ तब भी ठीक तरह से बढ़ सकता था, यदि उसकी जड़ें हवा में होतीं।

'कला, कला के लिए है'– इस सूत्र से प्रायः हानिकर परिणामों की उत्पत्ति होती रही है। इस तरह के परिणामों का सबंध हम इस सिद्धान्त से नहीं जोड़ना है, जिसमें कहा गया है कि कला मानवीय जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है, बल्कि इन्हें हम उस सिद्धान्त से जोड़ सकते हैं, जिसमें कहा गया है कि कला का उद्देश्य कला तक ही सीमित है। यह बाद का सिद्धान्त, जो मेरी दृष्टि में बिलकुल निरर्थक है, पहले सिद्धान्त से सर्वथा भिन्न है।

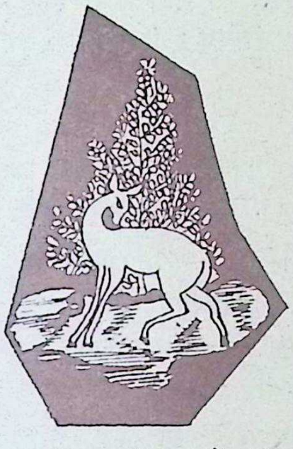

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

वह व्यक्ति, जिसने अपनी आत्मा को तलाक़ दे दिया है, कभी भी महान कलाकार नहीं बन सकता। आत्महीन और निरन्तर तपस्यायुक्त जीवन के बिना कला का क्या महत्व रह जाता है। यह आत्मप्रशंसा और आडम्बर की दृष्टि से बहुत उपदेश–भरी हो सकती है, लेकिन इस आडम्बर से भरी कला में, कला–तत्व कितना होगा और इस कला का क्या मूल्य होगा, जो जीवन में विवेकहीनता की उत्पत्ति करे और उसके विकास और उन्नति में बाधक बने? क्या इस बात का दावा एक विलक्षण बात नहीं है, जैसाकि बहुत से कलाकार करते हैं कि कला जीवन के शीर्ष पर स्थित है?

मुझे सुन्दरता का बोध सत्य में या

[शेष पृष्ठ ६५ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी नित्यबोधानन्द

हमारा एकाकीपन : क्या वेदान्त उसे मिटा सकता है ?

प्रेम और सृजनशीलता की प्रत्येक मनुष्य को आवश्यकता है। जब हम जीवन के प्रति प्रेम का अभाव अनुभव करते हैं, उसमें रुचि नहीं ले पाते, तभी स्वयं को एकाकी अनुभव करते हैं और इसीलिए दुखी अथवा भयभीत होते हैं।

विज्ञान ने इन दिनों हमारे एकाकीपन को दूर करने के लिए ऐसे बहुत से उपकरण हमें उपलब्ध करा दिये हैं, जो हमारे खाली समय में हमारे मन को बहलाते हैं; उदाहरणस्वरूप, सिनेमा, रेडियो, टेलिविज़न, इत्यादि। आप ने ऐसे व्यक्तियों को भी देखा होगा, जो पहाड़ियों पर या एकान्त स्थलों पर भी अपने कंधों से रेडियो लटकाये फिरते हैं और उन एकान्त स्थलों की शांति भंग करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को हम आधुनिक सभ्यता की देन कह सकते हैं। ये लोग अकेले रहने से और इसीलिए स्वयं अपने से ही भय खाते हैं। परन्तु, जिन भौतिक उपकरणों से वे अपना एकाकीपन दूर करना चाहते हैं, क्या उससे वे लाभान्वित होते हैं ? नहीं; क्योंकि उन पर वे अधिकाधिक निर्भर करने लगते हैं और फिर भी उनके मन को संतोष नहीं मिलता, शांति तो बड़ी दूर की वस्तु है। इसका अर्थ यही हुआ कि उनकी यह व्याधि भौतिक नहीं, आध्यात्मिक है और आध्यात्मिक उपायों द्वारा ही दूर की जा सकती है।

एकाकीपन केवल संतों के लिए ही पीड़ा जनक नहीं होता, क्योंकि वे उसके आध्यात्मिक वैभव से परिचित होते हैं और अपनी इच्छा से उसे चुनते हैं। वस्तुतः संत अथवा आध्यात्मवादी कभी एकाकी होता ही नहीं, क्योंकि सारे संसार को वह अपने हृदय में स्थान देता है और जंगल अथवा पहाड़ पर रहते हुए भी वह उसके लिए चिन्तनशील रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महानता की भांति एकाकीपन भी कुछ को जन्मजात मिलता है, कुछ उसे प्राप्त करते हैं और कुछ पर वह लादा जाता है। जो जन्म से एकाकी हैं, वे संतों की कोटि में आते हैं। वे जानते हैं कि आत्मा में ही सब कुछ निहित है और उसे किसी बाहरी वस्तु की आवश्यकता नहीं। दूसरों को भी वे आत्मवत् ही मानते हैं, इसलिए एकाकीपन उनके लिए आनन्द और सृजन शीलता का ही विषय रहता है।

जो लोग एकाकीपन प्राप्त करते हैं, वे कलाकार अथवा अपने विषय में सदा लीन रहने वाले विचारक और वज्ञानिक होते हैं। उन्हें अपनी रुचि के कार्य में ही सदा आनन्द मिलता है और बाहरी उपकरणों की उन्हें आवश्यकता नहीं रहती।

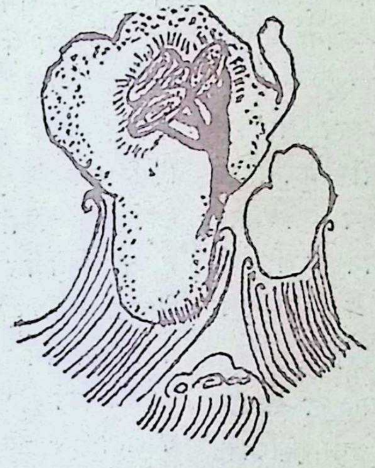

तीसरे दर्जे के लोग, जिन पर एकाकीपन लादा जाता है, वे हैं जो परिस्थितिवश या बुढ़ापे के कारण एकाकी रहने को मजबूर हैं। इनमें निराशावादियों और लोगों से बचने की प्रवृत्ति जिनमें रहती है, उनका भी समावेश हो जाता है। वृद्ध सभी एकाकी नहीं रहते। बहुत से वृद्ध अपनी रुचि के नय विषय ढूंढ़ लेते हैं और जीवन के प्रति अपना प्रेम बनाये रखते हैं। जिन्हें परिस्थिति अकेले रहने पर मजबूर करती है, उनमें से भी कई रचनात्मक प्रवृत्तियों में लग कर अपना दुख भूल जाते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि वस्तुतः एकाकी वही लोग हैं, जो किसी रचनात्मक प्रवृत्ति अथवा प्रेम के योग्य स्वयं को नहीं पाते। यही लोग दुखी रहते हैं, क्योंकि ज़िन्दगी के लिए उनमें कोई प्यार शेष नहीं रहता।

यह दुख मूलतः दो कारणों से होता हैः एक तो इसलिए कि हम नहीं जानते कि वास्तव में हम कौन हैं, और दूसरा इसलिए कि अपने विनाश से हम भयभीत रहते हैं, यह भय भी अपने को न जानने के फलस्वरूप ही है। हमारे भौतिक विनाश अथवा मृत्यु की स्मृति हम आदि काल से ही अपने अचेतन मन में ढोते आये हैं। इससे बचने का एक ही उपाय है कि हम जान लें कि वस्तुतः हम जन्म और मृत्यु दोनों तथा उससे भी अधिक कुछ हैं।

मैं यह नहीं कहता कि अपनी मृत्यु की स्मृति ही एक मात्र इस दुख का कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। यह तो अनेक कारणों में से एक है। इस अचेतन स्मृति के साथ यह भी भय संलग्न है कि मैं अपने किसी प्रयास में सफल नहीं हो सकूँगा, अथवा अपना जीवन मैंने ग़लत ढंग से बिताया है, इत्यादि। मृत्यु की अचेतन स्मृति से जैसे यह दुख प्रकट होता है, उसी प्रकार एकाकीपन हमारे एकाकी होने की अचेतन स्मृति से प्रकट होता है। हम अकेले ही इस संसार में आये हैं और अकेले ही यहाँ से जायेंगे। परन्तु हमें याद रखना चाहिए कि हम अकेले तो अवश्य यहाँ आये हैं, परन्तु एक आध्यात्मिक तत्व भी हमें प्राप्त है, जो प्रेममय और सृजनात्मक है। हम एक आत्मा को साथ लेकर आये हैं, जो संपूर्ण और आत्मनिर्भर है और जो अपने-आप में सूक्ष्म रूप से मित्रों तथा सभी प्रिय वस्तुओं से परिपूर्ण हैं।

जब हम अपने इस सनातन साथी—आत्मा से विलग होते हैं, तभी एकाकीपन का अनुभव करते हैं। आत्मा में प्रेम करने की शक्ति निहित रहती है और जब प्रेम की अचेतन स्मृति से हम दूर होते हैं, तभी अकेले या खाली महसूस करते हैं। यही कष्ट का कारण बनता है। किसी संत या अध्यात्मवादी को देखिए। अकेले रहते हुए भी वह आनन्द, प्रेम और सृजनशीलता से परिपूर्ण रहता है। इसमें भी इसी आत्मा का वास है। क्या हमारे सबसे पूर्ण और आनन्द के क्षण एकाकी नहीं होते?

जैसा कि मैं कह चुका हूँ, हम इस संसार में आत्मनिर्भर और पूर्ण आत्मतत्व लेकर आये हैं और वह अचेचन स्मृति के रूप में हम में सदा वर्तमान रहता है। अचेतन स्मृति चेतना के स्तर पर आये बिना ही हमारे कार्यों को प्रेरित करती है। उदाहरण के तौर पर, प्रेम अथवा प्रेम करने की हमारी क्षमता हममें एक अचेतन स्मृति के रूप में है। प्रेम के कार्य, प्रेम की अभिव्यक्ति का आधार जब हमारी अचेतन स्मृति में होता है, तो वह बिना किसी प्रयास के होता है। परन्तु जब हमारे कार्य इस आधार से सम्पर्क खो बैठते हैं, तब यही प्रेम आक्रमक और बदले की भावना लिये हो जाता है। सहज और प्रयासहीन प्रेम उस आध्यात्मिक एकाकीपन का कार्य है, जिसे लेकर हम इस दुनिया में आये हैं। सृजन शक्ति इसका दूसरा गुण है।

यहाँ प्रेम का अर्थ उसके साधारण मानी में नहीं है। मैं इसे प्रेम करने की क्षमता, सृजन करने की शक्ति कहना अधिक पसंद करूँगा, जो बदले में कुछ चाहने की इच्छा के बिना हो। यदि मैं किसी को प्यार करता हूँ और उसका प्रतिदान मुझे नहीं मिलता, तो मेरा प्रेम

[शेष पृष्ठ ६६ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

रमेशचन्द्र शाह

अनाग्रह मौन

ओ अनाग्रह मौन !
नभ की नीलिमा में स्तब्ध ज्योतिर्मेघ !
अचंचल, अर्थस्रावी बोध, !....
सजग ओ स्वप्न-उन्मेष्टा !.....
प्रलय जड़ भीतियों के !.....
उमड़ कर आज ओ अस्तित्व-आप्लावी
बहा दो रे....बहा दो आज
सारे शब्द
सारे अर्थ
सारे प्रश्न हाथों से छिटक कर छूट जाने दो
अनुत्तर और उत्तर भी सभी को टूट जाने दो
बहा दो रे सभी : कर दो
अतन यह तन
गगन का आयतन यह मन
घटाओं सा उठाओ औ उमड़ने दो
हवाओं में घुलादो या घुमड़ने दो
लगा दो पंख—आँगन-द्वार-पेड़ों में चहकने दो
उड़ा दो या दिशाओं में बयारों संग बहकने दो
बना दो रे अकिंचन
आज सारे संचयों के ढूह छितरा दो
बहा दो रे— बहा दो
आज सारे परिचयों के व्यूह बिखरा दो
ढहा दो ओ अनाग्रह
आज सारे आग्रहों–आक्रान्तियों के पल ढहा दो रे
छुड़ा दो रे – मुझे मुझसे छुड़ा सबसे जुड़ा दो रे
'अभी' से गत-अनागत का
सभी निःशेष छा दो रे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- रवीन्द्रनाथ ठाकुर
- श्री अरविन्द
- स्वामी विवेकानन्द

शिक्षा जो हम भारत के

शिक्षा का अर्थ सूचनाओं का पुंज नहीं है, जो आप के दिमाग़ में खलबली मचाने के लिए और आप का सारा जीवन अपरिपक्व बनाने के लिए रख दिया जाये। हमें अपने विचारों को जीवन निर्माण, चरित्र निर्माण और मानवता के गुणों से एकात्म करना चाहिए। यदि आप ने सुन्दर विचारों से अपना जीवन और चरित्र गठित किया है, तो आप की शिक्षा सार्थक है और आप उनसे ज़्यादा शिक्षित हैं, जो तमाम पुस्तकालय चाटने के बाद भी इन गुणों का विकास नहीं कर पाते।

अपनी आँखें खोलिए और देखिए कि उस भारत देश में, जो अपनी सम्पन्नता के लिए लोक-प्रसिद्ध था, किस तरह लोग भोजन बिना भूख से चिल्ला रहे हैं। क्या आप की शिक्षा इसकी पूर्त्ति करेगी? वह शिक्षा, जो सर्व सामान्य-जनों को उन उपकरणों से सज्जित नहीं करतीं, जो उसे जीवन से संघर्ष करना सिखायें, जो चरित्र का गठन नहीं करती, विश्वप्रेम की प्रेरणा और सिंह जैसी वीरता, साहस प्रदान नहीं करती, क्या अपना नाम सार्थक करती है?

हम वह शिक्षा चाहते हैं, जिससे चरित्र का निर्माण होता है, विचार शक्ति मज़बूत होती है, विवेक जागृत होता है और प्रत्येक में अपने पांवों पर खड़े होने की योग्यता आ जाती है।

हमें ऐसे अध्ययन की आवश्यकता है, जो विदेशी पंजे से मुक्त हो और जिसमें हम अपनी ज्ञान संचित प्राचीन पुस्तकें पढ़ सकें। इसके साथ ही अंग्रेजी भाषा और पश्चिमी विज्ञान का अध्ययन भी आवश्यक है। हमें अपने उद्योगों के विकास के लिए टैक्निकल और तत्संबंधी शिक्षा की ज़रूरत है, ताकि हम नौकरी के लिए मुंह ताकते न फिरें और अपना भरण-पोषण स्वयं कर सकें। सारे शिक्षण और प्रशिक्षण का उद्देश्य मानव जीवन-निर्माण होना चाहिए। शिक्षा का लक्ष्य, मनुष्य जाति का विकास करना होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा देश लोहे की पेशियाँ, फौलाद के स्नायु और प्रचंड इच्छा-शक्ति चाहता है।

लिए चाहते हैं

[एक परिचर्चा]

चाहिए। ऐसा प्रशिक्षण ही, जिसमें हम अपने मन और प्रकृति पर नियंत्रण पा सकें और जो हमारे जीवन के लिए फलदायक हो, वास्तविक शिक्षा है।

आज हमें अपने देश में लोहे की मांसपेशियाँ और इस्पात-सदृश्य नसों की आवश्यकता है। हमारी इच्छा-शक्ति इतनी प्रबल होनी चाहिए, जिसे रोकने का साहस किसी में न हो, जो विश्व के रहस्यों को भेद दे और अपनी सिद्धियों को मूर्त्त रूप दे सके। चाहे इसके लिए हमें समुद्र-तल में जाना पड़े या मृत्यु से भिड़ना पड़े। **हमारा धर्म मनुष्य-निर्माण के लिए हो। हमारे सिद्धान्त मनुष्य-निर्माण के लिए हों। और हमारी शिक्षा मनुष्य-निर्माण के लिए हो।**

—स्वामी विवेकानन्द

वर्त्तमान युग में शिक्षा को काल के परिवर्तनों के अनुरूप होना चाहिए। राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के भक्त शिक्षा के द्वारा बहुत सी काल्पनिक मान्यताओं को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोषमुक्त करके आत्मोन्नति के मार्ग को विकसित करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। उद्दण्ड और अहंकार-जनित राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की नीति से हमें अपने आप को किस प्रकार मुक्त करना है, यही आज का मूलपाठ है, जो हमें पढ़ना है।

कल का इतिहास अन्तर्राष्ट्रीय एकता और स्वतन्त्रता का इतिहास होगा और हम अपने को उसके लिए अयोग्य पायेंगे, यदि हम उन आदतों, मान्यताओं और बंधनों से चिपटे रहते हैं, जो विश्व एकात्म के विचार के विरोधी हैं।

"वह आदमी, जिसने मानव एकता को समझा है और अपने-आप को समस्त विश्व से एकात्म कर लिया है, अज्ञान और दुख के अंधेरे से मुक्त हो गया है।" हम समुद्र-पारीय लोगों को शान्ति-शान्ति चिल्लाते सुनते हैं। हमें उनको बता देना चाहिए, शान्ति का निवास सुख-समृद्धि में होता है और सुख-समृद्धि तभी हो सकती है, जब एकता हो। हमें उन्हें अपने प्राचीन ऋषियों का वह संदेश पहुँचा देना चाहिए, जिसमें कहा गया है कि केवल 'एक और अविभाज्य' ही शान्तिदायक और सनातन होता है।

नवयुग के प्रभात का आरम्भ हो चुका है और इसका अभिनन्दन करने के लिए हमें अपने दिल-दिमाग़ों से प्राचीन-युग का कूड़ा-करकट साफ करना होगा, जैसाकि पश्चिम वासियों ने प्रारम्भ कर दिया है। मुझे यह अनुभव करते लज्जा आती है कि हम अब भी उन प्राचीन रूढ़ियों से चिपटे हैं और उन्हीं से नवयुग का स्वागत करने की सोचते हैं। मैंने यह इसलिए कहा, क्योंकि मैं जानता हूँ कि अब भी ज़्यादातर भारतवासी इस पर राष्ट्रीय अभिमान प्रकट करते हैं। एकता और अविच्छिन्नता का विचार भारत की देन है, तब नवयुग का अभिनन्दन करते हुए कैसे हम उसे अपने मस्तिष्क से दूर कर सकते हैं।

दुर्भाग्यवश हमारे सरकारी स्कूलों और कॉलेजों की शिक्षा में भारतीयता का अंश बहुत कम है और ऐसा प्रतीत होता है, मानो सारी शिक्षा पश्चिम से उधार ली हुई हो। वास्तव में इसके लिए भारतीय शिक्षण संस्थानों को क्षमा मांगनी चाहिए, क्योंकि जब तक वे इस भीख में मांगी शिक्षा पर आधारित रहेंगे, तब तक इनसे आतिथ्य-सत्कार का कर्त्तव्य पूरा करने की आशा नहीं की जा सकती।

मैंने पश्चिम की इस पुकार को बार-बार सुना है, "भारत की वाणी कहाँ है"। और पश्चिम के ये अन्वेषक जब भारत आते हैं, उसकी वाणी सुनने के लिए, तो यहाँ उन्हें पश्चिम के स्वर की ही एक अस्पष्ट ध्वनि सुनने को मिलती है, मानों पश्चिम की आवाज़ को ही दूसरे शब्दों में कहा जा रहा हो।

मैं पूर्व के सभी देशों की तरफ से यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
113531

विश्वास पूर्वक कह सकता हूं कि भारत में जल्दी ही ऐसे शिक्षण केन्द्रों की स्थापना हो जायगी, जहाँ दुनिया के सभी भागों के लोग सत्य-साक्षात्कार और सत्यशोध के लिए आकर मिला करेंगे। हमारे देश में इस कार्य को संपन्न करने के साधन हैं और प्रत्येक देश, जिसे हम आमंत्रित करेंगे, अपने साधनों से इस कार्य में सहयोग दे सकता है और हम ऐसे सभी देशों का एक सम्मानित अतिथि की भांति स्वागत करेंगे।

"उस व्यक्ति को जो सब को अपने में आत्मसात हुआ पाता है और अपने को सब में एकात्म कर लेता है, तब कुछ भी प्रकट करने की आवश्यकता नहीं रह जाती।" यही हमारे भारतीय शिक्षा संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

मानव संहिता के अनुसार मानसिक प्रकृति नैतिकता पर आधारित है और ऐसे ज्ञान की शिक्षा, जो नैतिक पूर्णता और भावमय प्रकृति से वंचित है, मानवीय उन्नति के लिए हानिप्रद है।

यद्यपि आज ऐसी पाठ्य-पुस्तकों का चयन सम्भव है, जो मस्तिष्क के उचित प्रशिक्षण के संबंध में उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं, किन्तु वर्त्तमान दशाओं में स्कूलों और कालेजों में उचित नैतिक शिक्षा प्रदान करना अत्यन्त कठिन पाया जा रहा है। इसकी उपयोगिता पर से लोगों का ध्यान हटता जा रहा है। यह कहना भयंकर भूल होगी कि ऐसी शिक्षा प्रभावहीन होती है। इस तरह की शिक्षा हमारे अंतःकरण में कुछ विचारों को जन्म देती है और यदि हम इन विचारों को अपने जीवन में विकसित करते हैं, तो हमारे आचार-व्यवहार पर इनका निश्चित प्रभाव पड़ता है।

वास्तव में मनुष्य का मन जिसे स्वीकारता है और जिसकी प्रशंसा करता है, वही उसके व्यक्तित्व का अंश होता है, बाकी तो एक झूठा आवरण मात्र है। समाज का अनुशासन उसके लिए तभी मान्य हो जायेगा, जब वह अपने स्कूल और घर के नैतिक कर्मों से अपने को एकरूप कर दे, साथ ही अपने जीवन का निर्देशन स्वतन्त्रता पूर्वक करे। अपने आन्तरिक और व्यक्तिगत जीवन को इच्छानुसार चलाने को स्वतन्त्र हो।

इसके विपरीत नैतिक और धार्मिक शिक्षा की उपेक्षा करना सारी जाति को दूषित करना है।

नैतिक शिक्षा का पहला सिद्धान्त आमंत्रित करना और अपना मत प्रकट करना है न कि आदेश देना या अपने विचारों को लादना। मत प्रकट करने का सब से अच्छा तरीक़ा व्यक्तिगत दृष्टांत प्रस्तुत करना, वार्तालाप करना तथा पुस्तकों का प्रतिदिन अध्ययन करना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन पुस्तकों में निम्नकक्षा के विद्यार्थियों के लिए, प्राचीन गौरवपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत किये जाने चाहिए, जिनमें मात्र नैतिक पाठों की आकृति न हो, वलिक सर्वोच्च मानवीय हितों का दिग्दर्शन कराया गया हो। उच्चकक्षा के विद्यार्थियों के लिए इनमें महान विभूतियों के महान विचारों को प्रस्तुत किया जाये। साहित्य के वे भाग प्रस्तुत किये जायें, जो मनुष्य की भावनाओं में अग्निस्फुरण का कार्य करते हैं और महान आदर्श की प्रेरणा जागृत करते हैं। इतिहास के वे अंश प्रस्तुत किये जायें, जो महान विचारों, उदात्त भावनाओं और अभिलाषित आदर्शों की सत्ता प्रकट करते हैं।

सत्संग उचित मार्ग-दर्शन का सब से प्रभावपूर्ण तरीका है। इसका प्रभाव कदाचित ही व्यर्थ जाता है। सूत्ररूप में धर्म-विषयक- व्याख्यान देने का प्रभाव उस दशा में सब से अधिक पड़ सकता है, जब व्याख्याता या शिक्षक ने सत्संग द्वारा स्वयं उन सूत्रों को अपने जीवन में ढाल लिया हो। प्रत्येक व्यक्ति को एक सीमा के अन्दर ऐसा अवसर अवश्य प्रदान किया जाना चाहिए, जिससे वह अपनी उन नैतिक प्रवृत्तियों को कार्यरूप में परिणत कर सके, जो उसके अन्दर मौजूद हैं।

आर्य कौन कहलाते हैं? ब्राह्मणों में ज्ञान-पिपासा, आत्म-समर्पण, पवित्रता और आत्म-त्याग, क्षत्रियों में साहस, सम्मान-भावना, उदारता, वीरता और देश-भक्ति, वैश्यों में परोपकार, चतुरता, उद्योग, उदार-साहस तथा विशाल हृदय-शीलता तथा शूद्रों में सेवा-भावना—यही हैं आर्यों के गुण और इन गुणों से पूर्ण व्यक्ति ही आर्य कहलाने के अधिकारी हैं। वे सारे राष्ट्र में एक ऐसे नैतिक वातावरण की स्थापना कर देते हैं, जो हम अपने नवयुवकों के लिए चाहते हैं।

किन्तु, यह इच्छा तब तक साकार नहीं हो सकती, जबतक हम अपने युवकों को आर्य परम्परा के अनुसार अपना विकास करने के अवसर न प्रदान करें। उन्हें अपने बचपन और किशोरावस्था में ही इन गुणों के अभ्यास का अवसर मिलना चाहिए, ताकि वे अपने सम्पूर्ण जीवन को इन्हीं के अनुसार ढाल सकें। प्रत्येक बच्चे को व्यावहारिक अवसर और बौद्धिक प्रेरणा मिलनी चाहिए, जिससे वह प्रकृति से प्राप्त अपने गुणों का सर्वोत्तम विकास कर सके। यदि वह बु ी आदतों, बुरे संस्कारों का शिकार हो गया है, तो उसके साथ एक अपरा ी की भांति कठोर बर्त्ताव नहीं करना चाहिए, बल्कि संयम की राजयौगिक पद्धति द्वारा इन आदतों के त्यागने और इनसे छुटकारा पाने की प्रेरणा देनी चाहिए।

एक अद्भुत विचार आजकल प्रचलित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि बच्चों को केवल धर्म के सिद्धान्त रटा देने से वे धार्मिक बनाये जा सकते हैं और उनमें नैतिकता की स्थापना की जा सकती है। यह एक योरोपीय भूल है, जिसके स्वीकारने का अर्थ या तो यंत्र समान किसी मत से चिपटे रहना है, जिसका हमारे आभ्यान्तरिक जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और बाहरी जीवन भी बहुत कम प्रभावित होता है, या हठधर्मिता और चिकने घड़े के समान पाखण्डी लोगों को जन्म देना है। धर्म का अर्थ जीवन को सच्चे अर्थों में जीना है, न कि किसी मत से लिपटे रहना।

हम उसे धार्मिक शिक्षा नहीं कह सकते, जो शाश्वत् नहीं है। साधना के विभिन्न अंगों का प्रयोग और आध्यात्मिक आत्म-शिक्षा और अभ्यास ही केवल धार्मिक जीवन को प्राप्त करने के सही मार्ग हैं। आध्यात्मिक उन्नति के लिए बहुत से लोग शास्त्रोक्त विधि से नियम पूर्वक प्रार्थना, उपासना, पूजा आदि को आवश्यक बतलाते हैं। वे कहते हैं कि इनको नियम पूर्वक करना बहुत आवश्यक है। यदि नियम टूटता है, तो इनकी जगह कोई न कोई अन्य धार्मिक कृत्य या भक्ति कार्य अवश्य करना चाहिए, अन्यथा धार्मिक शिक्षा का प्रभाव बहुत कम होगा और इससे अच्छा होगा कि वह दी ही न जाये।

धार्मिक शिक्षा चाहे जिस रूप में प्रदान की जाये, लेकिन उसके मूलसार में ईश्वर के प्रति, मानवता के प्रति, देश के और अपने स्वयं के प्रति जीवन जीने की प्रेरणा हो और अपने को राष्ट्रीय कहलाने वाले प्रत्येक स्कूल का आदर्श भी यही होना चाहिए। हिन्दू धर्म की यही सच्ची आत्मा है, जो भारतीय विषयों, हिन्दू विश्वासों और हिन्दू धर्म-पुस्तकों के अध्ययन कराने से भी ज़्यादा महत्वपूर्ण है और इसी को हमारे स्कूलों में राष्ट्रीयता का सच्चा स्वरूप मानकर सिखाया जाना चाहिए, जिससे वे अन्य सभी स्कूलों में अपनी विशिष्टता प्रमाणित कर सकें।

श्री अरविन्द

—अनु. प्रभातकुमार मित्तल

★

लेखकों से आवश्यक निवेदन :

- इधर कविताएँ 'भारती' कार्यालय में इतनी अधिक जमा हो गयी हैं, कि विरल ही कोई नयी कविता स्वीकारना सम्भव होगा। अच्छी होने पर भी कविताएँ अस्वीकृत हो सकती हैं; कवि-मित्र इसे हमारी विवशता जान, क्षमा करेंगे।
- भविष्य में 'भारती' में आनेवाले लेख 'भारती' के अधिक से अधिक ५–६ पृष्ठों से ज्यादा विस्तृत नहीं होने चाहिए। अधिक लम्बे लेख, स्वीकारने में हम असमर्थ होंगे।

—सम्पादक

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीरेन्द्र कुमार जैन

ओ मेरी दूरान्तिनी प्रिया

चित्र : अमृता भारती

ओ मेरी दूरान्तिनी प्रिया,
यहाँ की काली माटी औ'
घनी-घनी अमराइयों में
तुम्हारी साँवली देहाभा
अपरम्पार भर आयी है:
सारा दिन यहाँ कोयल बोलती है:
उसकी 'पिहू पिहू' में
तुम्हारी बारीक झीनी बोली
की मंजरियाँ झरती हैं:
काली अंबियों के भीतर-भीतर रस घनीभूत होता है।

तुम्हारी बहुत कम
सुनायी पड़नेवाली आवाज़
यहाँ अचानक कभी-कभी
किसी वन-टिटहरिया की
विरल 'टीर-टीर कीर-कीर' में गूंज कर
इस वन की जड़ीभूत तन्द्रालस विजनता को भंग
कर जाती है।

तुम्हारे सदा कुंवारे उरोजों का दुर्दम काठिन्य
इन अमराइयों के कल्प-कानन में
दुपहर की हवा में
अचानक चू पड़ती
कच्ची अंबियों में
झर पड़ता है मेरी गोद में---
और मैं हर अंबिया की
दुर्जय दुर्भेद रस-ग्रंथि को
अपनी कविता में बहाकर
हर दिन अपने अक्षरों में बटोर लाता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

वन के किसी गोपन एकान्त में
अचानक तुम्हारे गीत लिखते-लिखते
मेरी आँखों में नींद घुल जाती हैः
और जाने कब किसी झाड़ की
मृदुल पल्लवा
अविचल कठोर डाल
मेरे सिरहाने
तुम्हारी सुकठिन कोमल जंघा बन जाती हैः
मेरी देह के नीचे की काली माटी
तुम्हारी गदरायी जम्बू-श्याम
मांसल-पेशलता से भर-भर आती हैः
औ' झाड़ों की डालों से झाँकती
तुम्हारी आकाशिनी आँखों की
दूरान्त-वाहिनी हंसिनियाँ
अपने सपनिल तन्द्रिल पंखों पर
मुझे अनन्त सौन्दर्यों के
कल्प-सरोवरों पर उड़ा ले जाती हैं।

कभी जब किसी टीले के पत्थर पर बैठ,
मैं इन विराट पर्वत-प्रसारों को
अपनी उन्मुक्त चेतना का क्रीड़ांगन बनाता हूँः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

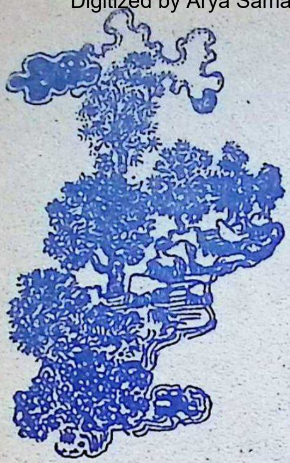

और एक शृंग से दूसरे शृंग तक डग
भरता चलता हूँ
तो तुम अनायास भास जाती हो मुझे
अपने पीछे, कन्धे पर से झाँकती-सी :
और क्या देखता हूँ कि
इन अफाट विराट पर्वतों के
ये दुर्गम, दुरारोह शृंग आकाशलीन, तुम्हारे
सदा कुँवारे देव-दुर्लभ
वक्षोज-मण्डल की
अनन्तगामिनी उत्तुंगता में
विलीन हो जाना चाहते हैं:
और मेरे कवि के देश-कालजयी
सिंहासन की पीठिका बन जाना चाहते हैं।

●

यहाँ की चट्टानों में खुदी
ओंडी-ओंडी वन्य-वापियों के
सघन पल्लव-प्रच्छाय
निविड़ हरे-काले जलों में
मैंने तुम्हारे चिर अविजानित
अन्तरतम की
अभेद्य मर्मीली ख़ामोशियों की झलक पायी है।

●

यहाँ के निःशब्द निरालय एकान्तों के
झिल्ली-झंकारित दुर्दम सन्नाटों में
मैंने तुम्हारी आदिम निष्कारण
चुप्पियों के मरम को बूझा है।
तुम्हारी अनिर्वार रहसीली उदासियों को
मैंने, इन पत्रहीन शाखान्तरालों की
वीरानियों में भटकते देखा है :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने तुम्हारे जी की भटकनों को
ग्रीष्म की दुपहरियों की
इन 'हू हू' करती हवाओं में उड़ते पत्तों के साथ,
किसी भूताचल में चक्कर खाते देखा है।

मैंने तुम्हारी चिर नूतन की प्यास को
इस जंगल की निस्तब्ध खामोशियों में
दूर-दूर से आती अनजान अपरिचित आवाज़ों में—
'और कहीं, और कहीं!'
की अन्तहीन पुकारों से
अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों की सरणियों को बींधते देखा है।
मैंने तुम्हारे मन के दुर्बन्ध्य उचाटों को,
यहाँ के इन अचल पर्वत-मूलों को
उच्चाटित करते देखा है।

•

आषाढ़ी सन्ध्या में उठ आती आंधियों के
रक्तिम पांशुल वात्या-चक्रों में—
एक के बाद एक
दूर-दूर तक खाली पड़े
इन निर्जन निचाट वन-प्रान्तरों में-
मैंने तुम्हारे जी के खालीपन की व्यथा को
उन्मन उदास विचरते देखा है।

•

यहाँ के सकल चराचर को अतिक्रान्त करते
पर्वत-शृंगवाही क्षितिजों पर—
मैंने तुम्हारे अन्तिम प्रश्नों को
चुपचाप अनन्त की नीलमी अर्गला
खोलते देखा है।

•

[गत मई १९६२ में नासिक के समीप एकान्त वनवास में लिखे गये २१ वन-काव्यों के समुच्चय 'वनिमा' की एक कविता।

•

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीमित देह की चरम मिलन-ऊष्मा के भीतर से ही, देहातीत अनन्त रसानन्द की अनुभूति का अपूर्व चितेरा था, महान फ्रैंच कवि और कथाकार पियर लुई। डॉ. अमृता भारती ने उसके अमर क्लासिक 'एफ़्रोडाइट' का एक अंश यहाँ हिन्दी में प्रस्तुत किया है।

पियर लुई

देमेत्रियोस का स्वप्न

देमेत्रियोस दर्पण, कंघा और नेकलेस लेकर घर आया, तो उसे नींद आ गयी— तभी उसे एक स्वप्न-दर्शन हुआ। वह सपना था :

★ ★ ★

वह आदमियों की भीड़ में खोया हुआ घाट की तरफ बढ़ रहा है। एक अजीब रात है— न तो चाँद है, न तारे न बादल ही— फिर भी वह अपनी भेदभरी रोशनी से प्रकाशित है। देमेत्रियोस नहीं जानता कि वह क्यों जा रहा है, या कौन उसे खींच रहा है, फ़िर भी वह पहुँचने के लिए व्यग्र है, जितनी जल्दी हो सके, वह वहाँ पहुँचना चाहता है। लेकिन चलने में उसे प्रयत्न करना पड़ रहा है, हवा किसी अकथनीय रुकावट से उसके क़दमों को लौटा रही है, मानो कोई गहरा जल हर क़दम पर बाधा डाल रहा हो।

वह काँप रहा है, सोचता है कि वह कभी नहीं पहुँच पायेगा, कि वह कभी नहीं जानेगा कि किस के लिए इस चमकीले अंधकार में श्वांसशून्य और उत्सुक वह भटक रहा है। कुछ ही क्षणों में लोगों की भीड़ ओझल हो जाती है, यों वह ठीक-ठीक नहीं जानता कि भीड़ सचमुच ही खो गयी है या उसके भीतर से ही उपस्थिति—बोध मिट गया है। क्योंकि जल्दी ही वह भीड़ बड़ी तेज़ी के साथ आगे बढ़ती नज़र आने लगती है, बल्कि और भी ज़्यादा चुस्ती के साथ, हर व्यक्ति तेज़ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवाज़ करते कदमों के साथ बढ़ रहा है, सब उससे ज़्यादा जल्दी बढ़ते जान पड़ते हैं।

वह जनसागर तब और भी घना हो जाता है और देमेत्रियोस देखता है कि वह पीला पड़ गया है। एक आदमी के कंधे से उसे धक्का लगता है और एक स्त्री की लपेट से उसका वसन फट जाता है। भीड़ के दबाव के कारण एक लड़की उसके बदन से इस कदर कस गयी है कि वह अपनी छाती के ऊपर उसके वक्ष की कलियों का भिचाव महसूस करता है; जबकि वह अपने दो भयभीत हाथों से उसका निषेध करती है।

अब अचानक उसे लगता है कि वह घाट पर सबसे पहले पहुँच गया है। जब वह लौटकर चारों तरफ देखता है, तो पाता है कि दूर भीड़ का वह पीला समूह बाज़ार की तरफ हटता जा रहा है। उसे मालूम है कि अब वह समूह आगे नहीं जायेगा और वह अकेला है।

सेतुबन्ध एक ऐसी अधूरी सड़क के प्रलोभन के सहारे सफ़ेद और सीधा आगे की तरफ फैला हुआ है, समूद्र को पार करने की दृष्टि से जसकी शुरुआत हुई थी। वह सोचता है कि उसे 'लाइट-हाउस' जाना चाहिए और फिर उसकी तरफ बढ़ जाना चाहिए। अचानक उसके पैर चंचल हो जाते हैं। हवा के झोंके उसे रेतीली निर्जनताओं में से और भी ज़्यादा एकान्त लहरों की तरफ बढ़ा रहे हैं, जहाँ एक घाट बना हुआ है। लेकिन जैसे-जैसे वह आगे बढ़ता है, 'लाइटहाउस' उसके सामने से पीछे की तरफ हटता चला जाता है और घाट अनन्त होकर लम्बा होता जाता है। कि तभी संगमरमर की ऊँची बुर्ज़ी की पीली लौ नील क्षितिज में

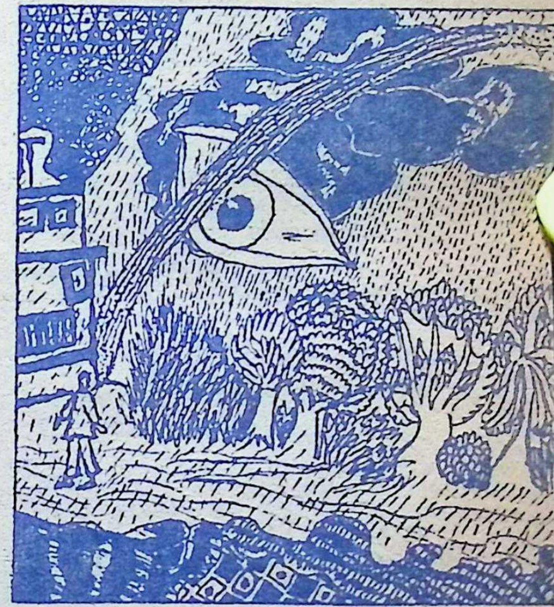

चित्र : पवनकुमार

चमक उठती है, वह काँपती है, झिल-मिलाती है और एक दूसरे चन्द्रमा की तरफ स्थिर हो जाती है। देमेत्रियोस चल रहा है।

रात और दिन गुज़रते-से लगते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जबकि उसने अपने बहुत पीछे महान एलेक्जोण्ड्रिया के तट प्रान्तों को छोड़ा था। जिस राह पर वह यात्रा करके आया है, उसकी ओर देखने के भय से वह घूमने का साहस नहीं करता: समुद्र के बीच एक सफ़ेद रेखा अनन्त तक फैली पड़ी है। फिर भी वह घूमता है।

उसके पीछे बड़े-बड़े वृक्षों से आच्छन्न एक द्वीप पड़ा है। पेड़ों पर बड़े-बड़े फूल लटके हैं। क्या उसने इसे आँखें मींचकर पार किया है या यह इसी क्षण प्रकट हो गया है और रहस्यमय तरीक़े से दिखायी दे रहा है? वह इस आश्चर्य में उलझता नहीं और उस असम्भव को एक प्राकृतिक घटना की तरह स्वीकार कर लेता है।

इस द्वीप में एक स्त्री रहती है। द्वीप के अकेले घर के द्वार के सामने वह खड़ी हुई है। उसकी आँखें अधमुँदी हैं और उसका चेहरा एक विलक्षण इन्द्रधनु के फूल पर झुका हुआ है, जो फूल उसके होठों तक पहुँचता है। उसके पास बालों की दौलत है, जिनका रंग कच्चे सोने के समान है और जो अद्भुत रूप से लम्बे हैं, उसकी झुकी गरदन पर उनका ढेर पड़ा हुआ है। उसका वस्त्र काले रंग का है, जिसके ऊपर उसने और भी काला घाघरा पहन रखा है। और इन्द्रधनु का फूल जिसकी ख़ुशबू वह अपने निचले आच्छादन से ले रही है, रात की छाया है।

दुख के इस दिखावे के अतिरिक्त देमेत्रियोस जो कुछ और देखता है, वे उसके केश हैं जो आबनूस के खम्भे के ऊपर सुवर्णिम कलश की तरह लग रहे हैं। वह क्राइसिस को पहचान लेता है। दर्पण और नेकलेस की उसे धुँधली-सी स्मृति आती है, लेकिन वह उसे यथार्थ स्वीकार नहीं करता। क्योंकि इस अजीब स्वप्न में केवल यथार्थ ही असत्य लगता है।

"आओ" क्राइसिस कहती है। "मेरे पीछे-पीछे चले आओ।"

वह उसका अनुसरण करता है। क्राइसिस धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़ती है, जो किसी जानवर की सफेद खाल से ढकी हुई हैं। उसकी बाँहें जंगले के सहारे चढ़ती हैं और नंगी एड़ियाँ शून्य में तैरती हैं।

"यहाँ चार कमरे हैं," वह कहती है। "यदि एक बार तुम उन्हें देख लोगे, तो फिर कभी नहीं छोड़ोगे। क्या तुम मेरे पीछे आओगे? क्या तुम्हें विश्वास है?"

क्यों, वह तो उसके पीछे कहीं भी जा सकता है। वह पहला द्वार खोलती है और उसे अन्दर लेकर दरवाज़ा बन्द कर देती है।

* * *

कक्ष लम्बा और सँकरा है। उसमें केवल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक खिड़की का प्रकाश है जो समुद्र का चौखटा बनी है। दाहिनी और बाँयी ओर दो छोटी शेल्फ हैं, जिनमें लिपटे हुए एक दर्जन चर्म-पत्र रखे हैं।

"यहाँ वे किताबें हैं, जिनसे तुम्हें प्रेम है," क्राइसिस ने कहा, "इसके अतिरिक्त यहाँ और कोई किताब नहीं है।"

देमेत्रियोस उन्हें खोलता है। उनमें शैरेमन का 'ऑइनिअस' है, एलेक्ज़ीस का 'रिटर्न' है, एरिस्टिप्पुस का 'मिरर अॅव लॉइस' है, एन्वान्ट्रेस, साइक्लोप्स और थियोक्रितुस का 'ब्यूकोलिक्स' है, ऑडिपुस एट कोलोनस, द ऑड्स अॅव सप्फो, और कुछ कृतियाँ हैं। इस सुन्दर पुस्तकालय में एक नग्न लड़की, किसी कुशन पर ख़ामोश, विश्रांभ ले रही है।

"और अब," क्राइसिस एक लम्बी सुनहरी मंजूषा में से एक पांडुलिपि निकालते हुए बुदबुदाती है। "यह प्राचीन पदों का एक पृष्ठ है, जिसे तुम बिना रोये अकेले कभी नहीं पढ़ सकते।"

वह क्राइसिस पर आश्चर्य-मिश्रित कोमल दृष्टि फेंकते हुए कहता है: "तुम! यह तुम हो, जो मुझे दिखा रही हो?"

"अभी और भी बहुत कुछ है जो देखना बाकी है। मेरे पीछे आओ। जल्दी।"

* * *

वे दूसरा द्वार खोलते हैं।

यह कमरा चौकोर है। इसमें केवल एक ही खिड़की से रोशनी आती है, वह खिड़की सम्पूर्ण प्रकृति का फ्रेम बन गयी है। बीचो बीच एक लकड़ी का स्टेण्ड है, जिस पर लाल मिट्टी का गोला रखा हुआ है। कोने में एक मुड़ी हुई कुर्सी पर एक नग्न लड़की ख़ामोश बैठी हुई है।

"यह वह जगत है जहाँ तुम एण्ड्रोमिडा, जेग्रेडस और हॉर्सेस अॅव द सन का मॉडेल तैयार करोगे। और क्योंकि तुम उन्हें केवल अपने लिए सिरजोगे, इसलिए अपनी मृत्यु से पहले उन्हें नष्ट भी कर दोगे।"

"यह ख़ुशियों का मकान है," देमेत्रियोस फुसफुसाता है। और वह अपना माथा अपनी हथेलियों में टिका लेता है।

लेकिन क्राइसिस दूसरा द्वार खोल रही ह।

* * *

तीसरा कक्ष विशाल और गोल है। वह एक अकेली खिड़की से प्रकाशित है, जो केवल आकाश का चौखटा हो गयी है। कमरे की दीवारें काँसे से जालीनुमा बनायी गयी हैं, ताकि हीरक आकार वाले चौखटों का रूप ग्रहण कर सकें। उनके बीच से बाँसुरी और बीनों का धीमा संगीत बह रहा है, लेकिन बजाने वाले अदृश हैं। और दूर की दीवार के सहारे हरे संगमरमर के सिंहासन पर, एक नग्न लड़की ख़ामोश बैठी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

“आओ, आओ!” क्राइसिस मुस्कुराती है।

वे दूसरा द्वार खोलते हैं।

★ ★ ★

चौथा कक्ष नीचा, अंधेरा और बड़ी मज़बूती से बन्द किया हुआ है कि हवा भी अस्पर्श्य हो। वह त्रिभुजाकार हैं। रोंवे के कालीन और रोमचर्मों से यह कमरा ऊपर से नीचे तक इतना आरामदेह बना हुआ है कि नग्नता यहाँ चकित नहीं करेगी। कोई भी प्रेमियों का जोड़ा इसके भीतरी भाग में अपने को पोशाक़ों से ढका हुआ ही मानेगा। यदि एकबार दरवाज़ा बन्द हो जाय, तो उसके होने का भान भी नहीं हो सकता। बाहरी दुनिया से अलग इस बन्द दुनिया में कहीं कोई खिड़की नहीं है। ऐसा लगता है, हवा में लटके हुए काले केशों से बूंद-बूंद रिसते सुगन्धित द्रव्य चू रहे हैं। कमरा सात लोहबानी रंगीन बिल्लौरों सेरौशन है, जो फ़र्श पर सात दीपों के रहसीले प्रकाश के रंगों की विविधता में प्रतिबिम्बित हो रहे हैं।

“देखो,” क्राइसिस बड़े वत्सल और शान्त स्वर में कहती है। “हमारे कक्ष के तीन कोनों में तीन विभिन्न शैयाएँ हैं।” देमेत्रियोस उत्तर नहीं देता। वह मौन ही मौन अपने आप से पूछता है:

“क्या यह अन्तिम स्थिति है? क्या यह स्थल ही मानवीय अस्तित्त्व का लक्ष्य है? मैं जो तीन कमरों से गुज़रा हूँ, वह क्या केवल इसी में रहने के लिए? यदि मैं एक भी सम्पूर्ण रात प्रेम के पाश में यहाँ गुज़ार लूं, जहाँ मौत की कठिनता है, तो क्या मैं कभी, कभी भी इसे छोड़ने में समर्थ हो सकूंगा?”

लेकिन क्राइसिस बोलने लगी थी:

★ ★ ★

“प्रिय, तुमने मुझसे कहा था और मैं आगयी हूँ। अब मेरी तरफ देखो।”

वह अपनी दोनों बाहें उठाती है, अपने सिर पर दोनों हाथों को गूंथकर अपनी कुहनी को आगे करती हुई मुस्कुराती है:

“प्रिय, मैं तुम्हारी हूँ. . . . लेकिन अभी नहीं। मैंने तुम्हारे लिए गाने का वचन दिया था। सबसे पहले मैं गाऊँगी।’

और अब वह उसके क़दमों में झुक जाता है और केवल उसी के बारे में सोचता है। क्राइसिस ने छोटी काली जूतियाँ पहन रखी हैं। नीलाभ मोतियों के चार फ़ीते उसकी पतली उँगलियों में बँधे हैं, और एक रक्तिम अर्धाकार चन्द्रमा उसकी सब उँगलियों के नखों पर चित्रित है। उसका सिर एक तरफ के

(शेष पृष्ठ ७० पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : अमृता भारती

अनामिका

चाँदनी

रात की झील पर तैरती चाँदनी
फैलती श्वेत पर सी–चतुर्दिक
गुच्छ के गुच्छ अनगिनित फूल
फेंकती चाँदनी
बाँह में भर मुझे
गले से लगा
हाथ से परस– अंगुलियों से घुला माथ तक
एक पूजा दिवस, चाँदनी.....
आज यह चाँदनी
लिपटती कोण, अणु-अणु सिमटती
झुलाती हवा में मुझे
फेंककर फूल के गुच्छ।
यह खिली चाँदनी बाँधती
दूर के छोर
ओ! अदेखे नगर––अदेखे पुरुष
तुम्हारी हँसी बाँधती सी
मुझे पूछती हँसी में
रात की झील पर तैरती चाँदनी
क्यों.......अभी तक नहीं डूब पायी ?
दूध सी चाँदनी
बर्फ़ सी चाँदनी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

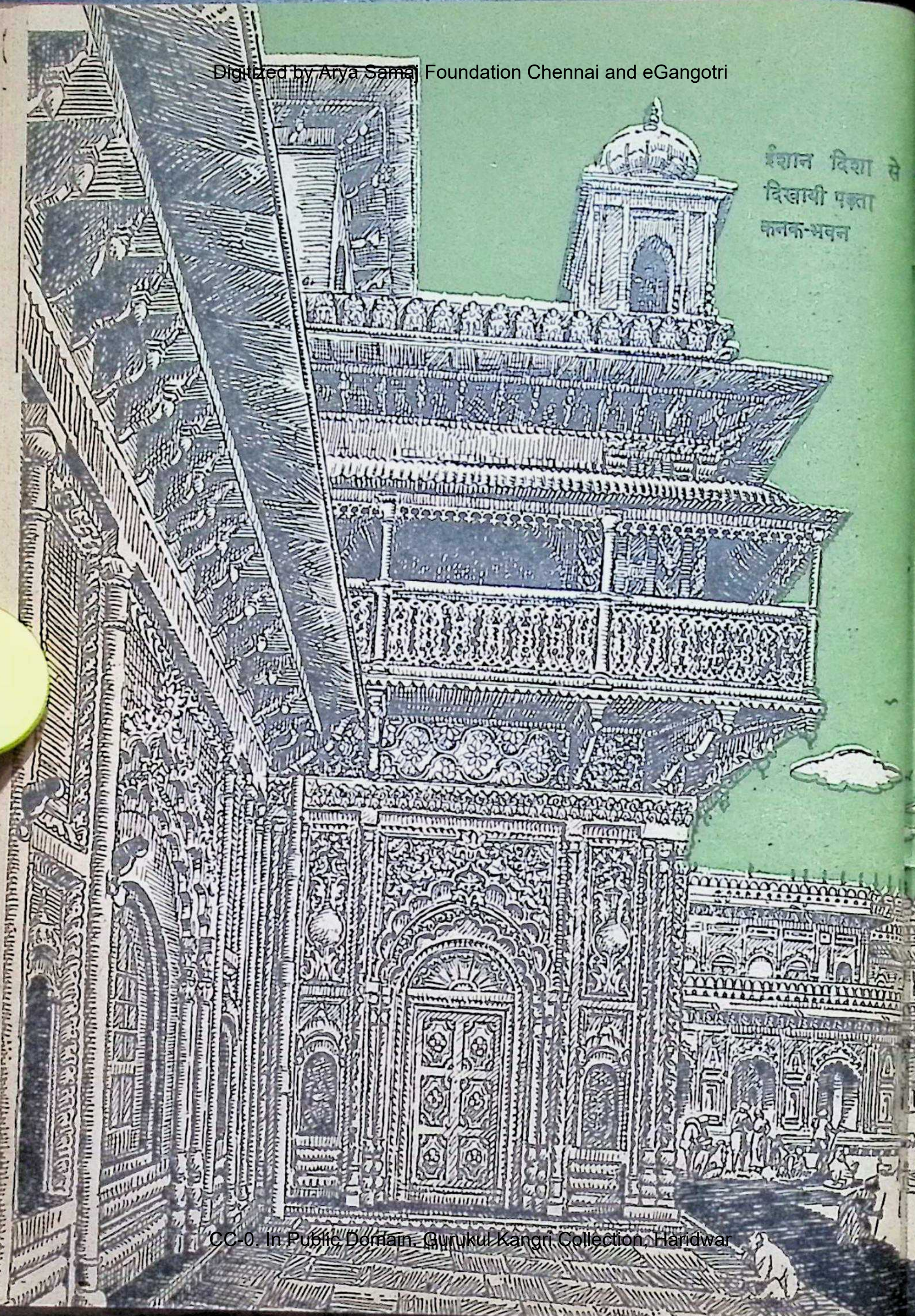

ईशान दिशा से दिखायी पड़ता कनक-भवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयोध्या

[२]

पवित्र सरयू नदी के तट पर स्वयं मनु ने त्रेता युग में अयोध्या की स्थापना की थी। इस प्रकार का वर्णन अथर्ववेद एवं जैनियों के आदि-पुराण में आता है। अयोध्या की समृद्धि, सौन्दर्य एवं सिद्धि की अमर गाथा अति प्राचीन काल से असंख्य ग्रन्थों में वर्णित है। 'अयोध्या' का अर्थ है– जो युद्ध से जीतने योग्य न हो।

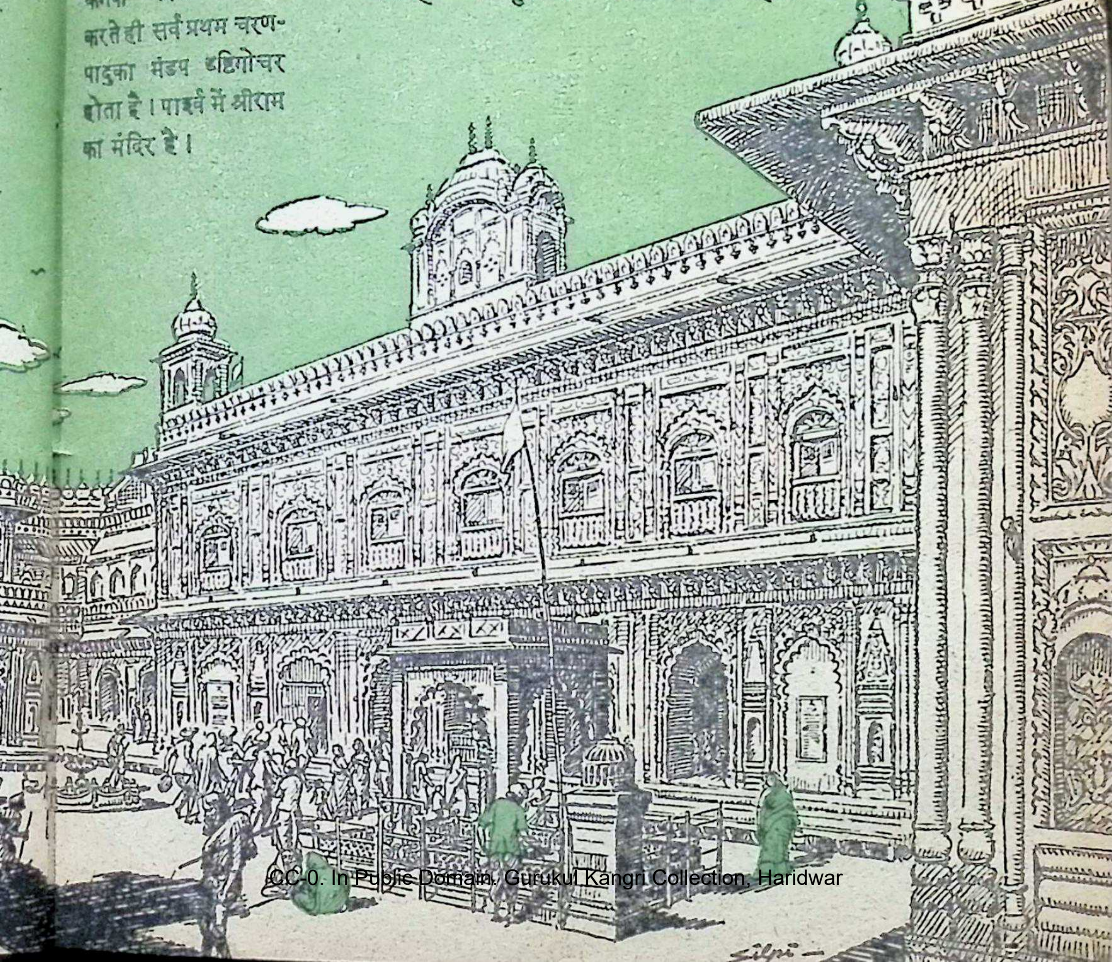

कनक भवन में प्रवेश करते ही सर्व प्रथम चरण-पादुका मंडप दृष्टिगोचर होता है। पार्श्व में श्रीराम का मंदिर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विजयादशमी दरबार : वस्तुतः ये प्राचीन मूर्तियां चरण पादुका मंडप की हैं। किन्तु इस उत्सव के अवसर पर उन्हें श्रृंगार करके बड़ा जगमोहन मंडप में रखा जाता है।

←—

अयोध्या में अनगिनत मन्दिर एवं मठ हैं; किन्तु कनक भवन (स्वर्ण-प्रासाद) अत्यन्त वैभवशाली है और भगवान श्रीराम से उसका अति निकट का सम्बन्ध समझा जाता है। पौराणिक कथा है कि वस्तुतः महाराजा दशरथ की प्रिय रानी कैकेयी के लिए विश्वकर्मा द्वारा इसका निर्माण किया गया था और जब विवाहोपरान्त श्रीराम अपनी पत्नी सीता जी के साथ मिथिला से अयोध्या आये तो कैकेयी ने यह स्वर्णप्रासाद उन्हें उपहार स्वरूप भेंट कर दिया था। तब से अपने अंक में राजशी वैभव छिपाये यह भवन कितने ही परिवर्तनों को देख चुका है। भगवान श्रीराम के बाद अयोध्या का हर दृष्टि से ह्रास होने लगा और कनक भवन भी इसका अपवाद न रहा। कहते हैं द्वापर युग में महाराजा कुश ने इसका पुनर्निर्माण किया था। जरासन्ध की मृत्यु के बाद मगध से लौटते समय भगवान कृष्ण के यहाँ ठहरने की भी कथा आती है। [शेष पृष्ठ ५७ पर]

प्राचीन मूर्तियां: निकट से द्रष्टव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरेश चन्द्र मिश्र

ब्रह्म-वादन और साम-गायन

[पौराणिक कहानी]

"मैं ब्रह्मरूपिणी नहीं, ब्रह्ममाया हूँ गंधर्व !" .....गायत्री ने स्मित हास्य से व्यंग किया, "मैं नारी हूँ, जो कला की कमनीयता से आकर्षित होती है, जो सौन्दर्य का साकार रूप देखकर हर्षित होती हैं। मुझे निराकार से प्रयोजन नहीं, तत्व-चिन्तन में रुचि नहीं।"

देव मंडली आश्चर्य-स्तब्ध रह गयी। सभी के मुख पर चिंता और निराशा की घटाएँ थीं। जीवन्मुक्ति और परम् आनन्द का अक्षय स्रोत, सोम, उनके अधिकार में आकर भी, दुबारा छिन गया। इस अलभ्य यागतत्व की प्राप्ति हेतु निर्विकार अमरों ने सविकार संकल्प किये थे। उन्होंने अपनी माया से सुपर्णी वाक को उत्पन्न किया था, जो श्येन का रूप धारण कर स्वर्ग तक उड़ी और उसके छंद अपने चरणों में सोम का कलश पकड़ कर देवताओं के निकट वापस लौटे।

अक्षय आनन्द के उस अजस्र स्रोत को पा देवगण हर्ष विभोर हो गये। निश्चित मुहूर्त पर पवित्र क्षणों में सोम पान करने के लिए उन्होंने दिव्य कलश को देवराज के यहाँ रख दिया और सब के सब नृत्य-गान में डूब गये।

किन्तु, इसी बीच चतुर गंधर्व लोग आये और उत्कट साधना का प्रतिफल वह सोम-कलश चुरा कर अपने लोक ले गये।

आनन्द का चषक ओठों तक आकर दूर छिटक गया। देव-वर्ग शोक स्तब्ध रह गया।

युद्ध द्वारा सोम-कलश पर पुनः अधिकार करना सरल न था। देवताओं के प्रतिनिधि गंधर्व-प्रमुखों के पास पहुँचे और उनसे सुपुष्ट गौओं के विनिमय में वह कलश लौटा देने की याचना करने लगे।

किन्तु, आनन्द का कोष हस्तगत कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भला उसे कौन छोड़ता है। गंधर्व-प्रमुख अचल रहे। उन्होंने कहा, "हम पूत सोम-यज्ञ करेंगे। यज्ञ के सम्मुख क्रय-विक्रय का कोई महत्व नहीं।"

निराश देव प्रतिनिधि लौट आये। अब उन्होंने गम्भीर विचार के पश्चात् सुपर्णीवाक् को अनन्य सुन्दरी का रूप दिया और उसे छल द्वारा गंधर्वों से सोम-कलश वापस लाने के लिए भेजा।

शोभन अलंकारों से विभूषित, दिव्य आभामयी वाक् जब प्रवाल-जैसे अधरों का स्मित हास्य छिटकाती गंधर्वों के निकट पहुँची, तो वे सोम-याग की व्यवस्था छोड़ कर उसकी ओर आर्कषित हो गये।

"कौन हो देवि ?"

"मैं सोम क्रयणी वाक् हूँ—गायत्री", अनिंद्य सुन्दरी नारी ने वायु के झोंकों में लहराते पलाश पुष्प-जैसे रक्तवस्त्रों को सम्हालते हुए कहा।

"आओ स्वागत है! सुन्दरी, सोम के साथ ही हम तुम्हें भी स्वीकार करते हैं।" "गंधर्वों" की समवेत हर्ष ध्वनि ने दिशाओं को गुंजित कर दिया।

किन्तु, इसी समय पीछे खड़े देवराज इंद्र ने गायत्री का हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींच लिया, "सावधान, यह देव-माया है, यह हमारी सृष्टि है। इस पर देवताओं का अधिकार है।"

"असम्भव, यह सोमक्रयणी है, सोम दुधा है। इस पर उसी का अधिकार है, जिसे सोम पर अधिकार हो।" गंधर्व-प्रमुख तुंबरु आगे बढ़ क्रोध से गरजा।

घोर विवाद छिड़ गया। जल्पनाओं और कटूक्तियों के तीर चलने लगे। अंत में देव-गंधर्व मंडली ने निर्णय किया कि

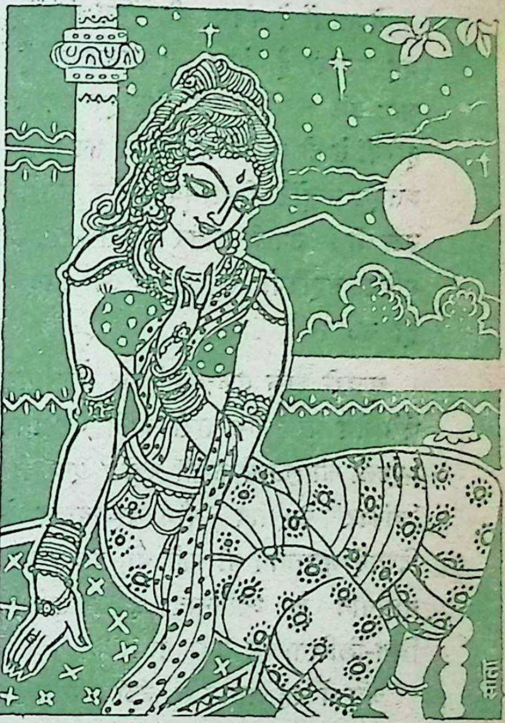

चित्र : सीता राव

वे दोनों दूर से अनुपम सुन्दरी वाक का आवाहन करेंगे। वह जिसके आवाहन को स्वीकार कर ले उसीं का सोम, उसी की सोमक्रयणी।

गंधर्वों ने विचार किया, "यह वाक्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, यह गायत्री है, यह ब्रह्मस्वरूपा है। अतः यह ब्रह्मवादन से ही आकर्षित होगी। वे पंक्तिबद्ध हो ब्रह्म की साधना में लीन हो गये। उनमें से कुछ एक ओर खड़े हो कर 'ओंकार' का उच्चारण करने लगे।

देवताओं ने मंत्रणा की, "यह वाक् है, यह गायत्री है, किन्तु यह ब्रह्ममाया है। अतः इसे सामगान की विमोहक स्वरलहरियों से ही वश में किया जा सकता है। अतएव उन्होंने वीणा, मृदंग और करताल उठा ली। उनकी सस्वर समवेत ध्वनि की मदिर लहरियों से वातावरण विमुग्ध हो उठा।

सुन्दरी वाक् एक मुहूर्त तक मृगशावक जैसे नेत्र घुमा कर बारी–बारी देव-गंधर्व मण्डली को कृतार्थ करती रही। एक ओर 'ओंकार' के नाद और ब्रह्मवादन से दिशाएँ भासमान हो रही थीं, दूसरी ओर सामगान के ध्वनिनाद से वातावरण चित्र-लिखित रह गया था।

अंत में वह आसन से उठी। सामगान और ब्रह्मवादन के स्वर अब चरम पर पहुँच गये। मंद-मंथर गति से चलती हुई वह देवताओं के निकट जा खड़ी हुई। गंधर्वों के ब्रह्मवादन की प्रखर स्वर धार निराशा की गुफा में विलीन हो गयी। देवताओं ने सामगान छोड़ कर हर्षातिरेक में नृत्य प्रारम्भ कर दिया।

सोम का विजय कलश और सोमक्रयणी का भुवनमोहन रूप लिए देवतागण अपने-अपने वाहनों पर आरूढ़ हो गये, तो गंधर्व प्रमुख तुंबरु से न रहा गया। उसने टूटे स्वर में गायत्री को पुकारा, "तुमने प्रवंचना की देवि, तुम तो ब्रह्मरूपिणी हो। भला क्षुद्र गायन से क्यों आकर्षित हो गयीं?"

"मैं ब्रह्मरूपिणी नहीं, ब्रह्ममाया हूँ गंधर्व!"....गायत्री ने स्मित हास्य से व्यंग्य किया, "मैं नारी हूँ, जो कला की कमनीयता से आकर्षित होती है, जो सौन्दर्य का साकार रूप देख कर हर्षित होती है। मुझे निराकार से प्रयोजन नहीं, तत्वचिंतन में रुचि नहीं।"

और सुन्दरी वाक् के उपालंभ भरे उत्तर से गंधर्वों ने अपनी भूल का अनुभव किया। उन्होंने वहीं उसी क्षण अक्षमाला छोड़ कर वीणा मृदंग आदि उठा ली। तब से आज तक वे सुन्दरी वाक् की प्रतीक्षा में गाते आ रहे हैं।

[मूल आधार– काठक संहिता]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : पवनकुमार

श्याम मोहन दुबे

सूर्योदय की प्रतीक्षा

रेल की पांतों के किनारे मेरा घर–
खुंसी हैं जिसमें
यात्रियों की
हज़ार-हज़ार आँखें
पिनकुशन में पिन की तरह !
खिड़की में–
सीख़चों से छना मैं
सब देखता हूँ।
मेरी आँखों में
रेलगाड़ियाँ चलती हैं;
हर डिब्बे गुज़रते हैं,
सूनापन, फिर ताज़ा हो जाता है।
रात बन्द पलकों में,
मस्तिष्क में
रेलों की सीटियाँ बजतीं
गड़गड़ाहट होती है।
सुबह–
आँखों में सवेरा उगता है;
दिनचर्या की उबानेवाली इबारत,
रोज़ दुहराई जाती है
जैसे–
कुंठाओं की पाठशाला में
मुझे यही सबक दिया गया हो।
किन्तु मैं हारनेवाला नहीं हूँ
सवाल बार-बार हल करूँगा।
कभी तो–
नयी चेतना का
सनातनी सूरज उगेगा :
उत्तर सही होगा !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णु प्रभाकर

मैं यहीं मरना चाहता हूँ

एक बार जी भर कर उस रूप को देखा। वह वर्णनातीत रूप, वह पारदर्शी हिमानी, उड़ते जलसीकर, निरन्तर रिमझिम-रिमझिम पड़ती बूंदों से बनी झाड़फानूस की सहस्रों सीटियाँ और उन सब पर पड़ती सूर्य किरणें जो प्रतिक्षण असंख्य इन्द्र-धनुषों का निर्माण करती हैं—कैसे बताऊँ क्या आनन्द था वह!

जिस समय आँखें खोल कर देखा, घड़ी में ४ बज कर २५ मिनट हो चुके थे। तुरन्त उठे और उस ठिठुरते कुहर में बाहर निकल गये। तैयार जो होना था। जब तक लौटे, दिलीप दुग्ध-हीन काली मिर्च वाली चाय तैयार कर चुका था। पीकर जैसे स्फूर्ति भर उठी। सामान पैक किया और ५ बज कर ५० मिनट पर अन्तिम लक्ष्य की ओर चल पड़े। आकाश स्वच्छ था।

शीत उतना उग्र नहीं था। मार्ग वही, वक्र, संकरा, आकाश-पाताल-गामी और पथरीला, पर कल से अपेक्षाकृत सरल। वही दृश्य, वह शाश्वत हिमशिखर, वही नाना पुष्प और औषधियों के द्रुम दल, हिम-सरिताएँ, पर देखते मन अघाता नहीं।......

सहसा स्वामी जी ने पुकारा—वह उस पार पर्वत को देखो।

दृष्टि उधर ही उठी। कुछ पशु दिखायी दिये। स्वामीजी बोले— ये बरड़ हैं।

मैंने दूरबीन से देखा। लगभग ३०–४० होंगे। शुद्ध नाम है भरल। हिरण की तरह ही जंगली भेड़ें हैं। निश्चित होकर चर रहे थे। कुछ बैठे भी थे। सीटी की आवाज़ सुनकर कुछ हमारी दिशा में देखने लगे। दूरी इतनी थी कि देखने के अतिरिक्त और कुछ कर नहीं सकते थे। दूर तक देखते ही चले गये। स्वामीजी बताते रहे कि इनका चमड़ा बहुत मुलायम होता है। पहले अंग्रेज लोग इनका शिकार करते थे, अब कोई नहीं करता। इस कारण वे निडर हो गये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

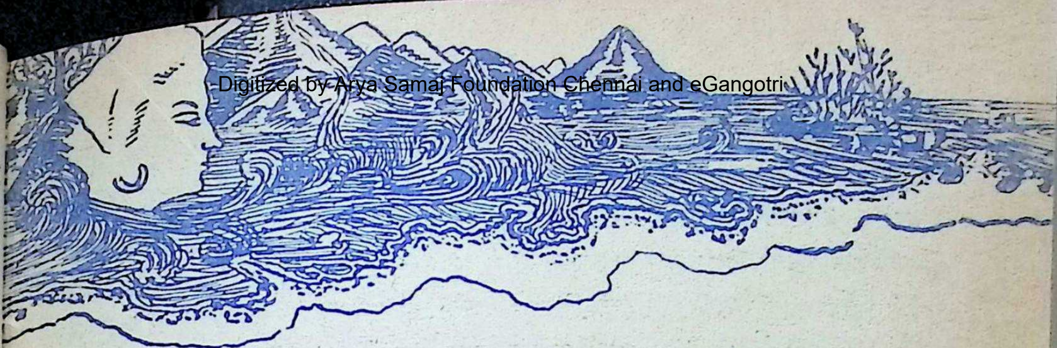

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

गिरगिट की तरह का, परन्तु उससे काफी बड़ा काले रंग का एक चतुष्पाद जानवर भी देखा। बड़े पहाड़ी वाले कौवे यहाँ दिखायी देते ही हैं। मगर वैसा हीं पीली या लाल चोंच वाला कौवा भी दिखायी देता है। उसे क्यांगचू कहते हैं। यह तिब्बत प्रदेश का पक्षी है। मधुर वाणी बोलने वाले कई और पक्षी दिखायी दिये। नाना वर्ण और गन्ध के फूल भी कहीं-कहीं दिखायी दे जाते हैं। परन्तु उनका मौसम सितम्बर-अक्तूबर में होता है। यहीं वह जड़ी भी होती है, जिसकी जड़ रात्रि के अन्धकार में रेडियम के डायल की तरह चमकती है। यह जड़ी तपस्वियों को सुलभ प्रकाश तो प्रदान करती ही है, कामदग्ध प्रेमियों के लिए स्नेह भी प्रदान करती है: प्राचीन साहित्य में इसकी बड़ी चर्चा आती है।.....

पर्वत शिखरों के मुकुट शुभ्र स्वर्णिम हो उठे। और प्रकृति मुग्धा-सी निर्निमेष उनके नयनों में झांकने लगी। क्षण बीते, प्रकाश बिखरता चला गया। पर्वतों ने मेघों की मेखलाएँ धारण कर लीं और उनके किनारे इन्द्रधनुष हो आये।

रात का ताजा पारदर्शी हिम पानी पर धूप की भांति चमक आया है। पत्थरों पर पैर रखना संकटपूर्ण है, रपट-रपट जाते हैं। चीड़वासा से आगे बढ़े ही थे कि बायीं ओर के शिखर की ओर इशारा करके स्वामीजी बोले– यह भृगु शिखर है। इसमें से भोजगाड़ या भृगु नदी निकलती है। महानन्द वैतरणी भी इसी को कहते हैं।

इसके आगे एक और शिखर है, जो शिवलिंग की आकृति का होने के कारण शिवलिंग कहा जाता है। उसके सिर पर ही हिम किरीट नहीं है, बल्कि ऊपर से नीचे तक वह हिम से ढका हुआ है। उसका धवल वरण उसकी आकृति को अलौकिक बना देता है। इस शिखर को अभी तक कोई नहीं जीत सका। मेघों की मेखला धारण किये यह गर्वोन्मत्त अजेय धवल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिखर क्षण-क्षण में रूप पलटता है।....

उसको देखते हुए आगे बढ़ रहे थे कि महानन्द वैतरणी के पास पहुँच गये। देखा धारा बहुत पतली है। परन्तु जमी हुई है। बर्फ जब पिघलती है, तो वह विस्तृत और तीव्र हो उठती है। पार करना असम्भव हो जाता है। अनेक यात्री यहीं से गोमुख को प्रणाम करके लौट जाते हैं। हम सौभाग्यशाली थे। हिम पर से होकर उस पार चले गये। बच्चों की तरह उल्लास से भर कर स्वामीजी बोले— अब हम देवलोक में आ गये।

भागीरथ और शिवलिंग शिखर निरन्तर पास आते जा रहे थे। बायीं ओर नैलंग पर्वत श्रेणी थी, जिसका वर्ण आगे चलकर ताम्र का-सा हो जाता है। और वह ताम्रवर्णी पर्वत कहलाता है। जड़ी-बूटियाँ इस सारे मार्ग पर बिखरी पड़ी हैं। स्वामीजी ने एक बूटी उखाड़ कर कहा—यह आर्चा है। टिंचर आयोडीन की तरह इसे चोट पर लगाया जाता है। यह देखो पांगचा। इसकी सूखी पत्तियाँ चाय की तरह काम में आती हैं, लेकिन बहुत गर्म होती हैं। इसी के सहारे तो हम हिम-प्रदेशों में जीवन की ऊष्मा पाते हैं।

मार्ग में हिमनद बार-बार आते हैं। पार करना सरल नहीं। पक्की बरफ पर किस क्षण पैर फिसल जाय। एक स्थान पर देखा कि नदी की उथली धारा में पत्थर पड़े हुए हैं। सोचा इसको आसानी से पार कर लेंगे, लेकिन जैसे ही यशपालजी ने पैर बढ़ाया, स्वामीजी ने उन्हें रोक दिया। तब ध्यान से देखा कि उन पत्थरों पर हिम की झीनी-झीनी चादर बिछी हुई है। उस पर पैर टिकाना असम्भव है। स्वामीजी ने लोहे की नोक से उस हिम को खुरचा। फिर मिट्टी लाकर डाली तब कहीं हम धारा को पार कर सके। अब हम गंगा हिमानी को भी देख सकते थे। उसी के बीच में गोमुख एक विशाल रन्ध्र की तरह चमक रहा था। स्वामीजी बोले— बस इस मोड़ के बाद वहाँ पहुँच जायेंगे।

यहाँ के विकट मार्गों पर यात्री भटक न जाय, इस कारण ऊँचे-ऊँचे पत्थरों पर छोटे-छोटे दो-दो तीन-तीन पत्थर रख कर संकेत बना दिये गये हैं। स्वामीजी इस मार्ग से इतने परिचित हैं कि तुरन्त कोई न कोई शंकु-पथ खोज लेते हैं। उन्हीं के सहारे हम मेरू हिमधारा के पास पहुँच गये। यह धारा गोमुख से दो मील ऊपर तपोवन से आती है। कैसा अद्भुत दृश्य है। चारों ओर शुभ्र श्वेत हिम शिखर, कलकल करती वेगवती भागीरथी की धारा में बिखरी-विहँसती धूप, नील गगन में यहाँ-वहाँ क्रीड़ा करते मेघशावक, मानो आमंत्रित करते हैं कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आओ हमारी क्रीड़ा में भाग लो। बंगाली-दल का मार्गदर्शक सहसा वहीं लेट गया और गाने लगा। उस गढ़वाली गीत का अर्थ मैं नहीं समझता। उसी से पूछना पड़ा। मुस्कराकर बोला– मुझे याद आ रही है, मुझे अपने माँ-बाप की याद आ रही है। 'फिर एकाएक गाता-गाता कह उठा,' मैं मरना चाहता हूँ। मैं यहीं मरना चाहता हूँ।'

जब हमने विशाल पत्थरों वाले इस अन्तिम मोड़ को पार कर लिया तब ऐसा लगा, मानों किसी दिव्य लोक में पहुँच गये हों। यही है विश्व विश्रुत 'तुहिन शिखर श्रृंगे दिव्य सौभाग्य समवन्' गोमुख। यही है १६ मील लम्बी हिमानी का द्वार। यही है शिव की जटाओं से खेलने वाली विष्णुपदी पुण्यतोय भागीरथी का शिशु-रूप। गति में अदम्य वेग भरे, शिलाखण्डों से भेंटती, सब कहीं शुभ्र श्वेत धवल सुषमा बखेरती, हिमवान की यह यौवन मदमाती लाडली बेटी रत्नेश में लय होने के लिए भागी चली आ रही है। शिखर शान्त गम्भीर हैं, मानों इस उद्याम गतिमय जीवनानन्द से स्तब्ध रह गये हों। हिमानी की विशाल पारदर्शी दीवारें लक्ष-लक्ष धाराओं में पिघल कर बेटी को अर्घ्य देती, उसे रिझाने को शत-शत इन्द्रधनुषों का निर्माण करती मौन युगपुरुष सी न जाने किस अनादि काल से ऐसे ही खड़ी हैं। अन्य तीर्थों की भांति यहाँ न मन्दिर हैं न पण्डे-पुजारी। न भिखारी, यहाँ तो अपने दिव्य रूप में प्रकृति की विराटता का निरवैयक्तिक विपुल ऐश्वर्य ही चारों ओर फैला हैं, 'यो वै भूमाः तत् सुखम् नाल्पै सुखम् अस्ति।'

उस दिन समझ सका स्तब्धता क्या होती है। सर्मपित किस अवस्था का नाम है?

इस उद्‌गम का स्थान गौमुख (१२,८०० फुट) है। परन्तु यहाँ गाय का मुख नहीं बना है। गौ का एक अर्थ पृथ्वी भी होता है। यह निश्चय से नहीं कहा जा सकता कि भागीरथी का वास्तविक उद्‌गम यही है। यह हिमानी चौखम्बा शिखर से आरम्भ होकर गौमुख में समाप्त होती है। अर्थात् १६ मील लम्बी हिमानी के भीतर से बहती हुई भागीरथी इस स्थान पर पहली बार पृथ्वी पर प्रगट होती दिखायी देती है। इसीलिए इस गुहाद्वार का नाम गोमुख हो गया है। कहीं-कहीं यह हिमानी ४ मील चौड़ी है। इसकी आयु क्या है, कोई नहीं जानता।

माधव किशोरोचित अल्हड़ता से सबसे पहले गुहा द्वार के पास पहुँचने के प्रयत्न में था। मेरे साथ थे सतीशचन्द्र। हमारे पैरों में भी जैसे गति भर गयी थी। गुहा के पास जाकर हम आनन्दातिरेक से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुलक उठे और उस भयंकर शीत में प्राणों की चिन्ता भूलकर स्नान करने के लिए वस्त्र उतारने लगे। कुछ क्षण वाद ही शेष साथी भी आ पहुँचे। हम स्नान करने जा ही रहे थे कि बालोचित चपलता से कूद कर स्वामीजी हमारे पास आये और बोले– आओ गुहा के अन्दर चलें।

इस रहस्यमयी हिमगुफा के भीतर क्या मानव कभी जा सकेगा? परन्तु तब तो जीवन और मृत्यु की सीमा रेखा ही मिट गयी थी। दूसरे ही क्षण हमने पाया कि हमारे सिर पर नील श्यामल शाश्वत हिम की छत है, शरीर सिहर रहा है, प्राण पुलक उठ हैं। सहसा चेतावनी पाकर हमने पंचस्नानी की। स्वामीजी ने मन्त्र पढ़े और उस पारदर्शी हिम-गुहा की दीवारों में अपना प्रतिविम्ब देखते हुए हम लौट पड़े। यक्ष प्रियाम इन्हीं प्राकृतिक दर्पण में तो अपनी छवि निहारा करती होगी।

सूर्य ताप के कारण हिमानी वरावर पिघल रही थी और असंख्य जलधाराओं के साथ-साथ उसकी छत पर पड़े लघु और विशालकाय पत्थर नीचे सरक आते थे। जैसे हम ही बाहर आये, यशपाल अन्दर पहुँचे। माधव भी दौड़े दौड़े आये। तभी सहसा पत्थर गिरने लगे। भयातुर होकर हमने बाहर आने के लिए पुकारा। लेकिन जलधारा के प्रचण्ड स्वर के कारण वे सहसा सुन न पाये। वार-बार हाथ से संकेत करने पर ही वे बाहर निकले। यशपाल निकले ही थे कि एक पाषण-खण्ड उनके सिर के ऊपर से होता हुआ बड़े वेग से जलधारा में आ गिरा। माधव और भी पीछे थे, क्षण भर के लिए हम सकपका उठे। लेकिन वह भी सकुशल बाहर आ गये। इस संकट से वच जाने के कारण स्वाभाविक रूप से हम सबको बड़ी खुशी हुई, लेकिन दिलीपसिंह क्रुद्ध हो उठा। बोला, 'ऐसे स्थानों पर दुस्साहस परिचय देना कोई गर्व का विषय नहीं है, मूर्खता है।''

गुहा के मुख्य द्वार से कुछ इधर ही हम लोगों ने स्नान किया। नेत्र मूंद-कर कम्पित शरीर और पुलकित प्राणों पर पात्र में भर-भर कर हिम जल डालने लगे। सब परिजन और मित्रों के नाम विद्युत गति से मस्तिष्क में उभर रहे थे। चलते समय उनकी इच्छा थी कि पवित्र सरिता में स्नान करते समय हम उन्हें भूल न जायें। यह इच्छा उस समय कैसी भयंकर हो उठी थी, उसकी कल्पना अकल्पनीय ही है। लगता था रक्त मानो हिम वन गया है। परन्तु, जैसे ही कसकर तौलिये से शरीर रगड़ा, रक्त की गति तीव्र हुई तो लगा मानो जीवन-दायिनी ऊष्मा के स्पर्श से सब रोग-शोक नष्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गये हैं। धर्मभीरु इसी सौभाग्य को 'पुण्य' संज्ञा देते हैं।

मैं शिलाखण्ड पर बैठकर पत्र लिखने लगा। मेरे तीनों ओर पारदर्शी हिमानी है। उसका इन्द्रधनुषी रूप मेरी आँखों में तैर रहा है। देखता हूँ धीरे-धीरे सभी साथी स्मृतिस्वरूप भोजपत्रों पर प्रियजनों को पत्र लिखने लगे। तभी दिलीप बिना चीनी की वही काली मिर्च वाली चाय ले आया। श्रीप्रभा लायी चूरमा। भागीरथी के तटवर्ती एक बड़े शिलाखण्ड पर हमने वह अपूर्व भोजन किया और फिर पत्र और डायरी लिखने में व्यस्त हो गये। डेढ़ घण्टा बीत चुका है। दिलीप का आदेश है, "अब हमें लौट चलना चाहिए। किसी भी क्षण हिमपात हो सकता है। तब यहाँ से निकलना असम्भव हो जायगा।"

मन नहीं चाहता, लेकिन लौटना तो है ही। तुरन्त खड़े हो गये। एक बार जी भर कर उस रूप को देखा। वह वर्णनातीत रूप, वह पारदर्शी हिमानी, उड़ते जलसीकर, निरन्तर रिमझिम- रिमझिम टपकती बूंदों से बनी झाड़फानूस सी सहस्रों सीटियाँ और उन सब पर पड़ती सूर्य किरणें, जो प्रतिक्षण असंख्य इन्द्रधनुषों का निर्माण करती हैं, प्रकृति का यह अनन्त मुक्त विस्तार यह निर्विकल्प सत्ता की बोधमयता, कैसे बताऊँ क्या आनन्द था वह। ब्रह्मानन्द सरोवर ऐसा ही तो होता होगा।

कैसा सौभाग्य था। कल मेघ छाये थे। आज इस हिम-प्रदेश में भी प्रखर धूम फैली है। स्वामीजी बोले, "बड़े पुण्यात्मा हैं आप। यहाँ धूप कहाँ? विरल ही इस सौभाग्य का अधिकारी होता है।" सोचा, वह मार्गदर्शक तभी तो यहाँ मरना चाहता था। ऐसे सुन्दर, पवित्र और दिव्य स्थान पर आकर जीने की कामना कहाँ रह जाती है? कैसा लगता होगा यह प्रदेश, जब यहाँ चारों ओर हिमका सन्नाटा छा जाता होगा अकल्पनीय ...

★

[अयोध्या : पृष्ठ ३७ का शेष]

इसी प्रकार की कथा है कि महाराजा विक्रमादित्य ने ध्वस्त मंदिर का जीर्णोद्धार किया और उसमें भगवान श्रीराम की प्रतिमा की स्थापना की। यह प्रतिमा 'पद्मासन' नामक किन्नर युवती ने उन्हें दी थी और कहते हैं उसे यह प्रतिमा भगवान कृष्ण द्वारा प्राप्त हुई थी। भारतवर्ष में मुसलिम शासन की स्थापना के बाद मन्दिर नीचे तक ढह गया था; किन्तु एक पण्डा ने प्रतिमा को किसी प्रकार सुरक्षित बचा लिया।

सन् १७२१ में अयोध्या जब लखनऊ के उदार नवाब वज़ीर के आधीन हुआ तो उन्होंने मन्दिर का पुर्ननिमाण करा कर प्रतिमा की पुनर्स्थापना करायी।

—क्रमशः

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय

नयी कविता में चित्रित मानव

नयी कविता की विभिन्न धाराओं में जो वर्तमान और सम्भावित मानव की मूर्ति उभर रही है, तेजस्वी साहित्य-चिन्तक डॉ. उपाध्याय द्वारा उसका यह पर्यालोकन, उसका एक सम्यक् आकलन प्रस्तुत करता है।

नयी कविता में जीवन-दृष्टि के अनुसार चित्रित मानव की मूर्तियाँ विविध रूपों में सम्मुख आ रही हैं। मुख्यतः नयी कविता में तीन धाराएँ प्रबल हैं– प्रथम,– अज्ञेयवादी धारा, इसके भी दो रूप हैं, अज्ञेयवादी धारा, द्वितीय प्रयागवादी धारा, इसमें जगदीश गुप्त, विजयदेवनारायण साहीं, लक्ष्मीकान्त वर्मा, भारती धर्मवीर, कुँअर नारायण आदि कवि हैं (यह आवश्यक नहीं है कि प्रयागवादी होने के लिए सभी कवि इलाहाबाद के ही निवासी हों)। द्वितीय धारा है– प्रगतिशील प्रयोगवादी धारा अथवा प्रगतिशील नयी कविता, इसमें श्रीकान्त, नरेश मेहता, शमशेर, भारत-भूषण, केदार आदि कवि हैं। तृतीय धारा, अध्यात्मवादी प्रयोगवाद की धारा है, इसमें श्री सुमित्रानन्दन पन्त, वीरेन्द्रकुमार जैन, आदि कवि हैं। यह विभाजन "जीवन-दर्शन" पर आधारित है, यह स्मरणीय है। अन्य कवि इन्हीं धाराओं में प्रतिष्ठित किये जा सकते हैं।

उक्त तीनों धाराओं में चित्रित मानव भिन्न प्रकार का है। अतः नूतन काव्य को पढ़कर कोई एक मानव मूर्ति नहीं बनती, किन्तु यह अवश्य है कि तीनों मूर्त्तियों में कुछ तत्त्व, कुछ रेखाएँ और कुछ उपकरण अवश्य समान हैं।

सामान्य उपकरण है, मध्यवर्गीय मनो-वृत्ति, जो सभी मूर्त्तियों में मिलती है, क्योंकि आज का काव्य मुख्यतः शिक्षित मध्यवर्ग की ही सृष्टि है। मध्यवर्ग इस देश में पर्याप्त जागरूक वर्ग हो गया है। इस वर्ग में दो प्रमुख धाराएँ दिखायी पड़ती हैं। प्रथम, प्रगतिशील या जनवादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारा है, इसमें समाजवादी, साम्यवादी लेखक हैं, और वे अध्यात्मवादी भी, जो बावजूद अपने अन्धविश्वासों के, सामूहिक-प्रयत्न द्वारा देश की अधिकाधिक जनता का कल्याण चाहते हैं और स्वतंत्रता के पश्चात् जिनकी चेतना नवनिर्माणात्मक प्रवृत्तियों का समर्थन करती है। मध्यवर्ग का द्वितीय वर्ग प्रतिक्रियावादी है, जिसमें अज्ञेयवादी तथा प्रयागवादी दोनों सम्मिलित हैं। यह "समग्रत:" निर्णय है, जीवन-दर्शन अथवा वास्तविकता के प्रति "एप्रोच" को ध्यान में रखकर ही यह निर्णय किया गया है। अर्थात् प्रतिकियावादी कवियों की रचनाओं में भी यत्र-तत्र प्रगतिशील तत्त्व मिलते हैं; किन्तु समग्रत: उक्त विभाजन सही है।

सर्व प्रथम अज्ञेयवादी काव्य में चित्रित मनुष्य पर विचार होना चाहिए, क्योंकि कालक्रम से वही प्रथम आया। अज्ञेय के अपने काव्यसंग्रहों (इत्यलम् से लेकर अब तक) तथा उनके सम्पादित संग्रहों में इस नये मानव की खोज करनी चाहिए, किन्तु कठिनाई यह है कि अज्ञेय द्वारा सम्पादित काव्य-संग्रहों में एक भी कवि अज्ञेय का पूर्ण अनुवर्त्ती नहीं है। प्रथम दो संग्रहों में अधिकांशत: कवि प्रगतिशील कवि थे, अत: उन प्रगतिशील कवियों द्वारा चित्रित मनुष्य की मूर्त्ति की एकमात्र विशेषता यह है कि वह छायावादी रूपरंग के आकर्षण को झाड़-कर "प्रकृत जीवन" और प्राकृतिक सौन्दर्य की तलाश में घूमता हुआ प्रतीत होता है। इस मनुष्य की दूसरी विशेषता यह है कि वह "राजनैतिक स्थूलता" से ऊबकर आंतरिकता के अनुसंधान में तल्लीन होता हुआ दिखायी पड़ता है, यद्यपि यह आंतरिकता आध्यात्मिक नहीं है, मुख्यत: यह मनोवैज्ञानिक है, इसमें ऊपर की गर्जना के नीचे अंतस् की आकुलता को पकड़ने का प्रयत्न है।

किन्तु अज्ञेय की अपनी कविताओं में एक दूसरे प्रकार का मनुष्य दिखायी पड़ता है। यह मुख्यत: "वर्जनाग्रस्त" प्राणी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

है, फ्रायड और मार्क्स दोनों से संग्रथित चेतनावान् प्राणी! इस जीव में आर्थिक अभाव और कामभोग का अभाव, ये दो अभाव मुख्य दिखायी पड़ते हैं। वह संतुलन की खोज में है, समाधान की खोज में है, परन्तु संदेहों और अभावों के जटिल जाल में उलझ कर वह कोई मार्ग नहीं पाता, इसलिए पदार्थ पर दृष्टि पड़ते ही, वह ऐसे उपमानों की खोज करता है, जो उसकी "संक्लिष्ट" मानसिक स्थितियों को व्यंजित कर सके। यह व्यक्ति अब तक के सब "फारमूलों" को अपर्याप्त पाता है, परन्तु उसके पास अपना कोई 'फ़ारमूला' नहीं है, अतः वह द्विधाग्रस्त चेतना के भार को लिये अनेक ऐसे तर्कों का जाल बुनता है, जिन पर उसे स्वयं विश्वास नहीं होता। धीरे-धीरे राष्ट्रवाद, उग्रक्रान्तिवाद और अवशिष्ट समाजवाद के आवरण को फेंक कर (इंत्यलम् में बहुत सी पुराने खेवे की रचनाएँ हैं) एक सत्य की उपलब्धि करता है कि विश्व का कल्याण साम्यवाद से नहीं हो सकता। उक्त मनुष्य की ये दो स्थितियाँ इंत्यलम् में ही मिल जाती हैं–

संदेह –

सत्य एक है, क्योंकि वह एक ग्रन्थि है जिसके सब सूत्र खो गये हैं।

साम्यवादी फारमूलों का विरोध :–

समानान्तर सूत्रों से बुनाई नहीं हो सकती जीवन का पट बुनने के लिए आवश्यक है कि बहुत से सूत्र आड़े पड़ें।

प्रयागवादी सम्प्रदाय का मनुष्य अपने गुरु से यश-प्राप्ति में अधिक जागरूक, तिकड़म और षड़यन्त्रों में अधिक प्रवीण और नकल करने में अधिक होशियार है। मुख्यतः यह व्यक्ति विचारों का अनुकरणकर्ता है, परन्तु उन्हें अभिव्यक्त करने के लिए नये-नये उपमान खोजता है। यह मनुष्य हर करवट पर नवीन प्रेमिका की चाह रखने पर भी "दायित्व" की बातें करता है और जीवन का पूरा "रस" लेकर भी 'रसवाद' को आदिम संवेगमात्र मानता है। वह "अर्थ में लय" उत्पन्न करना चाहता है, किन्तु जीवन में और प्रकृति में जो लय है, उसे छन्द की लय की तरह छोड़ देता है। वह परिप्रेक्ष्य की नवीनता पर बल देता है, किन्तु उसे "मृत आत्मा की वसीयत" अथवा स्टोव के सम्मुख बैठकर अपनी तकदीर पर रोने के सिवा कुछ दिखायी नहीं पड़ता। वह 'सौन्दर्यबोध' के नये धरातलों की खोज में विकल रहता है, किन्तु जब उसे अपने पैरों के नीचे की धरती खिसकती हुई प्रतीत होती है, तो वह अपने इस स्वकल्पित कष्ट और दर्शन के कारण समझता है कि उसके सीने में किसी ने "ठंडा लोहा" रख दिया है। वह अभिमन्यु की तरह नये प्रश्नों से न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जूझकर "टूटे रथ का पहिया" लेकर अपने ही सर पर आघात करता है और इस तरह इस नये अनुभव को अमूल्य बताकर लोहूलहान चेतना को दिखा-दिखा कर अपने शहीद होने की घोषणा करता है।

वह परम्परा का घोर विरोधी है, किन्तु वह निषेध मूलक दृष्टि को ही सर्वस्व समझता है और उसका अनुमान यह है कि उपवन से सब पुराने पौधों को उखाड़ देते ही उपवन हरा हो जायगा, नये बीज, खाद, पानी आदि के प्रवन्ध के लिए प्रयत्न को वह 'सामूहिक षड़-यन्त्र" समझता है। वह अध्यात्मवाद का विरोध इसलिए करता है कि वहाँ आत्मा का विराट के प्रति समर्पण करना पड़ता है, जो अपमानजनक है और भौतिकवाद का इसलिए कि उसमें इतिहास को व्यक्ति से अधिक महत्व दिया जाता है। पहले मत में व्यक्ति को "दृविअन्न" और दूसरे में उसे "कठपुतली" बना दिया जाता है, किन्तु दोनों का विरोध करते हुए भी यह सोचता रहता है कि कहीं वह भूल तो नहीं कर रहा है, क्या पता ये दोनों मत सही हों या इनमें कोई एक सही हो। इस "उलझन" को वह "युगसत्य" कहकर अपनी संदेहग्रस्त चित्तवृत्ति का चुम्बन करता है और गरज कर कहता है कि आज के मनुष्य को ईमानदारी के साथ यह मान लेना चाहिए कि मनुष्य की मुक्ति का कोई उपाय नहीं है।

प्रयागवादी मनुष्य का जुड़ने पर आग्रह नहीं है, टूटने पर आग्रह है। वह चारों ओर टूटन और बिखराव के दर्शन करता है। इस सम्बन्ध में नया मानव लक्ष्मीकान्त वर्मा के इस उद्धरण को प्रातः, सन्ध्या तथा दोपहर में रटता रहता है, प्रार्थनाओं के स्थान पर इस उद्धारण को "राष्ट्रीय-गायन" बनाने का भी प्रस्ताव आयेगा, ऐसी आशा है :–

"मूल्य टूट गये हैं, संवेदनाएँ बिखर गयी हैं, विद्रोही होकर मरने वाले के प्रति श्रद्धावान होने की परम्परा . . . बराबर मिलती है, किन्तु वह जो आज की व्यवस्था के सामने टूटता है, उसका महत्त्व क्या कम है ? क्या उसका टूटना या विघटित होना भी सत्य नहीं है ?" (नयी कविता के प्रतिमान)

नयी कविता का तीसरा रूप अध्यात्म-वादी प्रयोगवाद में मिलता है, "कला और बूढ़ा चाँद" और "अनागता की आँखें" इस धारा के प्रतिनिधि काव्य हैं। इन काव्यों में चित्रित मनुष्य उतना ही विकट आशावादी है, जितना प्रयागवादी निराशा-वादी। यह मनुष्य "भौतिक का आत्मी-करण और आत्मिक का भौतीकरण" करना चाहता है और इस धरती पर अरविन्द दर्शन से प्रेरित होकर "सुपरामेण्टल" या अति-मानसिक प्रकाश की अपेक्षा और आशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर रहा है। यह 'विज्ञान' और 'सामूहिक प्रयत्न' का समर्थन करता है। इस मानव और "प्रगतिशील" मानव में, जहाँ तक धरती का सम्बन्ध है, कोई अन्तर नहीं दिखायी पड़ता; परन्तु जहाँ प्रगतिशील या प्रगतिवादी मानव द्वन्द्वात्मक विकास को सम्भव मानकर अलौकिकसत्तावाद का निषेध करता है, वहाँ यह अध्यात्मवादी मनुष्य सब कुछ 'ब्रह्म' की प्राप्ति द्वारा ही सम्भव मानता है। वह प्रयागवादियों और अज्ञेयवादियों के मृत्युपूजावाद, आत्महत्यावाद, टूटन-बिखरनवाद, लघुतावाद, अंधायुगअंधतावाद, अनैतिकतावाद, निराशावाद, कुण्ठावाद, अस्तित्त्ववाद आदि रोगों की ओषधि केवल "ब्रह्मवाद" में मानता है और उसे इतनी घोर आस्था है कि वह अन्य किसी दृष्टि को विकृत अथवा अपूर्ण मानता है। निराशा और अनास्था के वातावरण में इस धारा के मनुष्य की आशा और आत्मविश्वास आश्चर्यजनक रूप से आनन्दमय लगता है, यद्यपि इस धारा के मनुष्य को सामान्य व्यक्ति नक्षत्रदर्शी, गगनताकी, अव्यावहारिक और असम्भववादी समझता है।

नयी कविता की तीसरी "मानवमूर्ति" प्रगतिशील मानवमूर्ति है। इसमें "कृति" सम्प्रदाय की कृतियाँ तथा अन्य सब कवियों और गीतकारों के नूतन प्रयोगों की रचनाएँ आती हैं। यह "व्यक्ति" शैली तो 'शत्रु' की अपनाता है, किन्तु बात अपनी कहता है। इसमें लोक जीवन की छवियों को देखने का अधिक आग्रह है। उपमानों के नवीनीकरण में यह व्यक्ति प्रयागवादियों से होड़ करता है, किन्तु इसमें वर्ग-वर्णहीन समसमाज की स्थापना के लिए वर्तमान समान पर व्यंग्य और परविद्रूप अधिक मिलता है। वर्तमान परिस्थितियों से खीझ इन्हें भी है, किन्तु पूरी कविता में निराशा, कटुता, क्रोध का चित्रण करने के पश्चात् अन्त में यह कवि आशा के स्वर के साथ अपना वक्तव्य समाप्त करता है—

काँपता सा हाथ रख कर कहा
सुनो, मैं भी पराजित हूँ
पर न जाने क्यों, पराजय ने मुझे शीतल किया
और हर भटकाव ने गति दी !

"शत्रु" के नाम तक का अनुकरण करने वाले कवि इस सम्प्रदाय में हैं, अतः प्रायः यह भ्रम हो जाता है कि मदन वात्स्यायन तथा "तृतीय सप्तक" के सभी कवि अज्ञेयवादी हैं। ये कवि कारखाने को "सर्प का बिल" कहेंगे, पर इसलिए कि उनमें अफसर आत्याचारी हैं, देश की वर्तमान स्थिति को इसलिए असह्य बताएँगे, क्योंकि वह विषम है, अतः धारा में ऊबते-डूबराते एक ऐसे मानव की मूर्त्ति सम्मुख आ रही है, जिसे विश्वास है कि वह ठिकाना अवश्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पा जायेगी। अध्यात्मवादी को जहाँ यह विश्वास है कि ब्रह्म अपनी प्यारी सृष्टि का उद्धार अवश्य करेगा, वहीं प्रगतिशीलों को यह विश्वास है कि इतिहास की गति उनके अनुकूल है और प्रयागवादी चाहे कितना ही मिथ्या प्रचार क्यों न करें, अन्त में उन्हीं की विजय होगी। अतः यह "नया मानव" बीजों को फूलों की आशा से सींचता हुआ, मन के परतों के परत मुक्ति के सूरमाओं को गिनाता हुआ. जड़ता और द्विधा के बादलों के फटने की प्रतीक्षा करता हुआ, और दरवाज़े पर फटफटाती आँधी की पगचाप सुनता हुआ कह रहा है :—

व्यर्थ शंकाएँ न कर, अब रुको मत ओ
अप्रस्तुत मन !
अभी जीवन में बहुत कुछ है अनागत,
बहुत बाक़ी है !

इस प्रकार "अनागता की आँखों" का आदमी और भारतभूषण के "अप्रस्तुतमन" वाला आदमी दोनों "अनागताक्रान्ति" का आवाह्न कर रहे हैं !

प्रगतिशील काव्य में चित्रित व्यक्ति मध्यवर्ग का वह मुसीबतों से आक्रान्त व्यक्ति है, जो 'टूटन' का अनुभव तो प्रयागवादियों की ही तरह करता है, किन्तु वह उसका कारण जानता है और यह भी कि यह टूटन अस्थायी है, स्वयं हमारे लिए चुनौती है। कुछ ऐसी भी मानवमूर्त्तियाँ हैं, जो अपनी अनिश्चित मुद्रा का वर्णन करती हैं, किन्तु वह यह भी जानती हैं कि कुण्ठावादियों का दल कौरवीदल है :—

वह कुण्ठा का पुत्र हमेशा, कौरवदल
की ओर रहेगा।

तथा

हाँ जिस दिन पिंजड़े की सलाखें मोड़ लूंगा मैं
उस दिन सहर्ष जीर्ण देह छोड़ दूँगा मैं

बच्चन, शम्भूनाथ सिंह, चेतन, नीरज, ठाकुरप्रसाद सिंह आदि अनेक गीतकारों ने भी नये-नये प्रयोग किये हैं, परन्तु इनमें चित्रित मनुष्य "औषध दूध धोई—अविकचस्तनी मुस्कान", "चम्पई धूपवधू", "चाँदनीसी गंध", गायों का दुग्धदोहन रव, कुलियों की बख्शिश सी कृतार्थता जैसे मधुर सौन्दर्यबोध की तलाश में मग्न प्रतीत होते हैं। यह "गायक मानव" प्रेम, सद्भाव, आनन्द, विनोद, विश्वास और श्रृंगार का कवि है, वह युद्ध वादियों के विरुद्ध राकेट की गति से आक्रमण करता है, पूंजीपतियों पर वह हज़ारों मैगाटन वाले अस्त्र के स्फिोट की तरह भीषण आक्रोश प्रकट करता है, वह समुद्रों की गहराई की तरह गहरे प्रेम को हृदय में हिल्लोलित करता हुआ इस आशा पर जीवित है कि प्रेम शाश्वत विषय है और वह कठोर पत्थर को भी द्रवित करके रहेगा। उसमें भी वेदना है, कसक है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कष्ट है, परन्तु उसका पथ उलझनग्रस्त नहीं लगता, वह भविष्य के सम्बन्ध में निःशंक है। जब उसे लगता है कि उसका 'प्रेयसीवाद' प्रगति का विरोधी बन रहा है, तब वह अपनी सनातन प्रेयसी को माध्यम बनाकर 'आपबीती' के माध्यम से "जगबीती" कहने लगता है, यदि उसके मधुर गीत सुनकर मानवता स्वप्न-मग्न होने लगती है, तो वह समझता है कि थकी हुई मनुष्यता को प्यार की थपकी भी आवश्यक है और लाडभरी लोरी भी !

संक्षेप में नयी कविता में चित्रित मानव की यही मूर्त्ति है। आधुनिक चित्रकला में चित्रित मानव की विभिन्न मूर्त्तियों से इनका अद्‍भुत सादृश्य मिलता है। प्रत्येक कवि एक "विशिष्ट" और "सामान्य" मानवमूर्त्ति का सृजन कर रहा है, जिसका अलग-अलग अध्ययन आकर्षक होगा। प्रश्न यह होगा कि अंततः नये काव्य के मनुष्य की मूर्त्ति इतनी विषण्ण, इतनी कटुताग्रस्त और इतनी निषेधपरक मनोवृत्तियों से युक्त क्यों होती जा रही है। इसका उत्तर हम निबन्ध के प्रारम्भ में ही संकेतित कर चुके हैं। "नयी कविता" भारतीय मध्यवर्ग की समग्र और विशिष्ट मनोवृत्तियों का वास्तविक दर्पण है, जिसमें आप शिक्षित मध्यवर्ग की सारी दुर्बलताओं आशा, आकांक्षाओं निराशाओं, कुण्ठाओं महत्वाकांक्षाओं और विचारगत प्रतिक्रियाओं को देख सकते हैं। हमारे राजनैतिक, सामाजिक जगत् में इतनी परस्पर-विरोधी मनोवृत्तियों और विचारधाराओं की टकराहट है कि इस तुमुल-कोलाहल का स्वरूप समझ लेना अपने में एक दुरूह कार्य है। हमारे कवि पूरी ईमानदारी से प्रगति और प्रतिक्रियावाद से उत्पन्न भावनाओं को मुक्त होकर वाणी दे रहे हैं। इस घोर आन्दोलन में जीवित वही रहेगा, प्रेरक वही रहेगा, जो भविष्य के समाज के अनुरूप प्रमाणित होगा। वर्तमान का निर्माण सर्वदा भविष्य-वाणियों द्वारा हुआ है, देखना यह है कि प्रगतिशील आकाशवाणी कामयाब होती है, अथवा अध्यात्मवादी अथवा प्रयाग-अज्ञेयवादी। जहाँ तक इन पंक्तियों के लेखक की आस्था का प्रश्न है, वह "अज्ञेय-प्रयागवाद" को प्रतिक्रियावाद और अन्य धाराओं को गतिशील धारा मानता है और इन गतिमती लहरों से बनने वाली मूर्त्ति ही वास्तव में प्रणम्य है, प्रेरक है !

★

लेखक मित्रों से

निवेदन है कि अस्वीकृत रचनाओं की सूचना नहीं दी जा सकेगी, केवल स्वीकृत रचनाओं की सूचना एक महीने के भीतर तक चली जायेगी। केवल वही अस्वीकृत रचनाएँ लौटायी जा सकेंगी, जिनके साथ आवश्यक टिकट होगा।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णावतार

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

धारावाहिक पूर्ण-पुरुष लीला

चित्र : हिन्दी विश्व भारती, लखनऊ
के सौजन्य से : चित्रकार पन्नालाल

[३१]

अंधक की चेतावनी

अत्यधिक चिन्ता-भार से कंस का मानसिक कष्ट वढ़ता जा रहा था। वैसे तो एक प्रकार से वह अब अधिक शक्तिशाली बन गया था और आसपास के नरेश उससे भय-भीत भी थे। एक अति विशाल भूमि खंड पर एकछत्र शासन करने वाला उसका श्वसुर जरासंघ अब राजाधिराज बन गया था। स्वयं कंस के अधीन और उसके जरा से इशारे पर कुछ भी करने को तैयार, तीन हजार मागधी सैनिक मथुरा में स्थायी रूप से रहने लगे थे। कुछ असंतुष्ट सरदारों को छोड़ कर समस्त अंधक वंश के पुरुष उसके प्रति वफादार थे। यद्यपि उसकी अनुपस्थिति में अंधक सरदार प्रद्योत ने कुछ मूर्खता अवश्य दिखायी थी, फिर भी वह पहले की ही भांति उसका आज्ञापालक अनुचर था।

यादव उससे असंतुष्ट अवश्य थे, परन्तु उनमें एकता का अभाव था और उनका नेतृत्व करनेवाला भी कोई नहीं था। ब्राह्मणों को उदार रूप से दान दे कर अथवा सख्ती से उन्हें दबा कर उसने मूक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बना दिया था। अब तो केवल एक ही काम उसे करना था, और वह था एक प्रबल प्रहार से सौ विरोधी यादवों को नतमस्तक करना। कंस इन सब बातों को अच्छी तरह जानता था; अपनी दृढ़ स्थिति से भी सुपरिचित था; फिर भी वह बेचैन था क्योंकि देवकी का आठवाँ पुत्र अभी जीवित था। यहाँ तक तो नारद मुनि की भविष्यवाणी सच ही सिद्ध हुई। और, अब कृष्ण मथुरा आने-वाला था!

कंस सोचता था कि कृष्ण मात्र एक ग्वाले का पुत्र है; उसके पराक्रमों की जो चर्चा सर्वत्र फैल रही है, वह निश्चय ही अतिशयोक्तिपूर्ण होनी चाहिए, गाँव का कोई भी बहादुर जवान ऐसे साहस के कार्य कर सकता है! परन्तु वसुदेव, देवकी और बहुत से यादव उसे भावी तारणहार मान रहे थे। लोगों में भी उसके इस रूप के प्रति श्रद्धा दिखायी पड़ती थी। गर्गाचार्य वैसे अपनी वाणी या वर्तन से तो कुछ नहीं बताते मालूम पड़ते थे, परन्तु सभी यह मानते थे कि कृष्ण के उस रूप का परिचय उन्हें है। कंस ने स्वयं इस अफवाह को रोकने का प्रयास किया कि नन्द ग्वाले का लड़का ही देवकी का आठवाँ पुत्र है, परन्तु यादव सरदारों की सभा के समक्ष उसने स्वयं जो-कुछ कहा उससे इस तथ्य को कानों-कान फैलने से रोकना बहुत मुश्किल हो गया।

कई बार तो कंस को ऐसा लगता कि उसके आसपास कोई जाल रचा जा रहा है और वह उसमें अधिकाधिक फँसता जा रहा है। शांत चित्त से विचार करने पर लगता कि यह मात्र उसकी मिथ्या कल्पना है, भ्रम है; फिर भी इससे स्वयं को मुक्त करना उसके लिए असंभव हो गया।

आज रात कंस सदा से अधिक उद्विग्न था। वह विचार करने लगा कि अब तक अक्रूर वृन्दावन पहुँच गया होगा, छोकरे मथुरा आने की तैयारियाँ कर रहे होंगे, कल तक वे नगर में पहुँच जायेंगे—कैसे होंगे वे? उँह; इसकी क्या चिन्ता? और बालकों की तरह ही ये होंगे, उनसे भय कैसा?

फिर भी कंस को चैन नहीं पड़ा। मन को कचोटती इस अशान्ति को दूर करने के लिए उसे कुछ करना चाहिए। उसे वरदा याद आयी। युद्ध शेष होने पर मथुरा लौटते समय वह इस तरुण वारांगना को अपने साथ ले आया था। वह अतीव मनहर, सुन्दर और चित्ताकर्षक थी तथा स्वभाव से ही आनन्दमयी थी। अत्यधिक राजकार्य में कंस उसे भूल सा गया था। अब जब उसकी याद आयी तो उसे लगा कि उसके पास जाने से वह शायद चिंता-मुक्त हो कर फिर से स्वयं को स्वस्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभव कर सके।

महल के ही विशाल प्रांगण में एक पृथक निवास स्थान में वरदा रहती थी। उसके पास संदेश भेज कर, फिर तुरन्त ही कंस उसके पास चला गया। वरदा ने अति आनन्द और उत्साहपूर्वक उसका स्वागत किया। उसकी मदभरी चितवन और चांदी की घंटी के समान सुप्रिय स्वर गुंजाती मधुर वाणी से कंस का मनस्ताप कुछ शांत हुआ। महाराज के सामने उपहार की वस्तुएँ रख कर वरदा स्वयं पंखा झलने लगी। फिर उसने एक मधुर गीत गाया, कुछ देर नृत्य किया और फूल की गेंद के समान अपना सुकोमल शरीर कंस की बाहुओं में उछालते हुए कंस के आलिंगनपाश में वह बंध गयी। एक हाथ कंस के गले में डाल कर और अपना सिर उसके कंधों पर टिका कर वह अपनी जादूभरी चितवन से कंस की चिन्तातुर आँखों को देख कर मुस्करायी।

"सचमुच, तू अद्‌भुत है वरदा!' कंस ने कहा।

'और, आप क्या कम अद्‌भुत हैं, मेरे प्रभु!' कह कर वरदा अपने दोनों हाथ कंस के गले में डाल दिये। 'प्रसन्न तो हैं न, मेरे रसिया, मेरे राजा?' अत्यंत मधुर और धीमे स्वर में उसने पूछा। पुरुष को गुलाम बनाने की कला में यह वीरांगना सिद्धहस्त थी।

'जब तुम्हारे पास होता हूँ, वरदा, तब बड़ा आनन्द मिलता है मुझे!' कंस ने भावावेश से वरदा का चुंबन ले कर कहा, 'तुम्हारे साथ सदा सहवास मिले तो अपना राज्य भी दे दूं!' प्रणयोन्माद की मात्रा बढ़ रही थी और इस आवेग की आनन्दमय तृप्ति साधने के लिए वह तत्पर हुआ।

'तो मेरे एक प्रश्न का उत्तर देंगे?' वरदा ने धीरे से कंस के कान में कहा।

'एक नहीं, प्रिये, सौ प्रश्न पूछो!' कंस ने कहा और वरदा को अपने बाहुपाश में जकड़ लिया।

'तो एक बात का जवाब मुझे दीजिए। मैं किसी से कहूँगी नहीं।'

'किस बात का?'

'मेरे राजा, मेरे स्वामी, मुझे यह बताइए कि कल यहाँ देवकी का आठवाँ पुत्र आनेवाला है, क्या यह बात सच है?'

कंस का सारा शरीर तन गया। उसे ऐसा लगा कि मानों किसी सांप ने उसे डस लिया हो। उसका प्रणयावेग एकाएक मंद हो गया और आँखें फाड़े वह वरदा की ओर भयभीत दृष्टि से देखने लगा।

'किसने कहा तुझे?' वह गरज उठा।

अपने किये गये प्रश्न के पीछे क्या रहस्य है, इससे सर्वथा अज्ञात वरदा यह न समझ सकी कि कंस में एकाएक यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिवर्तन क्यों हो गया। हावभाव करती हुई उसके बाहुपाश में स्वयं को भर कर मधुर स्वर से उसने कहा, 'सारे महल में यही चर्चा हो रही है। मैं उसे देखना चाहती हूँ–लोग कहते हैं कि वह अवतारी पुरुष है।'

'तू उसे देखना चाहती है!' कंस ज़ोर से चीख़ उठा और पलंग पर से कूदते हुए चिल्लाया, 'देवकी के आठवें पुत्र को तू देखना चाहती है, वेश्या!' उसकी आँखें लाल हो गयीं, हाथ कांपने लगे। ज़ोर से पकड़ कर वरदा को उसने जमीन-पर दे पटका और ंधे हुए कंठ से 'वेश्या!' कह कर क्रोधपूर्वक बाहर चला गया।

'देवकी का आठवाँ पुत्र! हाँ, वह आनेवाला है। प्रत्येक मनुष्य जानता है कि वह मेरा वध करेगा–मेरा! सौ-सौ युद्धों के विजेता कंस का! ीक है, मैं भी दिखा दूंगा।'

सरदार प्रद्योत तथा मगध के राजकुमार वृतघ्न को उसने बुला भेजा, दोनों ने आकर देखा कि कंस क्रोध से उन्मत्त हो रहा है और क्रूरता का भाव उसके चेहरे पर अंकित है।

'वृतघ्न, प्रद्योत, यह सब क्या है? देवकी का आठवाँ पुत्र कल यहाँ आनेवाला है, यह बात सब जगह फैल गयी है!'

'प्रभु! क्षमा चाहता हूँ; परन्तु अधिकांश सरदारों ने आपके मुख से ही यह सुना कि अक्रूर उन्हें बुलाने जा रहे हैं। फिर यह बात गुप्त कैसे रह सकती थी?' विनम्र भाव से हाथ जोड़ कर प्रद्योत ने कहा।

'ख़ैर, जो हुआ सो हुआ,' कंस ने कहा, 'परन्तु मैं तुम्हें एक काम सौंपता हूँ। उस छोकरे को तुम इस महल में प्रवेश मत करने देना, न उसे मेरे समक्ष आने देना। मेरी उपस्थिति में उत्सव प्रारम्भ हो तब, परसों ही, इसका कोई हल निकाल लेना चाहिए। पवित्र धनुष को उठा कर उस पर से बाण छोड़ा जाय, तब भी उसे वहाँ उपस्थित रहने का कोई अवसर न दिया जाय! शायद वह तीर चलाने में भी निपुण हो!'

'जैसी प्रभु की इच्छा!' प्रद्योत ने कहा।

'प्रद्योत, तुम कुछ बदले हुए से मालूम देते हो! क्या हुआ है तुम्हें?' कंस ने पूछा।

'मुझे कुछ नहीं हुआ है प्रभु!' प्रद्योत ने उत्तर दिया। 'शायद काम का इतना अधिक बोझ मुझ से उठाया नहीं जाता-और अब मैं बुड्ढा भी तो हो चला!' एक फीकी हँसी हँस कर उसने कहा।

'प्रत्येक सरदार के पीछे एक-एक जासूस लगा दो, और अपने जातिभाइयों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरफ ज़रा ख़याल रखना कि वे [illegible] रहें। वृतघ्न, तुम ऐसा प्रबन्ध करो कि तुम्हारे आदमी प्रत्येक सरदार पर नज़र रखें। ये सरदार सब बेवफ़ा हैं— सभी यह चाहते हैं कि मैं मर जाऊँ। परन्तु मैं इन सब को ठिकाने लगा कर ही जाऊँगा,' कंस ने रोषपूर्वक कहा। इतने में एक दूत ने आकर समाचार दिया कि प्रद्योत के पितामह के भाई, नब्बे वर्ष के बाहुक अंधक किसी विशेष कार्य से कंस से मिलने आ रहे हैं।

कंस की भृकुटि तन गयी। यह विवेक-हीन बुड्ढ़ा यहाँ क्यों टपक पड़ा? परन्तु अपने ही वंश के वे एक गुरुजन थे, सरदार के रूप में सभी उनका सम्मान करते थे, इसलिए उन्हें ना कहना भी असम्भव था। भारी प्रयास कर कंस ने अपने मन को स्वस्थ किया और सिंहासन पर से उतर कर वृद्ध अंधक का सत्कार करने सामने गया। अपने पुत्र के कंधे का सहारा ले कर वृद्ध अंधक ने भीतर प्रवेश किया। इस उम्र में भी वे काफी बलिष्ट थे।

'काकाजी, इतनी रात गये आपने यहाँ आने की तकलीफ़ क्यों की?' कंस ने पूछा।

हाथों से आँख पर आवरण करते हुए अंधक ने पूछा, 'ये कौन हैं? ओह, प्रद्योत और कुमार वृतघ्न।'

'आसन पर विराजिए,' कंस ने कहा। कंस के सामने अंधक बैठे।

'काकाजी, क्या आज्ञा है आपकी?' यथासंभव विनम्र हो कर कंस ने पूछा।

'मैं तुम्हें अन्तिम बार सलाह देने आया हूँ। सबसे अधिक वृद्ध यादव के होने के कारण यह मेरा कर्तव्य है,' अंधक ने कहा।

'हाँ, काकाजी,' कंस बोला।

'वसुदेव के पुत्रों को लाने के लिए अक्रूर गये हैं। कल सुबह वे आ पहुँचेंगे।'

'हाँ.......।'

'मैं तुम्हें जन्म से पहचानता हूँ। तुम उन्हें अपने रास्ते से दूर हटाना चाहते हो,' अंधक ने कहा।

'मैं क्यों उन्हें दूर हटाऊँ? ये दो छोकरे मेरा कर ही क्या लेंगे?' कंस ने प्रश्न किया।

'तुम यदि कहो कि नारद की भविष्य-वाणी सच होने का भय तुम्हें नहीं है, तो मैं नहीं मानूंगा। मुझे छलने का प्रयास मत करो। परन्तु मैं चाहता हूँ कि तुम इस भविष्यवाणी को मिथ्या सिद्ध करो।'

'इस मूर्खताभरी बात को मैं मानता ही नहीं। और, जो भविष्यवाणी सच ही हो, तो उसे मिथ्या सिद्ध करने का उपाय क्या है?'

'पश्चाताप ही मनुष्य का मरण है और नवजीवन भी वही बनता है। तुमने जो कुछ किया उसका यदि पश्चाताप करो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो तुम्हारा नया जन्म होगा और साथ ही भविष्यवाणी भी सच हो जायगी।'

'इसका क्या भरोसा? मैंने कई लोगों को पश्चाताप करते हुए भी मरते देखा है।'

'शायद उन्होंने सच्चे हृदय से पश्चाताप नहीं किया। वसुदेव का पुत्र अवतार न हो तो भी पश्चाताप से तुम सबका प्रेम प्राप्त कर सकोगे। और यदि, जैसा कि कई लोग मानते हैं, वह अवतार ही हुआ तो उसके अनुग्रह से तुम अधिक सुखी और शक्तिशाली बनोगे।'

'और यह पश्चाताप मुझे किस प्रकार करना होगा?' कंस ने उपहास के स्वर में पूछा।

'मैं जानता हूँ कि मेरी बात तुम्हें सच नहीं लगती; परन्तु तुम्हें सच्चे मार्ग का दर्शन कराने के लिए ही मैं यहाँ आया हूँ। मुझे किसी का भय नहीं। वसुदेव और देवकी को तुमने सताया है, यादवों को ग़ुलाम बना डाला है, विद्वान ब्राह्मणों को मथुरा आने से रोक दिया है। यह नगर नर्क के समान बन गया है।' अंधक ने कहा।

'और कुछ?' कंस ने पूछा।

मानो कोई भविष्यवाणी कर रहे हों, इस प्रकार ऊँची आवाज़ और प्रज्ज्वलित नयनों से इस वृद्ध पुरुष ने कहा, 'कुमार, सबसे वृद्ध यादव के नाते मैं चाहता हूँ कि हमारा स्वातंत्र्य और ज़मीन जो तुमने छीन ली है, वह हमें वापस कर दो। वसुदेव, देवकी और उनके पुत्रों को निर्भय जीने दो। मथुरा से जो यादव भाग गये हैं, उन्हें सम्मानपूर्वक वापस बुलालो। पहले की तरह ब्राह्मणों के घरों में वेद-ध्वनि फिर से गूंजने लगे। लोगों को सताने के लिए जिन परदेशियों को तुमने यहाँ बुला रखा है उन्हें वापस भेज दो। अपने पिता को मुक्त करो और तुम्हें साथ रख कर वे राज्य चलायें, ऐसा प्रबंध करो। सबसे अधिक अपनी प्रजा को निर्भय और मुक्त करो!' अंधक ने कहा।

'इस प्रकार पश्चाताप कर मुझे निर्मल बनना चाहिए, यही आपकी इच्छा है न?' कंस ने पूछा, 'आप समझते हैं कि मैं दुष्टता का अवतार हूँ और इस दुष्टता से आप मुझे बचाना चाहते हैं। अच्छा, तो मैं ऐसा ही करूँगा। फिर?'

'फिर, देवताओं की तुम पर कृपा होगी और मथुरा, यादवों तथा स्वयं तुम्हारा उद्धार होगा। फिर कृष्ण, यदि वह अवतार हुआ तो, जो मांगोगे वही तुम्हें देगा। बोलो, ऐसा करने को तैयार हो तुम?' अंधक ने पूछा।

'काकाजी, मुझे विचार करने दो। आपकी सलाह मुझे लगती तो उत्तम है, फिर भी मुझे कुछ सोच लेने दीजिए,' कंस ने कटाक्षपूर्वक कहा।

'तूं मुझे एक मूर्ख बुड्ढ़ा समझता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह मैं जानता हूँ,' अंधक ने कहा। सच्ची सलाह मानना तेरे लिए मुश्किल है। मैं तुझे अन्तिम चेतावनी देता हूँ।' क्षण भर वे रुके, उनकी आँखों से अंगारे बरस रहे थे। 'यादवों का तूं शत्रु बन बैठा है और उनके उद्धारक का विनाश करना चाहता है। परन्तु अच्छी तरह सुन ले कि एक भी यादव के रहते कृष्ण का बाल भी बांका नहीं हो सकता। कृष्ण तो यादवों के लिए अंतिम आधार-स्थान है, और यदि तूं समझ सके तो तेरे लिए भी!'

'काकाजी, मुझे डराने का प्रयत्न न करें,' कंस ने कहा, 'मुझे जो ठीक लगेगा वही मैं करूँगा।'

'तूं यदि अपने आचारविचार में परिवर्तन नहीं करेगा, तो भगवान शंकर का कोपभाजन बनेगा,' अंधक ने कहा।

'मैं भगवान से नहीं डरता,' कंस बोला।

'अभिमान से मत्त हो कर जो भगवान का डर नहीं रखता है, उसका विनाश अवश्यम्भावी है और जिस प्रजा को ऐसा राजा मिलता है, उसकी भी अधोगति होती है,' अंधक ने कहा।

'जरा ठहरिए काकाजी!' कंस ने हँस कर कहा। वृतध्न की ओर घूम कर उसने कुछ उसके कान में कहा। वृतध्न ने सम्मति दर्शायी और खंड से बाहर चला गया।

'काकाजी, आप ठीक कहते हैं,' कंस ने कटाक्ष से कहा, 'मैं कृष्ण को कोई हानि नहीं पहुँचाऊँगा। प्रद्योत, तुम इसका ख़याल रखना।'

'जैसी प्रभु की आज्ञा!' प्रद्योत ने कटुतापूर्वक कहा। कंस की मुस्कान का अर्थ वह ठीक से लगा नहीं सका।

'वत्स, तूं अपने वचन का ख़याल रखता है या नहीं, मैं इसका ध्यान रखूंगा, कह कर अंधक खंड से बाहर चले गये। उनके साथ प्रद्योत भी जाने को तैयार हुआ, परन्तु कंस ने उसे वापस बुला लिया।

'प्रद्योत, काकाजी को मैंने जो वचन दिया है वह भूलना मत। कृष्ण को मैं हानि नहीं पहुँचाऊँगा, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि मैंने जो उसे मेरे सम्मुख न आने देने का आदेश दिया है, उसका पालन तुम्हें नहीं करना है,' कंस ने मुस्करा कर कहा।

'प्रभु की जो आज्ञा!' क्रोध का घूंट पी कर प्रद्योत ने कहा।

कंस को प्रणाम कर प्रद्योत खंड से बाहर निकला और गलियारे में से गुजर रहा था कि उसे वहाँ किसी संघर्ष के चिह्न दिखायी दिये। ज़मीन पर तलवार पड़ी थी और ख़ून के दाग़ लगा दुपट्टा दूर पड़ा था। इस अंधेरी जगह से कोई पीछे मुड़ कर जा रहा है, ऐसा उसे लगा। और जब पैरों की ध्वनि का प्रद्योत ने पीछा किया तो मागधी सैनिकों को दो मानव-देह उठा कर ले जाते देखा।

प्रद्योत की आँखों के आगे अंधेरा छा गया। खम्भे का सहारा ले कर वह खड़ा हुआ। कुछ देर बाद जब स्वस्थ हुआ तो उसने अपने दांत होठों पर इतने ज़ोर से भींचे कि ख़ून निकल आया। फिर वह वहाँ से चला गया। (क्रमशः)

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. कैलाशनाथ मिश्र

सूक्ष्म शक्ति के चमत्कार और विज्ञान

[लेखांक : १]

...तो जिस सूक्ष्म से इस जगत की रचना हुई है, वह सूक्ष्म शक्ति अत्यन्त शक्तिशाली होगी और इस जगत का सूक्ष्मांश भी इसके समस्त पदार्थों के स्थूलांश से अधिक शक्तिशाली होगा।

जिस विराट् जगत् को हम अपनी आँखों से देख रहे हैं, वह सूक्ष्म से स्थूल रूप में आया है। इस विषय में शास्त्रों में तथा विज्ञान में कोई मतभेद नहीं है। संत नन्ददास ने जब कहा—

"या जग की परछाँह री माया दरपन बीच"

तो उन्होंने कुछ ग़लत नहीं कहा। मूल रूप में सब का एक ही अर्थ निकलता है। तो जिस सूक्ष्म से इस जगत् की रचना हुई है, वह सूक्ष्म शक्ति अत्यन्त शक्तिशाली होगी और इस जगत् का सूक्ष्मांश भी इसके समस्त पदार्थों के स्थूलांश से अधिक शक्तिशाली होगा, इस परमाणु-युग में परमाणु अस्त्रों के महान् विनाशक प्रभाव को देखते हुए यह बात अवश्य युक्तियुक्त लगेगी। वास्तव में स्थूल वस्तु प्रकृति की सबसे अन्तिम और जड़ रचना है। उससे ऊपर सूक्ष्म कार्य-कलापों की अनन्त कोटियाँ हैं। प्रकृति का रहस्यमय जीवन सूक्ष्म संसार में ही घटित होता है। उसके अनुभव के लिए अन्तर्मुखी होना आवश्यक है। हमारे ज्ञान की साधना पाँच इन्द्रियाँ हैं। उनकी प्रकृति बहिर्मुखी है। उन इन्द्रियों से स्थूल संसार का बहुत ही परिमित ज्ञान मिल सकता है। विशेष के लिए केवल विज्ञानात्मक अनुभव तथा ज्ञान-दर्शन ही काम दे सकता है। उदाहरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए हमारी वीक्षण शक्ति से रूप का परिज्ञान होता है। इस ज्ञान के लिए सूर्य की प्रकाश रश्मियाँ चक्षुरिन्द्रिय से संयुक्त होती हैं। विज्ञान के अनुसार इन रश्मियों का परिमाण बहुत ही सूक्ष्म है—

"All the waves giving visible light are included between 16 and 30 millionth of an inch."

अर्थात् समस्त दृश्य-प्रकाश-रश्मियों की तरंगों की लम्बाई एक इंच के सोलह से तीस लाखवें भाग के बराबर होती है।

वस्तुतः सूर्य से जितनी किरणें आती हैं, वे बहुत अधिक हैं। उनका ग्रहण हमा ी चक्षु-इन्द्रिय से हो ही नहीं सकता। उनके ज्ञान के लिए हमें विज्ञान के अन्य उपायों से काम लेना पड़ता है।

दूसरा उदाहरण सूक्ष्म जगत् की अनन्तता और एकता का यह है कि जो शब्द मन्द अथवा उच्च हम करते हैं, उससे वायुमंडल या आकाश में लहरें उत्पन्न होती हैं और समीपस्थ वायु या ईथर में संक्षोभ उत्पन्न होता है। यह संक्षोभ बढ़ता हुआ समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो जाता है। इस सिद्धान्त की सत्यता का प्रमाण रेडियो है। ट्रांसमीटर यंत्र द्वारा जिन विद्युत्-चुम्बकीय लहरों को उत्पन्न किया जाता है, वे एक सेकेंड में एक लाख छियासी हज़ार मील की गति से जाती है और एक सेकेंड में ही पृथ्वी की सात परिक्रमा कर जाती हैं। यद्यपि ये विज्ञानुमोदित सत्य हैं, पर नका परिज्ञान हमारी चक्षु या श्रोत्र इन्द्रिय को विना सूक्ष्म तंत्रों की सहायता से नहीं हो सकता। अस्तु।

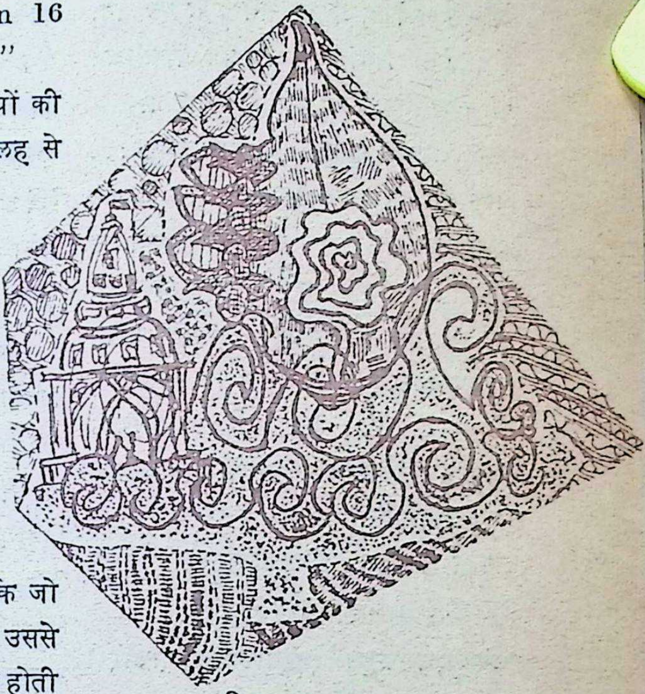

चित्र : पवन कुमार

इस विश्व में जो कुछ भी है कोई न कोई पदार्थ है। पदार्थ अर्थात् विशुद्ध तत्त्व या तत्त्वों के संयोग से बना कोई यौगिक। तत्त्व या यौगिक भी छोटी-छोटी इकाइयों अर्थात् परमाणु या अणु से बने हैं। एक यौगिक (Compound)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को तोड़िए। उदाहरणस्वरूप जल को। जल की एक बूंद. . उसका हज़ारवाँ भाग. . फिर उसका हज़ारवाँ भाग. . .फिर उसका। यह विभाजन अणु (Molecule) तक जाकर रुक जायेगा और इसके बाद जल हाइड्रोजन और ऑक्सीजन नामक तत्त्वों (Elements) में टूट जायेगा, जिनके संयोग से यह बना है। इन्हीं तत्त्वों में से अब हम ऑक्सीजन को विभाजित करते हैं। एक अणु ऑक्सीजन. . . उससे छोटा . . . उससे छोटा . . . और हम परमाणु (Atom) तक आकर रुक जाते हैं। यहाँ तक ऑक्सीजन के गुण हैं। परमाणु क्या हैं? तड़ित बिन्दुओं का संघात। तड़ित बिन्दु, अर्थात् शक्ति या ऊर्जा का एक बिन्दु, अर्थात् इलेक्ट्रॉन, प्रो टॉन इत्यादि। यही विशिष्ट मात्रा में तत्त्व बनाता है और तत्त्वों की विशिष्ट मात्रा विभिन्न यौगिक और इन्हीं से बना यह तमाम विश्व। यही तड़ित या विद्युत् उपनिषद् में ब्रह्म और माया है।

"विद्युद्ध्येव ब्रह्म" (बृहदारण्य उ. ५।७।१।)

स्थूल प्रकृति मूल में परमाणुमय है। परमाणु की रचना सौर मंडल से मिलती है। अर्थात् एक केन्द्र के चारों ओर ऋण विद्युत्कण बड़ी दुर्घर्ष गति से घूमते हैं। अब कुछ परमाणुओं की रचना देखिये——

परमाणु के केन्द्र और इलेट्रॉनो के बीच सौरमंडल के समान ही अपेक्षाकृत वृहत् अंतरिक्ष या आकाश है। इसी अंतरिक्ष (Intraelectronic space) के कारण प्रकृति हिरण्यगर्भ दशा से विराट् दशा में आती है। आध इंच गोल सुवर्ण के टुकड़े में यदि सब प्रोटोन ही हों और इलेक्ट्रोन एक भी न हो, तो उस आध इंच 'हिरण्य का भार तीस लाख टन होगा। यह हिरण्यगर्भ दशा प्रकृति की है। प्रो. बोहर का मत है कि हाइड्रोजन परमाणु का एक इलेक्ट्रॉन अपने केन्द्र के चारों ओर एक सेकेंड में ६००० खरब चक्कर काटता है। प्रकृति की कुक्षि में कितनी अपार शक्ति और चेतना है।

काल क्या है? एक क्षण? नहीं.. उसका अनन्तवाँ भाग। अर्थात् शून्य। तो इसका अर्थ यह हुआ कि काल भी अनन्त शून्यों के संघात के अतिरिक्त और कुछ नहीं। पर अनन्त और शन्य केवल बुद्धि की हार है, और कुछ नहीं। क्योंकि विज्ञान का यह सिद्धान्त है कि शून्य से कुछ उत्पन्न नहीं किया जा सकता और किसी वस्तु का शून्य में लय भी नहीं हो सकता। दृश्य और अदृश्य क्या है? या तो सूक्ष्मता पर आधारित या प्रकम्पों (Frequency) पर; पर अदृश्य होना किसी वस्तु का अस्तित्व न होना सिद्ध नहीं करता।

[आगामी अंक में समाप्य]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[कला : मेरी दृष्टि में : पृष्ठ १३ का शेष]

सत्य के द्वारा होता है। सभी सत्यों में महान सुन्दरता है। जब आदमी सत्य में सुन्दरता के दर्शन करेगा, तभी वास्तविक कला का जन्म होगा। किसी वस्तु का बाह्य आवरण उसे सुन्दर नहीं बना देता।

सुकरात अपने समय का बहुत बड़ा सत्यदृष्टा था, जबकि वह, कहा जाता है, ग्रीस का सबसे कुरूप व्यक्ति भी था। मेरी दृष्टि से वह सुन्दर व्यक्ति था, क्योंकि उसने अपना सारा जीवन सत्य से साक्षात्कार के प्रयत्न में बिताया और आपको यह याद रखना चाहिए कि तत्कालीन कलाकार फिदियास ने उसका कुरूप चेहरा न देखकर उसके भीतर के सत्य को जाना और उसकी तारीफ की, जबकि वह बाहरी सौन्दर्य को देखने और उसकी प्रशंसा करने का आदी था।

बाहरी रूप का महत्व वहाँ तक ही है, जहाँ तक वह हमारे अन्तर को सुन्दर बनाने में सहायता करता है। इसलिए सच्ची कला वही है, जिसमें आत्मा की अभिव्यक्ति हो। बाहरी रूप का मूल्य उतना ही है, जितने तक उसपर हमारी आत्मा की झलक मौजूद है।

मेरे लिए संगीत आनन्द और ईश्वरानुभूति का साधन है और जितने समय तक मैं उसे सुनता हूँ, आनन्द में डूबा रहता हूँ। मीरा के गीत हमेशा अच्छे लगते हैं। उसके मनोहर गीत अपनी कवित्वशक्ति में भी हृदय को बहुत छूने वाले हैं। उनमें गति रहती है, क्योंकि उनमें सत्यता है। फुहारे की तरह उसके गीत, लगता है सीधे हृदयतल से प्रवाहित हो रहे हों। यशप्राप्ति या लोकप्रियता अर्जित करने की दृष्टि से उनका संगीतीकरण नहीं हुआ था, जैसाकि बहुत से गीतों का होता है। उनमें तो स्वयं ही प्रभुप्रेम से भरा संगीत प्रवाहित होता रहता है।

यह एक बड़ा दुर्भाग्य होगा, यदि हमारे स्वर्गिक संगीत की उपेक्षा की गयी। मैं तो भारतीय जीवन में धर्म की उन्नति में भी संदेह रखता हूँ, यदि यह उसके संगीत से वंचित कर दिया जाये।

यदि सभी कलाओं का संगम कर दिया जाये तो जीवन का ऊँचा उठना निश्चित है। मेरी दृष्टि में सबसे महान कलाकार वही है, जो जीवन को सुन्दरतम तरीके से जीता है।

ईसामसीह, मेरी दृष्टि से, एक महान कलाकार थे, क्योंकि उन्होंने सत्य का दर्शन किया और उसी का प्रचार किया। इसी तरह मोहम्मदसाहब भी थे। इसका कारण है—ईसा ने भी और मोहम्मद ने भी सत्य की खोज में जीवन बिताया और उसकी सुन्दरता के दर्शन कराये। इस तरह दोनों महान कलाकार थे, जबकि दोनों में से किसी ने भी कला के ऊपर कुछ भी नहीं लिखा।

यही वह सुन्दरता और सत्य है, जिसकी मैं याचना करता हूँ, जिसके लिए जिन्दा रहता हूँ और जिसके लिए मर जाना चाहूँगा। अनु. : विमल के गुप्ता

☆

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[हमारा एकाकीपन : पृष्ठ १६ का शेष]

वापस मेरे ही पास आकर मुझे सशक्त बनाता है। इसके विपरीत, यदि मैं प्रेम को प्रेम करने की शक्ति के रूप में नहीं समझता, तो मुझे दुख होता है। जब प्रेम को इसी शक्ति या क्षमता के रूप में लिया जाता है, तभी वह आनन्द स्वरूप होता है। आनन्द बाहरी वस्तुओं पर आधारित नहीं होता, न उसे कुछ पाने की अपेक्षा रहती है।

अपने मित्रों को भौतिक रूप से अपने साथ रखना असंभव है। और, यदि वे साथ रहें, तब भी मित्रों से घिरे रहने पर भी हमें स्वयं को तब तक एकाकी अनुभव करेंगे, जब तक कि हम उनके प्रति अपने प्रेम को जियें नहीं। जो वस्तु उन्हें हमसे आत्मसात करती है, वह यही प्रेम की शक्ति है, जो एक आध्यात्मिक लेन देन है। जब यह शक्ति मेरे हृदय में रहती है, तो मैं सभी मित्रों को अपने साथ अनुभव करता हूँ, चाहे वे न्यूयार्क में हों या नयी दिल्ली में।

इससे यह जाहिर होता है कि अकेले रहने पर मित्र के पास दौड़ कर जाना एक लक्षण है, मूल व्याधि है। मूल व्याधि तो इससे गहन है: वह प्रेम करने की हमारी अक्षमता है, जो प्यार पाने के रूप में अभिव्यक्त होती है। लेकिन हम भूल जाते हैं कि प्यार किये बिना प्यार पाया नहीं जा सकता। यदि हम यह जान लें कि मित्र मेरे हृदय में है, यदि मैं उसके पास न दौड़ कर उससे प्यार के ज़रिये सम्पर्क स्थापित करूँ, तो वह ऐसी प्रेम-तरंगों को मेरी ओर प्रेषित करेगा, जिन्हें मेरे भीतर का प्रेम फौरन पकड़ लेगा। इस प्रकार यदि हम अपने मित्र को अपने हृदय में ही पा लेते हैं, तो उसके पास दौड़ कर जाने की या उसे बुलाने की कोई आवश्यकता ही नहीं रह जाती। जब भी हम अकेले होते हैं, तो सिनेमा या रेडियो का सहारा लेते हैं अथवा मित्रों से मुलाक़ात करना चाहते हैं। सिनेमा या थिएटर यदि हमें केवल निष्क्रिय दर्शक ही न बना कर हममें कुछ ऐसी नयी सौन्दर्य भावना जागृत करें, जिससे हम अपने विचारों के संकुचित दायरे से बाहर निकल सकें, तो वे अवश्य लाभदायक हैं। प्रेम प्रेरित सृजनशीलता ही हममें जीवन के प्रति एक नयी रुचि प्रदान कर सकती है और हमारे एकाकीपन को मिटा सकती है। पुस्तक पढ़ने को भी एक सृजनशील क्रिया बनाया जा सकता है। १९वीं शताब्दी के महान अंग्रेज इतिहासकार गिब्बन की यह बात अब भी मुझे याद है। किसी नयी किताब को पढ़ने से पहले उसका शीर्षक देखकर वे यह लिख लेते थे कि वे स्वयं उस विषय पर कैसे लिखते,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और बाद में किताब पढ़ कर उसकी अच्छाइयों और कमियों पर विचार करते। प्रत्येक सुन्दर अथवा कलात्मक वस्तु को देख कर हममें नयी भावनाएँ पैदा होनी चाहिए, और उनसे हम केवल कुछ क्षण के लिए ही अपना एकाकीपन दूर न करें, बल्कि उनसे जीवन और सृजनशीलता के प्रति मौलिक प्रेम की प्रेरणा प्राप्त करें।

प्रेम और सृजनशीलता की प्रत्येक मनुष्य को आवश्यकता है। जब उसे अपनी यह स्वाभाविक खुराक नहीं मिल पाती, तब वह निराश और दुखी होता है। वह समझता है कि ज़िन्दगी की लड़ाई लड़ने के लिए वह अकेला है। परन्तु जीवन, संघर्ष के लिए नहीं, प्रेम करने के लिए है जब हम जीवन के प्रति प्रेम का अभाव अनुभव करते हैं, उसमें रुचि नहीं ले पाते, तभी हम एकाकी और इसीलिए दुखी अथवा भयभीत होते हैं। मनोरंजन और कलात्मक आनन्द केवल एक ऐसा वातावरण ही उपस्थित कर सकते हैं, जिसमें जीवन के प्रति प्रेम की हममें अभिवृद्धि हो। जिस प्रकार भौतिक सुख-

★

भारती

भवन की पत्रिका

ऑर्डर फ़ॉर्म

श्री व्यवस्थापक **'भारती'**, भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई–७,

प्रिय महाशय,

मैं 'भारती' का वार्षिक सदस्यता शुल्क ६.५० न.पै. / अर्द्धवार्षिक ३.५० न.पै. मनीऑर्डर / पोस्टल ऑर्डर द्वारा भेज रहा हूँ / रही हूँ। कृपया निम्नांकित पते पर दि०———से प्रति भेजने का कष्ट करें :—

नाम ______________________________

पूरा पता ______________________________

____

____

तिथि············ भवदीय/भवदीया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुविधाएँ केवल ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करती हैं, जिनमें हम सुखी हो सकते हैं, परन्तु आनन्द नहीं प्रदान कर सकतीं, इसी प्रकार विविध मनोरंजन एक स्टेज तैयार करते हैं, परन्तु वे स्वयं अभिनेता नहीं बन सकते।

मनुष्य को अपने आत्मतत्व से प्यार होना चाहिए। जो वह है और जो वह नहीं है, अथवा नहीं दिखायी पड़ता है, दोनों का समावेश उसमें हो जाता है। तभी वह अपने पड़ौसी से प्यार करना सीखेगा, जो उससे अपनी विचार-भिन्नता के कारण उससे अलग दिखायी पड़ता है। पड़ौसी स्वभावतः उसका विरोधी नहीं है, बल्कि उसके अपने अस्तित्व का ही दूसरा छोर है। 'अपने पड़ौसी को अपनी तरह प्यार करो' के सिद्धान्त पर जब हम ज़ोर देते हैं, तो बहुधा यह भूल जाते हैं कि हमें पहले अपने से प्यार करना है और तभी हम अपने प्यार को पड़ौसी की ओर अभिमुख कर सकते हैं। पहले हमें हमारे भीतर के भगवान से प्यार करना है,

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यु. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२

फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तभी हम दूसरे में बसे भगवान को देख सकते हैं और प्यार कर सकते हैं।

ईश्वर मनुष्य का शाश्वत साथी और मित्र है; मनुष्य ईश्वर का ही अर्द्धांग है। वेदान्त ने इसी विचार को नर-नारायण की कल्पना में अभिव्यक्ति दी है। विष्णु को नर-नारायण का रूप दिया गया है, जो आधा नर और आधा नारायण है। इसका यह अर्थ हुआ कि ईश्वर मानव समाज से कभी पृथक नहीं होता। ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए हमें मनुष्य को प्रसन्न करना चाहिए। इस विचार को स्वामी विवेकानन्द ने बड़े ज़ोरदार शब्दों में कहा है, 'ईश्वर वैसे तो सर्वत्र उपस्थित है, परन्तु मनुष्य में उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति हुई है। मनुष्य ईश्वर का ताजमहल है, जबकि अन्य रचनाएँ उसकी निम्न अभिव्यक्तियाँ हैं। ईश्वर को पूजने आप मन्दिर या गिरजों में क्यों जाते हैं, जबकि वह आपके सामने ही खड़ा है?' मनुष्य रूप में ईश्वर के सान्निध्य का यह विचार हमें हमारे एकाकीपन से मुक्त कर सकता है, हमें मनुष्य को ईश्वर का रूप समझ कर ही उसकी सेवा करनी चाहिए।

मैंने कहा है कि एकाकीपन का दुख तभी होता है, जबकि हम अपने उस अद्वितीय और आध्यात्मिक एकाकीपन से दूर हो जाते हैं, जिसे लेकर हम दुनिया में आये थे और जो हमारा संचित कोष है। आत्मा एकाकी है इसलिए कि वह अद्वितीय है और प्रेम तथा निर्माण करने की अनन्त क्षमता लिये है। इस क्षमता का अर्थ यह नहीं कि हम अपने मित्रों को सशरीर सदा अपने पास रखें, उन्हें सदा पास रखने की कामना का अर्थ एकाकीपन के दुख को बुलाना है। परन्तु प्रेम करने की अपनी क्षमता के बारे में जब हम सोचते हैं, तो हम उन संतों और आध्यात्मिक पुरुषों के एकाकीपन के योग्य स्वयं को बनाते हैं, जो अपने प्रियजनों की आध्यात्मिक संगति में सदा रहते हैं। मैंने यह भी कहा है कि इस आत्मसंतोष की भावना को विकृत कर हमें अभिमानपूर्वक अपने-आप को सबसे विलग एक संकीर्ण घेरे में भी नहीं बाँध लेना चाहिए। नर-नारायण के रूप में भगवान का अवतार इस बात का बड़ा अच्छा उदाहरण है कि हमें अपने हृदय और मस्तिष्क से दूसरों के साथ सम्पर्क साधना चाहिए, अर्थात् अपने पड़ौसी से हम कटे हुए न रहें, क्योंकि वह ईश्वर का और इसलिए हमारा भी दूसरा अंग है। उसे अपने से विलग करना अथवा स्वयं को उससे पृथक रखना स्वयं अपना ही विभाजन करना है और एकाकीपन को निमन्त्रण देना है। यह प्रकृति के प्रतिकूल है। एकता ही प्रकृति का सृजन है और एकता ही अध्यात्मवादी का एकाकीपन है। हमारे एकाकीपन को मिटाने के लिए यही वेदान्त का उपचार है।

अनु : ओंकारनाथ शर्मा

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
[देमेत्रियोस का स्वप्न...पृष्ठ ३२ का शेष]

कन्धे की ओर झुका हुआ है। वह अपने पोरों से अपनी बाँयी हथेली को थपथपाती है। जिस समय वह गाती है, तो उसकी कमर का निचला भाग ही बस हिलता है:

"रात अपनी शैय्या पर
मैंने उसे खोजा था
जिसे समर्पित है मेरी आत्मा का प्रेम :
मैंने उसे खोजा था
लेकिन पाया नहीं था।
ऐ यरूशलम की बेटी,
मेरा निवेदन है तेरे प्रति,
यदि तुझे मेरा प्रिय मिले,
उससे कहना
मैं प्रेम-पीड़ित हूँ।"

"देमेत्रियोस, यह गीत है गीतों का। यह मेरे देश की लड़कियों का विवाह-गान है।"

"मैं सो गयी थी
लेकिन मेरा हृदय जागृत था:
यह मेरे प्रिय की आवाज है:
वह खटखटा रहा है मेरा द्वार।
देखो! वह आ गया
पर्वत पर छलाँगें भरता हुआ
प्यारी आँखों वाले
किसी युवा हिरन-सा।
मेरा प्रिय मुझसे बोलता है और कहता है:
मेरी बहन, मेरी प्यार
खोलो द्वार:
मेरा मस्तक भींग गया है ओस से
मेरी अलकें रात की बूंदों से पूरित हैं
मेरी प्यार, उठो
और चली आओ, मेरी सुन्दरि प्रिया,
क्योंकि देखो, शिशिर बीत गया है:
वर्षा आयी और चली गयी:
धरती पर प्रकट हुए हैं फूल
गान-वेला आ गयी है
समुद्री कबूतर का स्वर सुन पड़ा है
मैदान में।
उठो मेरी प्यार,
और चली आओ मेरी सुन्दरि प्रिया।"

वह अपना सिर पीछे की तरफ ले जाती है और उसकी पलकें अधमूंदी हैं।

"थाम लो मुझे, मुझे चैन दो,
क्योंकि मैं प्रेम-पीड़ित हूँ।
उसका बाँया हाथ मेरी गरदन के नीचे हो
और उसका दाहिना हाथ
मेरा आलिंगन करे।
—तूने मेरा अपहरण किया है, मेरी बहन
अपने नयनों से,
अपने गले की जंजीर से।
कितना मोहक है तेरा प्यार!
कितने मदाविल हैं तेरे रभस-आलिंगन!
मदिरा से भी कितने उत्तम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी खुशबुओं से ज्यादा
तेरी खुशबू मुझे देती है आनन्द;
तेरे होंठ चू रहे हैं:
तेरी जिह्वा के नीचे मधु और पयस् हैं:
तेरी पोशाकों का सेंट है
लेबनान के सेंट-सा।
मेरी बहन, तू है एक गुप्त उपवन,
एक ठहरा वसन्त,
एक मुद्रित निर्झर।
जागो! हे उत्तर-पवन।
आओ! हे दक्षिण-पवन।
मेरे उपवन में बहो
कि सुगन्ध का हो प्रसरण।"

वह उसे आलिंगन करने के लिए बाँहों से घेर लेती है और अपना मुख बढ़ा देती है।

"मेरा प्रेमी आये अपने उपवन में
और खाये उसका श्रेष्ठतम फल।
——हाँ, मैं अपने उपवन में आता हूँ
मेरी बहन, मेरी दुल्हन:
मैं अपनी सुरभि के साथ
अपना लोहबान बटोरता हूँ,
मैं अपने मधु के साथ
अपना मधुकोष खाता हूँ,
मैं क्रीम के साथ
पीता हूँ अपनी शराब।
मुझे अपने वक्ष पर
मुहर की तरह जड़ लो
क्योंकि प्रेम मृत्यु-सा ही है बलवान।"

अपने पैरों को बिना हिलाये तथा अपनी मुट्ठी से बँधे घुटनों को बिना झुकाये, वह अपने ऊपरी भाग को हिलाती है। उसकी मियान-सी टाँगों के ऊपर चेहरा और दोनों वक्ष किसी रेशमी गुच्छे के आच्छादन में रखे हुए तीन बड़े गुलाबी फूलों की तरह लगते हैं।

वह अपने सिर, कन्धों और अपनी खूबसूरत बाँहों के गुम्फित आन्दोलनों के साथ नृत्य करती है। वह अपने शरीर और उसकी सफ़ेदी से बाधित-सी लगती है। उसका वक्ष भारी साँसों से फूल–फूल उठता है। वह अपने कम्पित मुख को अब बन्द नहीं कर सकती; और न तो वह अपनी शिथिल नयन-कोरों को ही खोल सकती है। फैलती हुई आग ने उसके गालों में रंग भर दिया है।

कभी उसकी दसों अंगुलियाँ आँखों के सामने आकर गुंथ जाती हैं। कभी वह अपनी बाँहें उठाती है और ऐन्द्रिक सुख से अपने शरीर को तानती है। एक लम्बा बहता हुआ-सा मार्ग उसके ऊपर उठे हुए कन्धों को अलग करता है। आखिरकार अपने सिर की एक उछाल के साथ वह अपने तप्त चेहरे को केशों की लटकती लटों से ढँक लेती है। उसके काँपते हाथ लिपटे हुए वन्ध को खोल देते हैं। और उसके माधुर्य का अन्तिम मर्म उसका उत्तरीय कालीन पर गिर जाता है।

देमेत्रियोस और क्राइसिस......

[फ्रेंच उपन्यासकार पियर लुई के प्रसिद्ध क्लासिक 'एफ्रोडाइट' का एक अंश]

अनु. अमृता भारती

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरदार पटेल इंजीनियरिङ्ग कालेज

गत १३ जनवरी को अंधेरी स्थित भवन के सरदारपटेल कालेज आफ इंजीनियरिंग के प्रथम वार्षिक समारोह के अवसर पर प्रमुख अतिथि के रूप में भारत सरकार के आयोजना आयोग के सदस्य प्रा. एम. एस. ठक्कर ने कहा कि विश्व आज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के सम्बन्ध में जो कुछ जानता है, वह मात्र एक नाटक की शुरुआत है और जिसे हम शीघ्र ही पूर्णरूप से देखेंगे। प्रा. ठक्कर ने, जो रूस में जब तीन स्पुतनिक छोड़े गये थे तो मौजूद थे, आगे बताया कि विज्ञान एवं प्राद्योगिकी की दुनियाँ का विकास इतनी द्रुतगति से हो रहा है कि हम आज जो कुछ भी सीखेंगे, एवं कल के लिए वह व्यर्थ सिद्ध हो जायगा। उन्होंने आगे बताया कि परमाणु ऊर्जा (एटॉमिक एनर्जी) ही नहीं सौर ऊर्जा (सोलार एनर्जी) को भी अमल में लाया जायगा और सन् २००१ तक हम एक ऐसे विश्व में पहुँच जायेंगे, जहाँ कृतिम सूर्य का निर्माण हो सकेगा और मौसमों पर पूर्णरूप से नियन्त्रण हासिल कर लिया जायगा। चन्द्रमा पर पहुँचना कल्पना की बात न रह कर रोज़मर्रा की बात हो जायगी। देश में इंजीनियरिंग शोध की स्थिति पर खिन्नता प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि शोध को नूतन ज्ञान की सीमा से सदैव आगे रखना चाहिए और किसी की खोज को दुहराना इस दिशा में व्यर्थ का ही प्रयास होता है।

शुरू में कालेज के कुलपति डा. के. एम. मुन्शी ने प्रमुख अतिथि का स्वागत किया और कहा कि श्री ठक्कर देश के एक प्रमुख वैज्ञानिक एवं कुशल शासक के रूप में प्रख्यात हैं। कालेज उनके द्वारा प्राप्त प्रेरणा एवं मार्ग-दर्शन का सदैव स्वागत करता है। संयुक्त प्राचार्य प्रा. आर. एम. चोखवतिया ने कालेज की प्रगति का विवरण प्रस्तुत किया और प्राचार्य एस. वी. जुन्नरकर ने आभार प्रदर्शन किया।

०००

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, ताडदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

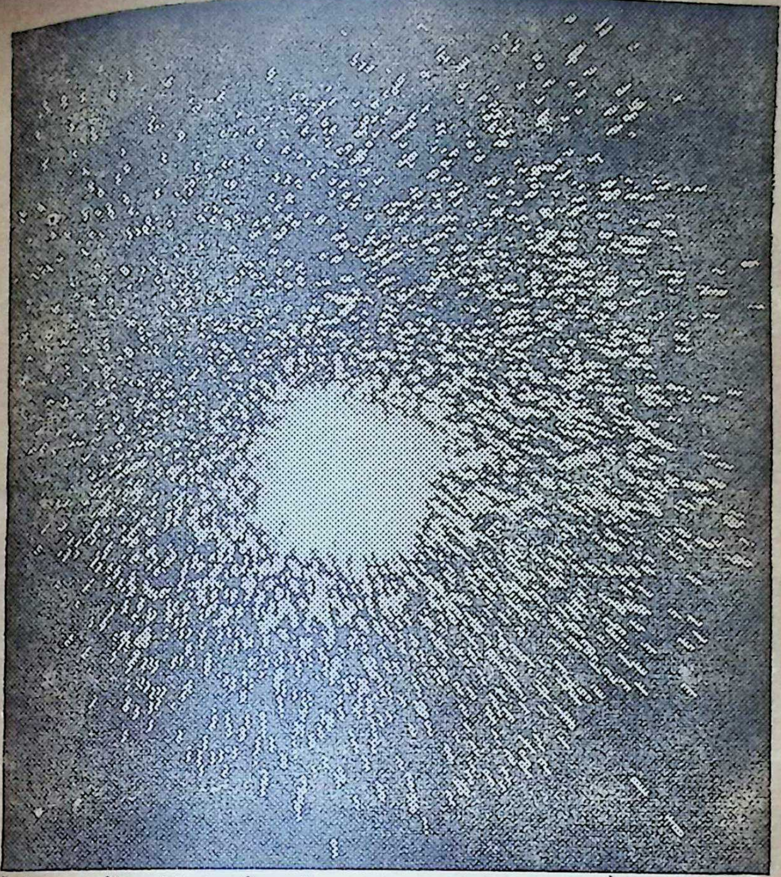

वे दिन याद करें... ऐसे भी कई बरस थे जब इस दिवसपर सारा राष्ट्र खुशीसे फूला नहीं समाता था, आतिशबाजीकी आवाजें आसमान तक पहुँचती थीं और जगमगाती रोशनीमें राष्ट्रका सन्मान उज्ज्वल हो उठता था! आइये, आज वे दिन याद करें जब अपने राष्ट्रके स्वाभिमानको कोई भय नहीं था और हम इस राष्ट्रीय दिवसको हर्षोल्लासमें मस्त होकर संपन्न करते थे। आज अपने हर्ष को कुछ संयत रखते हुए हम निश्चय करें कि हम एक रहकर अपने देशकी सुरक्षा करेंगे और अपनी प्रिय मातृभूमिकी सीमाओंपर संकटोंका सामना करनेवाले उन बहादुर जवानोंके हाथ अधिक मजबूत बनाएँगे।

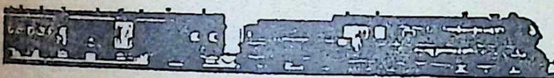

मध्य और पश्चिम
रेल्वे द्वारा प्रसारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

NOW ON SALE

BHAVAN'S NEW PUBLICATIONS

ONE RUPEE SERIES

1. **UPANISHADS** .. Sri C. Rajagopalachari
2. **HOW GOD CAME INTO MY LIFE (Series I)** .. Several Contributors
3. **HOW GOD CAME INTO MY LIFE (Series II)** .. Several Contributors
4. **REVERENCE FOR LIFE** .. Dr. Albert Schweitzer
5. **CHINESE AGGRESSION AND ITS IMPLICATIONS** .. Dr. K. M. Munshi
6. **NATIONAL EMERGENCY AND ITS PROBLEMS** .. Dr. K. M. Munshi
7. **THE HIMALAYAS IN INDIAN LIFE** .. Sardar K. M. Panikkar
8. **OUR MOTHERLAND** .. Swami Vivekananda
9. **GOSPEL OF WORK** .. Swami Rama Tirtha
10. **BOMBAY HIGH COURT: HALF A CENTURY OF REMINISCENCES** .. Dr. K. M. Munshi
11. **REASON AND BEYOND REASON** .. Sri Aurobindo
12. **ERASE THE EGO** .. Sri Ramana Maharshi

BOOK UNIVERSITY SERIES Rs. 2.50 EACH

1. **KADAMBARI** .. Dr. C. Kunhan Raja
2. **RAMANUJA'S TEACHINGS IN HIS OWN WORDS** .. Sri M. Yamunacharya
3. **IMMORTAL WORDS**—An Anthology
4. **IN THE VISION OF GOD** (Part I) .. Swami Ramdas
5. **IN THE VISION OF GOD** (Part II) .. Swami Ramdas
6. **BHAGAVAD-GITA** .. Sri C. Rajagopalachari

GENERAL SERIES

THE SUPREME POWER .. Mahatma Gandhi Rs. 4

BHARATIYA VIDYA BHAVAN

CHOWPATTY ROAD, BOMBAY 7.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृतं तु विद्या

भारती

[भवन की पत्रिका]

१ फरवरी
१९६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मूल्य : ३० न. पै.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवन्स बुक युनिवर्सिटी सिरीज़

●

अंग्रेजी में प्रकाशित निम्नलिखित दो पुस्तकों का
हिन्दी अनुवाद भी प्राप्य

बद्रीनाथ की ओर

ले०– क. मा. मुन्शी
मूल्य–५० न. पै. (डाक व्यय अतिरिक्त)

भगवद्गीता और आधुनिक जीवन

ले०–क. मा. मुन्शी
मूल्य–२.२५ न. पै. (डाक व्यय अतिरिक्त)

प्राप्ति-स्थान

सेल्स मैनेजर,
भारतीय विद्या भवन
चौपाटी रोड, बम्बई ७

● महत्त्वपूर्ण पुस्तक विक्रेताओं के यहाँ भी प्राप्य ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ८ : अंक ११]

भारती

[९ फरवरी १९६४

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

[illegible]क :
मु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० न.पै.
वार्षिक : ६.५० न.पै.
अर्धवार्षिक : ३.५० न.पै.

अथर्ववेद	: प्रार्थना	३
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	४
महिपति	: नाम संकीर्तन	९
श्री माँ	: सपनों और भविष्य-वाणियों का रहस्य	१०
श्रीमती लीलावती मुन्शी	: सौन्दर्य और सतीत्व की अमर ज्योति-शिखा : पद्मिनी	१४
—	: भगवान परमहंस यों बोले	१७
डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्	: भारतीय संस्कृति की अमर ज्योति	१९
डॉ. अमृता भारती द्वारा प्रस्तुत	: मिस्र की प्रेम-कविताएँ	२२
डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन	: ठौर ठिकाने	२७
महर्षि टाल्स्टॉय	: राजा अश्रद्धन	२८
तारापद भट्टाचार्य	: अस्पताल : अमलतास	३३
—	: अयोध्या	३४
महात्मा गान्धी	: संसार को हिन्दू धर्म की देन	३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी २३ फरवरी के अंक में

- श्री माँ : मध्यस्था, सहयोगिनी, सृजनकारिणी : श्री अरविन्द
- २९ फरवरी : उसका गंभीर अभिप्राय : देवदत्त
- कैलाश-धाम के महादेव पुकार उठे : स्वामी प्रभुलाल गणपतराम जोशी
- मृत्यु का कोई अस्तित्व नहीं है : लीयों टाल्स्टॉय
- नाम संकीर्तन की महिमा : स्वामी रामदास
- अमर जर्मन कवि होल्डरलिन की सनातन सूर्योदयी काव्यवाणी : अमृता भारती
- श्री अरविन्द के साथ अलीपुर जेल में : नलिनी कान्त गुप्त
- मध्यकालीन राग चित्र : महेन्द्रनाथ सिंह
- भारत के भव्य मन्दिर : अयोध्या [सचित्र]

अशोक महाजन : शिव का नटराज-स्वरूप

रामचन्द्र शुक्ल : कला और आतमा

प्रयाग शुक्ल : दो कविताएँ

सी. डी. सोनवणे : आप भी सोना बना सकते हैं

: रस-शास्त्र का पूर्व-रंग

कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार

डॉ. कैलाशनाथ मिश्र : सूक्ष्म शक्ति के चमत्कार और विज्ञान

इस अंक के सज्जाकार :
सर्वश्री कमलाक्ष शेनॉय, ज्योतीन्द्र जैन, ओशी,

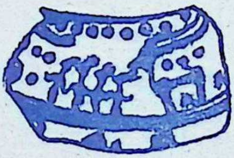

आवरण-चित्र :

नटराज

चित्रकार :

वी. एन. ओके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः।

भारती

भवन की पत्रिका

आगामी विश्व विकास का सूचक :

जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

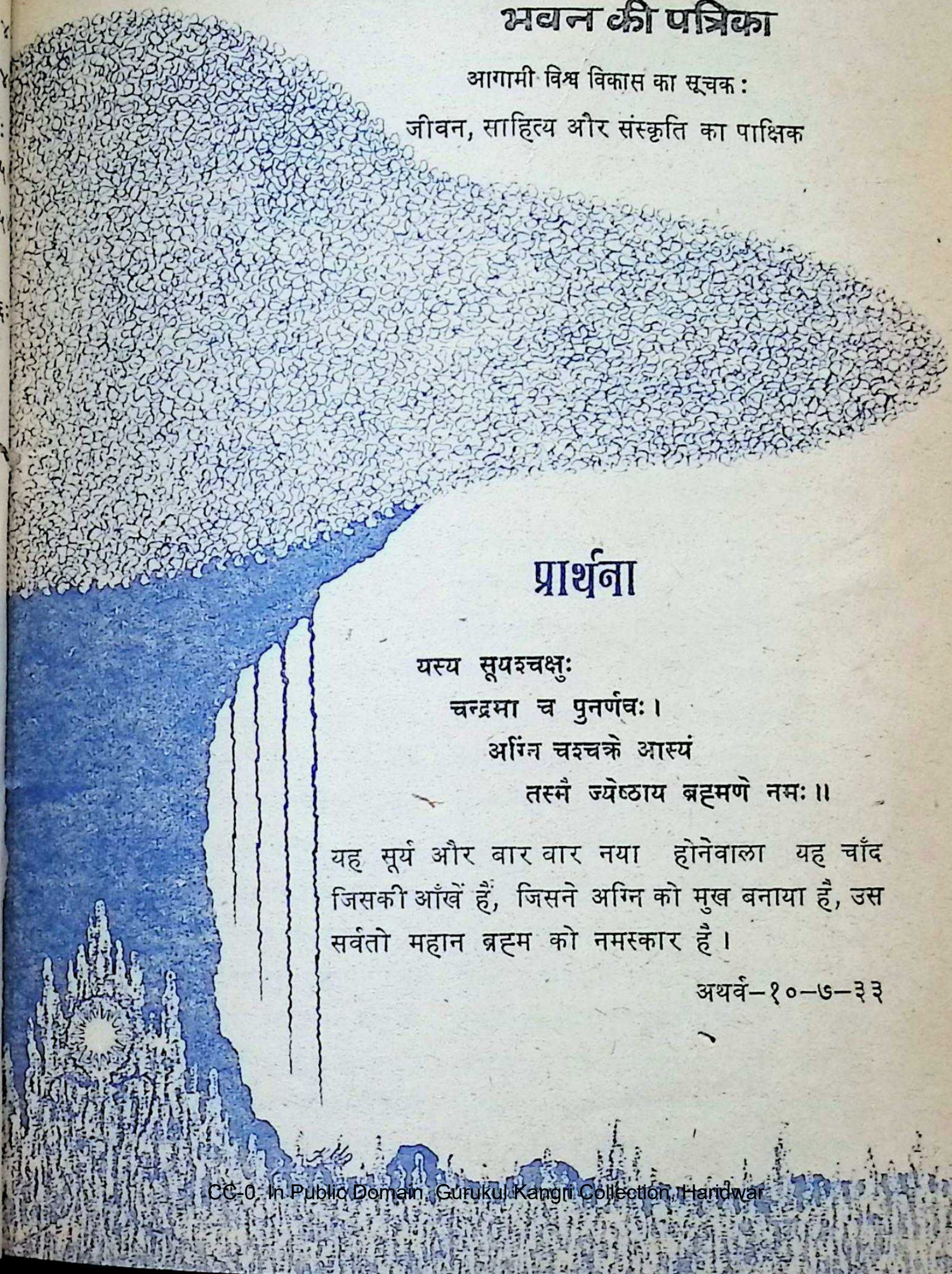

प्रार्थना

यस्य सूर्यश्चक्षुः
चन्द्रमा च पुनर्णवः।
अग्निं चश्चक्रे आस्यं
तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः॥

यह सूर्य और बार बार नया होनेवाला यह चाँद जिसकी आँखें हैं, जिसने अग्नि को मुख बनाया है, उस सर्वतो महान ब्रह्म को नमस्कार है।

अथर्व–१०–७–३३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

- राष्ट्रीय एकता का आधार
- चार एकताएँ

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बंबई,
९ फरवरी १९६४

मेरे युवा मित्र,

राष्ट्रीय विचार धाराओं का अध्ययन, उन पर विचार और भाषण तथा उनमें सक्रिय योगदान मैं साठ से भी कुछ अधिक वर्षों से करता आया हूँ, फिर भी राष्ट्रीय एकता के महत्वपूर्ण विषय पर मैं आपसे इस पत्र में कुछ कहना चाहूँगा। मेरा सम्बन्ध उस काल से है, जब १९०२ में कालेज में भर्ती होते समय मैंने अपने आवेदनपत्र में स्वयं को भारतीय के अतिरिक्त और कुछ भी बताने से इन्कार कर दिया था। लेकिन आज मैं यह दिन भी देख रहा हूँ, जबकि एक अमेरिकन यात्री के शब्दों में, आज देश में एक दक्षिण भारतीय, एक पंजाबी, एक बंगाली, एक गुजराती, एक मराठी के दर्शन तो होते हैं, परन्तु एक भारतीय कहीं नहीं दिखायी पड़ता।

संसार अब पहले जितना बड़ा नहीं रहा। अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था अब अनिवार्य हो चुकी है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने हमारे समक्ष एक विश्वसमाज की झांकी प्रस्तुत की है। यह सब सही है, पर पूर्णतः सही नहीं। राष्ट्रों के सह-अस्तित्व पर आधारित एक अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की शीघ्र आवश्यकता अनुभव करने पर भी मुझे स्वयं को राष्ट्रवादी कहने में कोई संकोच नहीं। मुझे पक्का विश्वास है कि संघर्ष और अविश्वास के इस युग में सुदृढ़ अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था हम तभी स्थापित कर सकते हैं, जबकि राष्ट्रीय एकता की जड़ें ठोस और मज़बूत हों। चीनी आक्रमण के समय हमने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखा कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था रहे या न रहे, एक कमज़ोर राष्ट्र को कितना नुकसान उ ाना पड़ता है।

●●

राष्ट्रीय एकता का आधार इन चार पायों पर ही रखा जा सकता है– वैधानिक एकता, मानसिक एकता, आर्थिक एकता और प्रतिकार की सामूहिक इच्छा। इनमें से प्रथम एकता का एक रूप संवैधानिक है। हमें याद रखना चाहिए कि संविधान हमारी एकता की पवित्र संस्कारविधि है और इसलिए पवित्र है। उसे हमें अपनी सर्व प्रथम श्रद्धा अर्पित करनी चाहिए। सभी राजनीतिक दलों को इसीके ांचे में रह कर कार्य करना है।

यदि सत्तारूढ़ दल अपनी सुविधानुसार समय-समय पर इसमें परिवर्तन करता है, तो उसकी सातत्य-भावना भंग होती है। उसकी पवित्रता नष्ट हो जाती है और उसका आधार भी सुदृढ़ नहीं रह पाता। तब संविधान के स्थान पर दल की व्यवस्था ही इस एकता का स्रोत हो जाती है और अंतर्दलीय दबाव और संविधान के बाहर के दबावों के लिए भी मार्ग प्रशस्त हो जाता है। जो दल संविधान को नष्ट करने पर तुला है, वह राष्ट्रीय अपराध का भागी है।

●●

वैधानिक एकता का दूसरा तत्व सारे देश के लिए समान सैनिक तथा प्रशासन सेवाओं से प्राप्त शक्ति है। राष्ट्रीय इमारत के लिए यह एक फौलादी ढाँचे का काम करती है। इन सेवाओं के लिए भर्त्ती सामान्य योग्यताओं पर होनी चाहिए; एक सामान्य शक्ति और चुस्ती उनमें होनी चाहिए और भारतीय, धार्मिक तथा प्रांतीय भावनाओं से उन्हें मुक्त रखा जाना चाहिए। अखिल भारतीय सेवाएँ जितनी अधिक प्रवाभशाली ढंग से कार्य करेंगी, उतनी ही राष्ट्र की नींव मज़बूत होगी। इन सेवाओं में जब प्रांतीय आधार पर भर्ती हो या उनमें प्रान्तीयता का दृष्टिकोण आ जाय, तब यह नींव हिलने लगती है। यह दुर्भाग्य का विषय है कि कुछ प्रान्तीय मंत्रिमंडल अपने क्षेत्र के कर्मचारियों के प्रति असाधारण रूप से पक्षपात करते हैं। यदि सेवाओं में प्रान्तिक भावनाएँ कार्यरत रहीं, तो राष्ट्र की इमारत ढह जायगी।

देश भर में न्याय का शासन समान रूप से लागू होना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। इससे मौलिक अधिकारों के माध्यम से प्रत्येक नागरिक का सम्बन्ध राज्य से स्थापित हो जाता है। हमारे संविधान ने न्याय के शासन की जो सबसे मज़बूत कड़ी तैयार की है, वह एक संगठित न्यायव्यवस्था, जो देश भर में निम्न से निम्न पंचायत या हाकिम से लेकर सर्वोच्च सुप्रीम कोर्ट तक फैली हुई है। जब तक यह न्याय व्यवस्था इसी प्रकार सुगठित,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरक्षित और स्वतंत्र रहेंगी, तभी तक एकता का आधार नागरिकों की स्वतः स्फूर्त और ऐच्छिक निष्ठा पर रहेगा। ● ●

एक और इतना ही महत्वपूर्ण तत्व है, संपूर्ण शक्तिवान केन्द्र के चारों ओर राष्ट्रीय इच्छाशक्ति का संगठन। इसी से राष्ट्रीय एकता सुरक्षित रह सकती है। आवश्यकता पड़ने पर आवश्यक सामूहिक शक्ति भी यह प्रदान कर सकता है। इस संकटग्रस्त युग में किसी राष्ट्र का अस्तित्व ही उसके सुदृढ़ केन्द्र पर अवलंबित है, जो विभिन्न प्रान्तों को सुगठित रख सके और बाहरी आक्रमण से देश की रक्षा कर सके। बार-बार हमें केन्द्र के अधिक शक्तिशाली होने की शिकायत सुनने को मिलती है, परन्तु केन्द्र का सुदृढ़ होना अति आवश्यक है। आधुनिक काल की यह परम आवश्यकता है।

क्षेत्रीय स्वशासन की अपनी इच्छाइयाँ हैं अवश्य, परन्तु सभी सत्ता का स्रोत केन्द्र को ही रहना चाहिए, क्योंकि इसके अभाव में न तो देश ही सुगठित रह सकता है और न बाहरी ख़तरों का ही मुक़ाबिला किया जा सकता है। इतिहास इस बात का गवाह है कि जब भी हमारी केन्द्रीय शक्ति कमज़ोर हुई है, तभी भारत पर विदेशी आक्रमण हुए हैं। ● ●

देश का प्रभावशाली अल्पसंख्यक वर्ग अर्थात् वह समुदाय, जो अपने विचारों अथवा प्रभाव से लोक जीवन को दिशा देता है, उसकी मानसिक एकता का भी होना अति आवश्यक है। इस एकता के सबसे बड़े शत्रु वे हैं, जो राष्ट्रवादी वाणी तो बोलते हैं, परन्तु कार्य गद्दारों का करते हैं। जो अपना पितृ देश इस देश की सीमाओं के बाहर देखते हैं, वे इस एकता से कोसों दूर हैं; वे तो संभवतः देशद्रोही ही हैं।

इस एकता का मूल आधार वे शिक्षित लोग हैं, जो एक राष्ट्र में बद्ध होने की इच्छा रखते हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भारतीय राष्ट्रवाद उन लोगों की मानसिक एकता का परिणाम है, जिन्होंने अंग्रेज़ों द्वारा स्थापित युनिवर्सिटियों से पिछले सौ वर्षों से शिक्षा प्राप्त की। इस सामान्य चेतना का विकास और पोषण तभी हो सकता है, जबकि देश में उच्च शिक्षा द्वारा एक सांस्कृतिक और बौद्धिक एकता बनी रहे। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए देश की सभी युनिवर्सिटियों में समान स्तर, समान परम्पराएँ और समान दृष्टिकोण होना चाहिए। यह तभी संभव है, जबकि देश भर में प्राध्यापक और विद्यार्थी एक स्थान से दूसरे स्थान पर कहीं भी बेखटके आ-जा सकें। जब तक विभिन्न युनिवर्सिटियों के स्तर और ृष्टिकोण में भेद रहेगा, तब तक यह मानसिक भावना मज़बूत नहीं हो सकती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यदि देश में युनिवर्सिटी-शिक्षा का माध्यम एक नहीं रहा, तब तो वह नष्ट ही हो जायगी।

पंजाब का स्नातक यदि मद्रास के स्नातक से एक सामान्य माध्यम के अभाव में बात न कर सके, तो सोचिये क्या हालत होगी। वास्तव में, यह एकता इस समय भी टूट रही है। गुजरात युनिवर्सिटी का विद्यार्थी अंग्रेजी ठीक न जानने के कारण बंबई जैसे बहुभाषीय शहर में यहाँ की युनिवर्सिटी के विद्यार्थी से खुलकर नहीं मिल सकता। संविधान सभा में हममें से कुछ लोग 'शिक्षा' को समवर्त्ती सूची में और 'युनिवर्सिटी शिक्षा' को केन्द्रीय सूची में रखना चाहते थे। इसका विरोध हुआ। हम केवल 'उच्च शिक्षा को एक क्रमीय' केन्द्रीय सूची में लाने में सफल हुए– यह विषय अब युनिवर्सिटी ग्रांट्स कमीशन के अधीन है । कुछ राज्यों ने इसको भी तब तक सीमित करने की चेष्टा की, जब तक कि सुप्रीम कोर्ट ने इसके पक्ष में फैसला नहीं दिया। शिक्षा को केन्द्रीय सूची में लाने की हमारी विफलता का परिणाम यह हुआ कि भाषावाद का जोर हो गया, जिससे देश में विघटन की प्रक्रिया शुरू हुई। इसको रोकने के लिए 'शिक्षा' को कम से कम समवर्त्ती सूची में लाना अनिवार्य है।

मानसिक एकता को लाने में एक महत्वपूर्ण तत्व है हमारी प्राचीन परंपरा की चेतना। यदि पाठ्य-पुस्तकें नयी पीढ़ी को हमारे गौरवशाली अतीत के वीरों, राजनीतिज्ञों और संतों की स्मृति से प्रेरित नहीं कर सकतीं, यदि उसे इन महा-पुरुषों की गौरवगाथाओं से वंचित रखा गया और यह नहीं बताया गया कि हमारे संस्थानों की अभिवृद्धि किस प्रकार हुई, तो हमारे विश्वविद्यालय सभ्य जंगलियों को भले ही तैयार कर दें, परन्तु राष्ट्रीय एकता की नींव हिल जायगी।

मैं भारत के एक ऐसे राज्य को जानता हूँ, जहाँ कुछ ग्रेजयूएट विद्यार्थी सर्विस-कमीशन द्वारा पूछे गये इस साधारण प्रश्न का उत्तर नहीं दे सके– 'महाभारत के रच-यिता कौन हैं ?' उनमें से एक ने कहा, सी. राजगोपालाचारी। दूसरा इससे भी आगे बढ़ गया। उसने महाभारत का लेखक के. एम. मुन्शी को ही बता दिया। इस सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय महाकाव्य के बारे में जो जानकारी उन्हें थी, वह किसी पुस्तक-विक्रेता के यहाँ भवन द्वारा प्रकाशित और राजाजी द्वारा लिखित 'महाभारत' के संक्षिप्तीकरण की एक प्रति को देख कर हीं उन्हें प्राप्त हुई थी। उसके मुखपृष्ठ पर जनरल एडिटर के रूप में के. एम. मुन्शी का नाम छपा था।

राष्ट्रीय एकता का एक और तत्व है, देश की आर्थिक एकता। लोगों को यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और भी अच्छी तरह समझ लेने की आवश्यकता है कि देश एक है और उसकी आवश्यकताएँ तथा आर्थिक स्रोत समान हैं। विभिद्ध क्षेत्रों द्वारा इस बात का ख़याल न करते हुए कि परिस्थितियाँ अनुकूल हैं या नहीं, अथवा साधन-स्रोत सहज प्राप्त हैं या नहीं, स्वयं को आत्मनिर्भर बनाने की चेष्टा एकता के भौतिक आधार को ख़त्म कर देगी। ऊपर से लादी गयी मार्क्सवादी योजनाएँ भी जनता का समर्थन प्राप्त नहीं कर सकतीं और इसलिए हानिकर हैं। परन्तु 'योजनाएँ न बनाना' तो और भी अधिक दुर्भाग्य पूर्ण होगा।

●●●

साथ ही हमें यह भी अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि राष्ट्रीयता केवल भौगोलिक तत्वों, योजनाओं अथवा वैधानिक एकता का फल नहीं है। वह तो 'प्रतिकार की सक्रिय इच्छा' का परिणाम है– राष्ट्र की शक्ति के विघटित होने के प्रति प्रतिकार की सामूहिक इच्छा, सुरक्षा और स्थायित्व को ध्वंस करने की चेष्टा के प्रति प्रतिकार, विदेशी आक्रमण के प्रति प्रतिकार। यह 'इच्छा' तभी होती है, जबकि हममें यह चेतना उग्र रूप से हो कि हम सब एक ही मातृभूमि की सन्तान हैं और उसकी सेना में अपना सर्वस्व निछावर करने को तैयार हैं। इसके लिए मातृभूमि के एक और अविभाज्य होने की अडिग श्रद्धा, उसके महान अतीत के प्रति विश्वास और गौरवशाली भविष्य को बनाने के दृढ़ संकल्प की आवश्यकता है। इसके मानी, हममें भारत को शक्तिशाली बनाने की तीव्र भावना होनी चाहिए, ताकि संसार में वह शांति, संवादिता, सहिष्णुता और आध्यात्मिक जीवन का संदेश पहुँचा सके।

हमें यह अनिष्टकर भ्रांति मिटा देनी चाहिए कि राष्ट्रीय एकता अधार्मिक, अनैतिक अथवा भौतिक तरीक़ों से लायी जा सकती है। भ्रष्ट राजनीतिज्ञ, घूसखोर सरकारी कर्मचारी और बेईमान व्यापारी कल्याणकारी राज्य के विपर्यय हैं। ऐसे हालात में जनतंत्रीय समाजवाद एक मज़ाक के सिवा और कुछ नहीं रह जाता। राष्ट्रीय एकता का नैतिक आधार ही वह समर्पण की भावना है, जो आनेवाली पीढ़ियों को राष्ट्र की महानता को बनाये रखने और विकसित करने की प्रेरणा दे। जिन्होंने इस भावना का विकास किया है, वे जानते हैं कि राष्ट्रों ने अपनी शक्ति किस प्रकार बढ़ायी और बनाये रखी। इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं।

आपका,

क॰ मा॰ मुन्शी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम संकीर्तन

ऐसा देस दिवाना रे लोगो,
जाय सो माता होय।
बिन मदिरा मतवारे झूमैं,
जनन मरन दुख खोय।

बिना सीप अनमोलक,
बिन दामिनि दमकाहीं।
बिन ऋतु फूले फूल रहत हैं,
अमरत रस फल पागैं।

अनहत शब्द भँवर गुंजरैं,
संख पखावज गाजैं।
ताल घंट मुरली घन घोरा,
भेरि दमामैं गाजैं।

रम्भा नृत्य करे बिन पग सूं,
बिन पायल ठनकारैं।
सिद्धि गर्जना अति ही भारी,
घुंघुरू-गति झनकारैं।

गुरु सुकदेव करैं जब किरपा,
ऐसा नगर दिखावैं।
चरनदास वा पग के परसे
आवागमन नसावैं ।

——महिपति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : कमलाक्ष शेनॉय

श्री माँ

सपनों और भविष्य-वाणियों का रहस्य

देह, प्राण, मन, अन्तर-आत्मा और सत्ता के अन्य ऊर्ध्व स्तरों के सूक्ष्म लोकों में अबाध विचरनेवाली श्री माँ ने अपने प्रत्यक्ष आन्तर ज्ञान के प्रकाश में सपनों और भविष्य-वाणियों के पीछे कार्य कर रही प्रक्रिया का मर्म यहाँ बड़े ही सरल ढंग से खोला है।

पूर्वाभास देनेवाले नाना प्रकार के स्वप्न होते हैं। इनमें से कुछ तो ऐसे स्वप्न होते हैं, जो तुरन्त संसिद्ध हो जाते हैं, अर्थात् रात में वही स्वप्न आता है, जो दूसरे दिन घटित होनेवाला होता है। फिर कुछ ऐसे स्वप्न होते हैं, जो अपनी संसिद्धि के लिए अधिक या कम समय लेते हैं। और काल में अपनी स्थिति के अनुसार ये स्वप्न विभिन्न लोकों में देखे जाते हैं।

जैसे-जैसे मनुष्य पूर्ण सुनिश्चितता की ओर अग्रसर होता है, वैसे-वैसे दूरी भी बढ़ती जाती है, क्योंकि वे दर्शन एक ऐसे जगत में प्राप्त होते हैं, जो मूल के बहुत समीप होता है और जो कुछ होनेवाला होता है, उसके पूर्वाभास के आने तथा उसकी संसिद्धि के बीच एक बहुत दीर्घ काल का व्यवधान होता है। परन्तु पूर्वाभास सुनिश्चित होता है, क्योंकि वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ फरवरी १९६४

मूल के बिलकुल समीप होता है। एक स्थान ऐसा है, जहाँ मनुष्य परात्पर के साथ एकत्व प्राप्त कर लेता है, जहाँ वह पूर्ण रूप से सब कुछ भूत, वर्तमान और भविष्य में तथा सर्वत्र जो कुछ है, उसे—जान लेता है। परन्तु, साधारण तौर पर जो लोग वहाँ जाते हैं, वे, जब लौटते हैं, तब अपना देखा हुआ सब भूल जाते हैं। स्मरण रखने के लिए मनुष्य को एक विशेष प्रकार के कठोर आत्मानुशासन के भींतर से गुज़रने की आवश्यकता होती है। और वही एक मात्र स्थान है, जहाँ मनुष्य कोई भूल नहीं कर सकता।

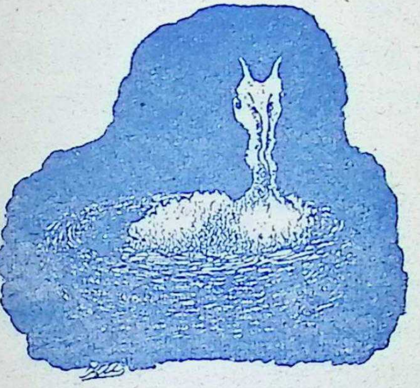

चित्र : कमलाक्ष शेनॉय

परन्तु, यातायात की कड़ियाँ, जंजीरें सर्वदा पूर्ण नहीं होतीं और बहुत विरल लोग ही याद रख सकते हैं।

अब, जो कुछ मैं कह रही थी, उस पर आ रही हूँ। जिस स्तर पर मनुष्य कोई स्वप्न देखता है, उसके अनुसार कम या अधिक मात्रा में वह यह निर्णय कर सकता है कि उस दर्शन के संसिद्ध होने में कितना समय लगेगा और तात्कालिक चीज़ें तो संसिद्ध ही होती हैं, सूक्ष्म भौतिक स्तर में होती हैं और उन्हें देखा जा सकता है, बस वे हैं, वहाँ उनका अस्तित्व है, वे महज उस चीज के प्रतिबिंब (केवल प्रतिलिपि ही नहीं), प्रतिबिंब या प्रक्षेप हैं, जो दूसरे दिन या कुछ घंटों बाद स्थूल जगत में घटित होगी। वहाँ तुम समस्त ब्यौरे के साथ ठीक-ठीक वस्तु को देखते हो, क्योंकि वह वहाँ विद्यमान है; वहाँ प्रत्येक चीज़ निर्भर करती है, दर्शन की यथार्थता और उसकी शक्ति पर। यदि तुम्हें देखने की ऐसी शक्ति प्राप्त हो, जो वस्तुओं को अपने से बाहर के विषय के रूप में देखने में समर्थ और सच्ची हो, तो तुम उन्हें ठीक-ठीक देखोगे; यदि तुम उसके साथ अपनी भावनाओं और धारणाओं को जोड़ दोगे, तो वह उस पर एक रंग चढ़ा देगी। अतएव सूक्ष्म-भौतिक स्तर में यथार्थता निर्भर करती है, पूर्णतः यंत्र के ऊपर, अर्थात् जो देखता है, उसके ऊपर।

परन्तु जैसे ही तुम अधिक सूक्ष्म राज्यों में प्रवेश करते हो, जैसे कि प्राण लोक, या मनोलोक जो कि और भी सूक्ष्म है, प्राण लोक में भी, तब वहाँ सम्भावनाओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की एक सरहद आ जाती है। तब तुम मोटे रूप में यह देख सकते हो कि क्या घटित होने जा रहा है, पर व्यौरों का जहाँ तक सम्बन्ध है, वह चाहे यह हो सकता है या वह; वहाँ च्छाएँ और प्रभाव होते हैं, जो सम्भवतः हस्तक्षेप कर सकते हैं और अन्तर पैदा कर सकते हैं।

और इसका कारण यह है कि विभिन्न क्षेत्रों में मूल इच्छाशक्ति प्रतिबिंबित होती है, और प्रत्येक क्षेत्र प्रतिमूर्ति के संगठन और सम्बन्‍ को परिवर्तित करता है। जिस जगत में हम लोग रहते हैं, वह प्रतिमूर्तियों का जगत है। यह स्वयं वस्तु अपने मूल रूप में नहीं है, यह एक वस्तु का प्रतिबिंब है। हम यह कह सकते हैं कि हम लोग, अपने भौतिक रूप में, महज एक प्रतिबिंब हैं, जो कुछ हम मूल सत्य रूप में हैं, उसकी एक प्रतिमूर्ति हैं। और इन प्रतिबिंबों का जो साँचा बनाने का कार्य है, उसी से समस्त भूल-भ्रांतियाँ और मिथ्या आकार उत्पन्न होते हैं— जो कुछ तुम मूल रूप में देखते हो, वह पूर्णतः सत्य और शुद्ध होता है तथा सम्पूर्ण शाश्वतता तक बना रहता है, प्रतिमूर्तियाँ मुख्यतया बदलती रहने वाली होती हैं। और प्रकम्पनों में जितनी मात्रा में मिथ्यापन घुसा होता है, उतनी ही मात्रा में विकृति और रूपान्तर भी बढ़ जाता है। यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक परिस्थिति, प्रत्येक घटना, प्रत्येक वस्तु का एक शुद्ध रूप है, जो उसका सच्चा स्वरूप है तथा बाकी संख्या में उसके अशुद्ध या विकृत स्वरूप है, जो सत्ता के विभिन्न लोकों में उसी एक वस्तु के स्वरूप हैं। उदाहरणार्थ, बौद्धिक जगत में, विकृति का प्रारम्भ हो गया है; मनोमय जगत में विकृतियों की एक बहुत बड़ी तादाद है, जैसे ही भावावेगों और सम्वेदनों के राज्य के बीच में आ उपस्थित होते हैं, वैसे ही और विकृतियाँ बढ़ जाती हैं। और जब एक बार तुम भौतिक स्तर पर पहुँच जाते हो, तो बहुत अधिक बार वह चीज पहचान में ही नहीं आती। वह पूर्ण रूप से विकृत हो चुकी होती है। इस हद तक विकृत हुई होती है कि कभी यह भी समझना कठिन होता है कि यह उसी वस्तु की भौतिक अभिव्यक्ति है– वे एक-दूसरी से बहुत कम ही मिलती-जुलती हैं।

यह बहुत कुछ समस्या को एक नये ढंग से देखना है और यह बहुत सी चीज़ों को समझने की कुंजी दे सकता है।

इस तरह जब तुम किसी आदमी को अच्छी तरह जानते हो और उसे स्थूल रूप में देखने के आदी हो, तब तुम यदि उससे सूक्ष्म-भौतिक जगत में मिलो, तो तुम बहुत सी चीज़ें अधिक निश्चित, अधिक स्पष्ट, अधिक महत्वपूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९ फरवरी १९६४

देखोगे, जिसे तुमने भौतिक रूप में नहीं देखा था, क्योंकि स्थूल जगत की धूमिलता के अन्दर वे अन्य बहुत सी चीज़ों के साथ उस स्तर के ऊपर से गुज़र गयी थीं। कुछ विशिष्ट गुण अथवा चरित्र की कुछ विशिष्ट अभिव्यक्तियाँ ऐसी होती हैं, जो स्थूल रूप में दिखायी नहीं देतीं, पर उस समय एक दम दृश्य बन जाने के लिए पर्याप्त रूप में महत्वपूर्ण हो उठती हैं। जब तुम स्थूल रूप में किसी व्यक्ति की ओर ताकते हो, उस समय उसके चेहरे का रंग, मुंह की बनावट और उसकी भाव-भंगिमा आदि कई चीज़ें विद्यमान होती हैं; फिर जब तुम उसी व्यक्ति के आकार को सूक्ष्म भौतिक स्तर में देखते हो, तो सहसा तुम देखते हो कि उसके आकार का एक भाग एक रंग का है और दूसरा भाग दूसरे रंग का, उसकी आँखों में एक प्रकार की भाव व्यंजना है और एक प्रकार की ज्योति है, जो बिलकुल ही दृश्य नहीं थी, और सम्पूर्ण आकार एक दम भिन्न रूप में दिखाई देता है, बल्कि एक ऐसी छाप डालता है, मानों वह कोई दूसरी ही वस्तु हो और वह वस्तु सम्भवतः हमारी भौतिक आँखों के लिए कुछ-कुछ अतिरंजन सा तीत होगा, पर स्थूल सूक्ष्म दृष्टि के लिए बड़ा ही अर्थपूर्ण और चरित्र का द्योतक, अथवा उन प्रभावोंको भी बताने वाला होगा, जिनके अधीन वह व्यक्ति ोगा (यहाँ जो कुछ मैं कह रही हूँ, वह एक अनुभूति का ही उल्लेख है, जो मुझे अभी कुछ दिन पूर्व हुई थी)।

अतएव जितनी मात्रा में तुम सचेतन होगे, और जहाँ तुम देखोगे, उसके अनुसार ही तुम प्रतिमूर्तियाँ देखोगे, कम या अधिक निकट की घटनाओं को देखोगे और उन्हें कम या अधिक सही रूप में देखोगे। एक मात्र वही दर्शन सच्चा और निश्चित होता है, जो भागवत चेतना का दर्शन होता है। इसलिए प्रश्न यह है कि भागवत चेतना के विषय में सज्ञान हुआ जाय और इस चेतना को पूरे ब्योरे में एवं सभी समय बनाये रखा जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमती लीलावती मुन्शी

सौन्दर्य और सतीत्व की अमर ज्योति-शिखा : पद्मिनी

नवीन भारत में सनातन आर्य नारीत्व के तेजोमान आदर्शों की नवयुगीन विधात्री श्रीमती लीलाव ी मुन्शी ने, आर्यावर्त की महिमावती नारियों के बड़े ही सुन्दर शब्द-चित्र प्रस्तुत किये हैं। पद्मिनी उसी हारमाला की एक ज्योति-शिखा है।

भगवान् शंकर के तपःतेज के समान आर्य स्त्रियों का हृदय-तेज भी जगत के संरक्षण के लिए है और सात्त्विक क्रोध के जागने पर वह संहार भी करता है। आर्य स्त्रियों का चारित्र्य-वल अग्नि के समान प्रज्ज्वलित होता है। वे जीवन की प्रेरणा-शक्ति हैं। उन्हें अगर कोई छेड़ता है, तो दावानल के समान उनकी प्रचण्ड शक्ति आहुति मांगती है और अपना तथा दूसरे, दोनों का नाश करती है।

सती शब्द में निहित आदर्श आर्य जीवन में कोई दूर का ध्येय नहीं, परन्तु नित्य-प्रति के जीवन-क्रम की एक आवश्यक वस्तु है। आर्यों के मन सतीत्व जीवन के समान ही पवित्र और उससे भी अधिक मूल्यवान हैं। कई देशों में कला का विकास स्थल उपयोग की सामग्रियों में वृद्धि करने के लिए होता है, परन्तु भारतीय जीवन में यह विकास मानव-जीवन के अन्तर में पाये जानेवाले सूक्ष्म तत्त्व के साक्षात्कार के लिए होता है। और कहीं सौन्दर्य उपभोग के लिए भले ही हो; परन्तु हमारे यहाँ सौन्दर्य भोग-सामग्री नहीं, विभूति है।

चितौड़ की वीरांगना पद्मिनी की जीवन कथा इन दो आदर्शों अथवा दृष्टि-कोणों के कलह की कथा है। एक जाति में सौन्दर्य अधिकार की वस्तु और उसे उपभोग के लिए प्राप्त करना पुरुषत्व का जन्म सिद्ध अधिकार माना जाता था। दूसरी जाति में, प्रभुता के प्रसाद स्वरूप उस सौन्दर्य की उज्ज्वलता में ज़रा भी दाग़ न लग सके, इस हेतु प्राणार्पण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर देना भी कोई बड़ी बात नहीं थी। प्राण बचाने की अपेक्षा प्राणवान बनने की प्रवृत्ति ही अधिक महत्त्वपूर्ण मानी जाती थी।

असाधारणता किसी भी विशिष्ट गुण से संलग्न होती है। आदर्श के हेतु मिट जाना या मिटा देना, प्रत्येक ओजस्वी आत्मा का संकल्प होता है। सतियों के सत्य-व्रत एवं वीरों के देह-विसर्जन, दोनों भावनाओं के पीछे अधिकतर एक प्रकार ही मनोदशा रहती है। पद्मिनी भी इसी प्रकार की एक अपूर्व नारी थी। वहाँ के वीर भी इसी प्रकार की उदात्त भावना से ओतप्रोत थे। वसुन्धरा में एकत्रित सर्व सौन्दर्य का साररूप, अपनी सुकुमार और अद्‌भुत देहलता को अग्नि के समर्पित करते समय वह ज़रा भी रोती नहीं। इसी प्रकार समृद्धिशाली चित्तौड़ को स्मशान बनाते समय वहाँ के किसी भी वीर की आत्मा डगमगायी नहीं।

सौन्दर्य और सतीत्व का संगम विरल होता है और इसीलिए उसकी कीर्त्ति-गाथाएँ काल के प्रवाह के समान पुरानी होने पर भी नित नूतन रहती हैं। पद्मिनी की कथा आज भी हमें आकर्षित करती है। हज़ारों योद्धाओं में आत्मोत्सर्ग की भावना जाग्रत करने वाली यह मनोरम स्वरूपा योगमाया अब भी हमें विस्मित करती है।

वह कैसी थी? भगवान शंकर की चन्द्रकला के समान लावण्यमयी, परन्तु अप्राप्य भी? अथवा बाल सूर्य के समान कोमल होने पर भी तेजस्वी थी? पुष्प के पराग के समान वह मृदु और मादक थी, अथवा वनस्पति के समान उत्तेजित करनेवाली थी! वीणा के समान उसके स्वर आत्मा में पैठ कर दिव्य आदेश जागृत करते थे, अथवा रण-वाद्यों के समान उसके स्वर युद्ध में जूझ मरने को प्रेरित करते थे? सौन्दर्य और संयोग से अमर बनी यह मात्र अबला थी, अथवा वीरों का कलेजा कपाने वाली कोई शक्ति थी?

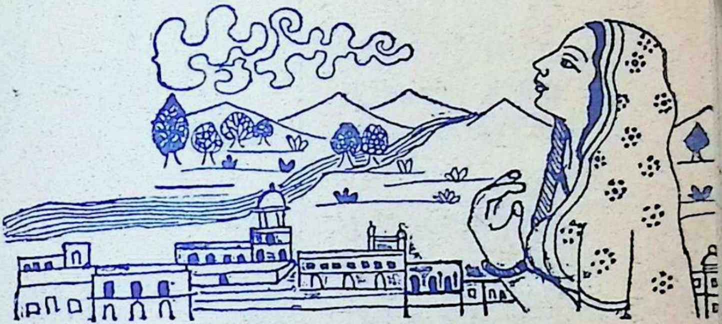

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

अत्याचार करने को तत्पर और, होश-हवास खो बैठे एक दुराचारी को धोखा देने की योजना उसी ने बनायी थी। आशा की अन्तिम किरण अदृश्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने तक दृढ़ता से प्रतीक्षा करनेवाली और परिणाम की विधात्री वननेवाली भी वही थी। जीवित रहते और मृत्यु के वाद भी वह अजेय बनी रही। वह निर्बल और लावण्यमयी होने पर भी मात्र सौन्दर्य से विभूषित प्रतिमा थी, ऐसा मानने को कल्पना तैयार नहीं होती। अकेला सौन्दर्य प्रेरित करता है, मगर आधार नहीं देता। सौन्दर्य-मूर्ति को लोग सजा कर रखते हैं; परन्तु अन्तकाल तक उपासना करने के लिए तो वे जगदम्वा की शरण ही जाते हैं। खप्पर भरने के लिए आयी हुई महा माया के सदृश ही वह अधिक लगती है।

पर क्या उसे अपने सौन्दर्य का गर्व था? अपनी शक्ति को मापने की आकांक्षा उसमें थी? अलाउद्दीन को दर्पण में अपना दर्शन कराते समय क्या उसने शृंगार रचा था? भीमदेव को छुड़ाने में क्या उसे सन्तोष नहीं हुआ? सम्राट की अस्वीकृत याचनाओं पर क्या वह आत्म सन्तोष अथवा सन्मानपूर्वक तिरस्कार से नहीं, हँसी? उन्मत्त, प्रणयी विजेता वन कर जब वह उसे ढूंढ़ने आयेगा, तब चिता की राख से उसका गर्व किस प्रकार खण्डित होगा, यह सोच कर क्या उसकी आँखें नहीं चमक उठी होंगी?

पद्मिनी के एक प्राचीन चित्र की अनुकृति

सर्जनशक्ति से जिस प्रकार मनुष्य में अभिमान या गर्व की मात्रा बढ़ती है, उसी प्रकार नाश करने या कराने की शक्ति से भी एक प्रकार का उन्माद होता है। पद्मिनी के हृदय की महत्ता ने इस सर्वनाश का कारण स्वयं को समझ कर अपने को धिक्कारा अवश्य होगा; परन्तु इस सर्वनाश की अधीश्वरी स्वयं को समझ कर प्रलय की याद दिलाती हुई एक मुस्कान भी उसके होठों पर थिरकी होगी। और, इसी प्रकार इस नाश के ऐश्वर्य का विचार कर एक पलक भी झपकाये बिना अथवा दुख का एक भी निःश्वास लिये बिना वह प्रसन्नमुखी महामाया चिता पर चढ़ी होगी और अनेकों को चढ़ने के लिए आमन्त्रित किया होगा।

इस प्रकार का अभिमान आज गर्त्य

[शेष पृष्ठ ६७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन बोध-कथाएँ

भगवान् परमहंस यों बोले

मनुष्य और मनुष्य

मनुष्य की चार श्रेणियाँ की जा सकती हैं– प्रथम, वे जो संसार रूपी शृंखला में बंधे हुए हैं, दूसरे, वे जो इस बन्धन से मुक्त होने का प्रयत्न करते हैं, तीसरे, स्वतंत्र और चौथे सदासर्वदामुक्त।

सदा मुक्त लोगों में हम नारद जैसे मुनि को ले सकते हैं। वे संसार में दूसरों की अच्छाई के लिए ही जीते हैं और आंध्यात्मिक सत्यों का प्रचार करते हैं।

बन्धन में पड़े वे लोग हैं, जो संसाररूपी सागर में डूबे हैं और ईश्वर को भूले रहते हैं। भूल से भी वे ईश्वर के बारे में नहीं सोचते।

वे जो स्वतन्त्रता की खोज में हैं सांसारिक बंधनों से मुक्त होना चाहते हैं। उनमें कुछ सफल होते हैं कुछ नहीं।

स्वतन्त्र वे हैं, जिन्हें हम साधु या महात्मा कहते हैं और जो कामिनी-कांचन के मोह से मुक्त हैं। सांसारिकता से उनका कोई संबंध नहीं रह गया है। वे अपना ध्यान भगवान के चरण-कमलों में लगाये रहते हैं।

इसे दृष्टांत द्वारा इस तरह बताया जा सकता है– मान लिया एक झील में मछलियाँ पकड़ने के लिए जाल डाला जाता है। कुछ मछलियाँ इतनी चतुर होती हैं कि वे जाल के पास नहीं फटकतीं। वे सदामुक्त लोगों की तरह हैं। किन्तु अधिकांश मछलियाँ जाल में फंस जाती हैं। उनमें से कुछ निकल भागने का प्रयत्न करती हैं। ये उन लोगों की तरह हैं, जो स्वतन्त्र होने के इच्छुक हैं। लेकिन इस संघर्ष में सभी मछलियाँ सफल नहीं होतीं। कुछ ही पानी को जोर से उछालते हुए जाल से बाहर निकल पाती हैं। तब मछुआरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिल्लाता है, 'देखो, एक बड़ी मछली निकल भागी।'' किन्तु अधिकांश फंसी हुई मछलियाँ जाल से नहीं निकल पातीं और न ही वे उसके लिए प्रयत्न करती हैं। इसके विपरीत वे जाल के ही कीचड़ में बिल सा बना लेती हैं और वहाँ यह सोचते हुए शांति से पड़ी रहती हैं, 'हमें चिन्ता की ज़रूरत क्या है, यहां हम पूर्ण सुरक्षित हैं।' लेकिन वे बेचारी यह नहीं सोचतीं कि मछलीमार उन्हें जल्दी ही जाल के बाहर निकाल लेगा। ये उन लोगों की तरह हैं, जो संसार में लिप्त हैं।

सारी मुसीबतों की जड़

एक जगह कुछ मछुवे मछली पकड़ रहे थे। इतने में एक चील वेग से नीचे आयी और झपाटे से एक मछली पकड़कर ले गयी। मछली की तरफ़ मुंह किये हजारों कौवे कांवकांव करते चील का पीछा करने लगे। जिधर भी चील जाती, कौवे उसके पीछे लग जाते। चील दक्षिण की ओर उड़ी, तो कौवे भी उधर उड़ने लगे। चील ने उत्तर को रुख किया, तो कौवों ने भी उधर ही मुँह कर लिया। चील पूर्व और पश्चिम की तरफ भी भागी; लेकिन कौवों ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। चील मुसीबत में पड़ गयी और इसी बीच उसके मुँह से मछली छूट गयी। कौवों ने तुरन्त चील का पीछा छोड़ा और मछली की तरफ़ झपटे। इस तरह मुसीबत से छुटकारा पाकर चील एक पेड़ की डाल पर बैठ गयी और सोचने लगी कि वह दुष्ट मछली ही मेरी सारी मुसीबत का कारण थी। अच्छा हुआ कि मैंने उससे छुटकारा पा लिया और अब मैं सुखी हूँ।

जितना अधिक मनुष्य मछली रूपी सांसारिक लालसाओं के पीछे भागता है, उतनी ही चिन्ता, अशान्ति और दुखों से कष्ट पाता रहता है। और जितनी जल्दी वह इन इच्छाओं का परित्याग कर देता है उतनी जल्दी उसे सच्ची सुख-शांति प्राप्त हो जाती है।

भागवत और वेश्या का कोठा

एक बार दो मित्र कहीं जा रहे थे कि उन्होंने कुछ लोगों को भागवत की कथा सुनते देखा। तब एक मित्र दूसरे से बोला, 'आओ मित्र, हम भी इस पवित्र पुस्तक की कथा सुनें।' और ऐसा कहकर वह कथा सुन रहे लोगों के बीच जाकर बैठ गया। दूसरे ने उधर झांक कर देखा और आगे बढ़ गया। उसने एक बदनाम जगह क़दम रखा। लेकिन जल्दी ही वह उस जगह से ऊब गया और अपने आप से बोला, ''मेरे लिए कितनी लज्जा की बात है। मेरा मित्र प्रभु के पवि नाम की कथा सुनने में व्यस्त है और मैं यहाँ किस नर्क में आ गिरा हूँ।'' किन्तु वह मित्र भी जो कथा सुनने में लग गया था, उससे

[शेष पृष्ठ ४८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

भारतीय संस्कृति की अमर ज्योति

विज्ञान (सायन्स) के साथ ज्ञान (आत्मज्ञान) भी आवश्यक है। आज आत्मविद्या लोगों की उपेक्षा का विषय बना हुआ है, पर जब तक कोई अपने जीवन का अन्तिम उद्देश्य व उसका मूल्य न जान ले, तब तक वह जीवन व्यतीत करेगा ही कैसे ? भारतीय संस्कृति में आत्म-ज्ञान और विज्ञान का सहज समन्वय हुआ है।

हमारी संस्कृति अगाध और गंभीर है, यह ज्योति पुंज है, जो अन्धेरे में भटके हुए लोगों को अपनी मंज़िल तक पहुँचाती है। संसार को आज इस की आवश्यकता है। पश्चिमी राष्ट्रों के पास आज भले ही संसारिक सुख के सभी साधन मौजूद हों, पर सच्ची शान्ति प्रदान करनेवाली 'आत्मविद्या'' का वहाँ सर्वथा अभाव है। कारखाने, शिक्षण संस्थाएँ आदि राष्ट्रोन्नति के लिए आवश्यक तत्त्व हैं ज़रूर, पर इनका महत्त्व "आत्मविद्या" की अपेक्षा गौण ही होना चाहिए। छान्दोग्योपनिषद् का एक शिष्य अपने गुरु के पास जाकर कहता है कि "मैं सर्प विद्या, शास्त्र विद्या, नक्षत्र विद्या" सभी पढ़ चुका हूँ, पर मैं **"मंत्रवित् 'एवास्मि'' "आत्मविद्"** नहीं। मैं केवल मंत्रों का ही ज्ञान रखता हूँ, आत्मा का नहीं। इसलिए मैं दुःखी हूँ"। यह कथन इस बात का साक्षी है कि बिना आत्मज्ञान के सब विद्याएँ सच्चा सुख व शान्ति प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कराने में असमर्थ हैं।

साक्षरो विपरीतत्वे राक्षसो भवति ध्रुवम्।

यदि हम पढ़-लिख कर भी कुमार्ग में प्रवृत्त होंगे, तो हममें और राक्षस में कोई भी अन्तर नहीं रह जायगा। साक्षर को उल्टा कर देने से राक्षस शब्द बन जाता है। दूसरे शब्दों में, केवल पुस्तकीय या बौद्धिक ज्ञान ही पर्याप्त नहीं है। उसे आत्मज्ञान से शुद्ध और पवित्र करने की आवश्यकता है।

यह संसार अनित्य है, अस्थिर है, नष्ट हो जानेवाला है, तो स्वाभाविक ही एक शंका मन में उत्पन्न होती है कि क्या कोई ऐसा भी तत्त्व है, जो नष्ट न होता हो? हमारे शास्त्रकार कहते हैं कि संसार असत् है, मिथ्या है। गीताकार भी कहते हैं, "**अनित्यमसुखं लोकं**" यह संसार अनित्य और सुख-रहित है। श्री शंकराचार्य के अनुसार भी यह संसार "**लोकं शोकहतं च समस्तं**" दुःखमय है। महात्मा बुद्ध ने मुर्दे, वृद्ध और रोगी को देखकर सोचा कि क्या ये ही जीवन की अन्तिम अवस्थाएं हैं, या इनसे परे भी कोई तत्त्व है? और उस तत्त्व की खोज में उन्होंने अपना सारा जीवन लगा दिया।

संसार गतिशील है, पर इस संसार में भी एक तत्त्व ऐसा है, जो इस गति में नहीं आता। वह तत्त्व है, सत, ज्योति और अमृत–

असतो मा सद्गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मा अमृतं गमय

यदि संसार में असत्, तमस् और मृत्यु है, तो साथ ही सत्, ज्योति और अमृत भी है। आज संसार के विकृत हो जाने का कारण यही है कि लोगों के हृदयों में पवित्र विचारों, पवित्र भावनाओं और पवित्र उद्देश्यों का सर्वथा अभाव है। हम अपने जीवन को क्षणिक सुखों से सन्तुष्ट करना चाहते हैं, फलतः हमें जीवन भी व्यर्थ से प्रतीत होते हैं। यदि हम जानते हैं कि आज समाज विकृत है, यदि हम जानते हैं कि ये अणु-अस्त्र संसार को विनाश की ओर धकेल रहे हैं, यदि हम यह भी जानते हैं कि इन सबका परिणाम विनाश ही है, तो संसार के बुद्धिमान् मनुष्य क्यों नहीं ऐसा प्रयत्न करते, ताकि यह विनाशकारी परिणाम सामने न आ सके। इसका कारण यही है कि उनके अन्दर विचारने की शक्ति नहीं है। हमारे पूर्वज सभी विषयों में कुशल थे। उन्होंने इस अन्तिम सतत्त्व पर भी गम्भीरता से विचार किया था। उपनिषदों में हम देखते हैं–

भृगुर्वै वारुणिः। वरुणं पितरमुपससार, अधीहि भगवो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मेति, स होवाच-यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि जीवन्ति, यत्प्रयत्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व तद् ब्रह्म ॥

"उस सत्तत्त्व से संसार प्रकट होता है, उसी के सहारे रहता है और अन्त में उसी में लीन हो जाता है"। पर प्रकृति इसे नहीं पा सकती, ज्योति इसे प्रकाशित नहीं कर सकती, मस्तिष्क के द्वारा इसका विचार नहीं किया जा सकता, इन सब से परे वह आनन्दमय तत्त्व है। वही तत्त्व इस संसार का नियामक है। वाचस्पति मिश्र कहते हैं– **"येषु वर्तमानेषु यदनुवर्त्तते, ततेभ्यो भिन्नं"** शरीर, भाव व बौद्धिक क्रियाएँ सभी परिवर्त्तन शील हैं, पर इन परिवर्तनशील तत्त्वों के पीछे एक अपरिवर्त्तनीय तत्त्व भी विद्यमान है। यह प्रकृति से भी श्रेष्ठ है। एक फ्रेंच विचारक का कहना है कि "जब तक मनुष्य स्वयं को नहीं पहचानता है, तबतक वह संसार के प्रलोभनों के द्वारा बुरी तरह पीसा जाता है, पर स्वयं को पहचानने के बाद हस्तामलकवत् इन सांसरिक प्रलोभनों की निस्सारता को जान जाता है।" हम उस अमृतमय के पुत्र हैं, अतः हमारे अन्दर भी ऐसा तत्त्व विद्यमान है, जो प्रकृति में नहीं मिल सकता। मानव जीवन स्वयं में एक रहस्य है। जब हम उस रहस्य को जान जाते हैं, तभी हम सच्चे मानव बन पाते हैं।

जब मनुष्य आत्म-विश्लेषण द्वारा एक उच्च आध्यात्मिक स्तर पर पहुँच जाता है, तभी वह धार्मिक कहलाने का अधिकारी होता है। भले ही हम रोज पूजा-पाठ करें, भले ही हम मन्दिरों में जायें, पर यदि हम दूसरों को धोखा देते हैं, उन्हें ठगते हैं, तो हम कभी भी धार्मिक नहीं कहला सकते। हम हर मानव को परमात्मा का प्रतिरूप समझें और यह समझें कि मानव के रूप में साक्षात् ईश्वर हमारे सामने है, तभी हम सच्चे धार्मिक बन सकेंगे।

यही धार्मिकता की अवस्था है। यदि तुम कहते हो कि ईश्वर एक है और हम सब उसी के पुत्र हैं, हम सब उसी से उत्पन्न हुए हैं, तो फिर शत्रु और मित्र की भावना ही कहाँ रही? ईश्वर प्रेम रूप है, इसलिए यदि कोई प्रेम का विरोधी है, तो वह ईश्वर का भी विरोधी है।

यही हमारे भारतीय संस्कृति की विशेषता है, जिसने इस संस्कृति को जीवित जाग्रत रखा। यूनान, रोम, मिस्र आदि देशों की सभ्यता को आज कोई नहीं जानता, पर हमारी संस्कृति आज भी सर्वत्र अपना प्रकाश फैला रही है। हमारी संस्कृति के अन्दर अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्य हैं, उन्हें प्रकाश में लाकर अपने जीवन के ध्येय को हमें पहचानना है। ○○○

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[डॉ. अमृता भारती द्वारा संचयित प्राचीन मिस्र के अज्ञात लोक-कवियों की यह दुर्लभ रसवन्ती अपने पाठकों को भेंट करते हमें खुशी होती है]

मिस्र की प्रेम कविताएँ

अमृता भारती
द्वारा प्रस्तुत

उपवन के गीत

[१]

अनार– वृक्ष बोलता है:
मेरी पत्तियाँ हैं तुम्हारे दाँतों के समान
तुम्हारा वक्ष मेरे फल का है उपमान।
मैं, फलों में सुन्दरतम,
सब मौसमों सब ऋतुओं में हूँ वर्तमान,
जैसे प्रेमी अपनी प्रिया के सँग
रहता है सर्वकाल,
"शेडेह" और मदिरा का करके पान।

सभी वृक्षों की पत्तियाँ झर जाती हैं,
अनार के सिवा सभी वृक्षों की।
उपवन में मेरा और मेरा ही
सौन्दर्य अ–क्षीण रहता है,
मेरा तना नहीं झुकता है।
मेरी पत्तियाँ झर जाने पर
मुकुलित होने लगती हैं नयी पत्तियाँ।
मेरी है माँग:
फलों में सर्वप्रथम मेरी सत्ता हो स्वीकार
मैं नहीं लूंगा दूसरा स्थान।
और यदि दुबारा मिला मुझे ऐसा अपमान
तुम इसका अन्त कभी न सुन पाओगी।
खिले कमल
और कमल–कुड्मल के साथ
और सब तरह के तेल और मधुर लोहबान के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ फरवरी १९६४

तुम रहोगी उनमें
जो हैं सन्तुष्ट
क्योंकि गुलाब–मण्डप का ऊँचा होता है मूल्यांकन
उसकी परवाह की जाती है भली भाँति।

वह वहाँ है !
हम ऊपर चलें और उसका करें आलिंगन
और सारे दिन उसे रोके रहें अपने पास।

[२]

सुनो अंजीर–वृक्ष की आवाज़ः
अपनी स्वामिनी को मेरा अभिनन्दन।
कौन मुझसे ज़्यादा है उदात्त ?
जब नहीं है और कोई
तो क्यों नहीं मैं रहूँ तुम्हारा दास ?
वे मुझे उठा लाये हैं सीरिया से
जैसे कोई प्रिया का डाका डालता है।

मैं सारे दिन जल-त्वचा से नहीं करता जल-पान,
लेकिन करता हूँ सौन्दर्य-पान।

[३]

जिसे तुमने अपने हाथों से रोपा था
उस नन्हे अंजीर-वृक्ष का मुख स्पन्दित होता है
करने के लिए सम्भाषण।

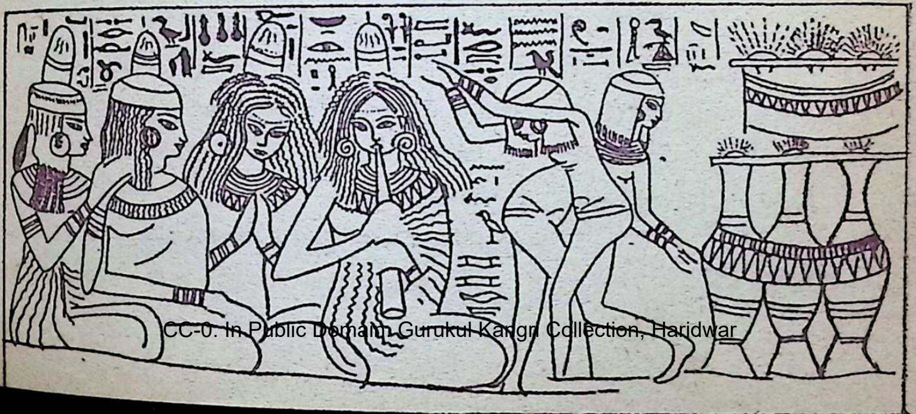

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितनी मनोहर हैं उसकी टहनियाँ,
जब वे हिलती हैं, और हिलती हुई फुसफुसाती हैं,
मधु-सी मीठी है उनकी फुसफुसाहट।

भरे-भरे फलों से झुक आयी हैं डालियाँ
फल जो लाल हैं, रक्तिम सूर्यकान्त मणि से भी लालतर
मैलेकाइट-सी हैं पत्तियाँ।

वे दूर दूर से खिच आये हैं तुम्हारे पास
फिर भी अभी नहीं है तुम्हारी ठण्डी छाया में
उनका वास।

तुम देते हो प्रलोभन
किशोरी लड़की के लिखे प्रेम-पत्र का,
वह बड़े माली की बेटी है
जो अपने प्रेमी की तरफ कहते हुए दौड़ती है
"चलो, कहीं चलें एकान्त में।"

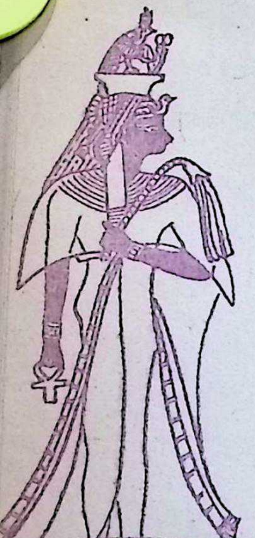

उपवन अपने वैभव में है सम्पूर्ण
शिविरों, मण्डपों से परिपूर्ण;
और यह सब कुछ तुम्हारे लिए है।
तुम्हें देखकर आनन्दित होते हैं मेरे माली ।
अपने दासों को भेज दो
ले आये संगीत के उपकरण
उत्सव का कर लें सरन्जाम।
तुम्हारी तरफ दौड़ना शीतल जल को पाना है
पिपासु जन के लिए।
तुम्हारे सेवक आ रहे हैं, हर क़िस्म की बियर,
केक, पेस्ट्री के साथ
ताज़े फूलों और ठण्डे फलों से
उफ़नी आ रही हैं उनकी डोलचियाँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिताओ एक दिन, सुख का दिन,
और कल, और परसों
मेरी छाया में बिताओ पूरे तीन दिन।
चुनी हुई लड़की बैठती है उसके दाहिनी ओर,

वह उसे शराब से कर देता है सराबोर
ताकि वह उसकी हर बात को
करने के लिए तत्पर हो जाये

जब हर कोई पीकर हो जाता है मदहोश
कोई नहीं जानता उनमें हो रहा है क्या,
वह उत्सुक हो करता है अपना आचरण।
यही सब है, जो मैं कह रहा हूँ:
मुझे इतना है विवेक
कि उसके बाद जो कुछ घटित होता है
मैं किंचित्मात्र नहीं देता उसका संकेत।

सुहावने गीत [१]

ओ मेख़मेख़ के फूलों, हमें चैन दो !
तुम्हारे लिए मैं करूँगा पालन अपने हृदय की बात का।
जब तुम मुझे करते हो आलिंगन
कितना उज्ज्वल होता है प्रकाश जो तुममें से फूटता है
मैं चाहता हूँ अपने नयनों के लिए सुगन्धित आलेपन।

इस निश्चिति के साथ:
कि तुम मुझे करते हो प्यार
मैं तुम्हारे बाजू में लेता हूँ शरण।
सारे ही मनुष्यों में तुम हो मेरे लिए विशिष्टतम:
विश्वस्त है मेरा मन।

भास्वर होता है संसार सम्पूरन मेरी इच्छा होती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम साथ साथ कर सकते शयन
और ऐसे ही, अनन्त काल तक (रहते निद्रामगन)।

[२]

कितना लघु कोमल है सीमू के फूलों का आकार
जो भी निगाह डालता है उन पर
सोचता है अपने को दैत्याकार।

तुम्हारे प्यारों में मैं हूँ सर्वप्रथम
ताजे छींटे हुए घास के बगीचे-सा
और सुगन्धित पुष्पों-सा ही।

नहर सुहावनी है, खोदा है जिसे तुमने
उत्तरी पवन की ताजगी में।

प्रशान्त हैं हमारी राहें
जब तुम्हारे हाथ सुख-विह्वल हो
मेरे हाथों में करते हैं विश्राम।
तुम्हारी आवाज देती है जीवन अमृत-सम।
भोजन और मदिरा से बढ़कर है तुम्हारा दर्शन।

[३]

उपवन में फूल खिले हैं जेट के
मैं फूल तोड़ता हूँ:
गूंथ कर गजरा बनाता हूँ: तुम्हारे लिए,
और जब तुम कर लेती हो मदिरा-पान
और शयन के लिए लेट जाती हो
वह खिसक जाता है,
मैं वह हूँ,
जो तुम्हारी चरण-धूल में करता हैं स्नान।

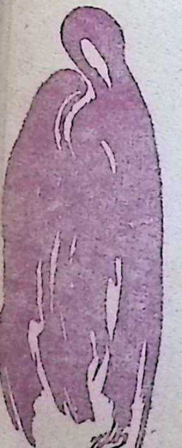

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

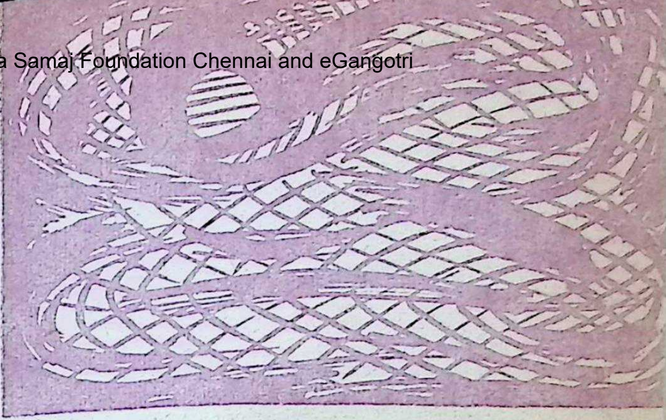

चित्र : कमलाक्ष शेनॉय

ठौर ठिकाने

डॉ. शिवमंगलसिंह सुमन

तुम तो यहीं ठहर गये ?
ठहरे तो किले बाँधो
मीनारें गढ़ो
उतरो, चढ़ो
उतरो, चढ़ो।
कल तक दूसरों की करते थे
आज अपनी रक्षा करो।
मुझे तो चलना है
अँधेरे में जलना है
समय के साथ साथ ढलना है,
इसीलिए मैंने कभी
परकोटे नहीं बाँधे,
सरहदें नहीं साधीं;
मुक्त सदा बहा सहा
हवा-आग-पानी सा।
बचपन-जवानी सा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि टाल्स्टॉय

राजा अश्रद्धन

[एक बोध-कथा]

तुम अपने जीवन का कल्याण तभी कर सकते हो, जब कि तुम अपने और दूसरे जीवों को अलग-अलग करनेवाली यह बीच की बाधक दीवार तोड़ दोगे, और जब तुम प्राणीमात्र को आत्मवत् समझकर उन्हें प्यार करने लगोगे।

राजा अश्रद्धन ने राजा लाइलिये के राज्य को जीत लिया। उसने उस राज्य के सारे नगरों का ध्वंस कर के उन्हें जला दिया, वहाँ के प्रजाजनों को वह बलात्पूर्वक अपने देश लिवा ले गया, वहाँ के सैनिकों और लड़ाकों को उसने मार डाला और राजा लाइलिये को पिंजड़े में डाल दिया।

रात को जब अश्रद्धन अपनी शैया पर लेटा हुआ था, तो वह विचार कर रहा था कि कैसे वह लाइलिये का खात्मा कर दे। एकाएक ही उसे अपने निकट एक आवाज़ सुनायी पड़ी। उसने अपनी आँखें खोलीं; उसने देखा कि उसके सामने एक पुरातन पुरुष खड़ा है– उसकी दाढ़ी कबरी है और उसकी आँखों से सौम्यता टपक रही है।

'तुम लाइलिये का प्राण लेना चाहते हो?' उस पुरातन पुरुष ने पूछा।

'हाँ', राजा ने उत्तर दिया, 'सिर्फ मेरी समझ में अभी तक यह नहीं आया है कि कैसे उसका खात्मा कर दूं?'

'पर तुम स्वयं ही लाइलिये हो,' उस पुरातन पुरुष ने कहा।

'यह बात सच नहीं है,' राजा ने कहा, 'मैं' 'मैं' हूँ और लाइलिये 'लाइलिये'।

"तुम और लाइलिये एक ही हो!" पुरातन पुरुष ने कहा– "तुम्हारी भूल है अगर तुम यह मानते हो कि तुम लाइलिये नहीं हो, और लाइलिये तुममें नहीं है।

"क्या मैं भूल रहा हूँ?" राजा ने कहा, "क्या यहाँ मैं अपनी सुकोमल शैया में नहीं लेटा हूँ, और क्या मेरे चारों ओर मेरे आज्ञाकारी ग़ुलाम प्रस्तुत नहीं हैं कि मेरे आज्ञा देते ही वे उसका पालन करें? और क्या ठीक, आज की ही तरह कल भी मैं अपने मित्रों के साथ दावत नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहूँगा ? जबकि वह लाइलिये एक परिन्दे की तरह अपने पिंजड़े में बैठा है ? और क्या कल वह जुबान निकालकर अपनी सूली की नोक पर नहीं छटपटायेगा, जब तक कि वह मर नहीं जायेगा और कुत्ते उसकी लाश को फाड़ नहीं खायेंगे ?"

"तुम उसकी प्राण–हानि नहीं कर सकते !" पुरातन पुरुष ने कहा।

"और क्या हुआ होगा उन चालीस हज़ार सिपाहियों का, जिन्हें मारकर मैंने पहाड़ में चुनवा दिया है ?" राजा ने कहा "मैं तो ज़िन्दा हूँ, पर वे तो कभी के मर चुके हैं। तुम देख रहे हो न, कि मैं कैसे प्राणहानि कर सकता हूँ ?'

"भला यह तुम क्या जानो कि अब वे नहीं रहे हैं ?"

"क्योंकि मैं उन्हें देख नहीं रहा हूँ। खासकर इसलिए भी कि उन्होंने यंत्रणा झेली है, और मैंने ऐसा कोई कष्ट नहीं झेला। वे अभागे थे और मैं भाग्यवान हूँ।"

"यह बात भी ग़लत है। तुमने अपने को ही यंत्रणा दी है, उन्हें नहीं।"

"तुम्हारी बात मेरी समझ में नहीं आ रही।" राजा ने कहा।

"क्या तुम समझना चाहते हो ?"

"हाँ, ज़रूर समझना चाहता हूँ।"

'तो यहाँ आओ' और उस पुरातन पुरुष ने राजा को एक पानी के टब के पास आने का इशारा किया।

राजा उठकर उस टब के पास चला गया।

'कपड़े उतार ो, और इस टब में उतर जाओ।'

अश्रद्धन ने पुरातन पुरुष की आज्ञा का अनुसरण किया।

'अब जब मैं यह पानी तुम्हारे ऊपर उंड़ेलूं, तो तुम अपना सर इस पानी में

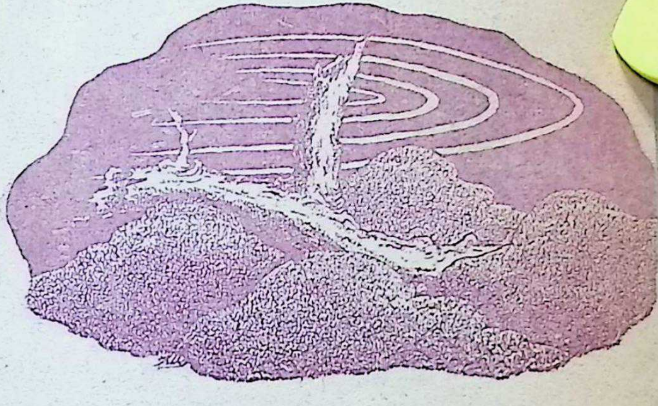

चित्र : कमलाक्ष शेनॉय

डुबा लेना', एक कटोरे में पानी भरते हुए पुरातन पुरु ने कहा।

पुरातन पुरुष कटोरे का पानी राजा के सिर पर उंड़ेलने लगा, और राजा पानी में डुबकी लगा गया।

राजा अश्रद्धन ने ज्यों ही अपना सिर पानी में डुबाया कि तुरन्त उसे प्रतीत हुआ कि वह अश्रद्धन नहीं है, बल्कि कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और है। और जिस क्षण उसने अनुभव किया कि वह कोई और है, तभी उसने देखा कि आप एक बहुमूल्य तख़्त पर लेटा हुआ है और उसके पास ही एक सुन्दर स्त्री लेटी हुई है। उसने इस स्त्री को पहले कभी नहीं देखा था, पर वह जानता था कि वह उसकी पत्नी है। वह स्त्री उठ खड़ी हुई और उससे बोली, "लाइलिये मेरे प्यारे पति, पिछले दिनों की परेशानियों से तुम थक गये हो, और इसलिए और दिनों की अपेक्षा आज तुम कुछ अधिक समय तक सोये रहे हो। मैंने तुम्हारी नींद पर पहरा दिया है, और तुम्हें जगाया नहीं है, लेकिन अब सभी राजा बड़े दीवानखाने में तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। पोशाक धारण करो, और उनके पास जाओ।'

इन शब्दों को सुनकर अश्रद्धन को प्रतीति हो गयी कि वह लाइलिये है। उसे ज़रा भी आश्चर्य नहीं हुआ। आश्चर्य उसे था तो केवल इसी बात का कि अब तक वह यह बात क्यों नहीं जान सका था। वह उठ बैठा; उसने कपड़े पहने और उस बड़े दीवानख़ाने की ओर चला, जहाँ वे राजागण उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

राजाओं ने बड़े आदर के साथ झुककर अपने राजा लाइलिये का स्वागत किया। फिर वे सीधे खड़े हो गये और राजा के आदेश को सुनकर अपने-अपने स्थान पर बैठ गये। तब उन राजाओं में सबसे अधिक वयस्क राजपुत्र ने कहा: उस दुष्ट राजा अश्रद्धन के अपमान और अब झेले नहीं जाते; उसके विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया जाना चाहिए।

पर लाइलिये ने इस बात को मंज़ूर नहीं किया। उसने आज्ञा दी कि दूत भेजकर अश्रद्धन के विवेक को सम्बोधित किया जाये। लाइलिये ने उन राजाओं को जाने की छुट्टी दे दी। तब उसने अपने कुछ सरदारों को दूत नियुक्त किया और जो सन्देश राजा अश्रद्धन के पास वह भेजना चाहता था उसे ब्यौरेवार उसने उन सरदारों को सुझा-समझा दिया।

यह हो जाने पर, अश्रद्धन, जो अपने को लाइलिये के रूप में पा रहा था, जंगली गधों के शिकार के लिए पहाड़ों में गया। भाग्य ने उस पर मुस्करा दिया; उसने स्वयं ही दो गधों को मार दिया, और वह अपने घर की ओर लौट आया। उसने अपने मित्रों के साथ दावत की और वह दास-बालाओं का नृत्य देखने में रत हो गया।

दूसरे दिन, अपने दस्तूर के मुताबिक, वह अपने दरीखाने में गया; वहाँ अर्ज़दार, पक्षकार आरोपी आदि लोग उसकी प्रतीक्षा में थे, उसने यथावत् अपनी अदालत की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्यवाही की। उसके बाद फिर वह अपने प्रिय मनोरंजन, आखेट पर निकल पड़ा; उस दिन उसने सफलतापूर्वक एक वृद्ध सिंहनी को मार डाला और उसके दो बच्चों को उठा लाया।

शिकार के बाद फिर उसने अपने मित्रों के साथ दावतें की, संगीत और नृत्य का आनन्द लिया, और सन्ध्या अपनी प्यारी पत्नी के साथ बितायी।

इसी तरह दिन बीतने लगे, सप्ताह बीतने लगे। वह अश्रद्धन के पास (जो वह स्वयं कभी रहा था) भेजे हुए अपने दूतों के लिए प्रतीक्षा कर रहा था।

एक महीने बाद वे दूत अपने नाक-कान कटवाकर वापस लौट आये।

राजा अश्रद्धन ने लाइलिये को यह कहलवा भेजा था कि 'यदि वह आगे से अश्रद्धन को चाँदी, सोना और सिपरस की लकड़ी के रूप में भेंट देना आरम्भ नहीं कर देगा, और स्वयं उपस्थित होकर अश्रद्धन के आगे सिर नहीं झुकायेगा, तो उसकी भी वही दुर्गति होगी, जो उसके दूतों की हुई है।'

लाइलिये ने, जो कभी स्वयं अश्रद्धन रहा था, अपने राजाओं को बुलाकर फिर मशविरा किया, और उनकी सलाह चाही कि अब क्या करना चाहिए। सबने एक स्वर में यही राय दी कि हमें अश्रद्धन के आक्रमण की प्रतीक्षा न करके स्वयं ही उसके देश पर आक्रमण कर देना चाहिए। राजा ने उनकी बात मान ली, उसने सेना का नेतृत्व अंगीकार किया और रणक्षेत्र की ओर चल पड़ा। रास्ते में उन्हें सात दिन लग गये। इस दरमियान प्रतिदिन राजा अपनी सेना का निरीक्षण करता और अपने सैनिकों को प्रोत्साहित करता।

आठवें दिन नदी-तीर की एक चौड़ी घाटी में उसकी सेना जाकर अश्रद्धन की सेना से भिड़ गयी। लाइलिये की फौजें बड़ी वीरता से लड़ीं, पर लाइलिये ने देखा कि उसका शत्रु-सैन्य चीटियों की तरह पहाड़ों पर से उतरा आ रहा है और घाटियों पर छाता हुआ वह उसकी सेना को पदाक्रान्त कर रहा है। उस शत्रु पर भयानक आक्रमण करते हुए वह स्वयं अपने रथ में झपटता हुआ युद्ध के बीचों-बीच कुद पड़ा। पर लाइलिये के सैनिक जब मात्र सैकड़ों की संख्या में थे, तब अश्रद्धन के सैनिक हज़ारों की संख्या में थे; लाइलिये ने अनुभव किया कि उसे करारी चोट लगी है और वह बन्दी बना लिया गया है।

दूसरे युद्ध क़ैदियों के साथ साँकल से बंधा हुआ वह नौ दिन तक अश्रद्धन के सैनिकों से घिरा चलता रहा। दसवें दिन वह निनेवेह लाया गया और वहाँ एक पिंजड़े में डाल दिया गया। एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर लाइलिये के जख्म कसक रहे थे और दूसरी ओर वह भूख की वेदना से छटपटा रहा था। पर उससे भी बड़ा संताप उसे अपने अपमान और नपुंसक क्रोध पर हो रहा था। अपने शत्रु के हाथों जो अत्याचार उसने सहन किया था, उसका बदला चुकाने के लिए वह अपने को असमर्थ पा रहा था

एक ही बात वह कर सकता था। अपने शत्रु को उसकी अपनी यंत्रणा देखने का अवसर वह चाहे तो नहीं भी दे सकता है; अतएव उसने यह वीर्यवान निश्चय कर लिया कि रंच मात्र भी ऊहापोह किये बिना वह सब कुछ सहन कर ले जायेगा, फिर जो भी अत्याचार उस पर गुज़रे।

बीस दिन तक वह पिंजड़े में बैठा मरण-दण्ड की प्रतीक्षा करता रहा। उसने देखा कि उसके आत्मीय, सम्बन्धी और मित्रों को मरण-दण्ड के लिए ले जाया जा रहा है, उसने उन लोगों की वेदना-चीत्कारें भी सुनीं, जिनके हाथ-पैर काट डाले गये थे। पर उसने किसी भी प्रकार की बेचैनी, दया या भीति का भाव प्रकट नहीं होने दिया। उसने देखा कि दासियाँ उसकी प्यारी पत्नी को जंज़ीरों में जकड़ कर ले जा रही हैं, वह जान गया कि वे उसे अश्रद्धन की दासी बनाने के लिए ले जा रही हैं। और वह सब भी उसने बिना कोई गिला किये सहन कर लिया।

तभी दो जल्लादों ने आकर पिंजड़े का द्वार खोला। उन्होंने लाइलिये के दोनों हाथों को एक रस्सी से उसके पीछे बाँध दिया और वे उसे रक्तरंजित सूली के मंच पर ले गये। उसने सूली की उस तीखी और रक्ताक्त नोक को देखा, जिसने अभी-अभी उसके मित्र के शरीर का छेदन किया है, और उसने यह भी समझ लिया कि अब यह सूली उसी के छेदन के लिए खाली होकर प्रस्तुत है।

उसके कपड़े उतार दिये गये। अपने इस सुन्दर और बलवान शरीर के इस विनाश पर लाइलिये को एक बार कँपकँपी आ गयी।

दो जल्लादों ने उसके शरीर को ऊपर उठाया और उसे सूली की नोक पर डाल देने को उद्यत हुए।

मेरे सामने मौत है, सत्यानाश? लाइलिये को विचार आया। अंतिम क्षण तक अपने अडिग पौरुष को निबाहने का निश्चय वह भूल गया। वह सिसकने लगा, और प्राण की भिक्षा माँगने लगा। पर किसी ने उसकी बात नहीं सुनी।

लेकिन यह बात असम्भव है, उसने सोचा, शायद मैं सो रहा हूँ। यह एक सपना है। और उसने जागने का एक सशक्त प्रयत्न किया। और मैं तो लाइलिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : जोशी

नभ पर जलता सूर्य,
अकृपण स्वर की धूप-छाँव–
वन-प्रान्तर में बिखरी, बिखरी,
पथ- वीथिकाओं पर, सूर्य के संगीत में
अजब एकरूपता है।
मानो किसी चंचला के मुखर नूपुर
विचित्र लय में झंकृत होते हैं !
किन्तु इधर देखो–
सहस्रों फूल शिशुओं के प्राण झरते हैं।
तो फिर इस भूमिका के बाद –
सूर्य संगीत सुनने का कौन लाभ ?

•

डेटॉल की तीव्र गंध,
ऐम्बुलैंस, यंत्रणाओं का कक्ष,
निश्चल यौवन।
आहतों की आखों में गहन अंधकार।
यंत्रणा से क्लान्त, उन्माद, प्रतीक्षा में तन्द्राहीन प्रहर–
किन्तु मृत्यु के इस अजायब घर में,
व्याधियों की बाधाओं को दूर फेंक–
पंगुता के पहरे को हटाकर–
आज व्याकुल आग्रह कुछ खोजता है:
एक टुकड़ा आसमान, एक कण तारा।

•

यहाँ मृत्यु के द्वार पर
चोट खायी ज़िन्दगी
माथा पटकती है।
मगर आश्चर्य है–
धूप की हँसी में लिपटे
यहाँ भी खिलते हैं– अमलतास।

• अनु. रमेन्द्रनाथ बोस

तारापद भट्टाचार्य

•

अस्पताल :

अमलतास :

[बंगला कविता]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अन्तर्गत अयोध्या पर यह तीसरा लेख है:

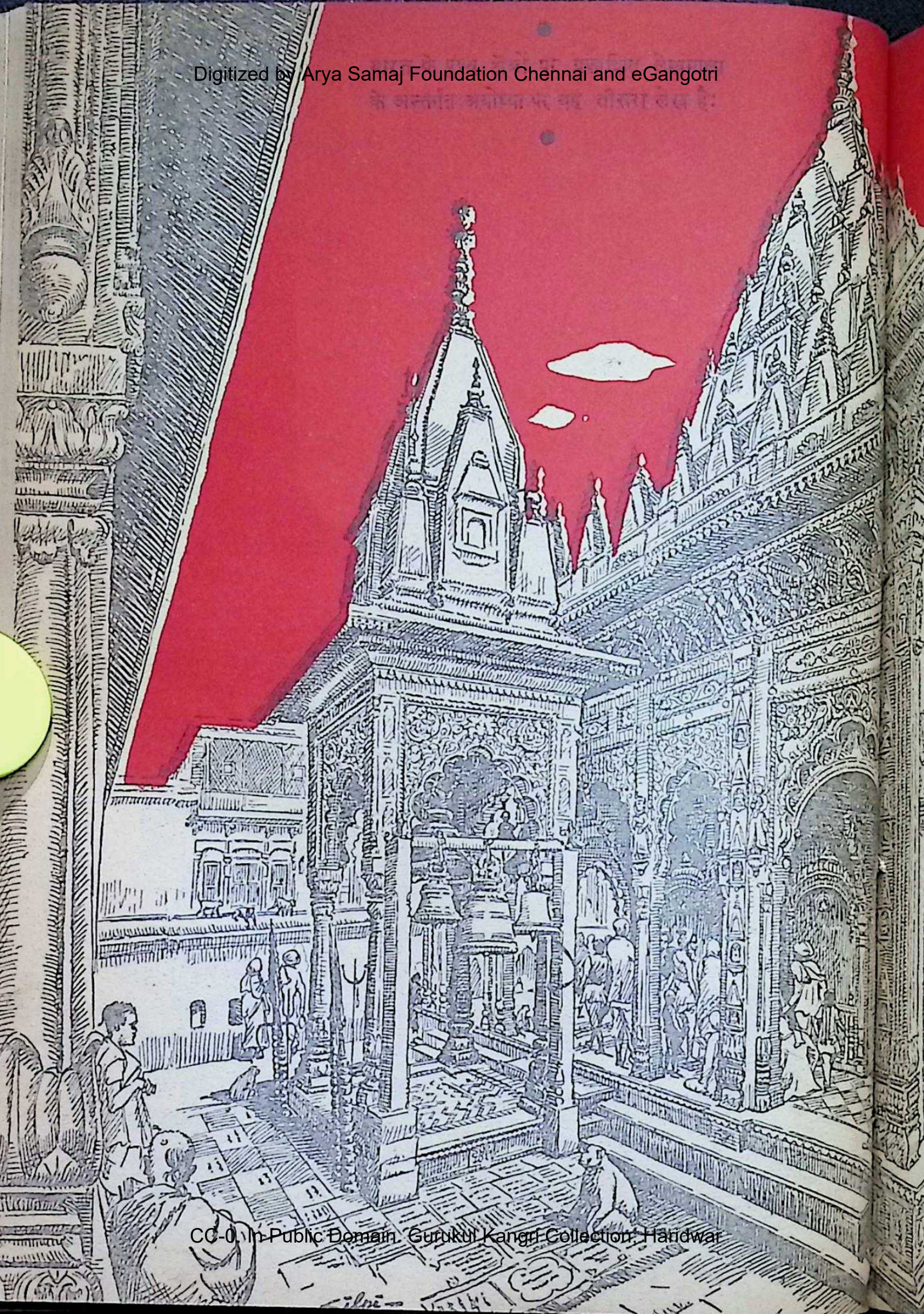

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयोध्या

[३]

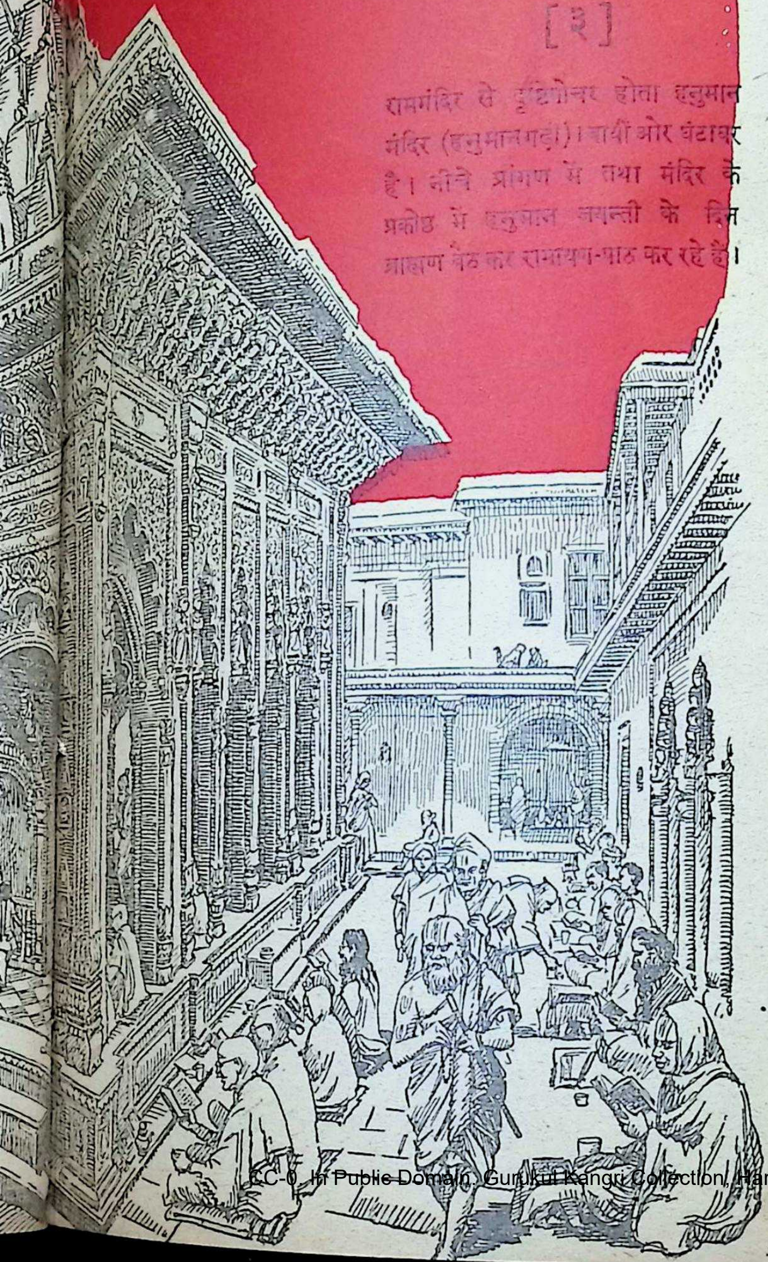

राममंदिर से दृष्टिगोचर होता हनुमान मंदिर (हनुमानगढ़ी)। बायीं ओर घंटाघर है। नीचे प्रांगण में तथा मंदिर के प्रकोष्ठ में हनुमान जयन्ती के दिन ब्राह्मण बैठ कर रामायण-पाठ कर रहे हैं।

अयोध्या में हनुमान मन्दिर भी तीर्थ-यात्रियों के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। हनुमान गढ़ी के नाम से भी यह स्थान प्रख्यात है। पुराणों के अनुसार अयोध्या छोड़ कर अपने स्व-धाम को जाते समय भगवान श्री राम अयोध्या को हनुमान जी के अधीन सौंप गये थे।

कहते हैं राजा विक्रमादित्य जब इस नगर की प्राचीन भव्यता की पुनर्स्थापना कर रहे थे, तो उन्हें श्री हनुमान की एक अतिभव्य एवं विशाल प्रतिमा प्राप्त हुई, और उस प्रतिमा को स्थापित करने के लिए उन्होंने एक भव्य मन्दिर का निर्माण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

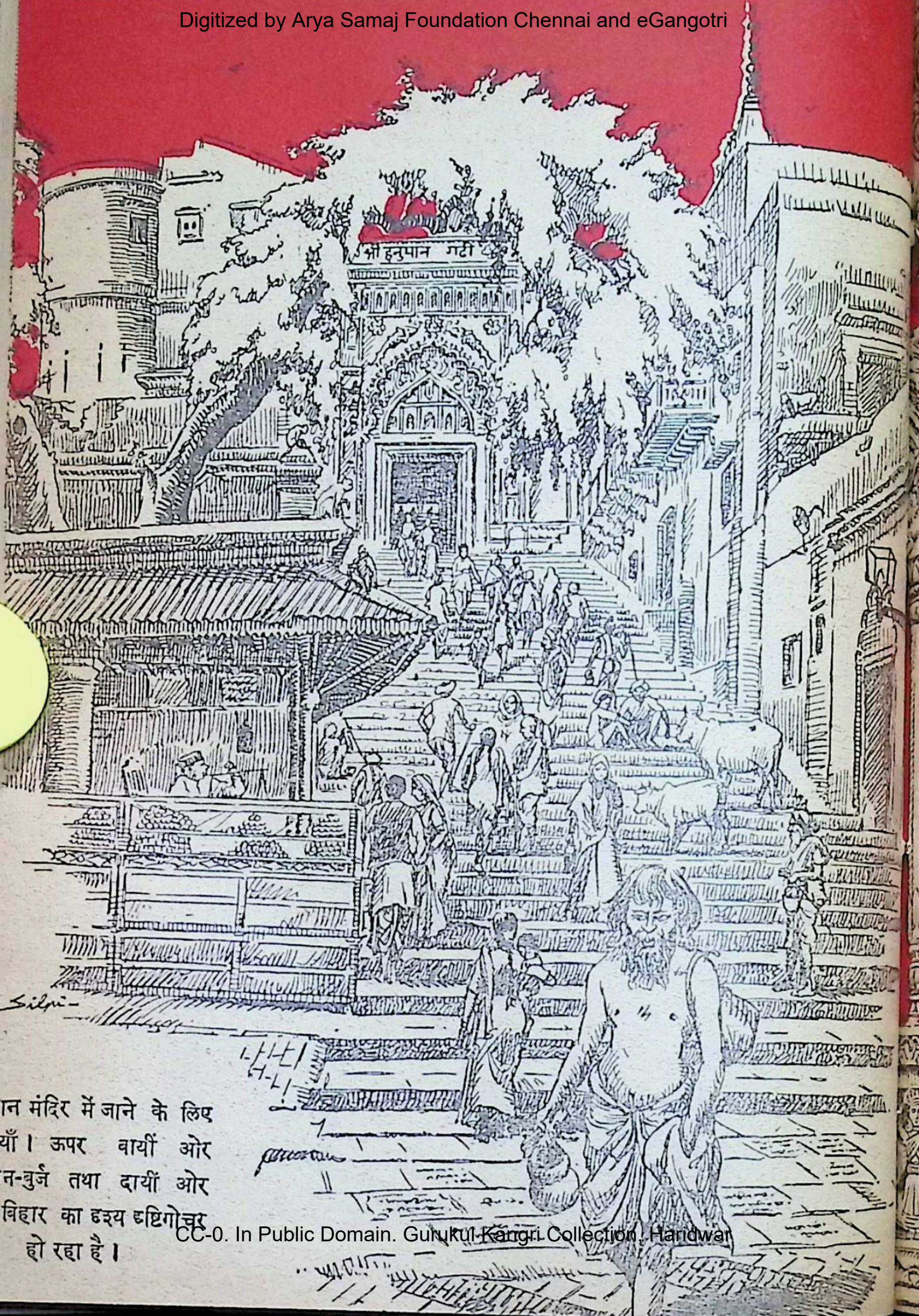

ुमान मंदिर में जाने के लिए
ढ़ियाँ। ऊपर बायीं ओर
ुमान-बुर्ज तथा दायीं ओर
ंदिर विहार का दृश्य दृष्टिगोचर
हो रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

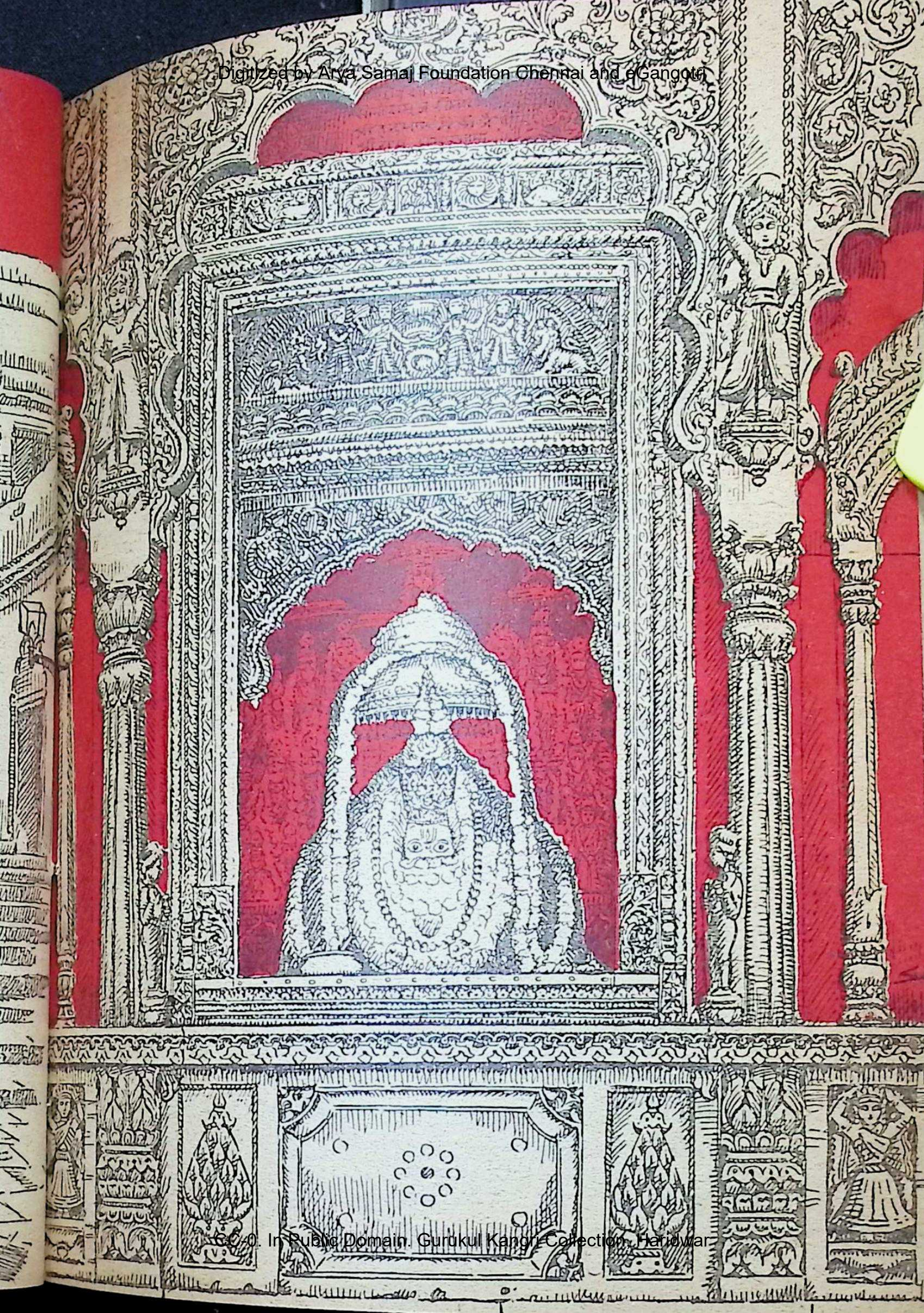

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी किया। बाद में मुग़ल बादशाह बाबर ने इस मन्दिर को ध्वस्त कर दिया था और एक दीर्घकाल तक यह खण्डहर के रूप में पड़ा रहा।

ऐसी भी कथा है कि अवध के नवाब मन्सूर अलीखांन एक बार कुष्ट रोग के शिकार हो गये। उन्होंने बहुत से उपचार किये; किन्तु सफलता नहीं मिली। अन्त में वायु परिवर्तन के लिए वे अयोध्या गये। वहाँ उनकी भेंट श्री अभय रामदास जी नामक एक महान सन्यासी से हुई। वे हनुमान जी के परम भक्त थे। स्वामीजी की उदात्तता एवं उच्च पवित्रता से नवाब साहेब इतने प्रभावित हुए कि तत्काल स्वामीजी के चरणों में लोट गये। नवाब की नम्रता एवं असह्य पीड़ा से द्रवित हो स्वामीजी ने उन्हें रोग-मुक्त कर दिया। खुश हो कर नवाब ने बहुत से कर-मुक्त गाँव स्वामी जी को भेंट कर दिये।

मुसलमान शासन के कमज़ोर पड़ते ही अवध के दीवान श्री तिकैत राय ने विशाल पैमाने पर पुनः इस मंदिर का निर्माण कर हनुमानजी की तिप्रमा को प्रतिस्थापित किया। तभी से यह मन्दिर रामानन्दीय वैष्णव साधुओं के हाथ में है।

दीवान द्वारा निर्मित किये गये इस को ३०० वर्ष व्यतीत हो चुके। अब मंदिर पंचायत पद्धति से इस मन्दिर की व्यवस्था होती है। महन्त तथा पंचों का चुनाव मत द्वारा होता है। मत देने का अधिकार हनुमान गढ़ी के वैरागियों को ही है। महन्त तथा पंच ही सुचारुरूप से मन्दिर की सभी व्यवस्था करते हैं।

प्रति वर्ष अयोध्या में तीन प्रमुख उत्सव मनाये जाते हैं। सब से बड़ा उत्सव श्रीराम जन्म का होता है, जो चैत मास में रामनवमी के नाम से मनाया जाता है। दूसरा उत्सव श्रावण मास में झूला तथा तीसरा कार्तिक मास में अक्षय नवमी परिक्रमा के नाम से मनाया जाता है। इनके अतिरिक्त कितने छोट-छोटे उत्सव भी मनाये जाते हैं जो आनन्द के प्रतीक होते हैं। मार्गशीर्ष माह में राम-विवाह पंचमी, माघ माह में मकर संक्रान्ति, भादों में सूर्य कुण्ड मेला तथा आश्विन में दशहरा का उत्सव भी मनाया जाता है।

—क्रमशः

★

लेखकों से आवश्यक निवेदन :

- इधर कविताएँ 'भारती' कार्यालय में इतनी अधिक जमा हो गयी हैं, कि विरल ही कोई नयी कविता स्वीकारना सम्भव होगा। अच्छी होने पर भी कविताएँ अस्वीकृत हो सकती हैं; कवि-मित्र इसे हमारी विवशता जान, क्षमा करेंगे।
- भविष्य में 'भारती' में आनेवाले लेख 'भारती' के अधिक से अधिक ५–६ पृष्ठों से ज़्यादा विस्तृत नहीं होने चाहिए। अधिक लम्बे लेख, स्वीकारने में हम असमर्थ होंगे।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा गान्धी

संसार को हिन्दू धर्म की देन

जहाँ पश्चिम ने भौतिक उपकरणों को जुटाने में और उनकी खोज में आश्चर्यजनक प्रगति की है, वहाँ हिन्दू धर्म ने इससे भी ज़्यादा चमत्कारिक चीज़ों की खोज की है, अर्थात् आध्यात्मिक जगत की चीज़ों की। लेकिन हमारी आँखें इन खोजों की तरफ़ से मुँदी हुई हैं। हम पश्चिम द्वारा प्राप्त भौतिक उन्नति से चकाचौंध हो गये हैं। मैं उस उन्नति पर आसक्त नहीं हूँ।

वर्णाश्रम धर्म स्वयं में हिन्दू धर्म की विश्व को एक अपूर्व देन है। हिन्दू धर्म ने हमें भय से मुक्ति दी है। यदि हिन्दू धर्म ने मुझे नहीं बचाया होता, तो एकमात्र आत्महत्या ही मेरे सामने एक रास्ता रह गया होता। मैं हिन्दू हूँ, क्योंकि हिन्दू धर्म ने संसार में सच्ची ज़िन्दगी बिताने का मार्ग बताया है। हिन्दू धर्म से ही बौद्ध धर्म का उदय हुआ। जो कुछ आज हम देखते हैं, वह हिन्दू धर्म न प्रतीत होकर इसका प्रतिरूप लगता है, अन्यथा इसे मेरी वकालत की जरूरत न होती; यह स्वयं ही बोलता, जैसे यदि मैं भी पूरी तरह पवित्र हो जाऊँ, तो मुझे आप के समक्ष बोलने की ज़रूरत नहीं होगी

हिन्दू धर्म ने मुझे यह सिखाया है कि यह शरीर, आत्मा की शक्ति के लिए, जो इसके भीतर रहती है, एक बाधा है। जहाँ पश्चिम ने भौतिक उपकरणों को जुटाने में और उनकी खोज में आश्चर्यजनक प्रगति की है, वहाँ हिन्दू धर्म ने इससे भी ज़्यादा चमत्कारिक चीज़ों की खोज की है, अर्थात् आध्यात्मिक जगत की चीज़ों की। लेकिन हमारी आँखें इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोजों की तरफ से मुंदी हुई है। हम पश्चिम द्वारा प्राप्त भौतिक उन्नति से चकाचौंध हो गये हैं। मैं उस उन्नति पर आसक्त नहीं हूँ।

वास्तव में देखा जाय, तो ऐसा लगता है, मानो ईश्वर ने अपनी विशेष कृपा के कारण भारत को इस दिशा में प्रगति करने से रोक दिया हो, ताकि यह अपने उस मूल ध्येय को पूर्ण कर सके, जिसमें भौतिक-वाद का दमन होता है। जो हो, हिन्दू धर्म में कुछ ऐसा अवश्य है, जिसने इसे अब तक जिन्दा रखा है। इसने सीरिया, मिस्र, फारस और बेबीलेनिया की सभ्यताओं का पतन होते देखा है। ज़रा अपने अन्दर झांक कर पूछिए– आज वे रोम और ग्रीस कहाँ गये? क्या आज आप कहीं गिबन की इटली पाते हैं, या उस प्राचीन रोमन सभ्यता को ज़िन्दा पाते हैं? ज़रा ग्रीस जाइए। विश्व प्रसिद्ध ऐटिक सभ्यता कहाँ चली गयी? अब भारत की ओर देखिए और इसके प्राचीनतम अवशेषों का निरीक्षण कीजिए। आप को कहना पड़ेगा कि हाँ, प्राचीन भारत अब भी जिन्दा है। सत्य है कि आप को यहाँ-वहाँ गोबर के ढेर भी नज़र आयेंगे, किन्तु उनमें दबे हुए अमूल्य खज़ाने भी यहीं हैं। और इसका कारण कि कैसे आज प्राचीन भारत ज़िन्दा है, यह है कि हिन्दू धर्म ने जो जीवन का अन्तिम उद्देश्य बताया है, उसका संबंध भौतिकवाद में न होकर अध्यात्मवाद में निहित है।

इसकी अन्य बहुत सी देनों में एक असाधारण देन मनुष्य के अस्तित्व से मूकजीवों के संबंध जोड़ने का विचार है। मेरे लिए गऊ-भक्ति एक महान विचार है। आधुनिक स्वधर्म त्याग की प्रवृत्ति से इसकी स्वाधीनता भी मेरे लिए एक बहुमूल्य चीज़ है। इसे अपने प्रचार की ज़रूरत नहीं है। इसका उपदेश है 'ज़िन्दगी जियो'। ज़िन्दगी को जीना मेरा और आप का काम है और तब हम इसका प्रभाव आने वाले समय पर डाल सकेंगे। हिन्दू-धर्म किसी भी तरह कोई निःशेष शक्ति या मरा हुआ धर्म नहीं है।

चार आश्रमों के रूप में एक और अपूर्व देन इसकी देखिए। इस देन की समानता क्या संसार की कोई चीज़ कर सकती है? कैथोलिकों ने अविवाहितों के लिए ब्रह्मचारियों के तुल्य व्यवस्था रखी है। किन्तु विधि के रूप में नहीं। जबकि भारत में प्रत्येक व्यक्ति को पहले आश्रम यानी ब्रह्मचर्याश्रम से होकर गुज़रना अनिवार्य था। क्या शानदार व्यवस्था थी यह। आज हमारी दृष्टि विकार-युक्त है, मन गन्दा है और शरीर से हम पतित हैं, क्योंकि हम हिन्दू धर्म में आस्था नहीं रख रहे हैं।

एक बात और, जिसका मैंने उल्लेख

[शेष पृष्ठ ६८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अशोक महाजन

शिव का नटराज-स्वरूप

[शिव-रात्रि के उपलक्ष्य में]

शंकर का नृत्य यथार्थ में ईश की पंचक्रियाओं (अर्थात् सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव और अनुग्रह) का द्योतक है। अलग-अलग ये क्रियाएँ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, महेश्वर और सदाशिव की क्रियाएँ हैं। इन समस्त क्रियाओं की निष्पत्ति शिव से है—यही नटराज की प्रतिमा का संकेत है।

भगवान शंकर को पुराणों में 'रुद्र' कहा गया है, क्योंकि वे प्रत्याहार के, प्रलय के आकर्षण हैं। वे परम नर्तक, महान नटराज भी हैं। शंकर का नृत्य शाश्वत है, क्योंकि उनमें कल्याण की मंगलमय अनुभूति भी शाश्वत है। यह विश्व ही उनकी नृत्यशाला है। संसार में अणु-परमाणु से लेकर बड़ी से बड़ी शक्ति में जो स्पंदन दिखलायी पड़ता है, वह शंकर के नृत्य और नाद का ही परिणाम है। स्वयं भगवान शंकर ने स्वीकार किया है—

नित्यभात्तकरणक्रमोन्मिष च्चिभावशतसन्निवेशिनीः।
निष्क्रयो निजमरीचिनर्तकीर्नर्तयामि परनृतिदैशिकः।।

अर्थात् मैं (शंकर) सबसे उत्तम नाट्य का आचार्य निष्क्रिय होकर अपनी करणेश्वरी रूपी नटियों को नचाता हूँ, जो इन्द्रिय-देवियाँ सदैव अपने वृतिक्रम के प्रत्याहरण से उदय होनेवाले अद्भुत और भिन्न-भिन्न प्रकार के भावों के सन्निवेशवाली हैं।

नृत्य से भगवान शंकर ब्रह्माण्ड में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गति लाते हैं और जीव-निर्जीव की सृष्टि करते हैं। उनके नृत्य की गति है उपरति, निवृति, समाधि, प्रलय की ओर—अर्थात् अन्तरतम की, ऊर्ध्वतम की ओर। उनका नृत्य भयंकर है, लेकिन शिवत्व से शून्य नहीं। वे ब्रह्माण्ड का कभी भी नाश नहीं चाहते। वे सृष्टा हैं, सृजनकर्ता हैं, संहार और विनाश उन्हें क़तई पसंद नहीं। लेकिन जब पाप अपनी चरमस्थिति को प्राप्त कर लेता है, तो उनका नर्तन विवश होकर स्वतः प्रलयंकारी रूप ग्रहण कर लेता है, लेकिन शिव की यह क्रिया निस्संदेह जगत की रक्षा के लिएही होती है, **'जगद्रक्षा यै त्वं नटसि ननु वामेव विभुता।'** पुष्पदन्त ने लिखा है— "नर्तन के समय शंकर के पदाघात से पृथ्वी डोलने लगती है। परिधि की तरह परिपुष्ट भुजाओं के घूमने से आकाश संत्रस्त हो उठता है। लेकिन उस समय भी शंकर के मन में संहार की नहीं, सृजन की ही भावना रहती है।

शंकर का नृत्य यथार्थ में ईश की पंच क्रियायों (अर्थात्, सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव और अनुग्रह) का द्योतक है। अलग-अलग ये क्रियाएँ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, महेश्वर और सदाशिव की क्रियाएँ हैं। न समस्त क्रियाओं की निष्पत्ति शिव से है—यही नटराज की प्रतिमा का संकेत है।

नटराज का स्वरूप

भगवान नटराज का नृत्य उनके दिव्य रूप और अमित ऐश्वर्य की अभिव्यक्ति करता हुआ तथा 'सत्यं, शिवं, सुन्दरम्' का अमर संदेश देता-सा प्रतीत होता है। नटराज के रूप में शिव की कल्पना भारतीय संस्कृति और धर्म की एक ऐसी समन्वयात्मक विशेषता है, जिसका दूसरा उदाहरण अन्यत्र उपलब्ध नहीं। चतुर्भुज नटराज के एक हाथ में रजोगुण का प्रतीक डमरू है, जो द्यावापृथ्वी, अनन्तलोक और जीव-जगत की सृष्टि करता है। और उनके दूसरे हाथ में है, तमोगुण की प्रतीक अग्नि, जिससे वे उन बंधनों का संहार करते हैं, जो मानवता को बाँधे रहते हैं। भूमि पर आरोपित एक चरण से वे माया, मोह और अविद्या को दाबे रहते हैं और उ` हुए पैर से संकटों से त्रस्त प्राणियों को मुक्ति देते हैं। कटिवस्त्र दिक् और भुजाओं में लिपटा हुआ सर्प काल का प्रतीक है।

'अंशुमदभेदागम्' के अनुसार नटराज के चारों हाथों की स्थिति इस प्रकार रहती है— "नटराज की मूर्ति उत्तम दशताल में बनती है। चतुर्भुज नटराज का सामने का बायाँ हाथ् दण्डहस्त या गजहस्त मुद्रा में होकर उत्थित वामपाद की ओर संकेत करता है। दूसरे वाम हस्त में पंचस्फुलिंग-युक्त अग्नि रहती है। सामने का हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरद मुद्रा में होता है और पीछे के दाहिने हाथ में डमरू होता है।"

डमरू सब प्रकार की सृष्टियों का प्रतीक है। पुराणों और अन्य ग्रन्थों में इसका विशद और अद्भुत वर्णन प्राप्त होता है। संस्कृत के प्रसिद्धिप्राप्त वैयाकरण पाणिनि के कथनानुसार भगवान शंकर के नृत्य करते समय डमरू के घोष से जो 'अ उ ण'...... इत्यादि चौदह वर्ण निकले, उन्हें सनकादिक ऋषियों ने संग्रहीत किया और उसीसे संस्कृत भाषा की उत्पत्ति हुई।

यद्यपि ब्रह्माण्ड नटराज की नाट्य-शाला है, परन्तु उनकी व्याप्ति अनन्त है। आकाश उनका शरीर है। दिशाएँ उनकी भुजाएँ हैं। तीनों ज्योति उनके तीन नेत्र हैं। शिव का प्रथम नेत्र धरातल, द्वितीय आकाश और तृतीय बुद्धि के अधिदैव सूर्य व ज्ञानाग्नि का सूचक है। इसी तृतीय नेत्र के खुलने से काम भस्म हो गया था। शिव की निर्निमेष तापस ऊर्ध्व दृष्टि कुटिल को सरल बनाती है, अस्पष्ट को स्पष्ट करती है और द्विधा को स्थिर, निश्चित कर देती है।

शिव की जटा-लटाएँ पाँच से तेरह तक दिखलायी गयी हैं। जटाओं में नरकपाल और चन्द्रमा भी दिखाये गये हैं, जो अमृत-तत्व के प्रतीक हैं। इसके अतिरिक्त धर्म की प्रतीक गंगा का स्रोतस्थान भी उनकी जटाएँ ही हैं। उनकी लम्बी जटाएँ वैसे सदैव बँधी रहती हैं, लेकिन युगान्तरों में (जब विश्व राक्षसों और दानवों से त्रस्त हो उठता है) एकाधवार सृष्टि के त्राण के लिए खुलती हैं।

नटराज सर्वांग में विभति से अनुलिप्त आच्छन्न रहते हैं। भस्म मौलिक तत्व है, इसे नष्ट नहीं किया जा सकता। शिव-पुराण में तो यहाँ तक कहा गया है कि भस्म से ही शंकर जी सृष्टि की रचना करते हैं।

नटराज की कुछ प्रतिमाएँ त्रिशूलधारी हैं। त्रिशूल उनका परम प्रिय अस्त्र है। त्रिशूल ही अध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दुःखों का सूचक है।

शंकर और शक्ति

शंकर नृत्य कभी अकेले नहीं करते; नृत्य के समय उनकी अर्द्धांगभता शक्ति उनके साथ रहती है। प्रदोष स्तोत्र में लिखा है—

कैलाशभुवने त्रिजगज्जनित्री गौरीं निवेश्य
कनकार्चितरत्नपीठे।
नृत्यं विधातुमाभिवांछति शूलपाणौ देवाः
प्रदोष समय न भुजन्ति सर्वे॥

लेकिन, महिमामय शंकर का यह अनादि और अनन्त नृत्य केवल उन्हीं को दिखलायी देता है, जो माया से ही नहीं, महामाया से भी ऊपर उठ चुके हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

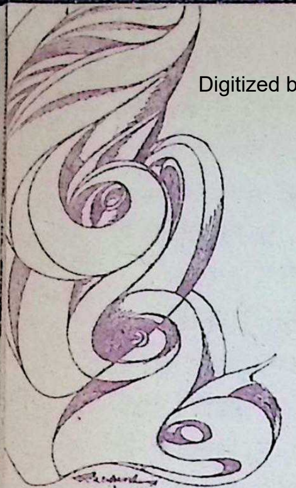

अन्तरिता : चित्र : स्वयम् लेखक द्वारा

आत्मावादी कला वह कला है, जिसमें आत्मा को कला का मूल प्रेरणास्रोत माना जाता है। बाह्य संसार या प्रकृति को महत्व न देकर उसके 'कारण' आत्मा या परमात्मा को मूल 'कर्त्ता' माना जाता है। परमात्मा वह है, जिसकी प्रेरणा से 'ब्रह्माण्ड' 'सृष्टि', 'प्रकृति' या संसार की रचना हुई है। प्राणी भी उसी 'महान' एकमेव कलाकार की कला का एक नमूना मात्र है।

रामचन्द्र शुक्ल

कला और आत्मा

समाज में कला की प्रतिष्ठा विभिन्न स्तरों पर होती है। जिस स्तर का समाज होता है, अधिकतर वहाँ की कला का स्तर भी वैसा ही होता है। धार्मिक समाज में धार्मिक कला की प्रतिष्ठा होती है। व्यवसायी समाज में व्यवसायी कला की प्रमुखता रहती है। बुद्धिप्रधान समाज में कला का बौद्धिक स्वरूप पसन्द किया जाता ह। साधारण स्तर के समाज में जहाँ लोग अधिकतर अपने रोजी-धन्धे में ही व्यस्त रहते हैं, कला का यथार्थवादी रूप पसन्द किया जाता है, जिससे लोगों को शारीरिक सुख या ऐन्द्रिक सुख प्राप्त हो। कलाकारों का समाज मौलिक विशेषता वाली कला पसन्द करता है। धनी-समृद्ध समाज विलासपूर्ण कला से तृप्त होता है। इस प्रकार विभिन्न स्तर के समाज में विभिन्न स्तर की कला प्रतिष्ठा पाती है। जिस प्रकार अलग-अलग समाज की अभिरुचि अलग-अलग होती है, वैसे ही कला का भी भिन्न-भिन्न रूप पाया जाता है। विभिन्न काल में समाज का विभिन्न स्तर रहा है, विभिन्न आदर्श तथा आकांक्षाएँ रही हैं, विभिन्न स्तर का जीवन, सभ्यता और संस्कृति रही है और इसी आधार पर उस काल में कला का वैसा ही विभिन्न स्तर या रूप देखने को मिला है। यही कारण है कि कला का अर्थ, कला का ध्येय या कला का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप, समय, स्थान, परिस्थिति तथा जीवन के अनुरूप बदलता रहा है। ऐसी स्थिति में यह बता सकना कि कला का कौन सा रूप उचित है या अनुचित है, साधारणतया कठिन है। किन्तु, इतना निश्चित है कि चाहे जिस रूप में हो, कला की प्रतिष्ठा समाज में रही है और आज भी है। मानव जीवन के आदिकाल में भी कला की प्रतिष्ठा थी और सभ्य सुसंस्कृत समाज में तो वह खूब फूलती-फलती है।

संसार में अबतक कला के जितने रूप आयें हैं, वे सभी-अपने-अपने समाज, जीवन विचारधारा, सभ्यता और संस्कृति की ही अभिव्यक्ति करते हैं। इस रूप में कला सभ्यता और संस्कृति की प्रगति का जीवित प्रमाण है। किसी काल, किसी देश, समाज या जाति की कला को परखते समय हमें उस समाज के स्तर को भी ध्यान में रखना पड़ता है, जिस समाज की वह कला है। यह कहना कि अमुक देश, काल या कलाकार की कला हमें पसन्द आती है और कुछ नहीं, अपने स्तर की अभिव्यक्ति करना है। कला का वास्तविक आकलन या रसास्वादन इस आधार पर हो ही नहीं सकता। कला का अध्ययन सापेक्षिक विवेक मांगता है, किसी की रुचि पर नहीं निर्भर करता।

निर्दोष : अमृता शेरगिल

कला और आत्म अभिव्यक्ति

संसार का कण-कण उसी परमात्मा की प्रेरणा से उद्भासित होता है, उसी के द्वारा निर्मित और चालित है। सृष्टि के कण-कण, प्रत्येक वस्तु के केन्द्र में परमात्मा की सत्ता वर्तमान है। कलाकार भी उसी परमात्मा की एक कृति है और उसके मूल या केन्द्र में भी यही परमात्मा की सत्ता आत्मा के रूप में वर्तमान है। संसार में बाह्य रूप में हमें जो कुछ दिखायी पड़ता है, उसी परमात्मा का प्रतिबिम्ब मात्र है और उसके केन्द्र या मूल में परमात्मा स्वयं स्थित है। वह न हो तो वस्तु भी न होगी। वस्तु तो केवल प्रतिबिम्ब मात्र है, उस चेतन ब्रह्म या परमात्मा का। इसलिए प्रतिबिम्ब सत्य नहीं, सत्य तो उसका मूल या केन्द्र परमात्मा है, जो आत्मा के रूप में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब वस्तुओं में वर्तमान रहता है। इसलिए कलाकार को वस्तु के बाह्य रूप को सत्य नहीं समझना चाहिए न उसे महत्त्व देना चाहिए। उसे तो वस्तुओं के मूल में स्थित ब्रह्म या परमात्मा के रूप आत्मा को पहिचानना चाहिए और उसी को अपनी कला के द्वारा अभिव्यक्त करना चाहिए। बाह्य रूप में नहीं फंसना चाहिए।

कलाकार यह कैसे कर सकता है ?

कलाकार के अन्तः में परमात्मा या ब्रह्म का एक अंश आत्मा स्वयं विद्यमान है। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु के अन्तः में भी यही आत्मा वर्तमान है। यदि कलाकार की आत्मा तथा किसी अन्य वस्तु की आत्मा में किसी प्रकार से एकता स्थापित की जाय और तब उस वस्तु का चित्रण इस रूप में किया जाय कि उसकी आत्मा का बोध होने लगे, तो वही सफल कला कही जायगी और ऐसा ही कलाकार सफल कलाकार माना जायगा। इसको आत्मा का तादात्म स्थापित करना कहते हैं।

कलाकार को वस्तुओं का चित्रण इस रूप में करना चाहिए कि उनके द्वारा उनकी आत्मा की भी अभिव्यक्ति हो। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या कलाकार की आत्मा और किसी दूसरे वस्तु की आत्मा अलग-अलग स्थित होते हुए भी मूलरूप में भिन्न-भिन्न हैं, अर्थात् उनकी प्रकृति अलग-अलग है? जब हम किसी दूसरे वस्तु की आत्मा से तादात्म्य स्थापित करते हैं, तब हमारी आत्मा और उस वस्तु की आत्मा मिलकर एक हो जाती हैं, दो रह ही नहीं जाती। ऐसी हालत में यदि हम वस्तु की आत्मा का चित्रण करेंगे, तो वह भी हमारे ही आत्मा का चित्रण होगा, अर्थात् तब हमारी कला आत्म-अभिव्यक्ति मात्र होगी। जो व्यक्ति सचमुच ऐसी दृष्टि रखता है और सभी वस्तुओं की आत्मा के साथ तादात्म्य स्थापित कर सकता है, तब एक आत्मा और दूसरी में अन्तर रह ही नहीं जाता। ऐसी हालत में कलाकार हर वस्तु का चित्रण करते समय आत्म अभिव्यक्ति ही करेगा और चाहे कलाकार एक बार आत्म-अभिव्यक्ति करे या दो बार या कई बार, हर बार वह एक ही चीज़ की अभिव्यक्ति कर सकता है। ऐसी हालत में कलाकार के एक चित्र या दूसरे में क्या कोई अन्तर होगा ?

यदि कलाकार तादात्म्य के द्वारा ही वस्तुओं का चित्रण करता है और उसे एक चीज और दूसरी में भेद नहीं दिखायी पड़ता, तो आखिर वह चित्रण किस तरह करेंगा ? किस चीज का करेगा ? जबतक वह चीजों के अलग-अलग बाह्य रूपों को महत्व नहीं देता ? एक ही चित्र में तमाम चीज़ें चित्रित की जाती है, जैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेड़, पहाड़, नदी, आकाश, पशु-पक्षी इत्यादि। यह अलग अलग वस्तुएँ हैं। यदि हम इन सबकी आत्मा को ही महत्व देते हैं, जो कि वास्तव में एक ही है, तो फिर कागज पर एक बिन्दु रखकर ही हम उसे क्या चित्र कहें? ऐसा योगी कर सकता है, कलाकार का काम यह नहीं है। योगी सफेद दीवार पर एक कण मात्र या बिन्दु बनाकर उसी में सब कुछ भले देखा करे, पर चित्रकार ऐसा नहीं करता। उसे तो वस्तुओं के अलग-अलग वाह्य रूपों, आकारों या प्रकारों को उपस्थित करना ही पड़ता है। इन्हीं के सामंजस्य से वह चित्र बना सकता है।

सुवर्णिमा : विन्सेंट वॉन गॉग

वैज्ञानिक भी हर वस्तु को 'पदार्थ और शक्ति' (मैटर और इनर्जी) मानता है। अर्थात् हर वस्तु का दो रूप होता है, एक उसका भौतिक जड़-रूप, दूसरा उसका शक्तिशाली चेतन रूप। कलाकार को अपने चित्र में चित्रित हर वस्तु को इन दोनों रूपों के साथ चित्रित करना चाहिए।

सारी प्राचीन भारतीय कला का यही आधार रहा है। भारत ही क्या क़रीब-क़रीब सभी पूर्वीय देशों में कला इसी आधार पर विकसित हुई है, खासकर भारत, चीन, तिब्बत, जापान, इण्डोनेशिया, वर्मा, लंका, कम्बोडिया, लाओस, इण्डोचाइना इत्यादि देशों में। इन देशों की प्राचीन कला में इसीलिए वहुत कुछ समानता भी है।

आदर्शवादी कला

कला में आत्मा की अभिव्यक्ति के लिए आत्मा का तादात्म्य स्थापित करना आवश्यक माना जाता है। आत्मा का तादात्म्य स्थापित करना तभी हो सकता है जब, कलाकार अपनी सारी शारीरिक, मानसिक तथा हार्दिक शक्तियों को चित्र में चित्रित किये जाने वाली वस्तुओं की आत्मा में केन्द्रित कर देता है। अर्थात् किसी वस्तु का चित्रण करने में कलाकार को सूक्ष्म रूप से उस वस्तु में प्रवेश करना होता है और ऐसी अवस्था में उसमें तथा उस वस्तु में कोई भेद नहीं रह जाता। वह खुद वही चीज बन जाता है और इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हालत में उसे जो अनुभूति प्राप्त होती है, उसी को वह अपनी कला में अभिव्यक्त करता है। यह अभिव्यक्ति तब उस वस्तु का केवल बाह्य रूप न रह कर बाह्य और आन्तरिक का सुमेल होता है। और ऐसा रूप साधारण दृष्टि से देखने वालों को वस्तु के बाह्य रूप से भिन्न भी लग सकता है, क्योंकि चित्र में उस वस्तु की आत्मा का संयोग उपस्थित होता है। ऐसी कला को अक्सर आदर्शवादी कला कहा जाता है, क्योंकि इसमें वस्तु का केवल बाह्य रूप चित्रित नहीं होता। आदर्शवादी इसलिए कहा जाता है, क्योंकि जैसा हमने आत्मावादी कला के बारे में ऊपर विचार व्यक्त किया है उसी के आधार पर यानी 'विचार विशेष' के आधार पर कला का निर्माण होता है। जैसी चीज़ें साधारणतया दिखायी पड़ती हैं, वैसा चित्रण नहीं होता। विचार का अर्थ यह कि हम चित्र में वस्तु को चित्रित नहीं करते, बल्कि वस्तु के बारे में अपने विशेष विचार या अनुभूति को चित्रित करते हैं। और क्योंकि हर एक व्यक्ति की अनुभूति या विचार एक ही वस्तु के बारे में अलग-अलग भी हो सकते हैं, उसे लोग पूर्ण सत्य नहीं मानते। पूर्ण सत्य लोग उसी को मानते हैं, जिस रूप में वस्तु सभी के अनुभव या देखने में आती हैं। यह देखने का तरीक़ा भौतिक दृष्टि आत्मावादी का नहीं, बल्कि वैज्ञानिक या मनोवैज्ञानिक है।

आत्मावादी कला आत्मा के सूक्ष्मतम् शक्तिशाली रूप को ही महत्व देती है। कला में यह शक्ति, लय, छन्द, गति, सन्तुलन, सुमेल इत्यादि सूक्ष्म गुणों से अभिव्यक्त की जाती है और यही कारण है कि पूर्वीय देशों की कला में यह गुण विशेष रूप से दिखायी पड़ते हैं।

*

[भगवान परमहंस......पृष्ठ १८ का शेष]

जल्दी ही ऊब गया–, "मैं कितना बेवकूफ हूँ" उसने सोचा, "मैं बेकार ही यह मूर्खता की बातें सुनने बैठ गया, जबकि मेरा मित्र मज़े की ज़िन्दगी बिता रहा होगा।"

कुछ समय बाद दोनों मर गये। मृत्यु दूत उस व्यक्ति की आत्मा को लेने आया, जो भागवत सुन रहा था और उसे नर्क में ले जाकर ढकेल दिया। ईश्वर-दूत उस व्यक्ति की आत्मा को ले गये, जो वेश्यालय में पड़ा था और उसे स्वर्ग में ले जाकर रखा।

ईश्वर हमेशा मनुष्य के हृदय को देखता है और उसका न्याय इस बात पर अवलम्बित नहीं होता कि एक आदमी क्या करता है और कहाँ समय गुज़ारता है।

अनु. ऐन्द्रिला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयाग शुक्ल

दो कविताएँ

परिचय

साँझ के हल्के प्रकाश में
पत्तों पर जमी हुई धूल
चुपचाप पड़ी रहकर, मुझे देती है
दृश्यों के बाद अनेक दृश्य !
हल्के अंधकार में चिड़ियों का
समवेत गान, अपने उल्लास में
मुझे देता है एक अन्तहीन समय !
खुलती और बन्द होती हैं अनेकों खिड़कियाँ।
चुपचाप बहती रहती हैं अनेकों नदियाँ।
संख्या, दिशाओं और रूपाकृतियों में भूला हुआ मैं –
देखता हूँ अंधेरे में, देखी और अनदेखी बस्तियाँ।
देख लेता हूँ सब कुछ और चुप रहता हूँ–
भूलता हूँ निश्चय और अनिश्चय !
करने लगता हूँ फिर से
की हुई चीजों से एक नया परिचय !

नये नाम

धीरे-धीरे भूलता जाता हूँ दृश्य, रूप, नाम !
भूलते जाने की व्याकुलता में,
उन्हें करता हूँ स्मरण !
और फिर किसी विस्मृति में डूबकर.
देखता हूँ नये दृश्य, रचता हूँ नये रूप,
लिखता हूँ नये नाम !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौ. डी. सोनवणे

आप भी सोना बना सकते हैं : रस-शास्त्र का पूर्व-रंग

[अनियतकालीन लेख-माला : लेखांक : १]

'भारती' के पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रस्तुत लेखमाला द्वारा वे सोना बनाने की सनातन गोपन कला का परिचय पा सकेंगे। श्री सोनवणे बड़ी कठोर तपोसाधना द्वारा और भारतीय तथा पश्चिमी कीमिया–विज्ञान के गहरे खोजपूर्ण अध्ययन द्वारा, इस लेखमाला में यह सिद्ध करने जा रहे हैं– कि निश्चित ही मनुष्य अपनी प्रयोगशाला में सुवर्ण निर्माण कर सकता है।

कई लोग अधूरी बातें पढ़कर और सुनकर सिर्फ वनस्पतियों की सहायता से ही कीमिया सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं और अपनी शक्ति व्यर्थ खर्च करते हैं। यह उनकी एक बड़ी भारी भूल है। कई लोगों ने वनस्पतियों के पीछे लगकर जंगलों में घूमते-प्रयोग करते अपनी आयुष्य तक बर्बाद कर दी है। वास्तविक बात यह है कि केवल वनस्पतियों से ही कीमिया सिद्ध नहीं हो सकती। वनस्पतियाँ तो कीमिया में सहायक रूप में काम करती हैं। वनस्पतियों से कनिष्ठ धातुओं को श्रेष्ठ धातु जैसा रंग-रूप आ सकता है, रंजन हो सकता है। परन्तु यह रंग रूप शास्त्रीय कसौटी पर नहीं ठहरता। वनस्पतियों में कुछ धातु तथा अग्निस्थायी गंधक ये द्रव्य अंशतः विद्यमान होते हैं। उनकी मदद से ही कीमिया के कुछ प्रयोग कुछ हद तक होते हैं। विशेषतः पारद, गंधक, हिंगुल ये द्रव्य कुछ वनस्पतियों की सहायता से अग्निस्थायी हो सकते हैं। फिर इन द्रव्यों को बाद में कीमिया के काम में सहायक रूप में लाया जाता है। मेरे अनुभव के अनुसार वनस्पतियों की सहायता से सुवर्ण तथा रौप्य निर्माण करना अशक्य हुआ। शास्त्र के अनुसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नकछिकनी, वज्रवल्ली, श्वेत फूलों की रिंगणी (लक्ष्मणा), श्वेत फूलों का पलाश, श्वेत फूलों की शिवलिंगी, श्वेत फूलों की शरपुंखा इत्यादि वनस्पतियाँ धातुवाद में सहायक हैं। धातुओं की शुद्धि करना इन वनस्पतियों का एक और काम है। धातुवाद में उपयोगी वनस्पतियाँ एक-पोथिया लहसुन, साधारण लहसुन और प्याज ये भी सहायक रूप में काम में आती हैं।

महाराष्ट्र के संत ज्ञानेश्वर का रसशास्त्र के विषय में मत

महाराष्ट्र के सन्त श्री ज्ञानेश्वर कहते हैं कि धातुओं का संस्कार धातुओं पर करोगे तो, उन धातुओं में से सुवर्ण प्राप्त होगा। परन्तु धातुओं का धातुओं पर संस्कार करने के लिए माध्यम के रूप में अग्निस्थायी हिंगुल तथा अग्निस्थायी गं क और अग्निस्थायी पारद ये द्रव्य काम में लाना नितांत आवश्यक है, साथ-साथ वनस्पतियाँ और अन्य व्य आवश्यकतानुसार लेने पड़ते हैं, इतना समझ लेनेपर उनकी यह बात शत-प्रतिशत सत्य है।

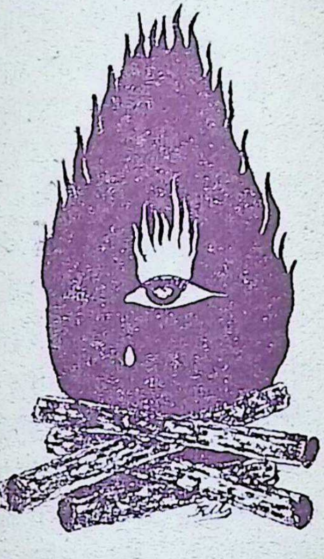

चित्र : कमलाक्ष शेनॉय

स्वर्ण निर्माण में और अति महत्त्वपूर्ण धातु सीसा (Lead) है। इस तु का कीमिया में यथोचित् उपयोग किये बिना स्वर्ण निर्माण-क्रिया अधूरी ही रहती है। रौप्य निर्माण में सीसा धातु लेना आवश्यक नहीं; परन्तु अग्निस्थायी हिंगुल और अग्निस्थायी पारद ये व्य प्रधान रूप में लेकर बाकी संस्कार बाद में किये में जाते हैं। दूसरी जगह पर संत ज्ञानेश्वर कहते हैं—'मीठातें बांधी तेज पाणी। तेचि, रसांतरीची मेळवणी। अर्थ है :— जिस प्रकार नमक को सूर्य का तेज और पानी बाँधता है, उसी प्रकार रस को यानी पारे को अन्य धातुओं की तथा अग्निस्थायी गंधक, वनस्पतियों का रस आदि द्रव्यों का संस्कार करके तेज से (उष्णता से) बाँधना चाहिए। फिर स्वर्ण क्रिया करनी चाहिए। पारे को बाँधने का मतलब यहाँ पर पारद को पूरा अग्निस्थायी बनाना है। अग्निस्थायी पारद के विषय में आगे अनुभव-सहित सविस्तार लिखा जायगा। अग्निस्थायी पारद के वर्णन के प्रथम अन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संबंधित बातें देकर बाद में उसका क्रम आयेगा।

कुछ जानकार लोगों का कहना है कि, कुछ सिद्ध लोग ताँबा और स्वर्ण इनका श्वेत भस्म (सफेद भस्म) किसी विशेष वनस्पति द्वारा बनाते हैं। और एक जंगली कंडे में (गोबरी में) गढ्ढा करके उसमें चूने का लेप लगाते हैं। फिर उसमें पारद भरकर उसको अग्नि देते हैं, जलाते हैं। ऊपर सें अग्नि के जलते हुए कोयले (एक या दो) रखते हैं। जब पारद गरम-गरम हो जाता है; तो उसमें वह श्वेत ताम्र भस्म और श्वेत स्वर्ण भस्म एकत्रित करके उसकी चुटकी छोड़ देते हैं। इससे वह पारद पूरा अग्निस्थायी होकर चाँदी-स्वरूप हो जाता है। यही क्रिया करते समय किसी विशेष वनस्पति का रस निचोड़कर छोड़ते हैं। इस क्रिया से वही पारद स्वर्ण रूप बन जाता है। परन्तु इस स्वर्ण रूप पारद में भी असली (खनिज) स्वर्णसमभाग मिलाना आवश्यक होता है, तभी वह पूरा एसिड प्रूफ होता है। इस बात का मैंने अनुभव नहीं किया है। किसी पूरे जानकार के मदद के बिना यह काम सिद्ध होना वहुत ही कठिन है।

धातुओं का परस्पर आकर्षण

कीमिया में धातुओं के आकर्षण का खास प्रयोजन है। हर एक धातु में पारद तथा गंधक शुद्ध-अशुद्ध रूप में न्यूनाधिक मात्रा में स्वाभाविक ही होते हैं। और धातुओं का परस्पर आकर्षण भी होता है। धन विद्युत् तथा ऋण विद्युत् के प्रभाव से ही यह आकर्षण होना चाहिए। धातुओं के परमाणुओं में स्वाभाविक ही धन ऋण-विद्युत् आवेश अत्यल्प मात्रा में होने से ऐसा आकर्षण होना चाहिए। पारे का आकर्षण सोना, सीसा (Lead), चाँदी, अभ्रक, वंग, जस्ता इन द्रव्यों से न्यूनाधिक मात्रा में है। चाँदी का आकर्षण ताँबे से, ताँबे का लोहे से, लोहे का लोह-चुंबक (मैग्नेट) से आकर्षण है। इस प्रकार धातुओं का परस्पर आकर्षण है। पारद को अग्निस्थायी बनाने के लिए आकर्षण का सिद्धान्त ध्यान में रखना आवश्यक है। जैसे Steel का Magnet Steel से आकर्षण खुले रूप से देखने में आता है, इसी प्रकार पारद में आकर्षित होने-वाले पदार्थ पारद में सूक्ष्म रूप में मिला देने से पारद बंधन क्रिया का आरम्भ है। इसके बाद गंधक या हिंगुल के, अन्य द्रव्यों के परमाणुओं को परस्पर बाँधने के नियम को काम में लाकर, पारद में अन्य धातुओं के साथ यह अग्निस्थायी हिंगुल अथवा अग्निस्थायी गंधक मिलाने से पारद अग्निस्थायी बनाने की क्रिया पूर्ण होती है। व्यवहार में यह बात प्रचलित है कि, रबर में गंधक मिलाकर रबर के गुणधर्म सुधारे जाते हैं। क्योंकि गंधक का हर परमाणु रबर के दो अणुओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को परस्पर बाँधता है।

अब यह प्रश्न आता है कि, जब धातुओं का आकर्षण है तो, ऐसे आकर्षण वाले धातु पारद में समाविष्ट करने के बाद पारद पूरा अग्निस्थायी क्यों नहीं होता ?

इसका उत्तर यही है कि, इन धातुओं का आकर्षण इतना कम होता है कि पारद को पूरा बाँधने में, पूरा अग्निस्थायी बनाने में वह समर्थ नहीं है। इसीलिए अग्निस्थायी हिंगुल या अग्निस्थायी गंधक का प्रयोग करना अत्यावश्यक है। सभी धातुओं के परमाणुओं को बाँधने वाला द्रव्य अग्निस्थायी गंधक अथवा अग्निस्थायी हिंगुल है; यह बात कीमिया की दृष्टि से बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है। आगे इस विषय पर अधिक लिखा जायगा।

सिद्धि के अधूरे चित्र

कीमिया के प्रयोगों में कई प्रयोग अधूरे ही होते हैं। कई प्रयोगों में कनिष्ठ धातुओं को श्रेष्ठ धातु जैसा-रंग रूप आ जाता है, परन्तु शास्त्रीय कसौटी पर वह रंग-रूप उतरता नहीं। प्रयोग फ़ेल होते हैं। कई प्रयोगों में पारद को ठीक अग्नि स्थायी बनाकर स्वर्ण जैसा रंगीन बनाया जाता है। परन्तु ऐसा रंजित बद्ध पारद भी स्वर्णरूप ही माना जा सकता है, क्योंकि ऐसे पारद को नैट्रिक एसिड में पकाने पर उसकी रज नीचे बैठेगी, तभी वह स्वर्णरूप सिद्ध हुआ है, ऐसा समझा जायगा; अन्यथा प्रयोग अधूरा ही है। कई प्रयोगों में अग्निस्थायी संखिया की मदद से ताम्र को चाँदी के समान सफ़ेद बनाया जाता है, परन्तु कसौटी पर वह श्वेतताम्र चाँदी के समान नहीं उतरता। वह भी अधूरा प्रयोग है। ताम्र में स्वर्ण जैसा रंग लाने के लिए तो कई प्रयोग हैं, वे भी कसौटी पर मार खाते हैं, अधूरे हैं। कई ग्रंथों में सिर्फ अग्निस्थायी पारद की सहायता से वंगवेध के (रौप्यनिर्माण) प्रयोग मिलते हैं। वह अधूरे हैं। अग्निस्थायी संखिये से वंगवेध के प्रयोग मिलते हैं; वे भी अधूरे हैं। ऐसे ही संखिया और पारद इनके अग्निस्थायी विशिष्ट यौगिक द्वारा भी वंगवेध के प्रयोग मिलते हैं, परन्तु वह भी अपूर्ण हैं।

इसी प्रकार हरताल, मैनशिल, संखिया, दालचिकना इन द्रव्यों को अग्निस्थायी बनाने से धातुवाद (कीमिया) सिद्ध हो सकता है; ऐसा कुछ लोग कहते हैं। ये द्रव्य अग्निस्थायी बनाने के कई पुस्तकों में कई तरीक़े दिये हुए हैं और बहुत कुछ सुने सुनाये तरीक़े भी होते हैं। परन्तु इनमें से अधिकतर तरीक़े अधूरे ही होते हैं। इन द्रव्यों को तथा पारद को अग्निस्थायी बनाने का सही तरीका प्रथम विश्वासपूर्वक मालूम कर लेना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णावतार

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

धारावाहिक पूर्ण-पुरुष लीला

चित्र : हिन्दी विश्व भारती, लखनऊ
के सौजन्य से : चित्रकार पन्नालाल

[३२]

त्रिवक्रा

त्रिवक्रा कंस के राजमहल में परिचारिका का कार्य करती थी। राजा तथा सभी राजवधुओं के लिए सुगंधित द्रव्य जुटाना उसका नित्यप्रति का कार्य था। अपने अनेक कर्मचारियों की मदद से वह विविध प्रकार की वनस्पतियाँ उगाती और उनसे उत्तम तेल तथा इत्र तैयार करवाती। वनस्पतियों के औषधीय गुणों की जानकारी भी उसे थी। उसकी माता भी अपने जीवन-काल में यही कार्य करती थी और मरने से पहले, राजमहल से सम्बन्धित सभी विषयों में सर्व सत्ताधीश, सरदार प्रद्योत से उसने वचन ले लिया था कि उसकी मृत्यु के बाद उसकी एकमात्र पुत्री ही को यह कार्यभार सौंपा जायगा।

त्रिवक्रा जन्म से ही कुरूप न थी। उसके अंगांग अति सुन्दर और सुघड़ थे; परन्तु बारह वर्ष की अवस्था में वह गंभीर रूप से रुग्ण हुई और मरते-मरते बची। इसके बाद उसके जोड़ अकड़ गये और वह विकृत बन गयी। बीमार पड़ने से पहले उसका विवाह महाराजा कंस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के मुख्य हस्तिपाल के पुत्र अंगारक के साथ हो चुका था, पर उसके पति ने उसके विरूप बन जाने के बाद उसे अपने साथ रखना अस्वीकार कर दिया। इससे त्रिवक्रा को 'पहले तो अपार मानसिक क्लेश हुआ, परन्तु फिर विनोदी और हँसमुख स्वभाव की होने के कारण वह धीरे-धीरे अपना यह दुख भूल गयी।

संधिवात से अकड़े और टेढ़े पैरों को किसी तरह घसीटती, और दिन भर हँसी ठट्ठे की बातें करती हुई वह हाथ में चाँदी की अतर की पेटी लिये राजमहल के प्रत्येक खंड में घूमती रहती। वह सभी के उपहास का पात्र थी। कई तो उसके सामने ही उसकी विरूपता की हँसी उड़ाते। गलियों में हो-हल्ला करते तथा चिढ़ाते हुए बालक उसका पीछा करते; परन्तु वह अपने हँसमुख स्वभाव और विनोदी प्रकृति से इन सब को हँसी में उड़ा देती।

जन्म के समय उसका नाम मालिनी रखा गया था, परन्तु अब उसे सब लोग त्रिवक्रा कहने लगे थे। वह स्वयं भी अपनी विरूपता की हँसी उड़ाती, इसलिए सभी की प्रियपात्र भी बन गयी थी। कंस को हँसी-ठट्ठा अच्छा नहीं लगता था, परन्तु उसे देख कर वह भी हँस पड़ता। परन्तु इस बाहरी विनोद-पराणयता के पीछे एक रहस्य की बात थी, जिसे सिवा उसके और कोई नहीं जानता था। उसे पता था कि यदि उसके अंग विरूप न हो गये होते, तो वह अनुपम सुन्दरी मानी जाती, और यदि उसके जोड़ अकड़ न गये होते, तो उसकी चाल अत्यन्त मोहक होती। सुन्दर से सुन्दर राजकुमारी से भी अधिक आकर्षक वह थी। किन्तु यह बात वह किसी के आगे व्यक्त नहीं करती, यहाँ तक कि उसे अपने रूप की कल्पना न हो, इसलिए कहीं दर्पण दिख जाने पर अपनी आँखें बन्द कर लेती। अपने इष्टदेव भगवान शंकर से वह यही प्रार्थना करती कि हे भगवान, कुछ ऐसा कर जिससे दूसरे भी देख सकें कि मैं कितनी सर्वांग सुन्दर हूँ!

दिन-रात यही प्रार्थना करते-करते उसे विश्वास हो गया था कि भगवान महादेव की कृपा से वह दिन अब जल्दी ही आनेवाला है, जब उसकी मनोकामना पूर्ण होगी। तीन दिन पहले उसे खबर लगी कि देवकी का आठवाँ पुत्र जीवित है और इस आशा में वह पागल हो उठी कि तारणहार शायद मथुरा आ ेगा और दूसरों को यह दिखायेगा कि वह कितनी सुन्दर है। सजल नयनों तथा अत्यन्त गम्भीरता और श्रद्धा से नतमस्तक हो उसने प्रार्थना की, 'हे देवाधिदेव महादेव, देवकी के पुत्र को शीघ्र मथुरा भेज। वही इन अंधों की आँखें खोलेगा और सबको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बतायेगा कि मैं त्रिवक्र नहीं परन्तु वास्तव में अतीव सुन्दर हूँ।'

इसके बाद उसने रानियों से सुना कि नन्दलाल मथुरा आनेवाला है और इस समाचार से वह आनन्दमग्न हो उठी। रानियों ने जब यह कहा कि कंस शीघ्र ही कृष्ण को ठिकाने लगा देगा, तो उसे बहुत बुरा लगा। कंस के अनुयायियों को भी यही आशा थी और वे मन ही मन खुश थे कि राज्य के इस सबसे बड़े शत्रु का ख़ात्मा हो जाने पर शीघ्र ही उनका भाग्येदय होगा। इसके विपरीत, जो यादव तथा प्रजाजन कंस से भयभीत थे, वे भी इस संभावना से प्रसन्न थे कि कृष्ण शीघ्र ही उनका उद्धार कर देगा। कृष्ण के अद्‌भुत पराक्रमों की चर्चा उन्होंने सुन रखी थी।

राजमहल में भांति-भांति की अफ़वाहें फैल रही थीं। देवकी का आठवाँ पुत्र यही नन्दलाल था, जिसने राक्षसों का संहार किया था, इंद्रदेव की अवहेलना कर गोवर्धन पर्वत को अपनी उंगली पर उठा लिया था। नारद की भविष्यवाणी के अनुसार उसी के हाथों कंस का वध होने वाला था। त्रिवक्रा को लगा कि उसको सपने में जिस देव के दर्शन हुए थे, वह यही नन्द का पुत्र होना चाहिए।

तीन दिन तक नींद न आने पर भी त्रिवक्रा की चाल में उत्साह और हास्य में आनन्द उमड़ रहा था। उसकी प्रार्थना को सफल करने के लिए प्रभु स्वयं पधार रहे थे। जीवन के इस परम उत्सव के प्रसंग की उसने अभिनव तैयारियाँ शुरू कीं। भले ही लोग मज़ाक करें, परन्तु पहनने को उसने पहले कभी न पहने ऐसे नवीन और बहुमूल्य वस्त्र बाहर निकाले, बढ़िया से बढ़िया इत्र तैयार किये और अपनी चांदी की इत्रदानी को कांच की तरह चमकाया।

एक दिन उसे ख़बर मिली कि नन्द के दोनों पुत्र मथुरा आ गये हैं और वृष्णि सरदार अक्रूर के यहाँ ठहरे हैं। उस रात महल में खूब हलचल रही। अक्रूर, प्रद्योत और कंस के विश्वासपात्र वृत्रघ्न और अधः सभीने एक के बाद एक आकर कंस से गुप्त मंत्रणा की। त्रिवक्रा को प्रद्योत के लिए सम्मान था, परन्तु अक्रूर उसे अच्छे नहीं लगते थे, क्योंकि उन्होंने उसके पास से इत्र लेना अस्वीकार किया था। मगध के राजकुमार से भी उसे द्वेष था, क्योंकि वह हमेशा उसके इत्र इत्यादि की शिकायत करता रहता था।

उस रात उसने सुना कि शहर में कई लोगों को शस्त्र बांटे गये हैं। रानियों के मन भी क्षुब्ध हो गये थे। यादव सरदार जहाँ रहते थे, वहाँ भी वातावरण गम्भीर हो गया था। लोगों के मन को अशान्त करती एक अफवाह चारों ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फैल रही थी कि वृद्ध अंधक और उसके पुत्र का पता नहीं चलता और वे राजमहल में ही मार डाले गये। त्रिवक्रा को लगा कि इसका सम्बन्ध किसी न किसी तरह से कृष्ण के मथुरा आने से होना चाहिए।

दूसरे दिन वह सवेरे खूब जल्दी उठी। कंस तथा रानियों को इत्र-सुगन्ध इत्यादि स्वयं देकर बाकी का काम अपने अधीन कर्मचारियों पर उसने छोड़ दिया और महल से बाहर निकल गयी। हाथ में इत्र की रुपहली पेटी लेकर वह अक्रूर के महल की ओर चली। रास्ते में उसने लोगों के टोले के टोले शहर के मुख्य बाजार की ओर जाते देखे। तरुण यादव भी जल्दी-जल्दी उसी ओर बढ़ रहे थे। किसी को सदा की भांति उसके साथ हँसी-मजाक करने की फुर्सत नहीं थी। उसे भी स्वभावतः कौतूहल हुआ और वह भी उसी ओर चल दी।

कंस के रंगरेज़ की दुकान के सामने लोगों की एक विशाल भीड़ एकत्र थी। त्रिवक्रा सभी को धक्का देती हुई और लोगों की गालियों की भी परवाह न कर दुकान के नजदीक पहुँच गयी। वहाँ जाकर उसने देखा कि दुकानदार के साथ दो लड़कों का कुछ झगड़ा हो रहा है। रंगरेज़ खूब गुस्सा होकर गालियाँ दे रहा है और घनश्याम वर्ण के नन्हे बालक की ओर हाथ उठा कर कह रहा है, 'गँवई गँवार!' जिसे मारने के लिए उसने हाथ उठाया था, उस बालक ने जरा पीछे खिसक कर पहले तो वार चुकाया, पीछे उस मुस्तंड रंगरेज़ पर तने ज़ोर से प्रहार किया कि वह बेहोश हो कर ज़मीन पर लुढ़क गया।

एक गुं े की यह पराजय देख कर वहाँ पर एकत्र सभी लोगों को खूब आनन्द हुआ। कई युवकों ने तो बेहोश रंगरेज़ के शरीर पर लातें भी लगायीं। सभी लोग उसे गालियाँ दे रहे े, जिसमें त्रिवक्रा ने भी साथ दिया। लड़कों ने शांति से दुकान में जाकर अपने मनपसन्द कपड़े पहन लिये।

'ये बालक हैं कौन?' त्रिवक्रा ने पास ही खड़े एक आदमी से पूछा।

'मालूम नहीं तुझे? ये वृन्दावन के सरदार नन्द के पुत्र हैं,' उसे उत्तर मिला।

त्रिवक्रा का हृदय पुलकित हो उठा। उसने पूछा, 'यह रंगरेज़ उन्हें गालियाँ क्यों दे रहा था?'

'पहनने के लिए अच्छ कपड़े ये बालक माँग रहे थे; कह रहे थे कि धनुर्यज्ञ में भाग लेने के लिए कंस े हमें बुलाया है, इसलिए वहाँ जाने के लिए हमें अच्छे कपड़े चाहिए,' दूसरे एक आदमी ने बताया।

'लड़के बड़े अच्छे दिखायी पड़ते हैं,' त्रिवक्रा ने कहा।

'बड़े अलमस्त हैं ये! ये ग्वाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कैसा गौरवपूर्व व्यवहार कर लेते हैं !' पहले आदमी ने कहा।

'इस गुं े को उसने खूब मज़ा चखाया ! वाह, वाह ! क्या प्रहार किया ! इसी लायक था यह रंगरेज़ ! अपने को कंस ही मान बठा था !'

'राजा को मालूम होगा, ो बहुत ग़ुस्सा होंगे !' त्रिवक्रा ने कहा।

'भले ही हों ! ये लड़के बहुत बहादुर हैं, किसी के ग़ुस्से का परवाह नहीं करते !' दूसरे एक व्यक्ति ने कहा।

देवों के समान वस्त्र धारण कर लड़के बाहर आये। बड़े लड़के ने नील वस्त्र धारण किये थे, जबकि सुन्दर, घुंघराले बालोंवाले उसके अनुज ने पीले रंग के कप े पसन्द किये। ऐसा लगता था कि उसे कपड़ों का भारी शौक़ है। अपने पुराने फें े में से मोरपंख निकाल कर उसने अपने सुनहरी मुकुट में लगाया। इन दोनों को दुकान से बाहर आते देखकर लोगों ने हर्षनाद किया। सामने की फूलों की दुकानवाले माली ने आकर उन्हें सुन्दर पुष्पहार अर्पित किये। छोटे लड़के ने ेम से उसकी पीठ थपथपायी।

छोटे कुंअर को देख कर त्रिवक्रा मुग्ध हो गयी। वह सभी की ओर एक मैत्री-पूर्ण और आनन्द से चमकती दृष्टि डाल रहा था। उसके होठों पर थिरकती मधुर मुस्कान शायद मेरे लिए ही है, ऐसा त्रिवक्रा को लगा। पास खड़े व्यक्ति को धकेल कर अत्यन्त भावोद्रेक से धड़कते हुए कलेजे के साथ वह आगे बढ़ी। क्या वर्षों से संजोयी उसकी आशा पूर्ण होगी ?

'नन्द के कुंअर, कृष्ण, मैं तुम्हारे पास ही आयी हूँ, प्रभु ! वर्षों से मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रही थी !' भावावेश से रुद्ध कंठ से उसने कहा।

कृष्ण समक्ष प्रणिपात करने की चेष्टा करती हुई इस वक्रांगी की विचित्र अंगभंगी को देख कर लोग हँसने लगे।

'तू हमारी प्रतीक्षा कर रही थी?' कृष्ण ने पूछा, 'वाह, क्या खूब ! पर तुझे यह कैसे मालूम हुआ कि हम लोग यहाँ आनेवाले हैं ?'

'आप अवश्य आयेंगे ऐसा मेरा मन कहता था, प्रभु ! इसीलिए तो मैं रोज़ प्रार्थना करती थी– आपके लिए इत्र और सुगंधित व्य भी लेती आ ी ;' त्रिवक्रा ने उत्तर दिया।

'तू कौन है, बहन ?' कृष्ण ने पूछा।

'मेरा नाम त्रिवक्रा है, कुब्जा ! राज-महल के लिए इत्र और सुगंधित द्रव्य तैयार करना मेरा काम है; परन्तु अपने सर्वोत्तम इ और सुगं त व्य तो प्रभु, आप ही के लिए मैंने संचित रखे हैं,' उसने उत्तर दिया।

कृष्ण के सुन्दर होठों पर तब जो मुस्कान उभर आयी, उसे देखकर त्रिवक्रा का हृदय आनन्द से नाच उ ा। उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगा कि यह मुस्कान उसी के लिए है, और जिसके सपने वह वर्षों से संजोती रही है, वह इष्टदेव भी यही है। पेटी में से इत्र निकाल कर उसने कृष्ण के हाथ और गाल पर लगाया—ललाट पर चंदन लगाया। फिर बलराम के शरीर पर भी इसी प्रकार उसने इत्र और चन्दन लगाया। बाल-सुलभ कौतुहल से बलराम स नवीन पदार्थ को सूंघा।

फिर त्रिवक्रा कृष्ण के ैरों में पड़ कर और अपना शीश उसके चरणों में नमा कर ो पड़ी। 'प्रभु, मैं इतनी कुरूप हूँ!' बस ये ही शब्द उसके मुंह से निकल सके और इसके बाद तो वह फूट पड़ी। उसकी चिर आशाएँ आँसुओं में परिणत ोकर नेत्रों से बह चलीं।

'कौन कहता है तुम कुरूप हो?' कृष्ण ने उसे सांत्वना देने के स्वर में कहा। त्रिवक्रा को उसने झुक कर ज़मीन पर से उठा लया। 'बहन, तुम्हें कौन सुन्दर नहीं कहेगा? निश्चय ही तुम सुन्दर हो!' उसने अधिकारपूर्ण स्वर में कहा।

त्रिवक्रा ज़मीन पर से उठ खड़ी हुई और जिस प्रकार सदा खड़ी रहती थी, वैसे ही खड़े रहने का प्रयत्न किया। परन्तु तब उसे एक विचित्र अनुभव हुआ। उसे लगा कि किसी अज्ञात शक्ति का संचार उसकी देह में हो रहा है। उसने सीधी खड़े होने का प्रयास किया और वह उसम सफल हो गयी। उसने अप पैर लंबे किये और उसकी पूरी टांग सीधी हो गयी। यह सब क्या चमत्कार है, वह सोचती रही। सभ्य स्त्री की आचार-मर्यादा भी वह भूल गयी और आनन्द से उछलने-कूदने लगी। आश्चर्य से अवाक् सभी उपस्थित व्यक्ति उसकी ओर टकटकी लगाये देख रहे थे।

'प्रभु, आपने तो मुझे सुन्दर और स्वस्थ बना दिया!' ऐसा कह कर वह फिर कृष्ण के ैरों में गिर पड़ी और हार्दिक आभार को व्यक्त करती हुई अपने दीर्घ केशकलाप से कृष्ण के ैर सहलाने लगी।

(क्रमशः)

अनु० ओंकारनाथ शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[राजा अश्रद्धन : पृष्ठ ३२ का शेष]

हूँ ही नहीं, मैं अश्रद्धन हूँ– उसे ख्याल आया।

"तुम्हीं लाइलिये हो और अश्रद्धन हो। उसे एक आवाज़ सुनायी पड़ी, और उसे अनुभव हुआ कि उसका देह– छेदन आरम्भ ो गया है। वह चिल्ला उठा और इसने अपना सिर उस टब में से ऊपर उठा लिया। वह पुरातन पु ष कटोरे का अंतिम पानी उस पर उंड़ेलता हुआ उस पर झुका हुआ था।

"मैंने जाने कैसी भयानक यातनाएँ सही हैं– और वह भी जाने कितने समय तक।" अश्रद्धन ने कहा।

"कितने समय तक?" उस पुरातन पुरुष ने पूछा, "तुमने सिर्फ अपना सिर इस टब में, डुवाया और तुरन्त ही फिर ऊपर उ ा लिया। देखो न, उस कटोरे का पानी भी अभी तो पूरा नहीं उंड़ेला गया है। अब तुम्हारी समझ में आया?"

अश्रद्धन ने उत्तर में एक शब्द भी नहीं कहा, केवल भयभीत होकर वह उस पुरातन पुरुष की ओर देखता रहा।

वह पुरातन पुरुष फिर ोला–

"अब तुम्हारी समझ में आया कि लाइलिये और तुम, दोनों एक ही हो और साथ ही जिन सिपाहियों को तुमने मरवा डाला है वे भी तुम्हारे साथ एकात्म हैं। इतना ही नहीं वल्कि वे प्राणी जिन्हें तुमने अपने आखेट में मारकर अपनी दावतों में खा डाला था, वे भी तुम्हारे साथ एकात्म हैं, तुम सोचते थे कि जीव तुम्हारे ही हैं, पर मैं स भूल का पर्दा हटा दिया और तुमने यह साफ देख लिया कि औरों के प्रति जो बुराई तुम करते हो, वह तुम

परिवार सहायक

सद्वैद्यशाला जिंचीप अपचन दूर करते

आयुर्वेदिक फॅक्टरी ज्वरेग तापांवर

नांजनगुड. आतमनटाइन टॉनिक

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

नांजनगुड दुथपावडर

सोल एजेन्ट्स: दी युनायटेड कन्सर्न ५४, बन्दर स्ट्रीट, मद्रास–१

बम्बई–शाखा–२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने प्रति भी करते हो। सभी के भीतर एक ही प्राण हैं, और तुम स्वयं उसके एक अंश-मात्र हो। और अपने भीतर के उस एक प्राणांश में होकर भी तुम समूचे जीवन का हित या अहित कर सकते हो, उसे बढ़ा सकते तो या कम कर सकते हो। तुम अपने जीवन का कल्याण तभी कर सकते हो, जबकि तुम अपने और दूसरे जीवों को अलग-अलग करनेवाली यह बीच की बाधक दीवार तोड़ ेगे, और जब तुम प्राणीमात्र को आत्मवत् समझ कर उन्हें प्यार करने लगोगे। पर दूसरे प्राणियों की प्राण-हानि करना तुम्हारे बस की बात नहीं है। जिन जीवों को तुम ` मार डाला है, वे तुम्हारी नजर से परे अवश्य चले गये हैं, पर उनका अस्तित्व लोप नहीं हो गया है। तुम्हारा ख्याल था कि तुम अपने जीवन को बढ़ा रहे हो और दूसरों के जीवन को घटा रहे हो; पर यह करना भी तुम्हारे काबू की बात नहीं है। जीवन के लिए न देश की ही ।धा है न काल की ही बाधा है।

जीवन एक क्षण में भी रह सकता है, और वही जीवन हज़ार बरस का भी हो सकता है; विश्व में तुम्हारा जीवन और प्रत्येक गोचर-अगोचर ाणी का जीवन एक ही है। न तो हम जीवन का नाश ही कर सकते हैं, न उसे बदल सकते हैं, क्योंकि जीवन मात्र एक ही है और सब कुछ मिथ्या है।"

इतना कहकर वह पुरातन पुरुष लोप हो गया।

अगले ही दिन सवेरे राजा अश्रद्धन ने आज्ञा दी कि लाइलिये तथा उसके सब सैनिकों को मुक्त कर दिया जाये, और लाइलिये को मृत्यु-दण्ड न दिया जाये।

और उसके दूसरे दिन उसने अपने पुत्र असुर बेंनिपाल को बुलाकर उसे सिंहासन सौंप दिया; वह स्वयं एक रेगिस्तान में चला गया, और वहाँ जाकर अपने पाये हुए तत्त्व पर ध्यान करने लगा। सके बाद वह एक परिव्राजक की तरह नगरों और गाँवों में भ्रमण करने लगा, और घूम-घूम कर लोगों को उपदेश देने लगा कि जीवन मात्र एक है, और जब मनुष्य दूसरे को आघात पहुँचाने की बात सोचता है तो वह अपने ही को आघात पहुँचाता है। ●●●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. कैलाशनाथ मिश्र

सूक्ष्म शक्ति के चमत्कार और विज्ञान

[लेखांक : २]

सूक्ष्म शवित का भदन ही माया के लीला-विलास को, सृष्टि से आदि-अन्त को और भौतिक-आध्यात्मिक न जाने कितने अनजाने, अकल्पनीय पर्तों को खोल सकेगा।

तमाम विश्व की रचना सूक्ष्म से ही स्थूल रूप में आयी है, जिस प्रकार बीज से वृक्ष। और फिर यदि हम कहें कि सूक्ष्म ही शक्ति है तो अतिशयोक्ति नहीं। सूक्ष्म से ही हमारा स्थूल शरीर बना है। चूंकि जीवनी शक्ति सूक्ष्म है, इसलिए इसको शृंखला में लाने वाली औषध भी सूक्ष्म होनी चाहिए और चूंकि कोषाणु (cell) सूक्ष्म हैं, इसलिए उनके आवश्यक लवणों को भी सूक्ष्म मात्रा में होना चाहिए, इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर चिकित्सा विज्ञान में भी सूक्ष्म मात्रा का प्रयोग किया गया। आधुनिक युग में सूक्ष्म मात्रा का सर्वप्रथम चिकित्सा शास्त्र में प्रयोग जर्मनी के हैनिमैन (१७५५–१८४३) ने किया और बाद में डॉ. शुशलर ने अपनी 'टिश रेमिडीज़" चिकित्सा पद्धति में किया। पिछली शताब्दियों में जब-जब नयी खोजें हुई हैं, उनका घोर विरोध किया गया है, यह सर्व विदित सत्य है। उस समय भी पदार्थों की सूक्ष्म शक्ति का इतना विवेचन नहीं हुआ था और इसीलिए जब हैनिमैन ने सूक्ष्म मात्रा के प्रयोग पर अपनी खोज प्रकाशित की, तो उस समय के तमाम विद्वानों में खलबली मच गयी। सन् १८५३ में अपने समय के महान् गाइनोकोलॉजिस्ट सर जेम्स वाई. सिम्पसन, जिन्होंने सर्वप्रथम शल्य क्रिया में अनेस्थेटिक्स (मूर्छा लाने वाली औषधियाँ) का आविष्कार किया था, एक पुस्तक लिखी "होमियोपैथी-इट्स टेनेन्ट्स एण्ड टेन्डेंसीज़," जिसमें उन्होंने हैनिमैन तथा उनकी सूक्ष्म मात्रा की बड़ी निन्दा की।

सिम्पसन की पुस्तक के प्रकाशित होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ फरवरी १९६४ के ५० वर्ष बाद डॉ. जी. डब्लू. बैलफोर ने लिखा :–

"होमियोपैथी की ३० शक्ति की दवा की प्रत्येक बूंद में दवा के एक ग्रेन का एक डेसिलियंथ भाग होता है और एक बूंद पानी में दवा की इतनी ही मात्रा लाने के लिए प्रत्येक ग्रेन दवा को चौदह सेप्टीलियन क्यूबिक मील पानी में घोलना पड़ेगा, अर्थात् पानी की इतनी मात्रा जो पृथ्वी जैसे सैकड़ों गोलार्धों में भरी जा सकेगी और उन एक-एक गोलार्धों की त्रिज्या (radius) यदि खड़ी की जाय, तो वह पृथ्वी से लेकर समीपस्थ तारे तक जा पहुँचेगी। ३० शक्ति की मात्रा को हम अंकों में इस प्रकार प्रकट कर सकते हैं—

१
———————————————
१,०००,०००,०००,०००,०००,०००,
०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,
०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,
ग्रेन

अर्थात् नीचे के एक अंक के आगे साठ शून्य। इसी प्रकार २०० शक्ति के लिए ४०० शून्य १००० शक्ति के लिए नीचे के एक अंक के आगे दो हजार शून्य तथा १ लाख शक्ति के लिए एक के आगे दो लाख शून्य रखना पड़ेगा। अब इन शक्तियों में पदार्थ की मात्रा की कल्पना कीजिए– अकल्पनीय! अद्भुत! पर महान् चमत्कारिक।

"कार्ल वॉन नागेली ने स्वच्छ ताँबे के चार सिक्के एक लिटर परिश्रुत जल (distilled water) में चार दिन तक रक्खा और फिर उन सिक्कों को बाहर निकाल कर, उस पानी को अपने स्पाइरोगिरा के पौधों में डाला और देखा कि कुछ ही मिनटों में वे पौधे मर गये। उसने रिटार्ट का पानी गिराकर उसे अच्छी तरह साफ किया और उसे फिर परिश्रुत जल से भरा। इस पानी को देने पर भी वे पौधे कुछ समय में मर गये। इस तरह तब तक वह रिटार्ट को धोता रहा, जब तक कि ताँबे का सब असर चला नहीं गया, यद्यपि उसी रिटार्ट को यदि वह हल्के शोरे के तेज़ाब से धोता, तो पौधे मरते नहीं, ऐसा बाद के परीक्षणों से मालूम पड़ा। उसे उस पानी में ताँबे की मात्रा जानने की उत्सुकता हुई और उसने बारह क्वार्ट चुआये पानी में ताँबे के बाहर स्वच्छ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिक्के चार दिन तक रक्खे और बाद में पानी को धीरे-धीरे वाष्प बना कर उड़ा दिया और बचे पदार्थ को, जो ताँबे का हाड्रोक्सिल था, देखा जिसका अनुपात पानी के साथ एक और एक सौ लाख का था।"

डार्विन की सूक्ष्म मात्रा में अत्यन्त रुचि थी। एक बार एक डच वैज्ञानिक प्रो. डॉन्डर ने उन्हे लिखा कि ऐट्रोपिन के एक ग्रेन को एक लाखवाँ भाग भी आखों पर प्रभाव डालता है, तो डार्विन ने उसे और अधिक जानकारी के लिए लिखा–

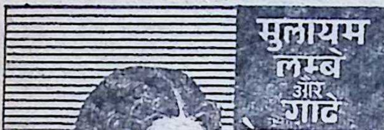

"आप के पत्र से उस विशिष्ट सत्य को काफी आधार मिला, जो मैंने अमोनियों की ड्रोसेरा पर क्रिया में बार-बार देखा। मैंने स्पष्टतः देखा है कि एक ग्रेन का १-४०००,००० वाँ भाग भी जब ग्रन्थि द्वारा ग्रहण किया जाता है, तो वह ग्रन्थि से सम्बन्धित आज्ञावाहक स्नायु में इतना तेज झटका पैदा करता है कि वह स्नायु के नीचे तक की तमाम लम्बाई तक चला जाता है। मैं निश्चित रूप से मान गया हूँ कि साधारण नमक के एक ग्रेन की १-२०,०००,००० मात्रा भी वैसा ही करती है।"

महान् चिकित्सक डॉ. शुशलर ने अपने 'टिशू रेमिडीज़' चिकित्सा विज्ञान में प्रयोगों द्वारा बताया कि सूक्ष्म रूप में होने पर ही लवण शरीर के सेलों द्वारा ग्रहण किये जा सकते हैं। स्थूल मात्रा में ये व्यर्थ सिद्ध होते हैं। संसार के माने हुए रसायनशास्त्रियों ने और चिकित्सकों ने उनके सूक्ष्म मात्रा की परिपुष्टि की है। ो. लीविग कहते हैं–

"अस्वस्थ शरीर के तन्तु (tissue) घनत्व की एक ऐसी स्थिति में आते हैं, जब कि रक्त के लवणों के घोल उनमें उन्हें भोजन और पोषण देने के लिए विष्ट नहीं कर पाते, पर यदि ये ही लवणों के घोल अत्यन्त हल्के (dilute) हों, जिसमें कि उनके तमाम अणु अलग-अलग स्वतन्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाँ, तो यह मानी हुई बात है कि उन्हें (लवणों के घोल को) उन घने तन्तुओं के भीतर प्रवेश करने में कोई बाधा नहीं होगी।"

यह शरीर असंख्य कोषों (cells) का एक समूह है। भिन्न-भिन्न प्रकार के कोष भिन्न-भिन्न तन्तु और अंग बनाते हैं। हम यह जानते हैं कि भिन्न-भिन्न प्रकार के लवण इत्यादि बड़ी सूक्ष्म मात्रा में भोजन के पदार्थों में मौजूद रहते हैं और उसी सूक्ष्म अवस्था में शरीर के कोषों द्वारा ग्रहण किये जाते हैं। यह बात बिलकुल तर्क संगत लगती है कि अजैव लवणों (Inorganic Salts) को, जिनकी आवश्यकता हमें होती है, तुरन्त उपयोगी बनाने के लिए हम उनको उस रूप में रक्खें, जिस रूप में प्रकृति उन्हें अपने उपयोग में लाती है। यदि ये ग्रहण करने वाले को सूक्ष्म हैं, तो इन लवणों को उनमें प्रवेश पाने के लिए सूक्ष्मतर होना होगा।

एक क्वा' दूध में एक ग्रेन का छः-लाखवाँ भाग लौह पाया जाता है। दुग्धाहार पर निर्भर एक बच्चा प्रत्येक बार आधा पाइन्ट दूध में एक मिलीग्राम लौह पाता है, जो उपर्युक्त लौह की मात्रा का चौथा भाग है, अर्थात् उसे प्रतिदिन के दूध से चार मिलीग्राम लौह मिलता है, जोकि शरीर के पोषण और वृद्धि के लिए, शरीर के सभी कोषों की लौह की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त है। अब सोचिए कि यदि केवल कुछ कोषों में लौह की कमी पड़ जाय और लौह को उस कमी की पूर्ति के लिए औषध रूप में देना पड़ जाय, तो लौह की क्या मात्रा होगी ? और फिर एक बूंद दूध में लौह की क्या मात्रा है ?

मानव शरीर में क्लोरीन की मात्रा लौह से भी कम है, अर्थात् औषध रूप में एक मिलीग्राम कैल्शियम फ्लोराइड प्रति खुराक भी बहुत अधिक होगा। किसी दवा की मात्रा औषध रूप में अधिक की अपेक्षा सूक्ष्म ही होनी चाहिए, क्योंकि यदि मात्रा सूक्ष्म है, तो उसे पुनः-पुनः देकर इच्छित फल मिल सकता है, पर बड़ी मात्रा से तो इच्छित फल नहीं ही मिलता। स्थूल या बड़ी मात्रा में लौह का सेवन न केवल व्यर्थ ही सिद्ध होता है, वरन् यह पेट पर बुरा प्रभाव भी डालता है। शरीर के तापक्रम पर हज़ार भाग पानी में एक भाग घुला नमकाम्ल (हाइड्रोक्लोरिक एसिड) मांस के फाइब्रिन या दालों के ग्लूटिन को तुरन्त ही घोल लेता है, पर जब यही अम्ल तीव्र या गाढ़ा (Concenetrated) होता है, तो इसकी घोलक शक्ति घट जाती है, बढ़ती नहीं।

मनुष्य अपनी तमाम विचित्रताओं के साथ, मूर्ख से लेकर महान् विद्वान् तक, गर्भाधान के समय एक क्यूबिक मिलीमीटर के दस लाखवें भाग से बनता है। यह है हमारी उत्पत्ति की सूक्ष्मता। इतने पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी मुर्गी के अंडे से मुर्गी ही निकलती है और बत्तख के अंडे से बत्तख ही; यद्यपि गर्भाधान के समय ऐसा कोई रूप नहीं होता। विचार कीजिए आखिर इतने सूक्ष्म के भीतर भी क्या है ? एक क्यूबिक मिलीमीटर के दस लाखवें भाग में भी ऐसी कौन-कौन सी बातें हैं, जिससे मनुष्य से मनुष्य ही पैदा होता है ?

आज से सौ वर्ष पहले परमाणु पर कितना विश्वास था ? धीरे-धीरे वह टूटता-टूटता इलेक्ट्रोन, प्रोट्रोन, न्यूट्रॉन पॉज़ीट्रॉन और पार्टिकिल्स़ तक पहुँच गया, फिर भी हम नहीं कह सकते कि यही उसका अन्त है। जिस रेडियम से सारी दुनिया में कैंसर की चिकित्सा की जा रही है, जिस रेडियम का विविध वैज्ञानिक अनुसन्धानों म प्रयोग हो रहा है, वह संसार भर में मुश्किल से ४–५ औंस है। रेडियम अपने भीतर से जो प्रकाश और गर्मी निकालता है, वह आज ही समाप्त होने वाली नहीं। उसे समाप्त होने में २५ हज़ार वर्ष लगेंगे, तब कहीं इसका सीसे में परिवर्तन होगा। इसी प्रकार यूरेनियम को सीसे में परिवर्तित होने में आठ अरब वर्ष लगेंगे। तब तक यह अनवरत प्रकाश और ताप की किरणें निकालता रहेगा। रेडियम धर्मा तत्त्वों के परमाणु स्वयं विभाजित होते रहते है, यह बकेरेल, श्रीमती क्यूरी, सौरी और लार्ड रथरफोर्ड के प्रयोगों से स्पष्ट हो गया है, फिर भी इनको रूपान्तर होने में इतना समय। अन्दाज़ लगाइए प्रतिक्षण, प्रतिदिन कितना रेडियम क्षीण होता होगा ? रेडियम धर्मी (Radioactive) तत्त्वों से तीन तरह की किरणें निकला करती हैं, एल्फा, बीटा और गामा किरणें। एल्फा किरणें हालियम परमाणुओं के पुंज हैं, बीटा किरणें ऋणाणुओं या इलेक्ट्रोन के पुंज हैं और गामा किरणें एक प्रकार की शक्ति की किरणें हैं, जो पदार्थों को भेद कर आरपार चली जाती हैं।

सैकड़ों वर्ष पहले किसी शीशी में कस्तूरी रक्खी थी और उसे निकालकर शीशी को कितनी ही बार अच्छी तरह धोया गया, फिर भी कस्तूरी की सुगन्ध आ रही है। अर्थात् उसकी सूक्ष्म मात्रा जिसकी कोई कल्पना नहीं, अब भी वहाँ वह रह गयी है और उसी तरह काम कर रही है, जिस तरह रेडियम। आज का विज्ञान दिन पर दिन बताता जा रहा है कि अविश्वसनीय कुछ भी नहीं, फिर जिस सत्य को अनेकों बार देखा जा चुका है, उसे असत्य कैसे कहा जाय। सूक्ष्म की शक्ति को समझने के लिए सूक्ष्मता से विचार भी करना होगा। हमारी कल्पना भले ही रुक जाय, पर सत्य सत्य ही रहेगा। सूक्ष्म शक्ति का भेदन ही माया के लीला-विलास को, सृष्टि से आदि-अन्त को और भौतिक-आध्यात्मिक न जाने कितने अनजाने, अकल्पनीय पर्तों को खोल सकेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[पद्मिनी...पृष्ठ १६ का शेष]

और तिरस्कार का पात्र समझा जायगा। ऋषियों और आर्य पूर्वजों ने इस प्रकार के अभिमान को रुद्र-स्वरूप में संक्रान्त किया [illegible] प्रलय में भी ताण्डव नृत्य करनेवाली रुद्र की शक्ति और माया ही हैं। उसके अंशावतार नाश के विधाता ही बनते हैं। और तब भी उनका तेज धूमिल नहीं होता। पद्म के समान सुकुमार होने पर भी पद्मिनी के चित्त पर सम्राट के वैभव की कथा तुषार बिन्दु के समान लुढ़क जाती है। पवन के समान मनस्वी होने पर भी उसके हृदय पर आधिपत्य स्थापित करना सम्भव न था। उसका कोकिल कण्ठ चित्तौड़ के सिवाय अन्य उद्यान में गूंजने के लिए प्रस्तुत नहीं था। उसके खंजन की चपलता देखने का सौभाग्य तो राणा भीमदेव के महल को ही था।

चित्तौड़ के किले पर से, सख्त भिंचे हुए होठों पर लटकते मोती से सुशोभित, चिन्तातुर होने पर भी गर्व भरी, यवनदल को दृष्टि के तीर से बींधती हुई, इस मानिनी का चित्र सहज ही आँखों के सम्मुख साकार हो उ ता है। ऐसा मालूम होता है कि झरोखे की जाली में से, अपनी कोमल देहलता के प्रताप की रक्षा के लिए सज्जित वीरों को स्नेहिल दृष्टिपात से विदा देती हुई पद्मिनी का लावण्य अब भी उसी तरह ताजा और प्रफुल्ल है। छः सौ वर्षों से भी अधिक समय गुज़र गया। और भी अनेक शताब्दियाँ बीत जायेंगी, परन्तु पद्मिनी का यशोगान उसी प्रकार गाया जायगा, तथा उसकी भक्ति में अमर बने हुए बादल और गोरा के पराक्रम से द्विगुणित उत्साहित चित्तौड़ की वीर राजपूत सेना का पराक्रम भी उतना ही अमर रहेगा। ●●

बेंगाल केमिकल का सुगंधित ब्राह्मी केश तैल

बड़ी कारीगरी के साथ सुगंधित यह आयुर्वैदिक केश तैल मस्तिष्क को शीतल और शान्त रखता है। ब्राह्मी केश तैल के नियमित व्यवहार से मानसिक क्लान्ति दूर होती है और आराम की नींद आती है। केशों की स्वस्थ वृद्धि में भी यह सहायता करता है।

बेंगाल केमिकल

कलकत्ता ० बम्बई ० कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी मुर्गी के अंडे से मुर्गीही निकलती है और बत्तख के अंडे से बत्तख ही; यद्यपि गर्भाधान के समय ऐसा कोई रूप नहीं होता। विचार कीजिए आखिर इतने सूक्ष्म के भीतर भी क्या है? एक क्यूबिक मिलीमीटर के दस लाखवें भाग में भी ऐसी कौन-कौन सी बातें हैं, जिससे मनुष्य से मनुष्य ही पैदा होता है?

आज से सौ वर्ष पहले परमाणु पर कितना विश्वास था? धीरे-धीरे वह टूटता-टूटता इलेक्ट्रॉन, ोट्रोन, न्यूट्रॉन पॉज़ीट्रॉन और पार्टिकिल्स़ तक पहुँच गया, फिर भी हम नहीं कह सकते कि यही उसका अन्त है। जिस रेडियम से सारी दुनिया में कैंसर की चिकित्सा की जा रही है, जिस रेडियम का विविध वैज्ञानिक अनुसन्धानों म प्रयोग हो रहा है, वह संसार भर में मुश्किल से ४–५ औंस है। रेडियम अपने भीतर से ो प्रकाश और गर्मी निकालता है, वह आज ही समाप्त होने वाली नहीं। उसे समाप्त होने में २५ हज़ार वर्ष लगेंगे, तब कहीं इसका सीसे में परिवर्तन होगा। इसी प्रकार यूरेनियम को सीसे में परिवर्तित होने में आठ अरब वर्ष लगेंगे। तब तक यह अनवरत प्रकाश और ताप की किरणें निकालता रहेगा। रेडियम धर्मा तत्त्वों के परमा स्वयं विभाजित होते रहते है, यह बकेरेल, श्रीमती क्यूरी, सौरी और लार्ड रथरफोर्ड के प्रयोगों से स्पष्ट हो गया है, फिर भी इनका रूपान्तर होने में इतना समय? अन्दाज़ लगाइए प्रतिक्षण, प्रतिदिन कितना रेडियम क्षीण होता होगा? रेडियम धर्मा (Radioactive) तत्त्वों से तीन तरह की किरणें निकला करती हैं, एल्फा, बीटा और गामा किरणें। एल्फा किरणें हालियम परमाणुओं के पुंज हैं, बीटा किरणें ऋणाणुओं या इलेक्ट्रोन के ुज हैं और गामा किरणें एक प्रकार की शक्ति की किरणें हैं, जो पदार्थों को भेद कर आरपार चली जाती हैं।

सैकड़ों व पहले किसी शीशी में कस्तूरी रक्खी थी और उसे निकालकर शीशी को कितनी ही बार अच्छी तरह धोया गया, फिर भी कस्तूरी की सुगन्ध आ रही है। अर्थात् उसकी सूक्ष्म मात्रा जिसकी कोई कल्पना नहीं, अब भी वहाँ वह रह गयी है और उसी तरह काम कर रही है, जिस तरह रेडियम। आज का विज्ञान दिन पर दिन बताता जा रहा है कि अविश्वसनीय कुछ भी नहीं, फिर जिस सत्य को अनेकों बार देखा जा चुका है, उसे असत्य कैसे कहा जाय। सूक्ष्म की शक्ति को समझने के लिए सूक्ष्मता से विचार भी करना होगा। हमारी कल्पना भले ही रुक जाय, पर सत्य सत्य ही रहेगा। सूक्ष्म शक्ति का भेदन ही माया के लीला-विलास को, सृष्टि से आदि-अन्त को और भौतिक-आध्यात्मिक न जाने कितने अनजाने, अकल्पनीय पर्तों को खोल सकेगा। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[पद्मिनी...पृष्ठ १६ का शेष]

और तिरस्कार का पात्र समझा जायगा। ऋषियों और आर्य पूर्वजों ने इस प्रकार के अभिमान को रुद्र-स्वरूप में संक्रान्त किया है। प्रलय में भी ताण्डव नृत्य करनेवाली रुद्र की शक्ति और माया ही हैं। उसके अंशावतार नाश के विधाता ही बनते हैं। और तब भी उनका तेज धूमिल नहीं होता। पद्म के समान सुकुमार होने पर भी पद्मिनी के चित्त पर सम्राट के वैभव की कथा तुषार बिन्दु के समान लुढ़क जाती है। पवन के समान मनस्वी होने पर भी उसके हृदय पर आधिपत्य स्थापित करना सम्भव न था। उसका कोकिल कण्ठ चित्तौड़ के सिवाय अन्य उद्यान में गूंजने के लिए प्रस्तुत नहीं था। उसके खंजन की चपलता देखने का सौभाग्य तो राणा भीमदेव के महल को ही था।

चित्तौड़ के किले पर से, सख्त भिंचे हुए होठों पर लटकते मोती से सुशोभित, चिन्तातुर होने पर भी गर्व भरी, यवनदल को दृष्टि के तीर से बींधती हुई, इस मानिनी का चित्र सहज ही आँखों के सम्मुख साकार हो उ ता है। ऐसा मालूम होता है कि झरोखे की जाली में से, अपनी कोमल देहलता के प्रताप की रक्षा के लिए सज्जित वीरों को स्नेहिल दृष्टिपात से विदा देती हुई पद्मिनी का लावण्य अब भी उसी तरह ताजा और प्रफुल्ल है। छः सौ वर्षों से भी अधिक समय गुज़र गया। और भी अनेक शताब्दियाँ बीत जायेंगी, परन्तु पद्मिनी का यशोगान उसी प्रकार गाया जायगा, तथा उसकी भक्ति में अमर बने हुए बादल और गोरा के पराक्रम से द्विगुणित उत्साहित चित्तौड़ की वीर राजपूत सेना का पराक्रम भी उतना ही अमर रहेगा। ● ●

बेंगाल केमिकल का सुगंधित ब्राह्मी केश तैल

बड़ी कारीगरी के साथ सुगंधित यह आयुर्वैदिक केश तैल मस्तिष्क को शीतल और शान्त रखता है। ब्राह्मी केश तैल के नियमित व्यवहार से मानसिक क्लान्ति दूर होती है और आराम की नींद आती है। केशों की स्वस्थ वृद्धि में भी यह सहायता करता है।

बेंगाल केमिकल

कलकत्ता ० बम्बई ० कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[संसार को हिन्दू-धर्म......पृष्ठ ४० का शेष]

नहीं किया है—चालीस वर्ष पूर्व मैक्समूलर ने कहा था कि यूरोप के लिए यह बात ज्योति की प्रथम किरण की तरह थी कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त मात्र सिद्धान्त नहीं है, एक सत्य है, यथार्थ है। यह सिद्धान्त भारत की ही देन है।

आज हिन्दूधर्म और वर्णाश्रम धर्म का इसके भक्तों द्वारा ही ग़लत प्रतिनिधित्व किया जा रहा है। उपाय, इसे नष्ट करना नहीं, इसका सच्चा रूप उभारना है। हमको अब अपने में सच्चे हिन्दुत्व को प्रकट करने का प्रयत्न करना चाहिए और देखना चाहिए कि इससे हमारी आत्मा को संतुष्टि मिलती है या नहीं।

आज धर्मों में भी राष्ट्रों की तरह आपस में होड़ लगी है। ईश्वर की कृपा और दिव्यदृष्टि किसी जाति विशेष या देश विशेष का एकाधिकार नहीं है। उनका प्रकाश सब पर बराबर पड़ता है। ऐसा धर्म और राष्ट्र काल के गर्भ में समा जायेगा, जो अपना विश्वास अन्याय, असत्य और हिंसा में रखता है। ईश्वर ज्योति है, अन्धकार नहीं, प्रेम है घृणा नहीं, सत्य है असत्य, नहीं। ईश्वर ही एकमात्र महान है। हम तो उसकी महानता के धूल सदृश्य अंश हैं। हमको अभिमान रहित होना चाहिए और उसकी सृष्टि की सबसे छोटे अंश की भी सत्ता स्वीकार करनी चाहिए। श्री कृष्ण ने दीनहीन सुदामा को इतना स्नेह आदर दिया, जितना उन्होंने किसी को नहीं दिया। तुलसीदास ने कहा है कि प्रेम ही धर्म और त्याग का आधार है, जबकि ये नष्ट होनेवाला शरीर अभिमान और अधर्म का आधार है।

हिन्दूधर्म का मूलतत्व इस आधार पर निर्भर है कि यह सारी चेतन सृष्टि एक है, अर्थात् यह सारा जीवन उस एक विश्वात्म-शक्ति से प्रवाहित हो रहा है, जिसे आप ईश्वर, अल्लाह या गॉड कहते हैं। हिन्दू-धर्म में एक धार्मिक ग्रन्थ है 'विष्णुसहस्र-नाम' जिसका सामान्य अर्थ है 'ईश्वर के एक सहस्र नाम। इन एक हज़ार नामों का यह अर्थ नहीं है कि ईश्वर इनसे सीमा-बद्ध कर दिया गया है, बल्कि यह है कि ईश्वर इतने नाम रखता है, जितने तुम दे सको। तुम उसे कितने ही नामों से पुकार सकते हो, यदि उनसे एक ईश्वर का बोध होता हो, दो का नहीं। इससे यह भी सिद्ध होता है कि उसका कोई नाम नहीं है।

सृष्टि की इस एकता की मान्यता ही हिन्दूधर्म की विशेषता है, जो मनुष्य की मुक्ति तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इस सृष्टि के सारे जीवों के लिए उपलब्ध है। यह हो सकता है कि मुक्ति केवल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव जन्म में ही संभव हो, अन्य किसी जन्म में नहीं। लेकिन इससे मनुष्य सृष्टि का कर्त्ता नहीं बन जाता।

जब [illegible] भ्रातृत्व पर बातचीत करते हैं [illegible] रुक जाते हैं और सोचते हैं कि दूसरे सभी जीवन मनुष्य के जीवन को सुखी बनाने के लिए हैं और इसके लिए उनका नाश आवश्यक है। लेकिन हिन्दू धर्म में सभी तरह का शोषण या अपने स्वार्थ के लिए लाभ उठाना वर्जित है। इस सारी चेतना सृष्टि से एकात्मता अनुभव करने के लिए त्याग की कोई सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती, लेकिन मनुष्य की इच्छाओं को अवश्य ही यह आदर्श सीमित कर देता है। आप देखेंगे कि इस आदर्श के विरुद्ध आप की यह आधुनिक सभ्यता जो कहती है— 'अपनी जरूरतें बढ़ाओ'। जिन व्यक्तियों को इसमें विश्वास है, वे सोचते हैं कि आवश्यकताओं में वृद्धि का अर्थ ज्ञान में वृद्धि करना है, जिससे उस अनन्त असीम को ज़्यादा अच्छी तरह से समझा जा सकता है। इसके विपरीत हिन्दूधर्म कहता है कि अपनी ज़रूरतों को कम करो और संतोष करना सीखो, क्योंकि आवश्यकताएँ हमारे उस अन्तिम लक्ष्य में, जिसमें हमें विश्व से अपने को एकात्म कर लेना है, बाधा पहुँचाती हैं। अनु. प्रभात कुमार मित्तल

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यु. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२

फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराष्ट्र के मुख्य मन्त्री तथा उनके सहयोगियों का सम्मान

गत २९ जनवरी को महाराष्ट्र के मुख्य मन्त्री श्री वसन्तराव पी. नाईक तथा उनके अन्य मन्त्री सहयोगियों के सम्मान में भारतीय विद्या भवन द्वारा एक विशिष्ट समारोह का आयोजन किया गया था। श्री नाईक तथा उनके सहयोगियों का स्वागत करते हुए कुलपति श्री मुन्शीजी ने कहा कि भारत में महाराष्ट्र को सर्वश्रेष्ठ शासित राज्य होने का गौरव प्राप्त है। यह इस राज्य का सौभाग्य है कि उसे सदैव समानरूप से प्रतिभाशाली एवं विशाल हृदयवाले मन्त्रियों का सहयोग मिलता रहा।

मुझे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है कि हमारे मुख्यमन्त्री तथा उनके साथी नीति-निर्धारण में आदर्श के साथ यथार्थ को भी पर्याप्त महत्त्व देते हैं। मुख्य मन्त्री ने मद्य-निषेध की नीति के सम्बन्ध में जो कदम उठाया है, मैं उसका स्वागत करता हूँ। यद्यपि प्रारम्भ से ही मैं मद्य-निषेध का प्रबल समर्थक रहा हूँ; किन्तु मैंने देखा है यह नीति न केवल सर्वथा असफल रही है; अपितु वास्तविकता से भी दूर है। श्री मुन्शी जी ने अन्त में भारतीय विद्या भवन के कार्यों तथा उसके उद्देश्यों पर भी प्रकाश डाला।

इस अवसर पर श्री नाईक ने कहा कि मुझ तथा मेरे साथियों को श्री मुन्शी जी जैसे अनुभवी एवं प्रतिभाशाली नेता का जो आशीर्वाद एवं उत्साह प्राप्त हुआ है, वह निश्चय ही हमें एक सुव्यवस्थित एवं सुगठित शासन व्यवस्था स्थापित करने में सहयोग प्रदान करेगा।

बनावटी लोकसभा

गत १८ जनवरी को भारतीय स्त्री सेवा संघ के तत्वावधान में भवन के गीता मन्दिर में 'बनावटी लोक सभा' (Mock Parliament) का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर कुलपति श्री मुन्शी जी, श्री मंगलदास पकवासा तथा अन्य गण्यमान लोग उपस्थित थे।

सभा की कार्यवाही प्रमुख श्रीमती लीलावती मुन्शी तथा लोक-सभा की अध्यक्षा श्रीमती सौदामिनी मेहता के गौरवपूर्ण प्रवेश से शुरू हुई। गीता मन्दिर उस समय हूबहू लोक सभा के रूप में बदल चुका था। स्थान-स्थान पर समाघोष भी लिखे हुए थे।

श्रीमती लीलावती मुन्शी ने सरकार की नीति की विस्तृतरूप से विवेचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत की, जो कटाक्ष एवं विनोद से परिपूर्ण होने के साथ-साथ विचार प्रेरक एवं स्पष्ट[illegible] ।

[illegible] आधा घण्टा प्रश्नोत्तर उस[illegible] [illegible]मय था। उस समय का दृश्य कितना तनावपूर्ण था, देखते ही बनता था। एक प्रश्न इस प्रकार का पूछा गया था कि एक सांस्कृतिक प्रतिनिधि मण्डल में 'रजनी-गंधा' नाम की नृत्यांगना के स्थान पर उसी नाम की एक वानर कन्या कैसे चली गयी? सभागृह के नेता ने उत्तर देते हुए इस भूल को स्वीकार किया और बताया कि यह नृत्यांगना न्यूयार्क से इस प्रतिनिधि मण्डल में सम्मिलित होने वाली थी और वानर कन्या को तो बोस्टन में होने वाले पशु-प्रदर्शनी में भी जाना था। भूल से इस प्रकार का फेरफार हो गया और इस प्रकार की भूल का उत्तरदायित्व जिस परथा, उससे हम जवाब तलब करनेवाले ही थे कि इसी बीच अमेरिका से एक तार आ गया, जिसमें लिखा था कि उस वानर-कन्या से वहाँ लोग बहुत प्रभावित हुए हैं और निवेदन पूर्वक लिखा है कि भविष्य में आनेवाले इस प्रकार के प्रतिनिधि मण्डलों में रजनी गन्धा जैसी बुद्धिशाली वानर कन्याओं का अवश्य समावेश होना चाहिए।

प्रधानमन्त्री के रूप में श्रीमति बसुबेन भट्ट और अर्थ मन्त्री के रूप में श्रीमती लाभू बहेन मेहता ने भी बड़ी खूबी से अपना कार्य पूरा किया। अपनी वाक् पटुता, विनोद तथा अभिनय के अपूर्व प्रदर्शन से श्रीमती रम्भाबेन गान्धी के एक-एक वाक्य पर सभा गृह तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठता था।

श्रीमती सरोजिनी मेहता विरोध पक्ष की नेता के रूप में बहुत ही सफल रहीं।

इस अवसर पर उपस्थित एक सज्जन के कहाँ कि मैं राज्य विधान सभा में प्रमुख पद पर रह चुका हूँ; किन्तु इस सभा की कार्यवाही वहाँ की अपेक्षा कहीं अधिक सुन्दर है।

इस प्रकार ढ़ाई घण्टे का यह अपने में एक अपूर्व ढंग का मनोरंजन कार्य-क्रम था। अन्त में भारतीय स्त्री सेवा संघ की मंत्रिणी श्रीमती सुमित्रा वकील ने आभार प्रदर्शन किया। ●

पत्रकारिता, विज्ञापन व मुद्रण महाविद्यालय

गत २३ जनवरी को भारतीय विद्या भवन के पत्रकारिता, विज्ञापन एवं मुद्रण महाविद्यालय के छात्रों के समक्ष केरल के उद्योग मन्त्री श्री के. ए. दामोदर मेनन ने 'मलयालम पत्रकारिता' पर बोलते हुए कहा कि केरल में स्व[illegible] प्राप्ति क बाद समाचार-पत्रों का आ[illegible]जनक-रीति से विकास हुआ है और इसका कारण वहाँ की बढ़ती हुई शिक्षा है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत २२ जनवरी को गान्धीजी के पौत्र श्री राजमोहन गान्धी ने नैतिक पुनरुत्थान आन्दोलन के अन्य सदस्यों के साथ इस महाविद्यालय का निरीक्षण किया और उन्होंने आन्दोलन के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर उनके अन्य साथियों के भी भाषण हुए। सभा की अध्यक्षता श्रीमती लीलावती मुन्शी ने की।

श्री राजमोहन गान्धी का भाषण

गत २४ जनवरी को भारतीय विद्या भवन के कर्मचारियों के समक्ष गान्धीजी के पौत्र श्री राजमोहन गान्धी ने नैतिक पुनरुत्थान आन्दोलन पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला और भारतीय विद्या भवन के कार्यों की प्रशंसा की। कुलपति श्री मुन्शीजी ने सभा की अध्यक्षता की। इस अवसर पर आन्दोलन के कुछ सदस्यों ने सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किया और कुछ के भाषण भी हुए।

गणतन्त्र दिवस समारोह

गत २६ जनवरी को भारतीय विद्या भवन में गणतन्त्र दिवस समारोह मनाया गया। [illegible] श्री मुन्शीजी ने ध्वजारोहण किया। उन्होंने अपने भाषण में भारतीय विद्या भवन के कर्मचारियों को राष्ट्र के हित को लक्ष्य में [illegible] कर कार्य करने की सलाह दी।

सुगम संगीत सम्मेलन

गत १५ जनवरी को अहमदाबाद में भारतीय विद्या भवन के कलाकेन्द्र के अन्तर्गत वार्षिक सुगम संगीत-सम्मेलन के कार्यक्रम के रूप में प्रथम समारोह प्रमुख न्यायाधीश श्री जे. एम. शेलत की अध्यक्षता में मनाया गया। समारोह का उद्घाटन गुजरात राज्य के गृहमन्त्री एवं संगीत नाटक अकादमी के अध्यक्ष श्री हितेन्द्र देसाई ने किया। भवन कला-केन्द्र के मानद सचिव श्री नवीन टी. खाण्डवाला ने अतिथियों का स्वागत किया और बताया कि कुलपति श्री मुन्शीजी एवं श्रीमती लीलावती मुन्शी के प्रेरणाप्रद नेतृत्व में भारतीय विद्या भवन किस प्रकार एक विराट वट-वृक्ष के रूप में फैलता जा रहा है। सुगम-संगीत की गतिविधियों पर भी उन्होंने विस्तृतरूप से प्रकाश डाला। इस अवसर पर एक विशिष्ट सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किया गया, जिसमें बम्बई, अहमदाबाद, बड़ौदा तथा राजकोट के ६० कलाकारों ने भाग लिया।

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, ताडदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ANNOUNCING A NEW SERIES OF BHAVAN'S PUBLICATIONS

The Bharatiya Vidya Bhavan—the Institute of Indian Culture in Bombay—has already published over 110 Books in its Book University Series besides the Pocket Gandhi series, Bhavan's General Publications and the monumental series of "The History and Culture of the Indian People."

This year the Bhavan takes another step forward by starting a JUNIOR BOOK UNIVERSITY SERIES. The price of this series of books is Re. 1/- per copy (postage extra). The following titles of books were released for sale from the middle of November, 1963 :

1	Upanishads	C Rajagopalachari.
2.	How God Came Into My Life (Series I)	
3.	How God Came Into My Life (Series II)	
4.	Reverence for Life	Albert Schweitzer
5.	Chinese Aggression and Its Implications	K. M. Munshi
6.	The National Emergency and Its Problems ...	K. M. Munshi
7.	The Himalayas in Indian Life	K. M. Panikkar
8.	India Is Immortal	Swami Vivekananda
9.	Gospel of Work	Swami Rama Tirtha
10.	Bombay High Court—Half a Century of Reminiscences	K. M. Munshi
11.	Reason and Beyond Reason	Sri Aurobindo
12.	Erase the Ego	Sri Ramana Maharshi

Bhavan's Book University Publications are specially chosen with a view to impart cultural and educative value to their readers. Written by well known authors and savants these books have a special appeal to readers seeking to know our ancient culture and heritage apart from other aspects of life.

Books are obtainable from all leading booksellers, railway book-stalls and from BHARATIYA VIDYA BHAVAN, Chowpatty, Bombay-7.

Also at Bhavan's Branch Offices at :

2, Residency Road, Bangalore-1.
1/1, Meredith Street, Calcutta-13.
9/17, Satyamoorthi Road, Coimbatore-9.
Mehta Sadan, Curzon Road, New Delhi-1.
35-36, East Mada Street, Mylapore, Madras-4.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्षा और

विकास का काम

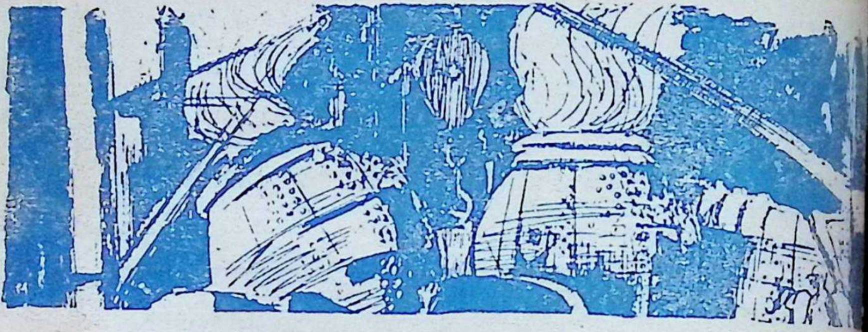

साथ साथ चलता है

देश-रक्षा के प्रयत्न में सीधा सहयोग देने के लिए इस्पात उद्योग ने उत्पादन बढ़ा दिया है तथा रोलि... के निर्माण-कार्यक्रमों में आवश्यक परिवर्तन कर दिया गया है। सेना के काम में आने वाली मोटर... का प्रतिमानीकरण हो गया है। इंजीनियरी उद्योग की क्षमता में भी वृद्धि की गई है। बिजली ... को चालू करने का काम तेजी से हो रहा है। संकट कालीन उपयोग के लिए जेनेरेटर सेटों का एक पृ... बनाया जा रहा है। रेलवे के वर्कशापों में से अधिकाधिक माल-डिब्बे बनकर निकल रहे हैं। अत्यंत ... की और अन्य सडकों को बेहतर व आधुनिक बनाया जा रहा है।

... प्राथमिकताओं से रक्षा-सामर्थ्य की सुदृढ़ नींव तैयार हो रही है।
इस ... में मन, वचन और कर्म से पूरा पूरा सहयोग दीजिए।

योजना को सफल बनाइये

भारत की रक्षा-व्यवस्था को सुदृढ़ कीजिए

डी-ए. ६३/४४४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती

२३ फरवरी १९६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब !
आप का मनपसंद
लोमा
ट्यूब

में भी मिलता है।
(पोमेड के रूप में)

● बर्बादी नहीं ● छलकता नहीं ● टूट-फूट नहीं

कम से कम चिकना होने के कारण
यह महिलाओं के लिए भी अच्छा है।

...स और निर्यातक :
एम. एम. खंभातवाला, अहमदाबाद-१.
एजेंट्स : सी. नरोत्तम एंड कं., बम्बई-२.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ८ : [illegible] २]

[२३ फरवरी १९६४

भारती

पुस्तकालय गुरुकुल काँगड़ी

स्थापक :
न्हैयालाल मुन्शी

न्य सम्पादक :
न्तकृष्ण ह. दवे

काशक :
. रामकृष्णन्

म्पादक :
रेन्द्रकुमार जैन

हयोगी :
ोराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
ामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० न.पै.
वार्षिक : ६.५० न.पै.
अर्धवार्षिक : ३.५० न.पै.

अथर्ववेद	: प्रार्थना	३
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	४
—	: नाम संकीर्तन	९
श्री अरविन्द	: श्री माँ के मूर्तिमान होने का उद्देश्य	१०
स्वामी श्री प्रभुलाल गणपतराम जोशी	: कैलास-धाम के महादेव पुकार उठे	१२
देवदत्त	: नयी सृष्टि के निर्माण में: २९ फरवरी का अभिप्राय	१४
धूमिल	: ओ अभीप्सित	१७
अमृता भारती द्वारा प्रस्तुत	अमर जर्मन कवि होल्डरलिन की सनातन सूर्योदयी काव्य-वाणी	१८
नलिनी कान्त गुप्त	: श्री अरविन्द के साथ अलीपुर जेल में	२४
सूरदास	: सुनहु वृषभानु किशोरी	३०
'तिलक'	: अंकुर, आकाश की [illegible] छुएंगे	[illegible]
रामचन्द्र 'चंद्रभूषण'	: दो वसन्त गीत	३३
श्री शिल्पी द्वारा प्रस्तुत	: अयोध्या	३४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी ८ मार्च के अंक में

- श्री माँ : मध्यस्था, सह-योगिनी, सृजनकारिणी : श्री अरविन्द
- आत्मा की कुँवारी ज्योतियों का आविष्कार: हर्मन हेस: डॉ. कामिनी कुमार बोस
- सनातन, फिर भी नित नूतन : दिलीपकुमार रॉय
- क्या प्रेम भी एक कला है ?: आन्द्रे मोरॉ
- एफ्रोदिती का गार्डेन: अमृता भारती
- आप भी सोना बना सकते हैं : रस-शास्त्र का पूर्व ज्ञान : सी. डी. सोनवणे
- अजामिल (धर्म-कथा) : निरिंकचन

महर्षि टाल्स्टॉय : मृत्यु का कोई अस्तित्व नहीं
शंकरलाल मिश्र : दो कविताएँ
स्वामी रामदास : नाम संकीर्तन की महिमा
रामनारायण उपाध्याय : प्रश्न जब ... जाते हैं
अनाविल : होली और वसन्ती
महेन्द्रनाथ सिंह : मध्यकालीन राग चित्र
कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार
आयुर्वेदाचार्य पं. सुरेशचन्द्र चतुर्वेदी : आयुर्वेद में दिव्य औषधियाँ

इस अंक के सज्जाकार :
सर्वश्री कमलाक्ष शेनॉय, अमृता भारती ज्योतीन्द्र जैन, पवन कुमार

आवरण-चित्र :
श्री माँ

छायाकार :
प्रणव कुमार भट्टाचार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती
भवन की पत्रिका

आगामी विश्व विकास का सूचक :
जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

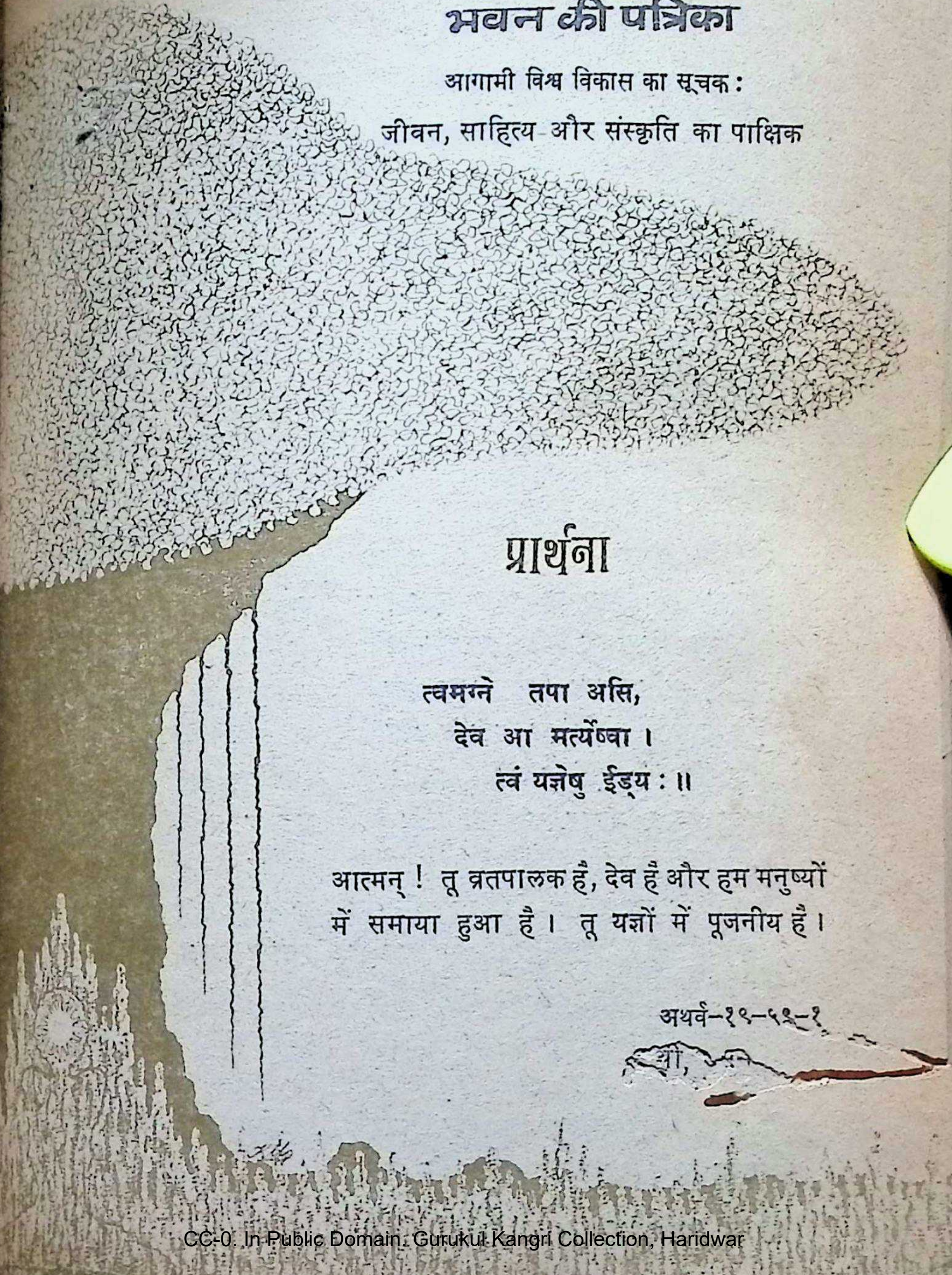

प्रार्थना

त्वमग्ने तपा असि,
देव आ मर्त्येष्वा ।
त्वं यज्ञेषु ईड्य : ।।

आत्मन् ! तू व्रतपालक है, देव है और हम मनुष्यों में समाया हुआ है । तू यज्ञों में पूजनीय है ।

अथर्व-१९-५९-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधि

- स्वाधीनता का आगमन
- विभाजन क्यों ?
- गान्धीजी ने क्रिप्स प्रस्ताव क्यों अस्वीकार कर दिया

भारतीय विद्या भवन
चौपाटी रोड, बंबई
२३ फरवरी १९६४

मेरे युवा मित्र,

बंग-भंग, सूरत में कांग्रेस में आपसी अनबन, जालियानवालाबाग हत्याकांड, देश का विभाजन और उसकी प्रतिक्रियाएँ, संविधान का रचा जाना इत्यादि ऐसी घटनाएँ हैं, जो इस पीढ़ी के लोगों के लिए तो ऐतिहासिक सी लगती हैं, परन्तु हमारे जीवन का अंग रही हैं। १९१४ से ही देश के बड़े-बड़े राजनीतिक नेताओं से सुपरिचित होने का सौभाग्य मुझे रहा है। १९१५ से १९२९ तक श्री जिन्ना के साथ मेरा सम्बंध काफी निकट का था; तथा १९२९ से उनकी मृत्यु [illegible]ात्मा गांधी और सरदार पटेल से तो और भी घनिष्ठ रहा। श्री जिन्ना के अगम्य दम्भ और गांधीजी के महान आदर्शवाद में आकाश-पाताल का अं[illegible] था, फिर भी उन दोनों में एक समान[illegible] थी—दोनों में से एक भी तब तक सन्तु[illegible] नहीं होता था, जब तक कि वह परिस्थि[illegible] पर अपना अधिकार नहीं जमा ले[illegible] इसीलिए दोनों का साथ काम क[illegible] असंभव था; और देश की कोई भी रा[illegible]नीतिक प्रगति तब तक संभव नहीं [illegible] जब तक कि इन दोनों में समझौता न[illegible] इसीके परिणामस्वरूप भारत का विभा[illegible] हुआ, जिसे बचाने के लिए १९४१ में [illegible] कांग्रेस का त्याग किया और गांधी[illegible] के आशीर्वाद प्राप्त कर अखंड हिंदुस्[illegible] आन्दोलन का प्रारंभ किया। ००।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावी इतिहासकार शायद हमारी पीढ़ी के राजनीतिक नेताओं को विभाजन के लिए उत्तरदायी ठहरायेंगे। वे शायद यह भी जानना चाहेंगे कि विभाजन को स्वीकार क्यों किया गया। परन्तु जो परिस्थिति उस समय थी, उसको देखते हुए और कोई चारा भी नहीं था। १९४१ में, जैसा कि मैंने बताया, कांग्रेस को छोड़कर मैंने अखंड हिन्दुस्थान की आवाज़ बुलंद की। विभाजन होना जब अवश्यंभावी दीख पड़ा, तो उसके लिए मैं रोया-चिल्लाया भी। एकबार गांधीजी ने कहा था कि विभाजन मेरी लाश पर ही हो सकता है। सरदार पटेल भी इसके सख्त खिलाफ़ थे। इस स्थिति का विवरण मैंने अपने मित्र को लिखे गये एक पत्र में इस प्रकार दिया था:

"शायद १९४७ में सरदार पटेल और मैं नयी दिल्ली में जी. डी. बिरला के अतिथि थे। सरदार जब कभी प्रसन्न-मुद्रा में रहते तब घूमने जाने के समय मुझसे अपने मन की बात कहते थे। एक दिन वे मुझे बातचीत के दौरान में चिढ़ाने लगे, 'क्यों अखंड हिन्दुस्थानी, अब हम लोग भारत का विभाजन करने जा रहे हैं!' उस समय हम किसी कांफ्रेंस से लौटे थे। स्वभावतः मुझे यह सुनकर आघात पहुँचा, क्योंकि सरदार विभाजन के सदा से पक्ष में नहीं थे और इस बात के लिए राजाजी की बुरी तरह आलोचना भी करते थे। अब वे ही मुझे इसके पक्ष में यह दलील देने लगे कि अहिंसक होने के नाते कांग्रेस विभाजन का विरोध इसलिए नहीं कर सकती कि विरोध का अर्थ होगा कांग्रेस का अंत तथा जगह-जगह पर क्रूर हिंसा के साथ मुस्लिम लीग से दीर्घ-कालीन संघर्ष, जिसमें ब्रिटिश सरकार अपनी पुलिस और फौज के साथ देश पर अधिकार जमाये बैठी रहेगी। उनका दूसरा तर्क था कि यदि विभाजन को अस्वीकार किया गया, तो शहरों में, और कुछ गाँव के क्षेत्रों में भी मज़हबी झगड़े बहुत दिनों तक होते रहेंगे और फौज़ तथा पुलिस में भी साम्प्रदायिक भावनाएँ घर कर जायेंगी। ऐसी संघर्षावस्था में अधिक बिखरे और कम कट्टर होने के कारण हिन्दू कमज़ोर पड़ जायेंगे।

"इसके विपरीत सुगठित सरकारों के रूप में जो समझौता होगा, वह देश भर में फैली दो जातियों के बीच हुए किसी समझौते से अधिक लाभप्रद होगा। हिन्दू-मुल्लिम दंगों का मुझे कड़वा अनुभव था—ब्रिटिश अफ़सर मुसलमानों का पक्ष लेते थे और हिन्दू सदा घाटे में रहते थे। उदयपुर सेना की जो जानकारी मुझे थी, उसने भी मुझे इस बात में कोई शंका नहीं रह गयी थी कि देशी राजाओं की फौजें भी अपने राज्य में साम्प्रदायिक दंगे रोक नहीं सकेंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सरदार के साथ हुई यह बातचीत मुझे अच्छी तरह याद है, क्योंकि उसने कई दिनों तक मेरी नींद हराम कर दी थी। परन्तु अन्त में, एक दो बार और उनसे बात करने के बाद, मुझे उनका दूसरा तर्क अकाट्य जान पड़ा। सरदार की सूझ की मुझे तब भी दाद देनी पड़ी, जब मैंने देखा कि यदि विभाजन नहीं होता, तो संविधान सभा बेकार सिद्ध होती, क्योंकि यदि साम्प्रदायिक चालें वहाँ भी चली जातीं, तो उसका सफल होना संभव नहीं था। हमें इस बारे में सतर्क रहना था कि 'केबिनेट मिशन प्लान' करोड़ों हिन्दुओं को मुस्लिम शासन में न ले आये। विधान सभा के नियमों की रचना करते समय भी मुझे इस विषय में सचेष्ट रहना पड़ा था कि अधिकांश महत्त्वपूर्ण मामले क्षेत्रीय काउंसिलों के बजाय जनरल असेम्बली के समक्ष आयें, ताकि निर्णय बहुमत से ही लिया जा सके। और, जब मुस्लिम लीग ने विधान सभा में आने से इन्कार कर दिया, तो हमने चैन की सांस ली–इसकी चर्चा मैंने असेम्बली में भी अपने भाषण में की।"

१४ जुलाई १९४७ को विधान सभा में बहस के बीच मैंने कहा :–

"१६ मई की योजना पर बार-बार विचार करने पर मुझे ऐसा लगा कि इसकी तुलना रोम की प्राचीन न्यायव्यवस्था में रहे उस थैले से की जा सकती है, जिसमें किसी नृशंस अपराध करनेवाले को बंदर, एक सांप और एक मुर्गे के बंद कर दिया जाता था और वह टाइबर में डाल दिया जाता था। इस यो के अन्तर्गत हम अल्पसंख्यक वर्ग को मुक्त होने के लिए संघर्ष करते, योजना कुछ खंडों को हमारी प्राणशक्ति को नष्ट करते और इसकी डबल मेजोरि धारा को हमारे अस्तित्व को विषा बनाते देख सकते हैं। अन्य सदस्य जो सोचें, परन्तु मेरा तो यही ख़याल है भगवान की कृपा से हम उस थैले बच गये थे। अब उस योजना की न कोई पेचीदी धाराएँ और खंड हमें परेशा करने को रह गये हैं; न डबल मेजोरि धारा है, न शेष अधिकारोंवाले प्रांत न उन्हें विलग रहने का अधिकार है, न साल बाद पुनर्विचार की आवश्यकता गयी है और न केन्द्र को केवल चार प्रक की ही सत्ता मिल सकेगी। यद्यपि हमा सीमाओं का विस्तार कम हुआ है–आ ऐसा कुछ समय के लिए ही होगा–फिर आज हमारा देश एक है और हम स्वतंत्र तथा शक्ति के अपने प्रिय ध्येय की नि:संकोच बढ़ सकेंगे। इसीलिए जो सभा को दी गयी थी, उसमें संशो करना पड़ा।"

विभाजन के बिना भारतीय संघरा संभव नहीं होता, न केन्द्र में एक सर्वश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मान सरकार की स्थापना हो सकती थी और जो प्रगति पिछले तेरह साल में हुई है, वह कभी नहीं हो सकती थी। किन शक्तियों के परिणामस्वरूप विभाजन और उसके बाद जनसंख्या का क्रूर परिवर्तन हुआ, यह इतिहासकारों के शोध का विषय है। इनका अध्ययन उद्वेगरहित और भविष्य के लिए पाठ्य-स्वरूप स्पष्ट होना चाहिए। इससे हमारे भावी राजनीतिज्ञों को यह जानकारी मिल सकती है कि उन्हें क्या करना और क्या न करना चाहिए, ताकि भारत संगठित बना रहे। आगामी पीढ़ियों के लिए यही एकता हमारी सबसे बड़ी देन होगी।

हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि १८६१ –१९४७ के बीच, अर्थात् अंग्रेजों के प्रभुत्व काल में ही भारतीय समाज प्राचीन परम्परा की दासता से मुक्त होकर आधुनिक युगों में आया, यद्यपि बौद्धिक रूप से इसके पहले भी सुधार की प्रक्रिया प्रारम्भ हो चुकी थी। आज जो भी हमारे राष्ट्रीय जीवन में सामान्य बात बन गयी है, उसका प्रादुर्भाव इसी काल में हुआ। इसी काल में भारतीय और विदेशी इतिहासकारों ने हमें हमारे गौरवपूर्ण अतीत से परिचित कराया और भारतीय राष्ट्रवाद को आवश्यक पृष्ठभूमि दी। यह एक रोचक तथ्य है कि देश के बड़े-बड़े नेताओं का जन्म इसी काल में हुआ। रवीन्द्रनाथ टैगोर और मोतीलाल नेहरू १८६१ में पैदा हुए, स्वामी विवेकानन्द १८६३ में, लाला लाजपतराय १८६५ में, गोपालकृष्ण गोखले १८६६ में, महात्मा गांधी १८६९ में, सी. आर. दास १८७० में और अरविन्द १८७२ में, जो राजा राममोहन राय के जन्म का सौवाँ वर्ष था।

राजनीतिज्ञों में मोतीलाल नेहरू, गांधीजी, सी. आर. दास और श्री अरविन्द प्रारम्भ में अपने समय के प्रचलन के अनुसार पश्चिमी रंग में रंगे भारतीयों की तरह रहते थे। कुछ ने तो अपने यौवन के प्रारम्भिक वर्ष विदेशों में बिताये थे, क्योंकि उनके पहले की पीढ़ी एक ऐसे वातावरण में पली थी, जिससे प्रकट होता था कि हमारे राष्ट्र का उद्धार यूरोपियन जीवन पद्धति को अपनाने से ही होगा। राजा राममोहनराय और उनके अंग्रेज मित्रों से यही परिपाटी चली आ रही थी।

इस विचारधारा को धक्का तब लगा, जबकि १८७४ में सुरेन्द्रनाथ बनर्जी को बाध्य होकर इंडियन सिविल सर्विस से इस्तीफा देना पड़ा। हमारे इतिहास की यह अविस्मरणीय घटना है। राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रारम्भिक काल का विचार अब तो सुरेन्द्रनाथ के बिना किया ही नहीं जा सकता। इसके कुछ समय बाद हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इलबर्ट बिल आन्दोलन ने तो अंग्रेजों के इस दावे का खोखलापन भी सिद्ध कर दिया कि वे भारतीयों के साथ बराबरी का व्यवहार करते हैं। इस आन्दोलन के फलस्वरूप ही कांग्रेस का संघटन हुआ। भारतीयों का यह संगठन ब्रिटिश शासन के विरुद्ध इतना नहीं था, जितना कि अंगरेज अफ़सरों के अभद्र व्यवहार के प्रति। इसका परिणाम यह हुआ कि पश्चिम से प्रभावित भारतीय भी निराश होकर विशुद्ध भारतीय दृष्टिकोण से देखने लगे।

कुछ लोग कांग्रेस के प्रारम्भिक युग के नेताओं की यह आलोचना करते हैं कि वे बहुत नरम थे; परन्तु यह आलोचना ीक नहीं। इन नेताओं की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि इस प्रायद्वीप के भिन्न-भिन्न तत्त्वों को उन्होंने एक राष्ट्र का रूप दिया। इसके लिए उन्होंने अपनी व्यक्तिगत हानि और संभाव्य संकट की परवाह न कर, जनता के राजनीतिक लक्ष्यों को मुखरित करने के लिए एक अखिल भारतवर्षीय संगठन को जन्म दिया और उसे सशक्त बनाया। इन दोनों ही कामों में वे अत्यन्त सफल रहे। यदि एक भारतवर्षीय संगठन तीस साल से कार्यरत न रहता, तो गांधीजी का कोई भी महान आन्दोलन सफल नहीं हो सकता था, न सरदार पटेल के चमत्कारपूर्ण निर्देशन में जो अभूतपूर्व राजनीतिक सफलता मिली, वह ही संभव थी।

गांधीजी और सरदार के साथ, काफी नज़दीक रह कर काम किया फिर भी दो महत्वपूर्ण मामलों में मेरा मतभेद हुए बिना नहीं रहा: प्रथम, १९ में कांग्रेसी मंत्रिमंडलों का इस्तीफा द्वितीय, क्रिप्स प्रस्ताव का अस्वीकार कि जाना।

१९३९ में कांग्रेस के मंत्रिमंडलों त्यागपत्र दिये जाने का कारण अंग्रे शासन के प्रति कांग्रेस तथा देश के जन साधारण के मन में चला आ रहा दीर्घकाली अविश्वास ही था। त्यागपत्र दिये जा के कुछ समय पूर्व गांधीजी से मैंने कहा कि पदत्याग करना महान भूल हो और द्वितीय विश्वयुद्ध में भाग लेना हमारी ही स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ के समान होगा, तो उन्होंने उत्तर दिया त्यागपत्र देने के अतिरिक्त और को मार्ग देश को स्वीकार नहीं होगा।

क्रिप्स प्रस्ताव के ठुकराये जाने दायित्व अकेले गांधीजी पर ही था इसके पीछे उनका क्या उद्देश्य था जानना सागर की अतल गहराइयों मापना होगा। उन्हें समझना आसान न था। यह सही है कि गांधीजी को अंग्रेजों

[शेष पृष्ठ ६० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फागुन के दिन चार रे,
होरी खेल मना रे।
बिन करताल पखावज बाजे,
अणहद की झंकार रे॥
बिन सुर राग छतीसूं गावे
रोम रोम रंग सार रे
सील सन्तोष का केसर घोला,
प्रेम प्रीति पिचकार रे॥
उड़त गुलाल लाल भयो अंबर,
बरसत रंग अपार रे
घट के पट सब खोल दिये हैं,
लोक लाज सब डार रे॥
होरि खेलि पीच घर आये,
सोइ प्यारी प्रिय प्यार रे
मीरा के प्रभु गिरधर नागर,
चरण कँवल बलिहारि रे॥

—मीरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

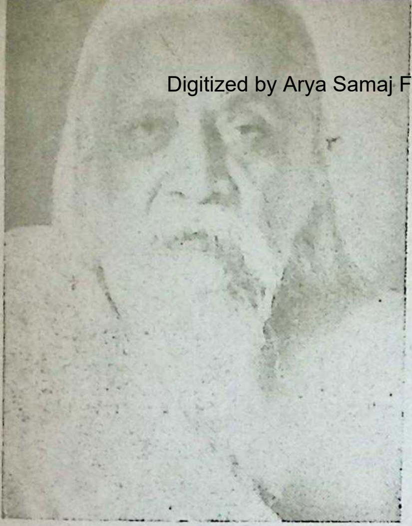

श्री माँ के मूर्तिम…ने

श्री माँ का मूर्तिमान होना, पृथ्वी की चेतना के लिए अपने अन्दर अतिमानस को ग्रहण करने तथा उसे सम्भव बनाने के लिए पहले जो रूपान्तर ज़रूरी है, उसे प्राप्त करने का एक सुयोग है। पीछे चलकर अतिमानस के द्वारा और भी रूपान्तर साधित होगा, परन्तु समूची पार्थिव चेतना अतिमानस भावपन्न नहीं हो जायगी– सबसे पहले एक नयी जाति उत्पन्न होगी, जो अतिमानस को प्रकट करेगी, जैसे कि मनुष्य मन को अभिव्यक्त करता है।

केवल एक ही दिव्यशक्ति है, जो विश्व में भी कार्य करती है और व्यक्तियों में भी, और फिर जो व्यक्ति और विश्व के परे भी है। श्री माँ इन सब की प्रतिनिधि हैं, पर वह यहाँ शरीर में रहकर कुछ ऐसी चीज़ उतारने के लिए कार्य कर रही हैं, जो अभी तक इस स्थूल जगत में इस तरह अभिव्यक्ति नहीं हुई है कि यहाँ के जीवन को रूपान्तरित कर सके– अतः तुम्हें उनको इस उद्देश्य से यहाँ कार्य करनेवाली भागवती शक्ति समझना चाहिए। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

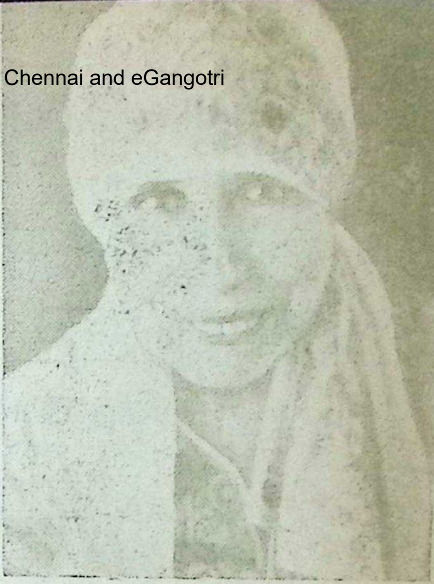

२१ फरवरी १९६४ के उपलक्ष्य ..

र्तिमाने का उद्देश्य

अपने शरीर में वही हैं, पर अपनी सम्पूर्ण चेतना में वह भगवान के सभी स्वरूपों के साथ अपना तादात्म्य बनाये हुई हैं।

विश्व को और विश्व के विधान को बनाये रखना विश्व-शक्ति का कार्य है। महत्तर रूपान्तर आता है, विश्वातीत परात्पर से और उसी परात्पर कृपा-शक्ति को कर्म में ले आने के लिए यहाँ श्री माँ का मूर्त्त स्वरूप विद्यमान है।

....अपने विश्व कार्य में श्री माँ वस्तुओं के नियम के अनुसार कार्य करती हैं— उनकी मूर्त्त भौतिक क्रिया निरन्तर कृपा-प्राप्ति का सुयोग प्रदान करती हैं—वास्तव में यही उनके शरीर-ग्रहण करने का उद्देश्य है।

★

—श्री अरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी श्री प्रभुलाल गणपतराम जोशी

कैलास-धाम के महादेव पुकार उठे

[एक अनुभव-कथा]

'क्या महादेव एक नहीं, दो हैं, अनेक हैं, और क्या तुम्हारी पूजा आराधना, या पसंद-नापसंद से ही वे विचारे अनेक महादेव घटिया-बढ़िया हो जाते हैं ?'...

तीस-पैंतीस वर्ष पहले की बात है। तब मेरी उम्र कोई पच्चीस वर्ष की रही होगी। अब मैं कोई पूजा-पाठ नहीं करता: वैसी आवश्यकता नहीं रह गयी है। पर, तब मैं पूजा-पाठ, कर्म-काण्ड द्वारा ही भगवान की उपासना करता था। तब मैं केवल मनुष्यों में ही भेद नहीं देखता था, भगवान को भी अनेक भेदों मृं विभाजित करके देखता था। शंकर, विष्णु, राम, कृष्ण, दुर्गा, पार्वती, लक्ष्मी, सरस्वती आदि जितने भी देवी-देवता के नाम और स्वरूप हम सुनते-जानते हैं, उन सबको मैं एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न करके देखता था। हर देवी या देवता के प्रति मेरी निष्ठा और पूजा में भी भेद-भाव हुआ करता था। इतना ही नहीं, एक मन्दिर विशेष के महादेव, मेरे लिए दूसरे मन्दिर के महादेव से कुछ अधिक महत्व के अधिकारी थे।

चित्र: अमृता भारती

उन्हीं दिनों की एक घटना आज याद आ रही है। हमारे चाँदोद में, नर्मदा-तट की देव-रम्य अरण्यानी से घिरा एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैलास-धाम है। इस कैलास-तीर्थ में शता-ब्दियों पुराने, महादेव के सैकड़ों भव्य-दिव्य मन्दिर हैं; एक ही विशाल-वन-प्रांगण में अनगिनत देवालयों का यह वन देख कर, ऐसा लगता है, मानों कि यह मनुष्य कृत नहीं, कोई देवोपनीत रचना हो। पर, वर्षों से ये सारे मन्दिर निर्जन, अप्रवेशित, अपूजित पड़े थे। कोई उनमें झांकता तक नहीं था। इसी कैलास-धाम के पर पार एक कुबेरेश्वर महादेव का मन्दिर है। कैलास के अन्य सारे महादेवों को भूल कर भक्तों की श्रद्धा केवल कुबेरेश्वर पर ही केन्द्रित हो गयी। अपरम्पार वैभव ऐश्वर्य के बीच विराजमान थे, कुबेरेश्वर। चाँदोद की तीर्थ-यात्रा पर आने वाले सारे ही राजे-महाराजे, सेठ-साहूकारों की श्रेष्ठ सम्पदा कुबेरेश्वर की पूजा में अर्पित होती थी। फूलों के कल्प-कानन उन पर झरते थे; धूप-दीप, इत्र-फुलेल से सुवासित, आलोकित उनके पूजा-गृह में सुवर्ण, रौप्य और रत्नों की राशियाँ बरसती थीं। सारे ही यात्री कैलास-धाम के अन्य सारे महादेवों की सहज उपेक्षा करके सीधे कुबेरेश्वर के दरबार की ओर दौड़े चले जाते थे। वहाँ प्रातःकाल ही शहनाइयाँ और नक्काड़े गूंजते, शंखनाद और घंटारव से दिशाएँ बहरी हो जातीं। तब अन्य महादेवों के मन्दिर सन्नाटा खींचे चुपचाप पड़े रहते थे।

उन दिनों मैं भी नियम से, हर प्रातःकाल नहा-धोकर कुबेरेश्वर की पूजा करने जाया करता था। मेरे मन में भी सहज ही यही धारणा थी, कि कैलास के अन्य महादेवों में कुबेरेश्वर ही सर्वाधिक सत्य और श्रेष्ठ हैं।

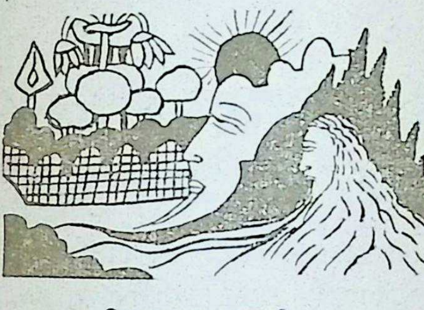

चित्र : अमृता भारती

नियमानुसार ऐसे ही एक सवेरे जब मैं कैलास-धाम के शिवालयों को पार करता कुबेरेश्वर की पूजा करने जा रहा था कि अचानक ही एक सूने शिवालय में से एक महादेव ने मुझे पुकार कर कहा:

'क्यों रे भाई, हर दिन हमारी उपेक्षा कर, कुबेरेश्वर की ओर ही दौड़ते हो, सो पूछते हैं, कि वे महादेव कोई विशेष हैं, और हम कुछ घटिया हैं क्या? क्या महादेव एक नहीं, ो हैं, अनेक हैं, और क्या तुम्हारी पूजा-आराधना, या पसन्द-नापसन्द से ही वे बेचारे अनेक महादेव घटिया-बढ़िया हो जाते हैं?...कैलास-

(शेष पृष्ठ ६१ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्य के प्रति निरन्तर जागरूकता
निरन्तरता की प्यास ने मानव को
चैन नहीं लेने दिया, और ऊपर से
वाली सत्ता ने २९ फरवरी १९२
सामूहिक ध्यान के समय (श्री अर
आश्रम में) अपने अवतरण का समय

देवदत्त

नयी सृष्टि के निर्माण में: २९ फरवरी का अभिप्राय

धरती पर आनेवाला प्रत्येक अवतार पहले एक सपना होता है। लोग उसके आगमन की प्रतीक्षा करते रहते हैं और उसके आने पर उसके अस्तित्व में विश्वास करने से इनकार कर देते हैं। उसके संदेशों की पोथी फूल-अक्षत से अर्चित होकर पाण्डित्य के वेष्ठनों में बाँध दी जाती है और चल पड़ता है, जरा-मरण का अविराम प्रवाह।

साधुओं और संतों ने इसे देखा, कुछ नाराज़गी से। उन्होंने सारी दुनिया को ही कुत्ते की पूंछ मान लिया और उसके सीधी करने की कल्पना छोड़ कर पर्वतों, घाटियों, तीर्थों में रम
पश्चिम में बना कड़े आचार-वि
वाला पुरोहित संप्रदाय, पूर्व में
गिरि, अरण्य, सरस्वती तीर्थ आदि द
मी सन्यासी। चीवर धारी भिक्षु
मुनि। और केवल दक्षिणा के बल
कृपा प्राप्त करने वाला जन समाज!

और इन्हीं के बीच श्री अरविन्द
श्री माँ का उदय हुआ। उन्होंने ह
वर्ष की आर्षवाणियों को पुनः उन्मुक्त
और बताया कि जिस भागवत राज
कल्पना प्राचीन ऋषि-मुनि करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ं, उसके अवतरण का समय अब आ गया है। मगर इस मार्ग की सबसे बड़ी बाधा है मानव की प्रकृति। उसकी वस्तुओं को इन्द्रियों से अनुभूत करके ग्रहण करने-वाली ज्ञान चेतना, अपनी छोटी सीमा की लहरियों को ही सागर समझने वाला प्राण, पशुओं से विरासत में पायी गयी; पर उन्हीं की विकसित रचना प्रणाली पर आधृत देह।

श्री अरविन्द और माताजी मानव की इस दशा से उसे मुक्ति पाने के लिए सचेतन बनाने के लिए आये। श्री अरविन्द ने सर्वप्रथम मन के ऊपर के लोकों, यानी उच्चतर मनस, आलोकित मनस, संबोधि मनस और अधि-मानस तक को २४ नवम्बर १९२६ तक धरती पर उतार कर अतिमानसिक अवत-रण के लिए प्रयत्न ील होने के लिए एकान्त में चले गये। अतिमानस के धरती पर अवतरण का अर्थ है, एक नयी देह रचना, नयी मानसिक विधि और प्राण चेतना से समन्वित भागवत पुरुष का उदय। श्री माँ ने अपने १९३० के अनुभव में लिखा है।

जब मैं पाण्डिचेरी में श्री अरविन्द से पहले पहल (२९ मार्च १९१४) मिली, तब मैं गहरे ध्यान में रहा करती थी, अतिमानस के अन्दर ''..उन वस्तुओं को देखा करती थी, जिन्हें उत्पन्न तो होना था, पर किसी कारण से अभिव्यक्त नहीं होती थीं। जो कुछ मैंने देखा था, उसे श्री अरविन्द को बताया और पूछा कि क्या वे अभिव्यक्त होंगी। उन्होंने सहज यही कहा कि हाँ। और तुरन्त मैंने देखा कि अतिमा-नस ने पृथ्वी को छू लिया है और उसने यहाँ संसिद्ध होना आरम्भ कर दिया है।''

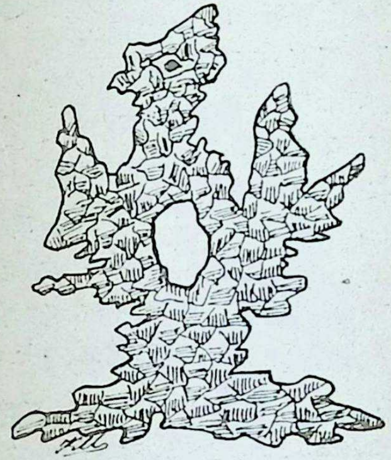

चित्र : कमलाक्ष शेनॉय

पर किसी भी चेतना के अवतरण के अर्थ यह नहीं कि रातों-रात सड़क पर अतिमानसिक जीव दिखायी देने लगेंगे। जब एक विकसित शरीर में मन के उतरने में इतने हजार वर्ष लगे, तो एक नयी देह, नये प्राण की रचना उस समय और भी मुश्किल हो उठती है, जबकि प्रकृति के सहयोग से ही सारे कार्य को करने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयास किया जाय। इसी कार्य के लिए श्री अरविन्द को शरीर छोड़ कर पीछे जाने की आवश्यकता महसूस हुई थी और देह त्याग के उपरान्त माताजी के यह कहने पर कि आप फिर शरीर में वापस आ जायें, उन्होंने स्पष्ट रूप से उत्तर दिया था :– "मैंने जान-बूझ कर यह शरीर छोड़ा है। मैं फिर अतिमानसिक ढंग से रचित प्रथम अतिमानसिक शरीर में प्रगट होऊँगा।"

स्पष्ट है कि अतिमानस के अवतरण या शरीर के रूपान्तर का प्रयास भूत-काल में नहीं किया गया था। पर जब प्रयास प्रारम्भ हो गया तो जारी रहा। स्थूल जगत में होने वाली घटनाओं के पीछे सूक्ष्म शक्तियों के हाथ किसने देखे हैं। किसी नये जगत के प्रगट होने की घोषणा समाचार पत्रों में विज्ञापन देकर या डंका पीट कर तो नहीं की जा सकती, पर श्री अरविन्द के महाप्रयाण और माताजी की उपस्थिति ने अगम और अपार के साथ जगती का शाश्वत पुल तैयार कर दिया था। सत्य के प्रति निरन्तर जाग-रूकता और निरन्तरता की प्यास ने मानव को कभी चैन नहीं लेने दिया और ऊपर से उतरने वाली सत्ता ने २९ फरवरी १९२६ को सामूहिक ध्यान के समय (श्री अरविन्द आश्रम में) अपने अवतरण का समय चुना। उस ध्यान का वर्णन करते माताजी ने संदेश दिया था।

उस दिन शाम को भगवान की ठोस और भौतिक रूप में तुम लोगों के विद्यमान थी। मेरा आकार जीवन्त से गठित था और समूचे विश्व से भी था। मैं सोने के एक बहुत बड़े और भारी भरकम फाटक के सामने उपस्थित थी, जगत को भगवान से पृथक कर रहा था।

ज्योहीं मेरी दृष्टि उस फाटक पर चेतना की महज एक ही क्रिया द्वारा जान लिया और मन में ठान लिया "समय हो गया है" और दोनों हाथों सोने का एक बहुत बड़ा हथौड़ा उठा फाटक के ऊपर एक चोट केवल एक चोट की और फाटक चूर-चूर हो गया।

फिर तो अतिमानसिक ज्योति, शक्ति और चेतना एक अविरल धारा में पृथ्वी के ऊपर ज़ोरों से उतरने लगी।"

और इसी अवतरण के प्रतीक स्वरूप २९ फरवरी अध्यात्म साधकों के है। २४ नवम्बर १९२६ को उतरी अधिमानसिक चेतना और २९ फरवरी को उतरी अतिमानसिक चेतना। कारण माँ ने इस दिन को स्वर्णिम दिन की संज्ञा दी और कहा था कि अब से दिन भागवत दिवस हो गया।

पर आज हमारे समक्ष नगण्य मानव

[शेष पृष्ठ ६३ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धूमिल

ओ अभीप्सित

मैं हथेली पर
उगाना चाहता हूँ हरी घाटी
किंतु इस पर
बाल भी उगता नहीं;
केवल दिगंतों को मिलाती
एक रेखा
तीव्र गति से चीरती मुझको
अपरिचित, अनदिखे आकार में—
हूँ डूब जाती।
और संयोजन बिखर कर
टूट जाता
जिसे हमने मुट्ठियों के आयतन में
बाँध रक्खा था।
मैं अकेला......
आह परिणति : यह विजनता
रेडियम के अक्षरों सी
खिलखिलाती।
ओ अभीप्सित !
और भी कितने चरण हैं शेष—
इस संवेदना के
जो कि ले प्रतिरूप मेरा
स्वयं मुझको तोड़ जाती।
ओ अभीप्सित !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र: अमृता भारती

यदि दूर-दूर के आकाशों से सितारे समान तुम्हारी आस्था नहीं लौटती तो तुम्हें नष्ट होना ही पड़ेगा, क्यों तुमने सारी महानताओं में अपना विश्वा खो दिया है।

अमृता भारती द्वारा प्रस्तुत

अमर जर्मन कवि होल्डरलिन की सनातन सूर्योदयी काव्य-वाणी

इस बीच में बहुत समय गुज़रा जब फ्रेडरिक होल्डरलिन का कृतित्व विस्मृति में छोड़ दिया गया था और अब उनका नाम उस विस्मरण के अंधकार से मुक्त हो पाया है। यह इस शताब्दी के प्रारम्भ में ही हुआ, जब होल्डरलिन को उनके देश में फिर से जाना गया; लेकिन एक बहुत ही अजब और अचरजभरी बात तो यह है कि अंग्रेजी भाषी देशों में पिछले महायुद्ध के बीच में 'होल्डरलिन' नाम अत्यंन्त प्रिय और परिचित हो गया था। यह एक विस्मयकारी और आश्चर्यजनक घटना थी, जब १९४३ में होल्डरलिन की मृत्यु शतवार्षिकी के अवसर पर अंग्रेजी अनुवादों में उनकी कविताओं के तीन संग्रह, परिचयात्मक निबन्धों के साथ पकाशित हुए थे : "माइकेल हेमबर्गर पोयम्स ऑफ होल्डरलिन" ; "फ्रेडरि

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रोक्श'स सलेक्शन अॅव एटीन पोयम्स'' ; जे. बी. लीशमैन'स फ्रेडरिक होल्डरलिन: सलेक्टेड पोयम्स'' आदि।

इसके बाद ऐसा महसूस किया जाने लगा कि बायोग्राफर के लिए किसी भी कवि की कथा इतनी प्रलोभनीय और मर्मस्पर्शी नहीं हो सकती, जितनी होल्डरलिन की। इस प्रसंग में उस कथा को कहना संगत न होगा, फिर भी फ्रेडरिक होल्डरलिन की कविताओं के अनुवाद के सम्बन्ध में फ्रेडरिक प्रोक्श का जो परिचयात्मक नोट है, उसमें से कुछ अंश उद्धृत किया जा सकता है।

"फ्रेडरिक होल्डरलिन का जन्म वुरटेमबर्ग में १७७० ई. में हुआ था। अपनी युवावस्था में उन्होंने थियोलॉजी के सेमीनारों में भाग लिया और तेईस वर्ष की उम्र तक टुबीनगेन में अध्ययन करते रहे। इसके बाद नौ वर्ष तक वे जर्मनी और स्विट्ज़रलॅण्ड के विभिन्न भागों में शिक्षक का काम करते रहे। इसके बाद १८०१ में उन्होंने आवेरग्ने और बोरडियक्स के पहाड़ों की यात्रा एक परिवार में ट्यूटर हो जाने की हैसियत से की। छः महीने बाद ही अत्यन्त नाजुक मानसिक स्थिति लेकर वे पैदल अपने घर लौट आये। इसके बाद छत्तीस साल तक हानिरहित लेकिन आशारहित पागलपन की स्थिति में उन्होंने समय बिताया। निरानन्द, खोखला और एकाकी जीवन बिताने के बाद १८४३ में ७३ वर्ष की आयु में उनकी मृत्यु हो गयी।

होल्डरलिन की महानतम कविताएँ तेईस और तीस तक की अवस्था में लिखी गयीं। चालीस वर्ष तक की अन्धकारपूर्ण स्थिति में उन्होंने कुछ गीत लिखे,

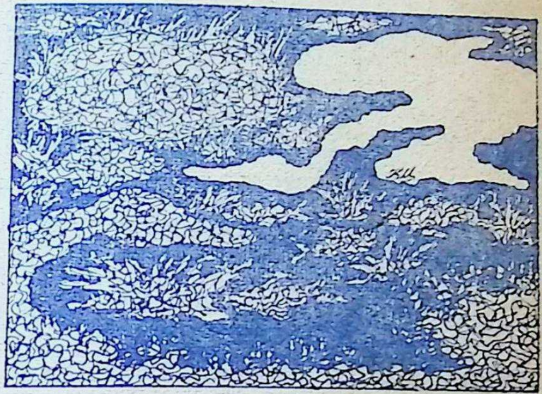

चित्र : कमलाक्ष शेनॉय

जिन पर वे कभी स्कैलिगर रोज़ा के नाम से तो कभी स्कारडैनेली के नाम से हस्ताक्षर कर देते थे।

"होल्डरलिन का कृतित्व अपनी आश्चर्यजनक महाकाव्यात्मक शुद्धता की दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है, उसके तल में असाधारण प्रतिभा और गहरी संस्कृति की छाप है, जो कवि की प्रकृति-पूजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और हेलेस के प्रति उसके प्रेम ने ज़्यादा अन्तर्भेदक, अधिक अंगीकृत और अत्यन्त ध्वन्यात्मक बनाती है। ललित कला के प्रेम और आकस्मिक प्रभाव के स्पर्श से उनकी शैली रक्षित है। उनका शब्दकोश सादा और विशाल है। होल्डरलिन की महानतम कविताओं में कल्पना-शक्ति की एकरूपता के साथ जिस नियमबद्ध संयमिति का परिचय मिलता है, आधुनिक युग में उसका जोड़ नहीं है।"

जब हम होल्डरलिन की कविताओं का एक नया ही रूपान्तर प्रस्तुत कर रहे हैं, तब उसके बारे में कहना भी आवश्यक है।

बहुत से लोग यह विश्वास करते हैं कि कविता का अनुवाद असंभव है, और इस प्रसंग में वे बड़े-बड़े विद्वानों के विचार उद्धृत करते हैं। सॅमुएल जोनसन ने कहा है: "वस्तुत: कविता का अनुवाद नहीं किया जा सकता; और केवल कवि ही भाषा को जीवित रखते हैं।" यह असंभावना इसलिए दिखायी देती है, क्योंकि किसी भी भाषा के हर एक महत्त्वपूर्ण शब्द में एक धुंधला और अस्पष्ट अर्थ छिपा रहता है। ये गुप्त और अन्तर्भूत अर्थ हमारी चेतना में नहीं भी आते, 'लेकिन एक कवि में वे सदा सुप्त रहते हैं, उनको ढूंढना और समझना किसी भी अनुवादक के लिए अत्यन्त कठिन हो सकता है। कविता के अनुवाद के सम्बन्ध में दूसरा प्रश्न यह भी उठता है कि कविता की भाँति ही क्या अनुवाद क[illegible] वालों ने भी उस विज़न की प्रतीति [illegible] है, जिसको कवि ने देखा था!

उन सब व्यक्तियों के लिए, जि[illegible] निकट होल्डरलिन केवल एक नाम [illegible] नहीं है कुछ और भी है, यह स्पष्ट [illegible] जायगा कि ये समस्याएँ कहाँ तक सा[illegible] आती हैं। होल्डरलिन के प्रति हमा[illegible] दिलचस्पी लीनता की स्थिति तक पहुँच[illegible] है और हम जानते हैं कि अपने महान[illegible] क्षणों में वह चोटी के कवियों में से एक था[illegible] उनकी कुछ कविताएँ: 'ऐन डी पारज़े[illegible]' 'एबेण्ड .फेन्टेसी', 'डी हीमट', 'लेबेनस्ला[illegible]' 'हाल्फरी डेस लेबेन्स', 'ब्रोट उण्ड वी[illegible]' आदि असाधारण और अतुलनीय है[illegible] कवि की इस परिपूर्णता पर कुछ समय त[illegible] सभी समीक्षाएँ एकमत रही हैं।

यहाँ जो कविताएँ प्रस्तुत की जा र[illegible] हैं– वे होल्डरलिन के बारे में स[illegible] आप से कहेंगी।–

कालान्तर

कैशोर्य के उन दिनों में मैं भर जाता था
सुबह की ख़ुशियों से,
किन्तु शामों में रुदन ही रुदन था;
अब, जबकि मैं बूढ़ा हूँ
हर दिन उगता है
शंकाओं से आच्छन्न, तो भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसकी सन्ध्याएँ पावन हैं, शान्त हैं
और हैं प्रसन्न।

●

जन-स्तुति

क्या अब नहीं है मेरा मन पावन,
क्या नहीं हो गया है ज़्यादा दीप्तिमान्
मेरा जीवन
जबसे मैंने किया है प्रेम?
तब क्यों तुमने दिया था मुझको
ज़्यादा सम्मान
जब मैं कोरे शब्दों को जाया करता था
दम्भी था
और था बहुत ही बे-आराम?
ओह, लोग पसन्द करते हैं वह सब
जिसका बाज़ार में हो सके मूल्यांकन,
जो उस पर करता है अत्याचार
ग़ुलाम बस उसी का करता है पूजन;
केवल वे, जो स्वयं दिव्य हैं,
करते हैं सदा
ईश्वरत्व में विश्वास।

●

कमी

क्यों तुम इतने क्षणिक हो गये हो?
जिन गीतों से तुम्हें था इतना प्यार
एक बार
क्या अब उनसे
नहीं रह गया है और प्रेम?
जब तुम युवा थे
और गाया करते थे
तब आशा के उन दिनों में
क्या कभी तुमने पाया था
कोई ओर छोर, या
कोई अंत?
वैसा ही है मेरा गीत
जैसा था वह परम आनन्द।
आह, क्या अब भी तुम नहाओगे
डूबते सूरज की सुनहरी किरणों में?
सन्ध्या चली गयी है
धरती ठण्डी है
और उल्लू
अब तुम्हारी आँखों के सामने
चिल्ला रहा है
विकट स्वर में।

●

सूर्यास्त

कहाँ हो तुम?
अभी भी शेष
इस द्वाभा की दीप्तिमती चमक के भीतर से
तुम्हारा आनन्द
मेरी आत्मा को भर देता है;
क्योंकि अभी सुना है मैंने
उत्कण्ठित हो:
कैसे भर गया है
सूरज के प्रकाश का
हर्ष से उन्मत्त कर देने वाला यौवन
सुवर्णिम झंकारों से
अपनी स्वर्गिक बीन पर
बजाया है उसने गोधूलि का गीत;
बनालियों और पहाड़ियों के आर-पार
चहुँ ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह हुआ है अनुगुंजित
पर दूर, बहुत दूर
जहाँ भक्त-जन हैं
जहाँ लोग अब भी कर रहे हैं
उसका स्तवन
वहाँ से वह हो गया है
अस्तमित।

●

आधा जीवन

पीली पीली नाशपातियों से लदा हुआ
जंगली गुलाबों से घनीभूत
प्रान्त भाग
टँगा है झील में।
चुम्बनों से मदमाते
ए शोभित राजहंसों,
झील के पावन शान्त पानी में
तुम डुबोते हो अपने सिरों को।
आह, कहाँ से पाऊँ मैं फूलों को
जब शिशिर आ जाता है ?
और, कहाँ पाऊँ सूरज की रोशनी,
और छाया धरित्री की ?
दीवारें खड़ी हैं
मौन और ठण्डी,
मौसम की घड़ियाँ
हवा में झन झन कर बजती हैं।

●

'पॅट मॉस'-से

नजदीक है वह सर्वशक्तिशाली
किन्तु, उसे पकड़ पाना मुश्किल है।
तो भी, जहाँ होता है खतरा
कोई हमारी रक्षा करता है।
अंधेरी चट्टानों में
बाज रहते हैं निर्भीक
एल्प्स-पर्वत के बेटे
लाँधते हैं खन्दक-खाइयाँ
शून्य में झूल आये
हल्के पुलों पर चढ़कर ;
हमारे चारों ओर एकत्रित
काल की चोटियाँ उभर आती हैं
और हमारा प्रियतम रहता है पास ही
फिर भी दुख देती है हमारी स्थिति
उन पहाड़ों पर
जिनके बीच हैं विस्तृत दूरियाँ
तुम हमें दो निर्दोष जलधार
ऋण दो पंखों का
ताकि, प्रेमातुर और सच्चे मन से
हम यात्रा कर सकें आर-पार
और सुरक्षित लौट आयें।

●

घर

नाविक घर लौटता है
सुखी मन से
लौटता है उन दूर दूर के किनारों से
शान्त बहते निर्झर के पास
जहाँ उसने काटा था फ़सलों को।
इसलिए अब मुझे भी लौटना चाहिए,
लेकिन मेरे पास क्या है काटने को
अलावा दुख के ?
घर के ए प्यारे किनारों,
(जहाँ मैं बड़ा हुआ था एक बार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३ फरवरी १९६४

क्या तुम चुप कर दोगे
प्रेम की यातनाओं को ?
ए मेरे बचपन के बन-प्रान्तों,
जब मैं लौटूंगा
क्या तुम मुझे दोगे
फिर से
शान्ति और विश्राम ?

●

यौवन

जब मैं लड़का था
अक्सर भगवान ने रक्षा की थी मेरी
कोलाहल और दण्डों से
मनुष्य के ;

तब मैं खेलता था
प्रसन्न और सुरक्षित
वाटिका के फूलों के साथ
और स्वर्ग की मीठी हवाएँ
खेलतीं थीं मेरे साथ।

जैसे कि तुम देते हो आनन्द
पौधों के हृदयों को
जब वे फैलाते हैं
अपनी मृदु बाँहों को
तुम्हारी ओर
वैसे ही तुमने भर दिया था सुख से
मेरे मन को

ओ पिता हेलिओस !
और, ओ पवित्र लूना !
एण्डीमियन के समान
मैं तुम्हारा प्यारा था !
ओ तुम विश्वसनीय और उदार
सारे ही देवताओं !
यदि तुम जानते इतना ही
कैसे मेरी आत्मा
तुम्हें प्रेम करती है,
वैसे यह सच है,
उन दिनों मैं
तुम्हें नहीं पुकारता था
तुम्हारे नामों से
और न ही तुम मुझे
मेरे नाम से पुकारते थे,
जैसे लोग आपस में पुकारते हैं
एक दूसरे को
मानो वे जानते हैं एक दूसरे को पूरा ही।
तब भी मैं तुम्हें ज़्यादा जानता था
जितना कि मैंने उन मनुष्यों को जाना है।
मैंने समझ लिया है
ईथर की ख़ामोशी को
पर नहीं जान पाया हूँ
मनुष्य के बोलों को।
मरमर ध्वनि करते उपवन की एकतानता
ने पाला है मुझको
फूलों के बीच
मैंने सीखा है प्रेम करना।
मैं बड़ा हुआ था देवों की बाँहों में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नलिनीकान्त गुप्त

श्री अरविन्द के साथ, अलीपुर जेल में

क्रान्ति-पुरुष श्री अरविन्द के अभिन्न क्रान्ति-सहचर थे, श्री नलिनीकान्त गुप्त ! उन अग्नि-लोहित दिनों की भीतरी कहानी बहुत कम लोग जानते हैं। तब स्वयम् नलिन दा' की कलम से लिखे ये संस्मरण कितने दुर्लभ हो सकते हैं, आप पढ़कर जानेंगे।

अलीपुर जेल में हम थे पूरे एक वर्ष। १९०४ की दूसरी मई से १९०५ की २ मई तक, विचाराधीन क़ैदी के रूप में। जेल में हमारे निवास तथा उसके अनुसार जीवन-धारा के हिसाब से इस समय को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है। पर, प्रत्येक भाग में समय का परिमाण समान नहीं था। पहले जिस भाग में था—— चौवालीस डिग्री में– वहीं अधिक समय रहना हुआ, क़रीब दो बार। पहले तो जेल मे प्रवेश करते ही जीवन का सूत्र पात हुआ इसी ४४ डिग्री में– इसका अर्थ है एक वार्ड, जो चौवालीस कोठिरियों का बना था, कोठरियाँ भी क्या कुत्तों के लिए या हंस या मुर्गी के लिए जैसे घर बनाये जाते हैं, वैसी ही थीं ये ! एक ही घर में कहीं किसी पर्दे या टट्टी में नहीं, सब कर्मों का समाधान करना होता। साधारणतः ऐसी कोठरियों में एक-एक आदमी ही रखे जाते– ख़ूनी डकैत या इसी तरह के जीवों को,– पर हमें रखा गया तीन-तीन आदमी करके। क्या उद्देश्य था समझना कठिन है। शायद एक जन यदि आत्म-हत्या का प्रयत्न करे, तो दो जन उसे ठीक करके रखेंगे। मानव को कितना हीन-हेय करके रखा जा सकता है, पशु से भी अधम समझा जा सकता है, इसकी आदर्श व्यवस्था हुई इस डिग्री जीवन में। वर्डस्वर्थ कह गये हैं–

And much it grieved
my heart to think
what man has made of man

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर इस व्यवस्था को एक परम शिक्षा-दीक्षा के श्रेष्ठ उपाय के रूप में ही ग्रहण किया जा सकता है। कहा जाता है कि आध्यात्मिक जीवन में लज्जा, घृणा, भय, नहीं रहने चाहिए। जेल में हमें इन तीनों को ही तिलांजलि देनी पड़ी थी। जो हो, तीन जनों का एक साथ रहना हमारे लिए अन्ततः आनन्द का कारण ही बना था। और, परम सौभाग्य वश ही मेरे साथी भी बिलकुल मेरे मन मुवाफ़िक ही मिले थे। वे मेरे लिए शुभकर ही थे।

महीना भर इस तरह से बुरा नहीं बीता। फिर जब मजिस्ट्रेट के कोर्ट में मुकदमा गया, तो अच्छी तरह आनन्द का स्रोत वह उठा—क्योंकि सबके साथ मिलने,बातचीत करनेका सुयोग मिल गया। एक साथ हल्ला करते-करते गाड़ी से जाना होता, कोर्ट में एक साथ प्रायः दिन भर रहना होता और लौटना होता एक साथ—मजे के लिए और किस मसाले की ज़रूरत थी?

चित्र : पवन कुमार

डेढ़ मास बीतते-बीतते शायद प्रथम पर्व का अंत हुआ। पट परिवर्तन हुआ और सौभाग्य की ओर। अधिकारियों ने जब देखा कि हम सब सचमुच ही अच्छे आदमी हैं– कोई भी कुअभिसन्धि हममें नहीं है–बिलकुल good boy हैं, हम सब तो, हम सब को एक शोभनतर निवास दिया। तीन घरों वाला एक घर– बरामदा, मैदान और नित्यकृत्य के लिए बाहर ही स्थान।

यह द्वितीय पर्व ही विशेष रूप से लक्ष्य करने लायक हो गया। बाहर, कोर्ट में सबके साथ भेंट मुलाकात होती और घर में भी दिन रात सबके साथ मिलना-जुलना होता। क्रमशः दल ने एक आकार धारण किया। व्यक्ति भाव से भी एक व्यवस्था की प्रेरणा आयी। प्रथमतः तीन घरों में तीन तरह की प्रकृति विभक्त हो गयी। एक घर के एक कोने में श्री अरविन्द का स्थान (अब तक उन्हें बिलकुल अलग रखा गया था, यह प्रथम बार वे हमारे बीच आये) था, वहाँ उनकी जमायत जुटी, जो अध्यात्म जीवन, साधना, ध्यान धारणा करना चाहते थे। बारीनदा भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहीं थे। तीन के घर में वे आ जुटे, जो मानसिक चर्चा चाहते थे, cultural बातचीत माने जो साधारणतया Intellectual थे,– उपेनदा इस दल के पण्डा थे। अतः मैं अधिक समय यहीं रहता। और तीसरे कमरे में जुटे वे, जो नास्तिक, युक्तिवादी, तथाकथित व्यावहारिक (Practical) लोग थे। इस घर के नेता बने हेम दास। उनका प्रधान चेला था तरुण कृष्ण जीवन। दल के नाते आपस मे ठट्ठा-तमाशा चलने पर भी हमारी प्रीति और सौहार्द अटूट था।

इसी समय हमने पुस्तक-पाठ की अनुमति पायी और कुछ-कुछ किताबें हमारे हाथ लगीं। मेरे घर से मेरे लिए भेज दी गयी थीं। याद हैं– Bacon's Essays. Shakespeare, तथा King John, इस तरह की अन्य पुस्तकें जो कालेज में पाठ्य थीं। कुछ विवेकानन्द की ग्रन्थावली भी आयी। और आया ब्रह्मवैवर्त्त पुराण, विष्णु पुराण (वसुमती संस्करण)। इन सब किताबों को हमने बार-बार, कितनी बार पढ़ा, इसकी सीमा नहीं–नयी किताबें तो जल्दी मिलती नहीं थीं।

पर इसी समय प्रश्न उठा, ततः किम? सारा जीवन जेल में ही सड़ना होगा– चाहे बीस वर्ष हो या दस वर्ष। यदि किसी को फांसी दे दे, तो वह परिणाम भी आदर्श नहीं। इसी से वारीनदा के मन विचार आया, जेल तोड़ कर भागना हो जीवन ऐसे भी जायेगा वैसे भी। पर करके यदि जाय तभी तो सार्थक उन्होंने दो चार जनो की राय ली प्लान बनाना शुरू कर दिया। न चार्ट तक क्रमशः बन चला। बाहर सहकारियों के साथ चन्दननगर का दल साथ संपर्क शुरू हुआ। श्रीश घोष प्रमुख कुछ जन इसके प्रधान थे। प्लान बना कि शाम के समय जब हम छूटे रहते हैं। तभी-वार्ड के मैदान में आ मण करना होगा। हमारे पास कुछ पिस्तौ होंगी, हम जेल की, दीवार की ओर जायेंगे– बाहर तो सशस्त्र साथी रहेंगे ही, वे बाहर से रस्सियाँ अन्दर देंगे। हम पिस्तौल छोड़ते-छोड़ते दीवा पार कर जायेंगे, उधर कूद जायेंगे भागेगें गाड़ी में, – रास्ता ठीक सीधे नदी तीर पर पहुँचेंगे और प्रस्तुत नौका पर बैठकर चल देंगे; चौधुरानी की तरह– सुन्दर वने, जंगले।

वारीनदा इस रोमान्स का बहुत सम नहीं कर सके। हम थे पुतली की त कर्त्ता की इच्छा से कर्म के नाते, हुकुम मा को प्रस्तुत थे। हमारे जीवन का आ था– मुक्ति के बाद जब हम प्रथम आकर उपस्थित हुए कालेज में तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा में कालेज के सहपाठियों ने हमारा स्वागत किया था–

Theres not to reason why
Theres to do and die

हम स्वयं सदा सर्वदा गाते आये थे–

मागो जाय, जावे जीवन चले
तोगार काजे
वन्दे मातरम बले...

ओ मां जीवन जाय, तो चला जाय, तुम्हारे काम में वन्दे मातरम बोलते हुए।

श्री अरविन्द इस प्लान में रहने को राज़ी नही हुए– व्यक्तिगत रूप से उन्होंने कहा–I mean to stand the Trial.

एक दल और भी था, पर गुप्त था। तीन या चार जनो से अधिक नहीं। कनाई दत्त और सत्येन्द्र वसु– शायद हेमदा भी कुछ जानते या जान सके थे, उपेनदा और उल्लास उन्होंने वातों से कुछ नहीं कहा, अपने उद्देश्य को कार्य में परिणत कर दिखाया था।

द्वितीय पर्व के कुछ बाद ही आया तृतीय पर्व। हम सबों को देख-देख कर अधिकारी वर्ग आश्वस्त हो गया था। हम सब किसी तरह का गोलमाल कर ही नहीं सकते थे, साधारण क़ैदी जिस तरह की ज़िद दिखाते हैं, हम वह भी नहीं कर सकते थे। एक प्रकाण्ड हाल–हम चालीस जन सभी उसी एक ही घर में थे। प्रत्येक के लिए उसका स्थान निर्दिष्ट था। पीठस्थान, अर्थात् खाट की जगह मिट्टी की खड्ड उसके ऊपर बिछा कम्बल। खड्ड एक ओर ऊंची थी, जो तकिये का काम करती थी। मिट्टी की खड्ड देख कर पहले-पहल ताच्छिल्य उत्पन्न हुआ था; बाद में क्रमशः इसकी आवश्यकता समझ में आयी। बाहर एक विशाल आंगन था। पानीकल था। पानी कल से जो जल एक प्रणाली (Aqueduct) से बाहर निकल जाता था, उससे भी स्नान किया जा सकता था। नज़दीक ही रसोई घर था, उसकी सुगन्धि से मन आमोदित रहता आदि-आदि। ऊपर उन्मुक्त आकाश था। दिन को सर्वदा ही उसके नीचे आकर खड़ा हुआ जा सकता था। संतरी बहुत अच्छा आदमी था। बाहर से तर-तरकारी मांस-मछली तक आता। कभी-कभी अपने ही रसोई करते।

घर में कितनी तरह के खेलकूद चलते, मानो मेला लगा है। नाटक हो रहा है, गान हो रहा है, दुहराया जा रहा है, हँसी हो रही है, कभी न खतम होने वाला, उल्लास का फौवारा।

इसी के बीच श्री अरविन्द रहते एक कोने में– अधिक समय अपना ध्यान और साधना लिए। पर बीच-बीच में हमारे बालकोचित क्रीड़ा में योग देने में भी इस्ततः नहीं करते। एक दिन मैंने उनसे ग्रीक भाषा का नमूना सुनना चाहा। उन्होने होमर से दस-बारह लाइनों की आवृत्ति की। ग्रीक कविता यहीं प्रथम मेरे कानों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पहुँची थी।

यह तो हुआ पिछले बाह्य जीवन का लेखा-ज़ोखा। पर आन्तर के जीवन का ? अन्तर में धूमायित एक और अग्नि। वारीनदा ने प्रस्ताव किया था कि यहाँ से ही हमारे महाभिनिष्क्रमण का उद्योग सहज और सुविधा जनक होगा। प्राचीर के सा लगे मैदान में ही हम सब घूम-फिर रहे थे। प्रहरी भी सतर्क नहीं, पिस्तौल का जुटाना शुरू हुआ— किस तरह यह मैंने अन्यत्र कहा है। रखा जाता था कैसे ? एक पिस्तौल मुझे रखनी थी। मेरी जो शय्या थी, उसी के एक ओर खोद कर गड्ढ़ा वनाया था— खोदने के समय कोई जान न सके, प्रहरी भी खबर न पा सके, इसीलिए खड्ड पर उठंगकर बै ता और पीछे हाथ चला कर गड्ढा करता जाता। मिट्टी हटाकर इधर-उधर कपड़े और कम्वलों से दबा देता। इसी तरह शय्या गह्वर में पिस्तौल रखी गयी। मुंह ढक दिया था एक तसले से। (हमारे दैनंदिन जीवन के भोजन की थाली से) शायद मुँह पर मिट्टी लेप भी कर दिया गया था। पता नहीं पिस्तौल की भविष्य में क्या गति हुई थी। क्योंकि जब इन सब कल्पना-जल्पनाओं का उद्योग आयोजन चल रहा है, ऐसे समय वज्रपात की तरह क्या प्रलय तूफान आ गया— ताश के घर की तरह सारा आयोजन उड़ गया, वह वज्र ले आ कानाई और सत्येन।

सत्येन के साथ अधिक जान-पहचान नहीं हो सकी। सुना था वह रोगी है। उसका स्थान जेल के अस्पताल में ही था। कनाई खूब मिलनसार नहीं था। कभी-कभी कहता जेल जीवन मेरे लिए नहीं है मैं अंग्रजों को पट्टी पढ़ाऊँगा। हम सुनते और हँसते। तो यहाँ श्री अरविन्द के विषय में एक बात कहूँ। प्रायः एक ही है। एक दिन जब हम सब कोर्ट के पिंजड़े के भीतर थे, एक बार एक फुर्तीबाज़ अंग्रेज संतरी ने आकर बड़ी रसिकता से श्री अरविन्द से कहा— Abrindo (Aurobindo वह कह नहीं पाता था।) you are caught at last, you are caught at last तुरन्त श्री अरविन्द ने तुर्की बतुर्की जवाब दिया— And yet I will escape, and yet I will escape !"

जो हो, कनाई प्रायः सिर से पैर तक चादर ताने सोया रहता। हम सब कुतूहल से पूछते तो कहता— 'हाँ, अंतर्जगत में प्रवेश करने की चेष्टा कर रहा हूँ।' इसी समय एक दिन जेल बाबू (बंगाली थे) ने आकर कनाई को शुभ खबर दी, "कनाई परीक्षा-फल निकला, तुम बी. ए. में पास हो गये" कनाई बी. ए. की परीक्षा देते-देते ही सारे कामों में योग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देता रहा था।

फिर एक दिन सुना कनाई बीमार है, उसे अस्पताल ले जाया गया है फिर.....। एक दिन अचानक शाम के समय बज उठी जेल की पगली घण्टी। जब सामूहिक विपत्ति आती है, तभी वह घण्टा विपुल ध्वनि से बज उठता है। साथ-साथ एक क़ैदी कहता-कहता भाग गया—'नरेन गोसाई ठाण्डा हो गया। नरेन गोसाई ठाण्डा हो गया" कुछ सोचने-समझने के आगे ही आ गयी बैनेट चढ़ी बन्दूक लिये पुलिस। हम सब बाहर मैदान में हवा खा रहे थे। भेड़ों के झुण्ड के समान, या बलि के बकरे के समान हमें धकेल-धुकूल कर हमारे घर में बन्द कर दिया गया। हर एक की खाना तलाशी हुई। दो चार कड़े धक्के-वक्के भी मिले। तुरन्त लाइनबन्दी करके हमें बैठाया गया और हुकुम हुआ— चलो चौवालीस डिग्री में—

बरेन गोंसाई को उन्होंने जितना शीघ्र संभव हो सके, खतम करना चाहता था। केवल देश द्रोही होने के कारण नहीं— बल्कि जिससे उसकी गवाही कोर्ट में न ली जाय। — यदि कोर्ट में जिरह न की जा सके, तो उसकी गवाही का कोई मूल्य ही नहीं होगा। इस तरह हम सब अन्ततः क़ानून से तो बच गये।

लौट आये फिर हमारे आदि पर्व के आदि स्थान में पुनर्भूषिक इस बार अलग-अलग करके अकेले रहना होगा। इस बार अधिकारियों को मालूम हुआ कि बाहर की भलमनसाहत के आस्तरण के नीचे हम सब किस धातु के बने हैं। हमारा जेल का स्वर्णयुग खतम हो गया। पहले जो सब सुयोग— सुविधाएँ मिलती थीं, छीन ली गयीं। कोर्ट में ही एक साथ मिलने का अवकाश रहा। मुक़दमा चला काफी दिन, कुछ महीने फिर केस ख़तम हो जाने पर आया एकान्त निःसंगता का जीवन। — अब फल की अपेक्षा में रहना होगा, शायद दो मास यह घोर रात्रि की अवस्था थी। इसी समय में मेरा मन भी कभी-कभी हाँफ जाता। कौन? क्या? कहाँ? किस ओर? इस तरह के प्रश्न मेघ की तरह आकाश को छा लेते। अवसन्नता लगती। एक मात्र प्रतिबोधक था— विवेकानन्द का साथ— अर्थात् उनकी कोलम्बो से अल्मोड़ा, किताब हाथ में आ गयी। कथा और शिल्प में क्या भरोसा साहस, और विश्वास था, सब साफ हो जाता। बाद में पढ़ी है आस्कर वाइल्ड, जेल में बैठ कर उनकी उपलब्धि की कथा, De profundis Clamari गंभीर अतल में जब गिर गया हूँ, तभी अन्तर के अतल से उठी है, ऊर्ध्वमुखी आकांक्षा। इसी को तो कहते हैं कि भोर के नज़दीक

(शेष पृष्ठ ६६ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरदास

•

सुनहु वृषभानु किसोरी !

ऊँचौ गोकुल नगर, जहाँ हरि खेलत होरी।
चलि सखि देखन जाहिं, पिया अपने को खोरी ।।

बाजत ताल, मृदंग, और किन्नरि की जोरी।
गावति दै–दै गारि, परस्पर भामिनि भोरी ।।

बूका सुरँग अबीर उड़ावत, भरि-परि झोरी।
इत गोपिनि कौ झुंड, उतहिं हरि-हलधर-जोरी ।।

नवल छबीलेलाल, तनी चोली की तोरी।
राधा चली रिसाइ, ढीठ सौं खेलै कोरी ।।

खेलत मैं कस मान, सुनहु वृषभानु-किसोरी।
सूर सखी उरलाइ हँसति, भुज गहि झकझोरी ।।

•

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

नन्द-कुवर रंगभीने हो।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेलत हैं अति रसमसे, रंगभीने हो।
अति रस केलि विलास, लाल रंगभीने हो।।

जागत सब निसिगत भई, रंगभीने हो।
भले जुआए प्रात, लाल रंगभीने हो।।

बोलत बोल प्रतीति के, रंगभीने हो।
सुन्दर स्यामल गात, लाल रंगभीने हो।।

अति लोहित दृग रंगमंगे, रंगभीने हो।
मनहु भोर जल जात, लाल रंगभीने हो।।

पिया अधर-मधु-पान-मत्त रंगभीने हो।
कहौ कहुँ की कहुँ बात, लाल रंगभीने हो।।

केस सिथिल जँभात, लाल रंगभीने हो।
अंग अंग अलसात, लाल रंगभीने हो।।

सकुचत हौ कत लाड़िले रंगभीने हो।
दुरत न उर-नख-घात लाल रंगभीने हो।।

सूरदास-प्रभु नन्द-कुँवर रंगभीने हो।
बहुनायक विख्यात लाल रंगभीने हो।।

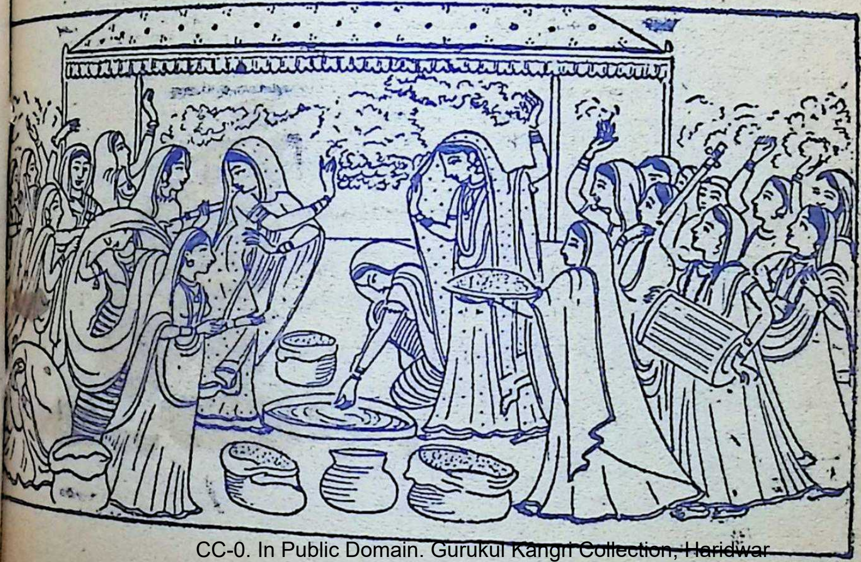

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंकुर आकाश की ऊँचाइयाँ छुएंगे

[एक बोध-कथा]

आकाश में टिमटिमाता एक तारा एक रात टूटकर किसी खेत में गिर पड़ा। तारे की हड्डी-पसलियाँ टूट गयीं, लेकिन किसी ने उफ़ तक न की। बहुत देर बाद उसकी बेहोशी दूर हुई, तो उसने खुद को धरती की गोद में पाया। धरती मौन थी।

तारे ने पूछा – "हे देवी तुम कौन हो, जिसने मुझ बेसहारे को सहारा दिया है ?"

धरती ने कोई उत्तर न दिया। लेकिन तारे ने उसी समय धरती से फूटते हुए एक अंकुर को देखा और वह समझ गया–यह मां है। तब उसने पूछा–"तुम चुप क्यों हो ?"

धरती फिर भी कुछ न बोली।

उसी समय तारे ने देखा बरोनियों जैसे नये अंकुरों पर टिके कई मोती एक साथ ढुलक कर माटी में खो गये और वह समझ गया, निश्चय ही माँ के मन में कोई घनीभूत पीड़ा है। लेकिन पीड़ा क्या है ? क्यों है ? वह सोचता रहा, सोचता रहा–सारी रात।

तब भोर की पहली किरन फूटी। बूढ़े बरगद के पत्ते खड़क उठे–"जानना ही चाहते हो, तो सुनो: इसने तीन पुत्रों को जन्म दिया था। एक वह जो राज करता है, दूसरा वह जिसके द्वारा राज होता है, और तीसरा वह जिस पर राज होता है। दुर्भाग्य से पहला अन्धा, दूसरा बहरा और तीसरा गूंगा है।"

उफ़। तारे ने लम्बी सांस ली– क्या ये सदा ऐसे ही रहेंगे ?

नहीं–बरगद ने पूरी दृढ़ता से कहा, मेरे सामने युगों का इतिहास है। अदूरागत भविष्य की हलचल मेरी जड़ें महसूस कर रही हैं। निश्चय ही ये रोगमुक्त होंगे, तब इन्हें इनमें अशक्यता, अन्तर और असमानता न रहेगी। धरा तब शस्यश्यामला होकर फूलों की हंसी हंसेगी। झरने इसकी आशा-आकांक्षाओं, उल्लास और उमंगों के तराने गायेंगे और रत्नगर्भा से फटे हुए अंकुर आकाश की ऊँचाइयाँ छुएँगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो वसन्त-गीत

[१]

गजरा गूँथो ना!

अँगराई मौलसरी द्वार
गजरा गूंथो ना!

दिखते मस्तूल हरे
मौसमी जहाज के
गंध उड़ी काग़ज़ सी
कथ्थई दराज़ के

लरज गया सपनीला प्यार
गजरा गूंथो ना!

पड़ीं नयी भाँवरियाँ
बिल्लौरी धाण की
डोर खिंची सतरंगी
सुधि की चिलमन की

गूंज रहा चौक से बज़ार
गजरा गूंथो ना!

[२]

दोपट्टों के स्वर गदराये

तिरीं ढलानों पर छायाएँ
वन की रंभाएँ सपनायीं
दोपट्टों के स्वर गदराये
अमलतास-कुन्जों में सकुचा मलयानिल का मन्द-झकोरा
पंजाबी क़सबे में जैसे घुस आया बंगाली छोरा
सजे लतागृह, छलकी गगरी
गीत जवान हुए गलियों के
भींगी रतिछन्दा की नगरी
लिखने लगा वही मौसम की फिर से रंगों का पटवारी
संज्ञा का गुमाश्ता लाने चला गंध की मालगुजारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

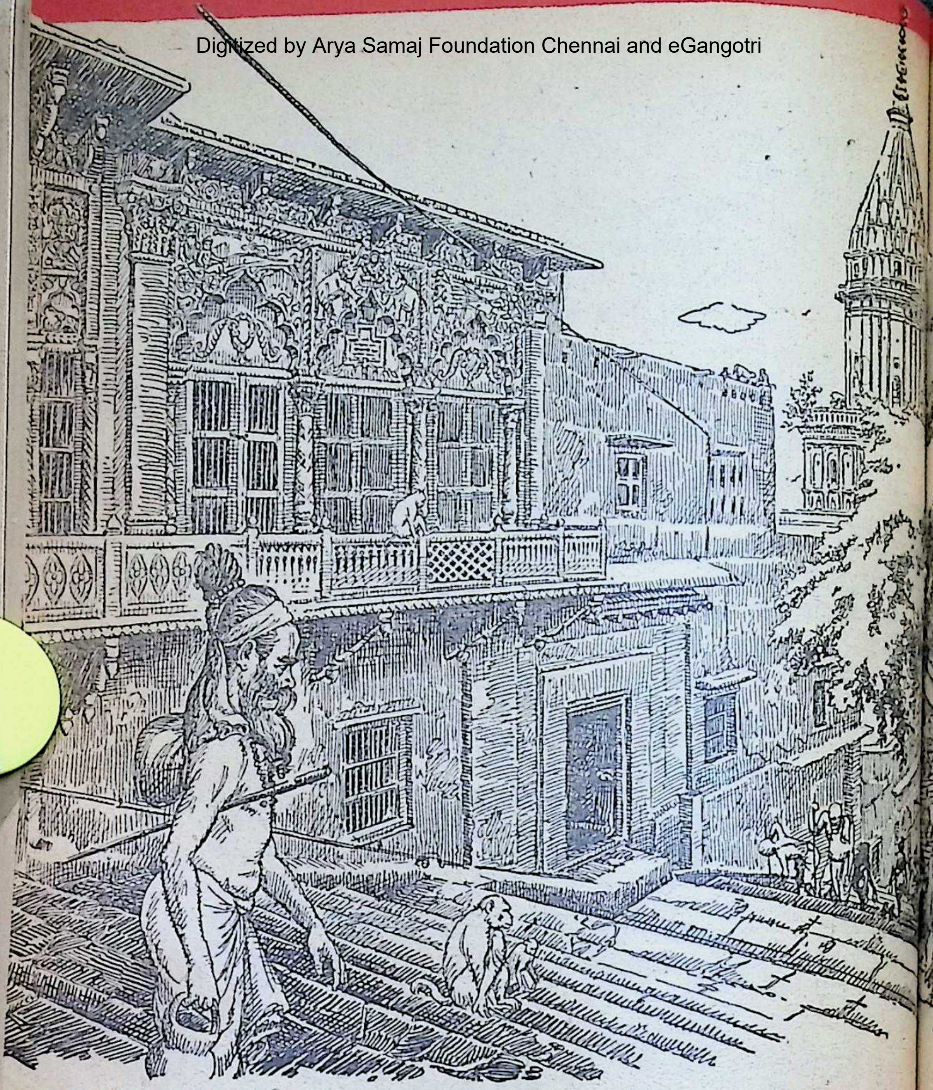

प्रस्तुत चित्र में उत्तरी महाद्वार को जाने के लिए सीढ़ियाँ दृष्टिगोचर हो रही हैं। मध्य में राजद्वार मंदिर दिखायी पड़ रहा है। स्मरण रहे, दशहरा के समय इसी मंदिर के सामने रामलीला उत्सव मनाया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

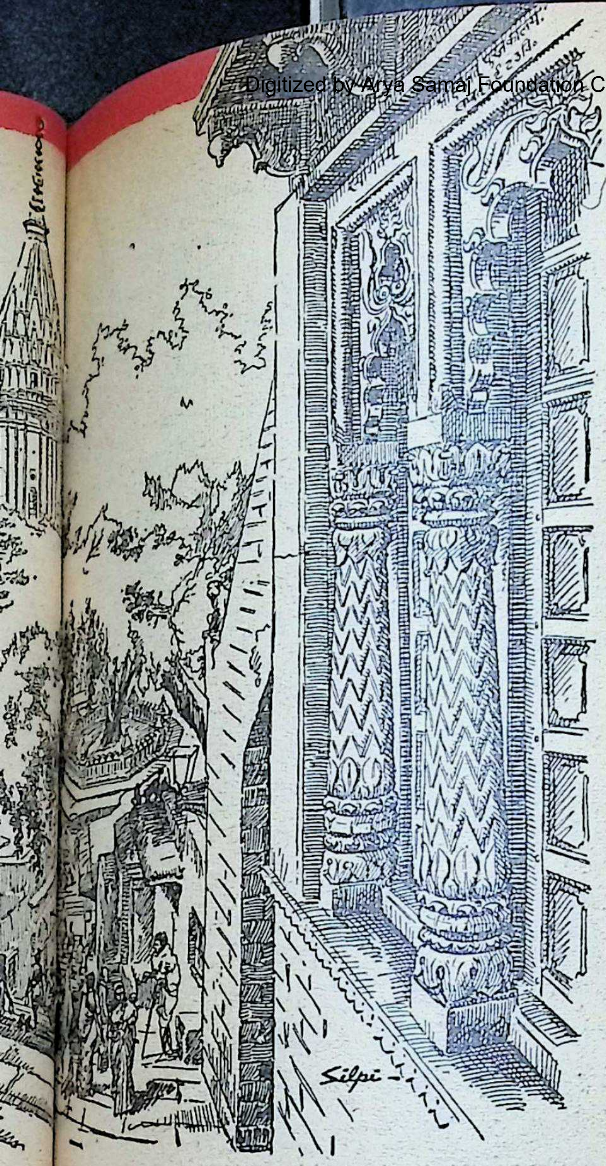

हनुमानगढ़ी श्री हनुमानजी की महान भक्ति की स्मरणगाथा के रूप में आज भी अचल, अजेय खड़ी है। प्रत्येक हिन्दू आज भी उसके समक्ष श्रद्धा एवं भक्ति से नतमस्तक हो जाता है। ऐसा प्रतीत होता है, मानों यहाँ शान्ति अखण्डरूप से साम्राज्य कर रही है। भक्तों की भीड़ तथा घुमक्कड़ वैरागियों का समूह भी, जो अधिकतर संत-शिरोमणि तुलसीदास जी की रामायण पर चर्चा करते रहते हैं, यहाँ की शान्ति भंग नहीं कर पाता।

इस अति प्राचीन मन्दिर में महान भक्त एवं अपराजेय योद्धा श्री हनुमान की प्रतिमा प्रतिस्थापित है। स्मरण रहे कि श्रीराम के प्रथम दर्शन के तत्काल बाद ही उन्होंने प्रभु के रूप में राम को पहचान लिया और मन, वचन, कर्म तथा शरीर, सभी से उनकी शरण में चले गये। उनकी समर्पणमय भावना को तुलसीदास जी ने किस प्रकार प्रस्तुत किया है, देखिए:—

अयोध्या

एकु मैं मंद मोहबस कुटिल हृदय अज्ञान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबन्धु भगवान॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

जदपिनाथ बहु अवगुन मोरे।
सेवक प्रभुहि परै जनि भोरें॥

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाथ जीव तव मायाँ मोहा।
सो निस्तरइ तुम्हारेहिं छोंहा॥
तापर मैं रघुवीर दोहाई।
जानउँ नहिं कछु भजन उपाई॥
सेवक सुत पति मातु भरोसें।
रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें॥

भगवान तो सदैव भक्तों के बस में होते हैं। श्रीराम उनकी अलौकिक भक्ति को देखकर द्रवित हो उठे और बोले :–

सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना।
तैं मम प्रिय लछिमन ते दूना॥
समदरसी मोहि कह सब कोऊ।
सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ॥
सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत॥

हनुमानजी अंजना के पुत्र थे; इसीसे उनका नाम आंजनेय भी है। कथा इस प्रकार है कि किसी ऋषि के शाप बस अंजना को देवी रूप त्याग कर पृथ्वी पर वानरी के रूप में आना पड़ा। उसके अप्रतिम सौन्दर्य से वायुदेव विमोहित हो उठे और उनके साहचर्य्य से हनुमान जी का जन्म हुआ। अपने वाल रूप में ही वे महान वलवान थे। कहते हैं, एक वार वाल-सूर्य को उन्होंने कोई रसवान फल समझ कर उसे लीलने के लिए इतनी द्रुतगति से उस ओर लपके कि इन्द्र यह समझ कर स्वयं प्रकम्पित हो उ े कि सूर्य निश्चय ही संकट में आ जायेंगे। उन्होंने अपने वज्र से किशोर हनुमान पर प्रहार किया और वे मूर्च्छित होकर एक पर्वत पर गिर पड़े।

पवनदेव इस घटना से विक्षुब्ध हो उठे और उन्होंने अपनी गति को स्थगित कर दिया। फलस्वरूप समस्त प्राणी एवं देवतागण श्वास लेने में भी असमर्थ हो गये। उन्होंने पवनदेव की प्रार्थना की और हनुमानजी को अनेकों वरदान भी दिये। फलस्वरूप हनुमान जी पुनः न केवल अपनी शक्ति को प्राप्त कर लिये, अपितु प्रकाण्ड बुद्धिशाली एवं अपराजेय वन गये। भगवान की भक्ति में इतनी अपार ओजस्विता एवं श्रद्धा विरल ही देखने को मिलती है। भगवान की भी कितनी वड़ी कृपा, कितना वड़ा विश्वास हनुमान पर था, उसका अनुमान भी हम सहज ही लगा सकते हैं। सीताजी की खोज में जब वानरगण प्रस्थान करने लगे तो सीताजी को देने के लिए राम ने अपनी मुद्रिका हनुमान को ही सौंपी।

सीताजी की खोज करते-करते वानरगण समुद्रतट पर पहुँचे। अमरगति को प्राप्त जटायु के भाई सम्पाती ने उन्हें वताया कि सीताजी को लंका नरेश रावण हर ले गया है। समुद्र पार करने की समस्या वानरगणों के सामने विकटरूप वन कर खड़ी हुई और तव उनके नायक जाम्बवन्त ने हनुमान जी को सम्बोधित करते हुए कहा :–

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

भार
पर प्रह
एक पर्व

विक्षुब्ध
को स्थगि
प्राणी ए
असमर्थ
ार्थना क
रदान भ
पुनः
कर लिये,
अपराजेय
में इतनी
विरल ही
की भी
विश्वास
भी हम
ाजी की
करने ल
ने अपनी

ानरगण
को प्राप्त
ाया कि
हर ले
समस्या
न कर
जाम्ब-
करते

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र हनुमान जी की प्रतिमा का है।
में राम, सीता तथा लक्ष्मण की अनगिनत
गयी हैं। प्रथम इन मूर्तियों की आरती की
ती है, और बाद में हनुमान जी की।

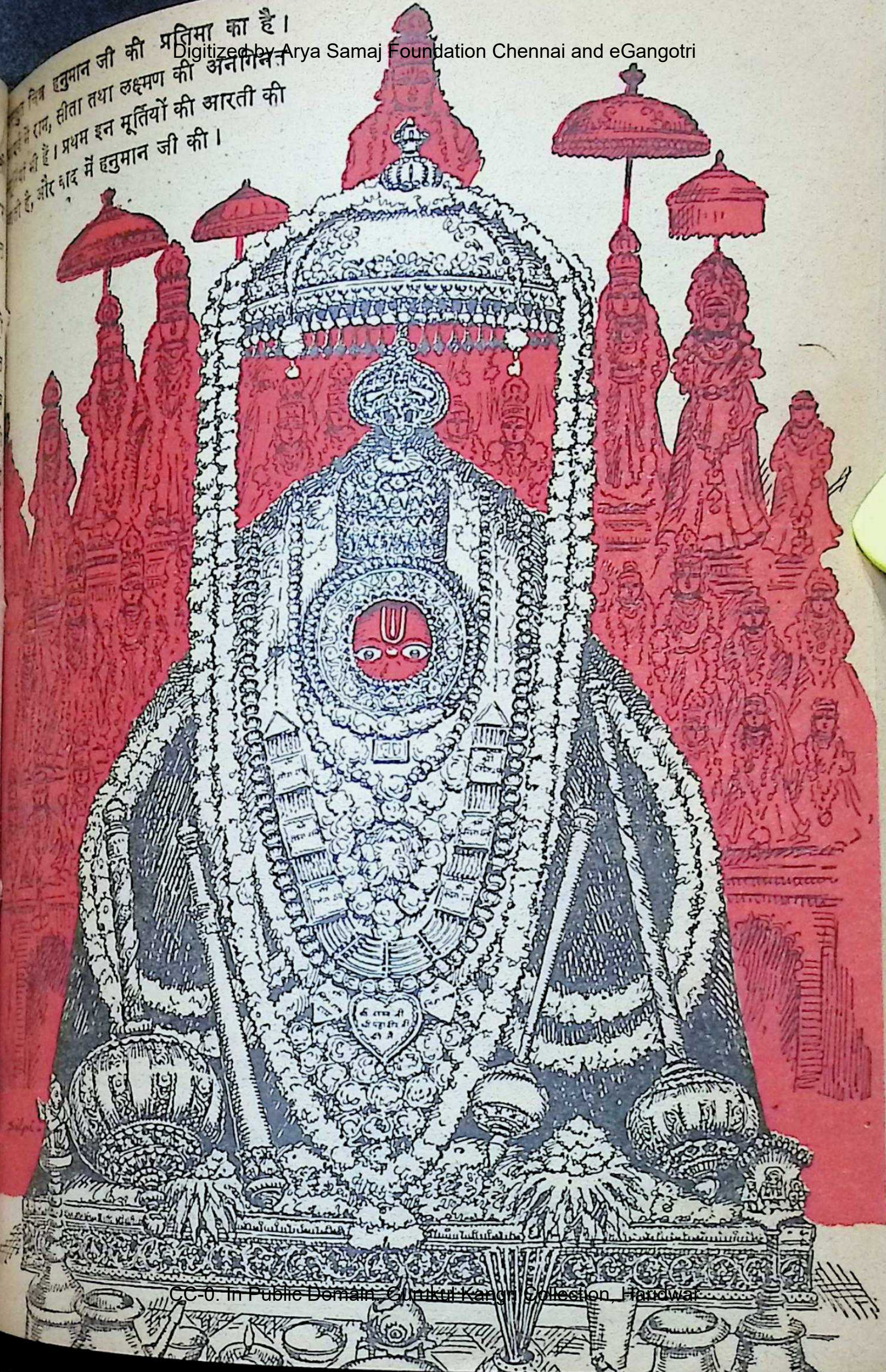

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहइ रीछपति सुनु हनुमाना।
का चुप साधि रहेउ बलवाना॥
पवन तनय बल पवन समाना।
बुद्धि विवेक विग्यान निधाना॥
कवन सो काज कठिन जग माहीं।
जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं॥

श्री हनुमान प्रचण्ड शक्ति एवं महान नम्रता के संगम-स्थल थे। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उस समय मिलता है, जब वे मार्ग में आयी बाधाओं को रौंदते हुए लंका में प्रवेश करते हैं और म्लान-मुखी सीताजी को देखते हैं। उस समय उन्हें अपनी शक्ति का स्मरण भी हो आता है कि सीताजी को यहाँ से सकुशल श्रीराम तक पहुँचा देना कोई बड़ी बात नहीं है। फिर भी वे अपने पराक्रम के प्रदर्शन के प्रति अति संकोचशीलता का परिचय देते हैं। वे सीताजी से कहते हैं:

अबहि मातु मैं जाऊँ लेवाई।
प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई॥

ऐसे अतुलित शक्तिशाली का नम्रता का परिचय हमें एक स्थान पर और मिलता है– रावण-पुत्र मेघनाथ और हनुमान में युद्ध होता है और जब मेघनाथ पराजित होने की अवस्था में आ जाता है, तो अपना 'ब्रह्मास्त्र' छोड़ता है, जो उसे वरदान-स्वरूप प्राप्त हुआ था। किन्तु उस 'ब्रह्मास्त्र' को टूक-टूक कर देना उनके लिए कोई कठिन कार्य नहीं था, फिर भी वे भगवान की मर्यादा का विचार करते हुए कहते हैं,

ब्रह्मअस्त्र तेहिं साँधा कपि मन कीन्ह विचार।
जो न ब्रह्मसर मानउँ महिमा मिटइ अपार॥

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम के हृदय में हनुमानजी के लिए कितना बड़ा सम्मान था, यह इसी से प्रकट हो जाता है–

सुनु कपि तोहि समान उपकारी।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी॥

[क्रमशः

परिवार

सद्वैद्यशाला आयुर्वेदिक फॅक्टरी नांजनगुड

निंबीप अपचन दूर करते

ज्वरैंगा तापांवर

आठमनटाइन टॉनिक

सहायक

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

नांजनगुड दुथपावडर

सोल एजेन्ट्स:
दी युनायटेड कन्सर्न
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास–१

बम्बई–शाखा–२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड, माटुंगा बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु का कोई अस्तित्व नहीं है

.... इसी से कहना चाहता हूँ कि देश-काल में से दैहिक अस्तित्व का समाप्त होना, अपने आप में कोई सचाई नहीं रखता। वह न तो मेरे सच्चे जीवन में बाधक हो सकता है न उसका अन्त कर सकता है। और इस दृष्टि से मृत्यु का अस्तित्व नहीं है।

तर्क की दृष्टि से केवल दो विचार जीवन के सम्बन्ध में प्रस्तुत किये जाते हैं– प्रथम, जोकि ग़लत है, यह बताता है कि जीवन का अर्थ केवल दृश्यमान वस्तु है, जो हमारे जन्म से मृत्यु तक शरीर-रूप में प्रकट होती है। दूसरा दृष्टिकोण, जो सही है, यह मानता है कि जीवन वह अदृश्य चेतनता है, जो हमारे भीतर निवास करती है।

एक दृष्टिकोण ग़लत है, तो दूसरा सही। इनमें से पहला विचार जोकि असत्य है, इतना ही प्राचीन है, जितना यह विश्व।

बहुत से लोगों की धारणा है कि जीवन-संबंधी यह विचार वर्तमान भौतिक विज्ञान और भौतिकदर्शन की देन है– किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। यह विचार वास्तव में बहुत पुराना है, जिसे मनुष्य ने अपनी आदिम, असभ्य अवस्था में ही मान्यता देना प्रारम्भ कर दिया था। वर्तमान समय के हमारे विज्ञान और दर्शन ने इसे केवल सर्वाधिक उन्नत अवस्था में पहुँचा दिया है और इससे आज इसकी असंगतता और अपूर्णता, मानवीय प्रकृति की मूल मांगों के साथ और भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्यादा स्पष्ट हो गया है।

इस विचार को चीनियों द्वारा, बौद्धों द्वारा, यहूदियों द्वारा और जोब की पुस्तक में भी व्यक्त किया गया। इस विचार को अब इस तरह पेश किया जाता है– "जीवन, द्रव्यरूप में स्थित ऐसी शक्तियों का आकस्मिक संयोग है, जो अपने को समय व स्थान में प्रकट करता है।"

हम जो अपनी चेतना को जीवन बताते हैं, वह जीवन नहीं है, बल्कि इन्द्रियजनित भ्रम है, जो हमें ऐसा प्रतीत कराता है, मानो चेतना ही जीवन हो। और यद्यपि चेतना इस विश्व को और स्वयं को भी इन्द्रियों द्वारा ग्रहण करती है और इसी विचार को अपने व विश्व के लिए सही मानती है, तथा इस संसार में संयोगजनित उत्पत्तियों को देखती है और इसी तरह उन्हें पुकारती भी है, किन्तु यह चेतना स्वयं भी निर्जीव पदार्थों का ही परिणाम है।

प्रत्येक वस्तु परिवर्त्तनशील द्रव्यों का परिणाम है और जीवन भी इस प्रकार निर्जीव पदार्थों की ही एक स्थिति है। तर्क की दृष्टि से यह दृष्टिकोण पूर्ण है।

जीवन संबंधी दूसरा दृष्टिकोण इस-प्रकार है–

आत्मचेतना ही जीवन है। अपने में जो चेतना मुझे महसूस होती है, वही जीवन है।

और मैं अपने में जीवन सदा महसूस करता हूँ। इस तरह नहीं कि वहां अस्तित्व में कुछ रहा था या कुछ आयेगा, बल्कि जब भी मैं इसके बारे में विचार करता हूँ, मैं महसूस करता हूँ कि यह 'मैं हूँ', जिसका न कभी प्रारम्भ हुआ है न अन्त। और इसलिए अपने जीवन के प्रति स्पष्ट बोध होने से समय और स्थान संबंधी विचारों का प्रश्न ही नहीं उठता। जीवन स्वयं में, जैसाकि इसे मैं महसूस करता हूँ, वह है, जो मैं स्थान और समय के अतिरिक्त अपने मन से ग्रहण करता हूँ।

जीवन संबंधी यह दृष्टिकोण पहले से एकदम भिन्न है। इससे यह सिद्ध होता है कि चेतनता में जीवन का आभास होना असत्य नहीं है, वल्कि प्रत्येक वह चीज़ जो समय और स्थान से संबंधित है, असत्यता की सूचक है।

इसलिए, इस दृष्टिकोण से, समय और स्थान में मेरे भौतिक अस्तित्व का अभाव अवास्तविक है, उसमें कोई सत्य नहीं है और यह मेरे वास्तविक जीवन को न तो समाप्त कर सकता है, न इसका अस्तित्व मिटा सकता है। और इसलिए इस विचार के अनुसार मृत्यु का कोई अस्तित्व नहीं है।

अनु० ऐन्द्रिला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख : एक अनुभूति

एक हवा का झोंका आया,
पात-पात, सब–
तरज गये।

वर्षा के अंतिम बादल,
बिन माँगे ही–
बरस गये।

कोई आया था,
बिन कहे गया;
हम, तरस गये।

•

किरणों का ज्वार

एक दीप बुझ गया,
एक फूल झर गया,
किन्तु मैं–
देखा अनदेखा कर गया।
फिर उसी क्षण,
बरबस ही,
मन के आंगन में–
अन्धकार भर गया।
स्वप्न के ओ' शिल्पकार
सत्य क्या ?
अन्धकार ...।
नहीं...नहीं...।
किरणों का उठा ज्वार।

•

शंकरलाल मिश्र

•

दो कविताएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

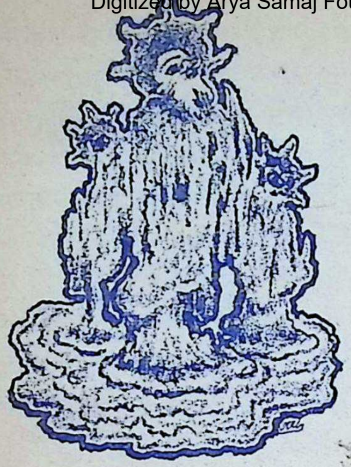

चित्र : कमलाक्ष शेनॉय

नाम संकीर्तन की महिमा अचूक कुन्जी है, जो हमारे हृदय के कपाटों को मुक्त कर देती है और तब हमारे हृदय में प्रेम, विवेक और शक्ति की अजस्र धारा प्रवाहित होने लगती है।

स्वामी रामदास

नाम-संकीर्तन की महिमा

ईश्वरानुभूति केवल उसे हो सकती है जिसने अपने मन को पूरी तरह वश में कर लिया है और इन्द्रियसुखभोग के लिए उत्पन्न इच्छाओं को जीत लिया है। यह संभव है कि एक राजा अपना राज्य-विस्तार पृथ्वी के चारों छोरों तक बढ़ा ले और विश्व की सारी प्रभुता हासिल कर ले किन्तु मन को जीतने का कार्य अत्यन्त दुष्कर है। वास्तविक और महान नायक वह है जिसने अपने मन और मस्तिष्क पर प्रभुता पा ली है। यह प्रभुता तभी संभव है जब मनुष्य के हृदय में छिपी हुई अजेय दिव्यशक्ति जागरित हो जाये और इसे कमज़ोर व्यक्तिगत इच्छाओं की जगह कार्यरत कर दिया जाये।

इस आदर्श तक पहुंचने में नाम एक अमूल्य और अजेय साधन सिद्ध हुआ है। निरन्तर नियमपूर्वक पवित्र नाम का जाप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मस्तिष्क के अस्थिर और कमज़ोर तन्तुओं को पकड़ लेता है और एकाग्रता की स्थिति उत्पन्न करके सभी शारीरिक और मानसिक शक्तियों को एक दिशा में उन्मुख कर देता है। इससे हमारे भीतर छिपे सत्य का अनावरण हो जाता है जो असीम शक्ति, प्रकाश, शान्ति और आनन्द का दाता है। नाम वह अचूक कुंजी है जो हमारे हृदय के कपाटों को मुक्त कर देती है और हमारे हृदय में तब अमर प्रेम, विवेक और शक्ति धारा प्रवाहित होने लगती है। इसके बाद आत्मा उस सर्वव्याप्त और परम आनन्ददायक दिव्य-शक्ति की कान्ति में समाहित हो जाती है।

स्वामी रामदास

इस प्रकार, ईश्वर का सर्व शक्तिमय नाम आत्मा को सत्य की सर्वोच्च स्थिति तक खींच ले जाता है। इस ओर सर्व-प्रथम हमें नाम की महत्ता और शक्ति में पूर्ण आस्था, विश्वास रखने की आवश्यकता है जो ईश्वर की कृपा से ही प्राप्त होता है। आत्मसाक्षात्कार के रूप में अपने जीवन की सर्वोच्च अभिलाषा लिये जब भक्त का मुख्य आश्रयस्थल पवित्र नाम बन जाता है तब वह अपने उद्देश्य की दिशा में आनन्द और साहस से भरे हृदय के साथ तेज़ी से अग्रसर होता है। धन्य है वह आत्मा जिसने पवित्र नाम की महत्ता को समझ लिया है और उसमें अविचल आस्था स्थापित करली है।

जब हम नाम को दोहरा रहे हों तो हमें यह आभास होते रहना चाहिए कि हम उस एकशक्ति का नाम दोहरा रहे हैं जो हमारे भीतर मौजूद है और वही हमारी सच्ची ज़िन्दगी है, यथार्थता है। यन्त्रवत् नाम दोहराने मात्र से कोई उपलब्धि नहीं हो सकती। नामोच्चारण के स्वर में हमें उस दिव्य शक्ति की झंकार प्रतीत होनी चाहिए, अर्थात नाम मात्र शब्द न रहे, उसमें ईश्वरानुभूति का प्रकाश हो। जप करते समय इस तथ्य का ज्ञान बराबर बने रहना चाहिए। उस तरह जाप करते रहने से हमें अपने में उस पवित्र दिव्यज्योति का आभास मिलने लगेगा। प्रारम्भ में यह प्रतीति भले ही न हो किन्तु मानसिक रूप से हमें यह विश्वास करके चलना चाहिए कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर का निवास हमारे भीतर है और हम उसका नाम ले रहे हैं। उसे मानसिक रूप से जब हम अपने में संयुक्त कर लेते हैं तो धीरे-धीरे उसकी समीपता हमको मिलती जाती है और अंत में, हमारे मस्तिष्क पर निरन्तर इस सत्य की प्रतीति बने रहने से कि ईश्वर हमारे भीतर है हम उसका ही नाम ले रहे हैं, हमें उसकी उपस्थिति की पूर्ण अनुभूति हो जाती है। जब हमें अपने भीतर उसकी उपस्थिति का ज्ञान हो जाता है तब हमें अपने से बाहर भी उसका अनुभव होने लगता है। इस तरह हमें चारों ओर बाहर-भीतर उसकी उपस्थिति का भान हो जाता है।

मानसिक स्थिरता प्राप्त करने के लिए जितने मार्ग हैं उनमें सबसे सरल शीघ्र-फलदायक ईश्वर के नाम का जाप है। किन्तु इस संबंध में एक कठिनाई है कि कुछ व्यक्ति चाहते हुए भी नियमपूर्वक इस कार्य को नहीं निबाह पाते। इसका मुख्य कारण यह है कि उनका प्रेम या आग्रह नष्ट होने वाले सांसारिक सुखों के प्रति जितना तीव्र है उतना पवित्र नाम के प्रति नहीं है। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि हमारा मस्तिष्क उसही दिशा में ज्यादा उन्मुख रहता है जिधर हमारा अधिक लगाव है क्योंकि किसी वस्तु के निरन्तर ध्यान से मस्तिष्क उसी को याद करने पर मजबूर होता है। इसलिए नाम के प्रति यदि हमारा तीव्र प्रेम हो जाये तो यह प्रेम स्वाभाविक रूप से हमारे मस्तिष्क को बराबर उस नाम का ध्यान करने को प्रेरित करेगा। ईश्वर का नाम हमारी जिह्वा पर स्वेच्छा से आयेगा और हम उसे निरन्तर दोहराने को प्रेरित होंगे। स्थिति यह हो जायेगी कि नामोच्चारण में ऐसा मिठास पैदा हो जायेगा कि इस नाम के उच्चारण का स्वर हमारे सजग कानों में एक अपूर्व माधुर्य की सृष्टि करेगा।

इस तरह जब मन ईश्वर के प्रेम में उन्मत्त हो जाता है और उसके नाम के संगीत से भर जाता है तो इसकी सारी कामनाएं उस दिव्य आनन्द की धारा में परिवर्तित हो जाती हैं और हमारे मस्तिष्क के सारे तंतु उस आनन्द से परिपूर्ण हो जाते हैं। इस आनन्द की अवस्था को प्राप्त करने पर ईश्वर की छवि हमारे सम्मुख स्पष्ट हो जाती है और इससे हमें उस सर्वशक्तिमान विश्वात्म शक्ति का बोध हो जाता है। यह उस दिव्य अपूर्व आत्मा का अवर्णनीय दर्शन है।

नाम की ऐसी ही महिमा है। ईश्वर के जिस नाम का तुम जप करते हो वह निष्फल नहीं जा सकता।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनारायण उपाध्याय

प्रश्न जब सिर उठाते हैं

•

भगवानों, अवतारों, पुरुषोत्तमों और महासतियों ने निश्चय ही धर्म और कल्याण के लिए पद-पद पर अपनी बलि चढ़ायी, पर उनके हृदय के निर्बाध कान्त में, उन हृदय हिला देने वाले बलिदानों के बाद, सम्भवतः स्वभावतः क्या शूल से तीखे ऐसे प्रश्न नहीं उठे होंगे, जिनका उत्तर नहीं दिया जा सका है ? श्री रामनारायण उपाध्याय यहाँ उन प्रश्नों को उठा कर– सचमुच ही हमारी तहें झकझोर देते हैं।

•

राम

सीता के पृथ्वी-प्रवेश के बाद राम जब अपने एकान्त कक्ष में पहुँचते हैं तो उनके मुँह से अनायास ही एक सर्द आह निकल जाती है और वे गुनगुनाते हैं।

"चलो अन्तिम पटाक्षेप भी हुआ। मैंने जिस राह पर कदम बढ़ाया था उसका यही परिणाम होना था"।

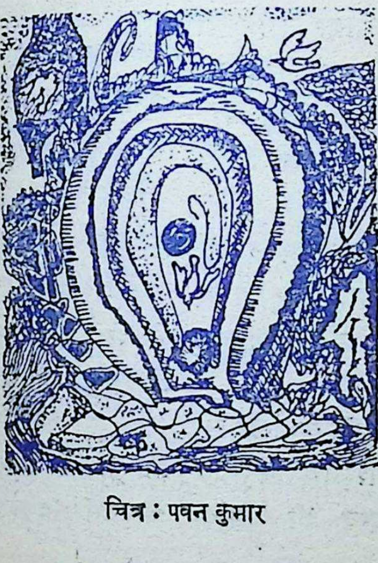

चित्र : पवन कुमार

और तब उनकी आँखों में अपने अतीत जीवन के अनकों चित्र तैरने लगते हैं और वे सोचते हैं।

"आने वाला जमाना भले ही मेरी अवतार या भगवान मानकर पूजा करे, मेरे नाम के आगे 'मर्यादा और पुरुषोत्तम', जैसे विशेषण लगाये, लेकिन उसे क्या पता कि इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराण पुरुषोत्तम को अपने कुटुम्ब की प्राचीन मर्यादाओं का पालन करने के लिए कैसे कैसे मानसिक संघर्षों में से गुजरना पड़ा है।

यह सच है कि रघुकुल में पिता की आज्ञा सर्वोपरि रही है, और मेरे पिता ने भी अपने पिता की आज्ञा पालन करते हुए राज्य सभा के समक्ष गर्वपूर्वक यह घोषणा की थी कि, "प्रजा की रक्षा में जागरूक रह कर मैंने अपने पूर्वजों के मार्ग का ही अनुसरण किया है।" स्वयं मैंने भी उसका अक्षरशः पालन करने का प्रयत्न किया। बनवास तो क्या, मैं पिता की आज्ञा से आँखे मूंद कर, आग में कूदने, जहर खा लेने तथा समुद्र में गिर पड़ने तक को तैयार रहा।

हमारे यहाँ की यह परम्परा रही कि कुन्डु ऋषि ने पिता की आज्ञा से गोहत्या की, सगर के पुत्र पिता की आज्ञा से धरती खोदकर मौत के मुँह में समा गये और परशुराम ने अपने पिता की आज्ञा से माँ तक का वध कर डाला।

मैंने भी अपने पिता की आज्ञा को माँ के स्नेह, पत्नी के प्यार, भाइयों के निमर्ल व्यवहार, और प्रजा जनों की आत्मीयता से ऊपर स्थान दिया है।

लेकिन यह कैसी पिता की आज्ञा है कि जो विवेक को खोकर बिना उचित अनुचित की परवाह किये, कुटुम्ब की मर्यादा पालन के नाम पर, कुटुम्बी जनों के स्नेह की, उनकी सुकोमल भावनाओं की बलि देन को बाध्य करती है।

पिता को हक है कि वे चाहें तो मुझे राजमुकुट पहनाकर राज सिंहासन दें अथवा मृगचर्म और वल्कल वसन पहना-कर वन में भेज दें, लेकिन उन्हें क्या हक है कि—

वे स्नेहमयी माँ की गोद से अपने बेटे को जुदा करा दें। उन्हें क्या हक है कि वे अपने बेटे का राज्य तिलक देखने को लालायित माँ की आँखों में वनवास की धूल झोंक दें।

उन्हें क्या हक है कि वे परस्पर एक दूसरे से मिलने के लिए आतुर भाइयों की भुजाओं को एक दूसरे से जुदा करा दें।

उन्हें क्या हक है कि वे लक्ष लक्ष जनता के "आनन्द और उल्लास" को "गम" में बदल दें।

उन्हें क्या हक है कि वे "लोकतन्त्र" की उपेक्षा करके "स्त्रीतन्त्र" को लागू करें।

लेकिन मेरे समक्ष पिता की आज्ञा ही सर्वोपरि नहीं थी, वरन पारिवारिक जनों के बीच स्नेह और सौजन्यता बनाये रखने के लिए ही मैंने अपने सुख की बलि देकर भी पारिवारिक शान्ति बनाये रखने का प्रयत्न किया। सीता का परित्याग भी उसी दिशा में एक सुदृढ़ कदम था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पता नहीं इतिहासकार मेरी इस अवस्था का, कहाँ तक मूल्यांकन कर पाते हैं।

सीता

निर्वासन के पश्चात सीता "वाल्मीकि आश्रम" के एकान्त में बैठकर सोचती है कि:-

भाग्य की यह कैसी विडम्बना है कि जिसे अपने युग के सर्वोत्तम पुरुष की पत्नी होने तथा जिसका यश दसों दिशाओं में फैला हो, ऐसे दशरथ की पुत्र-वधू होने का गौरव प्राप्त है उसे ही अपने पति के राज्य काल में निर्वासित जीवन बिताना पड़ रहा है।

लेकिन मुझे इसके लिए अपने पति से कोई शिकायत नहीं। कारण जब जो भी कर्तव्य उनके समक्ष धर्म बनकर आया फिर भले ही वह पिता की आज्ञा हो या अपनी पत्नी के परित्याग का कठोर कर्तव्य, उसके समक्ष उन्होंने सिर झुकाया है। बड़े से बड़ा कष्ट, खतरा, अपमान या अवहेलना भी उन्हें अपने मार्ग से विचलित नहीं कर सकी। एक अकेला आदमी किस तरह अपने सुख की बलि देकर एक आदर्श परिवार के निर्माण में अपना योग दे सकता है। इसकी उन्होंने जीवन भर साधना की।

धनुष भंग के पश्चात परशुराम से उनकी जब मुठभेड़ हुई तभी मैं यह समझ गयी थी कि यह व्यक्ति अपने मार्ग में आने वाली बड़ी से बड़ी कठिनाइयों को भी तिनके की तरह तोड़कर आगे बढ़ सकता है।

रावण के फौलादी पंजों से मुझे छुड़ाने के लिए उन्हें जो संघर्ष करना पड़ा उसे देखकर मैं यह समझ गयी थी कि इस व्यक्ति में अकेले रह जाने पर भी जंगलों में से शक्ति संचय कर प्रबल आन्तककारी से भी मोर्चा लेने की क्षमता है।

और इसके पूर्व कैकेयी के वचन के खातिर इन्होंने जब लक्ष लक्ष अयोध्या-वासियों के स्नेह की परवाह न कर अपनी माँ से बढ़कर सौतेली माँ की आज्ञा को प्रतिष्ठा दिलाने के लिए राज्य छोड़कर वन की राह अपनायी, उसी दिन में यह समझ गयी थी कि यह व्यक्ति प्रचण्ड बहुमत के खिलाफ अल्पमत की रक्षा के लिए अपने प्रिय से प्रिय जन की भी बलि देने से नहीं हिचकेगा।

लेकिन मुझे दुःख इस बात का है कि जिस व्यक्ति ने "सत्य" की जीवन भर साधना की, उसे ही "असत्य" के हाथों पराजित होना पड़ा।

जिस व्यक्ति ने "लोक-हित" के लिए अपने हित की परवाह न की, उसीके रहे-सहे सुख को भी निर्मम समाज ने उससे छीन लिया।

(शेष पृष्ठ ६५ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

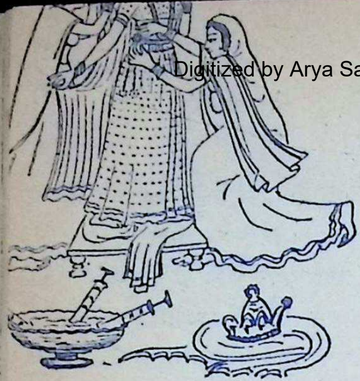

होली भारत का सामाजिक एवं सांस्कृतिक पर्व है। होली के पीछे परम्परा से प्राप्त जिस धार्मिक एवं वैदिक परम्परा का संबंध हमें प्राप्त है, उसका सप्रमाण आधार प्रस्तुत करते हुए लेखक ने इस पर्व की महत्ता पर बड़ी विद्वतापूर्वक प्रकाश डालने का प्रयास किया है।

अनाविल

होली और वसन्तोत्सव

मूल 'होलिका' शब्द से विकृत होकर 'होली' शब्द बना है, जिसका मूल संस्कृत है 'होलक' अर्थात् वसंतोत्सव।

उत्तर भारत में बड़ी खुशियों के साथ मनाये जानेवाले इस त्योहार के मूल पुराण कथाओं में गुंफित हैं। इन दंतकथाओं को साबित करने के लिए कई प्रसंग भी इनके साथ जोड़ दिये गये हैं। इस छोटे से लेख में हम कुछ विश्वसनीय मूल ग्रंथों के प्रमाणों का आधार लेंगे।

हरिभक्ति विलास अपनी प्रमाणिकता के लिए प्रसिद्ध है। वसंतोत्सव के विषय में हरिभक्ति विलास में कहा है कि:—

फाल्गुन्यां पौर्णमास्यां तु विदध्याद्वैष्णवैः सह।
श्रीकृष्णप्रियभक्तस्य वसंतस्यार्चनोत्सवम्॥
भविष्योत्तरतो ज्ञेयः तद्विधिश्योपदेशते।
यः श्री युधिष्ठिरस्योक्तो व्यक्तं भगवता स्वयम्॥

"फाल्गुनि पूर्णिमा के दिन हरि के सभी भक्तों को मिलकर श्रीकृष्ण के प्रिय भक्त वसंत की पूजा करनी चाहिए। श्रीकृष्ण ने स्वयं युधिष्ठिर को वसंत पूजा की विधि बतायी है, जिसका ज़िक्र भविष्योत्तर पुराण में किया गया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृतं तुषारसमये सितपञ्चदश्यां प्रातर्वसन्त-
समये समुपस्थिते च।
संप्राश्य चूत कुसुमं सहचन्दनेन सत्यं हि
पुरुषोऽब्दशतं सुखी स्यात्॥

"हे पार्थ! जो मनुष्य वसंत की प्रथम ओस-भीनी पूर्णिमा की भोर में चंदन-मिश्रित पवित्र जल को धीरे-धीरे पीता है, वह सच ही स्वस्थता से सौ बरस जियेगा"—

अन्त में कहा है:

एवं यः कुरुते पार्थ! शास्त्रोक्तं फाल्गुनो-
त्सवम्।
मत्प्रसादाच्च सिद्धयन्ति तस्य
सर्वे मनोरथाः॥

"हे युधिष्ठिर! जो मनुष्य शास्त्रों के मुताबिक फाल्गुनोत्सव मनाते हैं, (उसके फलस्वरूप तथा) मेरी कृपा से उनके सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं।

कालिका पुरा में भगवान वसंत की जन्मविधि बतायी गयी है।"

जब ब्रह्मा ने, कामदेव मन्मथ से, हर को, काम के पाश में लेने के लिए कहा, तब मन्मथ ने ब्रह्मा से पूछा:

"भगवन्! मैं आप की आज्ञा का पालन करता हूँ, लेकिन कृपा करके मुझे एक चक्र दीजिए जिसकी मदद से मैं हर को कामोत्तेजित कर सकूंगा।"

ब्रह्मा ने बात पर गौर करते हुए एक आह भरी, तभी उनकी नासिका से निःश्वास के साथ वसंत निकल आया। जब वह बाहर निकला, तब वह फलों के

वनों से ढका हुआ था; और मधु-मक्खियाँ उसके उपर गुनगुना रहीं थीं। उसके आते ही सारा वातावरण सुरक्षित हो उठा। सभी वृक्ष अपनी पूर्णता से खिल उ`। मयूर नृत्य करने लगे। इस समय सभी देवों, सिद्धों और तपस्वियों को अकारण ही एक प्रेम की अनुभूति होने लगी!

सारे रूपकों से परे ऐसी इस वसंत में नव जीवन की शक्ति भरी है। वसंत सभी नये सर्जन-कार्यों का सूचन करता है। होली के जलने से शाश्वत नव जीवन की शुरुआत होती है, और इसी वजह से उसकी भस्म पवित्र कहलाती है।

होली की इस स्वाभाविक शक्ति की पहचान के कारण ही लोग उसके पूर्वागमन का बहुत ही आनन्द से स्वागत करते हैं, जिसकी पूर्णाहुति होली महोत्सव में होती है। होली का यह त्योहार सिर्फ

[शेष पृष्ठ ६७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महेन्द्रनाथ सिंह

मध्यकालीन राग चित्र

इन राग-चित्रों के निर्माण के प्रेरणा स्रोत मूलतः राग-ध्यान और लक्षण गीत ही होते हैं। राग-ध्यान में प्रायः राग के वाहरी स्वरूप का एक स्पष्ट चित्र होता है, परन्तु लक्षण गीत में उसकी भीतरी प्रकृति ही चित्रित रहती है। स्वरों की सूक्ष्म कल्पना ही रेखा-रंगों में साकार होकर इन चित्रों में उतर आती है।

राग मल्हार : वसोहली शैली

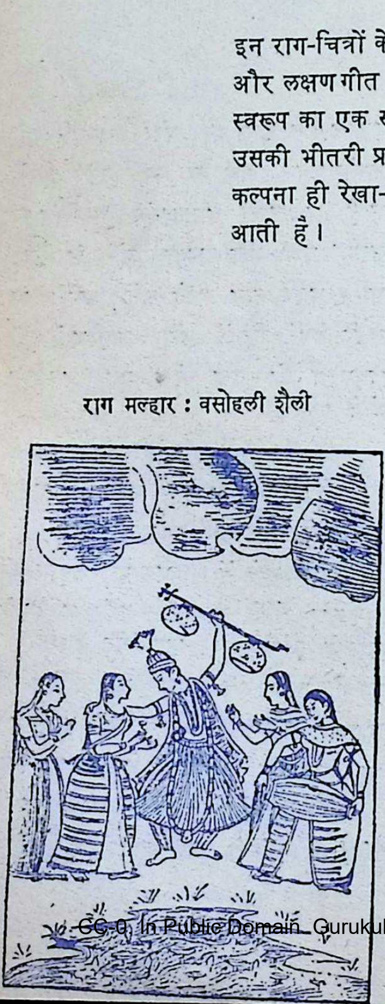

मध्यकालीन भारत यहाँ के संगीत और चित्र का स्वर्णयुग रहा है। इसके पूर्व हमारी चित्रकला नृत्य से ही चिपकी रहती है। संगीत के सप्तस्वर जिनसे रागों की अवधारणा होती है, उस ओर अजन्ता कला में कोई प्रयास नहीं किया गया है। परंतु उन नृत्यालेखनों का ही यह प्रभाव होता है, जिनसे मध्यकाल में चित्रकारों का ध्यान राग चित्रण की ओर आकृष्ट होता है, यहीं से चित्रकला और संगीत एक सूत्र में आवद्ध हो जाते हैं। संगीत का यह सुयोग पाकर राजपूत चित्रशैली रागों का एक विशद और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोहारी चित्र-विधान लेकर हमारे सामने आती है। संगीत के क्षेत्र में जहाँ नये-नये राग देखने में आते हैं, वहाँ नये नये साज भी। तानसेन की स्वर लहरी एक विचित्र मोड़ लेकर ख्याल गायकी को नये तर्ज व अदा के साथ पेश करती है। लयकारी की सूक्ष्मता और लालित्य का रसस्रोत इस विधा की मूल विशेषता होती है, जिसका प्रभाव यहाँ की चित्रकला पर भी पड़ता है। और तब उन चित्रों का मुख्याकर्षण आलंकारिक स्वरूप हो जाता है। वास्तव में ख्याल गायकी में भी प्रधानता अलंकारों की ही रहती है, जिसे संगीत की शब्दावली में तानालाप, बोल-तान आदि कहते हैं। इस प्रकार यह गायकी अपने असाधारण स्वर संयोजन से संगीत को एक स्वच्छन्दवादी धरातल पर प्रतिष्ठापित करती है जहाँ भावनाओं का सुखमय साम्राज्य होता है।

इन राग-चित्रों के निर्माण के प्रेरणास्रोत मूलत: राग-ध्यान और लक्षण गीत ही होते हैं। राग ध्यान में प्राय: राग के बाहरी स्वरूप का एक स्पष्ट चित्र होता है परंतु लक्षण गीत में उसकी भीतरी प्रकृति ही चित्रित रहती है। इसीलिए संगीत शास्त्रियों द्वारा निर्धारित राग ध्यानों पर बने चित्र कला की दृष्टि से महत्व के नहीं होते हैं। मुगलकाल के अधिकांश राग चित्र 'ध्यानों' से ही बनाये गये हैं

राग-वसंत : पहाड़ी शैली

क्योंकि प्रकृति-प्रेमी मुगलों को काल्पनिक चित्रण से अरुचि सी रहती थी। इस प्रकार इस काल के बने राग-चित्रों की कोई अपनी मौलिकता नहीं है, क्योंकि इनमें चित्रकार की प्रतिभा और कल्पना का सर्वथा अभाव है, लेकिन इसके पूर्व और बाद के बने राग-चित्रों में स्वरों की अव्यक्त सत्ता को चित्रबद्ध करने की अपूर्व क्षमता होती है। उदाहरण के लिए यहाँ दिये गये लक्षण गीत के संदर्भ में पहाड़ी शैली के इस बसंत चित्र का स्वरूप अंकन देखिए—

कैसी सरस बसन्ती पिया ने रचायी।
मैं जानूं अब परज सुनावत, श्रुतियन भेद दिखायी। कैसी०
आरोहन बिन पंचम, रिषभ, श्रीसूरत बतलायी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंद विलोम चतुर म ग संगत, सुध बुध सब बिसरायी। कैसी०

प्रस्तुत चित्र और इस लक्षणगीत में कितना साम्य है। इस चित्र में राग की प्रकृति का दिव्य स्वरूप अंकित किया गया है। ऋतुराज के इस महोत्सव में नटराज अपने नवल नवेलियों सहित नृत्य समारोह को बड़े ही कल्पनात्मक ढंग से सम्पन्न कर रहे हैं। भला इस दिव्य छटा पर कौन आत्म विस्मृत न होगा। चित्रकार ने बसंत के उमंग उत्साह को नृत्य की थिरकनों और मुद्राओं में देखा है। वह अपनी मौलिक रचना से उन लता-वितानों पर चहकते पक्षियों की भावात्मक अभिव्यक्ति कर चित्र का कोना-कोना सुरभित सुमनों से भर देता है- जहाँ बसन्त बोल उठता है। भावाभिव्यक्ति का यह सौंदर्य हमें मुगल कालीन राग चित्रों में नहीं देखने को मिलता है। प्रायः ये चित्र राग ध्यानों के अंधानुकरण होते हैं। परंतु यह मालकोंस चित्र इस कथन का अपवाद है। शास्त्रकारों ने इसे वीर रस प्रधान राग माना है जैसा कि राग ध्यान से स्वयं ही स्पष्ट हो रहा है-

राग–मालकोंस–(मुगलकालीन)

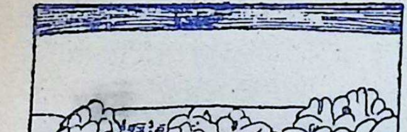

आरक्त वर्णो धृतरक्त यष्टिः वीरः सुवीरेषु कृत प्रवीरः।
वीरैधृतो वैरिकपालमाला मालीमतो मालव कौशिकोऽयम ॥

साथ के दिये हुए 'मालकोंस' चित्र की मौलिकता पर विचार करें। सम्पूर्ण चित्र में एक सुहावना वातावरण छाया हुआ है। भय और आतंक का लेश तक नहीं; हाँ, गोपियों के बीच कृष्ण की क्षणिक उत्तेजना अवश्य दीख पड़ती है। सब मिला कर यह दृश्य शृंगारिक भावनाओं को ही प्रस्तुत करने में सक्षम हो रहा है। वैसे भी इस राग में शृंगार प्रधान गीतों का ही अधिक प्रचार है। राग में आये हुए स्वर-संयोजनों से भी यह शृंगार प्रधान राग ही प्रतिध्वनित होता है।

उत्तर मध्य काल में शास्त्रीय संगीत अपने पूर्ण विकसित अवस्था को प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही जाता है। ख्याल गायकी के बाद के नव आकर्षणों में तराना का नम्बर आता है, जो तानसेन की प्रेयसी तानी के सुललित कंठ से निःसृत होकर संगीत को विशेष समृद्धिशील बना देता है। परंतु स्वरों के इस लालित्य को रंग-रेखाओं में रूपायित करने के लिए चित्रकारों को एक स्वच्छन्द रचना शैली की आवश्यकता प्रतीत होती है जिसे राजस्थानी और पहाड़ी शैली के चित्रकार अपनी आदर्शवादी शैली के माध्यम से चित्रित करने में पूर्ण सफलता प्राप्त करते हैं। गढ़वाल शैली का 'रागवर्धन' चित्र (जो भारत सरकार की कृपा से अभी-अभी प्रकाश में आया है) बहुत ही महत्व का जान पड़ता है। इस चित्र में करुण और वीर रस का चित्रण अपनी पराकाष्ठा पर दीख रहा है। वास्तव में यह सुअवसर राजपूत शैली के चित्रकारों को ही प्राप्त होता है, जिनकी मुक्त तूलिका से भैरवी असावरी, तोड़ी, हिंडोल, कुकुभ, मधु-माधवी, रामकली, गौडसारंग, ललित, सोर, गौरी, वसन्त और मल्हार आदि राग-चित्रों के उत्कृष्टतम स्वरूप हमारे सामने आते हैं। इन चित्रों में चित्रकार रागानुकूल वातावरण उपस्थित करने के लिए राग ध्यान से अलग हटकर अपनी प्रतिभा और कल्पना शक्ति के सुयोग से सर्वथा एक मौलिक चित्र रचना का आदर्श

राग-बर्धन : गढ़वाल शैली

हमारे सामने रखते हैं। देखिए, राजपूत शैली का 'मल्हार' चित्र। गौड़-मल्हार, मेघमल्हार आदि राग 'मल्हार' से ही किंचिद् हेरफेर करके बनाये गये हैं, प्रस्तुत राग चित्र और गौड़ मल्हार के इस लक्षण गीत का साम्य अकथनीय है–

गौड़मलार चतुरगुनी गावत।
सम्पूरन सुर हरि को दिखावत।
मध्यमवादी सुर बतलावत,
शुद्ध मलार ग नि सुबचावत,
रे रे प म प ऽ म प ध सां अंग मानत।
गौड़०

यों तो वर्षाजनित अनुभूतियों की एक सफल सजीव अभिव्यक्ति इन लयात्मक

[शेष पृष्ठ ५९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णावतार

धारावाहिक पूर्ण-पुरुष लीला

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

चित्र : हिन्दी विश्व भारती, लखनऊ
के सौजन्य से : चित्रकार पन्नालाल

[३३]

दैवी धनुष

रंगरेज की दुकान के सामने एकत्र जनसमुदाय त्रिवक्रा की विकृतियों के सौम्य रूपान्तर को परम आश्चर्य से देख रहा था। इतने में कुछ दूरी पर भांति-भांति की ध्वनियाँ सुनायी पड़ने लगीं। घोड़ों की टाप, लोगों पर पड़ते कोड़ों की मार और घायल व्यक्तियों के आर्तनाद से वातावरण गूंज उठा कोई घुड़सवार बड़ी तेज़ी से आगे बढ़ रहा था और अपने मार्ग में आनेवाले सभी लोगों को कोड़े लगा कर दूर हटा रहा था।

बलराम शीघ्र उत्तेजित नहीं होता था, परन्तु एक बार क्रोधाग्नि भड़कने पर यह अल्पभाषी बालक रौद्ररूप धारण कर लेता था। उसने लपक कर घोड़े की लगाम पकड़ी और तेज़ी से आगे बढ़ते हुए वेगवान घोड़े को अपने हाथों पर रोक लिया। घुड़सवार ने क्रोधित होकर कोड़ा चलाया, परन्तु वह उसे वापस उठा सके, इससे पहले तो कोड़ा बलराम के हाथ में था और घुड़सवार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़मीन पर!

मथुरा की जनता ने सत्ताधीशों का इस प्रकार प्रतिकार होते कभी देखा नहीं था। वे लोग इन पराक्रमी बालक को आश्चर्य-विमुग्ध हो निहारने लगे और बलराम की जयजयकार करने लगे। बलराम ऊँचे क़द और डीलडोल का था, परन्तु उसमें इतनी प्रचंड शक्ति होगी, यह किसी को खयाल भी नहीं हो सकता था। उसने न केवल वेगवान अश्व को रोका, बल्कि उसे पीछे भी धकेल दिया। अश्व ने अपना सारा ज़ोर आगे के दो पैरों पर लगाकर आगे बढ़ने की कोशिश की, किन्तु वह व्यर्थ रही। बलराम उसे पीछे धकेलता-धकेलता पीछे से आ रहे रथ में जुते बैलों तक ले गया।

पिछले पैरों पर आ रहे अश्व को देख कर तथा लोगों के कोलाहल से रथ के बैल भड़क उठे। रथ में बैठी हुई दो स्त्रियाँ चीख पड़ी। उनमें से एक तो प्रायः पच्चीस वर्ष की सुंदर स्त्री थीं; दूसरी सोलह वर्ष की लावण्यमयी बालिका। अश्वारूढ़ सवार कोई राजकुमार लगता था। अपने वदन पर लगी धूल झाड़ कर वह उठ खड़ा हुआ और रथ के पीछे आ रहे दो सवारों को पुकारने लगा। परन्तु रथ के बीच में आ जाने से रास्ता बंद हो गया था। अश्वारोही राजकुमार बलराम की ओर बढ़ा। इतने में कृष्ण ने उसका गला धर दवाया। राजकुमार ग़ुस्से से लाल हो रहा था। पीछे मुड़ कर वह चिल्लाया, 'मूर्ख! जानता है, मैं कौन हूँ! विदर्भ का राजकुमार-रुक्मी—तेरे स्वामी कंस का मेहमान!'

'जब तूंने अपना परिचय स्वयं ही दिया है, तो क्यों नहीं पहचानूंगा?' कृष्ण ने अविचलित स्वर में कहा, 'पीछे जा! तेरे साथ जो स्त्रियाँ हैं, उनको संभाल और लोगों को हैरान करना वंद कर!'

'दुष्ट!' रुक्मी ने म्यान में से तलवार खींचते हुए कहा। परन्तु तलवार म्यान में से निकले इससे पहले ही कृष्ण ने उसे धराशायी कर दिया। रथ की दिशा में धकेलते हुए, कृष्ण ने उसे उठा कर अनाज के बोरे की तरह रथ में फेंक दिया। अंदर बैठी हुई दोनों स्त्रियाँ आवेश में आकर चिल्ला रही थीं। उनमें से उस रमणीय कन्या ने कहा! 'दुष्ट! मेरे भाई को छोड़!'

कृष्ण ने अपनी वही सुविख्यात हृदयहारी मुस्कान बिखेरते हुए कहा, 'यह आपका भाई है? राजकुमारी, आपको चाहिए कि इसे राजाओं के योग्य व्यवहार करना सिखायें!

'ओह, क्या दशा कर दी है तुमने मेरे भाई की!' राजकुमारी रो रही थी।

परन्तु कृष्ण की आँखों में एक अजीब मस्ती ओर मोहिनी थी। 'चिन्ता न करो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुकन्ये !' उसने कहा, 'आपके भाई का केवल घमंड ही टूटा है, और सब सही सलामत है। अब यह विवेक से काम लेना सीखेगा–आपके प्रति भी अधिक विनयशील होगा !'

यह कह कर कृष्ण हँस पड़ा। कृष्ण की जादूभरी चित्तवन किसे प्रभावित नहीं करती ? विदर्भ की इस राजकन्या के आँखों में तो अश्रु थे, पर होंठों पर एक हल्की सी मुस्कान आये बिना नहीं रही।

इसके बाद कृष्ण बैलों के पास गया। वे अब भी भड़के हुए थे और भागने का प्रयत्न कर रहे थे। कृष्ण मानवों को वश करने के साथ-साथ पशुओं को वश करने की कला भी जानता था। वह निर्भय होकर आगे बढ़ा और बड़े स्नेह से बैलों को पुचकारा। कुछ मी` शब्द, कुछ हल्की सी थपथपाहट–और बैल शांत हो गये। कृष्ण बैलों के गले पर बड़े प्रेम से हाथ फेरने लगा। बैलों का भय दूर हुआ। थोड़ी देर बाद उन्हें रास्ते पर यथास्थिति खड़ा कर रास रथ चलानेवाले की ओर फेंक कर कहा, 'ध्यान रखना इनका- बड़ी सुंदर जोड़ी है !' फिर उसने राजकुमारी की ओर देख कर अपनी मोहक मुस्कान बिखेरी। रथ रवाना हुआ तो उसके पीछे-पीछे क्मी भी नम्र हो कर चला गया।

विराट जनमेदनी इन दो भाइयों का पराक्रम देख कर आश्चर्यचकित रह गयी थी और अपूर्व आदर से उन्हें निहार रही थी। उन्होंने त्रिवक्रा की विकृतियाँ दूर कीं ; वेगवान अश्व को खिलौने की तरह उठा लिया ; कंस के राज मेहमान को राशायी किया और बोरे की तरह उठा कर फेंक दिया; भड़के हुए बैलों को शांत किया ! त्रिवक्रा अब सीधी चल सकती थी। उसके हर्ष का पार नहीं था। उसके जीवन का स्वप्न आज परिपूर्ण था। उसके हृदय में उमड़ती आनंद और आभार की भावना छिपी नहीं रही। अपने बगल में खड़े व्यक्ति के कान में उसने कहा, 'यही तो है देवकी का आँ पुत्र ! आखिर नारद की भविष्यवाणी सच हरी !'

जन समुदाय के प्रेम और आदरभरे अभिवादनों को स्वीकार करते हुए कृष्ण और बलराम आगे बढ़ रहे थे। कई लोगों ने उनके पीछे-पीछे चलना भी शुरू किया, जिनमें त्रिवक्रा प्रमुख थी। इन दो सुंदर, सुकुमार बालकों के पीछे वह पागल सी हुई जा रही थी–कृष्ण को तो वह प्रभु का अवतार ही मानती थी ! नों भाइयों को वह शहर के दर्शनीय स्थान दिखाती हुई चल रही थी।

रंगरेज़ और रुक्मी की जो दशा कंस-बलराम के हाथों हुई, उसकी सूचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजमहल तक पहुँची और सेनापति प्रद्योत अपने साथ कुछ सैनिकों को लेकर तत्काल•घटना स्थल पर पहुँचा। वहाँ पहुँच कर पूछताछ करने के बाद कृष्ण-बलराम जिस ओर गये थे उसी ओर वह चला। नगर में स्वछंद घूमते हुए वे बालक जब उसको दूर से दिखायी पड़े तो प्रद्योत घोड़े परसे उतरा और पैदल ही उन के पास गया। उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना वह भी नहीं रह सका–कृष्ण की मोहिनी ने उस पर भी अपना प्रभाव दिखाया।

'आप कौन हैं?' बलराम ने पूछा।

'मैं प्रद्योत हूँ, अंधकों का सरदार, राजा कंस का सेनापति!' प्रद्योत ने कहा।

'आपके शहर में कैसे-कैसे असभ्य लोग भरे हैं!' बलराम ने स्पष्ट कहा, 'हमने शहर में प्रवेश किया कि एक आदमी ने कृष्ण को मारने का प्रयास किया और दूसरे ने मुझ पर कोड़ा चलाया!'

बलराम ने रुक्मी के कोड़े से अपने शरीर पर पड़ा दाग दिखाया।

'आपका यह अतिथि-सत्कार तो आदर्श लगता है!' उसने कहा और मुक्त रूप से खिलखिला कर हँस पड़ा।

कृष्ण ने हाथ जोड़ कर कहा, 'आपसे मिल कर अत्यंत प्रसन्नता हुई, अंधकश्रेष्ठ! आपके बारे में हमने बहुत-कुछ सुना है,' कृष्ण की वाणी में गौरव और आदर दोनों थे, 'आप तो परम वीर हैं।'

'प्रद्योत काका, रंगरेज़ का वर्ताव इन बालकों के साथ इतना असभ्य था!' त्रिवक्रा ने कहा, 'और विदर्भराज ने तो बलराम पर कोड़ा चलाया!'

प्रद्योत इस सुंदर नारी को एकटक देख रहा था–उसकी आँखें आश्चर्य से फटी रह गयीं। 'तू कौन है?' उसने पूछा।

'आप मुझे भूल गये, काका?' त्रिवक्रा ने हँस कर कहा 'आज सवेरे ही तो आपको इत्र और अनुलेप दे गयी थी। मैं देखती हूँ, आप भुलक्कड़ होते जा रहे हैं!' उसने सहज, परिचित सरलता से कहा।

प्रद्योत को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ।

'त्रिवक्रा, तुझे क्या हुआ? तेरी विकृतियाँ कहाँ चली गयी? तू तो बड़ी सुंदर लग रही है!' उसने कहा।

'यह सब मेरे प्रभु की माया है!' उसने हाथ जोड़ कर कृष्ण को प्रणाम करते हुए कहा।

प्रद्योत कृष्ण की ओर ताकने लगा। अब उसकी समझ में आया–यही तो देवकी का आठवाँ पुत्र है! उसीकी हत्या करने की आज्ञा उसे मिली थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि वह त्रिवक्रा की विकृतियाँ मिटा सकता है, तो निश्चय ही ईश्वर का अवतार है। फिर तो नारद की भविष्य-वाणी सच सिद्ध होनी चाहिए। कंस के महल के अंधेरे गलियारे में जो कुकृत्य हुआ उसने उस दिन देखा था, उसकी कड़ुआहट अभी उसके मन से गयी नहीं थी।

'मैं तुमको नगर-दर्शन के लिए ले चलता हूँ,' प्रद्योत ने कहा, 'तुम लोगों को शहर देखना है न?'

'हाँ, हमें सब-कुछ देखना है!' कृष्ण ने कहा।

'मुझे तो वह विराट धनुष देखना है,' बलराम ने कहा, 'हमने उसके बारे में बहुत सुना है!'

'मेरे साथ चलो-मैं तुम्हें मंडप में ले चलता हूँ—वहाँ धनुष की पूजा हो रही हैं,' प्रद्योत ने कहा।

वे सब मंडप की ओर चल पड़े। त्रिवक्रा रास्ते में पड़े स्थलों का वर्णन कर रही थी। मंडप के पास पहुँच कर प्रद्योत ने दोनों भाइयों से पूछा, 'तुममें से किसी ने ऐसे धनुष का उपयोग किया है?'

'आपके समान धनुष हमारे पास कहाँ से आयेगा? हम तो बाँस या लकड़ी से धनुष बनाते हैं; जंगली जानवरों को मारने के लिए वह काफी है।'

यमुनातट पर, राजमहल के पास ही एक विराट मंडप बनाया गया था। दैवी धनुष को देखने बहुत से लोग आते थे, जिनमें [illegible] के लिए आमंत्रित विशिष्ट अतिथि भी थे। मंडप के बीच एक पीठिका पर यह धनुष रखा गया था। उसके तोनों ओर बैठे हुए ब्राह्मण मंत्रोच्चार द्वारा धनुष की पूजा कर रहे थे। बहुत से मेहमान इस विचित्र धनुष को देख कर आश्चर्य व्यक्त करते थे, तो धनुष-प्रतियोगिता में भाग लेने के इच्छुक उसका सूक्ष्मता से अवलोकन करते थे। इस धनुर्यज्ञ में अंतिम दिन जो व्यक्ति इस धनुष को उठा कर उस पर से सबसे दूर तीर फेंक सकेगा, वही वीर घोषित किया आयेगा और योग्य पारितोषिक भी पायेगा।

धनुष के समीप पहुँचने पर प्रद्योत ने त्रिवक्रा के कान में कुछ कहा। त्रिवक्रा ने कृष्ण के सामने एक अर्थपूर्ण दृष्टि से देखा। ऐसा लगा कि कृष्ण उसका मर्म समझ गया। इस धनुष से कोई बाण छोड़ सके या नहीं, यह इतना महत्वपूर्ण नहीं था। यह धनुष ही कंस की सभा का प्रतीक था, लोगों को भय में रखने का साधन था। कृष्ण धनुष को एकाग्रता से देख रहा था। एक अवर्णनीय स्फुरणा का अनुभव उसने अपनी समस्त देह में किया।

तभी त्रिवक्रा ने कहा, 'प्रभु, आप यह धनुष उठा कर तो देखें! प्रद्योत काका के कुशल आयुधविदों ने इसकी रचना की है।' त्रिवक्रा के इस कथन के पीछे चाहे कुछ अर्थ रहा हो या नहीं, यह धनुष भय का प्रतीक है और इसलिए इसे नष्ट करना ही चाहिए, ऐसा सोच कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्ण ने कहा, 'मैं निष्णात धनुर्धर नहीं; मैं तो एक सामान्य ग्वाला हूँ। फिर भी अंतिम दिन मेरा विचार स्पर्धा में भाग लेने का है। क्या मैं इसे उठा कर देख सकता हूँ कि यह कितना भारी है?'

'हां, नंदकिशोर!' प्रद्योत ने त्रिवक्रा की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि डालते हुए कहा, 'परन्तु तुम इसे उठा नहीं सकोगे। कुशल धनुर्धर भी इसे नहीं उठा पाते।'

प्रद्योत के मन में एक विचार का उदय हुआ। क्या यह बालक सचमुच तारणहार है! कंस के अत्याचारों से क्या वह प्रजा को बचा सकेगा?

'फिर भी प्रयत्न करने में क्या जाता है?' प्रद्योत ने कहा।

कृष्ण थोड़ी देर तक धनुष के सामने ताकता रहा, मानो उसके भार का अंदाज़ लगा रहा हो। सभी लोग सशंक और कई तो उपहास भरी दृष्टि से उसकी ओर देख रहे थे। एकाएक नीचे झुक कर उसने धनुष उठा लिया! आसपास के लोग इस घटना से दंग रह गये।

'अंतिम दिन इस धनुष का उपयोग होगा?' कृष्ण ने पूछा।

'हां,' प्रद्योत ने कहा। अब उसकी वाणी में एक नया आदर था।

'इस धनुष से तीर छोड़ने का काम अति विकट है?' कृष्ण ने सरलता से पूछा। धनुष को वह बारीकी से देख रहा था; अचानक उसमें एक जोड़ उसे दिखायी पड़ा। धनुष को वापस रखने के बजाय अपना एक पैर उसने धनुष के एक छोर पर रखा और दूसरे सिरे को ज़ोर से खींचा। सभी लोग आश्चर्य और भय से उसकी ओर देख रहे थे। एक आवाज़ कर धनुष टूट गया। कृष्ण ने धनुष के टुकड़े फेंक दिये और अट्टहास किया।

यह पराक्रम अपूर्व था– इसमें कंस का अपमान था, यज्ञ का भंग था। परन्तु सभी ने अत्यंत विस्मय और भय की भावना से देखा कि दोनों भाई संपूर्ण उपेक्षा दिखाते हुए वहाँ से चल दिये। उस घड़ी प्रद्योत के हृदय में दो मिश्र भावनाएं थीं–पश्चाताप की और प्रसन्नता की। [क्रमशः]

—अनु. ओंकारनाथ शर्मा

★

[पृष्ठ ५३ का शेष]

रंग-रेखाओं से की गयी है, बावजूद इसके राग के आंतरिक स्वरूप को भी पात्रों की भावभंगी में अंकित कर उसके स्वरूप को साकारता प्रदान की गयी है। जहाँ तक राग रचना का सबंध है, चित्रकार ने इसमें उसके मुख्य अग (रे रे प म प ऽ म प ध सां) की इस गतिमयता को मानवीय आकृतियों से लेकर प्रकृति के लहराते हुए फूल और लुढ़कती-मचलती घटाओं में भी बड़ी भावुकता के साथ अंकित किया है। वस्तुतः ये चित्र उन स्वरों से उत्पन्न भाव रसों की एक विशेष स्थिति हैं। स्वरों की सूक्ष्म कल्पना जो चित्रकारों के भीतर उठती है, वही रेखा-रंगों में साकार होकर इन चित्रों में उतर आती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[कुलपति का पत्र : पृष्ठ ८ का शेष]

विजय में बहुत श्रद्धा नहीं थी, परन्तु सबसे अधिक चिन्ता उन्हें कांग्रेस के अहिंसा पथ को छोड़ कर युद्ध की क्रूरता में भाग लेने की थी, और जैसे चमत्कार वे बहुधा दिखाते थे, वैसे ही 'भारत छोड़ो' आन्दोलन का प्रारम्भ जिस चमत्कारपूर्ण ढंग से उन्होंने किया और उससे जनता को अन्दोलित किया, उसके बाद और कुछ सोचने की गुंजाइश नहीं रह गयी थी।

आज यह अनुमान लगाना आसान होगा कि यदि कांग्रेस ने क्रिप्स प्रस्ताव को न ठुकराया होता, तो क्या होता। शायद विश्वयुद्ध के बाद भारत एक अधिक शक्तिशाली राष्ट्र बन गया होता। परन्तु यह केवल अनुमान ही है। 'भारत छोड़ो आन्दोलन' से जो ताकत उसे मिली, कम से कम, वह तो उसे नहीं ही मिलती।

जिस दिन आज़ादी मिली, उसी दिन मैंने कहा था: "इतिहास में ग्रेटब्रिटेन के अतिरिक्त और कोई शक्ति इतनी उदारता के साथ स्वाधीनता नहीं देती और न भारत के अतिरिक्त और कोई राष्ट्र इतनी सहृदयता से इस ऋण को स्वीकार करता।" लोगों द्वारा गलत समझे जाने का ख़तरा मोल लेकर भी वर्षों तक मैंने अपने इस विचार को नहीं छिपाया कि स्वाधीनता के बदले भारत के लिए ब्रिटिश कामनवेल्थ में उपनिवेश बन कर रहना अधिक हितकर होगा। आज यह बात सत्य सिद्ध हो रही है और, पिछले सोलह वर्षों में भारत-ब्रिटिश सम्बन्धों में मेरा विश्वास अधिकाधिक बढ़ा है।

भविष्य में, ब्रिटिश शासन के इन अच्छे पहलुओं को हम याद रखेंगे: प्रशासनीय एकता और सातत्य की भावना, जो उन्होंने देश को दी; अंग्रेजी शिक्षा और पश्चिम के साथ सम्पर्क के फलस्वरूप पुरातन देश का आधुनिक संसार में प्रवेश; कानून का शासन और जनतांत्रिक स्वतंत्रता का सुदृढ़ आधार। अंग्रेजों के शासन में जो कष्ट और हानि हमें हुई, वह वर्षों की निष्क्रियता के बाद एक राष्ट्र द्वारा प्रगति के लिए चुकायी गयी क़ीमत से अधिक नहीं थी।

आपका

क॰ मा॰ मुंशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[कैलास-धाम...... पृष्ठ १३ का शेष]

...न के इन सैकड़ों देवालयों में जो मैं ...एक बैठा हूँ–उसकी ऐसी उपेक्षा क्यों ? ...बेरेश्वर में पूजा के ऐश्वर्य का अन्त नहीं ...और इन सैकड़ों देवालयों में, बरसों ...देवता अन-नहाये, अनपूजे, भोग-नैवेद्य–...विहीन निराहार बैठे हैं। कुबेरेश्वर के अभिषेक में दूध, दही, मधु, गन्ध-जल, इत्र-फुलेलों का सागर उमड़ता है, नैवेद्य के ढेर लग जाते हैं, यहाँ हमारे लिंगों का अभिषेक चूहों के मूत्र से होता है, उनकी ...मिठाइयों का नैवेद्य चढ़ता है, और स्वयं चूहे यहाँ एकादशी करते हैं। वहाँ शंख घंटारव गूंजते हैं, यहाँ दिन में भी हमारे मस्तक पर चमगादड़ और उल्लू बोलते हैं। सो, ओरे भाई प्रभुलाल, तूं ही बता, तूने उन कुबेरेश्वर में क्या विशेष पाया, और हममें क्या कमी देखी, जो तू भी हमारी उपेक्षा कर हर दिन पूजा करने को वहीं ...सकता है ....?

सारी अरण्य-भूमि मानव के अज्ञानपर किये गये भगवान के इस आर्त्त-क्रन्दन से दहल उठी। मैं जहाँ का तहाँ गड़ा सा खड़ा रह गया। निमिष मात्र में ही अनादिकाल से मेरी आत्मा पर पड़ा भेद का परदा छिन्न-भिन्न हो गया। एक अभेद, नाम-रूपातीत, चिद्घन आनन्द और प्रकाश के सागर में मेरी समस्त सत्ता डूब गयी। बाहर की अरण्य-भूमि, पशु-पंखी, नर्मदा का प्रवाह, वे अनेक शिवालय, आते-जाते नर-नारी-सब में मुझे उसी एक अभेद सच्चिदानन्द का समान रूप से दर्शन होने लगा। आनन्द से विह्वल होकर मैंने उन महादेव को उत्तर दिया, 'हे सर्वशक्तिमान। तेरी पूजा करने और न करने वाला मैं कौन होता हूँ? तूं चाहे तो किसकी सामर्थ्य है, जो तेरी पूजा न करे। आज्ञा करो देवाधिदेव, और सामर्थ्य दो, कि उसका पालन करूँ!'

महादेव बोले–

'तो बरसों की हमारी बासी मलिन काया को नहलाओ: हमारे अन्धेरे कक्षों में दीप जलाओ: हमारे उपासी उदरों को भोग चढ़ाओ। हमारे सूने मन्दिरों के सन्नाटों में घंटे गुंजाओ ... ।'

'जो आज्ञा देवाधिदेव, शक्ति दो, सामर्थ्य दो, कि तुम्हारी इच्छा पूरी कर सकूं.....।'

कुबेरेश्वर के लिए सजी पूजा की थाली, वहीं चबूतरे पर धर कर, उस मन्दिर में जाकर झाड़ू लगाया, कई घड़े नर्मदा-जल लाकर, मानों जन्मों से मेरे अज्ञान के जड़ित देवालय में अननहाये बैठे भगवान को नहलाया। अपनी पूजा के फूल, धूप-दीप, नैवेद्य सब उन्हीं को चढ़ाकर, अभेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आनन्द के प्रकाश में नव जन्म पाकर, मैं अपने घर मानों एक नयी ही दुनिया में लौट आया। ऐसा लगता जैसे उस दिन मैं एक ऐसे घर लौटा, जिसके सुरक्षा और सुख अमर हैं, जिसका कभी नाश नहीं है, जो सदा-सर्वदा अपना है।

उसके बाद रात-दिन मन में यही संकल्प करवटें बदलने लगा कि, देवाधिदेव की आज्ञा कैसे पूरी हो, कैसे समस्त कैलास-धाम के सारे देवालय, अभिषेक, आरती, पूजा के घंटारवों से गूंज उठें।

'..अचानक एक दिन बम्बई के देशी नाटक समाज के मालिक श्री हरगोवन भाई मेरे पास आकर बोले कि– 'कैलास-धाम के शिवालयों में बरसों से अभिषेक-पूजा नहीं हुई, इससे मेरा मन बड़ा खिन्न है। मेरी इच्छा है कि, अब से मेरी ओर से नित्य हर शिवालय में अभिषेक, पूजा, आरती का क्रम अटूट चलता रहे....!'

सुनकर मेरी आँखों में उल्लास और कृतज्ञता के आँसू छलक आये। भीतर ही भीतर एक अभेद गहन आनन्द में डूब कर मुझे प्रतीति हुई– अरे कौन है भगवान और कौन है भक्त? कौन हैं देव और कौन है पुजारी? कौन है प्रभुलाल और कौन है हरगोवन भाई? उस एक सर्वशक्तिमान ही की ये अनंत लीलाएँ हैं।....

उसके बाद बरसों तक हरगोवन भाई की ओर से कैलास-धाम के सारे देवालय प्रातः–संध्या, पूजा-आरती से गूंजते रहे। पर उनके अवसान के बाद फिर वह क्रम टूट गया।

पूजा-पाठ अब मैं नहीं करता। वैसी ज़रूरत भी नहीं रह गयी है। कौन है आराध्य और कौन है आराधक? कौन किसकी पूजा करे? मुझे तो सर्वत्र, हर वस्तु, व्यक्ति में भगवती और भगवान के दर्शन होते हैं।

फिर भी जिस देव-भूमि में मुझे एकदिन श्री भगवान ने इस अभेद प्रकाश का दर्शन कराया था, उनके देवालय पूजा-शून्य रहें, यह मुझे नहीं रुचता, यह मेरे मन में खटकता रहता है।

मेरे मन में यह साध है, कि फिर कहीं किसी दिशा से कोई भगवद् जन आये, एक मंगल प्रभात में, फिर ये असंख्य देवालय पूजा-आरती के घंटारव और शंख नादों से गूंज उठे: होम-हवन और धूप-दीप की गन्ध-शिखाओं से सारी अरण्य-भूमि एक नये प्राण से संजीवित हो उठे: और यह क्रम सदा के लिए अटूट हो जाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुनिया को क्रमशः बिगड़ती हुई परिस्थितियों के समक्ष इस आध्यात्मिक अवतरण का क्या अर्थ है। प्रश्न यह भी हो सकता है कि हमने पाया क्या? इसका उत्तर भी बहुत स्पष्ट नहीं है। पर हमारे सामने दो सूत्र उपस्थित होते हैं, एक तो यह कि आज की वैज्ञानिक प्रगति से पशु जगत ने कितना लाभ उठाया है। दूसरा यह कि हम किसी प्रभाव के प्रभाव को कितना आत्मसात् करने में सक्षम होते हैं। ३ फरवरी १९५८ को माँ ने बताया था कि, अतिमानसिक जगत और मनुष्यों के बीच लगभग वैसा ही पार्थक्य है, जैसा कि मनुष्यों और पशुओं के बीच है। मगर पृथ्वी के इतिहास मे ऐसे मुहूर्त आते हैं, जब हज़ारों वर्ष में चली आयी पुरानी चीज़ों को हट कर अब नयी उत्पन्न होने वाली चीज़ों के लिए स्थान खाली कर देना पड़ता है। अतिमानसिक शक्ति के पश्चात् अतिमानसिक सत्ता के निर्माण में मानव प्रकृति की अंध प्रवृत्तियों द्वारा कठिनाइयाँ उत्पन्न करने के कारण बाधाएँ तो आयेंगी ही, पर अब यह पशु जगत का कार्य नहीं रहा, मानव के सचेतन प्रयत्न अर्थात् योग भागवत कृपा की मदद से अब केवल शताब्दियाँ ही लगेंगी। मानव जीवन में शताब्दी का मूल्य हो सकता है, पर सृष्टि के अनन्त विस्तार में उनकी क़ीमत क्या है।

इस तरह अतिमानस धर्मों और विज्ञान से परे की अवस्था है, उस स्थिति में समस्त जीवन ही दिव्य एकत्व की अभिव्यक्ति बन जायेगा। पर क्या यह संभव होगा कि मानव सीधे अतिमानसिक सत्ता में प्रतिष्ठित हो। माताजी ने बताया है कि एक मध्यवर्ती जाति के निर्माण के बाद ही पूर्ण अतिमानसिक सत्ता की कल्पना की जा सकती है। यह मध्यवर्त्ती प्राणी बाहरी तौर पर आदमी होते हुए भी चेतना में होगा अतिमानव; और अतिमानव के प्रगट होने के साथ ही मानव प्रागैतिहासिक पशुओं की तरह नेस्त नाबूद हो जाय, ऐसी भी कोई आशा नहीं है। आखिर आदमी बन जाने से वानर जाति तो नहीं नष्ट हो गयी।

वास्तव में माताजी के उपरोक्त दर्शन ने धरती और उच्चतर लोकों के बीच का द्वार मुक्त कर दिया है। अब समय आ गया है कि मानव समाज उस चेतना से लाभ उठा कर अपने अज्ञान और अंधकार को ज्ञान और प्रकाश में बदलने का प्रयास करे। श्री अरविन्द और माताजी की योग साधना मुट्ठी भर लोगों की मानसिक शान्ति और आनन्द की वस्तु कभी नहीं रही। इसी कारण विभिन्न साधनाओं के पथिक बड़ी-बड़ी आशाएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर उनके पास आये, पर जब उन्होंने देखा कि इस मार्ग पर ऐसी कोई भी शक्ति नहीं मिलती जो, उनके व्यक्तिगत अहं को किसी भी रूप में आगे वढ़ाये, तो वे बड़े निराश हुए हैं। माताजी का कार्य एक व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं, विश्व सत्ता के प्रतीकात्मक विकास का कार्य है। सृष्टि को एक नये सोपान पर प्रतिष्ठित करने का कार्य है। इसी कारण पाण्डिचरी के एक कोने से संपूर्ण धरा-चेतना को रूपान्तरित करने वाला कार्य चल रहा है। अगर अवतार कहीं बाहर न आये-जाये तो भी वे अपना काम पूरा करते हैं, क्योंकि वह धरा चेतना के अन्दर होने वाला कार्य है। अतिमानस और भौतिक सत्ता के बीच सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य है।

और अन्त में माँ की यह वाणी उद्धृत करके २१ फरवरी को उनके जन्म दिन पर बिना कुछ कहे ही लेख समाप्त करता हूँ।

"वैश्व वातावरण के अन्दर अतिमानस सूक्ष्म भौतिक स्तर पर अभिव्यक्त हुआ है। बाह्य भौतिक स्तर पर अब कुछ भी दिखायी नहीं देता। प्रकृति ने अतिमानस को अस्वीकार नहीं किया। वह उसे अस्वीकार कर भी नहीं सकती थी, परन्तु अतिमानस निमज्जित हो गया है और उसे बाहर आने के लिए कार्य करना होगा।"

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यु. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : **ओछवलाल गोरधनदास शाह**

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

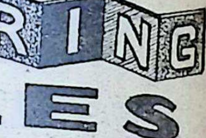

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२

फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[प्रश्न जब......पृष्ठ ४७ का शेष]

आदर्शवादी राम भले ही उस समाज को क्षमा कर दें; लेकिन जब तक पृथ्वी पर स्त्री जाति है, तब तक मैं उसे कभी क्षमा नहीं कर सकती।

३ भरत:

राम के वन में चले जाने के पश्चात् शोकमग्ना और हड़ताल ग्रस्त अयोध्या में आकर भरत सोचते हैं कि:– "आखिर यह सब देखना भी मेरे भाग्य में बदा था। जिस व्यक्ति ने स्वप्न में भी राज्य की इच्छा नहीं की, जिस व्यक्ति ने पिता की तरह बड़े भाइयों का सम्मान किया, जिस व्यक्ति ने अपनी माँ और सौतेली माँ में भेद नहीं जाना और जिस व्यक्ति को महलों में रहकर भी ऐश्वर्य की भूख छू तक नहीं गयी, उसी के नाम पर यह सब नाटक खेला गया

बहुत कुछ सोचने पर भी मैं यह समझ नहीं पाता कि जिस घर में सदा शान्ति रही, जहाँ माता से भी बढ़कर पिता की आज्ञा मानी जाती रही, जहाँ छोटे-बड़ों का सम्मान करते आये और बड़ों से छोटों को स्नेह मिलता आया और जहाँ किसी वस्तु जो दूर, विचार तक को लेकर किसी के चेहरे पर शिकन तक नहीं आयी; वहाँ यह सब हुआ कैसे? बचपन में भी जिन भाइयों में खिलौने तक के लिए झगड़ा नहीं हुआ, किशोरावस्था में भी जिन भाइयों में खेल-खेल में भी लड़ाई नहीं हुई, उन्हीं भा यों में "युवराज पद" को लेकर विवाद होगा, इस विषाक्त अंकुर का जन्म कहाँ से हुआ?

कुछ लोगों का कथन है कि, पिता के द्वारा दिये गये वचनों के कारण ही यह दिन देखने को मिला। लेकिन उन वचनों को दिये तो एक लम्बा अरसा हुआ। जिस माँ के मन में उन्हें भुनाने के लिए ऐसा हल्का विचार आ सकता है, उसमें उसे इतने दिनों तक छिपाने का गांभीर्य कहाँ से आया?

कुछ लोगों का कहना है कि दासी के कहने से माँ की मति मारी गयी, लेकिन जो एक संस्कार सम्पन्न घराने की राजरानी रही, जिसे एक आदर्श पति की पत्नी, आदर्श पुत्र की माता और आदर्श परिवार की गृहणी होने का गौरव प्राप्त हुआ, उसका एक तुच्छ दासी के बहकाने में आना कहाँ तक न्याय संगत है।

इसी बीच एक विचार बिजली की तरह उनके दिमाग़ में कौंध जाता है और वे गुनगुनाते हैं:–

"अरे मैं भी कैसा पगला हूँ। एक साधारण सी बात मेरे समझ में नहीं आयी। जिस घर को आदर्श घर बनाने के लिए परिवार के प्रत्येक व्यक्ति ने कोई बात उठा न रखी उसी घर में "सत्ता" का एक विष वृक्ष भी फलता और फूलता आया है। उसकी सुखद छाया तले सभी सुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सन्तोष अनुभव करते आये, लेकिन उसके "विषाक्त फलों" की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। कमज़ोर से कमज़ोर आदमी भी एक बार अपनी भूख पर विजय प्राप्त कर सकता है लेकिन "सत्ता की भूख" पर विजय पाना मुश्किल है। सो अपने घर के आंगन में उसी खूबसूरत से दीखने वाले वृक्ष में जब "युवराज पद" का फल लगा तो, "राजमाता" कहलाने की इस सर्वभक्षी भूख ने ही ममतामयी माँ की मति को हर लिया। यदि इसका शीघ्र इलाज नहीं किया गया, तो संपूर्ण परिवार छिन्न-भिन्न हो जाने वाला है।

और तभी उनकी आँखों में राज सिंहासन को ठुकराकर वन की ओर जाते हुए भगवान राम की नंगी पगथलियों का ध्यान छा जाता है और वे गीली आँखें उन्हीं की खोज करते हुए वन की राह चली जाती हैं।

कहते हैं उन्हीं की पादुकाओं को लेकर उन्होंने भारतवर्ष की डूबती हुई परिवार व्यवस्था को बचा लिया था।

*

[श्री अरविन्द के साथ...पृष्ठ २९ का शेष

रात्रि का अंधकार सबसे गाढ़ा हो उठता है।

सचमुच एक दिन मन बहुत भावाक्रान्त हो गया था। गंभीर, निविष्ट होकर बैठा हूँ कि हठात् मन में लगा सब परिष्कार, स्वच्छ, प्रसन्न—

दिशः प्रसेदु मरुतः वरुः सुखाः
सब दिशाए प्रसन्न हो उठीं, हवा प्रसन्नता से वह चली।

और मानो मुझे कुछ सोचना ही नहीं है— मेरी मुक्ति निर्धारित है — वह अन्तर में आकाश वातास में प्रगट है।

अतः अंतिम दिन कोर्ट में पुकार हुई— फैसला सुनाया जायगा। एक-एक नाम उच्चरित होने लगे। जिन्हें सजा हुई है— मेरा नाम छूट गया— अर्थात् मैं हूं मुक्त। मैं आश्चर्यान्वित या उल्लासित नहीं हुआ, जो स्वाभाविक और पूर्व निश्चित था वही हुआ है। इतने दिनों के संगी-साथियों से विदा ग्रहण कर, अलविदा जना कर प्रशान्त मन स्थिर पदों से बाहर निकल आया। एक वर्ष के बाद— बाहर के मुक्त खुलेपन में।

अनु० देवदत्त

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[होली और वसन्तोत्सव...पृष्ठ ४९ का शेष]

...ही नहीं मनाते, वरन् विकास के सभी स्तरों में स्थित चेतन-अचेतन सभी वस्तुएं, जैसा कि वृक्ष भी अपने पुष्प-पल्लवों द्वारा त्योहार का आनन्द व्यक्त करते हैं। भगवान के प्रति कृतज्ञता के भाव से आनन्द के सर्वोच्च शिखरों से उसकी भक्ति करना, अनादि काल से हमारे देश की विशिष्टता रही है। पुराणों ने हमारी इस राष्ट्रीय विशेषता को अनेक स्वरूपों में प्रस्तुत किया है।

क्यों न हम भी कालिदास के साथ मिल कर आनन्द से गायें :

द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं सपद्मं
स्त्रियाः सकामाः पवनः सुगन्धिः।
सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्या सर्वं प्रियं !
चारुतरं वसन्ते ॥

और जयदेव के साथ :

ललित लवङ्ग लता परिशीलन कोमल
मलय समीरे,
मधुकर निकट कटम्बित कोकिल कूजित
कुञ्ज कुटीरे,
विहरति हरिरिह सरस वसन्ते !

अनु. विमल के. गुप्ता

★

अपर गैंजेज सुगर मिल्स लिमिटेड
दि अवध सुगर मिल्स लिमिटेड
न्यू इण्डिया सुगर मिल्स लिमिटेड
दि न्यू स्वदेशी सुगर मिल्स लिमिटेड
भारत सुगर मिल्स लिमिटेड
गोबिन्द सुगर मिल्स लिमिटेड

★

विशुद्ध उज्ज्वल चीनी के निर्माता

★

मैनेजिंग एजेन्ट्स

दि काटन एजेन्ट्स प्राइवेट लिमिटेड

इंडस्ट्री हाउस बम्बई—१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदाचार्य पं. सुरेशचन्द्र चतुर्वेदी

आयुर्वेद में दिव्य औषधियां

[लेखांक ३]

आयुर्वेद में ऐसी कई दिव्य औषधियाँ उपलब्ध हैं, जिनके बारे में न तो अभी हमें पूरी जानकारी है, न जिनका अभी तक समुचित प्रयोग-उपयोग आ है। प्रस्तुत लेखमाला में आयुर्वेद के गहन अनुभवी चिकित्सक आयुर्वेदाचार्य पं. सुरेशचन्द्र चतुर्वेदी आपको भारतीय औषधि-वन के ऐसे ही अपूर्व प्रकाशित रत्नों से परिचित करायेंगे।

पौराणिक कथा है कि दीर्घकाल से घोर तपस्या में लीन महर्षि भार्गव का सम्पूर्ण शरीर मिट्टी से ढंक गया, केवल उनके नेत्र खुले रह गये थे। राजा सर्यात की पुत्री सुकन्या ने भ्रम से महर्षि के नेत्रों को शलाका से वींध दिया और उनमें से रक्त प्रवाहित हो उठा। अन्त में शाप के भय से राजा सर्यात ने महर्षि की सेवा-सुश्रुषा के लिए अपनी कन्या का उनसे विवाह कर दिया।

सुकन्या एक दिन सरिता तट पर जल भरने गयी थी। वहाँ उसे अप्रतिम सौन्दर्य-वाले अश्विनी कुमारों के दर्शन हुए। सुकन्या की परिस्थिति पर उन्हें दया आयी और उन्होंने कुछ ऐसे उपाय बताये कि जिनसे न केवल महर्षि की नेत्र-ज्योति लौट आयी, अपितु वे पूर्णरूप से युवा हो गये। बाद में यही च्यवन ऋषि के नाम से प्रख्यात हुए। उन्होंने जिन औषधियों का सेवन कर पुनर्यौवन प्राप्त किया था, उनके वर्णन विशेष रूप से इन नामों से है—

जीवक, ऋषभक, मेदा-महामेदा, काकोली, क्षीर काकोली, मुद्गपर्णी, भाषपर्णी, जीवन्ती और मुलहठी। इन ६ औषधियों के साथ ऋद्धि तथा वृद्धि को मिला देने से अष्ट वर्ग बनता है।

जीवक-ऋषभक—ये दोनों औषधियाँ हिमालय पर्वत पर उत्पन्न होती हैं। इनके कन्द लहसुन के कन्द के समान होते हैं। भीतर से ये कन्द खोखले होते हैं। इनके पत्र सूक्ष्म होते हैं। जीवक का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकार कूर्ची तथा ऋषभक का बैल के सींग के आकार का होता है।

मेदा-महामेदा–इनकी उत्पत्ति मोरंग प्रदेश में होती है। महामेदा सूखे अदरक के समान होती है। इसकी लता लाल-पीले रंग की होती है। मेदा का वर्ण श्वेताभ होता है। खुरचने पर इसमें से मेद धातु के समान द्रव भी निकलता है।

काकोली क्षीर काकोली–इनकी भी उत्पत्ति मोरंग देश में मानी जाती है। काकोली कुछ कृष्णवर्ण असगंध के आकार की होती है। क्षीर-काकोली श्वेतवर्ण की पीवरी असगंध के समान होती है। इसमें गंधयुक्त दूध का स्राव होता है।

ऋद्धि-वृद्धि–इनकी उत्पत्ति श्यामल प्रदेश मानी गयी है। ये दोनों ही कंद-लताओं से निकले हुए श्वेत-रोम युक्त एवं छिन्द्रान्वित होती हैं। ऋद्धि का फल कपास की गांठ की भांति बायें से दायें तथा वृद्धि का दायें से बायें की ओर घूमा हुआ होता है।

उपरोक्त औषधियाँ हिमालय पर्वत पर ही प्राप्त होती हैं। इनके कच होते हैं। वैसे आजकल ये औषधियाँ दुर्लभ ही हैं। संक्षिप्त में ये शरीर की धातुओं को पुष्ट करने, वीर्य बढ़ाने तथा शारीरिक व मानसिक तत्ववृद्धि में अति गुणकारी होती हैं। साथ ही कफ को बढ़ाने वाली, स्त्रियों के दूध में वृद्धि करने वाली तथा गर्भदायक भी मानी गयी हैं। पित्त विकार, दाह, शोक, ज्वर, रक्तपित्त, प्रेमह तथा क्षय रोगों में भी इनका प्रयोग अति प्रभावशाली सिद्ध होता है। वृद्धा-वस्था को समाप्त कर नव यौवन प्राप्त करने में भी ये औषधियाँ काफी लाभ-प्रद हो सकती हैं।

इन औषधियों की दुर्लभता ऊपर ही बता दी गयी है। इसीलिए इनके गुणों का प्रतिनिधित्व करनेवाली अन्य औषधियाँ भी खोजी गयीं। युनानी चिकित्सकों ने मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीर काकोली के स्थान पर शामलमिश्री, शकाकुल मिश्री, बहमन सफेद तथा बहमन सुर्ख को उपयोग में लाने की बात कही है। आचार्य भाव मिश्र ने भी महामेदा के लिए शतावर, जीवक तथा ऋषभक के लिए विदारी कंद, काकोली, क्षीर काकोली के लिए अश्वगंधा, ऋद्धि और वृद्धि के लिए बाराही कंद का उपयोग करने के लिए कहा है।

इन चारों औषधियों के मूल कन्द ही उपयोग में आते हैं। इनके गुणों में भी समानता पायी जाती है। ये भारी, शीतल स्वादिष्ट, वीर्य वर्धक, बुद्धि वर्धक तथा जीवनीय शक्तियों को बढ़ानेवाली होती हैं। नेत्रों की दुर्बलता को भी नष्ट करने में सहायक होती हैं। ऊपर वर्णित वन-औषधियों के स्थान पर प्राप्त औषधियों के सम्बन्ध में भविष्य में विस्तृत रूप से प्रकाश डालने का प्रयास किया जायगा।

☆

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टिकट सावधानी से चिपकाइये

ताकि डाक जल्दी पहुंचे

* पूरे मूल्य के टिकट लगाइये

* पते की तरफ ऊपर दाहिने कोने में टिकट लगाइये

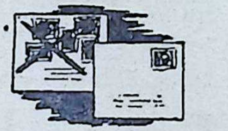

* आवश्यक मूल्य के कम से कम टिकट चिपकाइये

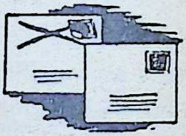

* टिकट अच्छी तरह चिपकाइये

डी ए ६३/४७६

डाक-तार विभाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्मश्री श्री अदी मर्जबान का सम्मान

गत १ फरवरी को भारतीय विद्या भवन-कला केन्द्र के नाटक-विभाग के निर्देशक तथा प्रख्यात पत्रकार श्री अदी मर्जबान के सम्मान में भवन द्वारा एक समारोह का आयोजन किया गया था। स्मरण रहे कि गणतन्त्र दिवस के शुभ अवसर पर राष्ट्रपति ने श्री अदी मर्जबान को रंगमंच की उनकी अद्वितीय सेवाओं के लिए 'पद्मश्री' की उपाधि से सुशोभित किया है। इस समारोह की अध्यक्षता कुलपति श्री मुन्शीजी ने की और श्री अदी मर्जबान को कलाकेन्द्र नाट्य प्रवत्ति के प्रणेता के रूप में बधाई देते हुए देश में अव्यवसायी नाट्य आन्दोलन का सफल नेतृत्व करने के लिए उनका हार्दिक अभिनन्दन किया।

अदी साहब को 'जन्मजात निर्देशक' बताते हुए श्रीमती लीलावती मुन्शी ने कहा कि इनके हास्य प्रधान नाटकों का मुख्य उद्देश्य केवल दर्शकों को हँसाना मात्र ही नहीं रहता; उनके मूल में एक सीख, एक सन्देश छिपा रहता है।

इस अवसर पर बम्बई के मेयर श्री नन्दूकवाला, पालनपुर के नवाब, श्री डेविड अब्राहम, श्री डेरिक जेफ्रिस, श्री होमी बोड, श्रीमती दीना पाठक, श्री भरत दवे, श्री प्रभाकर जोर्शी आदि ने भी नाट्य निर्देशक पत्रकार, आकाशवाणी के कार्यक्रमों के संचालक तथा समाज सेवक के रूप में श्री अदी मर्जवान के कृतित्व एवं व्यक्तित्व की प्रसंशा की और साथ ही उनकी इस सफलता की प्रेरणा-स्रोत श्रीमती सिल्ला मर्जबान को भी धन्यवाद दिया।

अपने सम्मान के उत्तर में भाषण देते हुए श्री अदी मर्जवान ने कहा कि मैं अपने सभी मित्रों और साथी-कर्मचारियों को धन्यवाद देता हूँ क्योंकि मेरी सारी सफलता का श्रेय उनके सहयोग और प्यार को है, जो हमें सदैव उनसे मिलता रहा है। विशेष रूप से कुलपति श्री मुन्शीजी तथा लीलावती मुन्शी का आभार मानते हुए उन्होंने कहा कि अभिभावक के रूप में मैंने सदा ही इनसे उत्साह, प्रेरणा तथा पथ-प्रदर्शन पाया है।

अन्त में कलाकेन्द्र के मानद मन्त्री श्री नवीन खांडवाला ने आभार प्रदर्शन किया।

डॉ. नाकानो का स्वागत

गत चार फरवरी को भवन के गीता मन्दिर में इण्टर नेशनल ऑर्नाइजेशन फॉर कल्टिवेटिङ्ग ह्यूमन स्पिरिट' जापान, (मानव-भावनाओं के विकास के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संस्था) के संस्थापक-अध्यक्ष डॉ. योनोसुके नाकानो के स्वागत में भारतीय विद्या भवन द्वारा एक समारोह का आयोजन किया गया था। डॉ. नाकानो तथा उनकी पार्टी का स्वागत करते हुए कुलपति श्री मुन्शीजी ने कहा कि संसार इन दो लोगों में विभाजित हो गया है: एक वे जो ईश्वर में विश्वास करते हैं और दूसरे वे जो नास्तिक हो गये और ईश्वर में उनका विश्वास नहीं रहा। अतः अब परिस्थिति ऐसी आ गयी है कि जिनका ईश्वर में विश्वास है, वे नास्तिका के विरुद्ध संघर्षरत हो जांय। इस दिशा में डॉ. नाकानो की संस्था के प्रयासों की प्रसंशा करते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुन्शीजी ने कहा कि भारतवर्ष में इस प्रकार के आन्दोलन का हार्दिक स्वागत किया जायगा क्योंकि अधिकांश भारती ईश्वर को मानने वाले हैं।

वी. आर. बाल पुस्तकालय

गत १२ जनवरी को गीता मन्दिर में भारतीय विद्या भवन वी.आर. बालपुस्तकालयका आठवांवार्षिकसमारोहमनाया गया। टेबलटेनिस, स्किपिंग आदि अनेक खेलों की प्रतियोगिताओं काआयोजन किया गया था। बच्चों के लिए अल्पाहार की भी व्यवस्था की गयी थी। इस वर्ष का सबसे अधिक आकर्षक कार्यक्रम था पुरस्कारों को 'नेशनल सेविंग स्टैंप्स' के रूप में वितरित किया जाना और पुरस्कार विजेता बच्चों ने भी इसका हार्दिक स्वागत किया।

पुष्प-प्रदर्शनी का आयोजन

आगामी ७ तथा ८ मार्च १९६४ को भारतीय विद्या भवन में अग्रि-हॉर्टि कल्चरल सोसायटी तथा भारतीय विद्या भवन ने संयुक्त रूप से विविध-पुष्पों की अनुपम प्रदर्शनी का आयोजन किया है। १४ तथा १५ मार्च को भवन के अन्धेरी कॅम्पस में पुष्प तथा उद्यान की भी प्रदर्शनी का कार्यक्रम उक्त दोनों संस्थाओं के तत्वावधान में रखा गया है। प्रदर्शनी के अन्त में आयोजकों ने १ रु.प्रति गमले की दर से पुष्प-गमलों को बेचने का भी निर्णय किया है। जो इन प्रदर्शनियों में भाग लेना चाते हों, वे श्री. डी. अहमद, मानद-मन्त्री, अग्रिहॉर्टि कल्चरल सोसायटी, भारतीय विद्या भवन, चौपाटी, बम्बई, से सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। आयोजकों ने प्रदर्शनी में भाग लेने वाले विजेताओं को पुरस्कार देने का भी निर्णय किया है।

टैक्समाको

टेक्सटाइल मशीनरी कारपोरेशन लि.

वेलघरिया (२४ परगना)

भारत के आधारभूत उद्योगों की सेवा करता है
सुप्रसिद्ध विदेशी प्रतिष्ठानों के सहयोग से निर्माण करता है

- टेक्सटाइल मशीनरी
- विविध किस्म के रॉलिंग स्टाक
- वाटर ट्यूब बायलर सहित सभी प्रकार के बायलर्स
- स्ट्रक्चरल्स
- शक्कर मिल मशीनरी
- कैप्सटन लेथ
- स्टील कास्टिंग और सी. आई. कास्टिंग

मैनेजिंग एजन्ट्स :

बिरला ब्रदर्स (प्राइवेट) लि.

१५, इंडिया एक्सचेंज प्लेस, कलकत्ता-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकोप्रूफ़

वॉटरप्रूफ़िंग के लिए सीमेंट में मिलाने का **एसीसी** उत्पादन-
पानी के प्रति संरक्षण संबंधी समस्याओं का हल करता है!

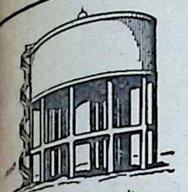

पानी की टंकियाँ

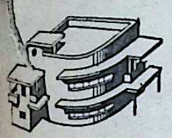

दीवारें और छतें

पानी के पाइप

पानी की टंकियाँ बनानी हों या पाइप बनाने हों, स्विमिंग पूल बनाने हों या पानी के हौज़ बनाने हों, सीमेंट में **एकोप्रूफ़** मिलाकर इस्तेमाल करने से पानी रिसने की समस्या हल हो जाती है। सीमेंट को रेत या रेत और कंकड़ों में मिलाने से पहले उसमें **एकोप्रूफ़** मिला देने से गाढ़ी और पुख़्ता कंकरीट तैयार होती है और नमी को सोखने की उसकी क़ुदरती शक्ति भी कम हो जाती है। नहरों व नालियों, दीवारों और छतों को नमी के प्रति अधिक सुरक्षित बनाने के लिए **एकोप्रूफ़** का इस्तेमाल बहुत ही ज़रूरी है।

एकोप्रूफ़ नीचे के पतों पर
आसानी से मिल सकता है:

दि सीमेंट मार्केटिंग कं. ऑफ़ इंडिया लि.

बम्बई • अहमदाबाद • बंगलोर • कलकत्ता
कोइम्बत्तूर • नयी दिल्ली • इन्दौर • कानपुर
मद्रास • पटना • सिकन्दराबाद

विशेषज्ञतापूर्ण सलाह और तकनीकी
साहित्य हमसे मुफ़्त प्राप्त कीजिए

एसीसी **दि एसोसिएटेड सीमेंट कंपनीज़ लि.**
दि सीमेंट मार्केटिंग कं. ऑफ़ इंडिया लि.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

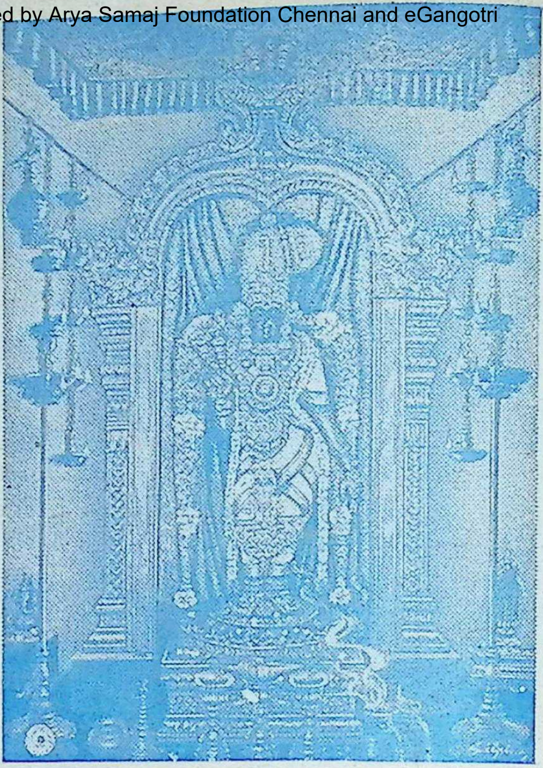

देवी मीनाक्षी

अभी प्राप्य है

कलाकार श्री शिल्पी द्वारा विशेषरूप से भारतीय विद्या भवन के लिए ही तैयार किया गया देवी मदुराई मीनाक्षी का बहुरंगी चित्र साइज २३"×१८" उच्चकोटि के आर्ट पेपर पर छपा हुआ और वार्निश किया हुआ।

मूल्य : २ रु. प्रति चित्र : [डाक-व्यय १ रु. अतिरिक्त]

अपना आर्डर आप—

सेल्स मैनेजर, भारतीय विद्या भवन, चौपाटी रोड़, बम्बई ७, या निम्नलिखित केन्द्रों को भेज सकते हैं :

२, रेसीडेन्सी रोड, बंगलोर–१, टेलीफोन नं. ४१२१
१/१, मेरेडिथ स्ट्रीट, कलकत्ता–१३, टेलीफोन नं. २३–७५००
९/१७, सत्यमूर्ति रोड, कोयम्बतोर–९, टेलीफोन नं. ५४७१
मेहता सदन, कर्ज़न रोड, नई दिल्ली–१, टेलीफोन नं. ४५९९५
३५-३६, ईस्ट माडा स्ट्रीट, मायलापोर, मद्रास–४, टेलीफोन नं. ७४६७४

• विक्रेताओं से भी व्यापारिक पूछ-ताछ आमन्त्रित है •

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती
[भवन की पत्रिका]

८ मार्च
१९६४

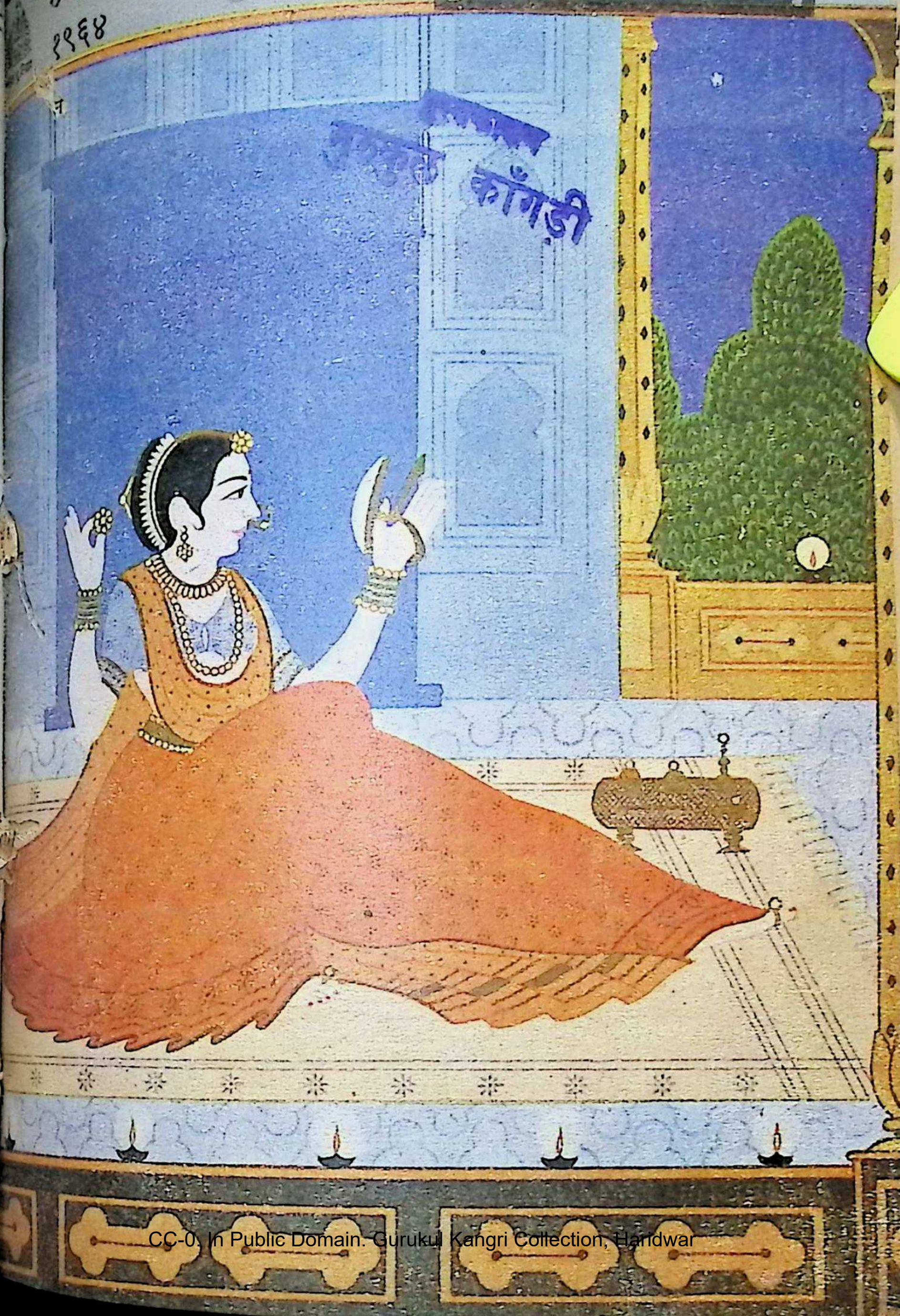

कांगड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिरते बाल

आसानीसे रोके जा सकते हैं।

आप केवल यही करें कि........

आप जिस हेअर ऑईलका इस्तेमाल करते हैं, उसमें अथवा आधा किलो खोपरेके तेलमें या एरण्डीके तेलमें झरण की एक बोतल मिलालें। इस तरहसे बना हुआ विशेष गुणकारी तेल, हररोज इस्तेमाल करके बाल गिरनेकी मुसिबतसे आप छुटकारा पाईये ! इतनाही नहीं बल्की आप फिरसे घने और लम्बे बाल प्राप्त किजीये।

झरण

घने और लम्बे बाल के लिए ....

सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स:- सुगंध घर, अहमदाबाद-१.
एजेन्ट्स:- सी. नरोतम एन्ड कं. बम्बई-२.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ८ : अंक १३]

भारती

[८ मार्च १९६४

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
...न्तकृष्ण ह. दवे

...शक :
...ु. ...ामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
...ाकान्तनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० न.पै.
वार्षिक : ६.५० न.पै.
अर्धवार्षिक : ३.५० न.पै.

ऋग्वेद	: प्रार्थना	३
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	४
—	; मध्यस्था, सहयोगिनी, सृजनकारिणीः श्री माँ	८
दिलीप कुमार राय	: सनातन, फिर भी नित नूतन	१२
गोपालजी स्वर्णकिरण	: हरी झण्डी	१७
—	: आत्मा की कुंवारीं ज्योतियों का आविष्कारकः हरमन हेस	१८
श्यामसुन्दर घोष	: सूनेपन के बीच	२३
अमृता भारती	: एफ्रोदिती का गार्डन	२४
—	: जगत नित नवीन	३१
—	: अयोध्या [५]	३३
अमृता भारती	: कृष्ण कर्णामृत	३९
ओम प्रभाकर	: ज्योति स्तवक फिर आयेंगे	४१
आन्द्रें मॉरॉं	: क्या प्रेम भी एक कला है ?	४२
निष्किंचन	: अजामिल	४७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सी. डी. सोनवणे : आप भी सोना बना सकते हैं: रस-शास्त्र का पूर्व ज्ञान, ५

कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार [३४] गजपाल अंगारक ५

डा. योगेन्द्रकुमार त्रिपाठी : सफ़ेद कोढ़ और उसका इलाज ६

आगामी २२ मार्च के अंक में

- दिव्यानुभूति : श्री रामकृष्ण परमहंस
- भविष्य दर्शन की रहस्यमय प्रक्रिया : श्री माँ
- विश्व क्रान्ति के आदि-जनक: महर्षि टॉल्स्टॉय : स्टीफेन ज़्विग
- संसार को जैसा मैंने देखा है : अलबर्ट आइन्स्टीन
- अमेरिका का दार्शनिक, थोरो और भारतीय दर्शन : विजय रंजन दत्त
- घूस-घास (कहानी) : शिवराम चक्रवर्ती
- बनने वाली माताओं से : धर्मचन्द्र सरावगी

इस अंक के सज्जाकार :
सर्व श्री कमलाक्ष शेनॉय, अमृता भारती, ज्योतीन्द्र जैन, जोशी

आवरण-चित्र :

सोहागित

छायाकार :

कमलाक्ष शेनॉय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो विश्वतः भद्राः क्रतवो यन्तु।

भारती
भवन की पत्रिका

आगामी विश्व विकास का सूचक :
जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

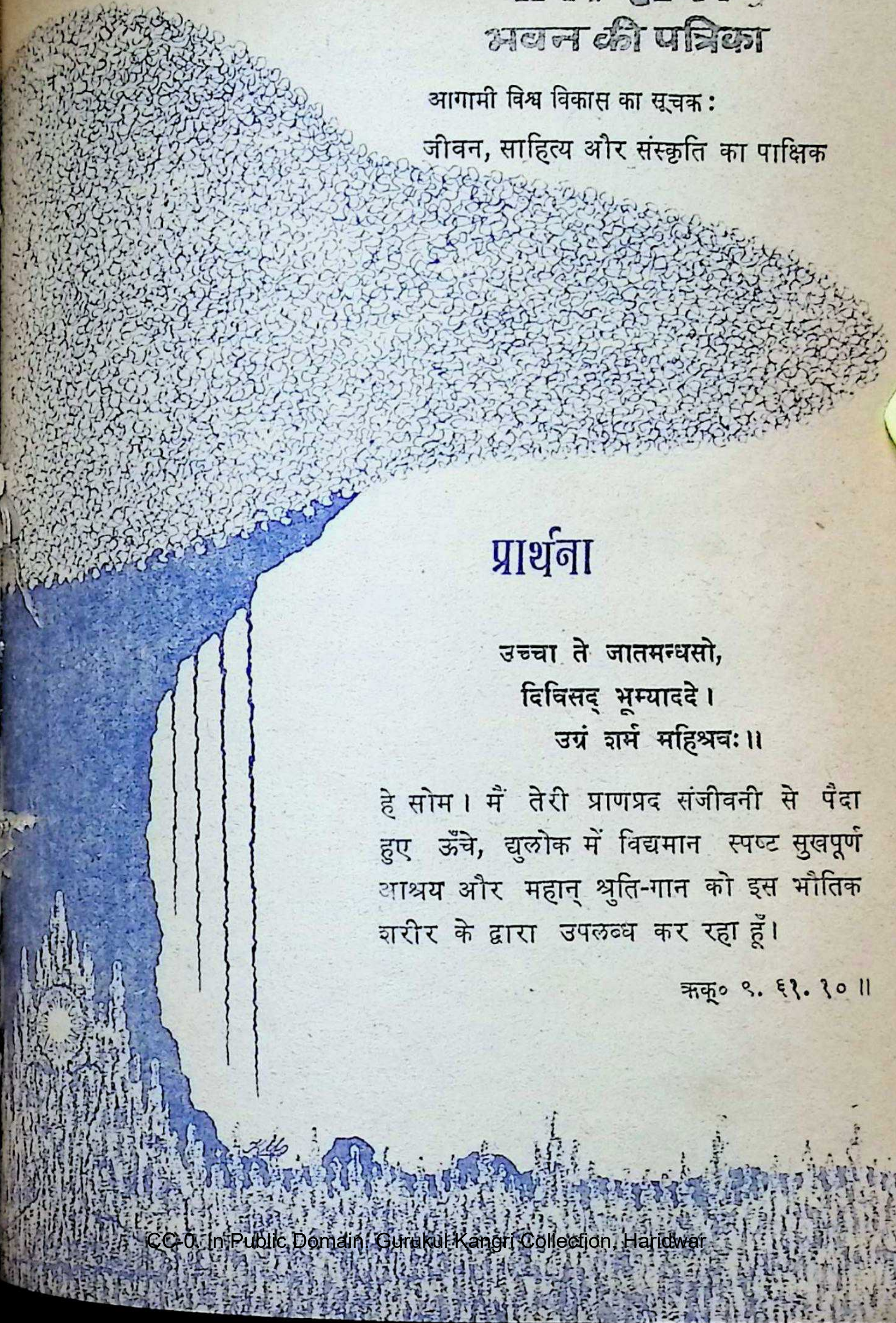

प्रार्थना

उच्चा ते जातमन्धसो,
दिविसद् भूम्याददे।
उग्रं शर्म महिश्रवः॥

हे सोम। मैं तेरी प्राणप्रद संजीवनी से पैदा हुए ऊँचे, द्युलोक में विद्यमान स्पष्ट सुखपूर्ण आश्रय और महान् श्रुति-गान को इस भौतिक शरीर के द्वारा उपलब्ध कर रहा हूँ।

ऋक्० ९. ६१. १०॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बंबई,
८ मार्च १९६

मेरे युवा मित्र,

श्री जी. एल. नन्दा एक ईमानदार और धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं। भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ने के लिए वे कटिबद्ध हैं और यह कार्य कैसे सम्पन्न हो, इसी की चिंता में निमग्न हैं। इसमें कोई संदेह भी नहीं कि राष्ट्र की सुरक्षा, स्थायित्व और प्रगति के लिए सबसे अधिक खतरा भ्रष्टाचार से ही है और दुर्भाग्यवश वह हमारे जीवन के सभी अंगों में घुस गया है।

यह एक सामान्य विश्वास सा लोगों में हो गया है कि यदि काफी तादाद में अपराधी अफसरों को दंड दिया जाय, तो भ्रष्टाचार मिट सकता है और यदि भीषण परिणाम द्वारा बहुत से व्यापारियों को भी डराया-धमकाया जा सके, तो भ्रष्टाचार का उन्मूलन संभव है। परन्तु यह केवल लक्षणों को दबाना होगा, रोग का उपचार इससे नहीं हो सकेगा।

सामान्यतः सरकारी अफसर इसलिए भ्रष्टाचार करता है कि अपनी वैध आय से वह अपने रहन-सहन का उतना ऊंचा स्तर नहीं रख सकता, जितने की उससे आशा की जाती है। इसके अलावा कोई ऐसा नैतिक वातावरण भी उसके चारों ओर नहीं, जो उसे इस भ्रष्ट मार्ग से रोक सके। उसके पास ऐसे अधिकार भी रहते हैं, जिनकी वजह से प्रयास किये बिना भी वह काफी कुछ प्राप्त कर सकता है।

व्यापारी को अपना व्यापार चलाना है। यदि उसे एक परमिट मिलने में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनों की भी देरी हो जाय तो लाखों नुकसान हो सकता है, और यदि नहीं मिलता तो करोड़ों का। वह समय पर घूंस दे देता है, जो खुशी स्वीकार भी कर ली जाती तो वह इस नुकसान से बच जाता है। फिर, ऐसा कोई नैतिक वातावरण तो समाज में नहीं है, जो उसे इस नैतिकता से रोक सके, क्योंकि आज 'रहन- के ऊंचे स्तर' पर ज़ोर दिया जाता न कि 'आचरण के उच्च स्तर पर'। भ्रष्टाचार के मूल कारण ये हैं: प्रथम, री अधिकारियों के हाथ में स्वतंत्र करने के अधिकारों का वाहुल्य; परे यह निश्चितता कि यदि इन अधि- रों का उपयोग व्यापारी के हित में नहीं किया गया तो स्वयं अधिकारी भारी नुकसान होगा। क्या श्री नन्दा अधिकारों को कम कर सकेंगे? मेरा है कि नहीं। क्या वे व्यापारियों यह आश्वासन दे सकेंगे कि उनकी मांगें ईमानदारीपूर्वक और तत्काल की जायेंगी? मैं समझता हूँ, वे भी नहीं कर सकेंगे। वे अपराधियों पकड़ कर सज़ा देने पर ज़ोर दे सकते परन्तु उससे भ्रष्चाटार नहीं रुक गा। सज़ा के डर से न तो अवैध रुका है, न अवैध शराब बनना। तो मुकदमों की ही संख्या बढ़ेगी और भ्रष्टाचार रोकनेवालों को भ्रष्टाचार फैलाने और धन कमाने का एक और ज़रिया मिलेगा।

आज समाज में ऐसा नैतिक वातावरण नहीं है, जिससे भ्रष्टाचार करने वालों को इस दृष्टि से देखा जाये कि उनकी प्रतिष्ठा में फर्क पड़े। इसका कारण बहुत सीधा-सादा यही है कि राजनीतिक लोग ही समाज का वातावरण तैयार करते हैं और मंत्रीगण ही सामाजिक स्तरों का निर्माण करते हैं।

मि. रोनाल्ड रैथ और मि. एडगर सिम्किस अपनी पुस्तक 'करप्शन इन डेवलपिंग कंट्रीज़' (विकासशील देशों में भ्रष्टाचार) में लिखते हैं:

"ऐसी बातों के बारे में कुछ भी अस्पष्ट अथवा भ्रामक लिखना खेद का विषय है, जिनके बारे में सभी लोग जानते हैं, जिनको खुले आम कोई नहीं स्वीकार करता, जिन्हें सिद्ध बहुत कम किया जा सकता है और जिनके बारे में यदि ज़रा भी असावधानी बरती जाय, तो उससे महान अनिष्ट हो सकता है.... उच्च पदस्थ व्यक्तियों के भ्रष्टाचार के बारे में बहुत सोच समझ कर कुछ आम बातें ही कही जा सकती हैं। सामान्य अथवा कम भाग्यशाली लोगों के भ्रष्टाचार के बारे में खुल कर काफी लिखा जा सकता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या मंत्रीगण संदेह से परे हैं, बिल्कुल परे ? वे शायद स्वयं घूंस न लेते हों, परन्तु उनकी कृपा और प्रभाव का दुरुपयोग तो किया ही जा सकता है। जिन पर वे मेहरबान हैं, वे अपने लड़कों-भतीजों को धन दिला सकते हैं। अपनी पार्टी के लिए वे ग़ैरवाज़िब तरीकों से भी धन वसूल कर सकते हैं। जिस दल में ये लोग हैं वह भयंकर रूप से भ्रष्ट है। धन इकट्ठा करने के लिए वह विधान की सहायता लेता है और हर संभव तरीका अख़्तियार करता है।

पिछले बड़े चुनावों में जब कांग्रेसी मिनिस्टर चन्दा ले रहे थे, तब एक व्यापारी से मैंने पूछा कि आप कांग्रेसी मंत्री को तो बहुत बड़ी रकम मांगने पर ही दे देते हैं, परन्तु स्वतंत्र पार्टी को सहानुभूति होते हुए भी बहुत कम रुपया देते हैं। उनका उत्तर था, 'मिस्टर मुंशी, यदि एक डाकू आपके घर में आधी रात को घुस आये, तो आप जो वह मांगे सो ही देने को तैयार हो जाते हैं, अपनी स्त्री के सारे ज़ेवर भी आप दे देंगे; परन्तु जब आप मन्दिर जाते हैं, तो वहाँ तो वही चढ़ायेंगे, जितना आप चाहते हैं।" इस पर कुछ कहना व्यर्थ है।

किसी भी चुनाव में एक कांग्रेसी के खिलाफ किसी निर्दलीय उम्मीदवार अथवा किसी भी विरोधी दल के उम्मीदवार को कितनी असुविधाओं का सामना क[...] पड़ता है, इसका क्या किसी ने हि[...] लगाया है ? लोकल बोर्ड, म्युनि[...] पालिटी, पंचायत सभी की शक्ति कां[...] उम्मीदवार के समर्थन में लगा दी ज[...] है। क्या यह भ्रष्टाचार नहीं है ?

कांग्रेस के अधिवेशनों में लाखों रु[...] खर्च होता है। यह धन कहाँ से आता है[...] उसका अधिक भाग किसी न किसी रू[...] में राज्यों से ही प्राप्त होता है, औ[...] छोटी-छोटी रकमों के अतिरिक्त [...] धन उन कंट्राक्टरों और दूसरे लोगों [...] आता है, जो कांग्रेस का अपनी इच्छा [...] समर्थन नहीं करते हैं, परन्तु जिन्हें सत्ता[...] मंत्रियों को प्रसन्न रखना पड़ता है[...]

और, जैसा कि मैंने कहा है, भ्रष्टाचा[...] का अर्थ केवल पया लेना ही नहीं है[...] जैसा कि रस्किन ने कहा है :

"झूठ, दरअसल धोखा देने में है, केव[...] शब्दों में नहीं। चुप रह कर, किसी [...] को आँख के इशारे से विशेष अर्थ दे क[...] अस्पष्ट अथवा दुहरे अर्थ के शब्द बोल क[...] भी झूठ बोला जा सकता है। ये सब [...] सीधे-सादे मिथ्या शब्दों से अधिक निकृ[...] और खतरनाक हैं।"

श्री नन्दा के सामने केवल चार [...] रास्ते हैं :

(१) लाइसेंस–परमिट–कोटा राज का क्षेत्र सीमित करना, य[...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे मिटा नहीं सकते हों तो, जैसाकि राजाजी करते। ऐसा करने का साहस श्री नन्दा नहीं कर सकेंगे।

(२) अफसरों के परमिट और लाइसेंस देने के निर्णय-अधिकारों को सीमित करना। इसके लिए वे प्रार्थियों की दलीलें अन्य सभी के सामने सुनें; अपने निर्णय का उचित कारण लिखें; और उनके फैसले एक उच्च प्रशासकीय न्यायालय द्वारा अनुमोदित हों।

श्री नन्दा ऐसी व्यवस्था करने में असमर्थ होंगे। इससे काफी आन्तरिक गड़बड़ी मच जायेगी।

(३) स्कैंडिनेवियन किस्म की एक ओम्बुड्समन संस्था की स्थापना करना और उसे बहुत व्यापक अधिकार देना।

श्री नंदा को शासक दल के वर्तमान रूप में ऐसा नहीं करने दिया जायगा।

(४) अथवा फिर जो अवश्यम्भावी है, उसे खुले आम स्वीकार करना; अर्थात् भ्रष्टाचार-सह-समाजवाद सरकार का ध्येय है।

जिस वातावरण में भ्रष्टाचार सामाजिक अहित और प्रतिष्ठा की हानि का कारण बन सकता है, वह तभी निर्मित होगा जबकि शासक अपने व्यक्तिगत जीवन में ईमानदारी का उच्च से उच्च स्तर रखे। यदि सतीत्व को स्त्री का सर्वोत्तम गुण मानना है, तो श्री रामचन्द्र भी अपनी प्रिय सीता को संदेह के स्पर्श मात्र से अपने साथ नहीं रख सकते। यदि उन्हें अपने व्यक्तिगत सम्बन्धों की रक्षा करनी है, तो उन्हें गद्दी से नीचे उतर जाना चाहिए। इसी तरह कोई भी शासक भ्रष्टाचार का सन्देह रहने पर अपनी जगह नहीं बना रह सकता।

इस समय जो पार्टी और मंत्री पदासीन हैं, वे भ्रष्टाचार से ऊपर हैं, ऐसा विश्वास लोगों में होना चाहिए, तभी भ्रष्टाचार को मिटाया जा सकता है। इसके लिए शासक वर्ग को अपना जीवन-मार्ग बदलना होगा, और जो वे उपदेश देते हैं उसी पर चलना होगा। यदि श्री नंदा सचमुच ही भ्रष्टाचार के निवारण के लिए कृतसंकल्प हैं, तो उन्हें मूल स्रोत पर ही इस समस्या का समाधान करना चाहिए। निर्भय होकर ऐसा किये बिना कोई सुधार नहीं हो सकता।

आपका

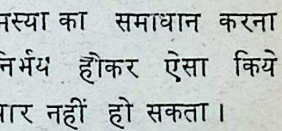

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्यस्था, सहयोगिनी, सृजन-कारिणी : श्री माँ

•

श्री माँ क्षुधित तमसाच्छन्न नाम-रूपात्मक जगत् तथा विशु आनन्दपूर्ण ज्योतिर्मय सद्वस्तु के बीच की लड़ी, मध्यस्थ पवित्रात्मा हैं। यदि श्री माँ पृथ्वी के साथ अपना तादात्म्य स्थापित कर अपने घुटने टेकती हैं और याचना तथा प्रार्थना करने के लिए अपने हाथ ऊपर उठाती हैं, तो उसी तरह वे ऊपर से, तात्कालिक आश्वासन और अन्तिम परिणाम के लि अमर सूचनाओं, वरदानों और आशीर्वादों को भी उतार लाती हैं

•

व्यष्टिभूत–विश्वभूत–परात्पर: श्री माताजी कभी तो यह हैं और कभी वह, और फिर साथ ही अन्य भी हैं; ये प्रार्थनाएँ और ध्यान भी इस तरह कभी तो एक स्तर से और कभी दूसरे स्तर से हमारे पास आते हैं; और, निस्संदेह, जिस तरह श्री माताजी न जाने कैसे सफलतापूर्वक सब समय तीनों ही बनी रहती हैं, कि उसी तरह उनकी अन्तरात्मा के ये श्वास-प्रश्वास भी, उनके अन्दर विराजमान और उनके रूप में प्रकट विश्वात्मा के ये श्वास-प्रश्वास भी अपनी समग्रता के अन्दर एक निजी अखंडता और एकता बनाये रखते हैं। जब माताजी ध्यान करती हैं, तब मनुष्य जाति अपने प्रतिनिधि के रूप में ध्यान करती है; जब वह प्रार्थना करती हैं, तब वह मनुष्य जाति के लिए होती है; वह प्रार्थना करती हैं कि मनुष्य जाति की रक्षा की जाय। उनके स्वप्न और दर्शन, उनके जाग्रत विचार और योजनाएँ सब के सब बुभुक्षु मानव के पूर्ण जीवन, ज्ञान और आनन्द के लि भूखे मानव की आवश्यकताओं, अभीप्साओं और आशाओं से भरे होते हैं। ३१ मा सन् १९१४ को लिखते हुए माताजी अपने एक विलक्षण रूपान्तरकारी अनुभव का वर्णन करती हैं:

"प्रशान्त सन्ध्या की आत्मसमाहित निश्चलता में जब सूर्य डूब गया, तब हे प्रभु ! मेरी समूची सत्ता मौन पूजा तथा पूर्ण समर्पण के भाव के साथ तेरे चरणों में साष्टांग लोट गयी। फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृथ्वी बन गयी और सम्पूर्ण पृथ्वी सम्मुख साष्टांग गिर पड़ी और तेरी के आशीर्वाद तथा तेरे प्रेम के की याचना करने लगीं। ओ, की याचना करने लगीं। ओ, आनन्द की याचना करने प्रकार तेरे सामने अनुनय-विनय करने लिए पृथ्वी ने घुटने टेक दिये और फिर की निश्चल नीरवता में स्वयं अन्दर केन्द्रित होकर, युगपत् धैर्य उत्सुकता के साथ, वह परम काम्य ज्योति की प्रतीक्षा करने लगी। यदि

संसार में कर्मरत तेरा दिव्य प्रेम बनने में है, तो उस अनन्त प्रेम के लिए उठने-वाली असीम अभीप्सा बनने में भी उतना अधिक माधुर्य है। और इस प्रकार अपने को परिवर्तित करने में समर्थ होना, से, लगभग साथ ही ग्रहण करने वाला और देने वाला, रूपान्तरित करने वाला और रूपान्तरित होने वाला बनना, और वेदनायुक्त अन्धकार के साथ और दूसरी ओर सर्वशक्तिमान ज्योति के साथ एकात्मता स्थापित करना और और इस द्विविध तादात्म्य के अन्दर तेरे सर्वोच्च एकत्व का रहस्य ढूंढ़ निकालना—क्या यही तेरी परम इच्छा को अभिव्यक्त करने, उसे चरितार्थ करने का एक पथ नहीं है ?''

इस दृष्टिकोण से माताजी क्षुधित तमसाच्छन्न नाम-रूपात्मक जगत् तथा विशुद्ध आनन्दपूर्ण ज्योतिर्मय सद्वस्तु के बीच की लड़ी, मध्यस्था, पवित्रात्मा (Paraclete) हैं। यदि माताजी पृथ्वी के साथ अपना तादात्म्य स्थापित कर अपने घुटने टेकती हैं और याचना तथा प्रार्थना करने के लिए अपने हाथ ऊपर उठाती हैं, तो उसी तरह वह ऊपर से, तात्कालिक आश्वासन और अन्तिम परिणाम के लिए, उन अमर सूचनाओं, वरदानों और आशीर्वादों को भी उतार लाती हैं,

Which, be they what they may,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Are yet the Fountain-light of all our day,

Are yet a master-light of all our seeing;

Uphold us, cherish, and have power to make our noisy years seem moments in the being of the eternal Silence; truth that wake, to perish never.

अर्थात्, वे चाहे जो कुछ भी क्यों न हों, वे अब भी हमारे दिनों को आलोकित करने वाले प्रकाश-स्रोत हैं, हमारी सम्पूर्णदर्शन-शक्ति की प्रधान ज्योति हैं; वे हमारे आधार हैं, पोषक हैं और उनमें वह शक्ति है, जिससे हमारे कोलाहल पूर्ण वर्ष शाश्वत शान्ति के क्षण बन जाते हैं, और वे सत्य जाग पड़ते हैं, जो कभी नष्ट नहीं होते।

अतएव ९ जून १९१४ को श्री माताजी मध्यस्था के रूप में भागवत आशीर्वाद प्राप्त करती हैं और उसे संसार तक पहुँचाती हैं :–

"प्रेम की एक विशाल तरंग प्रत्येक चीज़ के ऊपर उतर रही है और सब के अन्दर प्रविष्ट हो रही है।"

"शान्ति ! समस्त पृथ्वी पर शान्ति, विजय, प्राचुर्य, अत्याश्चर्य !"

"ऐ प्यारे, दुखी और अज्ञ, बच्चो ! और तू भी, ऐ विद्रोहिनी प्रचण्ड प्रकृति ! अपने हृदयों को उन्मुक्त करो, अपने ... को शान्त करो, यह देखो, दिव्य प्रेम अप... सर्व शक्तिमत्ता के साथ तुम्हारी ओ... आ रहा है, यह देखो, ज्योति अपनी निर्म... प्रभा के साथ तुम्हारे अन्दर प्रविष्ट ... रही है। यह मानवीय, एक पार्थिव का... सभी कालों से अत्यधिक सुन्दर काल है ... हर एक, सभी इसे जाने और उपभोग क... यह परम पूर्णता, जो उन्हें प्रदान की गयी है

ओ शोकाकुल हृदयो और दुश्चिन्... ग्रस्त ललाटो, ओ मूर्खतापूर्ण अन्धता औ... अज्ञानमय अशुभ इच्छा ! तुम्हारी दुः... वेदना शान्त हो जाय और एक दम ... हो जाय।

यही है उस जीवन वाणी की महिमा ... जो आ रही है :

'मैं यहीं हूँ।"

सचमुच श्री माताजी एक साथ ... दिव्य दृष्टि सम्पन्ना सहयोगिनी त... शक्तिशालिनी मध्यस्था हैं– और सा... ही सर्वक्षण श्री माँ, ठीक जननी भी है ...

नहीं, इससे भी अधिक; क्यों... मध्यस्था और सहयोगिनी ही सृजनकारि... भी हैं– और केवल श्री माँ ही नहीं, ब... प्रत्येक मानव-सत्ता भी, चाहे वह जि... भी हीन और अन्ध क्यों न हो, मूलत... तीनों ही हैं। जैसा कि श्री माताजी ... इंगित किया है, "एक ऐसा दर्पण ब... होगा, जो एक साथ ही चुपचाप ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...त करे और सम्पूर्ण निर्मल बना रहे, ...ही साथ आन्तर और बाह्य चीज़ों ...ओर अभिव्यक्ति के परिणामों की ...तथा अभिव्यक्ति के मूल स्रोत की ...मुड़ा रहे, जिसमें कि सभी कार्य ...वालिका संकल्पशक्ति के सम्मुख ...पित हो सकें, और उसके साथ ही ...बनना होगा उस संकल्प शक्ति की ...सिद्धि लाने वाली कार्यावली—बस, लग-...यही चीज़ है, जो मनुष्य को बनना चाहिए.... । पर, इन दो भावों को निष्क्रिय रह कर ग्रहण करने तथा सक्रिय रह कर संसिद्ध करने की क्षमता को संयुक्त करना है। वह कार्य है, जिसे पूरा करना सबसे अधिक कठिन है। और इसी चीज़ ...तू हमसे अपेक्षा रखता है, हे प्रभु, और ...कि तू इसी की हमसे अपेक्षा रखता है, इसलिए इसमें कोई सन्देह नहीं कि तू हमें ...से संसिद्ध करने का उपाय भी प्रदान करेगा।" अन्त में जब हम शिथिल बनाने वाली इस मन्द दृष्टि अक्षमता से बाहर निकलने के लिए जाग्रत होंगे, तभी हम ...लीनता से रहित होकर प्रयास कर सकेंगे। फिर हम धीरे-धीरे आक्रामक ...प्रकार की अत्यन्त मानवीय भूल से ऊपर उठ जायेंगे, जो, "एक विश्व व्यापी भूल है और हज़ारों उदाहरणों के अन्दर पुनरावर्तित हो रही है।" जब हमारी समूची व्यक्तिगत सत्ता इस सुदूरव्यापी कलंक को धो डालेगी और सर्वमय भगवान के साथ एकत्व की स्थापना कर लेगी, तभी सर्व शक्तिमत्ता के अवतरण तथा हमारी पार्थिव प्रकृति के रूपान्तर का शुभ मुहूर्त उपस्थित होगा और नवीन पराक्रम और प्रभुत्व का वैभव आयत्त कर लेगा। परन्तु यह वैभव अब महज स्वप्न ही नहीं है; वह प्राप्त होगा; उसे निश्चित रूप से प्राप्त होना ही होगा। अब भगवान और भक्त दोनों ने ही इस वृहत् रूपान्तर को सिद्ध करने का बीड़ा उठा लिया है। एक ओर भगवान भक्त को विश्वास दिलाते हैं कि, 'जो कुछ करने की ज़रूरत है, वह किया जायगा। आवश्य साधन तैयार किये जायेंगे। तू शान्त भाव से, पूर्ण निश्चय के साथ अपना प्रयास जारी रख', और दूसरी ओर भक्त का ओजस्वी उत्तर होता है:

"मुझ पर दया न कर, अपनी सर्वशक्तिमत्ता के द्वारा पूर्ण रूप से कार्य कर; मेरे अन्दर तो तुमने अखंड रूपान्तर की आकांक्षा भर दी है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिलीपकुमार राय

सनातन, फिर भी नित नूतन

जीवित सत्य के द्वारा उन दो दिव्य शक्तियों पर प्रकाश प[ड़ता] है, जो वास्तव में एक ही हैं–एक है वह अखंड चेतना जो ना[ना] रूपों में प्रकट होने वाले जीवन को अनुप्राणित करती है [और] दूसरी है वह परिवर्तनशीलता जो उस शाश्वत अखंड चेतना [को] प्रकट करती है।

आज से चालीस साल पहले, डॉ. जेम्स कज़िन्स ने, जो भारत के प्रशंसकों में प्रसिद्ध हैं, भारतीय युगान्तर पर कई ओजस्वी लेख लिखे थे और श्री अरविन्द ने उनकी विषय-वस्तु की प्रशंसा करते हुए उस पर विस्तार के साथ विचार प्रस्तुत किये थे। आयर्लैण्ड में उस महान् व्यक्ति से सहमति प्रकट करते हुए श्री अरविन्द ने कहा था– "भारत को जो यह नया जन्म मिल रहा है, वह न सिर्फ भारत के लिए, अपितु समस्त विश्व के लिए महत्व का होगा।"

मैंने श्री अरविन्द के चरणों में कर अपने देश के हज़ारों वर्ष पुराने ज्ञान और विद्या को प्राप्त करने का प्रयास किया है, जिसके फलस्वरूप मैं जीवन को एक वि[शिष्ट] दृष्टि से देखने लगा हूँ, जो सनातन [तो] है ही, चिर नवीन भी है। दूसरे शब्दों [में] जीवित सत्य के द्वारा उन दो दिव्य शक्ति[यों] पर प्रकाश पड़ता है, जो वास्तव में एक [ही] हैं– एक है वह अखण्ड चेतना, जो ना[ना] रूपों में प्रकट होने वाले जीवन को अ[नु]प्राणित करती है और दूसरी है जीवन [की] वह परिवर्तनशीलता, जो उस शा[श्वत] अखण्ड चेतना को प्रकट करती है।

इससे मुझे भारतीय रहस्यवाद [के] गहनतम मर्म में प्रविष्ट होने में सहा[यता] मिली है और उस अगाध ज्ञान की चिर[न]वनी शक्ति के स्फुरण का आनन्द भी प्रा[प्त हु]आ है। मैं अपनी बात, इन तीन दृ[...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

…द्वारा ज़रा और स्पष्ट करना चाहूँगा। पहली कथा मैंने, बचपन में, अपने पितामह स्व. डा. पी. सी. मजुमदार से सुनी थी, जो श्रीरामकृष्ण के कैन्सर के इलाज के लिए उनके पास जाया करते थे। यह कथा परहंस जी ने ही मेरे पितामह से कही थी, जिसमें स्वयं उनकी बुद्धि और जादू का चमत्कार है।

एक राजा को आत्म-प्रशंसा की लत पड़ चुकी थी, जो स्वयं को भगवान श्रीकृष्ण, हृषिकेश के प्रति पूर्णतः समर्पित कहा करता था।

"त्वया हृषिकेश हृदिसंस्थितेन यथा नियुक्तोस्मि तथा करोमि।"

हे भगवान् तुम जो भावनाएँ हृदय में उत्पन्न करते हो और तदनुसार जैसी प्रेरणा देते हो, मैं उन्हीं के अनुसार कर्म करता हूँ और तुम्हारे एक-एक शब्द का पालन करता हूँ।

जनता उस राजा से बहुत प्रभावित थी। और यह स्वाभाविक भी था। सचमुच क्या है यह राजा—देव शक्तियों का प्रतिनिधि हो जैसे, अध्यात्म का अवतार—जैसे जनक ने फिर जन्म लिया हो'.... आदि-आदि! इस धर्मावातर के लिए संसार का कोई भी श्रेष्ठतम विशेषण छोटा पड़ता था।

एक दिन राजा शिकार के लिए निकला। संयोग से एक गाय मारी गयी। राजा ने उसे हिरन समझ लिया था! उसके गुरु तथा पुरोहित ने आंतरिक भाव से कहा— "हे राजन्, आपने पवित्र गौ माता की हत्या की है! अब तो आपको नरकवास करना होगा।"

चित्र : जोशी

किन्तु, राजा यह सुनकर अभिमान पूर्वक मुस्कराया और बोला— "मैं और नरकवास करूँ? बकवास है यह! क्या आप यह भूल गये हैं कि मेरी आत्मा परमात्मा में लीन रहती है और इसलिए मैं इस दुष्कर्म का कर्त्ता कहाँ रहा? अतः यह गौ तो प्रभु के ही हाथों मरी, मेरे हाथों नहीं!"

ऊपर आकाश में, भगवान के मुख पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुस्कान थी। उन्होंने एक ब्राह्मण का रूप धारण किया और राजा के सामने प्रकट हुए। राजा ने उनका सादर स्वागत किया और नगर का भ्रमण कराया। ब्राह्मण ने पूछा– "राजन्, इन सुन्दर भवनों की कल्पना किसने की और उस कल्पना को इस प्रकार आकार दिया? राजा ने मुस्करा कर कहा– "मित्र, सिवाय राजा के कौन यह कल्पना कर सकता था और इसमें आकार प्रदान करा सकता था?

ब्राह्मण ने लम्बी साँस ली– "या परमात्मा! याने आप राजा होने के साथ-साथ शिल्पकार भी हैं! लेकिन इन गहरे-गहरे अमृत-कुण्डों के सम्बन्ध में आपको क्या कहना है?" राजा का उत्तर था– ',मैंने अपने आदमियों से ये कुण्ड अपनी प्रजा के लिए तैयार कराये। क्या मैं इनका रक्षक और पालक नहीं हूँ?" ब्राह्मण ने व्यंग्यपूर्वक कहा– 'सच कहते हैं राजन्–! "और फिर पूछा– "मुझे याद आया, कोई कह रहा था कि पिछले महीने आपके सैनिकों ने किसी पड़ोसी देश के राजा के साथ हुए युद्ध में विजय प्राप्त की!"

राजा ने मूंछें ऐंठकर उत्तर दिया– "यह ठीक है कि सैनिकों नें जीता, किन्तु, उनका नेतृत्व तो मैंने हीं किया!"

"स्वयं आपने न राजन्?" ब्राह्मण ने विस्फारित नेत्रों में प्रशंसा का भाव भरकर पूछा "भला, मेरे सिवाय और किसने द्ध की योजना बनायी होगी!" राजा ने कहा, तो ब्राह्मण ने पुनः प्रश्न किया–"इस शानदार चिकित्सा-विद्यालय का भी निर्माण आपने ही कराया होगा और चिकित्सकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी आपके ही हाथों सम्पन्न हुई होगी?"

राजा ने सगर्व कहा–" मित्र, भला, मेरे अतिरिक्त कौन यह सब कर सकता था!" छद्मवेशी पु ष विलक्षण ढंग से मुस्कराया और बोला– "मैं देख रहा हूं श्रीमान्, कि प्रत्येक सफलता आपकी है, हर चीज़ आपने शानदार तरीके से की है। केवल एक नृशंसता मेरे द्वारा हुई है,– मैं जो कि हृषिकेश हूँ और जिसने गौ की हत्या की है!" फिर वह अन्तर्धान हो गया।

इस दृष्टांत में उस पुरातन आत्मवृत्ति की ओर संकेत किया है। जो अनन्तकाल से चली आ रही है–नाना रूपों में, मानव के लिए कितनी भयानक है यह!

उक्त दृष्टांत के अतिरिक्त, एक सुन्दर दृष्टान्त और मुझें सुनने को मिला, एक महात्मा से जो उतना ही मनोरंजक है।

शुकदेव जी महान् भक्त थे। कौपीन धारण करते थे। जब सभी द्वारा समादृत राजा जनक के अध्यात्म-बल के सम्बन्ध में उन्होंने सुना, तो उन्हें विस्मय हुआ कि एक राजा कैसे इतनी आध्यात्मिक ऊँचाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...पहुँच सकता है। क्या संसार से विरक्त होकर संन्यास ले लेना ही अध्यात्म नहीं है? सन्दिग्ध मन से वे मिथिला के राजमहल में पहुँचे।

उन्होंने राजा को राजसी वेश-भूषा में सुसज्जित घूमते हुए देखा। स्वर्ण-पात्रों में सुन्दर भोजन का स्वाद लेते हुए भी उन्होंने राजा जनक को देखा। मधुरतम संगीत का सुख भी राजा ले रहे थे। वहाँ सभी कुछ ऐश्वर्यमय, वैभवमय था। शुकदेवजी जी का विस्मय बहुत बढ़ गया। वे सर्वथा स्तब्ध हो रहे थे।

दोपहर को, राजा ने शुकदेव मुनि को सरयू में स्नान का निमन्त्रण दिया। राजा जनक ने राजसी वस्त्रों को घाट की संगमरमरी सीढ़ियों पर डाल दिया और राजा के साथ ही जल में पैठ गये।

अचानक, उस शान्त-निस्तब्ध वातावरण को एक तीव्र कोलहाल वेध गया। आग, आग और आग! नदी तट पर स्थित राजमहल को शुकदेवजी ने धधकते हुए देखा और यह भी देख लिया कि लपटें महल का सब कुछ निगल कर घाट की ओर तेजी से वढ़ रही हैं।

राजा जनक, जल में खड़े, अपनी नित्य की पूजा में निमग्न थे। तनिक भी विचलित नहीं हुए। शुकदेव जी अपनी कौपीन बचाने के लिए हड़बड़ी में सीढ़ियों की ओर लपके। जब वे कौपीन सम्हालकर लौटे, तब राजा मुस्कराये और बोले–"हे मुनि, अगर समस्त राज्य जल जाता, तो भी मेरा कुछ भी नहीं जलता।"

एक मुक्त आत्मा को कोई वस्तु बाँध नहीं सकती। वैभव में रहकर भी जनक निर्लिप्त रहे, जबकि शुकदेव मुनि का ध्यान अपने कौपीन में ही अटका रहा। यह बात शुकदेव जी की समझ में तब आयी, जब उन्हें याद आया कि वे किस तरह भागे थे सीढ़ियों की ओर, सिर्फ कौपीन बचाने के लिए।

गोपियों की रानी राधा ने श्रीकृष्ण को उतना प्यार किया, जितना किसी ने नहीं। यह सारा संसार जानता और गाता है। किन्तु, नारद मुनि को इस पर शंका थी। वे अपने भगवत्प्रेम को सर्वोच्च समझते थे। क्यों नहीं, कहाँ राधा एक ग्वालिन और कहाँ वे! एक स्त्री का प्यार, अधिक से अधिक क्या हो सकता था? भला, यह कैसे मुकाबला कर सकता था, उस मुनि की भगवद् भक्ति का, जो निरन्तर अपनी वीणा पर प्रभु की ही आराधना के गीत गाता है और किसी अन्य वस्तु का ध्यान उसे एक पल का भी नहीं। आदि-आदि बातें उनके मन में आती रहीं!

एक दिन वे मथुरा पहुँचे, तो जी धक से रह गया। श्रीकृष्ण भगवान कराह रहे थे, जोरों का सर-दर्द!

[शेष पृष्ठ ६१ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम संकीर्तन

चेतना है तो चेतले,
निस-दिन में प्रानी।

छिन-छिन अवधि बिहात,
फूटे घट ज्यों पानी॥

हरि-गुन काहे न गावहि,
रे मूरख अज्ञाना।

झूठे लालच लागि के,
नाहीं मर्म पिछाना॥

अजहूं कछु बिगर्‍यो नहीं,
जो प्रभु गुन गावै।

कहि नानक तेहि भजन तें,
निरभय पद पावे॥

●

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा।
गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा॥

अगुन अरूप अलख अज जोई।
भगत प्रेम वस सगुन सो होई॥

जो गुन रहित, सगुन सोई कैसे।
जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसे॥

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

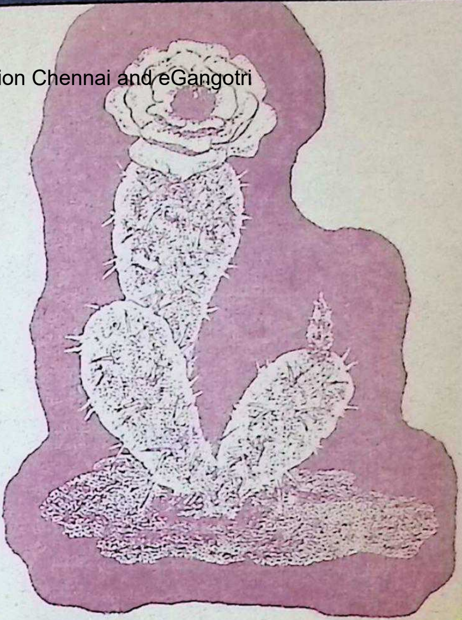

गोपालजी स्वर्णकिरण

हरी झंडी

ई आलोक में रँगा हुआ
एक अनजान स्वर
घड़ी के टिक्-टिक् के समान
उठता और बैठता है।
अस्तित्ववादी 'चेतना' और 'शून्य' और
'उबकाई' से परे

'अहंता' की निर्मल छाया
धुंधले मन के दर्पण में
झिलमिल-सी करती है;
अंखुवाते बीज और आलस छोड़ती कलियाँ
और गंधियाते फूल
प्रतिबिम्ब देख मुस्कराते हैं,
भीतरी उदासी यों उड़ती है
मानो वह फीकी और नकली-सी स्याही हो;
कपूरी गन्ध में लिपटी हुई,
आत्मा उठ करुणा की सीटी बजाती है,
एक अचीन्ही ललाई
हरी-हरी झंडी दिखलाती है,
तृष्णा के रोड़े भी
साधक-से लगते हैं,
पेड़ और पौधे सब माते हैं,
मलयानिल गूंज गूंज आता और जाता है,
कण-कण में अंगराग मलता है,
क्या कोई मंगलवाही
और अकुंठित 'साइक्लोन'
शनैः शनैः जगता है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मा की कुँवारी ज्योतियों का आविष्कारक : हर्मन हेस

बीसवीं शती यूरप के महान जर्मन कथाकार तथा चिन्तक हर्मन हेस हमारे युग के उन विरल अक्षर-स्वामियों में थे, जिन्होंने सिर्फ मेज़ पर बैठ कर शब्द नहीं लिखे, पर जिन्होंने आजीवन आन्तर द्वंद्वों और यातनाओं की शूल-शैया पर जीकर, मानव अस्तित्व के अन्तिम प्रश्नों के उत्तर की खोज में कुँवारे जंगल चीरे हैं, समाधान के अपूर्व नूतन प्रकाश-पन्थ मुक्त किये हैं। उनका परिचय आधुनिक मानव की संघर्षशील आत्मा का परिचय है।

एक

समकालीन जर्मन साहित्य के अन्यतम स्तम्भ हर्मन हेस का देहान्त ९ अगस्त १९६२ के दिन हुआ था। हेस का जन्म उन्नीसवी शताब्दी के अंतिम चरण में हुआ था। स्वभाव से ही युद्ध विरोधी हेस ने प्रथम विश्व युद्ध के समय अपने युद्ध विरोधी मनोभावों को व्यक्त किया था। फलतः अपने ही देश में उन्हें पर्याप्त मात्रा में लांछनाओं का शिकार होना पड़ा था। उस समय के अधिकतर स्वाधीन विचारधारा के वुद्धिजीवी जर्मनों की तरह उन्हें भी स्वदेश त्यागना पड़ा था। विवश होकर १९१९ में वह स्विट्ज़रलैण्ड चले गये। अपने जीवन के अंतिम दिन तक वह स्विट्ज़रलैण्ड के ही नागरिक रहे। अपने देश के प्रति उनकी अपरिसीम ममता ने उन्हें प्रति वार वहुत ही पीड़ित किया। जब भी उन्होंने जर्मन जाति की दुर्दशा देखी, तो वार-वार उनकी चेष्टा यहीं रही कि किसी प्रकार जर्मन युवकों को उस ओर सचेत कर सकें।

हर्मन हेस का बचपन अन्तहीन अशांतियों के वीच व्यतीत हुआ था। सामाजिक जीवन के प्रति उनकी वितृष्णा बचपन से ही थी। स्कूल के नियमसिद्ध गतिविधियों के साथ वह अपने को कदापि न ढाल सके, ऐसा करना उन्होंने चाहा भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ मार्च १९६४

नहीं। उससे कहीं बढ़कर आकर्षक प्रतीत हुईं, सुन्दर-सुन्दर तितलियाँ और ठीक वैसे ही सुन्दर-सुन्दर पक्षी। ग्राम्य-जीवन की असंख्य उपहारों से भरी प्राकृतिक खेत, वन, जंगल, मुर्गियों का चरागाह और श्रमजीवी मानव उन्हें सदैव आकर्षित करते रहे। कहने को तो वह शैशव काल से ही कविता के अभिन्नहृदय भक्त हो चुके थे। अभी नादान बालक ही थे कि एक दिन जर्मन भाषा में एक कविता लिख डाली। उन्होंने स्वयं ही कहा था : "कविता लिखने को सोची थी। मैंने कवि बनना चाहा था।" उनकी आयु उस समय तेरह वर्ष की थी। और, कवियों तथा कविता रचने की ओर उनके आकर्षण ने उन्हें अपने समकालीनों के सम्मुख अपमान का पात्र बनाया तथा शिक्षकों के आगे उपहास का पात्र। जीवन की कटु अभिज्ञताओं से उनके मन में सदा यही विचार उत्पन्न हुआ। "शिक्षक क्या केवल वयस्क मानव होने के कारण ही शुद्ध चेतना के शिक्षितों (बालकों) का दमन करने को नियुक्त हुए हैं।" न ही स्कूल और न ही कालेज के दिनों में वे कभी सुबोध विद्यार्थी" बन पाये।

हेस अपने जीवन में विभिन्न वृत्तियों को अपना चुके थे। कभी घड़ी बनाने के कारखाने में, तो कभी व्यापारियों के अधीन शिक्षक के रूप में। यहाँ भी उनकी अस्थिर मनोवृत्ति ने उन्हें बारंबार वर्तमान कार्य को बदलने को उत्सुक किया। पारिवारिक पुस्तकालय में ही उन दिनों हेस का अधिकतर समय व्यतीत होता था। पुस्तकों के प्रति अदम्य आकर्षण के कारण ही वे पुस्तकों के

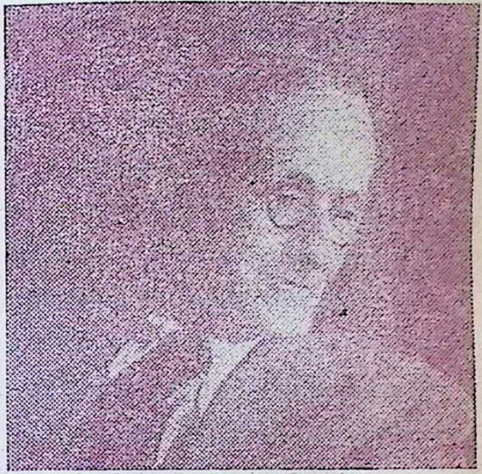

हर्मन हेस

व्यवसाय में भी जा पहुँचे। २६ वर्ष तक वे इसी व्यवसाय से पूर्ण रूपेण लिप्त रहे। इसके बाद लेखक हेस को जो सफलता मिली, उससे उन्होंने लेखक बनने की ही ठान ली।

दो

लेखक हेस के जीवन की गतिविधियों की पूर्व आलोचना से ज्ञात होगा कि अस्थिरता उनकी प्रकृति का एक विशेष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंग थी। बाल्यजीवन की छात्रावस्था में क्या और क्या तदुपरांत कर्मजीवन में अथवा प्रौढ़ावस्था में, शिल्पी स्वभाव के इस चांचल्य ने उन्हें सदैव अशान्त रखा। १८७७ की २ जुलाई के दिन हेस ने एक धार्मिक परिवार में जन्म लिया था। उनके पिता और पितामह दोनों भारत में कुछ समय धर्म-प्रचार में व्यतीत कर चुके थे। हेस परिवार की धमनियों में विभिन्न प्रकार के रुधिरों का संचार था। और हेस के साहित्य से मानव मात्र के लिए जो मार्मिकता टपकती है, उसकी प्रेरणा का उद्‌गम उनके अपने ही लहू में था। कदाचित समस्त जर्मन जाति में स्वोया-वियन लोग विशेषकर स्वप्नदर्शी और स्पर्शकातर होते हैं। होलडरलिन मोवाइक स्वोयावियन वंश में उत्पन्न हुए थे।

स्वोयावियनो का धर्मज्ञान और भार-तीय आतीन्द्रियवाद बाल्यकाल से ही उनकी प्रकृति में पूर्णतया मिश्रित था तथा उनके साहित्य में इसी युग्म उत्तराधिकार की अभिव्यक्ति का प्रसार प्रत्येक स्थान पर हुआ है। उनकी निरंतर आत्म-जिज्ञासा, जीवन तत्वों की खोज, आध्या-त्मिक प्रवीणता के पीछे सदैव यही द्वैत उत्तराधिकार विद्यमान रहा। हेस के जीवन में जहाँ एक ओर सहज विश्वास पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है, वहाँ दूसरी ओर उनके युक्तिवादी होने के भी असंख्य प्रमाण मिलते हैं। विपरीत दिशा के यही दोनों लक्षण मूलतः हेस साहित्य की आधार शिलाएँ हैं। आत्मलिखित जीवनी "वाडेनर कुरगोस्ट" में हेस कहते हैं: "जीवनधारा इन्हीं दो प्रांतों में से होकर बहती है। मै आजीवन संसार के आनन्दमय रूप की खोज में रहा और ठीक उसी तरह इसका भी मुझे स्मरण रहा कि आनन्दमय रूप मूलतः इन्हीं दोनों धाराओं पर प्रतिष्ठित है। अपने सम्पूर्ण साहित्यिक जीवन में मेरी यहीं चेष्टा रही है कि देख पाऊँ: सौंदर्य और बदसूरती, अंधेरा और उजाला, पाप तथा पुण्य एक मुहूर्त के लिए तो विपरीत धर्मों के होते हैं और ठीक दूसरे ही मुहूर्त इनका एक दूसरे से अविराम मिलन हो रहा है, यह एक दूसरे में पूर्णतया विलीन हो रहे हैं।...यही मेरी समस्याएँ हैं, यही हैं मेरे संकट। नदी के इन दो प्रांतों के बीच सेतुबन्धन में मैं कभी सफल न हो पाया। मानसिक अंधकार के निरंतर प्रश्नों से मैंने बार-बार उसकी चेष्टा की है। (परन्तु, अस-फल रहा)। जीवन के इन्हीं निरंतर प्रश्नों के बल पर मेरी जीवन रूपी छोटी सी घड़ी सदैव चलायमान रही है।'

तीन

हेस की आयु तब सत्ताईस वर्ष की थी, जब "पीटर कैमेजिंड" प्रकाशित हुआ और इसी ग्रन्थ से उनकी साहित्यिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिष्ठा का शिलान्यास हुआ। आलोच्च ग्रंथ यद्यपि उनका पहला उपन्यास था, तथापि उसमें हेस साहित्य की मूलधारा प्रवाहित होतीं दृष्टिगोचर होतीं हैं। लेखक की जीवन गाथा, बाल्यजीवन का आनन्द और यंत्रणा मूलक स्वाद, किशोरावस्था के मित्रों का संग और यौवनकाल की प्रेम कहानियाँ ही उनके सर्वप्रथम उपन्यास के उपजीव्य हैं। हेस ने लगभग अपने हर उपन्यास में निजी संसार की बातें कही हैं, अन्य पुरुष में व्यक्त होने पर भी वे सभी बातें उनके निजी संसार से सम्बन्धित हैं।

"पीटर कैमेंज़िड" हेस के व्यक्तित्व के स्वरूप को ही व्यक्त करता है। दूसरे शब्दों में हेस-जगत है, जाँ पॉल सार्त्र का और हॉफमैन का संसार। उनके नायक धारावाहिक, नियमसिद्ध जीवन में हाँफ उठते हैं। वे अपनी स्वतंत्रता की खोज करते हैं, वृक्षों, पक्षियों, उन्मुक्त आकाश और उदार प्रकृति में। उनके विशिष्ट शत्रु हैं शीतकाल—जब हिमपात के कारण उन्हें घर की चहार दीवारी के बीच बन्द रहना पड़ता है—और बुढ़ापा जो उनके जीवन नाटक पर अपना आखिरी पर्दा गिरा देता है। इस छोटे से लेख में हेस के समग्र साहित्य के केवल एक-आध अध्याय पर ही आलोचना संभव है। "डेमीयन (१९१९), 'सिद्धार्थ" (१९२२)," डेथ ऐण्ड दी लवर" (१९३०), "दी जर्नी टू दी ईस्ट" (१९४३)–जैसे उपन्यासों में हेस जीवनी एक पर्व से दूसरे में परिणत होती रही। साथ ही मानवीय आत्मा की नैसर्गिकता की प्रतिध्वनियाँ सुनायी पड़ी हैं, उनके जीवन और साहित्य में। "डेमीयन" का प्रथम प्रकाशन एमिल सिंक्लेयर के गुप्त नाम से हुआ था। प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् समकालीन योरप के जनसाधारण पर इसका प्रभाव चमत्कारप्रद था। कौन सा ऐसा आकर्षक सूत्र था, एमिल सिंक्लेयर की यौवन गाथा में, जिसने महायुद्ध से प्रत्यावर्तन पर मानवमात्र को इतनी सांत्वना दिलायी थी। वैसे इसकी और पूर्ववर्ती उपन्यासों की शैली में विशेष सामंजस्य है। कहानी के प्रसंग में ही नायक का आत्मोद्घाटन होता है, किसी व्यक्ति के यौवन के विचित्र दिनों की कहानी। हेस की पूर्ववर्ती रचनाओं में एक अज्ञातवश प्रसारित आत्मजिज्ञासा, आत्मानुसन्धान, सत्य की खोज सभी आलोचित उपन्यास में व्यापक रूप से विद्यमान हैं। "मैंने केवल कविता लिखने, धर्म का उपदेश देने, चित्र बनाने के लिए ही जन्म नहीं लिया था....। सभी जीवन धारण के माग पर छोटी-छोटी घटनाएँ हैं। वस्तुतः स्वयं को जान पाना ही हमारा सर्वोपरि धर्म है।" इसी सिद्धान्त पर मिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंक्लेयर दीर्घकाल तक अविराम आत्म-जिज्ञासा और आत्मानुसंधान की विभिन्न तथा कठिन परीक्षाओं के बले पर पहुँचे थे।

भारतीय ब्राह्मण युवक, सिद्धार्थ बुद्धदेव (भगवान बुद्ध) से साक्षात होने पर भी उनके दर्शाये पथ पर न चला। सिद्धार्थ के मन में इस सत्य ने घर कर लिया था कि मानव जाति को अपना पथ स्वयं ही ढूंढ़ निकालना है। किसी भी पथ पर क्यों न चले, उसकी चरम सीमा तक पहुँचने में निजी चेष्टा ही सदा सार्थकता लाती है। उससे ही मर्त्यलोक की जटिल समस्याओं से मुक्ति मिलेगी। मानवीय सफलता, धन का मोह, सुन्दरी नर्तकी कमला का प्रेम, संतान के प्रति गहरे बन्धन का आभास– सभी उसके चरम त्याग के एक प्रस्तुति पर्व हैं। आलोच्य उपन्यास में वास्तव और शिल्पी स्वभाव का निरन्तर द्वन्द्व बड़े ही सौष्ठव से व्यक्त हुआ है। इस उपन्यास को लिखने में हेस को तीन वर्ष का सुदीर्घ काल व्ययतीत करना पड़ा था।

"डेथ एण्ड दी लवर"– हेस की एक उत्कृष्ट, परिणत रचना है। आंगिक तथा विषय वस्तु, चरित्र तथा भागवत मर्म का पूर्ण समन्वय मिला इस उपन्यास में। इसमें स्वभाव सुलभ सहज विश्वास तथा युक्तिवादिता का चिरकालीन छन्द दो चरित्रों के आधार पर प्रस्फुटित किया गया है। प्रतिभाशाली युवक नारज़िश एक मठाध्यक्ष है। मठ की चहारदीवारी के बाहर उसने कभी पदार्थण नहीं किया है। परन्तु अतृप्त तृष्णा से पीड़ित गोलडमुण्ड सदा भ्राम्यमान रहा है, प्रेम और जीवन के संधान में तथा अन्त में उसे जीवन की पूर्णता मिली है, शिल्पकला के माध्यम से। गोलडमुण्ड ने बड़ी गम्भीरतापूर्वक अनुभव किया है– "केवल कला के माध्यम से ही गहनतम असंगति– समन्वय सिद्ध हो सकता है।"

और "मैजिस्तर लूडी" ही हेस की सर्वश्रेष्ठ रचना है। युटोपिया राज्य का कल्पना चित्र इसमें बड़े सुरुचिपूर्ण तथा त्रुटिरहित ढंग से उतारा गया है। चर्चित उपन्यास में पूर्व और पश्चिम के भाव-राज्यों का एक अपूर्व मिलन देखने को मिलता है। हेस के साहित्यक जीवन की परिणति भी इसी उपन्यास में हुई है। १९४६ में साहित्यक संसार के स्वोंच्च पुरस्कार, नोबल प्राइज़, से उन्हें मूलतः इसी उपन्यास के कारण सम्मानित किया गया था।

चार

१९४६ ई. में हेस जर्मनी के फ्रैंकफुर्ट नगर में "गेटे पुरस्कार" से सम्मानित किये गये, अपने ही देश में उनकी साहित्यिक

[शेष पृष्ठ ६२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

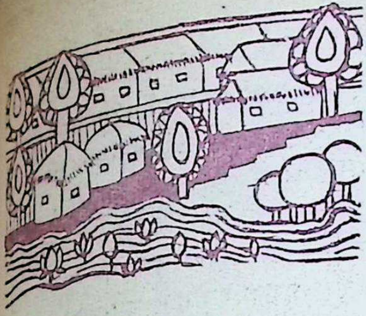

श्याम सुन्दर घोष

सूनेपन के बीच

गहरे सूनेपन में कोई छबि डूब गयी
निघुटे जल में जैसे कोई घट डूबे
चुप्पी कमसिन एक कमरे में बैठ गयी
खेल खेल में जैसे कोई शिशु ऊब्रे
दूर कहीं बजा गजा मन हिरण सा भागा
दूर दूर दूर हवा जैसे बौरायी
यादों के हिलते से तिर्यक् क्षण प्रतिबिंबित
जैसे थिर जल में उरइन की परछाईं
खिड़की पर झुकी लता बोध जगे ऐसा कुछ
आस-पास बिखरा सा आदिम सम्मोहन
अन्वित रेखाओं के क्रम से छू जाये ज्यों
हल्के रंगों का छितराया सम्प्रंजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

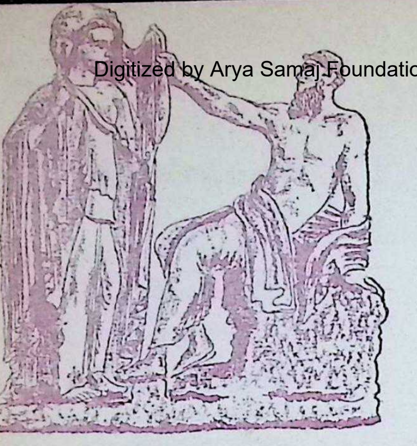

एक ओर है देह-सौन्दर्य की दुर्निवार मोहन-माया, दूसरी ओर है आत्मिक सौन्दर्य की अमृत-स्रावी सुखोष्मा। इन ोनों के बीच संघर्ष करते एक शिल्पी की आत्मा के मार्मिक द्वंद्व को लेखिका ने इस कहानी में बड़ी नाज़क क़लम से अनावरण किया है।

अमृता भारती

एफ्रोदिती का गार्डन

[कहानी]

"माउंट डेल्फ़ी के प्रदेशों में शिकार खेलते यूलिसिस एक बार मार्ग भटक गया। वहाँ उसकी भेंट दो कुमारी लड़कियों से हुई, जो हाथ में हाथ डाले घूम रहीं थीं। उनमें से एक के बाल बनफ़शई थे, आँखें उजली और ओंठ विदग्ध थे। उसने यूलिसिस से कहा "मैं अरीती हूँ।" दूसरी की आखें म्लान, हाथ कोमल और मृदु वक्षस्थल था। उसने कहा, "मैं ट्रायफे हूँ।" और दोनों ने फुसफुसाकर कहा, "हममें से चुन लो।"

यूलिसिस ने बड़ी चतुरता के साथ उत्तर दिया, "मैं कैसे चुन सकता हूँ? तुम्हें अलग नहीं किया जा सकता। यदि कोई तुममे से एक को गुज़रता हुआ देखे, तो खाली छाया के अतिरिक्त वह कुछ भी न देख पायेगा। क्योंकि जैसे कोई भी सच्ची सात्विकता अपने आप में रक्त-माँस के सनातन सुख को इनकार नहीं करती, वैसे ही आत्मा की किंचित् भव्यता के बिना कोई भी विलासिता अपूर्ण होती है। मैं तुम दोनों का ही अनुकरण करूँगा। मुझे रास्ता बताओ।"

उसके बोलने के साथ ही दो विज्ञन मिलकर एक हो गये और यूलिसिस ने जाना कि उसका संलाप महान देवी एफ्रोदिता से हुआ है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम इस कहानी के ज़रिये कहना क्या चाहते हो?" जब मैंने अभिनव से यह बात पूछी, तो वह अपना सिर हाथों में थाम कर बैठ गया। मैंने देखा, अभि के बाल बेहद सूखे, अस्तव्यस्त हैं—और उनमें चमकता हुआ एकाध सफ़ेद बाल उसकी व्यथा को और भी तीव्रता से कहता है।

मैं अभिनव को बचपन से जानता हूँ– वह मेरा बेहद प्यारा दोस्त है—उसके गम को सहना मेरे लिए दुनिया का सबसे कठिन काम है। बरसों हो गये– तब से मैं उससे कहीं न कहीं बिछुड़ गया हूँ। वह मुझसे काफी कुछ छिपाता रहा है और आज मुझे कुछ जानने का मौका मिला, तो वह गॉडेस एफ्रोदिता की कहानी कहकर चुप हो गया है।

मैंने कॉलेज में उसके बारे में कितनी अफ़वाहें सुनीं —बहुत कछ उचित-अनुचित भी जाना, लेकिन मेरे मन से उसके प्रति श्रद्धा गयी नहीं– जो कुछ मेरे हृदय में उसके लिए है, वह प्यार से ज्यादा श्रद्धा है और श्रद्धा से ज्यादा प्यार है। उसके मुँह बोले दोस्तों ने उसकी कितनी ही शिकायतें मेरे पास पहुँचायीं– लेकिन मैंने हमेशा यह कहकर टाल दिया, "मैं कोई उसका अभिभावक हूँ– जो आप मेरे पास आते हैं?"

पढ़ायी समाप्त हो गयी थी—हम दोनों ही अपने-अपने घर लौट आये थे। हम दोनों के घर का फ़ासला ज्यादा नहीं था और हम दोनों बचपन के दोस्त थे– फिर भी अब हमारी बातचीत नहीं के बराबर होती थीं। कभी रास्ते में गुज़रते—घर के बरामदे में बैठे देखते, तो कुछ बोल देते— नहीं तो वह अपनी नज़र नीची कर लेता और मैं दूसरी तरफ देखता हुआ निकल जाता।.....मेरे घरवालों ने इसका कारण उसकी अमीरी जाना और उसके घरवालों ने समझा कि मैं कहीं न कहीं उसके उन्नति के पथ में आ गया हूँ, इसीलिए

चित्र : जोशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह मनमुटाव है।– मैं दोनों तरफ की बातें सुनकर चुपचाप हँस देता– अभिनव को मुझसे ज्यादा कौन जानेगा ?

दिन यूं ही निकल गये– और एक दिन पता चला कि अभिनव युनिवर्सिटी वापस लौट गया– पर किसलिए ? और इस 'किसलिए' का उत्तर उसके किसी दोस्त से मिला 'स्कल्पचर' सीखने के लिए।

मैं अभिनव के हर प्रश्न का उत्तर अपने मन से पाता रहा हूँ, पर 'स्कल्पचर सीखने के लिए'– जो अपने आप में प्रश्न नहीं उत्तर है– का उत्तर न पा सका। यह उसकी एक सनक है– मैंने बस इतना ही समझा। मेरे घरवालों ने समझा– धन-दौलत बेशुमार होने से खाने-कमाने की तो कोई चिन्ता है नहीं– सब रईसों के लाड़ हैं– कि अब इस उम्र में पत्थर तोड़ने निकले हैं। और उनकी यह बात सुनकर मैं फिर हँस दिया, क्योंकि मुझे माइकेल एंजिलो की याद आ गयी थी: जिस समय माइकेल एंजिलो ने अपने पिता से 'स्कल्पटर' बनने की बात कही थी, तो उन्होंने कहा था, 'क्या तुम स्टोनकटर बनना चाहते हो ?' तो यदि अभिनव पत्थर तोड़ने वालों में शामिल कर दिया, गया, तो क्या अचरज है !

फिर भी मैं परेशान था कि उसे स्कल्पचर सीखने की प्रेरणा कहाँ से, क्यों और किसलिए आयी ? और किसी के साथ कहाँ, क्यों, किसलिए भले ही न जुड़े, पर अभिनव का हर काम इन कसौटियों के बाद होता था।

अपनी शादी के बाद मैं उसे भूलने लगा। बरस पर बरस निकलते जा रहे थे– अभिनव की याद तब आती– जब शाम का झुटपुटा होता– कहीं कोई एकाध पँछी तीव्र कर्कश आवाज़ में चिड़ियों की चहचहाहट को भंग कर देता– और मुझे वे दिन याद आ जाते जब मैं और अभिनव खेतों और खेतों के पार कहीं बहुत दूर किसी पुराने कुंए की मुंडेर पर बैठकर आर्ट और लिटरेचर के बारे में बात किया करते थे।– या फिर मुझे अभिनव की याद तब आती– जब मेरा जी अपने उन दिनों में लौटने लगता– जहाँ केवल वही मेरा एक मात्र साथी था– और मैं उसका एक मात्र अभिन्न।

कॉलेज के आख़िरी दिनों में मैंने उसके मुंह से मधुमालती और मजूंषा का नाम सुना था। एक बार वह बड़ी आत्मीयता से मेरी शैया पर मेरी बगल में बैठ गया था। उसने कहा था–

"चन्द्र, मधु सचमुच 'मधु' है। मेरे अन्तर के प्याले को जो सुधारस चाहिए– वह अकेली मधु में ही है। मुझे लगता है, उसे पाकर मेरी जन्मान्तरों की प्यास को किनारा मिल जायेगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और तब एक दिन कैफे में कॉफी पीते हुए उसने मुझसे बताया– "तुमने मंजूषा को देखा है– रूप का वैसा चमत्कार मैंने नहीं देखा– वह खुद अपनी उपमा है। उमरख़ैय्याम की कविता और मजूंषा में कोई अन्तर नहीं–मेरे सौन्दर्य-तृषित नयनों को केवल मजूंषा ही भर सकती है।"

और फिर थीसिस देने के बाद अभिनव मुझसे अलग हो गया। मैं नहीं जान सका– मधुमालती कौन है– मजूंषा कौन है? अभिनव को मैं काफ़ी भूल गया था– लेकिन आज उसने अपनी याद को फिर ताज़ा कर दिया है।

आज तीसरे पहर बरामदे की आराम-कुर्सी पर उसे बैठे देखकर मेरा हृदय खुशी से धड़कने लगा– मैं उसकी सारी बेरुखी को एक घूंट में पी गया– और तेज़ क़दमों से उसकी तरफ बढ़ा, लेकिन जब उसने बेहद फीकी मुस्कान के साथ मेरा स्वागत किया, तो मेरा सारा उत्साह जाता रहा।

चाय की चुस्कियों के साथ मैंने उससे पूछा, "अभि, क्या मैं कभी नहीं जान सकूंगा कि तुम आजकल कहाँ रहते हो?"

"एफ्रोदि ी के गार्डन में।"

और जब मैंने अभिप्रायंभरी दृष्टि से उसकी तरफ देखा, तो वह यूलिसिस की कहानी सुनाकर चुप हो गया।

मुझे पूरी रात यह सोचते बीत गयी है कि यूलिसिस की कहानी अभिनव के जीवन से किस प्रकार और कहाँ से जुड़ी है। यूलिसिस और अरीती, यूलिसिस और ट्रायफे। और अन्ततः एफ्रोदिती–एफ़्रोदिती का गार्डन! 'एफ्रोदिती के गार्डन' से अभिनव का क्या मतलब है?......

एफ़्रोदिती का गार्डन :

बड़े बन्द फाटक के अन्दर अभिनव के स्वप्न की दृष्टि। ऊँचे दरख़्तों के नीचे सफेद मार्बल की लड़कियाँ। जगह-जगह पड़े हुए क़ीमती पत्थरों के टुकड़े। बहती हुई छोटी-छोटी निर्झरिणियाँ-सीढ़ियाँ और पुल। घने पेड़ों की छाया में पड़ी बेन्चेज़ और पास ही हाथ में दीप थामे खड़ी बच्चियाँ। बाग़ के फुव्वारे बन्द पड़े हैं, लेकिन आगे जाकर बग़ीचे के बीचो-बीच एक फुव्वारा अपनी पूरी गति से पानी उड़ा रहा है– नीहार के स्वप्निल धुंधलके में दिखायी देती हैं, दो आकृतियाँ: अभिनव और मंजूषा। मंजूषा अरीती है या ट्रायफे, कहना कठिन है– पर दोनों में से एक वह ज़रूर है।

दो बरस हो गये हैं, अभिनव ने यह बाग़ ख़रीद लिया है। बाग़ का नाम नहीं है– 'एफ्रोदिती का गार्डन, नाम तो इसका बहुत बाद में पड़ा। तब, जब मंजूषा नहीं थी– मधुमालती थी। मंजूषा और मधुमालती– अरीती और ट्रायफे या ट्रायफे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अरीती। और तब मधुमालती की इच्छा से अभिनव ने बाग़ का नाम रख दिया था 'एफ़्रोदिती का गार्डन'। यों इस नाम का जन्म उसके मन में बहुत पहले से ही हो गया था– तभी तो उसने चन्द्र से 'एफ़्रोदिती के गार्डन' मे रहने की बात कही थी–उस को भी एक साल हो गया।

सात माह में शायद सात बार भी वह मधुमालती से मिलने न गया हो। मंजूषा और मधुमालती–जो पिछले दस बरसों में उसके संघर्ष का कारण रही हैं–उसकी यातना का मूल। क्योंकि वह उन दोनों में से किसी का भी चुनाव नहीं कर सका। घोर मानसिक पीड़न में उसने अपने दिन और रात गुज़ारे हैं। भीषण अन्तर्द्वन्द उसके गले में फाँसी बनकर लटका रहा है। उसके हृदय में अनवरत एक अग्नि जलती है– वह ठीक-ठीक नहीं जान पाता कि इस अग्नि का सम्बन्ध मधु से है या मंजु से! रात के सन्नाटे में वह चीखकर उठ गया है और अपनी अन्तरात्मा की इस चीख को सुनकर खुद भी सन्नाटे में आ गया है। उसने चाहा है दोनों में से एक से अपने को मुक्त कर लेना।

मंजूषा को स्वीकारते समय उसे याद आ जाती हैं, मधु के अन्तर की वे गहरी–तरला कोमलताएँ– जिनका बन्धन तोड़ने से टूटता नहीं– खुलने से खुलता नहीं। याद आ जाती है, उसके नयनकोरों की रेशमी बदलियाँ– जिनसे अगाध स्नेह का मधु रिसता है। मधु–मधुमालती– तुम अपने केशों के 'कस्तूरी-वनों' से मुझे मुक्त कर दो।

और अब वह मधुमालती के नित सुविस्तीर्ण होते स्नेहांचलों की छाया में ठहर जाना चाहता है, तो मंजूषा की रतनारी देह टोंक देती है। टोंक देती हैं, उसकी आँखों की बिजलियाँ– उसकी चन्दन बाहों का आलिंगन –उसके कदली–वनों की अन्तर–वापियाँ। मंजू–मंजूषा जिसके पास अप्रतिम रूप का खजाना है। अभिनव उसके सौन्दर्य-पाश से छूट जाना चाहता है, लेकिन मंजूषा का आकर्षण बल खा-खाकर बाँधता है– हटने नहीं देता।

मधुमालती और मंजूषा :

मधु से मिलकर जब भी वह लौटा है, तो हतप्रभ होकर। मंजूषा की संगमरमरी देह उसे बेहद फीकी और बेजान लगी है। लेकिन मंजूषा अंगूर-सुरा है– उसके जादू को इनकार नहीं किया जा सकता है। अभिनव फिर सब कुछ भूलकर मंजूषा के रूप की बारीकियों में खो गया। अभिनव का विचार बन गया है कि सौन्दर्य शास्त्र पढ़ने के बजाय अगर मंजूषा के शरीर को पढ़ लिया जाये, तो निश्चय ही श्रेष्ठ है।

मंजूषा की लम्बाई चौड़ाई का मार्बल-अभिनव दूसरी मंजूषा तैयार कर रहा है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और रूपगर्विता मंजूषा शॉवर की मुंडेर पर घण्टों खड़ी रह जाती है।

कुछ दिन पहले जब वह मधुमालती से मिलने गया था, तो मधु ने बाहरी दरवाज़े की ओट में भींगे नयनों और हँसते होठों से एक बात कही थी,, "मुझे लगता है—अब तुमसे बहुत दिनों में भेंट होगी।"

"ऐसा भी तो हो सकता है, भेंट ही न हो!" अभि ने कहा था।

"नहीं, यह तो सच नहीं। बल्कि अगली बार जब तुम मिलोगे, तो अविभक्त और सम्पूर्ण होकर मुझे मिलोगे।"

"मधु, कहीं तुम्हारा विश्वास टूट गया तो!"

"विश्वास अगर अडिग है, तो टूटेगा नहीं, वरना मैं मानूंगी, मुझमें विश्वास ही नहीं था।"

तब से कई माह बीत गये हैं, वह मधु के घर की राह नहीं गया—मधु के बग़ीचे की सुगन्ध उसने नहीं सूंघी। वह तो खो गया है, मंजूषा की देह के संगमरमरी फूल में।

●

मार्बल और छेनी के बीच अभिनव के स्वप्नलोक खुलते चले जाते हैं। मंजूषा के केशों में उसे हज़ारों रातें तार-तार होती लगती हैं। वह मार्बल में चांदी के तारों को बारीक से बारीक तराश लेना चाहता है। केशों के नीचे आँकता है अर्धचन्द्राकार माथा। भौंहो में इन्द्रधनु और भी तीक्ष्ण हो उठते हैं। वह मंजूषा की आँखों में घण्टों देखता है—उन आँखों का कटाव उससे सहन नहीं होता—फिर भी अभिनव अचरज करता है कि वह उनमें डूब क्यों नहीं पाया—उसने बार-बार डुबकी लगायी है, पर फूल की तरह सतह पर आ गया है। और तब उसे याद आती है मधुमालती के नयनों की अथाह गहरायी—जिनमें डूबकर उसने अनन्त झीलों की अनन्तता को थाहा है।

मंजूषा खड़ी है निर्वसना। दाहिने हाथ में है दर्पण-जिसमें सुबह की सजला प्रकृति प्रतिबिम्बित है और बाँयें हाथ में है अवगुण्ठन—जो बेहद झीना है और जँघाओं के पास से बहता हुआ एक किनारे उड़ रहा है। मंजूषा की अधर कलियों में मदस्रोत छिपे हैं—अभिनव जानता है। वह जानता है, लेकिन उसकी प्यास को तृप्ति नहीं मिलती। वह उसके चन्द्रशैलों की चाँदनी में डूबा रहा है—पर आग को पानी नहीं मिला।

दिन बीतते चले जा रहे हैं—छेनी और मार्बल-अभिनव और मंजूषा। अभिनव मंजूषा की देह में डूब गया है—रेखाएँ कटती चली जा रही हैं—मंजूषा का रूप-स्पर्श पाकर मार्बल और भी स्निग्ध हो गया है। जब मंजूषा खड़े-खड़े थक जाती है—अभिनव काम करते-करते थक जाता, तो वह अनायास ही उसका मुँह ऊपर उठाकर पूछता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मंजु तुम्हारा रूप मुझे इतना जलाता क्यों है? मुझे तुममें तपन ही मिलती है, सुधा नहीं।" और उसे मधुमालती की याद हो आती है— मधु जो सम्पूर्ण मधु है— झील-सी शीतल और शान्त।

अभिनव बेचैन है, क्योंकि उसे मंजूषा से तृप्ति नहीं मिलती- अभिनव बेचैन है, क्योंकि उसे मधु से तपन नहीं मिलती है, मिलती है वत्सल दृष्टि—उसके तो वक्ष में भी अमराइयों की कोमल छाया है, आग नहीं। और अभिनव को केवल आग नहीं चाहिए। केवल शीतलता नहीं चाहिए— और वह मंजु या मधु से अकस्मात् पूछ उठता है—

"मंजु, क्या तुम मधु भी नहीं बन सकतीं?" या

"मधु, क्या तुम मंजु भी नहीं बन सकतीं?"

मंजु हँस पड़ती है, क्योंकि उसे मधु में कुछ भी विशेष नहीं लगता? मधु खामोश, भेदक दृष्टि से अभिनव को देखती है और मानो बिन बोले ही कह देती है— "तुमने खोजने की कोशिश नहीं की, वरना तुम्हें जल के भीतर अग्नि जरूर मिल जाती।"

⊙

एक बरस के ऊपर हो गया है— मार्बल की मंजूषा तैयार हो गयी है। उसके एक हाथ में दर्पण है, जिसमें सुबह की सजला प्रकृति प्रतिबिम्बित है और दूसरे हाथ में झीना अवगुण्ठन थमा है— जो जंघाओं पर बहता हुआ एक ओर उड़ रहा है। जब मंजूषा आखिरी बार हाथ में दर्पण और अवगुण्ठन लेकर खड़ी हुई, तो शाम हो चली थी। मार्बल के दर्पण में सुबह की सजला प्रकृति प्रतिबिम्बित थी— लेकिन मंजूषा के हाथ के दर्पण में डूबते सूर्य की अन्तिम कुछ किरणें ही बाकी थीं। अभिनव ने आँकी थी: ओसभरी प्रकृति— लेकिन आज आखिरी बार मंजूषा के हाथ के दर्पण में डूबते हुए सूरज का बिम्ब देखकर उसके मुख से दबी आह निकल गयी। सन्ध्या में मंजूषा के बाल सुनहले लग रहे थे। अभिनव ने मंजूषा को बार-बार देखा- उसे मंजूषा का रूप अपनी सब तृप्तियों और अतृप्तियों के साथ ओझल होता-सा लगा। और तभी मार्बल की मंजूषा में उसे मधुमालती की छवि काँपती-सी लगी। मार्बल की इस प्रतिमा में केवल मंजूषा नहीं है—मधुमालती भी स्पन्दित है— और उसके होठों से निकल पड़ा—

"देवी एफ्रोदिती!"

जिस समय अभिनव ने मंजूषा के केशों का आखिरी चुम्बन लेकर उसे अन्तिम बार विदा किया— उस समय शाम गहरी हो चुकी थी। मधुमालती— उसकी प्रिया- उसकी अन्तर्यामिनी। और उसे लगा—वही

[शेष पृष्ठ ६८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब आप धातु के सूट और काग़ज़ के कपड़े पहनेंगे

इस मँहगी के ज़माने में यदि आप कपड़े बनवाने और उन्हें बार-बार धुलवाने से तंग आ गये हों तो ज़रा और सब्र कीजिए। विज्ञान शीघ्र ही आपकी सेवा में ऐसे वस्त्र सुलभ कर देगा जो या तो कभी फटे ही नहीं, अथवा इतने सस्ते हों कि एक बार पहन कर, मैले होते ही उन्हें आप फेंक सकें।

बात आश्चर्यजनक और असंभव सी अवश्य लगती है, परन्तु धातु के सूट और काग़ज़ के कपड़े अब शीघ्र ही दुनिया भर में मिलने लगेंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि लोगों के खयाल कपड़ों के बारे में बहुत-कुछ बदल जायेंगे और वे या तो ऐसे कपड़े पहनेंगे जो कभी फटें ही नहीं, अथवा ऐसे कपड़े, जो इतने सस्ते हों कि एक बार पहन लेने पर उन्हें उतार कर फेंका जा सके। देखें, दोनों में से किसको लोग अधिक पसन्द करते हैं, क्योंकि भविष्य में वही हमारी पोशाक होगी।

पहली क़िस्म का कपड़ा ब्रिटिश वैज्ञानिक हावर्ड रीस की सूझ का फल है। इस समय तो केवल कुछ गज ही इस कपड़े के दुनिया में उपलब्ध हैं; परन्तु कई चोटी के अंगरेज वैज्ञानिक इसके गुणों से अभी से प्रभावित हो चुके हैं। इसकी सबसे महत्वपूर्ण उपयोगिता यह है कि इसको पहननेवाला अपनी मर्ज़ी के मुताबिक शरीर को शीतल अथवा गर्म बनाये रख सकता है। रेयन के इस कपड़े पर एक ओर, एक इंच के हज़ारवें भाग जितनी मोटी अलम्युनियम की पर्त चढ़ी रहती है। यदि आप इस पर्तवाले भाग को बाहर की ओर पहनें, तो गर्म देश की आबहवा में भी शरीर को शीतल बनाये रख सकते हैं। इसके विपरीत यदि आप यह पर्तवाला हिस्सा भीतर की ओर पहनें, तो ठंडे मौसम में भी शरीर को गर्म बनाये रख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते हैं। इसका रहस्य यह है कि अल्म्युनियम सूरज अथवा शरीर की गर्मी को वापस फेंकता है। इस कपड़े का कमीज़ या सूट, अल्म्युनियम वाले हिस्से को बाहर की ओर रख कर पहनने पर, सूरज की ९५ प्रतिशत किरणों को वापस फेंकेगा, जबकि सफ़ेद से सफ़ेद कपड़ा भी ६० से ७० प्रतिशत किरणें ही वापस फेंकता है। और, यदि इस कपड़े का अस्तर की तरह उपयोग किया जाय, याने अल्म्युनियमवाली पर्त शरीर की ओर रहे, तो शरीर की गर्मी को यह बाहर नहीं जाने देगा। इसके इस अद्भुत गुण के कारण, यह कपड़ा एयर कन्डिशनिंग यंत्र और हीटर दोनों का काम देता है।

मिस्टर रीस ने अपने सहयोगियों के साथ इस कपड़े का ब्रिटेन और अमेरिका में पेटेंट करा लिया है। प्रथमतः वस्त्र उद्योग के लिए, ये इसमें और भी अधिक विकास करने की चेष्टा में हैं, परन्तु सरकार रक्षात्मक परिधान के रूप में इसकी संभावनाओं को देख कर अभी से इसमें दिलचस्पी ले रही है। अपने वर्तमान रूप में भी यह आग बुझानेवाले और ऐसे लोगों के लिए अत्यन्त उपादेय है, जो तेज़ गर्मी या आग के निकट काम करते हैं, साथ ही ध्रुव-देशों की-सी सख़्त ठंड में भी काम करनेवालों के लिए यह वस्त्र अत्यन्त उपयोगी है। सैनिक दृष्टि से भी यह अत्यंत महत्व का है, क्योंकि यह अत्यन्त हल्का होता है। इसीसे सरकारी विभाग इस वस्त्र के विकास में रुचि ले रहे हैं।

एक और बड़ी ख़ूबी इस कपड़े में यह है कि इस पर गर्द या धूल जमा नहीं होती, क्योंकि अलम्यूनियमवाले हिस्से पर केवल कपड़ा फेर देने उस पर जमी गर्द साफ़ हो जाती है। फिर भी, पूरी तरह साफ़ करने के लिए इसे धोया भी जा सकता है। इस समय अधिकांश गर्म कपड़ों पर महीने भर में बहुत सारी गर्द जमा हो जाती है, फिर भी हर महीने अपने सूट को ड्रायक्लीन करानेवाले व्यक्ति को लोग शौक़ीन ही कहेंगे। मिस्टर रीस अपने इस नये अलम्युनियम के कपड़े से वस्त्रों की सफाई की समस्या ही हल कर देंगे।

दूसरी ओर, अमेरिका में वैज्ञानिक ऐसे वस्त्र बनाने में प्रयत्नशील हैं, जो इतना अधिक सस्ता हो कि एक बार पहन कर ही फेंका जा सके। काग़ज की कालरें, एप्रन, फीडर, नेपकिन्स वग़ैरह तो कुछ समय से अब भी अमेरिका में उपलब्ध हैं; परन्तु अभी हाल ही में जब कुछ कागज़ की पोशाकें प्रदर्शित की गयीं, तो लोगों में तहलका मच गया। ये बहुत-कुछ कपड़े की ड्रेसों जैसी ही लगती थीं और इनके विशेष गुण ये थे कि आग,

[शेष पृष्ठ ७० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

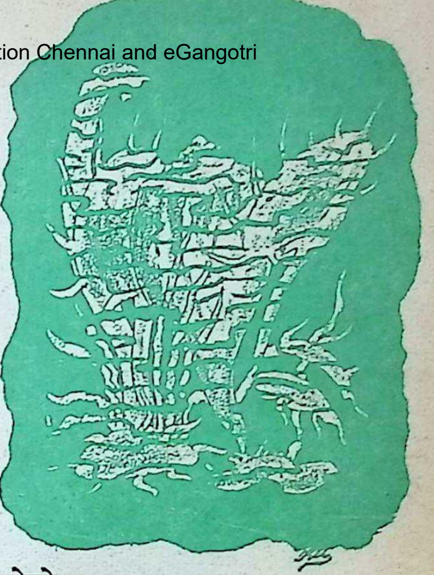

चीनी की तश्तरियों में कुछ सजी हुई रेखाएं
छोटे छोटे खाने
हर खाने में आँसू
भीगी रात के टुकड़े
तुमने सब को पथरायी आँखों से देखा
[1]माज़ी याद न आया।
तुम तो शेखर हार पहन कर,
बालाओं के साथ गये थे
तुम तो निरे अनोखे थे ना!
लेकिन वह आँसू किसके थे!
सोचो– लीला, जब भी थिरिक थिरिक कर
नाचती हैं– थक जाती है।
घुंघरुओं के ताल, हवा की
दस्तक से थम जाते हैं
इतनी कायर– कीड़े जैसी निर्बल!

ए. हमेश

●

अराजक

आगे देखो—
लमहों, दिनों, महीनों, बरसों, सदियों–
अनदेखी गऊ के सींगों पर,
घूमने वाली धरती,
चुपके चुपके बजरे पार उतार के सोचे,
एक ही [2]महवर—
लाखों चक्कर!
तुम ही बताओ– घूमने वाले तुम भी हो!
नीले फैलाव में बैठे कब से तनहा सोचते हो;
कोई तो आये–
लेकिन कौन आयेगा!
पिछली घटनाओं की खिड़की खुल जाय,
तो क्या हो!
झुके हुए दो सुर्ख नुकीले पंजे लहरायें तो–
उस छाया से डर जाओगे–
जिसको तुम माया कहते हो!
छी . . . . छी! तुम कितने मूर्ख हो!

---

१. अतीत २. धुरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पवित्र सरयू नदी के किनारे बसी अयोध्या नगरी आदर्श नृपति, आदर्श पुत्र मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम की जन्मभूमि है। अतः लाखों भक्त स्वभावतः ही इसे परम श्रद्धा और आदर की दृष्टि से देखते हैं; और, जिस

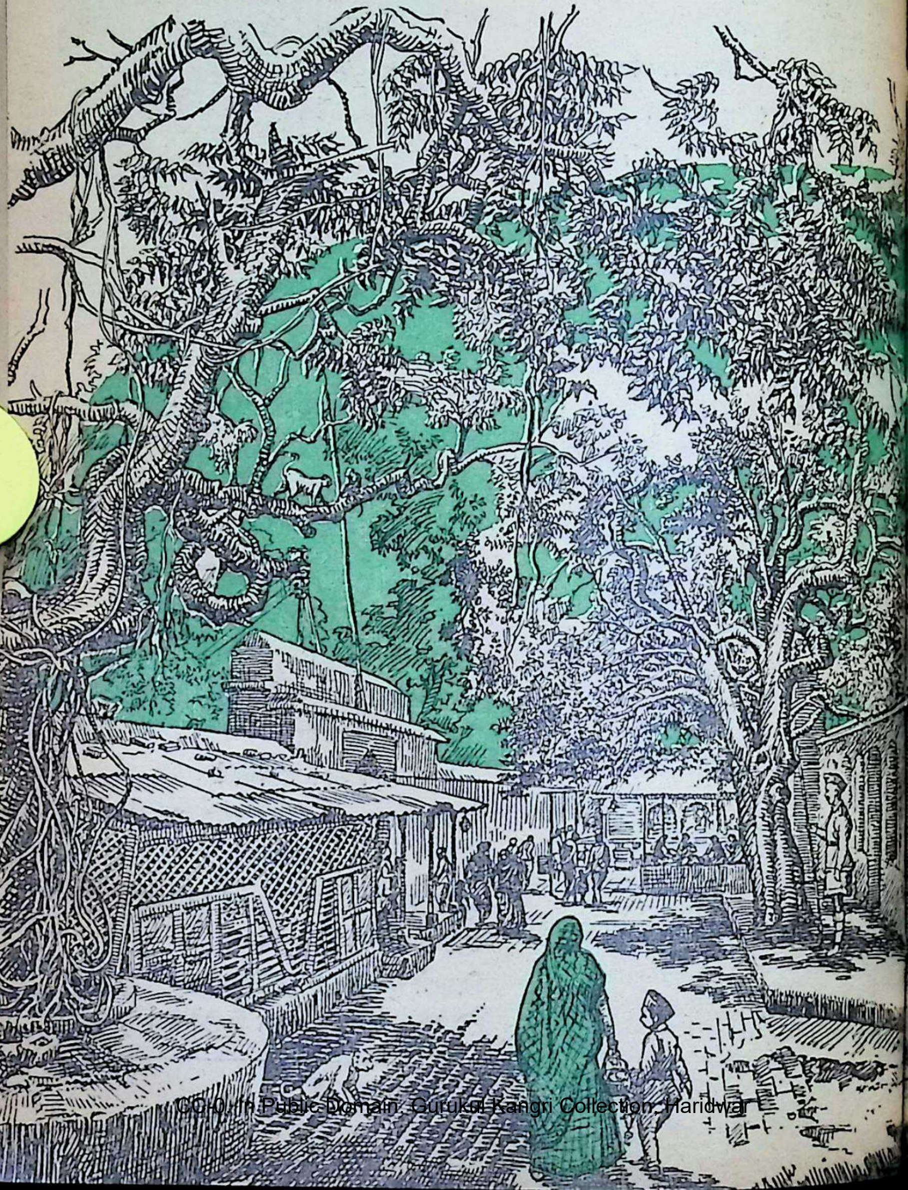

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान विशेष पर माता कौशल्या ने श्री राम को जन्म दिया, उसकी पवित्रता का तो पूछना ही क्या? भक्तजन उसके दर्शन मात्र से धन्य हो जाते हैं।

श्री राम के स्वर्गारोहण के पश्चात् अयोध्या नगरी जीर्ण-शीर्ण होने लगी। परन्तु, उनके पवित्र जन्म-स्थान की सुरक्षा एक के बाद एक-अनेक व्यक्ति करते आये। श्री राम के कनिष्ठ पुत्र कुश ने इसका पुनर्निर्माण कर इसे अपनी राज-

अयोध्या

[५]

भगवान श्रीराम का जन्मस्थान। यहीं माता कौशल्या ने बेल वृक्ष के नीचे भगवान की छठी मनायी थी। चारों भाइयों के चरण-चिह्न भी यहाँ देखे जा सकते हैं। दाहिनी ओर दीवाल के पीछे मस्जिद दिखायी पड़ती है और बायीं ओर आगन्तुक भक्तजन दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

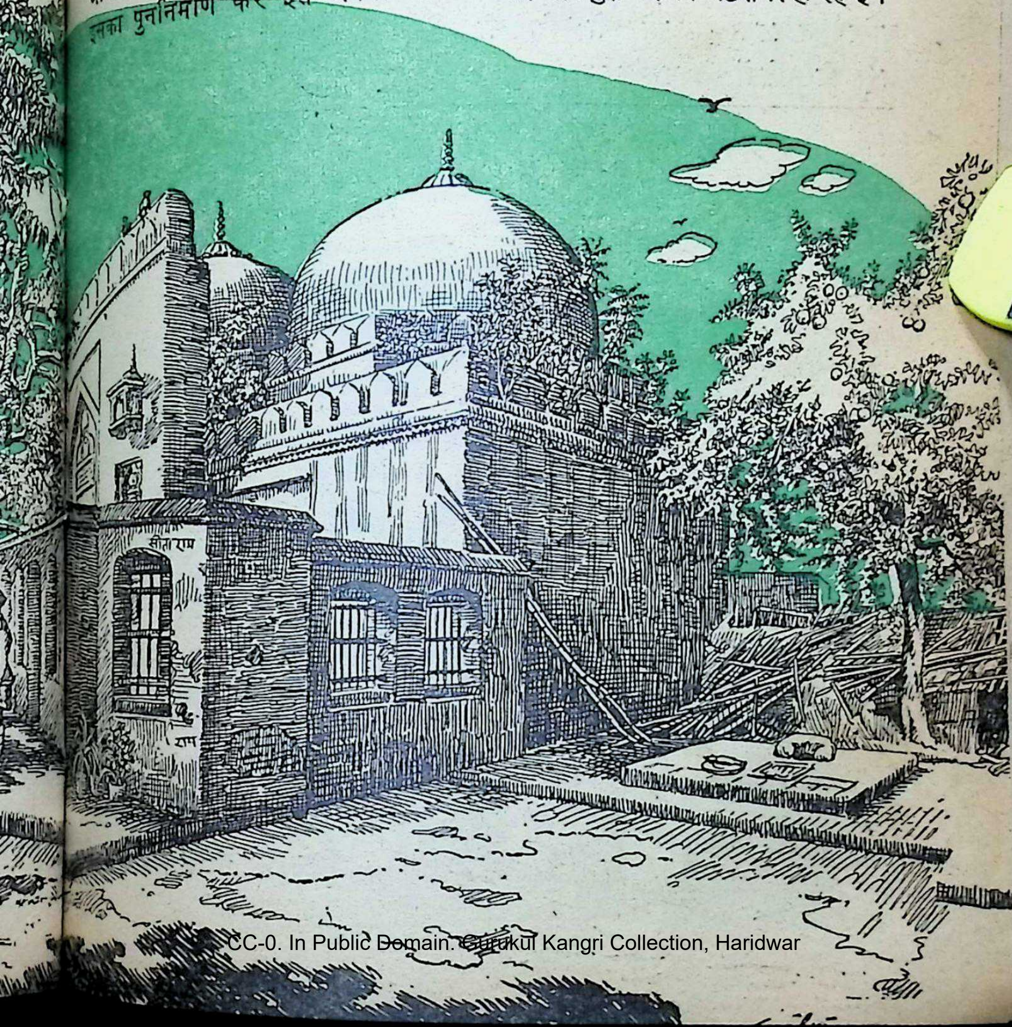

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धानी बनाया। उसके बहुत काल पश्चात् राजा वृहद्‌वाल ने इस प्राचीन राजधानी का जीर्णोद्धार किया। जब वृहद्‌वाल महाभारत युद्ध में अभिमन्यु द्वारा मारे गये, तब अयोध्या फिर से खंडहर होने लगी। फिर भी श्री राम के जन्मस्थान को इस काल में कभी कोई नहीं भूला।

परन्तु, बौद्ध धर्म के आगमन के पश्चात् मन्दिर की अवज्ञा की जाने लगी; फिर भी वहाँ की मूर्तियों को सुरक्षित रखा गया। राम नवमी का पुण्य पर्व समीपवर्ती वृक्षों के तले मनाया जाता और इन मूर्तियों की पूजा की जाती। बौद्ध सम्राट मिहिर गुप्त ने कुश द्वारा निर्मित प्राचीन मन्दिर को पूर्णत : नष्ट-भष्ट कर डाला। धर्मनिष्ठ हिन्दुओं ने उसके वि द्ध युद्ध भी छेड़ा, परन्तु वे विफल रहे। संयोग से शुंग वंश के सम्राट डयूमत्सेन ने उसे मार डाला। फिर भी श्री राम का जन्मस्थल उपेक्षित ही रहा।

श्रीराम के जन्मस्थान पर बाबर द्वारा बनवायी गयी इमारत

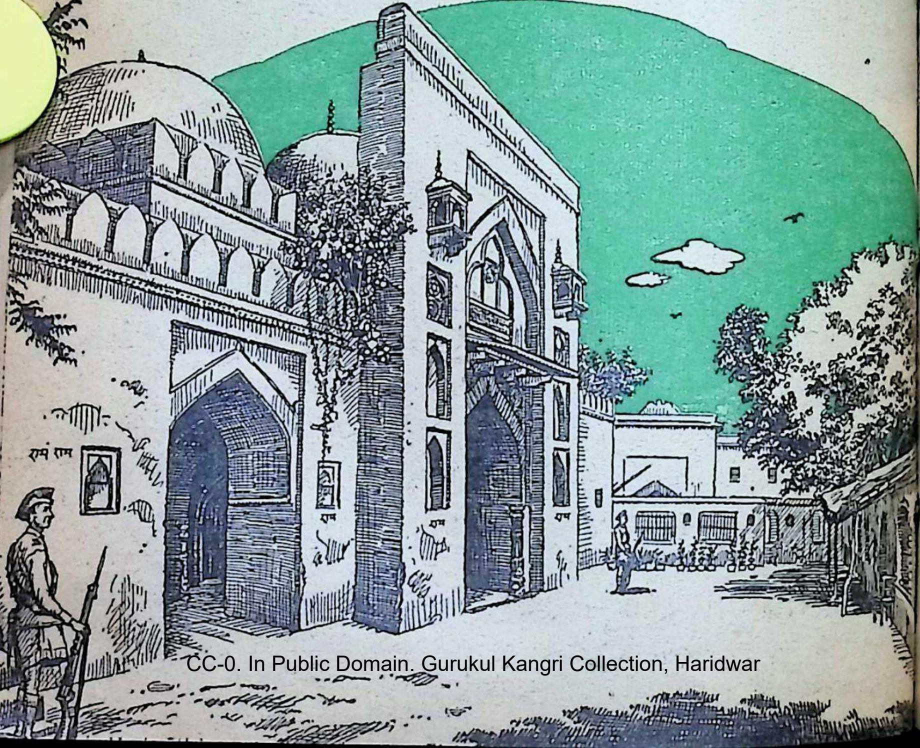

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

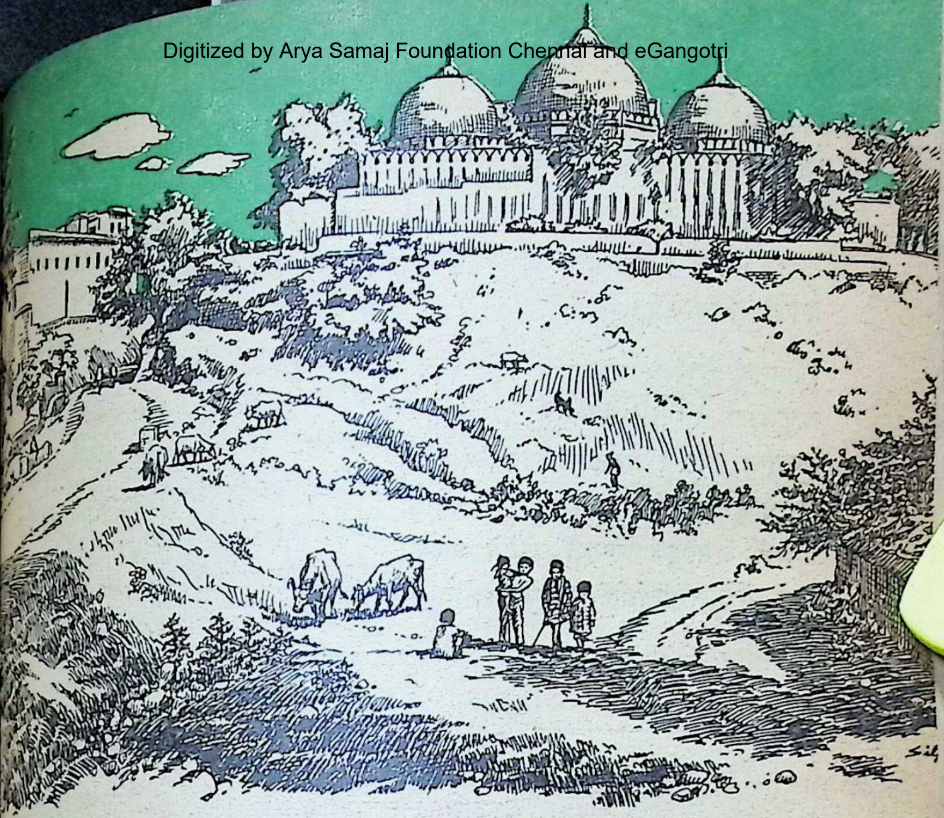

श्रीराम के जन्मस्थान के पीछे का भाग। मंदिरों की भाँति यद्यपि मस्जिदों के परिक्रमा नहीं होतीं, फिर भी हिंदुओं की भावनाओं को संतुष्ट करने के लिए बाबर ने इस मस्जिद के चारों ओर परिक्रमा बनवायी।

जैसा कि इसके नाम से विदित है, यह स्थान वही है, जहाँ श्री राम इस धरती पर अवतरित हुए। भगवान वाल्मीकि ने श्री राम के जन्मस्थान का वर्णन इस प्रकार किया है :

प्रासादैः रत्नविकृतैः पर्वतैरूपशोभिताम्।
कूटागारैश्च सम्पूर्णामिन्द्रस्येवामरावतीम्॥
चित्रामष्टपदाकारां वरनारीगुणैर्युताम्।
सर्वरत्नसमाकीर्णां विमानगृहशोभिताम्
विमानमिव सिद्धानां तपसाधिगतं दिवि।
सुनिवेशितवेश्मानां नरोत्तमसमावृताम्॥

रत्न-जड़ित विशाल राज प्रासाद पर्वत के समान शोभायमान है। स्त्रियों के लिए अलग से एक विशेष स्थान बनाया गया है। सारा स्थान इन्द्र की राजधानी अमरावती के समान जाज्वल्यमान है। राजभवन अति कलापूर्ण है और अष्टपद आकृति का है। श्रेष्ठ सन्नारियाँ यहाँ सर्व विचरण करती हैं। राजमहल के सभी बाजुओं पर अमूल्य रत्नों से जड़े शिखर हैं। वे सिद्धों के उन विमानों की तरह दिखायी पड़ते हैं, जो उन्होंने तपस्या द्वारा प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किये हैं। सभी द्वार कलापूर्ण हैं और चारों ओर श्रेष्ठ, गुणी पुरुष दिखायी पड़ते हैं।

रुद्रयामल ने जन्मभूमि का वर्णन इस प्रकार किया है।

कपिलागोसहस्रं च योददाति दिने दिने।
तत्फलं समावाप्नोति जन्मभूमेः प्रदर्शनात्॥
जन्मान्तरसहस्रेण यत्पापं समुपार्जितम्।
तत्सर्वं नाशमाप्नोति जन्मभूमेः प्रदर्शनात्॥
पुत्रार्थी लभतेपुत्रं धनार्थी लभते धनम्।
मोक्षार्थी मोक्षमाप्नोति जन्मभूमेःप्रदर्शनात्॥

जन्मभूमि के सम्पूर्ण दर्शन से वही पुण्य प्राप्त होता है, जो प्रतिदिन एक सहस्र श्याम गायों के दान से होता है; एक सहस्र जीवन में किये हुए पाप सभी धुल जाते हैं; यह पुत्र, सम्पत्ति और मोक्ष सभी कुछ व्यक्तियों को यदेच्छा प्रदान करता है।

महान सम्राट विक्रमादित्य ने, बाद में, श्रीराम के जन्मस्थान पर एक भव्य मन्दिर का निर्माण किया और भारत के सभी स्थानों से भक्तजन इस पुण्य भूमि का दर्शन करने आते हैं। अपने इष्ट देव श्री राम की कृपा से मोक्ष लाभ की कामना करते हैं।

भारती

भवन की पत्रिका

ऑर्डर फ़ॉर्म

श्री व्यवस्थापक 'भारती', भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बम्बई–७,

प्रिय महाशय,

मैं **'भारती'** का वार्षिक सदस्यता शुल्क ६.५० न.पै. / अर्द्धवार्षिक ३.५० न.पै. मनीऑर्डर / पोस्टल ऑर्डर द्वारा भेज रहा हूँ / रही हूँ। कृपया निम्नांकित पते पर दि०———से प्रति भेजने का कष्ट करें:—

नाम ————————————————————

पूरा पता ————————————————————

————————————————————

————————————————————

तिथि भवदीय/भवदीया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाकवि बिल्वमंगल

कृष्ण कर्णामृत

वारांगना चिन्तामणि के निविड़ प्रणय-पाश में श्रीकृष्ण का साक्षात्कार करनेवाले महाकवि बिल्वमंगल ने, 'कृष्ण-कर्णामृत' में भगवान की सर्वांगी जीवन-लीला का बड़ा ही आत्मोन्मेषी जयगान किया है। संस्कृत साहित्य की उसी अमर काव्य-वाणी के कुछ श्लोक यहाँ प्रस्तुत हैं—भारती के भाविक पाठकों के लिए।

मातः किं यदुनाथ देहि चषकं किं तेन पातुंपय-
स्तन्नास्त्यद्य कदास्ति वा निशि निशा का वाऽन्धकारोदयः।
आमील्याक्षियुगं निशाप्युपगता देहीति मातर्मुहुः
वक्षोजांशुककर्षणोद्यतकरः कृष्णस्स पुष्णातु नः॥

"माँ!" "तुम्हें क्या चाहिए, यदुकुल कुमार?" "मुझे दूध का प्याला दो!" "किसलिए?" "दूध पीने के लिए!" "अब उसमें दूध नहीं हैं।" "दूध कब होगा?" "रात में!" "रात क्या है?" "अन्धकार का उदय!" तब अपने दोनों नयनों को मूंदते हुए "लो रात आ गयी, अब मुझे दूध दो।"—इस प्रकार बोलते हुए और हाथों से माँ के वक्ष का आंचल खींचते हुए श्रीकृष्ण हमारी रक्षा करें।

कालिन्दीपुलिनोदरेषु मुसली यावद्गतः खेलितुं
तावत्कार्पाटिकं पयः पिब हरे! वर्धिष्यते ते शिखा।
इत्थं बालतया प्रतारणपराः श्रुत्वा यशोदा गिरः
पायान्नस्स्वशिखां स्पृशन् प्रमुदितः क्षीरोऽर्घ-पीते हरिः॥

"बलराम यमुना-तट की सिकता में खेलने चले गये हैं, ओ हरि, जब तक वे लौटें, तब तक तू चषक का दूध पीले, तेरी चोटी बढ़ जायेगी!" यशोदा के इन प्रतारणपूर्ण वचनों को सुनकर, आधा दूध पीने के बाद बाल सुलभता से अपनी चोटी को छूकर प्रसन्न होते हुए श्री कृष्ण हमारी रक्षा करें!

रामो नाम बभूव हुं तदबला सीतेति हुं तौ पितु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

-वांचा पञ्चवटीतटे विहरतस्तामाहर-
द्रावणः।
निद्रार्थं जननीकथामिति हरेर्हुङ्कारतः
श्रृण्वतः
सौमित्रे क्व धनुर्धनुर्धनुरिति व्यग्रा गिरः
पान्तु वः॥

"कभी राम हुए।" "हूँ?" "उनकी पत्नी का नाम सीता था।" "हूँ?" "वे अपने पिता के वचनों का पालन करते हुए जब पञ्चवटी के वन प्रदेशों में भटक रहे थे, तब रावण ने सीता का हरण कर लिया!" यह कथा उन्हें सुलाने के लिए यशोदा कह रही थीं, जिसे कृष्ण 'हूँ' कहकर सुन रहे थे, अचानक सीता हरण की बात सुनते ही उन्होंने हुँकारते हुए कहा "लक्ष्मण ! मेरा धनुष, धनुष धनुष, कहाँ है वह?" कृष्ण के ये उत्तेजित वचन आपकी रक्षा करें!"

पीठे पीठनिषण्णबालकगले तिष्ठन् स
गोपालको
यन्त्रान्तःस्थिततुग्धभाण्डमवकृष्याच्छाद्य
घण्टारवम्।
वक्त्रोपान्तकृताञ्जलिः कृतशिरःकम्पं पिब-
न्यः पयः
पायादागतगोपिकानयनयोर्गण्डूषफूत्कारकृत्

वह ग्वालबाल जो तिपाई पर चढ़े बालक के कन्धों पर चढ़ा है, और जिसने छींके में रखे दुग्ध के पात्र को निकाल लिया है और जो मुख के पास अंजलि बनाकर दूध पी रहा है, साथ ही साथ खुशी से सिर हिला रहा है; और जो बालक ग्वालिन के हाथों पकड़ लिये जाने पर मुख से फूत्कार करता है– हमारी रक्षा करे।

अगुङल्या कः द्वार प्रहरति? कुटिले!
माधवः किं वसन्तो?
नो चक्री; किं कुलालो? नहि धराणिधरः
किं द्विजिह्वः फणीन्द्रः?।
नाहं घोराहिमर्दी; किमसि खगपति?
नोंहरिः; किं कपीन्द्रः?
इत्येवं गोपकन्याप्रतिवचनजितः पातु
वश्चक्रपाणिः॥

'यह अंगुलियों से द्वार कौन खटखटा रहा है?" अरी कुटिल! यह माधव है।" "कौन वसन्त?" "नहीं, चक्री है।" 'क्या कुम्हार?" "नहीं, पृथ्वी को धारण करने वाला है।" "क्या दो जुबान वाला शेषनाग?" "नहीं, कालिया का म'न-करने वाला है" "क्या गरुण?" "नहीं, हरि है।" "क्या वानरराज?" इस प्रकार ग्वालबाला के वचनों से विजित चक्रधारी कृष्ण हमारी रक्षा करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओम प्रभाकर

ज्योति स्तवक फिर आयेंगे

लो– मैं चला यहाँ से !
ये बन्दनवार
रचे-स्वस्तिक द्वार
पुस्तकों के पुष्प-चिन्हित पृष्ठ
रूमालों की मसली हुई गंधें
और वह
तकिए पर झरी हुई रजनीगंधा
रखो !
तनिक सहेजकर रखना !
ओ मेरी प्रतिछबि !
(देखती रहना)—कि
ज्योति-स्तवक फिर आयेंगे।
जब तुम अपने केश
कभी काले महासागर में धोओगी।
ज्योति-स्तवक फिर आयेंगे !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आन्द्रे मॉराँ

क्या प्रेम भी एक कला है ?

प्यार आजीवन होता है। प्यार अमर होता है। प्यार की कला जीवन की कला है; मृत्यु भी इस कला को रसहीन नहीं बना सकती।

प्रेम का विवेचन करते समय सबसे पहले प्रश्न उठता है कि प्रेम एक कला है या एक प्राकृतिक गुण। इस प्रश्न के उत्तर में भी स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि कला क्या है? लेखक बेकन ने कला की परिभाषा बताते हुए कहा है, "मानव और प्रकृति का समन्वय ही कला है।"

कला की उपरोक्त परिभाषा को, जो पूर्णतया सही लगती है, सही मान लेने से प्रेम कला की भी उत्पत्ति होती है। प्रेम के मामले में भी प्रकृति हमें कच्चा माल भरकर ही प्रदान करती है। प्रकृति, मानव को दो श्रेणियों में विभाजित करती है; उनमें पुनः निर्माण की इच्छा जागृत करती है, शारीरिक क्रियाओं द्वारा ये तो हुई प्रकृति प्रदत्त सीधे रूप से मिली हुई इच्छाएं। किन्तु मानव ने तर्कों से इन इच्छाओं को अपने सांचे में ढालने का प्रयत्न किया है, उनमें तरह-तरह के रंग भरे हैं और प्रेम को एक कला का स्वरूप दे दिया है। यही कारण है मानवीय प्रेम इतना आनन्ददायक है और जानवरों और पशुओं का रस-विहीन। अगर हम जानवरों की प्रेम-क्रिया को गौर से देखें और तत्पश्चात् एक रसीला प्रेम पत्र पढ़ें, तो हमें समझ में आयेगा कि मानव ने किस प्रकार प्रकृति प्रदत्त शारीरिक इच्छाओं को कला का रूप दे दिया है। 'सेक्स' और 'प्रेम' में मानव ने अन्तर लाने का प्रयत्न किया है।

लन्दन में एक वृद्ध पुरुष ने अपनी लड़की के लिए पुस्तक खरीदते समय दुकानदार से प्रश्न किया, "कहीं इस पुस्तक में 'सेक्स' तो नहीं है?"

"नहीं जी," दुकानदार ने हँस कर जवाब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया, "इसमें तो केवल एक प्रेम कहानी हैं।"

प्रश्न उठता है कि 'सेक्स' और प्रेम में क्या अन्तर है। एक दूषित और दूसरा पवित्र किस आधार पर माना जाता है। प्रश्न जटिल हैं और उत्तर भी सहज नहीं हैं। प्रेम का उत्पादन 'सेक्स' से होता है, तो फिर दूषित से पवित्रता में परिवर्तन करने की क्रिया क्या है ? इन प्रश्नों के अलावा भी प्रश्न हैं।

एक व्यक्ति विशेष को ही हम अपने प्रेम का लक्ष्य क्यों बनाते हैं ? इसका जवाब है– हमारे जीवन में दो अवस्थाएँ ऐसी आती हैं, जब हम प्रेम करने के इच्छुक रहते हैं। वह हैं किशोरावस्था और पचास साल की उम्र, इन अवस्थाओं में प्रेम करने की अव्यक्त इच्छा जागृत होती है। एक नवयुवक किशोरावस्था में अपने आपको किसी काल्पनिक नारी के सुपुर्द कर देता है। वन युवतियाँ मन ही मन उपन्यास के नायकों, अभिनेताओं और प्रोफेसर लोगों को प्यार करने लगती हैं। इस तरह पहला प्रेमी वही होता है, जो प्रेम के अंकुर बोता है।

प्रेम जागृत करने में मिलन की परिस्थिति भी बड़ी सहायक होती है। अक्सर देखा गया है कि ऐसे शर्मीले लोग, जो साधारणतया अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण रखते हैं, मौका और एकान्त

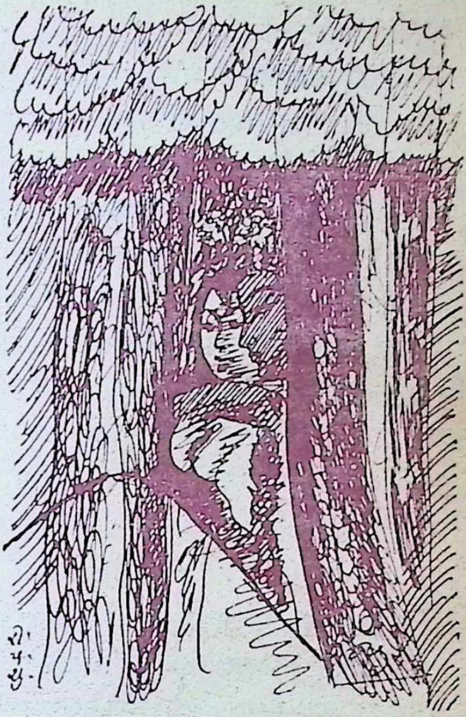

पाकर अपना प्रेम प्रकाश कर बैठते हैं।

औरत की आखों में पुरुष की प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि बहुत माने रखती है। सैनिक की युद्ध विजय, अभिनेता का अभिनय, खिलाड़ी का खेल हमेशा से प्रेम का सूत्रपात करते आये हैं। अवसर, मानसिक अपनत्व को विकसित करने में सहायक होता है। कई बार दो व्यक्ति तीसरे के मुंह से निकली हुई बात सुनकर प्रभावित होकर एक दूसरे की नज़रों में डूब जाते हैं। अचानक गाड़ी में दो व्यक्तियों के हाथ टकराते हैं और एकता का आभास होने लगता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारांश यह है कि अवसर और एकान्त प्रेमियों को पास लाते हैं।

हम सब अपने मन के अन्दर एक विशेष सौन्दर्य को लिये रहते हैं और उसकी दर्शनीय प्रतिलिपि सारी दुनिया में ढूंढ़ते रहते हैं। ज्योंही यह प्रतिलिपि हम किसी व्यक्ति विशेष में पाते हैं, तो उस पर तुरन्त आसक्त हो जाते हैं। इसे पहली दृष्टि में प्यार कहते हैं। हम स्वयंचालित यंत्र के समान प्यार करने लगते हैं। अपने प्रेमी की आवाज़ मधुरतम लगने लगती है, उसके वार्तालाप में कविता पढ़ने का आभास होने लगता है।

स्त्रियाँ शक्तिशाली पुरुषों के संसर्ग में अधिक आनन्द पाती हैं और पुरुष ऐसी स्त्रियों से प्रसन्न रहते हैं, जो उनके आधिपत्य को स्वीकार करे। किन्तु, कम उम्र की लड़कियाँ ऐसे पति पसन्द करती हैं, जो उनके कहने में चले। लेकिन मुझे आज तक कभी ऐसी स्त्री देखने को नहीं मिली, जो अपने पति या प्रेमी के पुरुषत्व, ताकत और साहस की प्रसंशा किये बिना रह सकी हो। ऐसा पुरुष भी मेरी निगाह में नहीं आया, जिसने अपनी पत्नी अथवा प्रेमिका के साहस या ताकत की प्रसंशा की हो।

सच तो यह है कि प्यार का आधार, चुनाव बड़ा अस्वाभाविक होता है। मन में यह प्रश्न तो उठना ही नहीं चाहिए कि मुझे क्या किसी से प्यार करना है? इसका जवाब स्वयं मन देता है। जिस तरह मानव का जन्म प्रकृति के हाथ में है, प्यार की उत्पत्ति भी प्रकृति के हाथ है। प्रेम की उत्पत्ति के पश्चात् प्रेम की कला का प्रश्न उठता है, कि जिस तरह रंग-रोगन कूंची कैनवास आदि जुटाने के बाद ही चित्रकार चित्र बनाने की क्रिया प्रारम्भ करता है।

विद्वानों का कहना है कि हम वास्तव में अपने प्रिय पात्रों को उनके सही रूप में प्यार नहीं करते, बल्कि उनके उस रूप को प्यार करते हैं, जिसका निर्माण हमने अपनी कल्पना से किया है तथा जो रूप अनुपस्थिति में निखर जाता है। कहावत है, "सौंदर्य प्रेमिका में नहीं, प्रेमी की आंखों में होता है।" कल्पना के सहारे हम जब अपने प्रिय पात्र का नव निर्माण कर लेते हैं, तब प्यार को किसी प्रकार का खतरा नहीं रहता, क्योंकि इसके पश्चात् हमें अपने प्रेमी अथवा प्रेमिका का असली रूप देखने को मिलेगा ही नहीं, क्योंकि हम वही देखेंगे, जो हम चाहेंगे। इस प्रेम से हमें खुशी ही मिलेगी। बस, तब हमें आवश्यकता होगी इंधन की, जो इस प्रेम ज्वाला को बनाये रक्खे; यह इंधन होगा कुछ शारिरिक क्रियाएँ, जैसे एक दूसरे को निहारना, हाथों में हाथ लेकर दबाना आदि।

कई बार प्रेम एक साथ दोनों ओर प्रारम्भ होता है। ऐसी अवस्था में प्यार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ मार्च १९६४

की प्रारम्भिक अवस्था बड़ी सुखदायी होती है। दोनों एक दूसरे को समान रूप से प्यार करते हैं। इससे बढ़कर आदर्श वस्तु दूसरी नहीं हो सकती। लेकिन ऐसा कम ही होता है, क्योंकि दोनों व्यक्तियों की भावनाओं में एक सी ताकत और स्थायित्व बहुत कम होता है। एक प्रेम विशेषज्ञ का कहना है कि हमें अपने प्रेमी पर लगातार विजय और पुनर्विजय करनी पड़ती है। इसलिए आवश्यक है कि हम अपने प्रेमी के दिल पर लगातार भावनात्मक हमले करके उसके दिल में प्यार भावनाओं को पूरे ज़ोर से जागृत कर दें।

क्या प्रेम की प्राप्ति ज़बरदस्ती भी की जा सकती है? पुराने युग में ऐसा होता था। योद्धा लोग किसी नारी पर रीझ जाने पर उसे बन्दी बना लेते थे। लेकिन आज के युग में न तो यह संभव है और न सुन्दर। आज का मानव स्वाभाविक प्यार पाना चाहता है। अपने परिश्रम से प्राप्त की हुई वस्तु आनन्द देती है।

नारी में अगर लज्जा, अलगाव, छिपाव आदि नहीं है, तो पुरुष उनकी ओर आकर्षित नहीं होते। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि औरत एक मूक दास होकर रहे, किन्तु इतना अवश्य है कि नारी अगर धर्म, समाज और रीति-रिवाजों के तंग दायरे में रहे तो उसे अधिक प्यार मिलता है।

प्रशंसा, प्रेमकला का एक नियम है। सभी प्रेम कविताएँ प्रशंसा और क्रंदन से भरी रहती हैं। प्रशंसा आह्लादक होती है, जबकि क्रंदन अधिक मात्रा में होने पर बोझिल हो जाता है। प्रशंसा सब को अच्छी लगती है, क्योंकि पुरुष और नारी हीन भावना के शिकार रहते हैं। खूबसूरत से खूबसूरत नारी को अपनी होशियारी के बारे में सन्देह रहता है और होशियार से होशियार नारी को भी अपनी सुन्दरता पर पूरा विश्वास नहीं रहता। इसलिए किसी भी व्यक्ति की अच्छाइयों को प्रकट करने से उन्हें निश्चित रूप से प्रसन्नता होती है। कुछ शर्मीली अथवा उदास औरतों की अगर आप प्रशंसा कर दें, तो वे सूरजमुखी की तरह खिल उठेंगी। पुरुष तो हरदम प्रसंशा का भूखा रहता है। कई सीधी-सादी औरतों को जीवन भर इसलिए प्यार मिलता है कि वे अपने पुरुष की प्रसंशा करते नहीं अघातीं।

सांस्कृतिक समानता भी दो व्यक्तियों को नज़दीक आने में सहायक होती हैं। सांस्कृतिक चर्चाओं द्वारा दोनों के मानसिक धरातल सामान होते जाते हैं। एक लेखक ने तो यहाँ तक कहा है कि सुसंस्कृत होने का तात्पर्य है अपने आप को प्यार पाने के क़ाबिल बनाना। एक दूसरे की मान्यताओं और आस्थाओं पर श्रद्धा करना प्यार को बढ़ाता है। प्यार को उद्देश्य मानकर किया हुआ हर काम सुखदायी होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ और नियम हैं, जिनका पालन करना आवश्यक है। दोनों के स्वभाव में कृतज्ञता होना आवश्यक है। हर बात कहने का एक शानदार ढंग भी होना चाहिए। स्पष्ट-वादिता के माने फूहड़पन न समझा जाये। दूसरा नियम है,हंसी का वातावरण रखना। स्वयं को मज़ाक का पात्र बनाकर भी दूसरे को हंसाना एक कला है। किसी बात को लेकर अधिक खींचातानी न करके हंसी में उड़ा देना भी प्रेम में सहायक होती है। ीसरा नियम है असमानता, जलन, अवि-श्वास आदि बातों से अपने आप को बचाना।

समय-समय पर जुदा रहना भी प्रेम में स्थायित्व लाता है। जुदाई प्रेम को पुनर्जन्म देती है। लेकिन जुदाई लम्बे समय की न हो और जुदाई के समय पत्र व्यवहार आवश्यक है। बातचीत में जो मिठास नहीं होती, वह लिखित बातों में होती है।

सबसे महत्वपूर्ण बात जो याद रखने योग्य है, वह यह है कि आपको अपनी प्रेमिका को एक बार नहीं बार-बार जीतना है। कई लोग सोचते हैं कि अपनी पत्नी को बार-बार प्यार जताने से क्या लाभ, वह तो अवश्य ही मन में समझती होगी। किन्तु, नहीं यह सोचना भूल है। आपको हमेशा अपने प्यार को ताजा रखना चाहिए। आपको ऐसा सोचना चाहिए, जैसे आपने कल ही प्यार प्रारम्भ किया हो।

कई लोगों के चरित्र के बारे में हमें गलत धारणा हो जाती है। हम सोचते हैं कि अमुक व्यक्ति एक फूल से दूसरे फूल का रस पीने का आदी है। किन्तु हमेशा यह सही नहीं होता। हर व्यक्ति अपने मनपसन्द साथी की तलाश में रहता है और जब तक वह साथी उसे नहीं मिलता, उसकी तलाश जारी रहती है। ज्योंही उसे अर्द्धांगी प्राप्त हो जाता है, वह एक जगह स्थिर हो जाता है। इसलिए, किसी को अपने प्रेमी या प्रेमिका के पूर्व जीवन को लेकर आलोचना या सन्देह नहीं करना चाहिए।

पवित्रता, इन्सान के व्यवहार, उदारता और मधुरता में निहित है। प्यार को वासना के झकोरों में नहीं, दैनिक जीवन में ढूंढ़ना चाहिए।

एक दूसरे में अटूट विश्वास भी प्यार की जड़ें मज़बूत करता है। युवावस्था में आनंद आलिंगन में आता है। कुछ समय बाद एक दूसरे की बातों का आलिंगन आवश्यक होता है। एक दूसरे को समझना अवश्यक होता है।

प्यार आजीवन होता है। प्यार अमर होता है। प्यार की कला जीवन की कला होती है। मृत्यु भी इस कला को रसहीन नहीं बना सकती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अजामिल

[धर्म-कथा]

अजामिल कान्यकुब्ज का एक धनवान ब्राह्मण था। अपने प्रारम्भिक दिनों में वह वेदों का माना हुआ विद्वान रह चुका था, जिसे इस बात का ज्ञान था कि मनुष्य के लिए क्या शुभ होता है, क्या अशुभ। किन्तु, दैव-योग से वह बुरे, रास्तों की तरफ झुक गया। वह मद्य-मांस का सेवन करने लगा और वेश्याओं की संगत में रहने लगा।

इन सबके प्रभाव से वह जल्दी ही अपने ब्राह्मणत्व को भूल गया और किसी भी धार्मिक कृत्य, यहाँ तक कि भगवान का नाम लेने तक के लिए उसके पास समय नहीं रहा। तब यह स्वाभाविक ही था कि समाज ने उसका बहिष्कार कर दिया और उसके निकट के सम्बन्धियों ने भी उससे कोई नाता नहीं रखा।

किन्तु, इससे उसके कृत्यों में कोई फ़र्क नहीं पड़ा। उसने अपने विपुल धन के वल पर गाँव से वाहर एक सुन्दर मकान वनवाया और एक रखैल के साथ पति-पत्नी की तरह रहने लगा।

यद्यपि वह एक अस्पृश्य की तरह अपना जीवन बिता रहा था, किन्तु वह अपने सहन और दरवाज़े को हमेशा साफ-सुथरा और शोभावान बनाये रखता था। शायद यह सोच कर इससे बाहरी लोगों को उसकी बुराइयों का पता नहीं लगेगा। घर के अन्दर वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमेशा पिये हुए पड़ा रहता था और क्षणभर को भी उस रखैल औरत का साथ नहीं छोड़ता था।

एक दिन संध्या समय उस गाँव में एक विष्णु-भक्त आकर रुका, जो अपने साथ एक शालिग्राम लिये था और रात भर ठहरने को कहीं आश्रय चाहता था। उसने उधर से गुज़रते एक आदमी को बुलाकर पूछा, कृपया मुझे कोई जगह बताइये, जहाँ मैं रातभर ठहर सकूं।"

दुर्भाग्य से वह एक दुष्टबुद्धि आदमी था। उसने कहा, "साधु महाराज, गाँव के ठीक बाहर एक पुण्यात्मा ब्राह्मण रहता है, जिसका नाम अजामिल है। वह बहुत धर्मात्मा पुरुष है। वह अतिथि-सत्कार करने में बहुत तत्पर रहता है और अपने अतिथि का सभी तरह सेवा सत्कार करता है।"

उस आदमी की बात को सत्य मानकर साधु खोजता हुआ अजामिल के घर जा पहुँचा और दरवाज़े पर दस्तक देते हुए बोला, "क्या अजामिल है? मैं अन्दर आ सकता हूँ?"

आवाज़ सुनकर उस रखैल स्त्री ने दरवाज़ा खोला और साधु से पूछा, "आपको क्या चाहिए?"

उस ब्राह्मण साधु ने उत्तर दिया, "मैं एक यात्री हूँ। पहले मैं गाँव गया। वहाँ मुझे बताया गया कि इस घर का मालिक अजामिल नाम का एक धर्मात्मा ब्राह्मण है, जो बड़ी प्रसन्नता से अतिथि-सत्कार करता है। यह सुनकर मैं सीधा यहा चला आया हूँ और रातभर के लिए आश्रय चाहता हूँ।"

यह सुनकर वह स्त्री बोली, "यही अजामिल का घर है। इस समय वे घर में नहीं हैं। किन्तु वे बाहर से आते ही आपकी अभ्यर्थना करेंगे। कृपया आप अन्दर आ जाइए।"

यह कहकर वह स्त्री उस साधु को सहन में ले गयी और बोली, "आप यहाँ रात गुज़ार सकते हैं। ये कुँआ है, जिसमें पवित्र-जल भरा है। मैं एक नीच जाति की स्त्री हूँ, इसलिए आप के भोजन का प्रबन्ध करने में असमर्थ हूँ।"

उस स्त्री के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए साधु ने पहले स्नान किया और शालिग्राम की पूजा करने के बाद अपने हाथ से भोजन पकाकर खाया। इस तरह पूर्ण तृप्त और सन्तुष्ट होकर वह आराम के साथ सो गया।

आधीरात के समय बुरी तरह से पिये हुए अजामिल ने घर में प्रवेश किया और डगमगाते हुए कदमों से अपने सोने के कमरे में घुस गया।

बहुत तड़के ही साधु उठ गया और जाने की तैयारी करने लगा। उससे कुछ देर ठहरने की प्रार्थना करके वह स्त्री अजामिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पास गयी और उसे नशे से जगाकर अतिथि के बारे में बताया। वह अजामिल को लगभग ठेलती हुई बोली, "जाइए, उस ब्राह्मण साधु के चरणों पर गिर कर अपने लिए पुत्रप्राप्ति का वरदान मांगिए।" यह कहकर वह एक अर्थभरी दृष्टि से मुस्करायी। स्त्री के इस अस्त्र से कौन बच सकता है?

अजामिल जल्दी से घर के बाहर आया और साधु के चरणों पर साष्टांग लेट गया। उसको आशीर्वाद देते हुए साधु बोला, "मैं तुम्हारे आतिथ्य से प्रसन्न हूँ। बोलो, मैं तुम्हारा क्या शुभ करूँ?"

हाथ जोड़ते हुए अजामिल बोला, "महाराज, मैं निःसंतान हूँ। कृपया मुझे पुत्र-प्राप्ति का वरदान ीजिए। मैं और कुछ नहीं चाहता।"

यह सुनकर ब्राह्मण बोला, "तुम्हें पुत्र-प्राप्ति होगी, किन्तु एक वचन देना होगा। तुम्हें उसका नाम नारायण रखना होगा और अपने अंतिम क्षणों में उसे यह कहकर पुकारना होगा, ओ नारायण, मेरी रक्षा करो।"

अजामिल ने दुबारा दंडवत् करते हुए साधु की स शर्त्त को स्वीकार कर लिया। साधु के जाने के बाद अजामिल अपने कमरे में लौट आया और अपनी रखैल स्त्री से साधु के आशीर्वाद के बारे में बताया। पुत्रप्राप्ति के वरदान की बात सुनकर उसके आनन्द का परावार न रहा।

समय बीतते न बीतते वह स्त्री एक सुन्दर पुत्र की माता बनी। उन्होंने बच्चे का नाम नारायण रखा, जिसके लिए उन्होंने साधु को वचन दिया था। बच्चा धीरे-धीरे बड़ा होकर अपनी युवावस्था में पहुँचा और अजामिल वृद्धावस्था में। यद्यपि उसका शरीर सूखकर पँजर हो गया था, किन्तु उसने अपनी बुरी आदतें अभी तक नहीं छोड़ी थीं। उसका यकृत मदिरा सेवन से बिलकुल ख़राब हो चुका था। वह अपनी मृत्युशय्या पर पड़ा था। उसकी रखैल स्त्री उसकी सभी तरह सेवा करती थी और उसकी खराब दशा देखकर आँसू बहाती थी।

जब उसके जीवन की घड़ी पूरी होने को आयी, तो धर्मराज यम ने अपने दूतों को बुलाया, जो अपनी भारी गदाओं और मृत्य के फंदे के कारण भयानक दीख पड़ते थे, और आज्ञा दी, "तुरन्त कान्यकुब्ज जाओ और उस महापापी अजामिल के प्राणों को ले आओ। वह यद्यपि जन्म से ब्राह्मण है, किन्तु अपने कर्मों से एक नीचतम आदमी से भी गया-गुज़रा है। उसे अपने फंदे में बाँध लाओ और रौरव नरक में झोंक दो, मैं उस नराधम का मुंह भी नहीं देखना चाहता।"

यम के दूतों ने तुरन्त कान्यकुब्ज की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राह ली, और वहाँ पहुँचे, जहाँ अजामिल पड़ा था। उनके नखसरीखे दांत, भारी गदा और डरावना फंदा देखकर, जिसमें वे उसे बांधने का प्रयत्न कर रहे थे, अजामिल भय से बुरी तरह आतंकित हो उठा। वह मृत्यु के डर से भयभीत होकर अपने पुत्र को पुकारकर जोर से चिल्लाया, "ओ नारायण, मझे इन पिशाचों से बचाओ, जो मुझे ले जाने के लिए आये हैं।"

दूसरे ही क्षण वहाँ भगवान विष्णु के दूत प्रकट हुए। वे शंख और चक्र धारण किये हुए थे और उनकी गर्दनों में तुलसी की माला पड़ी हुई थी। उन्होंने यम के दूतों को धमकाकर भाग जाने को कहा। किन्तु यम के दूत नहीं भागे। फलस्वरूप दोनों में युद्धहोने लगा और कुछ ही देर में विष्णु के दूतों ने उन्हें मार भगाया। इसके बाद उन्होंने अजामिल की सूखी पतली देह को विमान में रखा और उसे लेकर वैकुण्ठधाम की ओर उड़ गये।

इधर चोट से ीड़ित अंगों को सहलाते और खून बहती नाकों को लेकर यम के दूत वैवस्वत् पहुँचे और यम से रोते हु फ़रियाद की, "क्या हम आपसे प्रार्थना कर सकते हैं कि आगे से हमें किसी जगह तभी भेजा जाये, जब उस मरने वाले आदमी के संबंध में संबंधित विभाग द्वारा पूरी जांच-पड़ताल हो जाये?"

"हुआ क्या है?" यमराज ने अपने सहायकों से पूछा। उन्हें अपने दूतों की यह हालत देखकर बहुत दुख हो रहा था, जो आजतक खाली हाथ नहीं लौटे थे।

उन्होंने अपनी वापसी का कारण बताकर कहा, "और अब उस पापी अजामिल को वैकुण्ठ ले जाया गया है।"

यह सुनकर यमराज को बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने चित्रगुप्त को बुलाकर पूछा, "तुम्हारे खातों में कुछ ग़लती हुई है क्या? लगता है तुमने अजामिल के संबंध में बड़ी दुखद् भूल करी है। अपने बच्चों की तरफ देखो, जिन्हें किस बुरी तरह ीटा गया है।" और यह कहकर यमराज ने चित्रगुप्त को पूरी कथा कह सुनायी।

चित्रगुप्त ने सुनकर जवाब दिया, "प्रभु, मेरे खातों में कोई ग़लती नहीं हो सकती। जन्म से लेकर अपनी अन्तिम सांस तक अजामिल ने बिन्दुमात्र भी कोई अच्छा कार्य नहीं किया। किन्तु अपनी मृत्य के समय, वह आपके दूतों को देखकर बुरी तरह डर गया था और सहायता के लिए अपने पुत्र नारायण को पुकारा। विश्वास रखिए, उसकी इस पुकार में लेशमात्र भी भगवान नारायण के लिए कोई भावना न थी।"

[शेष पृष्ठ ६२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सी. डी. सोनवणे

आप भी सोना बना सकते हैं : रस-शास्त्र का पूर्व ज्ञान

[अनियतकालीन लेख-माला : लेखांक : ४]

'भारती' के पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि प्रस्तुत लेखमाला द्वारा वे सोना बनाने की सनातन गोपन कला का परिचय पा सकेंगे । श्री सोनवणे बड़ी कठोर तपोसाधना द्वारा और भारतीय तथा पश्चिमी कीमिया–विज्ञान के गहरे खोजपूर्ण अध्ययन द्वारा, इस लेखमाला में यह सिद्ध करने जा रहे हैं– कि निश्चित ही मनुष्य अपनी प्रयोगशाला में सुवर्ण निर्माण कर सकता है ।

कीमिया सिद्धि के प्रयोगों में जिस साहित्य की ज़रूरत है, उसमें द्रव्यों के वजन तौलने के लिए छोटा कांटा (तुला) तथा वज़न होना भी अत्यन्त आवश्यक है ।

कीमिया सिद्ध हुई या नहीं इसकी परीक्षा :

वैक्रिया-निर्मित स्वर्ण की एसिड परीक्षा- वैनिर्मित स्वर्ण के बिलकुल बारीक-बारीक टुकड़े करके एक कप में डाल दें । और उस कप में वह स्वर्ण डूब जाय इतना नैट्रिक एसिड भी डाल दें । फिर स्टोव जलाकर उस पर लोहे का पत्रा रखें । उस पत्र पर कप को रखकर मंदाग्नि से गरम करें । ज़्यादा गरम होने के बाद नीचे उतार लेवें । फिर थोड़ी देर से गरम करें । थोड़ा-थोड़ा नैट्रिक एसिड २/३ बार डालना चाहिए । ऐसा करने से स्वर्ण सिद्ध हुआ होगा, तो उसकी लाल रंग की रेत (स्वर्ण कणिकाएँ) नीचे बैठ जायेंगी । नीचे बैठी हुई रेत को स्वर्ण समझना । उस कप में थोड़ा पानी डाल कर स्थिर होने दें । फिर पानी निकाल देवें । पानी निकाल देने के बाद अग्नि पर सुखा लें । फिर भूषा में भरकर गला लेना । स्वर्ण की गोली गल कर मिलेगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि कप में नैट्रिक एसिड द्वारा पकाने के बाद रेत नीचे नहीं बै ी, तो प्रयोग फेल समझना चाहिए।

कसौटी पर–कसौटी पर यदि वेधनिर्मित-स्वर्ण को घिस कर उस स्वर्ण की लकीरों पर नौट्रिक एसिड की बूंदें डाली जायँ, तो वे लकीरें कसौटी पर वैसी की वैसी ही क़ायम रहनी चाहिए, मिटनी नहीं चाहिए। तभी वह स्वर्ण सिद्ध हुआ समझना, अन्यथा फेल समझना।

वेध-निर्मित चांदी की परीक्षा– वेध-निर्मित चांदी के बिलकुल बारीक-बारीक ुकड़े करके कप में डालें। फिर ऊपर दर्शायी हुई पद्धति के अनुसार उसमें नैट्रिक एसिड डालकर स्टोव पर मंदाग्नि पर लोहे के पत्र पर वह कप रखकर गरम करें। कुछ देर में चांदी एसिड में घुल जायगी। बाद में कप को नीचे उतारें। एक दूसरी कांच की बरनी लेकर उस कप से २५० गुना पानी उस बरनी में डाल दें। और वह चांदी मिश्रित कप में का एसिड बरनी में डाल दें। फिर उस पानी में बरनी में बैठे जितना बड़ा, स्लेटपाटी जितना मोटा ताँबे का पत्रा डाल देना चाहिए। १२ घंटे बाद चांदी होगी तो, उसकी पिष्टी तांबे के पत्र पर बैठ जायगी। उस पिष्टी का पानी धीरे-धीरे फेंक कर निकाल लें। और एक बशी में (प्लेट में) रख स्टोव पर मंदाग्नि पर ग़रम करके सुखा लेवें। फिर मूषा में भर कर गलाना चाहिए। सोना-चांदी गलाते समय उसमें थोड़ा सोहागा-नौसादर डाला जाता है। गलने पर चांदी हाथ में मिलेगी। यदि ताँबे के पत्रे पर (बरनी के पानी में) पिष्टी नहीं जमी हो तो, प्रयोग फेल समझना चाहिए।

कसौटी पर– वेधनिर्मित चाँदी को कसौटी पर घिस कर उस पर नैट्रिक एसिड की बूंदें डाली जायँ तो, वह काली नहीं पड़नी चाहिए। मतलब यह कि वहाँ पर काला दाग़ नहीं पड़ना चाहिए। बिलकुल सफेद रहनी चाहिए। चाँदी की निशानी कसौटी पर करने के बाद नैट्रिक एसिड डालने से वह निशानी कुछ मिट जाती है। स्वर्ण की निशानी के समान क़ायम नहीं रहती। यदि काला दाग़ नैट्रिक एसिड की बूंदे डालने पर न पड़े, तो ठीक समझना चाहिए। अन्यथा फेल समझना।

पारद-अग्निस्थायी गंधक आदि के प्रमुख गुणधर्म

हमारा रसशास्त्र पारद को धातु नहीं, रस मानता है। परन्तु आधुनिक रसायन-शास्त्र इसको धातु कहता है। दोनों भी ठीक हैं। परन्तु पारद पूर्ण धातु रूप नहीं माना जा सकता। इस बारे में आगे लिखूंगा। वैज्ञानिक प्रयोगों से यह सिद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ मार्च १९६४

होता है कि, नैट्रिक एसिड जैसे तीव्र दाहक एसिडों में पककर भी साधारण दाहक अक्षय ही रहता है। उसका नाश नहीं होता। इसी प्रकार अग्निस्थायी गंधक, अग्निस्थायी हिंगुल ये द्रव्य भी एसिड प्रूफ हैं। अभ्रक सत्त्व यह भी एसिड प्रूफ है। कीमिया सिद्धि के लिए प्राचीन रसशास्त्रों में अभ्रकसत्त्व का विनियोग नितांत आवश्यक माना गया है। अभ्रक सत्व नहीं किया तो steel (तीक्ष्ण लोह) लेने से भी काम चलता है ऐसा शास्त्रकार, कहते हैं। steel भी एसिड प्रूफ है। इसके बाद कीमिया में सीसा (Lead) धातु भी महत्त्वपूर्ण है। इन पदार्थों के गुण-धर्म ही कनिष्ट धातुओं को अक्षय स्वरूप देते हैं। परन्तु कीमिया में साधारण पारद बिलकुल काम नहीं देता, उसको पूरा अग्नि स्थायी बनाना पड़ता है, तब वह पूरा काम देता है। आगे विस्तार से लिखा जायगा। यहाँ पर इतना पर्याप्त है।

कीमिया में आनेवाले पदार्थ

ऊपर के वर्णन से यह समझ में आता है कि, कीमिया के लिए (१) अग्निस्थायी पारद (२) अग्निस्थायी गंधक (३) अभ्रक सत्त्व (यह न मिलें तो steel) (४) सीसा (Lead) (५) अभ्रक के द्रव्य काम में आते हैं। ऑस्बेस्टॉस धातु को भी काम में लेकर देखना चाहिए। ऑस्बेस्टॉस का गुण धर्म अभ्रक जैसा है। नैट्रिक एसिड में अभ्रक चूर्ण जारण करने के बाद एक बरनी में पानी डालकर उसमें ताँबे का जाड़ा पत्रा रखने से अभ्रक की सूक्ष्म पिष्टी उस ताँबे के पत्रे पर जम जाती है। उसी प्रकार ऑस्बेस्टॉस को नैट्रिक एसिड में जारण करने के बाद उसकी भी पिष्टी ताँबे के पत्रे पर जम जाती है। इससे अभ्रक-ऑस्बेस्टॉस दोनों में कुछ समानता अवश्य है, यह सिद्ध होता है। इसी प्रकार पेट्रो-मॅक्स गॅस-बत्ती में जो मेंटल लगाया जाता है, उसकी भस्म भी अक्षय है। वह भी धातुवाद में सहायक रूप में प्रयुक्त हो सकती है। उससे धातु का कालापन नष्ट होकर धातु एसिड प्रुफ हो सकता है। परन्तु इसके लिए अनुसंधान की आवश्य-कता है।

पेट्रोमेक्स की गैसबत्ती में लगनेवाले मेंटलों में थोरियम नैट्रेट १,००० भाग, सीरियम नैट्रेट १२ भाग, बेरिलियम नैट्रेट ४ भाग, एल्युमिनियम नैट्रेट १ भाग संयुक्त रूप में होते हैं।

इसके बाद कीमिया में हरताल, मैन-शिल, गंधक, आर्सेनिक (सोमल) इन पदार्थों को अग्निस्थायी बनाकर काम में लिया जाता है। ये सहायक पदार्थ रंजक (रंगवाले) हैं। साथ-साथ धातुओं के परमाणु को भी ठीक बांधते हैं। इनका गुणधर्म वेधित धातुओं पर स्वर्ण जैसा पीला रंग लाने का होता है। स्वर्ण क्रिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए कृष्ण वज्राभ्रक तथा रौप्य क्रिया के लिए श्वेत अभ्रक लिया जाता है। धातुवाद में स्वर्ण क्रिया के दो भाग हैं। पहला भाग यह कि, तांबा, चाँदी आदि धातुओं को श्रेष्ठ धातु जैसा एसिड प्रूफ बनाना, जैसा कि पीछे परीक्षा पद्धति में लिखा है। यह हुआ एक भाग। दूसरा भाग रंजन क्रिया का है। अर्थात् वेधित धातुओं पर स्वर्ण जैसा रंग लाना यह दूसरा भाग है। इसमें से रंजन क्रिया तो प्रयत्न से साध्य हो सकती है। परन्तु पहला भाग–धातुओं को एसिड प्रूफ करना यह बात बहुत ही कठिन तथा गुरुगम्य है। धातुओं को एसिड प्रूफ करते समय उनमें सोना, सोने के वर्ख इत्यादि बिलकुल नहीं डालने चाहिए। कारण यह सब खर्चा बेकार रहता है। ऐसा मेरा बहुत खर्च हुआ है। अनुभव द्वारा यह देखने में आया है कि, कनिष्ठ धातु (ताँबा अथवा चाँदी) लेकर उसमें समभाग अथवा १½ भाग सीसा (Lead) धातु मिलाना चाहिए। साथ में ही सूक्ष्म अभ्रक पिष्टी ½ भाग फिर, यथोचित परिमाण में अग्नि स्थायी पारद, अग्निस्थायी सिंगर (हिंगुल) तथा अत्यल्प steel मिलाना चाहिए। ऐसा करने से वह कनिष्ठ धातु अवश्य एसिड प्रुफ हो सकेगी (स्वर्ण क्रिया के लिए)। धातुओं को एसिड प्रुफ करने के बाद उनमें स्वर्ण मिलाना चाहिए। सीसा धातु की सहायता से धातुवाद सिद्ध करने में बुद्धिवाद की बहुत ही आवश्यकता है।

एसिडों को काम में लाते समय सावधान रहें– नैट्रिक एसिड को काम में लाते समय वह हाथ, पाँव तथा शरीर पर पड़ना नहीं चाहिए। वह तीव्रदाहक (जलानेवाला) है। यदि शरीर को थोड़ा लग जाय, तो तुरन्त पानी से धो डालने से उसका कुछ भी असर नहीं रहता। दूसरी बात, कप में या काँच के फ्लास्क में नैट्रिक एसिड गरम करते समय वह बर्तन अधिक गरम न होने दें। नीचे उतारते रहें। तीसरी बात, गरम एसिड का धुआँ नाक तथा आखों में बिलकुल न जाने दें। यही बातें सल्फ्यूरिक तथा हैड्रोक्लोरिक एसिड के बारे में भी ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। घर में एसिड रखते समय वहाँ पर छोटे-बड़े का हाथ नहीं लगना चाहिए। किसी सुरक्षित स्थान पर रखने की सावधानी लेनी अत्यावश्यक है।

विभिन्न धातुओं की उत्पत्ति

अनेक प्रकार की धातुएँ पृथ्वी के गर्भ से ही निकलती हैं। इसी प्रकार अंतरिक्ष में सूर्य तथा अनेकों ग्रह-नक्षत्रों पर भी अनेक मूल्यवान धातुओं के भण्डार भरे पड़े हैं। आज के वैज्ञानिक ऐसी बातें जानने की पूरी कोशिश कर रहे हैं।

[शेष पृष्ठ ६९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

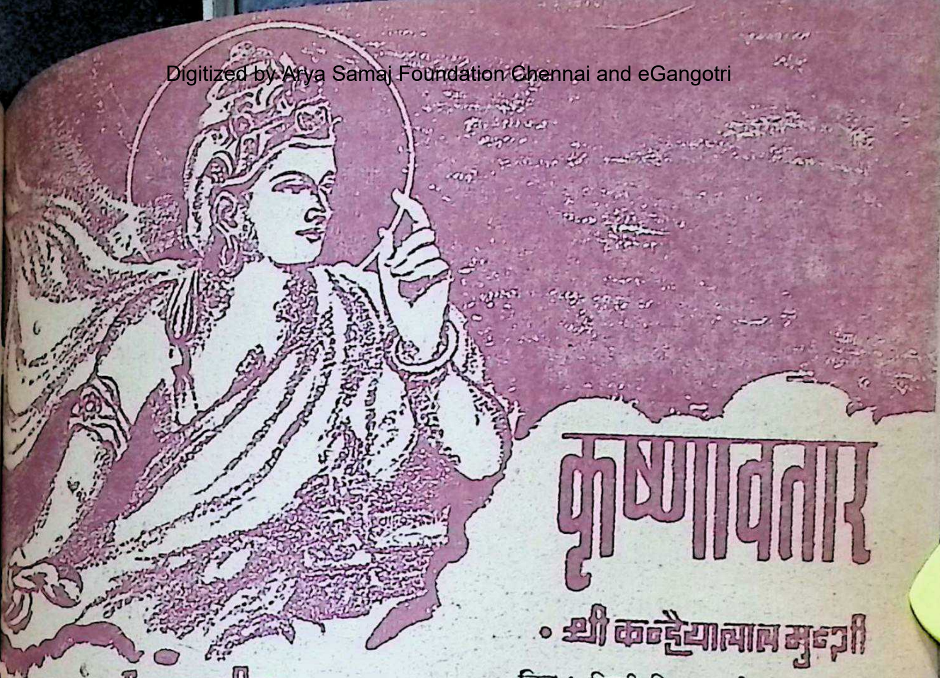

कृष्णावतार

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

...त्मिक पूर्ण-पुरुष लीला

चित्र : हिन्दी विश्व भारती, लखनऊ
के सौजन्य से : चित्रकार पन्नालाल

[३४]

गजपाल अंगारक

प्रद्योत ने अपने स्वामी कंस के पास जाकर कृष्ण द्वारा किये गये यज्ञभंग की सूचना दी। हृदय में अति हर्षित होते हुए भी उसके चेहरे पर घोर विषाद के चिह्न थे। कंस तो यह खबर सुन कर ठंडा ही पड़ गया। दिन भर से उसे आज अशुभ समाचार ही मिल रहे थे। सारी प्रजा गोकुल के इन दो छोरों पर मोहित हो रही थी। त्रिवक्रा की विकृतियाँ चमत्कारिक ढंग से दूर हो गयीं। राजा भीम के पुत्र रुक्मी का भरे रास्ते पर मानभंग हुआ। और, अब देवकी के आठवें पुत्र ने यज्ञ के विराट धनुष को भी तोड़ डाला! तो क्या उसकी मृत्यु समीप आ पहुँची? इस विचार मात्र से वह कांप उठा।

'कृष्ण ने इस धनुष को तोड़ कैसे डाला?' कंस ने पूछा, 'वह तो काफी मजबूत था!'

'तमाम आयुधविदों का भी यही अभिप्राय था। धनुष में कोई खामी नहीं थी। कृपानाथ ने भी उसे देखा था,' प्रद्योत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने अति मधुर स्वर में कहा।

'परन्तु तुमने उस छोकरे को यह धनुष उठाने ही क्यों दिया?'

'मैं क्या करूँ, प्रभु?' प्रद्योत ने हाथ जोड़ कर कहा, 'धनुर्यज्ञ के नियम का उल्लंघन कैसे करता? जो भी इस स्पर्धा में भाग लेना चाहे उसे धनुष के निरीक्षण का अधिकार है।'

'अब महोत्सव का क्या होगा?' कंस ने कहा, 'धनुष के बिना धनुर्यज्ञ कैसे होगा?'

'यह दुर्भाग्यपूर्ण घटना अवश्य है,' प्रद्योत ने कहा, 'परन्तु किया क्या जाय? मैंने पंडितों से पूछा है। उन्होंने कहा कि दूसरा धनुष तैयार हो सकता है और उसका शास्त्रोक्त पूजन भी हो सकता है।'

'तो अब देरी मत करो,' कंस ने आज्ञा दी, 'यज्ञ की पूर्णाहुति कल नहीं परसों होगी। कल मल्लयुद्ध का कार्यक्रम होगा। प्रद्योत, नन्द के छोकरे तुम्हें कैसे लगे?'

'वड़ा लड़का ऊँचे क़द का और शक्तिशाली युवा है,' प्रद्योत ने कहा, 'उसने राजकुमार रुक्मी के वेगवान अश्व को आसानी से रोक लिया, बल्कि पीछे भी हटा दिया। छोटा भाई कृष्ण कोमल और सुन्दर है। उसमें इतनी ताकत कहाँ से आयी, यही विस्मय का विषय है।'

'वे इस समय कहाँ हैं?' कंस ने पूछा।

'वे नगर के वाहर नंद और ग्वालों के शिविर में हैं।'

कंस गम्भीर विचार में पड़ गया। अपनी आदत के अनुसार विचार करते समय वह मूंछों पर ताव देने लगा। दृष्टि ज़मीन पर गड़ाये था। अंत में उसने पूछा, 'प्रद्योत, क्या मैं तुम पर विश्वास कर सकता हूँ?'

प्रद्योत ने प्रतिप्रश्न किया, 'कृपानाथ, पिछले बीस वर्षों से मैं आपकी सेवा कर रहा हूँ– मेरी निष्ठा में कहीं आपको शंका के लिए स्थान मिला? यदि ऐसा है तो मुझे इसी क्षण हटा दें; मैं नगर छोड़ कर चला जाऊँगा।'

कंस ने कुछ जवाब नहीं दिया। उसके मन में विचारों का तूफान उठ रहा था। कहीं प्रद्योत दोहरी चाल तो नहीं चल रहा है? जो भी हो, इस समय उसे खोना ठीक नहीं होगा। उसने कहा, 'प्रद्योत, मुझे तुममें पूर्ण विश्वास है। तुमने जिस निष्ठा से मेरी सेवा की है, उसे मैं नहीं भूल सकता। अच्छा, जाओ!'

तुरन्त ही कंस को याद आया। उसने प्रद्योत को वापस बुलाकर कहा, 'प्रद्योत देखना, मेरी आज्ञा का अनादर न हो। कृष्ण को मेरे सम्मुख न आने दिया जाय!'

'प्रभु, कल के मल्लयुद्ध में तो सभी आयेंगे। नन्द भी अपने दलबल के साथ आयेगा। फिर कृष्ण को किस प्रकार रोका जाय?'

'हूँ! तुम्हारी बात सच है–यहाँ हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरुपाय हैं। अच्छा, जाकर यह घोषणा कर दो कि धनुर्यज्ञ की पूर्णाहुति परसों होगी, कल मल्लयुद्ध होगा।'

प्रद्योत के जाने के बाद कंस ने ताली बजा कर परिचारक को बुलाया। उसने पूछा, 'त्रिवक्रा वापस आयी?'

'हाँ महाराज! इस समय वह राजकुमारी के खंड में है।'

वृतघ्न बाहर प्रतीक्षा कर रहा था। वह अन्दर आया।

'वृतघ्न, प्रद्योत ने तुमसे कार्यक्रम में परिवर्तन होने के बारे में बताया न?' कंस ने पूछा, 'तुम्हें यह सब कैसा लगा?'

'बहुत ठीक नहीं लगा,' वृतघ्न ने कहा, 'शहर में उत्तेजना फैल रही है। नंद के लड़कों ने लोगों पर अच्छा प्रभाव डाला है।'

'यह तो देख लिया जायगा! परन्तु अब प्रतीक्षा करना ठीक नहीं। अपने आदमियों को तैयार रखना—जरा भी गफलत न हो! बहुत से यादव सरदार वहाँ उपस्थित रहेंगे। तुम्हें संकेत दूंगा। अच्छा जाओ—जरा अंगारक को भेजते जाना।'

'जैसी कृपानाथ की आज्ञा,' मगध के राजकुमार ने कहा और कंस से विदा ली।

त्रिवक्रा आज फूली नहीं समा रही थी। राजकुमारियों के बीच बैठ कर वह हँस रही थी, मज़ाक कर रही थीं और अपने घनश्याम प्रभु तथा उनकी महिमा का अथक बखान कर रही थी। कंस की रानियों को तो इससे भय का ही अनुभव हुआ, परन्तु दूर दूर से महोत्सव में भाग लेने के लिए आयी हुई राजकुमारियाँ आश्चर्यविमुग्ध हो कृष्ण के विषय में अपना कौतुहल रोकने में असमर्थ थीं। उनमें से दो स्त्रियों के अन्तर में एक दूसरे से विरोधी भावनाएँ घर कर रही थीं। राजा भीमक के पुत्र रुक्मी की स्त्री तो लाज के मारे अपना सिर भी ऊँचा नहीं कर सकती थी—एक ग्वाले ने उसके पति का अपमान किया और उसे इस अपराध की सजा देने-वाला कोई नहीं था। यदि उसके अपने राज्य में ऐसा हुआ होता तो अपराधी का सिर धड़ से कभी का जुदा हो गया होता। त्रिवक्रा की बातों में रस लेने-वाली दूसरी राजकुमारी थी रुक्मणी। रुक्मी की सोलह वर्ष की यह बहन अत्यंत रूपवती थी। अपने भाई की उद्दंडता से वह भली भांति परिचित थी। उसकी अक्ल ठिकाने लगाने वाले मोरपंखधारी किशोर की मोहिनी मूर्ति उसके हृदय में बस गयी थी। इतनी सुकोमल देह में इतनी प्रचण्ड शक्ति का होना सचमुच आश्चर्य का विषय था। उसकी मादक आँखें अभी भी उसके मनस्चक्षु के समक्ष तैर रही थीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिवक्रा राजकुमारियों के आवास से बाहर निकली तब उसे लगा कि कोई पीछे से दौड़ कर उसी की ओर आ रहा है। वह वहीं रुक गयी। नजदीक आने पर वह रुक्मिणी जान पड़ी। आते ही त्रिवक्रा का हाथ पकड़ कर उसने कहा, 'त्रिवक्रा, उस ग्वाले किशोर को बचाना– वह श्याम सुन्दर है न, उसे! ये लोग उसकी हत्या करने का प्रयास कर रहे हैं!'

'उसे कोई नहीं मार सकता, राजकुमारी! वह तो स्वयं भगवान है। परन्तु देखती हूँ कि आप उसके पीछे पागल हो रही हैं–आपकी आँखें ही सब भेद बता रही हैं!' त्रिवक्रा ने कहा।

'धत्! मैं जो कह रही हूँ उसे सुन! यहाँ कोई कुवलयापीड़ नामक दुष्ट जन है? कल वही उस छोकरे को मारने वाला है: कंस की रानियों में यही चर्चा हो रही थी। मैंने खुद उसे सुना है,' रुक्मिणी ने कहा।

'आपने और कुछ भी सुना है? जरा बताइये तो!'

'मैं जा रही हूँ! मेरे भाई को इसकी खबर लग जाय तो वह मुझे जीवित ही न छोड़े!' रुक्मिणी ने कहा और दौड़ती हुई वापस चली गयी। त्रिवक्रा विचार-सागर में डूब गयी।

कुवलयापीड कोई आदमी नहीं था– वह तो एक महा भयानक हस्ति था। वह कल नन्दकुमार को मार डालेगा? कैसे? फिर भी गफलत में रहने का समय नहीं था। उसे अपने पति अंगारक की याद आयी। वर्षों पहले पति ने उसे त्याग दिया था। वह सबसे बड़ा महावत था और कवलयापीड उसीकी देख-रेख में रहता था। उसे इस बात की जानकारी अवश्य होनी चाहिए। क्षण भर तो वह हिचकचायी। अंगारक ने कुब्जा को विकृतांग जान कर छोड़ दिया था; उसके अलावा दो और स्त्रियों के साथ उसने विवाह कर लिया था। उसके पास जाते त्रिवक्रा के अभिमान को चोट पहुँचती थी; परन्तु दूसरी ओर उसके 'प्रभु' की सेवा थी!

अंगारक का दर्जा काफी ऊँचा था। हाथियों की संभाल रखने, उन्हें युद्ध अथवा विशेष समारंभों के लिए तैयार करने का भार उसी पर था। उसकी उम्र अब पचास के करीब हो गयी थी। मध्य रात्रि हो चुकी थी, फिर भी वह अपने महल में जाग रहा था। उसकी एक स्त्री उसके पैर दबा रही थी और दूसरी पंखा झल रही थी। परन्तु उसे किसी भी तरह चैन नहीं था। उसे एक अप्रिय कर्तव्यभार की चिंता सता रही थी। उसकी दोनों स्त्रियाँ अन्दर अन्दर किसी के बारे में उत्साहपूर्वक बातें करती थीं। जिसे सुन कर अंगारक को स्वयं पर लज्जा आ रही थी। उसे उन स्त्रियों को लात मार कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...कराने का मन हुआ, फिर भी वह ...पड़ा रहा। अपने आसपास दुखी ...नियों का रहना उसे अच्छा नहीं लगा। ...ने में दरवाजे पर घंटा वज उठा। ...गारक भयभीत हो कर उठ वैठा! ...इस समय कौन होगा? आज अपने स्वामी कंस से वह इतनी वार मिल चुका ...था कि अव और उसके पास जाने की कल्पना से ही वह कांप उठा।

वड़ी स्त्री ने पति को ओर देखा। उनके चेहरे पर सम्मतिसूचक भाव देखने पर वह उठी और दरवाज़ा खोल दिया। त्रिवक्रा अन्दर आयी। सुडौल देहवाली इस सुन्दरी को भीतर आते देख कर सभी आश्चर्यचकित रह गये। अंगारक तो आखें मलने लगा और उसकी दोनों हृष्टपुष्ट स्त्रियाँ डर कर इस तरह कांपने लगीं मानो कोई प्रेत दिख गया हो।

'तू कौन है?' अंगारक ने पूछा। उसे अपनी आँखों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था।

'मुझे भूल गये क्या, आर्यपुत्र?' त्रिवक्रा ने हँस कर कहा।

'बहन, तेरी कुरूपता चली गयी?' वड़ी पत्नी ने आश्चर्य व्यक्त किया। उसकी ईर्षाभरी दृष्टि आकर्षक त्रिवक्रा के अंग-अंग पर फिर रही थी। इस मोहिनी स्त्री के सामने वह स्वयं कितनी स्थूल लगती थी-सात-सात पुत्रों की माँ जो वह बन चुकी थी।

'यह तो मेरे प्रभु की कृपा है!' त्रिवक्रा ने कहा, 'आर्यपुत्र, वैसे तो हम वर्षों से नहीं मिले, परन्तु अपने प्रभु के चमत्कार की बात कहने के लिए मैं आपके पास चली आयी हूँ।'

'त्रिवक्रा, यह सव कैसे हुआ? वैठ, सारी वातें मुझ से कह!' अंगारक ने कहा। वह भूल गया कि पिछले वीस वर्षों से वह इस स्त्री की अवहेलना करता आया है, उसे छोड़ चुका है और सारे महल के उपहास की पात्र वह बन गयी थी। त्रिवक्रा वैठी। उसके चेहरे पर आकर्षक मुस्कराहट थी। अंगारक का आधा मन तो इसीने जीत लिया। त्रिवक्रा ने पानी मांगा और छोटी पत्नी उसे लेने दौड़ी।

'नन्द के पुत्र द्वारा किये गये चमत्कार की वात घर-घर हो रही है। मुझे बता तो सही कि आखिर हुआ क्या?' अंगारक ने अपनी पत्नी के नवप्राप्त सौन्दर्य की ओर एकटक निहारते हुए कहा।

'नन्द का पुत्र दीखने में कैसा है?' वड़ी पत्नी ने पूछा।

छोटी बहू पानी ले कर आयी। त्रिवक्रा ने पानी पिया और बोली, 'नन्द का पुत्र! अरी, वह नन्द का पुत्र ही कहाँ है? आर्यपुत्र, मैं आपसे कुछ कहना चाहती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ, यदि आप उसे गुप्त रख सकें तो!' उसने दोनों पत्नियों की ओर देखा।

'तुम लोग अन्दर जाओ!' अंगारक ने दोनों से कहा।

ोनों को ही यह जानने का कौतुहल हुआ कि यह रहस्य क्या है; परन्तु पति की आज्ञा को भी टाला नहीं जा सकता था। त्रिवक्रा पर रोषपूर्ण दृष्टि डालते हुए वे दोनों चली गयीं।

'मुझे नन्द के पुत्र के बारे में बता, त्रिवक्रा! आज तक तो मैं उसकी बातें ही सुनता आया हूँ, पर अब तो उसे प्रत्यक्ष देखूंगा। तुम तो कोई अप्सरा ही बन गयी हो, मालूम देता है!'

'वह नन्द का पुत्र नहीं, देवकी का आठवाँ पुत्र है। आपके स्वामी से हम सब को उबारने आया है!' उसने धीरे से कहा।

अंगारक इन शब्दों को सुन कर आसपास देखने लगा। कहते हैं, दीवालों के भी कान होते हैं!

'हे भगवान!' उसने गहरी निःश्वास ले कर कहा।

'आप इतने दुखी क्यों दिखायी पड़ते हैं, आर्यपुत्र? हम सबके लिए एक नये प्रभात का उदय हो रहा है। क्या आप इस अत्याचारी शासन से त्रस्त नहीं? एक दुष्ट की गुलामी से आपको घृणा नहीं आती?' त्रिवक्रा ने पूछा।

'ऐसा मत कह– कोई सुन लेगा!' अंगारक ने कहा।

'कितनी बार आपका अपमान हुआ है! कितनी बार एक ज़ुल्मी सितमगर की मर्जी के अधीन आप हुए हैं! परन्तु महर्षि नारद की भविष्यवाणी अब सत्य होगी! हमारे तारणहार अब आ पहुँचे हैं!'

'सचमुच ही वह तारणहार है?' अंगारक ने पूछा।

'मेरी तरफ देखो! प्रभु के सिवाय कौन मुझे ऐसा सौन्दर्य प्रदान कर सकता है? मेरी कुरूपता को कौन दूर कर सकता है? यज्ञ के धनुष को कौन तोड़ सकता है? कल देखना। ज़ुल्मी के पापों का हिसाब करने वह पहुँच गया होगा!' त्रिवक्रा ने श्रद्धा के साथ कहा।

'त्रिवक्रा, तुम्हें मेरी बदनसीबी का ख्याल भी न होगा....मैं बहुत दुखी हूँ!' अंगारक ने कहा।

'क्या बात है? मुझसे कहें! मैं देवकी के पुत्र का आशीर्वाद आपके लिए प्राप्त कर सकूंगी– वे मुझ पर बहुत दयालु हैं!' त्रिवक्रा ने गर्व से कहा।

'मुझे कोई नहीं बचा सकेगा....मेरा समय आ गया है....कल मैं इस संसार में नहीं रहूँगा......' अंगारक ने कहा। उसकी वाणी में निराशा छलक रही थी।

'परन्तु बात क्या है, मुझे बताइये!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं! शायद मैं आपकी कोई सेवा कर सकूँ। देवकी के पुत्र और कुवलयापीड की कोई बात है?'

'तुमसे किसने कहा?' आँखें फाड़ कर अंगारक ने पूछा।

'देवकी के पुत्र को कोई नहीं मार सकता!' त्रिवक्रा ने कहा।

'मुझे ऐसी ही आज्ञा हुई है,' अंधारक ने रुद्ध कंठ से कहा।

'अत्याचारी की आज्ञा का पालन करना पाप है।'

'पर, मैं क्या करूँ?'

'देवकी के पुत्र की प्रार्थना करो और मेरी बात सुनो?'

बीस वर्षों से जिसका परित्याग कर रखा था, उसी पत्नी की बात अंगारक ने एकचित्त हो, आभारसहित सुनी। फिर कुछ देर के लिए त्रिवक्रा अपने आवास पर गयी और वहाँ से कुछ वनस्पति ले आयी, और सारी रात अंगारक तथा त्रिवक्रा महाभयंकर हाथी कुवलयापीड को वह वनस्पति खिलाते रहे।

[क्रमशः]

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

★

[सनातन, फिर भी नित नूतन : पृष्ठ १५ का शेष]

नारद मुनि ने पीड़ित स्वर में कहा- "प्रभु, आप को कष्ट है! आह, मैं क्या करूँ? कैसे यह दर्द दूर कर दूँ? मुझे बताइए प्रभु! मैं तो मरा जा रहा हूँ!"

भगवान ने कहा– "तो नारद जी, मेरा यह दर्द तभी जा सकता है, जब किसी भक्त के चरणों को पखार कर लाया हुआ जल मैं पी सकूँ!"

फिर थोड़ा रुक कर कहा– "क्यों नहीं रुक्मिणी से जाकर कहते, वह तो कहती है कि मैं उसे प्राणों से भी प्यारा हूँ।"

अनिच्छापूर्वक नारद रुक्मिणी के पास गये। वह फफक पड़ीं, लेकिन पाँवों को पखार कर जल देना उनके वश की बात नहीं थी! वह सिसकती रहीं और नारद ने भी इस बात से सहमति प्रकट की कि ऐसा जल कैसे भगवान को पीने दिया जाता! नारदजी कुड़बुड़ाते हुए राधा के पास गये।

राधा के नयन भर आये। बोलीं– "मेरे प्रभु, मेरे सर्वस्व को कष्ट है! हे नारदजी, ज़रा रुकिए.... !"

राधा एक कटोरे में जल ले आयीं। उसमें अपने दोनों पैर डाल दिये और कहा, "अभी, तुरन्त इसे ले जाइए भगवान के पास। मैं जानती हूँ कि मुझे इसके लिए नरक में रहना होगा! लेकिन, अगर इससे उनके एक क्षण की पीड़ा दूर होती है, तो मैं हज़ार बार नरक में जाना पसन्द करूँगी!" तब नारद को, अपने प्रभु-प्रेम का अन्तर मालूम हुआ।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[अजामिल.........पृष्ठ ५० का शेष]

अपने दूतों के दर्पदमन से उत्तेजित हुए यम तुरन्त वैकुण्ठ गये और साथ में अपने घायल सहायकों को भी ले गये।

भगवान विष्णु के सामने सिर झुकाकर धर्मराज ने शिकायत भरे स्वर में कहा, "प्रभु, मेरे आदमी जब अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहे थे, तो आपके आदमियों ने उसमें विघ्न डाला। जब मेरे दूत पापियों में शिरोमणि अजामिल को लेने गये, ताकि इसे उसके कर्मों के अनुसार दंड दिया जा सके, तो आपके आदमियों ने उसमें बाधा पहुँचायी, और न केवल मेरे दूतों को मारापीटा, वल्कि उस पापी को वैकुण्ठ ले आने में भी सफल हो गये।"

श्री विष्णु धीरे से मुसकराये और धर्मराज को शान्त करते हुए बोले, "यह सत्य है धर्मराज, कि अजामिल ने अपने सारे जीवन में कोई पुण्य कार्य नहीं किया। किन्तु अपने अन्तिम क्षणों में उसने मेरा नाम लिया। और इस कारण वह अपने सारे पापों से मुक्ति पा गया और उसकी स्थिति आप के द्वारा निश्चित न्याय से एकदम भिन्न हो गयी। अब जबकि आपको इस बात का एक अनुभव हो गया है, मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि अब कोई महापातकी व्यक्ति भी आपके हाथों सज़ा नहीं पा सकेगा। निम्न बात को ध्यान में रखते हुए बाकी सांसारिक जीवों के लिए अपना निर्धारित कार्य करते जाइये। सुनिये :

'वे मर्त्य जीव, जिन्होंने चाहे जितने भी घृणित पाप किये हों, यदि मेरे, शंकर के या देवी के नाम का जाप करते हैं, तुम उन्हें अबसे नहीं छुओगे, तुम्हारे देह से वे अप्रभावित रहेंगे, तुम उन्हें अकेला छोड़ दोगे। वे हमारे भक्त हो जाते हैं और तुम्हें उनके संबंध में चिन्ता करने की जरूरत नहीं है।

'दूसरे वे लोग भी जो मेरा नाम मृत्यु के समय लेलें, चाहे वह मेरे लिए न लिया गया हो, और वे जो गंगा किनारे रहते हैं और उसके पवित्र जल में स्नान करके पवित्र हो जाते हैं, उक्त निर्देश के अन्तर्गत ही आयेंगे। क्या वे लोग पूजनीय नहीं हैं?'

इस आज्ञा को मन में धारण करके यमराज अपने दूतों के साथ अपने निवास स्थान को लौट गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगेन्द्रकुमार त्रिपाठी

सफेद कोढ़ और उसका इलाज

'अशुद्ध दूषित भोजन, अस्वाभाविक रहन-सहन के कारण सम-शीतोष्ण जलवायुवाले देशों में, विशेषकर भारतवर्ष में, यह बीमारी घटने के वजाय धीरे-धीरे बढ़ रही है'...विद्वान लेखक ने प्रस्तुत लेख में सफेद कोढ़, उसके कारणों, चिकित्सा की विविध पद्धतियों पर जो प्रकाश डाला है वह सभी के लिए ज्ञानवर्द्धक सिद्ध होगा।

आज लगभग ४० प्रतिशत मनुष्यों के सुन्दर-सुडौल शरीर पर जहाँ-तहाँ रंग-विरंगे धब्बे पाये जाते हैं। इसका कारण स्वाभाविक रूप से चमड़ी में पाये जाने वाले रंग की कमी है अशुद्ध, दूषित भोजन, अस्वाभाविक रहन-सहन के कारण समशीतोष्ण जलवायु वाले देशों में विशेष कर भारतवर्ष में यह बीमारी घटने के बजाय धीरे-धीरे बढ़ रही है। इसकी चिकित्सा के सम्वन्ध में यदा-कदा समाचार-पत्रों में विवरण प्रकाशित होते रहते हैं। किन्तु इस रोग के गूढ़तम रहस्य और अनुसंधान प्रकरण के स्पष्ट विचार अब तक नहीं दिये जा सके।

वैदिक युग में सफेद कोढ़

भौतिक उपलब्धियों का स्रोत अथर्ववेद है। उसमें श्वेत कुष्ठ का नाश करने वाली औषधि का उल्लेख मिलता है। (श्लोक १, २, ४, अथर्ववेद), चाहे जितना पुराना हो, पर औषधि के वर्णन से स्पष्ट है कि इससे भी पहले से यह रोग मानव जाति में पाया जाता है।

सफेद दाग, फूलवहरी, किलास, श्वित्र, धवल, (ल्यकोडर्मा) ये सव संस्कृत के 'कुष्ठ' शब्द के पर्याय है।

सफेद कोढ़ पैदा होने के कारण

इस रोग की उत्पत्ति के बारे में चरक, सुश्रुत तथा अन्य प्राचीन चिकित्सा ग्रन्थों का सर्वसम्मत मत है कि मिथ्या आहार-विहार, विरोधी अन्न, साधु-निन्दा, नया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्न, दही, मछली, तिल, खटाई, उड़द, मूली के सेवन से सफेद कोढ़ होता है। हमें शांतिचित्त से सोचना होगा कि आज बिखरे हुए जीवन, ऊपर की बातों पर चल कर हम त्वक वैवर्ण्य–जैसे रोग को क्यों बढ़ावा दे रेहे हैं।

त्वचा में रंग–अन्वेषण का इतिहास

चमड़े में रंग की खोज का लम्बा इतिहास है। संसार के कुशल वैज्ञानिकों ने इस क्षेत्र में पर्याप्त प्रयोग किये हैं और अभी गूढ़ रहस्यों की हमें खोज भी है। चमड़े में रंग की खोज का प्रारम्भिक अध्याय १६ वीं से १७वीं शताब्दी तक रहा, जिसमें बार्थालिन, हाईमूर, बोनेट, हेनरिक आदि अनुसंधानरत वैज्ञानिकों ने त्वचा में रंग के पाये जाने का उल्लेख किया। १८६१ में आइसेट ने चिकित्सा साहित्य में इसे महत्व दिया। उसके पश्चात् राबिन ने त्वचा में पाये जाने वाले रंग को मेलेनिन नाम दिया। लैंगरहेन ने सिद्ध किया कि स्वर्ण के प्रभाव से रंग का जमाव चमड़े, स्नायुओं तथा बालों में पाया जाता है, किन्तु वर्ण कणों की निर्माण-प्रक्रिया को वह स्पष्ट न कर सका।

शरीर में रंग का निर्माण

ाच्य एवं पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान के उद्भट विद्वान एवं भारत सरकार के आयुर्वेदीय सलाहकार डा.सी. द्वारिकानाथ ने अपनी पुस्तक 'काय चिकित्सा-परिचय' में रंग निर्माण क्रिया पर संकेत किया है। उनके अनुसार लिवर (यकृत), स्प्लीन (तिल्ली) एवं त्वचा की आन्तरिक सम्मिलित शरीर-क्रिया की साम्यावस्था में ही रंग का निर्माण होता है। रंग–निर्माण की क्रिया में लाल रक्त कणों के टूटे हुए धूलिकण और उनके अन्दर रहने वाला शोण-वर्तुल (हैमोग्लोबिन) रंजक पित्त में परिवर्तित होता है। त्वचा में मेलेनीन नामक रंग की उत्पत्ति वाह्य-त्वचा के मूल स्तर में सामान्यतः रहने वाले मेलनानोब्लास्ट नामक कोशाओं से होती है, यद्यपि मेलेनीन का ठीक-ठीक रासायनिक संगठन अभी तक अज्ञात है। सामान्यतया एक स्वस्थ मनुष्य में पित्त निर्माण क्रिया में ७ से १० लाख रक्त कण प्रति क्षण टूटते हैं।

तांबे का महत्व

चूंकि इस रोग की चिकित्सा के बारे में अनेक स्थानों पर अनुसंधान चल रहे हैं, अतः ताम्र की कमी ही सफेद कोढ़ की उत्पत्ति का कारण हैं, इस प्रश्न पर मतभेद है। यद्यपि भारतीय कीमियागिरी में तांबे का प्रयोग चिरकाल से होता आया है, तथापि, केवल तांबे के प्रयोग से इस रोग का अच्छा होना आज तक सम्भव न हो सका।

रक्त रंजक क्रिया के नियंत्रक उपादानों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का वर्णन करते हुए प्रसिद्ध अमेरिकी चिकित्सा विज्ञान वेत्ता डा. आरान लर्नर ने लिखा है कि 'टाइरोसिनेज में उपस्थित ताम्र के महत्व को विशेष रूप से अतिरंजित नहीं किया जा सकता, यद्यपि अणु स्थिति में परिवर्तनशील लौह की ही भांति ताम्र भी भाग लेता है। ये तत्व कार्बनिक ओषजन (आक्सीजन) और नाइट्रोजन के साथ केवल सहचारी सम्बन्ध बनाते हैं, किन्तु यह कहना युक्तिपूर्ण नहीं है।'

सफेद कोढ़ छूत का रोग नहीं है

अन्य छूत के रोग जैसे गलित कुष्ठ, गर्मी-सूजाक की भांति यह छूत का रोग नहीं है। यदि किसी की पत्नी को सफेद दाग है तो जीवन भर के सहवास मात्र से यह रोग पति को हो जाय ऐसा उदाहरण नहीं मिलता है।

सफेद कोढ़ से हानि

साधारणतया चमड़े के रंग बदलने मे किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता, यद्यपि रंग बदलने की क्रिया स्वयं में शरीर-धातु-क्रिया- वैषम्य का दुष्परिणाम है। इस प्रकार बदरंग चमड़े के कारण मनुष्य कुरूप लगने लगता है। इससे असमय में आपाद-मस्तक के बाल और रोमावलियाँ श्वेत हो जाती हैं। विशेष कारणों से उत्पन्न श्वेतकुष्ठ में कभी-कभी खुजली, जलन या स्पर्श-ज्ञान की कमी भी हो जाया करती है, सफेद-दाग से आक्रान्त त्वचा पतली पड़ जाती है और किसी किसी को गर्मी एवं डक को सहने की शक्ति भी घट जाती है।

रंजक-कण की आवश्यकता

डा. थोमाज बी. फिट्जपेट्रिक के मतानुसार त्वचा में रंजक कणों की उपस्थिति से अल्ट्रावायलेट रश्मियों को धारण करने की शक्ति बढ़ती है, जिसके सहयोग से ही त्वचा में विटामिन 'डी' के निर्माण को बल मिलता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि श्वेत कुष्ठ की चिकित्सा की अवहेलना करना या सफेद रंग के चमड़े से अपने को विलायती या गोरा समझना, भयंकर भूल है; चूंकि जब यह रोग शरीर के आभ्यान्तरि अंगों में फैलता है, तब, सेलों में विभिन्न प्रकार की दुर्बलता उत्पन्न होती है, और मनुष्य अनेक प्राणलेवा रोगों का शिकार बन जाता है। यद्यपि यह स्थिति किसी विरले रोगी में ही देखी जा सकती है।

सफेद कोढ़ की चिकित्सा के सिद्धान्त

इस रोग की चिकित्सा के क्षेत्र में पाश्चात्य चिकित्सकों ने महत्वपूर्ण अनुसंधान किये हैं। अति प्रचलित बाकुची नामक औषधि के आभ्यान्तरिक और बाह्य प्रयोगों से इस रोग को अच्छा करने के प्रयत्न प्राचीन काल से चले आ रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर भी इस औषधि से कदाचित ही कोई रोगी पूर्णरूपेण बिना किसी कष्ट के अच्छा हुआ होगा। बाकुची के प्रमुख क्रिया व्य '८' मेथाक्सी सोरालेन' का प्रयोगशाला में निर्माण भी किया गया। यह शरीर में उत्पन्न होने वाले रंग-जैसा होता है। 'मेलेडिनीन' नामक व्यापारिक नाम से बाजार में बेचा जाता है, किन्तु जब शरीर-क्रिया द्वारा, शरीर स्वाभाविक रंग बनाने में असमर्थ रहता है, तब, बाहर से बना-बनाया रंग भी सहायता नहीं करता और न तो वह साम्य ही होता है।

प्लास्टिक सर्जरी—द्वारा चमड़े को बदल देने पर इस रोग से अस्थायी छुटकारा हो सकता है, पर शरीर के छोटे एक-दो दागों की प्लास्टिक सर्जरी तो सम्भव है, किन्तु सम्पूर्ण शरीर की प्लास्टिक सर्जरी तो असम्भव कार्य है।

भारत में श्वेत कुष्ठ का इलाज

भारतीय चिकित्सकों में डा. यू. एन. स्वामी के मतानुसार श्वेत कुष्ठ की उत्पत्ति निम्न कारणों से होती है।

अशुद्ध पारा या अशुद्ध धातुओं के खाने से, शौच, छींक, हिचकी, उलटी, पेशाब आदि प्राकृतिक वेगों को एकाएक जबर्दस्ती रोक लेन से, पाप कर्म, गर्मी-सूजाक से, मांस या मछली के साथ दूध-दही या मछली के साथ मांस खाने से, दूध के साथ खारे, खट्टे पदार्थों के अत्यधिक सेवन करने से, शरीर के किसी अंग विशेष में या सारे शरीर में रंजक कणों का अभाव हो जाता है और वात-पित्त-कफ-त्रिदोष के विकृत होने पर छोटे या बड़े एक या अनेक सफेद दाग ँदा होते हैं।

उन्होंने १९४५ में यह सिद्ध किया था कि, नित्रांत ग्रंथियों Ductless glands

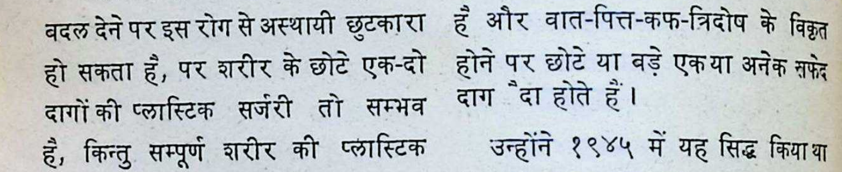

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषत: अवटुका (घेघा या Thyroid) ग्रंथि तथा स्वतन्त्र नाड़ी मंडल के विकास विशेष रूप से, सफेद-कोढ़ पैदा करने में सहायक हैं।

शरीर के किसी अंग में छुआ हुआ मवाद-जैसे पायोरिया और टांसिल के रोग जीर्ण आमातिसार, मोतीझरा, दूषित व्रण, आंतों के कीड़े, केचुएँ, दाद, उकवत, अपरस आदि चर्म रोग भी सफेद कोढ़ की उत्पत्ति एवं वृद्धि में सहायक कारण हैं। यद्यपि कुछ लोग नहीं मानते तथापि सफेद कोढ़ के रोगियों के रक्त-मिश्रण से भी यह रोग पैदा होता है और पीढ़ी दर पीढ़ी चलते हुए देखा जाता है।

गर्मी-सूजाक स्वयं पैदा किए हुए न होने की हालत में माता-पिता के कुल से प्राप्त वंश-परम्परागत भी होते हैं और इनके विकास से अत्यन्त पवित्र जीवन व्यतीत करने वाले मनुष्यों या छोटे बच्चों और शिशुओं में भी यह रोग पाया जाता है।

डा. स्वामी का चिकित्सा–सिद्धान्त

श्वेतकुष्ठ की चिकित्सा और अनुसंधान के सिलसिले में नेपाल, तिब्बत, असम, विन्ध्यांचल, नीलगिरि एवं कश्मीर आदि प्रदेशों की दुर्लभ और अज्ञात वनस्पतियों की खोज में भ्रमण करने के बाद सन् १९६१ में डा. स्वामी ने समीक्षा प्रस्तुत की और कहा कि आष चिकित्साग्रंथ चरक में प्रतिपादित, वात-पित्त-कफ पर आधारित दार्शनिक आधारों वाला निदान-रूपी गणित, सफेद कोढ़ की चिकित्सा के क्षेत्र में नवीन अध्याय की ओर स्पष्ट संकेत करता है।'

आजकल सफेद कोढ़ का इलाज ऊपर से लगाने वाली दवाओं के लेप या औषधि मिश्रित तैल अथवा चर्मगत इंजेक्शनों पर आधारित है। बड़े दुःख का विषय है कि शरीर-धातु-क्रिया-वैषम्य जन्य इस व्याधि को लेप-तैल या चमड़े को जलाने या रंगीन करने के उपायों से, लोभी अल्पज्ञानी चिकित्सक भोली-भाली जनता को चारों ओर ठगते फिरते हैं। चमड़े पर लगाने वाली ऊपरी दवाओं से, चमड़ा जल-झुलस कर कुछ समय के लिए काला, चितकवरा या रंगीन भले ही हो जाय, लेकिन, रोग की जड़ तो रक्त-मांस-भेद में वदस्तूर कायम रहती है और समय पा कर चमड़े को पहले की तरह फिर से सफेद बनाने लगती है।

सफेद कोढ़ के अपथ्य

सफेद-दाग के रोगियों को दही, मूली, उड़द, मट्ठा (छाछ या लस्सी) मांस, मछली, मदिरा (शराब), प्याज, लहसुन, गर्म मसाले का सेवन त्याग देना चाहिए। अधिक धूप में देर तक घूमना और आग के सामने देरतक बैठना भी हानिकारक है।

पथ्य

दूध, घी तथा अन्य शाक, फल, गेहूँ चावल आदि का प्रयोग लाभदायक है।

राजकीय संरक्षण का महत्व

चूंकि श्वेत कुष्ठ शरीर-धातु क्रिया-वैषम्य का रोग होने के साथ ही साथ राजरोग भी है, अतः भारत सरकार को इस रोग की चिकित्सा के विषय में उपलब्ध विशिष्ट तथ्यों एवं प्रमाणों को अनुसंधान कार्य में समाविष्ट करना समयोचित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[एफ्रोदिती का गार्डन......पृष्ठ ३० का शेष]

उसकी अन्त:स्रोतास्विनी है–जिसे वह आज महीनों बाद देखेगा। सदा की तरह वह अपने कक्ष की खिड़की में बैठी होगी– और उसे देखकर अपनी व्यथित मुस्कान अंजुलि में ले लेगा। उससे कहेगा– "मधु, देखो, मैं घर लौट आया हूँ और अब सदा यहीं रहूँगा।" शायद मधु की आँखें भर आयेंगी और वह पूछेगी––

"मंजूषा का शिल्पन हो चुका ?"

"हाँ ! मंजु को मैंने आखिरी बार विदा कर दिया है– हमने एक दूसरे को, जितना भी देना-लेना था, ले दे लिया है– अब मुझे जो चाहिए, वह मंजु में नहीं है और जो उसे चाहिए– वह मुझमें नहीं है। मैं मंजूषा का कृतज्ञ हूँ कि वह मुझे मधु से जोड़ गयी।" वह कहेगा।

मंजूषा और अभिनव बगीचे के फाटक के बाहर आकर अलग-अलग राहों पर मुड़ गये। अभिनव मधुमालती के पास लौट आया है– मधु ने वही प्रश्न पूछा है, जो अभि ने सोचा था। और जब मधु ने उस मूर्ति को बगीचे के बीचों-बीच सिल्वरी शेड में एक ऊँची मुंडेर पर प्रतिष्ठित कर दिया और अभिनव से बाग के नामकरण का आग्रह किया, तो अभिनव ने उसे पुकारा––

"एफ़्रोदिती का गार्डन।"

नोट–– "एफ्रोदिती के गार्डन" की यह कथा अभिनव ने मुझे बहुत बाद में बतायी–– जिसे मैंने दुहरा भर दिया है।

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यु. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[आप भी सोना......पृष्ट ५४ का शेष]

पृथ्वी की उत्पत्ति कैसे हुई ? इसका उत्तर वैज्ञानिक तौर से यह समझा जाता है कि अन्तरिक्ष में सूर्य प्रचंड अग्नि तेज रूप में अनादिकाल में तेज गति से भ्रमण करता था, उस समय उसके पास दूसरा एक सितारा भ्रमण करते-करते आया। उस सितारे के भ्रमण से तथा आकर्षण शक्ति से सूर्य के अंश से एक भाग अलग टूट पड़ा। यह नीचे आया और कालान्तर में शीत हुआ। वही यह पृथ्वी है। इससे स्पष्ट है कि, पृथ्वी के तत्त्व सूर्य के तत्त्वों से मिलने जुलने वाले हैं। पृथ्वी पर होने वाली धातुएँ सूर्य मण्डल में भी अवश्य होनी चाहिए। हमारी धरती से सूर्य का अटूट संबंध है। इसका दूसरा प्रमाण यह है कि, अंतरिक्ष से पृथ्वी पर समय-समय पर जो उल्काएँ गिरती हैं, उनका परीक्षण किया गया। और यह देखा गया कि, उन उल्काओं में भी गंधक-लोह तथा ऐसे ही अन्य द्रव्य तथा धातु होते हैं। पृथ्वी में भी ऐसी ही द्रव्य पाये जाते हैं। इस पर से भी यह सिद्ध होता है कि, पृथ्वी की उत्पत्ति अंतरिक्ष ग्रह सूर्य से हुई है। प्राचीन शास्त्रकारों ने धातु तथा ग्रह इनका सम्बन्ध ऐसा माना है—

सुवर्ण–सूर्य, चाँदी–चंद्र, लोहा–मंगल, सीसा–शनि, रांगा (वंग)–गुरु, ताम्र–शुक्र

इस तालिका से यह स्पष्ट होता है कि, इन ग्रहों में इन धातुओं की उत्पत्ति अधिक होनी चाहिए, जिनका संबंध ग्रहों से दर्शाया है।

सूर्य-मंडल में धातु आदि के अनेक तत्त्व विद्यमान हैं। सूर्य अपने में विद्यमान प्रत्येक तत्त्व के अणु और परमाणुओं को अपनी किरणों द्वारा पृथ्वी की ओर भेजता है। यह कार्य सूर्य के विद्युत् तेज के प्रभाव से होता है। चन्द्र को पृथ्वी का उपग्रह माना गया है। इसलिए चंद्रलोक का भू-भाग पृथ्वी के समान ही होना चाहिए। तथा चंद्रलोक के तत्त्व पृथ्वी के तत्त्वों के समकक्ष होने चाहिए। आधुनिक वैज्ञानिकों ने यह मान्य किया है कि, मंगल ग्रह की अनेक बातें पृथ्वी की परिस्थिति से मिलने जुलने वाली है। अतः वहाँ भी पृथ्वी के तत्त्वों के समान ही तत्त्व अवश्य होंगे। ऐसी कई बातों को आज के वैज्ञानिक तेज़ी से अनुसंधान कर रहे हैं। और ये बातें बहुत ही रहस्यमय लग रही हैं। भारत के कुछ प्राचीन लोगों की मान्यतानुसार अंतरिक्ष में इंद्र, ब्रह्मा ये भी बड़े-बड़े ग्रह माने गये हैं।

पृथ्वी की आन्तरिक रचना– पृथ्वी के आन्तरिक भाग में एक के बाद एक ऐसी परतें होती हैं, जैसी कि प्याज में होती है। पहिली पर्त नर्म मिट्टीवाली है, जो २० मील गहरी है। दूसरी पर्त सख्त चटटानों की है। यह पर्त करीब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१,८०० मील मोटी है। इसके बाद भूगर्भ में गहराई पर एक ऐसा क्रोड़ (Core) है, जिसमें निकिल, लोहा, ताम्र स्वर्ण इत्यादि कई धातुओं का गरम तथा तरल द्रव्य है। यह Core गतिमान है। तथा १४०० मील गहरा है। इसके बाद अन्तिम पर्त ठोस धातुओं की है, जिसकी गहराई ८०० मील है। पृथ्वी के अन्दर सौ-सवासौ मील गहराई पर इतना प्रचंड दबाव होता है कि, ग्रॅफाइट की चट्टानों या तत्सम चीजों को पृथ्वी अपने दबाव से तथा प्रखर उष्णता से हीरा बना देती है। माणिक्य, पन्ना, नीलम, पुखराज इत्यादि रंगीन रत्न भी ऐसे ही बनते हैं। इन रत्नों के मूल घटक कार्बन, धातु, गंधक, क्षार, एल्युमिनियम, सिलिका, (रेती), कॅल्शियम (चूना), मिट्टी आदि होते हैं। थ्वी के अन्तर में समाविष्ट रसायनों से और गतिशीलता से कई तत्वों के संयुक्त होकर ये रत्न बनते हैं। प्रयोग-शाला में वर्तमान समय में ऐसे कृत्रिम रत्न भी बनाये गये हैं।

[क्रमशः]

*

[जब आप धातु के........पृष्ठ ३२ का शेष [

तेल और पानी का इन पर जल्दी से असर नहीं होता। परन्तु इनकी कम क़ीमत ने ही औरतों का ध्यान अपनी ओर अधिक आर्कपित किया। औरतों की एक ड्रेस की कीमत चार से दस रुपये तक आती है, परन्तु एक विशेषज्ञ का कहना है कि ये कीमतें भी ज़्यादा हैं और बड़े-बड़े कागज़ निर्माता इसका दाम और भी कम कर देंगे, ऐसी आशा है।

इन कागज़ से बने कपड़ों का भविष्य अति उज्ज्वल है, क्योंकि इनका उत्पादन इतने विशाल पैमाने पर बड़ी-बड़ी कागज तैयार करने की मशीनों पर हो सकता हैं कि इसका बना एक सूट या ड्रेस बहुत ही कम दाम में ख़रीदा जा सकेगा। ब्रिटेन के कागज़-निर्माताओं की भी यही राय है कि ऐसे कपड़े जो एक वार पहन कर फेंके जा सकें, भविष्य के कपड़े होंगे। इस समय भी जो 'कपड़ा' वे तैयार कर रहे हैं वह एक हज़ार से भी अधिक अस्पतालों में बड़ी सफलता के साथ डाक्टरों और नर्सों के नकाब, टोपियाँ, तौलिये, एप्रन इत्यादि बनाने के काम में आ रहा है। कागज़ से बनी ये वस्तुएँ कपड़े की चीज़ों से अधिक स्वच्छ और श्रम बचानेवाली हैं और अस्पताल के संचालक इनका मुक्त रूप से स्वागत कर रहे हैं।

अभी तो साधारणतया लोग यह सुन कर आश्चर्य ही करेंगे, परन्तु निकट भविष्य में ही धातु और कागज़ के कपड़े हम लोग पहना करेंगे और यह इनके अपूर्व और अद्‌भुत गुणों का ही प्रताप होगा। संसार की वस्त्र-समस्या को हल करने में तो यह विज्ञान की निश्चय ही एक लाभदायक देन होगी।

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृत वाद-विवाद प्रतियोगिता

भारतीय विद्या भवन के तत्वाधान में ता: १६-२-६४ को बम्बई अन्तर कालेज और अन्तर पाठशाला संस्कृत वाद–विवाद प्रतियोगिता गीता मन्दिर में हुई। प्रतियोगिता का विषय था, आधुनिक शिक्षा पद्धतौ सहशिक्षणम् हितम् न वा (आज की शिक्षा–पद्धति में सह शिक्षा योग्य है अथवा नहीं)। निर्णायक का स्थान खालसा कालेज के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष डा. पी. एस. सानी और आर्यन स्कूल के पण्डित रानडे ने लिया। भारतीय विद्या भवन के आनरेरी डायरेक्टर जे. एच. दवे ने इन तीनों महानुभावों का परिचय कराया।

तीनः चैम्पियनशिप ट्राफी रामनारायण रुइया कालेज ने प्राप्त की। निम्नलिखित विद्यार्थियों को पारितोषिक दिया गया।

विषय के पक्ष में :

प्रथम पारितोषिक : श्री सोमनाथ शर्मा (टी. पी. एम. संस्कृत पाठशाला)

द्वितीय पारितोषिक :

श्रीमती प्रमिला पारेख, (सेकण्ड्री ट्रेनिंग कालेज)

तृतीय पारितोषिक :

श्री यादव दीक्षित (भवंस मुम्बा देवी संस्कृत महा विद्यालय)

विषय के विपक्ष में :

प्रथम पारितोषिक :

कु. शुभा जोशी (इस्माइल यूसुफ कालेज)

द्वितीय पारितोषिक :

कु. विमला ओक (रामनारायण रुइया कालेज)

तृतीय पारितोषिक :

श्रीमती आर. बी. कोरडे (सेकण्ड्री ट्रेनिंग कालेज)

भवन का पत्रकारिता महाविद्यालय

यू. एस. एस. आर. के बम्बई दूतावास कार्यालय के सहायक प्रतिनिधि श्री वी. के. युर्ये ने भवन के जर्नलिज्म एडवर्टाइजिंग एण्ड प्रिंटिंग कालेज के विद्यार्थियों के समक्ष 'सोवियेट युनियन में पत्रकारित्व और विज्ञापन' विषय पर ता: १७ फ़रवरी को एक प्रशंसनीय प्रवचन दिया।

डाकोर कालेज

११ फरवरी को महात्मा गांधी के एक निकट सहयोगी और भवन के एक हितैषी श्री कमला शंकर पण्ड्या ने भवन के कालेज आफ आर्टस एण्ड साइंस डाकोर के विद्यार्थियों के समक्ष देश की वर्तमान समस्याओं पर प्रकाश डाला। प्रिन्सिपल सी. एम. मेहता ने अध्यक्ष पद ग्रहण किया।

डा. ए. के. मजुमदार

भारतीय विद्या भवन, नयी दिल्ली केन्द्र के डायरेक्टर डा. ए. के. मजुमदार को भारत सरकार ने अपनी प्राचीन पाण्डुलिपि-क्रय समिति का सदस्य बनाया है। यह समिति भारत सरकार को भारतीय विद्याओं के महत्वपूर्ण प्राचीन ग्रन्थ खरीदने पर सलाह देगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाशिवरात्रि

११ फ़रवरी को भवन के अंधेरी कालेज के प्रांगण में भगवान चन्द्रशेखर के मन्दिर में महा शिवरात्रि के पुण्य दिन पर लघु द्र का आयोजन हुआ।

पुष्प-प्रदर्शिनी

बम्बई एग्री हॉर्टिकल्चरल सोसायटी भारतीय विद्या भवन के सहयोग से दो पुष्प-प्रदर्शिनियों का अयोजन कर रही है। प्रथम, पुष्प- सज्जा प्रदर्शन ७ और ८ मार्च को भवन के गीता मन्दिर में होगा।

महाराष्ट्र के कृषि मंत्री श्री. पी. के. सावन्त ७ तारीख को शाम ४-३० बजे इसका उद्घाटन करेंगे। द्वितीय, उद्यान एवं पुष्प-प्रदर्शिनी १३, १४ और १५ मार्च को अंधेरी स्थित भवन के कालेज-प्रांगण में होगा। इसका उद्घाटन १३ तारीख को शाम ५ बजे महाराष्ट्र की राज्यपाल श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित के कर कमलों द्वारा सम्पन्न होगा। प्रवेश-पत्र भारतीय विद्या भवन के चौपाटी स्थित कार्यालय से प्राप्त किये जा सकते हैं।

किचन गार्डन प्रतियोगिता

दि आल इण्डिया वीमेन्स सेन्ट्रल फुड काउन्सिल ने अपने किचन गार्डन प्रतियोगिता के पारितोषिक-वितरण का आयोजन भारतीय विद्या भवन के नयी दिल्ली केन्द्र पर किया। भारत सरकार के कृषि मंत्री डा. राम सुभग सिंह प्रमुख अतिथि थे। काउन्सिल की प्रेसिडेंट श्रीमती लीलावती मुन्शी ने इस अवसर पर एक सारगर्भित स्वागत-भाषण दिया।

पत्रकारिता महाविद्यालय का कालेज सप्ताह

भारतीय विद्या भवन के कालेज आफ जर्नलिज्म एडवर्टाइजिंग एण्ड प्रिन्टिंग ने अपना कालेज सप्ताह तारीख ८ फरवरी १९६४ से १५ फरवरी तक मनाया। ८ तारीख को कुलपति मुन्शीजी ने इस सप्ताह का उद्घाटन करते समय कहा, कि पत्रकारिता के महान व्यवसाय द्वारा विद्यार्थियों को राष्ट्र और मानवता की सेवा करनी चाहिए। 'अल्फा' मासिक 'अल्फा न्यू डाइजेस्ट' और 'अल्फा एन्युअल', जो इस समय इस कालेज के विद्यार्थियों द्वारा प्रकाशित किये जाते हैं, उनके अतिरिक्त एक नया समाचार साप्ताहिक निकालने की सलाह भी श्री मुन्शीजी ने दी। इस सप्ताह में अर्थशास्त्र मुद्रण और विज्ञापन आदि विषयों पर तीन परिसंवाद गोष्ठियां हुईं। १५ तारीख को सप्ताह के पूर्ण होने पर श्री एस. के. पाटिल ने भाषण दिया और विद्यार्थियों को पारितोषिक प्रदान किया।

*

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, ताडदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्यूज़ पेपर रजिस्ट्रेशन (केन्द्रीय) रूल १९५६ के फार्म ४ (रूल ८) में निर्दिष्ट रूप में 'भारती' के स्वामित्व आदि विषयक ब्यौरा :

१. प्रकाशन-स्थान	बम्बई
२. प्रकाशन की नियतकालिकता	पाक्षिक
३. मुद्रक का नाम	श्री सु. रामकृष्णन्
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	एसोसिएटेड एडवर्टाइज़र्स एण्ड प्रिण्टर्स
४. सम्पादक और प्रकाशक का नाम	श्री ज. ह. दवे (प्रबंध सम्पादक) श्री वीरेन्द्र कुमार जैन (सम्पादक) श्री सु. रामकृष्णन् (प्रकाशक)
राष्ट्रीयता	भारतीय
५. पत्र के मालिक तथा पत्र की कुल-पूंजी में १ प्रतिशत से अधिक हिस्से वाले भागीदारों के नाम और पते	भारतीय विद्या भवन; सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट २१ (१८६०) तथा बम्बई पब्लिक ट्रस्ट एक्ट (१९५०) नं. एफ. ३५८ (बम्बई) के अन्तर्गत रजिस्टर्ड

अध्यक्ष:	मानद सेक्रेटरी :
श्री के. एम. मुन्शी	श्री जशवन्तलाल मटूभाई
उपाध्यक्ष:	श्री श्रीगोपाल नेवटिया
सर एच. वी. दिवेटिया	श्री जे. एम. बारोट
श्रीमती लीलावती मुन्शी	श्री सी. एल. घीवाला

मैं सु. रामकृष्णन् घोषित करता हूँ कि उपर्युक्त बातें मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य हैं।

मार्च १९६४

प्रकाशक का हस्ताक्षर } सु. रामकृष्णन्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतुल

• रंग

• रसायन

• और औषधि

अतुल प्रॉडक्ट्स लि.

अतुल, (वाया वलसार)

पश्चिम रेलवे.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी

भारती
[भवन की पत्रिका]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषाओं में तार भेजिये

अपना संदेश
देवनागरी लिपि में
लिखकर
आप किसी भी
भारतीय भाषा में तार
भेज सकते हैं।

अंग्रेजी में भेजे जाने वाले तारों को मिलने वाली सुविधाएं देवनागरी लिपि में भेजे जाने वाले तारों के लिए भी मिलती हैं, जैसे बधाई तार (बधाई वाक्यों की सूची हिन्दी में उपलब्ध है), डिलक्स तार, प्रेस तार, मानव जीवन अप्रता तार, फोनोग्राम तथा तार के संक्षिप्त पतों की रजिस्ट्री।

यह सुविधा
२००० तारघरों में उपलब्ध है

डाक-तार विभाग

डीए ६३/४७४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

BHAVAN'S HOME LIBRARY SCHEME

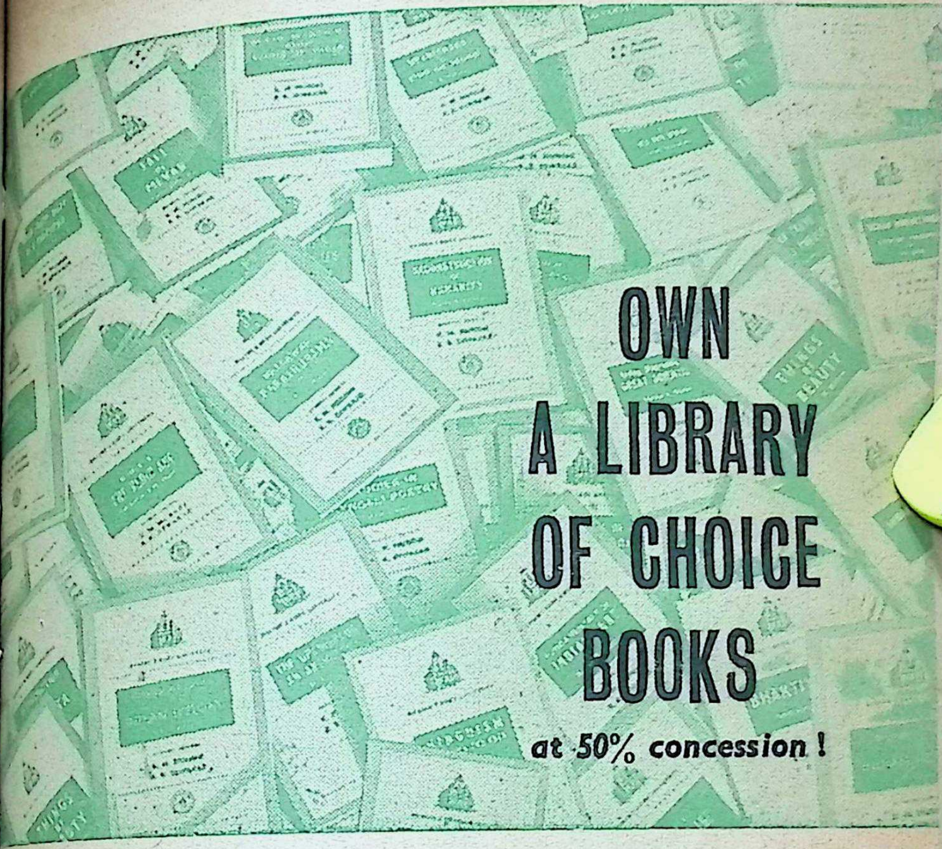

As the happy abode of a man of taste and culture, your home cannot really be complete without a set of BHAVAN'S range of choice BOOKS for you and members of your family.

BHAVAN'S BOOKS, specially selected, cover subjects of enduring interest. Delightful, instructive and inspiring to read, these books are cherished by all those who value wholesome literature.

BHAVAN'S BOOKS lucidly interpret India's ageless culture and its basic ideals and values in the light of modern knowledge and thus aim at a creative harmony and kinship between the past and the present, the ancient and the modern, the spiritual and the material.

BHAVAN'S BOOKS, therefore, are an ideal choice for your HOME LIBRARY. And here is an opportunity !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

For details of the scheme please turn over

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

And there is a very economical, convenient and sure way of obtaining sixty absorbing yet low-pricedbooks of your choice, out of the titles listed hereunder, at substantially reduced rate of Rs. 1.25 nP. instead of Rs. 2.50 nP. each. Postage or f free. That gives you 50% nett off the published price. All you have to do is to to us Rs. 75/-.

You have also the option of sending the amount in three monthly instalm Rs. 25/- each and get the books: 15 books in the first month, 20 books in the second and 25 books in the third month. But if you remit the total of Rs. 75/- in one inst all the 60 books will be given immediately.

This special Home Library Scheme will be closed on 30th April 1964.

LIST OF BOOKS FROM WHICH YOU MAY MAKE YOUR CHOIC

Mahabharata *by* C. Rajagopalachari : A favourite Indian best-seller from Rajaji's pen full of homely charm, wit and wisdom, evoking the ethos and flavour of Vyasa's ageless epic.
6th edn.; 'crown octavo' pp. 330

The Art of Life in the Bhagavad Gita *by* H. V. Divatia: The well-known jurist and educationist expounds the perennial message of the Gita to modern minds with clarity and comprehension. 4th edn.; 'Introduction' by B. G. Kher; pp. 179

Gandhi's View of Life *by* Chandrashanker Shukla : An intimate associate of Gandhiji dwells with facility and insight on the far-reaching ideas and beliefs which impelled the Ma' atma. 4th edn.; pp. 213

Aspirations from a Fresh World *by* Shakuntala Rao Shastri : A sound scholar in both Sanskrit and English lucidly depicts the pristine, but ever fresh ideals and aspirations of our hoary seers gathering them from the songs and lyrics in our Vedas, Upanishads and other sacred literature. 2nd edn.; pp. xix+184

Things of Beauty *by* V. N. Bhushan : An anthology of many an excellent literary piece of ancient, medieval and modern writers compiled by a literary connoisseur. 2nd edn.; pp. x+209

Women in the Vedic Age *by* Shakuntala Rao Shastri : Based on original texts, this is a comprehensive, stimulating study of India's womanhood in the past. It will also help in a proper diagnosis of the contemporary problems of our womenfolk. 3rd edn.; 'Foreword' by F. W. Thomas; pp. ix,+190

Life of Mahatma Gandhi (Volumes I & II) : *by* Louis Fischer : The enduring interest of Mahatmaji's life is naturally heightened when a non-Indian writer and jo of the calibre of Louis Fischer ren biography in a fluent, colourful 3rd edns.; pp. 250 & 256, respectiv

Women in the Sacred Laws *by* Shakunt Shastri : A diligent, engaging sur the status and position of women as ing under the laws, tenets and conve of Hinduism through 3000 years of history. 2nd edn.; 'Foreword' by Thomas; pp. 189

Mahayogi *by* R. R. Diwakar : A f perceptive evaluation of the life, s and teachings of Sri Aurobindo, the Pondicherry, by a scholar and writ distinction. 3rd edn.; pp. xx+2 illustrations

Fundamentals of Indian Art *by* Surend Dasgupta; with 15 striking art plates from Ajanta, Ellora, Sanchi, Sarnat A distinguished philosopher and art affords here a clear, authentic guide elements underlying our various arts their peerless legacy. 2nd edn.; pp. v

The Fundamental Unity of India *by* R Kumud Mookerji : A subject of concern is discussed here with know and the historical perspective by an em scholar. 2nd edn.; 'Foreword' by R MacDonald; pp. 109

Annie Besant *by* Sri Prakasa : This m biography of one of the most remarka women, by one who knew her so recalls touching memories of her perso and character. pp. lxiii+225

The Call of the Vedas *by* A. C. Bose : Bose vividly unfolds, with the aid sparkling quotations, the rare spiritual poetical beauty and import of the Ve Has a Penetrating 75-page introductio

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

... literature and culture. 2nd edn.: ...+314

...ical Factors in Indian History *by* ... M. Panikkar : A renowned historian, ...man and writer provides a splendid ...sal of the different geographical ...s that have shaped our history and ...r continued bearing on the preservation ...r independence and unity. 2nd edn.: ...123

...—India's Ageless Festival *by* Dilip ...ar Roy and Indira Devi : The ...ling spectacle and spiritual signi...ce of the Kumbha Mela are featured in ...joyous narrative by two accomplished ...ors. pp. 204+4 illustrations

...Forbidden Flight *by* Satyanarayan Sinha: ... Hon'ble Dr. Sinha records his im...sions of many strange folks and their ...c ways of life, which he gathered during ...venturesome travels in the Middle-East ...d Eastern Europe. pp. vii+121+4 ...trations

...vad Gita and Modern Life *by* K. M. ...nshi : Shri Munshi who has lived with ...Gita all his life reveals the impact of this ...at Gospel on modern life and its ...blems. pp. xvi+256

...n Inheritance (Volumes I, II & III) *by* ...nent Contributors : This absorbing, ...ly commended book comprises of three ...mes, Each complete in itself. The ...t volume deals with the treasures of ...an literature, philosophy and religion; ...second, of our art, history and culture; ...d the third, of our science and society ...ough the ages. Provides a wholesome ...rding acquaintance with the essential ...ects of the enduring inheritance of ...a. 3rd edn. pp. xiv+223, 3rd edn. ... ix+256, 2nd edn.; pp. x+174, res...ctively

...s in Epics and Puranas of India *by* A. D. ...lker : The salient features of our ...ics and Puranas, which are a store-house ...f wisdom and light, are discussed with ...p and perspicacity by a learned author. ... lviii+225

...ism through the Ages *by* D. S. Sarma : ...is documented saga of Hinduism traces ...s course through time and ends with its ...dern exponents. pp. vi+284

...rds of God (Volumes I & II) *by* Bankey ...hari : A pious, scholarly sannyasi ...ches here, in a deeply affecting manner, ...e lives and attainments of some of India's ...wned saints and sadhus. Selections ...m their fervent poetical compositions ...e also given. 2nd edns.; pp. vii+204+5 ...strations & v+138+7 illustrations ...pectively

Ramayana *by* **C. Rajagopalachari** : In this exquisite English rendering of the Ramayana, Rajaji recaptures, in his inimitable way, the enchanting magic of Valmiki. Like Rajaji's other top-seller—*Mahabharata*—the Ramayana also has achieved unprecedented popularity with readers of all classes. 4th edn.; pp. 304

***Immortal India (Volumes I, II, III & IV)** *by* **J. H. Dave** : These informative and edifying volumes take us round India's age-old centres of pilgrimage. We also read of their hallowed lore and legends, scenic attractions and something about their living present, too ! 2nd edn.; pp. xxviii+232+20 plates & 1 map; pp. xxviii+212+11 plates; pp. xxviii+239+12 illustrations; pp. xxxii+167+124 illustrations, respectively

Hindu Civilization (Volume I) *by* **Radha Kumud Mookerji** : A live, positive exposition of all relevant facets of Hindu Civilization from ancient times to the present day. pp. 209+4 illustrations+2 maps.

Introduction to Vedanta *by* **P. Nagaraja Rao**: A clear, terse account of India's magnificent heritage of the Vedanta and its various schools or systems. 2nd edn.; pp. xii+243

Reconstruction of Humanity *by* **Pitirim A. Sorokin**: The author, a social philosopher of world repute, believes that man's egoism can be transformed into creative love and altruism by a thorough change in human nature through the interplay of cultural and ethical forces. How this can be effected is explained here in a cogent, systematic manner. 2nd edn.; pp. 221.

Bhaktiyoga *by* **Aswini Kumar Datta**: To men of piety this book with apposite excerpts and dictums garnered from our sacred literature of faith by a sensitive writer will be a source of spiritual solace. 'Preface' by C. Sen; pp. 234

Indian Travel Diary of a Philosopher *by* **Count Keyserling** : The subtle, inquiring mind of the author, a towering German thinker and European humanist, pauses to reflect on the cause and meaning of the things seen in his travels and his reactions thereto. pp. xvi+227

***Bhagawan Parashurama (Volumes I & II)** *by* **K. M. Munshi**: Drawn on a vast canvas, this ancient, exhilarating tale is a piquant amalgam of light and shade, of tears and laughter. It commences with the epochal transformation of Vishwaratha, the Bharata Prince, into the celebrated Viswamitra and the birth of the Gayatri. And it culminates in the destruction of Sahasrarjuna, the mighty asura emperor,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

and his ravaging hordes at the hands of the greatest of the Bhargavas—Parashurama. There are arresting profiles, too, of scores of other epic figures like Vasishta, Lopamudra, Loma, Ugra, Jamadagni and Renuka. pp. v+171 & v+242, respectively

Bhagawan Buddha *by* R. R. Diwakar : This heart-warming biography lays due accent on the profound human appeal of the life, personality and ethics of this universally-acclaimed spiritual leader. pp. x+195+ 10 illustrations

Stories of Vikramaditya (*Simhasana Dwatrimsika*) pp. ix+271

Stories of Vikramaditya (*Vetala Panchavimsati*) pp. vi+152 Though of long vintage, these blithe tales have lost none of their sunny charm for young or old. While entertaining, each story conveys, on the sly, a pithy moral, too.

Hindu America ? *by* Chaman Lal: This book tells of the pervasive cultural influence said to have been exercised by India and the Hindus of yore on the peoples of the Americas. The author, an observant scholar and now a Bhikshu, has assembled a good deal of evidence—literary, artistic and cultural, acquired by him through extensive travels and research. 'Introduction' by R. H. Geldern: pp. xviii+255+10 illustrations

Power and Morality *by* Pitirim A. Sorokin & Walter A. Lunden: Two prominent sociologists and writers seek to chart a novel, purposeful course of action whereby the powers-that-be could further the ideals of a peaceable, orderly society and civilization through effective disarmament, fraternal co-operation and peaceful development. pp. vii+192

Upanishads in Story and Dialogue *by* R. R. Diwakar: In this book we get a scholarly introduction dealing with the nature and the teachings of the Upanishads. 'Foreword' by S. Radhakrishnan; pp. 143

The World We Saw *by* K. M. Munshi : Shri Munshi recalls with cheerful elan the many events, places and peoples encountered by him in the course of his global travels. His chatty, wide-awake comments and pen-pictures conjure up an inviting panorama of the world. pp. xii+232

Bhakta Mira *by* Bankey Behari : Illumines the life and mystic yearnings, as well as the haunting songs and bhajans, of a most endearing saint and singer. pp. x+190.

Sane Sex Order *by* Pitirim A. Sorokin : Dr. Sorokin plumbs here into the root causes that have tended to corrupt the whole code of sexual behaviour to-day and ... methods to salvage society from the ... to which it has sunk. pp. vii+158

Swami Shraddhanand *by* M. R. Jamb... This earnest chronicle of the life of ... Shraddhanand, a pillar of strength ... Arya Samaj movement in its hey... based on his autobiography in Hi... records poignant happenings in ... Swamiji's life leading to his tragic m... dom. pp. viii+176.

Replies to the Reader *by* K. M. M... Through the 'Bhavan's Journal' ... smart, jovial or pertinent replies to ... questions by him, serious or ... fruitful or frivolous. 885 of these qu... and answers are gathered in this v... pp. vii+271

Ten Saints of India *by* T. M. P. Mahad... With an Introduction about the ess... of saintliness and sainthood, the lives ... highly venerated saints, mostly ... South, are narrated with an easy, ... flow. pp. x+147+10 illustrations.

Pathway to God in Marathi Literature ... R. D. Ranade: Explores with fe... the ideas and urges of the beloved ... and mystics of Maharashtra. Appro... biographical data about them are ... included, as also selections from the ... lifting devotional songs and kirtans. xxviii+337.

Swami Rama Tirtha *by* S. R. Sharma : ... well-known scholar gives a touching ... position of Swami Rama Tirtha's ver... accomplishments—as a teacher, ... patriot and preceptor, mystic-poet ... 'prophet'. pp. xvi+199+1 photogra...

In Quest of God *by* Swami Ramdas : S... Ramdas describes here the incidents, ... mental torments and struggles that ... stituted the crucial turning point in hi... —the spiritual crisis that changed ... irrevocably from a householder into ... ashramite bent on selfless, bene... activity. pp. xiv+168+1 map.

Lord Gauranga *by* Shishir Kumar Gh... Shree Chaitanya or Lord Gauranga ... steeped in a world of radiant love, of ... kti. The story of his effulgent life ... doings is related here with genuine f... and poise by a devotee and recognised ... of-letters. pp. xi+196+1 illustration

Stories as Told by Swami Ramdas: ... collection of 103 pleasant, mean... stories as heard, read or told by Sw... Ramdas, as well as those by Sri Ra... krishna, Sri Ramana and other great s... of India and abroad. There is a ... moral to each tale. pp. xii+195.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Buchman's Secret *by* Peter Howard : ...is the exciting secret of the life and ...ments of the famed founder of ...l Re-Armament told with wit and ...r by a reputed journalist, who had ...d closely with Dr. Buchman for two ...s. pp. vii+160.

...America and the World *by* Louis ...r : As a result of his wide travels ...er the globe, the author meticulously ...s into and seeks answers, at first-...l for many of the problems confronting ...world to-day, bringing into focus the ...s gripping factors of the titanic ...-West struggle for supremacy and their ...cations on other nations, particularly ...neutral ones. pp. vii+230

... : *A Study in the Theory of Avataras* : ...Dr. Bhagavan Das : In this acute, ...native study, a celebrated scholar and ...ary, examines the hallowed Krishna ...d in its varied, fascinating aspects. ...troduction' by Sri Prakasa; pp. x+202

...s and Legends of Maharashtra *by* ...M. S. Mate. pp. 240+26 illustrations & ...1 map.

...s and Legends of Andhra Pradesh *by* ...N. Ramesan. pp. vi+179+18 illustrations ...& 1 map.

These two books are written by eminent ...chaeologists and provide interesting infor-...mation about the temples in these States.

...s in Bengali Poetry *by* Humayun Kabir : ...himself a poet, the Hon'ble Shri Humayun ...Kabir reveals the beauties of Bengali poetry ...h genuine feeling and capability. pp. ...+124

...s, Mystics and Yogis of India *by* Bankey ...Behari : A firm devotee and spiritual ...aspirant himself, Shri Bankey Behari here ...graphically portrays the saintly lives and ...singular attainments of many holy men of ...India, their rare faith, mystic urge and ...poetic adorations to the Supreme Being. pp. vii+384

...s of Indian Culture *by* R. Srinivasan : Some of the fundamental concepts of ...India's Culture are brought out here through a keen, knowledgeable discussion of the ...ding traits of our Art, Science and Religion—each as understood in its deepest ...cosmopolitan sense. pp. xiv+271

...ries of King Madana Kama : *Retold by* V. A. K. Aiyer : These Stories of the Tamil country full of wit and wisdom are perennial favourites with people of all age-groups. Salty and salacious, they have few equals in entertaining the lay minds. pp. xii+302

War without Violence *by* Krishnalal Shridharani : A stimulating analysis of the Gandhian concept and technique of Satyagraha by an able and accomplished journalist and man-of-letters. pp. vi+299

Pearls of Wisdom *by* D. S. Sarma : Brings together under different topics related Upanishadic passages of glowing spiritual beauty and lustre supplemented by the veteran author's pithy and enlightened comments thereon. 'Foreword' by S. Radhakrishnan; pp. xiv+244

Ends and Means *by* Aldous Huxley : A provocative thinker of deep penetration, Aldous Huxley tries to discover a remedy for the world's sickness of the soul—he suggests a synthesis of moral virtues with intellectual ability and physical efficiency. pp. xii+112

Tiruvachakam : "The Hindu Testament of Love" told in English : *by* Ratna Navaratnam : This is a scholarly English rendering with suitable annotations and commentaries, of a poem of radiant faith and devotion, composed many centuries ago by Sri Manikkavachakar, a first rank Saint of South India. pp. x+246

God-Experience *by* Swami Ramdas : Aptly titled, this book brings out the fertile range and fullness of the spiritual experience of Swami Ramdas of Anandashram. pp. vii+244

The Creed of Saint Vinoba *by* Vasant Nargolkar : Here is a distinct, searching evaluation of Acharya Vinoba Bhave—the man, his life and thought—by an earnest and talented author and social worker. pp. xii+307

Dr. Ranade's Life of Light *by* M.S. Deshpande: This book written with a disciple's insight is an exhaustive biography of the scholar-yogi of Maharashtra who, by his intellectual eminence, vast scholarship and saintly life carved for himself an enduring place in the niche of India's Temple of Fame. pp. xxi+260

Kadambari *by* C. Kunhan Raja : Kadambari is a great romantic novel in Sanskrit by the famous Bana. Dr. Kunhan Raja gives an English rendering of it faithfully keeping to the original in letter and in spirit. The book takes the reader to the life and times of medieval India. pp. xiii + 198

Ramanuja's Teachings in His Own Words *by* M. Yamunacharya : A companion volume to those of Sankara and Madhva, the book provides an authentic account of the philosophy of Visishtadvaita preceded by a short life sketch of the great Acharya. pp. xii+160

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sri Madhva's Teachings in His Own Words *by* B. N. K. Sharma : Sri Madhva forms, with Sankara and Ramanuja, a trinity, as it were, among the great acharyas of India and his teachings emphasise a widely held view of Vedanta. 'Foreword' by D. M. Datta; pp. xv+180

***In the Vision of God : Volumes I & II :** *by* Swami Ramdas : An entrancing autobiography of the Saint of Kanhangad told in the third person. pp. xvi+270, xi+264, respectively

The Ideas of Sovereignty and State in I... Political Thought *by* K. M. Panikk... *Rajaniti* as known to our ancients ... practised by them is brought out in ... book drawing on our Puranas and D... Sastras. The learned author gives ... account of Indian Political Science a... best and convincingly argues that the a... nistrative structure of British India ... we have continued is built on I... traditions. pp. vii+107.

* Each Volume is complete in itself.

Some Press opinions about Bhavan's Book University Series :

"......*Bhavan's Book University publications have been growing in number as well as quality and variety, rightly meriting a distinguished place in the book world*......"

The Hindu, Mad...

"......*Of all the paperback publications in India, those published by the Bhavan's B... University......a notable series of books......are in many ways the best*......"...

The Times of India, Bomb...

"......*the Bharatiya Vidya Bhavan are doing as commendable a service as is being d... by the Penguin books......testifies to the selective genius of the publishers*......"...

The Indian Express, Bomb...

"......*this gigantic and pioneering task......the Book University......Clear confide... in us that India can produce books with good get-up, neat printing and at cheap price... Bharatiya Vidya Bhavan has fulfilled a long-felt need*......"

The Hitavada, Nag...

"......*the Book University of the Bhavan......one of the most enlightened enterprises...... has been giving excellent service to our country......Undoubtedly a very laudable venture*......"

The Hindustan Standard, Calc...

THE SALES MANAGER,
Bharatiya Vidya Bhavan,
Chowpatty, BOMBAY-7.

Date......................

DEAR SIR,

I am pleased to avail myself of your special "Home Library" offer. Please send me (...) the Books selected by me, charging the concessional rate offered, free of packing, forwarding ... postage charges.

I enclose Draft for/I have remitted by M.O./ a sum of Rs. 25.00 being the first instalme... Rs. 75.00 being full payment.

Signature..........................

Name and Address ....
(Block Letters)

....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[वर्ष ८ : अंक १५]

भारती

[५ अप्रैल १९६४

सम्पादक :
कन्हैयालाल मुन्शी

सह सम्पादक :
...कृष्ण ह. दवे

...क :
...रामकृष्णन्

...दक :
...कुमार जैन

...योगी :
...राम मिश्र
...नाथ शर्मा
...लाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

...अंक : ३० न.पै.
...क : ६.५० न.पै.
...मासिक : ३.५० न.पै.

ऋग्वेद	प्रार्थना	९
कन्हैयालाल मुन्शी	: कुलपति का पत्र	१०
डॉ. नीरदवरण	: श्री अरविन्द के साथ बातचीत	१४
डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन	: लश्कर	१७
मास्टर जे. कृष्णमूर्ति	: सत्य, जो समग्र में है खण्ड में नहीं,	१८
स्टीफेन स्पेंडर	: महाकवि रिल्के की रहस्यानुभूतियाँ	२२
वारीन्द्र कुमार वर्मा	: प्रार्थना	२६
महात्मा गान्धी	: समाजवाद कैसे लाया जाये	२८
हरिमोहन शर्मा	: जब स्वामी दयानन्द ने वायसराय को निराश किया	३०
सरोजिनी कुलश्रेष्ठ	: तीन कड़ियाँ	३२
सियाराम शरण प्रसाद	: दिशा दो	३३
—	: अयोध्या	३४
श्रीमान विश्ववंद्य	: इच्छा को मारना नहीं, उसका उन्नयन करना है	३८
—	: नव सूर्योदयी कविता, नये हस्ताक्षर	४१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी १९ अप्रैल के अंक में

- सात्विक मानवता के अनन्य अवतार-पुरुष, श्रीराम : श्री अरविन्द
- भगवान महावीर यों बोले : सूत्र कृतांग
- भारत की आत्मा का महाकाव्य, रामायण : रवीन्द्रनाथ ठाकुर
- रामायण का हार्द : सी. राजगोपालाचारी
- मेरी दृष्टि में श्रीराम : डॉ. के. एम. मुन्शी
- वीरांगना सीता : वी. एस. श्रीनिवास शास्त्री
- राम-रावण युद्ध और राजनीति : गोस्वामी बालक
- भारत के भव्य मंदिर : अयोध्या [सचित्र]

सन्तोष व्यास : पद्मावती

रमेशचन्द्र शाह : रचना के सन्दर्भ : एक जिज्ञासा

परमानन्द रस्तोगी : रवीन्द्र की संगीत साधना

कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार

इस अंक के सज्जाकार :
सर्व श्री कुमार ज्योतीन्द्र जैन, जोशी

आवरण-चित्र :

विरहाकुल राधा

चित्रकार :

कमलाक्ष शेनॉय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती

भवन की पत्रिका

आगामी विश्व विकास का सूचक :

जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

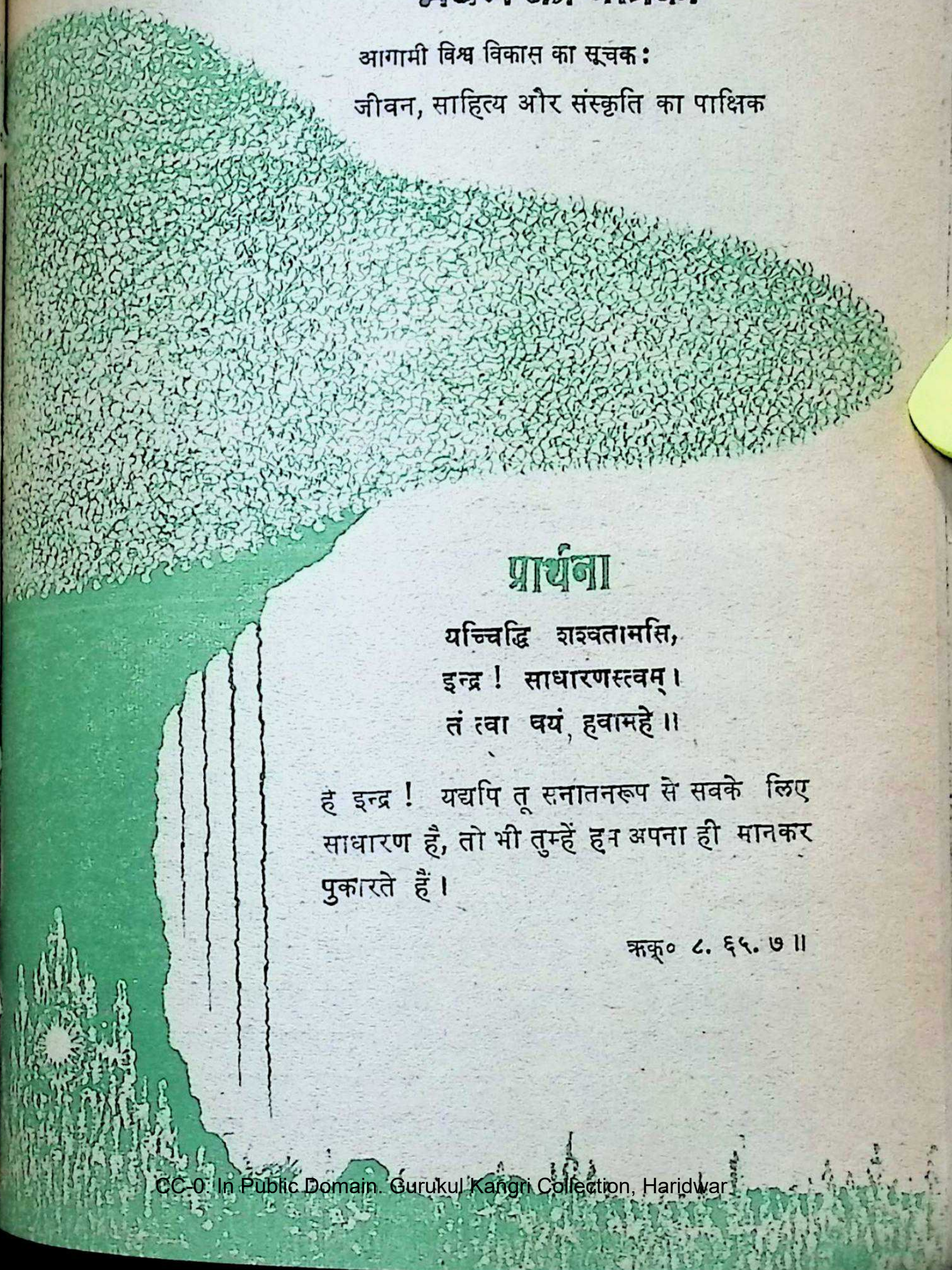

प्रार्थना

यच्चिद्धि शश्वतामसि,
इन्द्र ! साधारणस्त्वम् ।
तं त्वा वयं, हवामहे ।।

हे इन्द्र ! यद्यपि तू सनातनरूप से सबके लिए साधारण है, तो भी तुम्हें हम अपना ही मानकर पुकारते हैं।

ऋक्० ८. ६५. ७ ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधी

- सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन
- अन्तर्जातीय विवाह
- जाति-प्रथा का भविष्य

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बंबई,
५ अप्रैल १९६

मेरे युवा मित्र,

अपने पिछले पत्र में मैं समाज के बदलते हुए रूप की चर्चा कर चुका हूँ। इस पत्र में उसी विषय पर कुछ और लिखूंगा। जाति प्रथा की द्वितीय विशेषता यह थी कि एक ही जाति के विभिन्न अंगों में विवाह नहीं हो सकते थे। हमारी जाति के गृहस्थ विशा-जो सबसे ऊँचे माने जाते थे, अपनी लड़कियाँ अन्य किसी को नहीं देते थे। किसी विशेष परिस्थिति में ही वे सूरत उपजाति की लड़कियाँ स्वीकार करते थे और बाद में भिक्षुकों की भी लेने लगे। सन् १९१२ में ही इन उपजातियों में मुक्त रूप से विवाह सम्बन्ध स्थापित होने लगे।

इस शताब्दि के प्रारम्भ में, दशा उपजाति के केवल एक या दो परिवार ही बचे थे। वे अपनी उप-जाति से बाहर विवाह-सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकते थे, न अन्य उपजातियाँ ही उन्हें अपनी लड़कियाँ देतीं। सन् १९१० तक इस उपजाति का लोप ही हो गया।

सन् १९२६ में मैंने अपनी जाति के नियमों का एक ज़बर्दस्त उल्लंघन किया। मैंने एक जैन विधवा से विवाह कर लिया, जिससे दोनों ही जातियों में एक तहलका सा मच गया। मेरी जाति वालों ने तो मुझे जाति से ही निष्कासित कर दिया। फिर भी शादी के कुछ समय बाद, किसी इस प्रकार के विचार के बिना कि हमने कोई बहुत महत्त्वपूर्ण और साहसिक कार्य किया है, हम भड़ौच गये और अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिश्तेदारों से मिले। सदैव की भाँति उन्हें इत्यादि भी दी, तो अनधिकृत रूप से उन्होंने हमें अपने में से ही एक मान लिया, जाति निष्कासन का प्रस्ताव भार्गव जाति का इस प्रकार का अन्तिम प्रस्ताव था। सन् १९१६ के बाद कई युवकों ने अन्य जाति की स्त्रियों से विवाह किया और वे धीरे-धीरे जाति की समस्याओं के रूप में स्वीकार कर ली गयीं।

अन्तर्जातीय विवाह पर सिद्धान्ततः अब कोई प्रतिबन्ध नहीं रहा; फिर भी जाति के बहुत बड़े भाग में इसके प्रति सामाजिक और मनोवैज्ञानिक आपत्तियाँ हैं। अत्यन्त उच्चपदस्थ व्यक्ति अथवा अति धनाढ्य लोगों के अतिरिक्त, अब भी जाति के बाहर विवाह करना समाज में आपत्तिजनक माना जाता है और साधारण लोग सामान्यतः अपनी ही जाति में विवाह करते हैं। अन्य जाति की लड़की जब पत्नी बन कर किसी परिवार में आती है, तो कई बार पारिवारिक जीवन में गतिरोध पैदा हो जाता है। विभिन्न धर्म के व्यक्तियों में विवाह सम्बन्ध केवल ऐसे ही लोगों में होता है, जो समाज की अप्रसन्नता की परवाह नहीं करते; परन्तु ऐसी घटनाएँ कम ही होती हैं। सामान्यतः अन्य धर्म की पत्नी को परिवार में स्वीकार नहीं किया जाता और पति-पत्नी परिवार से अलग रहने लगते हैं। अतः यह प्रश्न उपस्थित होता है कि भविष्य में जाति प्रथा का क्या रूप होगा ? जाति प्रथा नष्ट नहीं होगी, यद्यपि उसकी पुरानी कट्टरता बड़ी शीघ्रता से मिटती जा रही है और शायद फिर कभी नहीं दिखेगी। समान हितोंवाले एक वृहद् परिवार के रूप में तथा सामाजिक सम्बन्ध और परस्पर सहायता की एक परम्परागत इकाई के रूप में जातिप्रथा कायम रहेगी। एक ही जाति के सदस्यों के बीच जब तक विवाह सम्बन्ध अधिक अच्छे माने जाते रहेंगे, जिससे कि पारिवारिक जीवन अधिक सुखी हो, तब तक जाति प्रथा का अन्त नहीं हो सकता। संसार भर में विवाह ऐसे ही व्यक्तियों और समुदायों के बीच पसन्द किये जाते हैं, जिनमें एक घनिष्ठता स्थापित हो। जातिहीन समाज महज एक कोरी कल्पना है।

जैसाकि मैं ऊपर कह चुका हूँ, मुझे अपनी जाति से निष्कासित हुए ३७ वर्ष हो चुके हैं। जाति भोज अथवा जाति के किसी समारोह में मैंने तब से भाग नहीं लिया; फिर भी मेरी जाति के लोग मुझे अपने में से ही समझते हैं। इसके लिए बदले में वे मुझसे कुछ नहीं चाहते, और न किसी प्रकार की कोई शर्त ही मुझ पर लगाना चाहते हैं। जब कभी किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता होती है, वे स्वयं आगे आकर मेरी सहायता करते हैं। जाति का ख्याल किये बिना जो भी लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे सम्पर्क में आते हैं, उनसे मैं परिवार के समान ही सम्बन्ध स्थापित करना चाहता हूँ। परन्तु जब कोई मेरी जाति का व्यक्ति मेरे पास आता है, तो यह कहने में मुझे हिचक नहीं है कि परिचित हो या अपरिचित, वह व्यक्ति मुझ पर एक परिवार के सदस्य के समान ही अधिकार रखता है, ऐसा मैं अनुभव करता हूँ।

'जातिवाद' की हम निन्दा करते हैं और यह ठीक ही है। परन्तु वास्तव में 'जातिवाद' सत्तारूढ़ राजनीतिकों का ही एक व्याधि है। सत्ता प्राप्त होने पर वे लोग केवल अपनी ही जाति के लोगों से घिरे रहना पसन्द करते हैं; क्योंकि वे उन पर ठीक उसी प्रकार विश्वास कर सकते हैं, जिस प्रकार मध्य युगीन भारत के सुल्तान अपने उन गुलामों की वफ़ादारी का विश्वास करते थे, जिनका हित उनके सत्तारूढ़ बने रहने में था। परन्तु जाति-वाद का कारण जाति-प्रथा नहीं, यह तो निम्न नैतिक निष्ठा और आचरण के उस सत्तारूढ़ राजनीतिक का काम है, जो अपनी जातिवालों के माध्यम से अपनी सत्ता बनाये रखने अथवा लाभ उठाने का प्रयत्न करता है। जातिवाद को रोकने से यह भ्रष्टाचार नहीं रुकेगा। इसका इलाज तो राजनीतिक व्यक्तियों के चरित्र और दृष्टिकोण को उच्च बनाने से ही संभव है।

अब मैं उन तत्वों की चर्चा कर इसे को समाप्त करूँगा, जो प्राचीन सामाजिक व्यवस्था, जिसका जाति-प्रथा एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग है, के विरुद्ध कार्य करते रहे हैं और अब भी कर रहे हैं। आधुनिक जीवन ने एक ऐसा वातावरण उपस्थित कर दिया है, जिसमें अन्तर्जातीय भोज में शामिल न होना प्रायः असम्भव सा हो गया है। आधुनिक शिक्षा ने हमारे दृष्टि-कोण को विस्तृत किया है, शिक्षितों में एकता की भावना ला दी है और वंशानुगत विशिष्टताओं और असमानता के प्रति विश्वास को ही ख़त्म कर दिया है। प्रजा-तन्त्रीय और राज्य की धर्म निरपेक्षता की भावनाओं ने जाति चेतना द्वारा निर्मित विलगता की भावना को यदि नष्ट नहीं कर दिया, तो उसको बहुत कुछ कम अवश्य कर दिया है।

दूसरा कारण मनोवैज्ञानिक है। हमारी आत्म-विश्वास कीं भावना राजनीतिक दासता के कारण विचलित हो गयी, जिससे हीनता की भावना हम में घर कर गयी। पश्चिमी देश शक्तिशाली और धनाढ्य थे और हम लोग कमजोर तथा अविकसित इसलिए जो भी पश्चिमी देश करते, उसी को हम लोग अच्छा और अनुकरणीय समझने लगे। पश्चिमी देश जाति प्रथा को हीन मानते थे, इसलिए हम भी उसे हमारे ऐतिहासिक विकास में अर्थ हीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगे और उनकी इस धारणा को भी ऐतिहासिक सत्य समझने लगे कि प्रथा के कारण ही हमारा अधःपतन। पश्चिम की यह अनुकरण प्रवृत्ति भी 'ट्विस्ट डान्स', 'स्ट्रिप्टीज़' तथा ही अन्य भद्दे नाच और अश्लील नों को सांस्कृतिक प्रगति के चिह्न में हमारे कुछ भाइयों में दिखायी ती है।

दूसरा महत्वपूर्ण तत्त्व हमारी मानसिक रता का भंग होना है। जब कि ब्रिटिश शासन इस देश में राजनीतिक अस्तव्यस्तता को समाप्त कर एक शान्ति और कानून का राज्य स्थापित किया, तब हिन्दुओं के से वह डर निकल गया, जो सदियों उन्हें परेशान कर रहा था, कि हिन्दू संस्कृति खतरे में है। तब हम हमारी संस्कृति के पुराने स्रोतों की ओर वापस गये, उससे प्रेरणा और शक्ति प्राप्त की। इसी ने मानवतावादी आधुनिक निर्माण को जन्म दिया।

औद्योगिक क्रान्ति और यन्त्र युग द्वारा ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं; जिनमें जातिभेद कायम रखना प्रायः असम्भव सा बन गया है। औद्योगिक नगरों में विभिन्न जातियों के व्यक्तियों का आपस में मिलना-जुलना अवश्यम्भावी है और इससे समानता की भावना आयेगी है। राष्ट्रीय चेतना का विकास भी जातियों में एकता की भावना लाता है। वंश परम्परागत भेद भावों को मिटाये बिना हम एक राष्ट्र नहीं बन सकते और एक सशक्त तथा चेतन राष्ट्र बनने की भावना हममें इतनी प्रबल है कि कोई भी सिद्धान्त जिससे राष्ट्रीय विघटन को प्रोत्साहन मिले, हम बर्दाश्त नहीं कर सकते।

परम्परागत विशिष्टताएँ अब सदा के लिए शेष हो चुकी हैं। परन्तु चातुर्वर्ण्य की अन्तर्धारा, जैसी गीता में वर्णित है– कि सत्य और धर्म के लिए समर्पित बुद्धिमान और ज्ञानी लोग ही समाज के प्रधान होने चाहिए; कि वीरोचित कार्य करने वाले पुरुष द्वितीय श्रेणी में तथा सम्पत्ति के उत्पादक एवं वितरक महत्त्व और सम्मान में उनके बाद माने जाने चाहिए। और सबके बाद स्वभाव और आदत से जो परावलम्बी हैं, उनका स्थान रहेगा– एक ऐसे सनातन सत्य को अभिव्यक्त करती है, जो नैतिक और आध्यात्मिक स्तर पर समाज का निर्माण करता है। विश्व की सामाजिक नीति में भारत का यह योग दान है और इसी पर मानव की सामाजिक प्रगति निर्भर है।

आपका

कन्हैयालाल मुन्शी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. नीरद वरण

श्री अरविन्द के साथ बातचीत

योगी, आचार-व्यवहार या शिष्टता के नियमों से बँधे नहीं होते; वे जड़, बाल, उन्मत्त या पिशाच की तरह कार्य करते हैं क्योंकि उनकी चेतना किसी ऊपर की चीज़ के साथ युक्त होती है और उनकी प्रकृति स्वतंत्रता पूर्वक कार्य करने के लिए छोड़ दी गयी होती है।

पुराना व्यक्तित्व

शिष्य: इस जीवन में बने हुए व्यक्तित्व को दूसरे जीवन में चैत्य-पुरुष कैसे ले जाता है?

श्री अरविन्द: मृत्यु के बाद चैत्य पुरुष व्यक्तित्व के विभिन्न अंगों को एकत्र करता है और उन्हें दूसरे जन्म में अपने साथ ले जाता है। परन्तु वही पुराना व्यक्तित्व फिर से जन्म नहीं ग्रहण करता। साधारणतया लोग इन बातों को समझने में बहुत आसानी से गलती कर बैठते हैं, विशेषकर उस समय जबकि वे इसे मन की भाषा में व्यक्त करते हैं, क्योंकि यह प्रक्रिया बड़ी सूक्ष्म चीज़ है! विगत व्यक्तित्व को महज आधार के रूप में ग्रहण किया जाता है और चैत्य पुरुष के भावी क्रम-विकास की अपनी आवश्यकताओं के अनुसार एक नवीन व्यक्तित्व का निर्माण किया जाता है। अगर वही पुराना व्यक्तित्व फिर से उत्पन्न हो, तब तो वह ठीक अपने उसी पुराने ढंग से कार्य करेगा और इस तरह कार्य करने का कोई मतलब ही नहीं होगा।

कर्म के दायित्व से मुक्ति

श्री अरविन्द: कर्म के दायित्व से छुटकारा पाने के लिए तुम्हें अपने अहं से, अर्थात् अपने मानसिक, प्राणिक और अन्य व्यक्तित्वों से मुक्त होना होगा।

शिष्य: यदि कोई अपने दायित्व को स्वीकार किये बिना कर्म करे, तो वह मुक्त हो जायगा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री अरविन्दः यह इतना आसान नहीं है। तुम कोशिश करके देख सकते हो। तुम ऊपर से कह तो सकते हो कि तुम जिम्मेदार नहीं हो, पर अपने अन्दर तुम अनुभव करोगे कि तुम जिम्मेदार हो।

इस जिम्मेदारी से मुक्त होने के लिए तुम्हें सबसे पहले अपनी चेतना में मुक्त होना होगा। इस मुक्ति को प्राप्त करने के तीन उपाय हैं:

(१) पुरुष को प्रकृति से पृथक् करके प्रकृति से उनकी मुक्ति को अनुभव करना; (२) विश्व से, विश्वप्रकृति से अपनी आत्मा को मुक्त अनुभव करना और (३) ऊर्ध्व में स्थित परात्पर भगवान के साथ तादात्म्य स्थापित करना– परमात्मा का साक्षात्कार प्राप्त करना। तुम बौद्धों के शून्य में विलीन होकर भी मुक्ति प्राप्त कर सकते हो।

शिष्य: क्या दूसरे और तीसरे उपाय में पुरुष साक्षी बना रहता है ?

श्रीअरविन्दः यह आवश्यक नहीं। पहली अनुभूति में ऐसा होना सम्भव है, क्योंकि पुरुष अपने को प्रकृति से अलग कर लेता है और तब साक्षी हो जाता है। दूसरी अनुभूति में, आत्मा की अनुभूति में, विश्व या उनकी क्रियाओं का साक्षी होने की कोई आवश्यकता नहीं। आत्मा किसी चीज़ को देखे बिना अन्त :– संमाहित स्थिति में बना रह सकता है। ऐसी बहुत सी अवस्थाएँ हैं, जिनमें से आत्मा गुजर सकता है।

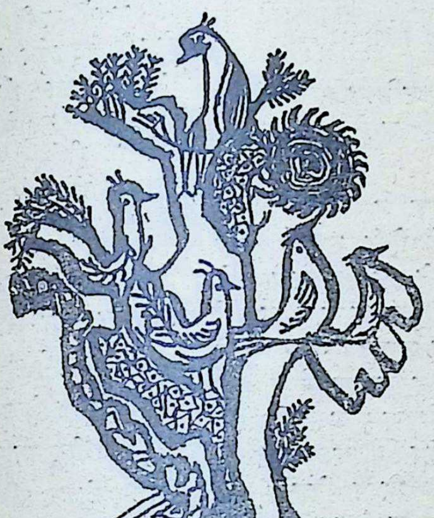

एक प्रकार के निर्वाण का अनुभव इस योग के लिए भी ज़रूरी है। उस अनुभव में यह जगत् तुम्हारे लिए ऐसा बन जाना चाहिए, मानो वह कुछ भी न हों, क्योंकि अभी यह जगत् जैसा बना है, वह अज्ञात का एक कार्य है। केवल उसके बाद ही तुम सच्ची सृष्टि के अंदर यहाँ दिव्य सत्य और ज्योति के जगत् को उत्पन्न कर सकोगे।

आत्मा

शिष्य: श्री कृष्ण गीता में कहते हैं: "तुम सब में आत्मा को और आत्मा में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और फिर मुझमें सबको देखोगे।" यहाँ आत्मा से क्या तात्पर्य है ?

श्री अरविन्द: यहाँ आत्मा का अर्थ है, ब्राह्मी चेतना। तुम एक चेतना को सब में देखते हो और एक आत्मा में सब को धृत देखते हो और फिर उस एकतम की अनुभूति में ऊपर उठ जाते हो, जो साकार और निराकार दोनों है और दोनों से परे हैं।

जागतिक समस्या

शिष्य: जब हम अभिव्यक्ति की इस समस्या पर विचार करते हैं, तो इससे थक जाते हैं।

श्री अरविन्द: थक जाना ही पर्याप्त नहीं है। मनुष्य में ऐसी शक्ति होनी चाहिए कि वह या तो इस क्रम-विकास में से बाहर निकल कर मुक्त हो जाय, अथवा किसी ऐसी चीज़ को उपलब्ध करके मुक्त हो जाय, जो उसे क्रम-विकास में न बाँधे रखे। बहुत से योगी जब जगत से परे आत्मा या वैश्व चेतना में चले जाते हैं, तब वे अपने द्वारा विश्व चेतना को कार्य करने देते हैं और उन्हें अपने व्यक्तिगत उत्तरदायित्व का बोध नहीं होता। वे उच्चतर चेतना में एकाग्र होते हैं या उसके साथ एकात्म हो जाते हैं और उनकी प्रकृति कभी-कभी असंयमित होकर कार्य करती है। उसी स्थिति में तुम उन्हें गन्दी भाषा का प्रयोग करते हुए देखते हो, जिसके विषय में 'द' शिकायत करते हैं। योगी आचार-व्यवहार या शिष्टता के नियमों से बँधे नहीं हैं।

दूसरी कठिनाई है— अधिकांश योगी बहुत बुरे दार्शनिक होते हैं और वे अपने अनुभवों को मन की भाषा में नहीं व्यक्त कर सकते। परन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि उन्हें कोई सच्चा अनुभव नहीं हुआ है। वे लोग जो कुछ चाहते हैं, उसे पा जाते हैं और वे उसी से सन्तुष्ट रहते हैं। वे अपने मानसिक विकास की कोई परवाह नहीं करते। जब तुम किसी योगी में ऐसी चीज़ देखना चाहते हो, जिसे पाने की उसने कभी परवाह की, तो तुम श्रीमती बेट्समैन (Batesman) की तरह निराश हो जाते हो, जिन्होंने यह शिकायत की है कि महर्षि (श्री रमण महर्षि) फर्श पर ही थूक देते हैं। ऐसी क्रियाओं का आध्यात्मिकता के साथ कोई सरोकार नहीं।

"......बाहरी प्रकृति आपातदृष्टि असंबद्धता का क्षेत्र बन जा सकती है, यद्यपि भीतर में सब कुछ आत्मा की ज्योति से उद्भासित होता है। अतएव हम बाहर में जड़ और निष्क्रिय बन जाते हैं, स्वयं सचलन होकर परिस्थिति-विशेष या अन्य शक्तियों द्वारा चालित होते हैं (जड़वत्), यद्यपि भीतर में चेतना ज्योति पूर्ण होती है, अथवा एक बच्चे के जैसे बन जाते हैं, यद्यपि भीतर में परिपूर्ण आत्म-ज्ञान होता है (बालवत्), अथवा उद्दण्ड और अस्तव्यस्त आत्मा बन जाते हैं, यद्यपि भीतर में आत्मा की स्थिति और पवित्रता बनी रहती है (पिशाचवत्)।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

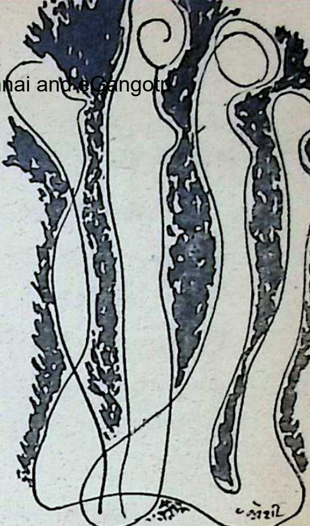

डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन

लश्कर

कभी 'लश्कर'[1] था
के कारवाँ का
बार ठहरा तो
नहीं कर सका,
मुक्त जीवन का
बार रुका तो रुका।
कहो 'कम्पू'[2]
कैम्प नहीं दिखते कहीं
पास चारों ओर
ही बस्ती है,
से चहल पहल
से पस्ती है।
तुम चाहो तो शान मार सकते हो,
हमारा भी था बड़ा बुलन्द इक़बाल
भी थे मालामाल,
में हमारी भी निराली रही हस्ती है।
हस्ती तो चलनेवालों की हुआ करती है
मद में झूमते हैं मदक्की सिर्फ़,
है आज यहाँ
कहाँ लगता है,
जहाँ का तहाँ
पड़ा रहता है।

---

[1] ग्वालियर में जहाँ पहले पहल महादाजी सिंधियाकी सेना ने पड़ाव डाला था, उसे आज तक लश्कर कहते है। [2] उसके पास के मुहल्ले को अब भी 'कम्पू, कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मास्टर जे. कृष्णमूर्ति

सत्य, जो समग्र में है, खण्ड में नहीं

नवीन भारत के मुक्त चिन्तकों में, मास्टर जे. कृष्णमूर्ति का व्यवितत्व और वाणी अप्रतिम है। उनके एक प्रवचन के सार-भूत अंश यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं। दुखः के निराकरण के लिए, उनके द्वारा प्रस्तुत यह समाधान, मौलिक सत्य-दर्शन की ज्योति से उद्भासित है।

शब्द बहुत महत्वपूर्ण है, बड़ा मानी रखता है। वस्तु से, व्यक्ति से हमारा सम्वन्ध शब्द की मार्फत है। हम उन्हें सीधे नहीं जानते, शब्द के माध्यम से जानते हैं। हर शब्द का अपना एक इतिहास है: समग्र मानव मन का अनेक कालान्तरों का संचित स्मृतिज्ञान उसके पीछे है। हर शब्द की अपनी एक परम्परा है। युग-युग की राजनीति, इतिहास, समाज, धर्म, ज्ञान-विज्ञान, मनोविज्ञान, रीति-रूढ़ि की पुंजीभूत सह-स्मृतियाँ हर शब्द के पीछे हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि शब्द मुक्त नहीं है, वह बंधा हुआ है, हमारे अवचेतन मन के संचयित अभिज्ञान से वह सम्बद्ध है। हम स्वतंत्रता की बात करते हैं, मुक्ति को अपना लक्ष्य घोषित करते हैं। चाहे धर्म-पुरुष हो, राजनेता हो, समाज-नेता हो; कलाकार हो, हर कोई यही कहता है कि हमारा लक्ष्य है स्वतंत्रता, स्वाधीनता, मुक्ति। हर कोई अपने-अपने तरीक़े से इस मुक्ति की परिभाषा करता है। ऐसी हर परिभाषा में उसके [illegible] प्रवक्ता व्यक्तियों के अपने न्यस्त अभिप्राय, आकांक्षाएँ, स्वार्थगर्भित रहते हैं और मुक्ति के नाम पर चलने वाले ये सारे आन्दोलन, अभिव्यक्तियाँ परिणाम में नये बन्धनों की सर्जना करती हैं। इतिहास ने हर मुक्ति के दावे और [illegible] को टूटते देखा है। कहना चाहता हूँ कि शब्द अपने आप में कुछ बहुत विश्वास करने लायक नहीं है। कुल मिलाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...एक छल है, एक धोखा है, एक ...ता है।

एक शब्द है: "वृक्ष"। यह शब्द "वृक्ष" स्वयं पदार्थ वृक्ष नहीं है। पदार्थ और उसका वाचक शब्द दोनों एक नहीं हैं। पदार्थ 'वृक्ष', शब्द 'वृक्ष' से अलग है, ...हीं बहुत अधिक है। शब्द "वृक्ष" के भीतर पदार्थ वृक्ष का समग्र बोध और साक्षात्कार नहीं है। वह वृक्ष का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं कराता। वह एक परोक्षसीमित माध्यम है, जो प्रत्यक्ष ...से हमको अलग करता है: समग्र ...के ज्ञान से हम... वंचित रखता है। इसी से कहना चाहता हूँ, कि परम्परा से भाषा में जो हर वस्तु, व्यक्ति, भाव, विचार के लिए नियत शब्द चले आ रहे हैं– वे ...वस्तु, व्यक्ति, विचार का सम्पूर्ण ...कलन करने के लिए विश्वसनीय माध्यम नहीं हैं। प्रत्येक शब्द के सामने आते ही कुछ परम्परागत सह-स्मृतियाँ (associations) सामने आती हैं। 'वृक्ष' कहते ही डालियाँ, पत्तियाँ, धड़ आदि कुछ चीज़ों की स्मृति जगती है, और उसी के सहारे हम वृक्ष को जान लेने का दावा करते हैं। लेकिन ये सह-स्मृतियाँ सीमित हैं, ये वस्तु का समग्र स्वरूप नहीं हैं। इसी से इनके समुच्चय के प्रतीक शब्द भी सीमित हैं– वे वस्तु के समग्र स्वरूप का ज्ञान नहीं करा सकते।

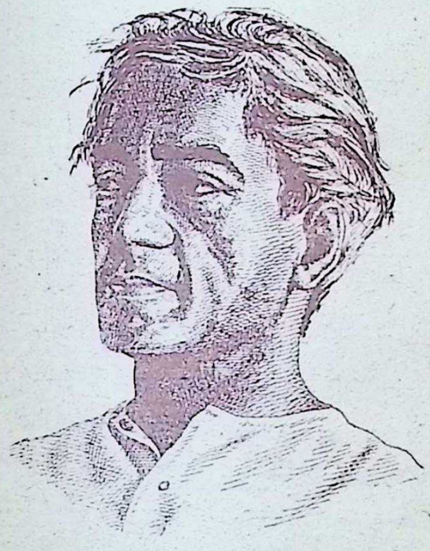

मास्टर जे. कृष्णमूर्ति

'मृत्यु' शब्द भयानक क्यों ?

वे शब्द ही हैं, जो हमारे सारे भयों, दुखों, संशयों, निराशाओं के कारण हैं। परम्पराओं में संसार-स्वरूप को जिसने जैसा देखा, पाया, समझा, अपने बोध के अनुसार अनेक शब्दों में कहा। गतिमान जीवन में चढ़ाव-उतार है, सुख-दुख है, आशा-निराशा है। हर कुछ पल-पल बदलता दिखायी पड़ता है। इस द्वन्द्व और परिवर्तन के रहस्य को, स्वरूप को, प्रत्यक्ष न जानने के कारण मनुष्य पद-पद पर निराशा और दुख झेलता है। वह द्वन्द्व और परिवर्तन से ... ता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी खोज में जाता है, उसे पा लेने का दावा करता है। धर्मों और धर्म-गुरुओं ने मोक्ष और नित्य-सनातन, अमरत्व के साक्षात्कार की बात इसी निराशा और द्वन्द्व की प्रतिक्रिया के फल-स्वरूप कही है। हर काल और हर देश के धर्मों, धर्माचार्यों, पैग़म्बरों और दार्शनिकों ने, मृत्यु और दुख के भय को जीतने के लिए, किसी पारलौकिक, नित्य-सनातन, अमरत्व या स्वर्गीय जीवन का आश्वासन दिया है– जिसमें मनुष्य सारे भयों, दुखों-द्वन्द्वों से मुक्ति पाकर, किसी स्थिर, ध्रुव अपरिवर्तनीय सत्य में परम सुख और शान्ति का लाभ कर लेता है। हजारों वर्षों की मानवीय संस्कार-परम्परा में मृत्यु और परिवर्तन को अनेक शब्दों के माध्यम से भय और दुख का कारण घोषित किया गया है। इन शब्दों के माध्यम से ही मौत और परिवर्तन को लेकर हमारी सारी अनुभूतियाँ और भावनाएँ बनती हैं। 'मृत्यु' शब्द के उच्चारित होते ही, जो भयानक वस्तु हमारे सामने आती है, वह स्वयं मृत्यु नहीं है: वह स्वयं मृत्यु का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं है। वह 'मृत्यु' शब्द के भीतर युग-युगों से जो भय की सहस्मृतियाँ संचित होती आयी हैं, उसी की एक मनोवैज्ञानिक पुनरावृत्ति है। पर यह आवश्यक नहीं है कि मृत्यु अपने आप में इतनी भयानक वस्तु हो। मृत्यु शब्द की जो परिभाषा मानवीय ज्ञान में स्थिर हो गयी है, उसी में इस भय का मूल है।

जीवन परम सत्य

भगवान, स्वर्ग, नित्य-सनातन अमर तत्व, कोई विशुद्ध ध्रुवस्थिर सत्य, आदि धर्मों, दर्शनों और योग-अध्यात्म में पोषित होती चली आयी. ये सारी धारणाएँ, वस्तु और जीवन-जगत के वास्तविक स्वरूप को उसकी समग्रता में न जानने के कारण, उसकी परिवर्तनशीलता और द्वन्द्वात्मकता से भयभीत होकर, उनसे भाग कर, किसी पारलौकिकता में पलायन करने की भावना में से निर्मित हुई है। इनके भीतर कोई सत्य नहीं है। युग-युगान्तरों से परम्पराओं में चले आये इस असत्य का मैं पर्दाफ़ाश करना चाहता हूँ। मैं कहना चाहता हूँ, सनातन जैसी कोई वस्तु है ही नहीं। यह अनन्त गतिमान जीवन ही अपने आप में परम सत्य है।

उदाहरण के लिए आप मृत्यु के भय को ही लें। क्यों आप मौत से भयभीत हैं? क्योंकि मौत की भयानकता की एक धारणा युग-युगान्तर से मानव के अवचेतन मन में वास करती चली आयी है। अनेक धर्मों और धर्म-गुरुओं ने उस भयानकता को अपनी वाणी में समर्थन दिया है, और उसके विरुद्ध अमरत्व और नित्यत्व की उपलब्धि को स्थापित किया है। मौत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द से सम्बन्ध इन सारी सह-स्मृतियों से अपने मन को मुक्त करके आप स्वयं मृत्यु को-सामने लेकर उसे समझिए, देखिए, उसका साक्षात्कार करिए। आप 'मृत्यु' शब्द को अलग हटाकर—प्रत्यक्ष मौत की उस विभीषिका को सम्मुख होकर उसके तल तक जाइए, उससे होने वाले सारे भयों के आक्रमण को अपनी चेतना में झेलिए– और उसके सम्मुख जिज्ञासा भाव से अविचलित रहिए। आप पायेंगे कि आप के मृत्यु-भय के मूल में है अपने परिचित जगत वे बिछुड़कर किसी अपरिचित जगत में खो जाने का भय। वह उस अज्ञान का भय है, जहाँ मृत्यु के बाद आप को जाना है। पर मैं कहता हूँ– इस अखण्ड गतिमान जीवन के बाहर– कहीं और कुछ नहीं है। इस परिचित जगत-जीवन से अलग, परे कोई अपरिचित, अज्ञान जैसी वस्तु है ही नहीं। इस जीवन जगत को प्रत्यक्ष रूप से, अपने प्रत्यक्ष अनुभव से, बिना किसी कारण के आरोप के, अपने प्रत्यक्ष साक्षात्कार से आप जितना ही अधिक जानेंगे, हर भय, दुख और द्वन्द्व उतनी ही मात्रा में तिरोहित होता चला जायेगा।

दुखों का निराकरण

सारे दुखों, भयों का अन्त सीखने की प्रक्रिया में है। जीवन अपने वास्तविक रूप में सीखने की इसी प्रक्रिया की एक शृंखला है। अपने हर दुख-द्वन्द्व को हम पहले से ही समस्या बना कर न देखें– और उसके निवारण के बाहरी उपायों में शरण न लें क्योंकि ऐसा हर उपाय किसी दूसरे दुख को जन्म दे सकता है। हम हर दुख, भय, शोक और कष्ट का सामना करें; हम उसकी सम्पूर्ण भीषणता के साथ उसके नग्न रूप में उसका साक्षात्कार करें।

दुख, द्वन्द्व, समस्या इसलिए है कि हम वस्तु को, जीवन को उसकी समस्याओं को, द्वन्द्वों को, खण्ड में देखते हैं। उस खंड या अंश को आधार बना कर ही सम्पूर्ण या समग्र सत्य का निर्णय या मूल्यांकन करते हैं। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ, खण्ड के द्वारा समग्र का आकलन सम्भव नहीं है। इस जगत को, जीवन को, अपने सारे भयों को, शंकाओं को, द्वन्द्वों को, समस्याओं को समग्र जीवन के प्रकाश में देखो। समग्र ही अपने-आप में सम्पूर्ण सत्य है। हर व्यक्ति का मन समग्र मानवता का मन है– हर व्यक्ति की समस्या समग्र मानवता की समस्या है। उसका हल समग्र मानवता, समग्र जीवन की अखण्ड अनुभूति और दर्शन में है। जब हम समग्र के भीतर अपने दुख, शोक, द्वन्द्व, समस्या, संघर्ष को देखेंगे, तो अनायास वे तिरोहित हो जायेंगे। समग्र को समक्ष पाते ही, हमारा मन एकदम निर्द्वन्द्व, निर्विकल्प, शान्त, शून्य हो जायेगा? और इस शून्य के भीतर से ही सृष्टि होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टीफ़ेन स्पेंडर

महाकवि रिल्के की रहस्यानुभूतियाँ

बीसवीं शती यूरोप के सर्जकों में, जर्मनी के महाकवि रिल्के की काव्य-वाणी एक अगमगामी आध्यात्मिक अनुभूति से ज्वलन्त और पारदर्शी हो उठी है। रिल्के निरे कवि नहीं थे, सम्वेदना के क्षेत्र में, वे वस्तु के अन्तः सत्य के साक्षात्कारी द्रष्टा थे। उनकी कुछ अध्यात्मिक अनुभूतियों का यह विवरण उनके व्यवितत्व और उनकी उपलब्धि को समझने में सहायक हो सकता है।

वर्ड्सवर्थ ने "सत्ता के अज्ञात आयामों और रूपों" की बात कहीं है। डी. एच. लारेंस की तरह ही रिल्के भी इन अज्ञात सत्ता–स्वरूपों के प्रति अतिशय संवेदनशील था। एल्डुस हक्सले ने लारेंस के विशिष्ट और लाक्षणिक गुण के रूप में इस चेतना का ज़िक्र करते हुए इसे 'अन्यरूप' या 'अन्यभाव' (otherness) की चेतना कहा है। रिल्के अपने इस प्रकार के कुछ रहसिल और अर्ध-रहसिल अनुभवों को वहुत महत्त्व देता था। इनमें से सबसे अधिक उल्लेखनीय अनुभव उसे 'स्क्लॉस डुइनो' के उद्यान में सन् १९१२ में हुआ था। उसके एक वर्ष बाद उसने स्पेन में उस अनुभव का अत्यन्त सचोट और यथेष्ट वर्णन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया था– जिसे उसने शीर्षक दिया था– 'इरलेबनिस' अर्थात् 'अनुभव।' उसने कहा था कि उस अनुभव ने उसे प्रतीति करायी कि 'कथन में आ सकने वाली जगतियां यथार्थ में पर्याप्त नहीं जान पड़तीं। अपने जीवन के वाद के वर्षों में वह जिस 'अन्यभाव' की चेतना से अधिक से अधिक आच्छन्न होता चला गया, उसे इस कथन से अधिक स्पष्ट रूप से प्रकाशित नहीं किया जा सकता।

डुइनो दुर्ग के उद्यान के ढलान पर, जो समुद्र की ओर जाता है, रिल्के को एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अद्भुत वस्तु का साक्षात्कार हुआ। रिल्के की आदत थी कि वह अक्सर हाथ में कोई किताब लेकर चहलकदमी किया करता था। उस दिन ऐसे ही उद्यान के ढलान पर चक्कर काटते हुए, वह झाड़ीनुमा दरख्त के कन्धे तक ऊँचे, एक दो डालों से बने खाँचे में अधलेटा-सा हो गया। और इस आसन से बैठे-बैठे ही अचानक उसे अननुभूत कम्पन-लहरियाँ उसके भीतर प्रवाहित होने लगीं। उसे प्रतीति हुई कि इससे अधिक मृदुल कम्पन से वह कभी नहीं भरा था: उसका शरीर स्वयं ही मानो आत्मा हो गया था; और उसने एक ऐसे प्रभाव को ग्रहण करने योग्य बना दिया, जैसा कि सामान्य शारीरिक अवस्थाओं में अनुभव होना

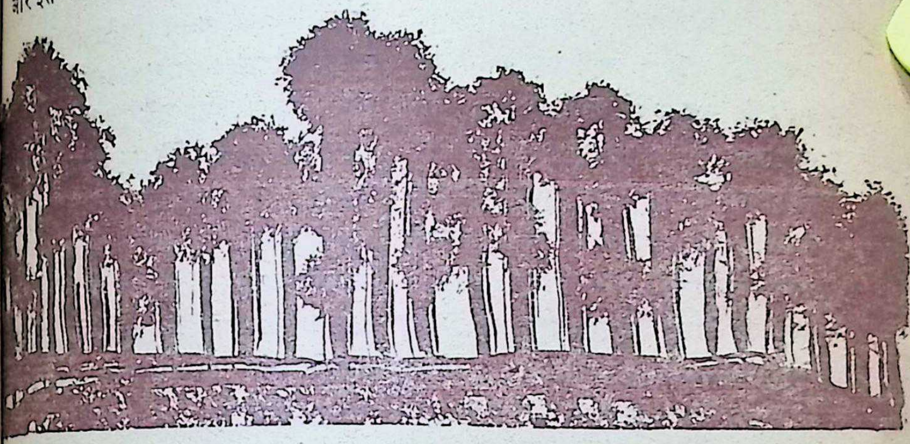

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

ऐसा अनुभव हुआ, जैसे उसे एक अत्यन्त सुखद अवलम्ब और गहरा आराम मिल गया है। वह पढ़ना बन्द कर ज्यों का त्यों बैठा रह गया। वह सम्पूर्ण रूप से प्रकृति का अंश हो गया और एक अचेतन ध्यान में डूब गया। धीरे-धीरे उसकी एकाग्रता एक ऐसी अनुभूति में जागी, जिसे उसने पहले कभी नहीं जाना था। ऐसा लगा मानो कि उस वृक्ष के भीतर से कोई सम्भव नहीं था। जैसाकि रिल्के का सामान्यतः स्वभाव था, अपने भीतर घटित होने वाले कोमलतम प्रभावों की वह स्वयं से कैफ़ियत लिया करता था। सो अत्यन्त आग्रहपूर्वक उसने उस क्षण अपने से पूछा– कि "उसे यह क्या हो रहा है ?" और तुरन्त ही उसके भीतर से जो अभि-व्यक्ति हुई उसने उसे सन्तुष्ट कर दिया: उसने अपने आपसे कहा कि 'वह प्रकृति की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी ओर चला गया है!' जैसाकि प्रायः किसी स्वप्न में होता है, इस अभि-व्यक्ति ने उसे आनन्द दिया, और उसनें उसे निर्वाध रूप से सत्य मान लिया। सर्वत्र और अधिकाधिक, निरन्तर इस चेतना से वह परिपूर्ण होता चला गया। अजीब भीतरी अन्तरालों से उसमें इस अनुभूति की पुनरावृति होती चली गयी। अपने ही आपके प्रति उसका शरीर अनिर्वच रूप से संस्पर्शशील हो उठा, उस शरीर का अब कोई उपयोग नहीं रह गया सिवा इसके कि वह उसमें विशुद्ध रूप से और सतर्कभाव से विद्यमान रहे। मानो कि कोई प्रेतात्मा, जो पहले ही अन्यत्र रहने लगा है, इस दुनिया में उदास भाव से प्रवेश करता है, जिसे बहुत ही हल्के-फुल्के ढंग से छोड़ दिया गया है, ताकि वह निहायत लापरवाही से फिर से इस दुनिया का होकर रह सके, जो कभी उसके लिए अपरिहार्य थी।

धीरे-धीरे अपने चारों ओर निगाह डालते हुए, अपने उसी आसन में स्थिर रहते हुए उसने आसपास की इस सारी जगती को पहचाना, उसका स्मरण किया, एक दूरगामी प्रीति के भाव से उसकी ओर मुस्कुरा दिया, उस सबको उसने उसी तरह रहने दिया, जो बहुत पहले कभी था, किन्हीं बहुत पहले गुज़र गयी परिस्थितियों में था, और जिसने कभी उसके जीवन में हिस्सा बंटाया था। उसकी दृष्टि एक पक्षी का पीछा करती चली गयी: एक छाया ने उसका ध्यान आर्कषित किया: जिस राह से वह पक्षी जा रहा था– और जिस पंथ में वह खो गया, उसने उसे एक तल्लीन अन्तर्दृष्टि से भर दिया: वह राह उसे विशुद्धतर दिखायी पड़ी, क्योंकि उसे प्रतीति हो गयी थी, वह उससे मुक्त और स्वतंत्र हो गया है: वह उस पर निर्भर नहीं करता। उसका निवासस्थान अन्यत्र कहाँ था, यह विचार उसकी चेतना से परे था: पर उसे ऐसा लग रहा था, जैसे वह इस सब में लौट रहा है, वह इस शरीर में ऐसे खड़ा है, जैसे एक परित्यक्त खिड़की के चौखटे में खड़ा हो और बाहर पर पार देख रहा हो: कुछ क्षण के लिए उसे इस बात की इतनी दृढ़ प्रतीति हो गयी थी कि उस समय घर में उसके किसी मित्र का आगमन उसे अत्यन्त निष्ठुर रूप से बाधक लगता, जबकि ठीक उसी समय पोलिग्ज़ेनी यारे-मोन्डाइन या परिवार के अन्य किसी भी सदस्य को वह राह के मोड़ पर पाने के लिए अपने भीतर सर्वथा तैयार था।... सामान्यतः उसे स्पष्ट प्रतीति हो रही थी कि किस तरह सारी ही वस्तुएँ उसकी दृष्टि में दूरागत हो पड़ीं थीं और दूरागत होकर सत्यतर हो पड़ी थीं। यह शायद उसके 'विज़न' के कारण ही सम्भव हुआ था, जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आग की ओर नहीं जाता था और जो वहाँ बाहर खुले में महीनतर होता जा रहा था। मानो कि वह अपने स्वयं के कन्धे पर से पीछे रह गयीं वस्तुओं की ओर देख रहा था, और उनका वह अस्तित्व जो उसके लिए ओझल हो चुका था, उसके जी में एक विगत रसास्वाद का ज्वलन्त रस लेकर उठ रहा था, मानो कि हर वस्तु विदा की कुसुमांजलि से चिह्नित होकर सलोनी हो उठी थी। बारम्बार वह अपने से कह रहा था कि यह स्थिति अधिक टिकने वाली नहीं है, फिर भी इस असामान्य अवस्था के समाप्त हो जाने का उसे कोई भय नहीं था, जैसे कि संगीत में होता है, इस अनुभव से भी एक अनन्त नियमाधीन अन्त की ही प्रत्याशा की जा सकती थी।

सन् १९२५ में रिल्के ने लू एन्द्रिया सेलोम को अपनी नोट-बुक का एक अंश भेजा था, जिसे उपरोक्त 'अनुभव' शीर्षक लेख-खण्ड की पूर्ति कहा जा सकता है और जो सम्भवतः उसी समय लिखा गया था। उसका आरम्भ यों होता है :

"बाद को उसने सोचा कि शायद वह कुछ ऐसे क्षणों को याद में ला सकता है,

[शेष पृष्ठ ६७ पर]

टैक्समाको

टेक्सटाइल मशीनरी कारपोरेशन लि.

वेलघरिया (२४ परगना)

भारत के आधारभूत उद्योगों की सेवा करता है
सुप्रसिद्ध विदेशी प्रतिष्ठानों के सहयोग से निर्माण करता है

- टेक्सटाइल मशीनरी
- विविध किस्म के रॉलिंग स्टाक
- वाटर ट्यूब बायलर सहित सभी प्रकार के बायलर्स
- स्ट्रक्चरल्स
- शक्कर मिल मशीनरी
- कैप्सटन लेथ
- स्टील कास्टिंग और सी. आई. कास्टिंग

मैनेजिंग एजन्ट्स :

बिरला ब्रदर्स (प्राइवेट) लि.

१५, इंडिया एक्सचेंज प्लेस, कलकत्ता--१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वारीन्द्रकुमार वर्मा

●

प्रार्थना

भेदकर व्यक्तित्व अपना
कुछ इस तरह मैं फैल जाता——
शून्य महदाकार के अस्तित्व में ही डूब रहता :
न वात्याचक्र होता, न भँवरों की घिरन ही
न रेत पर अंकित अजाने चिह्न ही।
न होता दुःख न होती सुख की बिछलन
किन्तु होता सिर्फ़
सप्तरंगी किरण–जल से प्लावित——
यह अनन्त आकाश
नीलाभ, स्वर्णिम और स्वर्गिक !

भेदकर व्यक्तित्व अपना फैल जाता
समस्त रागासक्ति, छल और झूठ की परतें
उतर जातीं
और मुझे समझदार कहलाने को
दुनियादारी के लिबास की जरूरत भी नहीं पड़ती :
न झूठी मुस्कानों के आकर्षण, न उनके क्रय–विक्रय
न बेइन्साफी, न बेईमानी
न छल, न बेदर्दी
किसी की भी जरूरत तब नहीं पड़ती !

यह तो मेरा ही अनुराग
जो मैंने अब–तब दुनिया से अपनी बात कही
असफलताओं और सफलताओं के किस्से भी कहते आये
किन्तु उसे मेरी बातों से क्या मतलब ?
वह रागहीन औ' हृदयहीन है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसीलिए ही शायद वह और अधिक कौतुक पसन्द करनेवाली है
और हमारे दुःख-दर्दों पर हँसनेवाली हैः
इसीलिए तो स्मृतियों के जंगल में गहरा उठता धुंआ मिला है
और अहं की देह छिली है
व्यंग और उपहासों से !

दुनिया जैसी रहती आयी है, कल वैसी ही होगी
किन्तु मुझे उन बातों से
जो दुनिया या दुनियादारी की हैं
क्यों मतलब हो
अगर कहीं जल-कीच बीच
विकच कमल-सा असम्पृक्त
मेरा 'स्व' कल को खिल आये ?

हे प्रभु ! तपः–सिद्ध उस भीष्मप्रतीज्ञा का बल दो
और व्याकुल स्नेह-दर्पण में घूमती
उस मीन की भी आँख को पहचानने
और भेद सकने की आज अर्जुन-दृष्टि
और सामर्थ्य दो :
व्यक्तित्व को फिर भेदकर
महदाकार के अस्तित्व में ही
डूब रहने दो !

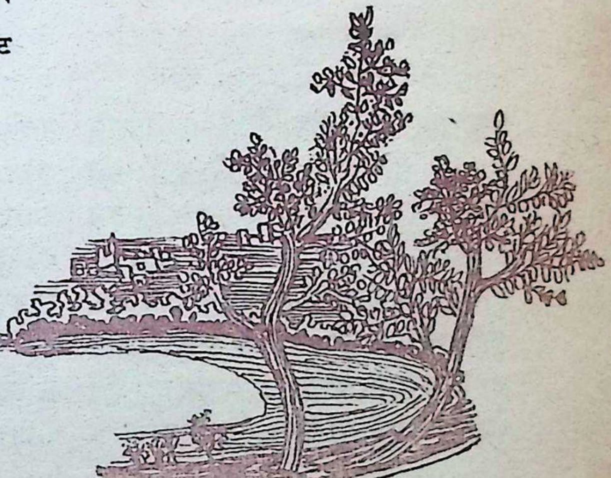

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाजवाद कैसे लाया जाये

समाज-परक जीवन-दर्शन, हमारे युग की अनिवार्य आवश्यकता में से जन्मा है। समाजवाद कोई निरावाद नहीं, वह वर्तमान मानव अस्तित्व की चीत्कार है। महात्मा गांधी इस युग के संवाहक-विश्व-प्रभुओं में रहे हैं। समाजवाद की स्थापना की दिशा में, उनका यह मार्ग-दर्शन, मौलिक सत्य के प्रकाश से संयुक्त है।

समाजवाद एक सुन्दर शब्द है और जहाँ तक मैं समझता हूँ, समाजवाद में समाज के सभी सदस्य बराबर माने जाते हैं– न कोई छोटा न कोई बड़ा। अपने शरीर के अंगों में हम सिर को मात्र इसलिए ऊँचा नहीं मान सकते, क्योंकि वह शरीर के ऊपर स्थित है, या तलुओं को इसलिए नीचा नहीं कहा जा कता क्योंकि धरती को छूते हैं और शरीर के निचले अंग हैं। जैसे हमारे शरीर के सभी अंग समान महत्व रखते हैं, उसी तरह समाज के व्यक्ति भी बराबर हैं। यही समाजवाद है। इसके अन्तर्गत राजकुमार और किसान, धनी और निर्धन, मालिक और नौकर, सभी समान हैं, उनमें कोई अन्तर नहीं हैं। जहाँ तक धर्म का संबंध है, समाजवाद में विभिन्न धर्मों को मान्यता नहीं दी गयी है, यह पूर्ण एक है– इसमें एकता है, अनेकता नहीं।

जब हम पूरे विश्वसमाज पर दृष्टि डालते हैं, तो हमें कहीं भी एकता नजर नहीं आती। सारा समाज विभिन्न वर्गों में बंटा हुआ दीखता है। यह व्यक्ति कुली: है, वह नीच। एक हिन्दू है, दूसरा मुसलमान तो तीसरा क्रिश्चियन। कोई अपने को पारसी कहता है तो कोई सिख। इतना ही नहीं, ये भी विभिन्न उपवर्गों में बंटे हुए हैं। मेरी दृष्टि से, एकता की सार्थकता भी तभी संभव है, जब विभिन्न वर्गों के उद्देश्यों में पूर्ण साम्य हो। इस स्थिति को लाने के लिए हम सब बातों पर दार्शनिक दृष्टि से विचार करना आवश्यक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं समझते। हमारे विचार में [illegible] कुछ करने की ज़रूरत नहीं है, जब तक [illegible] को समाजवाद के अन्तर्गत नहीं ले लिया जाता और इसके लिए हम कोई भी साधन अपनाने को तैयार बैठे रहते हैं। हमने अपने जीवन में कोई परिवर्तन किया नहीं है और हम उद्येष्य की पूर्ति के लिए लेक्चर और पार्टियाँ देने दिलाने में व्यस्त रहते हैं। बाज पक्षी की तरह हम अवसर की ताक में बैठे रहते हैं, कि सामने आये तो झपटकर पकड़ लें। वास्तव में यह समाजवाद नहीं है। जितना हम समाजवाद को इस तरह लाने का प्रयत्न करते हैं, यह हमसे उतना ही दूर होता जाता है।

समाजवाद का प्रारम्भ, जीवन में परिवर्तन करने के साथ होना है। हमें प्रारम्भ के शून्य को हटाकर उसकी जगह 'एक' को स्थापित करना है। ऐसा करने पर वृद्धि होते देर नहीं लगेगी, प्रत्येक बार शून्य बढ़ाने पर संख्या में दसगुनी वृद्धि होती जायेगी। किन्तु प्रारम्भ में ही यदि शून्य है, तो उसके आगे शून्य जोड़ने से कोई प्राप्ति नहीं हो सकती। पहला शून्य आगे भी शून्य [illegible] शून्य बढ़ाते जाना केवल समय की बर्बादी करना है।

समाजवाद स्फटिक के समान स्वच्छ और पवित्र होता है, इसलिए इसे प्राप्त करने के लिए स्फटिक समान साधन अपनाने की ही ज़रूरत है। बुरे या ग़लत साधन अपनाने से अच्छा फल प्राप्त नहीं हो सकता। किसान और राजकुमार की समानता, राजकुमार का सिर काटने से नहीं हासिल की जा सकती, या खूनखराबे की नीति मालिक और नौकर को बराबर नहीं बना सकती। असत्य से सत्य की प्राप्ति असंभव है। सत्य-आचरण द्वारा ही सत्य तक पहुंचा जा सकता है। क्या सत्य और अंहिसा दो चीज़ हैं? इसका निश्चित उत्तर है 'नहीं'। सत्य और अंहिसा एक दूसरे से भिन्न नहीं हैं। वे एक ही सिक्के के दो भाग हैं, जिन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। एक सुखी, आनन्दमय स्थिति की प्राप्ति पूर्ण पवित्रता धारण किये बिना नहीं हो सकती। मन या शरीर में अपवित्रता को आश्रय देते ही असत्य और हिंसा का

[शेष पृष्ठ ६२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिमोहन शर्मा

जब स्वामी दयानन्द ने वायसराय को निराश किया था

तत्कालीन वायसराय लॉर्ड नॉर्थ ब्रुक और स्वामी दयानन्द के बीच हुए वार्तालाप के कुछ अंश यहाँ पढ़ कर, पाठक जान सकेंगे, कि स्वामीजी के सीने में देश प्रेम की आग किस प्रकार उस समय भी धधक रही थी, जबकि राजनीतिक क्षेत्र में गांधीजी तथा अन्य राष्ट्रनिर्माताओं का अवतरण भी नहीं हुआ था।

भारत में ब्रिटिश राज्य के समय के पुराने ऐतिहासिक कागज़ातों में क़रीब सौ साल पुराने ऐसे कुछ कागज़ात भी सुरक्षित हैं, जिनसे पता चलता है कि कांग्रेस की स्थापना से भी पूर्व, 'स्वतंत्र भारतवर्ष की मांग करनेवाले थे---- स्वामी दयानन्द !

वहुत कम व्यक्ति इस तथ्य से परिचित होंगे कि ब्राह्मसमाज के विख्यात नेता केशवचन्द्र सेन स्वामी दयानन्द के प्रशंसकों में से थे, और प्रायः उनके पास धार्मिक विषयों की चर्चा करने आया करते थे। उस काल के ब्राह्मसमाज के कई नेताओं का मत था कि हिन्दुओं के ६ दर्शन शास्त्र–न्याय, योग, मीमांसा, सांख्य, वेदान्त और हिन्दू धर्म के परस्पर विरोधी सिद्धान्त हैं। स्वामी जी से काफी लम्बा शास्त्रार्थ करने के वाद, उन्होंने एकमत से इस तथ्य को स्वीकार कर लिया कि ये सब सिद्धान्त एक दूसरे के पूरक हैं तथा ईश्वर, जीव एवं प्रकृति का परस्पर एकीकरण तथा पूर्णीकरण करते हैं। कलकत्ता में स्वामीजी १६ दिसम्बर, १८७२ को पधारे थे, तथा मार्च, १८७३ तक वैरकपुर रोड स्थित "प्रमोद कानन" में राजा ज्योतेन्द्र मोहन टैगोर के अतिथि के रूप में रहे थे।

अपने क्रांतिकारी विचारों के कारण स्वामी दयानन्द ने सनातनी हिन्दुओं, मुसलमानों और ईसाइयों सभी को अपना विरोधी वना लिया था। उनके विचार वहुधा कलकत्ता से प्रकाशित "इंडियन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...रर" में, तथा ब्रह्म समाज के मुखपत्र "तत्वबोधि पत्रिका" में प्रकाशित होते रहते थे। १८७३ के तीन अंकों (१२ जनवरी, २२ फरवरी, तथा १५ ...) में 'इंडियन मिरर' ने स्वामीजी के प्रकाण्ड पाण्डित्य तथा वैदिक दर्शन के गूढ़ सिद्धान्तों को ग्राह्य कर सकने की उनकी क्षमता की प्रशंसा की थी।

कलकत्ता में स्वामीजी जिन सभाओं में भाषण दिया करते थे, उनमें से अधिकांश का सभापतित्व, कलकत्ता विशप-प्रदेश के एक विशप ग्रहण किया करते थे। ये महानुभाव स्वामीजी के अगाध ज्ञान तथा ईसाई और इस्लाम धर्मों के उपदेशों के तीव्र एवं सूक्ष्म परीक्षण से चकित थे। उनके चकित होने का एक अन्य कारण यह भी था कि स्वामीजी न अंग्रेजी जानते थे, न अरबी।

ऐसा प्रतीत होता है, इन विशप महोदय ने स्वामी दयानन्द के अलौकिक गुणों

स्वामी दयानन्द

का उल्लेख तत्कालीन वायसराय लार्ड नार्थ ब्रुक से किया। वायसराय ने स्वामीजी से मिलने की इच्छा व्यक्त की, और उनके निमंत्रण पर स्वामीजी उनसे भेंट करने के लिए गये। वायसराय और स्वामीजी के बीच हुए वार्तालाप के कुछ अंश पढ़कर पाठक जान सकेंगे कि स्वामीजी के सीने में देशप्रेम की आग किस प्रकार उस समय भी धधक रही थी, जबकि राजनीतिक क्षेत्र में गांधीजी तथा अन्य राष्ट्रनिर्माताओं का अवतरण भी नहीं हुआ था।

वायसराय: मुझे बताया गया है कि आपके मूर्ति-पूजा तथा अन्य रूढ़ियों का प्रबल विरोध करने के कारण हिन्दू और मुसलमान दोनों ही आपके कट्टर शत्रु बन गये हैं। क्या आपको अपने शत्रुओं से कोई भय और खतरा प्रतीत होता है? विशेष रूप से, क्या आप हमारी सरकार से अपने लिए विशेष सुरक्षा चाहते हैं?

[शेष पृष्ठ ६१ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरोजिनी कुलश्रेष्ठ

●

तीन कड़ियाँ

तुम मेरे फूल हो
कहीं भी रहो
स्मृति की गंध तुम्हें मुझ तक ले आयेगी
मैं पहचानती हूँ
मेरे फूल की गंध कैसी है !

तुम मेरी लहर हो
कहीं भी बहो
प्रीति तुम्हें मुझसे ही लाकर टकरायेगी
मैं पहचानती हूँ
तुम्हारी गति कैसी है !

तुम मेरी जिज्ञासा हो
कुछ भी कहो
ज्ञान की गंगा बहा तुम्हें लायेगी
मैं पहचानती हूँ
तुम्हारी मति कैसी है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

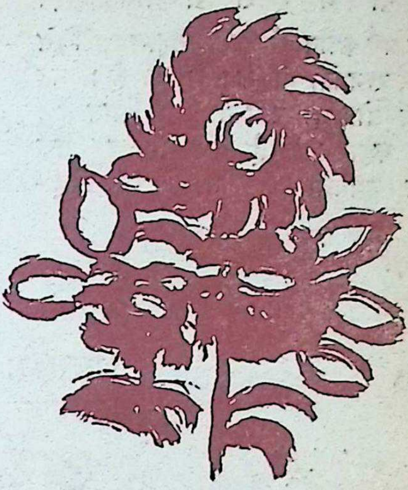

सियाराम शरण प्रसाद

दिशा दो

हृप-सरोवर के मध्य चक्राकार शतदल
निष्ठा के वैभव से पूरित
केन्द्रस्थ का सौरभ,
प्राण-वायु समर्पित कैसे करूँ ?
मध्य की दीवार
...डुबो देनेवाली गहराई
और शैवालयुक्त संचरण
में अकेले का अहम्
विलयन की अर्चना में कैसे
बूंद-सागर के एकाकार से
अपने को गंधहीन करूँ।

ओ ज्योतिर्मय,
काल की परिधि डूबी नहीं
मैं कैसे जल मध्य के रत्नों के
मोहाभिभूत मन को ठौर दूं !

प्रयत्नों की सीमा में असीम को कैसे बांध लूं
मैं...तुम...हम...
कर्मबोध की दिशा में
रोशनी के स्तम्भ के इर्द-गिर्द
अंधकार दौड़ रहा....
किरण की अभ्यर्थना में जागे मन की समग्रता
ऐसे पथ की दिशा दो !
हृप-सरोवर के मध्य चक्राकार शतदल
निष्ठा के वैभव से पूरित
केन्द्रस्थ का सौरभ
प्राणवायु समर्पित कैसे करूँ ?

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयोध्या में दूसरा अतिप्रसिद्ध एवं लोकप्रिय स्थान है, रत्न-सिंहासन, जिसे मंदिर राजगद्दी भी कहा जाता है। यह स्थान मोहल्ला रामकोट में स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि श्रीराम तक सभी सूर्यवंशी राजाओं का इसी सिंहासन पर राज तिलक हुआ और यहीं से वे अपना शासन-सूत्र चलाते थे। महर्षि वाल्मीकि ने भी कहा है :

अयोध्यानगरे रम्ये रत्नमण्डपमध्यगे।
स्मरेत्कल्पतरोर्मूले रत्नसिंहासनं शुभम्॥
तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं नानारत्नैश्च वेष्टितम्।
स्मरेन्मध्ये दाशरथिं सहस्रादित्यतेजसम्॥
पितुरङ्कगतं रामं इन्द्रनीलमणिप्रभम्।
कोमलाङ्गं विशालाक्षं विद्युद्वर्णाम्बरावृतम्॥

भारत के भव्य मंदिर

अयोध्या

[७]

राजगद्दी

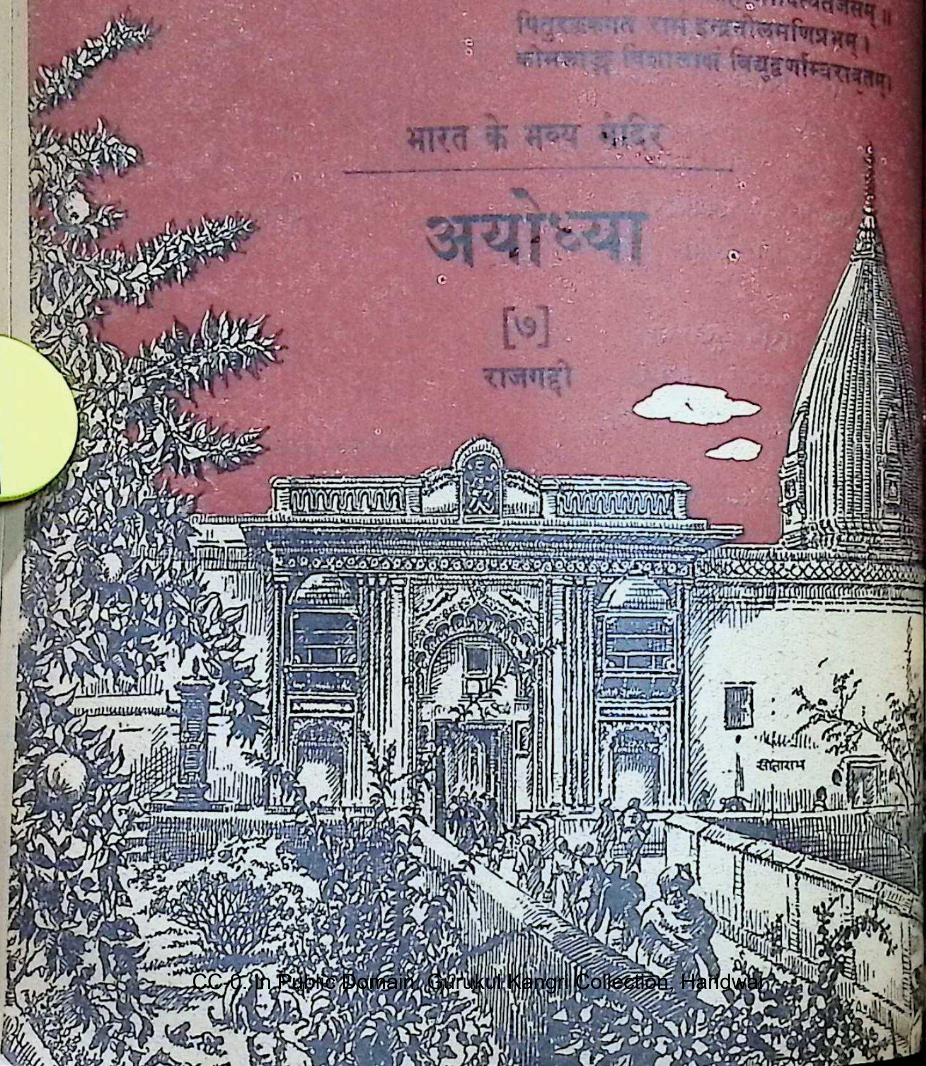

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रख्यात ध्यान-श्लोक में भी राम-दरबार का वर्णन आया है :
...हितं सुरद्रुमतले हैमे महामण्डपे
...पुष्पकमासने मणिमये वीरासने सुस्थितम् ।

भगवान श्रीराम के परमधाम पधारने के पश्चात् अयोध्या का न केवल ... घट गया, अपितु यह खण्डहर-रूप ... गया। महान राजा विक्रमादित्य ने ... पुनीत स्थान का पुनर्निर्माण किया और उन्होंने स्वयं अपने हाथों द्वारा यहां ... की स्थापना की। अभी भी सन्त ... भगवान के रूप में इसकी पूजा होती है और असंख्य भक्त लोग इसका दर्शन-लाभ उठाते हैं। ●

[क्रमशः]

... महल, जहां पर पवित्र राज-सिंहासन (...) स्थित है और जिस पर १४ वर्ष के ... के बाद अयोध्या लौटने पर श्रीराम का ... अभिषेक हुआ था। प्रवेश-द्वार के ऊपर ... की मूर्ति दिखायी दे रही है।

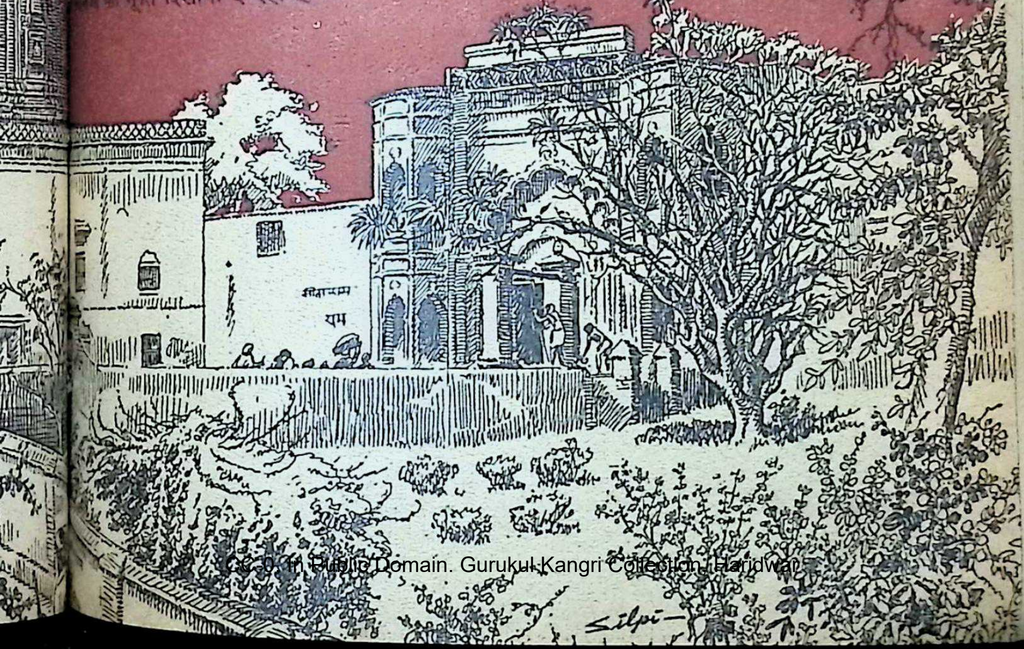

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

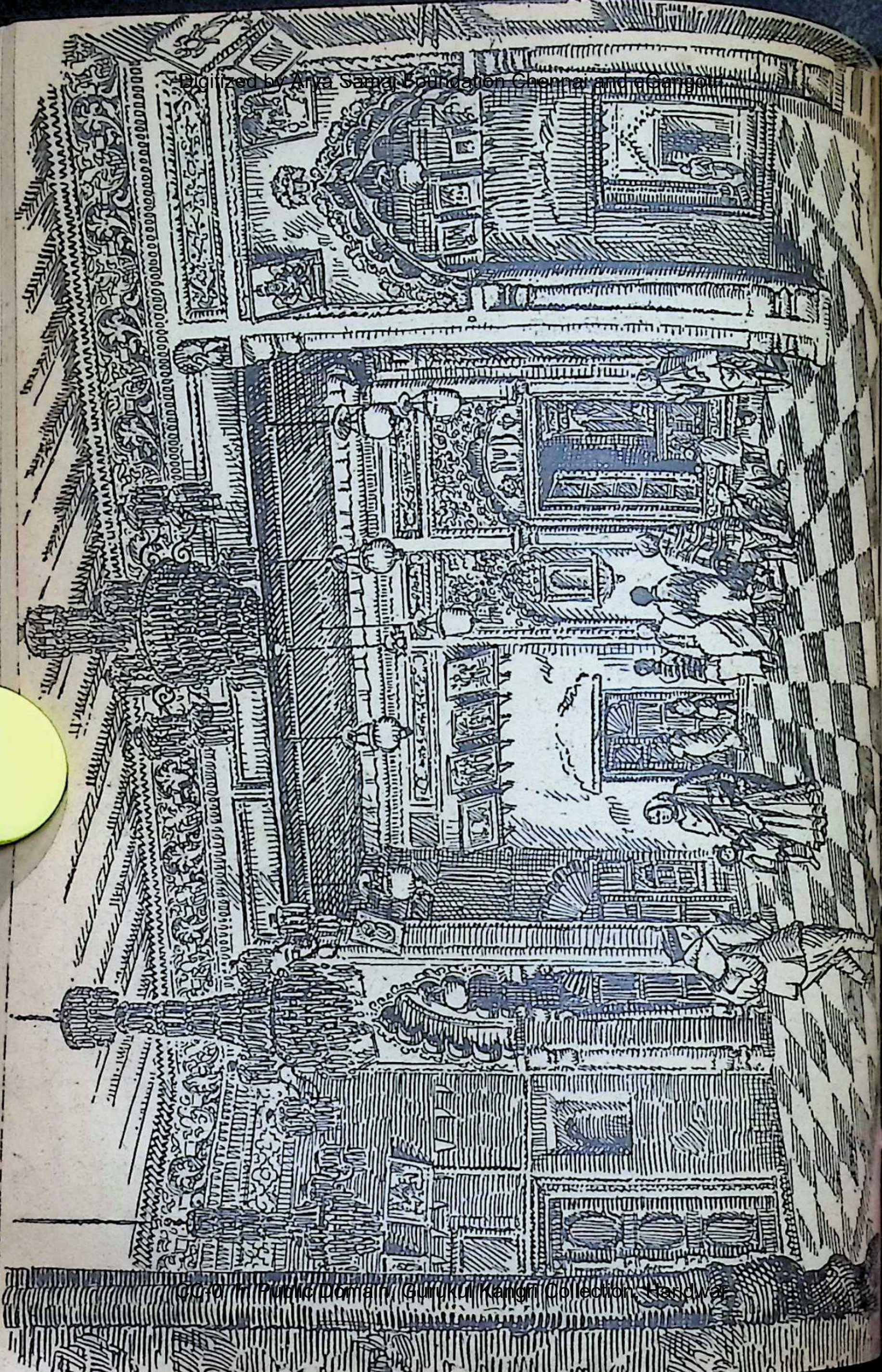

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

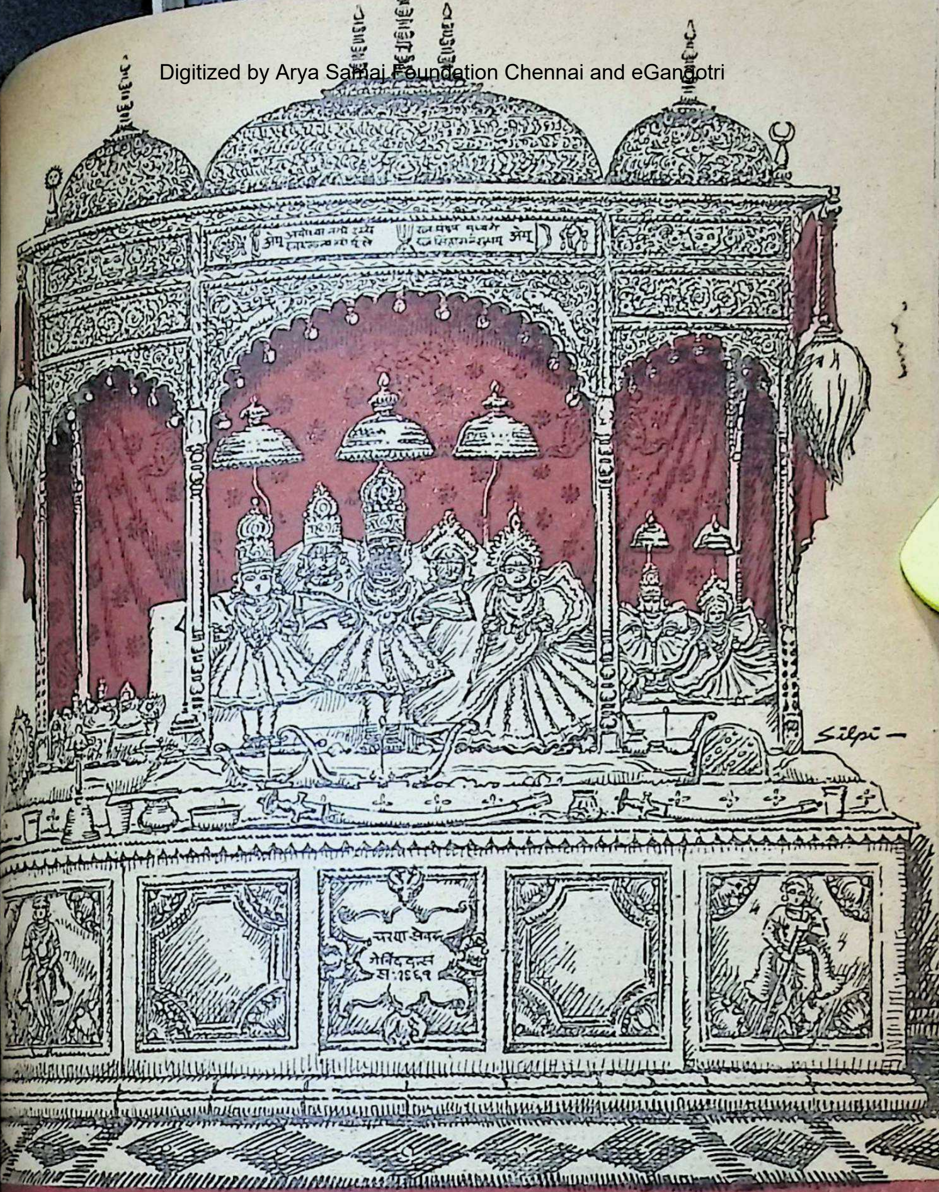

(राजगद्दी) जिस पर श्रीराम, उनके दाहिने पार्श्व में सीताजी तथा बायें पार्श्व में लक्ष्मण विराजमान है। इनके पीछे राजा विक्रमादित्य द्वारा स्थापित सनातन मूर्ति भी दृष्टिगोचर हो रही है।

का गर्भ-भाग। मध्य में सीता तथा राम का अन्तर्गृह दिखायी दे रहा है। दूसरी ओर हनुमान जी की पर श्रीराम ने विभीषण, सुग्रीव तथा हनुमान को उनकी सेवाओं के लिए पुरस्कार दिया था। यहीं पर राम-भक्ति दिखाने के लिए हनुमान जी ने अपना वक्षस्थल भी चीरा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

श्रीमान विश्ववंद्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा को मारना नहीं, उसका उन्नयन करना है

इच्छा को मारने का प्रयत्न स्वाभाविक नहीं है, अस्वाभाविक है। उसे योग्य राह पर मोड़ने की आवश्यकता है। अपने भीतर आतुर इच्छा प्रज्ज्वलित करिए और शुद्ध विचारों में रहने का काम आपको सरल प्रतीत होने लगेगा।

इच्छा को मारना नहीं है, बल्कि उसे सुचारुरूप से विकसित करना है। जो इच्छा को मारने का उपदेश करते हैं, वे जीवन के विनाश का उपदेश करते हैं। इच्छा को मारने का प्रयत्न सफल नहीं होता, क्योंकि इच्छा चैतन्यमय है। मनुष्य में से इच्छा का उच्छेद कर दिया जाये, तो उसकी उन्नति के सारे द्वार बन्द हो जाते हैं। उन्नति के रथ को महावेग से चलाने में इच्छा वाष्प-शक्ति का काम करती है। इच्छा के वेग के अनुपात में ही उन्नति होती है। जहाँ इच्छा मन्द होती है, वहाँ उन्नति का वेग घिसटती गाड़ी जैसा होता है। जहाँ इच्छा तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम होती है।वहाँ उन्नति का वेग विद्युत के वेग जसा होता है। व्यवहार में भी मन्द इच्छा वाले मनुष्य व्यवहार के उत्तम सुखों से वंचित रहते हैं, और तीव्र इच्छा वाले मनुष्य ही उन्नति के शिखर पर स्थापित होते हैं।

इच्छा दुखद नहीं है, पर इच्छा का अयोग्य मार्ग में प्रवाह दुखद है। इच्छा को मारना नहीं है, उसको अवरुद्ध नहीं करना है, पर अयोग्य मार्ग पर प्रवाहित होते इच्छा के प्रवाह को रोकना है। शास्त्र के इस रहस्य को न समझकर, इच्छा को सुविकसित करने के बदले, इच्छा के अयोग्य मार्ग पर बहते प्रवाह को रोककर उसे शुद्ध मार्ग पर मोड़ने के बदले, जो लोग इच्छा के ऊपर ही चारों ओर से खड्ग प्रहार करते हैं, जो हर प्रसंग पर इच्छा का शिरच्छेद करने को तत्पर रहते हैं, वे उन्नति के सारे द्वार स्वयं अपने ही हाथों बन्द कर देते हैं। वे जहाँ होते हैं वहीं के वहीं रह जाते हैं। अग्नि-बुझे इंजन की तरह उनके मनुष्य-शरीर के सारे यंत्र सक्रिय रहते हुए भी वे उन्नति के मार्ग में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक क़दम भी आगे बढ़ने में समर्थ नहीं है, और इस तरह बिना वाष्प का यंत्र जैसे न चलने के कारण जंग खाकर विनष्ट हो जाता है, उसी प्रकार इच्छा-विहीन मनुष्य का शरीर भी पुरुषार्थ के अभाव में मरण-ग्रस्त हो जाता है।

इच्छा को मारने का प्रयत्न स्वाभाविक नहीं है, अस्वाभाविक है। और इसी कारण जो लोग शास्त्र के रहस्य को समझे बिना, इच्छा को मारने का अयोग्य प्रयत्न करते हैं, इच्छा को मारने का सतत प्रयत्न करते हुए भी उसमें रंच मात्र भी सफल नहीं होते। इच्छा को मारने की बातें करते हुए भी, वे अपने अन्तःकरण में लाखों इच्छाओं के अंकुर फूटते हुए देखते हैं। सहदेव का सर काटने का प्रयत्न करते हुए, बलराम ने, जहाँ-जहाँ सहदेव का रुधिर गिरा, वहाँ-वहाँ सैंकड़ों हज़ारों सहदेव प्रकट होते देखे थे। उसी प्रकार इच्छा का नाश करने को उद्यत मनुष्य, अपने अन्तःकरण में अन्य सैंकड़ों-हजारों इच्छाएँ प्रकट होती अनुभव करते हैं। जिस प्रकार दमयन्ती के हाथ के स्पर्श से मरे हुए मत्स्य संजीवित हो उठे थे, ठीक वैसे ही जिन इच्छाओं को हम मरी हुई समझने लगते हैं, वे प्रसंग प्राप्त होते ही फिर संजीवित हो उठती हैं। क्योंकि इच्छा को मारना स्वाभाविक नहीं है। और ऐसे अस्वाभाविक प्रयत्न में इच्छा तो नहीं मरती, मनुष्य अवश्य मर जाता है।

आवश्यकता इच्छा को मारने की नहीं, पर उसे योग्य राह पर मोड़ने की है। बालक यदि बहुत खिलाड़ी है, तो उसकी खेलने की इच्छा को रोकना ज़रूरी नहीं है, पर उसकी खेल की इच्छा को खेल से अधिक सुन्दर विषय देकर, उसमें उसे संलग्न कर देने की ज़रूरत है। जो लोग बालक की इच्छा को अधिक सुन्दर विषय देकर, उसकी खेल की इच्छा के प्रवाह को अन्य मार्ग पर मोड़ने का प्रयत्न नहीं करते, और उसे धाक से या मार से रोकने का प्रयत्न करते हैं, वे बालक को यह बात कभी नहीं समझा सकते कि खेल अच्छी चीज़ नहीं है। यह मार और धाक से रोकी गयी बालक की खेल की इच्छा, प्रसंग प्राप्त होने पर पुनः वेग से उठती है, और लुक्का-चोरी से बालक फिर खेल में प्रवृत्त हो ही जाता है। बालक की खेलने की इच्छा को रोकने का यह उपाय कारगर नहीं है। खेल से अधिक सुन्दर विषय बालक को देना ही, उसकी खिलाड़ी वृत्ति को भुलाने का सफल और यथार्थ उपाय है। इच्छा का विरोध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने की इच्छा रखने वाले मनुष्य को भी ऐसा ही करना चाहिए। क्रमशः इच्छा को अयोग्य विषय में से निकालकर उच्च विषयों में उसे संलग्न करना चाहिए।

कोई भी अमुक विषय अच्छा है, ऐसा निश्चय होने पर उसकी इच्छा अन्तर में प्रकट होती है, और वह प्राप्त करने योग्य है, ऐसी वृत्ति दृढ़ होती है, तब उसे प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। जब तक विषय की प्रियता और योग्यता की दृढ़ प्रतीति नहीं होती, तब तक उसके लिए आतुर इच्छा भी प्रकट नहीं होती। यदि आपके भीतर शुद्ध विचार करने की आतुर इच्छा प्रकट नहीं होती, तो उस इच्छा के प्रकट हुए बिना आप को यदि शुद्ध विचारों को हृदय में धारण करने का काम महासागर पार करने जैसा कठिन लगता है, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। शुद्ध विचारों को धारण करने का काम कठिन महसूस करने वाला और कोई नहीं, बल्कि आपकी दुर्बल इच्छा ही है।

अपने भीतर आतुर इच्छा प्रज्वलित करिए, और शुद्ध विचारों में रहने का काम आप को सरल प्रतीत होने लगेगा। फिर-फिर विचार द्वारा निश्चय कीजिए कि शुद्ध विचारों में रहने से ही सुख की प्राप्ति होती है। और जिस प्रकार कुएँ में जल रहने पर ही बाहर के हौज में जल आता है, उसी प्रकार यदि आपने शुद्ध विचारों में रहकर सुख प्राप्त किया होगा, तो ही आप अन्य लोगों को सुख दे सकेंगे। अपना और जगत का दुःख-निवारण करने का यही एकमात्र उपाय है। आप स्वयं यदि सुखी नहीं हैं, तो दूसरे को क्या सुखी कर सकेंगे? आपके पास ही यदि खाने को अन्न का दाना नहीं है, तो क्या सोचकर आप सारा गाँव नन्यौतने को कमर कसते हैं? शुद्ध विचारों में रहना सीखिए, अपने भीतर सुख का आविर्भाव करिए, और इस प्रकार पहले खुद श्रीमान होकर सर्वत्र सुख का प्रसार कीजिए।

—अनु. विमल के गुप्ता

प रि वा र

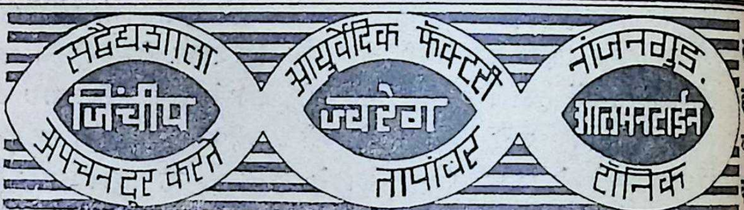

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

सोल एजेन्ट्स:
दी युनायटेड कम्पनी
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास—१

बम्बई—शाखा—२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नव सूर्योदयी कविता: नये हस्ताक्षर

भूली हुई याद

सच मानो,
उस दिन से आज तक
याद नहीं किया तुम्हें।
भूली हुई याद की
धुंधली रेखाएँ कुछ–
मन के किसी एक कोने में–
ऐसी स्थाई हैं–
दाग़ ज्यों पड़ गया हो किसी दीवार पर
बरसों पुरानी जड़ी––
तस्वीर के उतारने से।

–नरेन्द्र दीपक

●

बड़ा दिन

मेरी आखों के सामने
एक तारा था
मोमबत्ती नहीं;
क्योंकि
मोम का टुकड़ा
मेरे मन के अंधकार की धार से
कट गया था
और रह गया था
अधर में रोशनी की बिन्दु
एक चमक लिये पिंड
एक तारा..........
उसका अमर संदेश
बार-बार कौंध रहा था
मैंने उस क्षण पाया
पलंग के शिशु को मसीहा
और कुंवारी मरियम सी
उसकी माँ।
आह! मेरा वह
बड़ा दिन था।

––विश्वेन्द्र ठाकुर

●

विरोध

मुझे
गवाक्ष से
झाँक-झाँक
मत देखो।
ओ बूढ़े सूरज–
साँझ के।
क्योंकि –
मैं......!
नयी पीढ़ी हूँ;
और तुम?
अवशेष प्रातः के!

–आशीष माहेश्वरी

●

मेरे मन में बसो

मेरे मन में बसो,
आत्मा से मिलो,
शरीर में प्रगटो।
जैसे सूर्य–
नभ में बसता है,
प्रकाश से मिलता है,
दिन में दिखता है।

–हरगोविन्द पाराशर

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सन्तोष व्यास Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्मावती

[ऐतिहासिक कहानी]

"देवी ! भगवान बुद्ध के वचनामृत का जो पान करता है, उसे फिर किसी भी वस्तु की तृषा नहीं रहती।...मुझे साम्राज्य की तनिक क्षुधा नहीं... मगध का साम्राज्य अजातशत्रु को मिले, माता चेलना की यह हार्दिक इच्छा थी...अन्तःपुर में मेरे रहने से उसे अधिक पीड़ा थी। उसकी इच्छा पूर्ण हो, इसलिए मैं मगध छोड़ कर भगवान बुद्ध की शरण में चला गया। मुझे दिव्य मार्ग मिल गया है और अब मैं अधिक सुखी हूँ।"

क्षिप्र प्रवाहिनी क्षिप्रा की उद्दाम लहरों पर राज नौका गतिमान थी। उसके एक पट्ट पर मालवमणि परम भट्टारक महाराजा चंडसेन प्रद्योत बैठे हुए थे और दूसरे पर चन्द्र की सी आभा वाले मगधेश विम्बसार। वे विम्बसार, जिन्होंने अपने अतुल पराक्रम एवं राजनैतिक कौशल से मगध को आर्यावर्त के इतिहास में एक विशिष्ट स्थान पर जा बैठाया, उन दिनों उनके यश और सौन्दर्य की गाथा सारे जम्बू द्वीप में गूंज रही थी। वे ही मगधेश विम्बसार मालव महिम प्रद्योत के परम मित्र थे। किसी राजकीय यात्रा से वे यहाँ उज्जयिनी पधारे हुए थे। उज्जयिनी में उन्हें पर्याप्त सम्मान मिला। और....

चन्द्र की चारु किरणें क्षिप्रा की लोल लहरों पर बिखर रही थीं। शीतल सुवासित वायु संचार से वातावरण सुखद बना हुआ था। राज नौका लहरों के साथ क्रीड़ा करती हुई मंथर गति से तैर रही थी। नौका पर बैठे दोनों दिव्य पुरुष राजकीय चर्चा में मग्न थे। सामयिक व्यंग्य चर्चा के कारण वे परस्पर मुक्त हास्य कर उठते। विम्बसार को लक्ष्य कर प्रद्योत कह रहे थे: "आर्य ! काशी जैसे विशाल राज्य को वैवाहिक सूत्रों में बांध कर आपने अपने जिस राजनैतिक कौशल का प्रमाण दिया है, वह अद्वितीय है। इस प्रकार आपने काशी के भय से तो मुक्ति पायी ही, साथ ही एक अप्रतिम सौन्दर्य श्री को भी जीता।"

विम्बसार मधुरता से मुस्करा दिये। दिव्य दंतावलियाँ दमक उठीं, मानो मुक्ता बिखर गये। इष्ट इंगित को लक्ष्य कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ कहने को हुए ही थे कि, उनकी दृष्टि सहसा क्षिप्रा तट से दूर सेट्ठी चत्वर की दिशा में खड़ी भव्य-अट्टालिका के वातायान पर टिक कर स्थिर हो गयी। नाविक ने नौका को परिवर्तन दिया और उनकी ध्यानभंगिमा टूट गयी। उन्होंने अपनी जिज्ञासाभरी दृष्टि मालवेश प्रद्योत की ओर फेरी। प्रद्योत मुक्त हास्य कर रहे थे। वे संभवतः बिम्बसार के हृदय की झंकार के मर्म को जान गये थे, सो बोले: "वातायन में आर्य ने जिस छवि को देखा है, वह अवन्ती की परम सुन्दरी नर्तकी देवी पद्मावती हैं। अनेक सार्थवाह उसके सौन्दर्य की एक झलक भर पा जाने की अभिलाषा में यहां उज्जयिनी में पड़ाव डाले पड़े रहते हैं।"

"हां, ऐसी चर्चा मैंने मगध में भी सुनी थी!" और बिम्बसार ने एक बार पुनः अपनी लालायित दृष्टि उसी वातायन की दिशा में फेरी।

नर्तकी पद्मावती वातायन में खड़ी इसी ओर देख रही थी। उसकी मृणालभुज में सुवासित पुष्प माला थी, जिसे वह स्वयं अपने हाथों से वातायन के परिधान पर सजा रही थी कि उसकी दृष्टि भी दूर नौका पर बैठे बिम्बसार में बिम्बित होकर रह गयी। उसने समीप खड़ी सेविका से पूछा: आलि! महाभट्टारक के साथ आज राज नौका पर यह भद्रपुरुष कौन हैं?"

देवी! सुना है, मगधपति बिम्बसार उज्जयिनी में पधारे हुए हैं। सम्भवतः ये ही ...."

"बिम्बसार! .. यह अलौकिक सौन्दर्य! हाला, जा। आज सारा आवास पुष्प मल्लिकाओं से सजा दे, प्रासाद की हर भित्तिकाओं को सुरभित कर दे, प्रमुख द्वार पर पुष्पों के पाहन बिछा दे... इस शाला में आज मगधपति बिम्बसार आमंत्रित होंगे। मैं स्वतः मालवमहीप से निवेदन कर उन्हें यहां आग्रह पूर्वक लिवा लाऊँगी!"

और दासी के प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही पद्मावती मृगी सी चौकड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरती हुई [illegible] हो गयी। पैंजनियों की मधुर ध्वनि से चतुर सेविका ने आभास लिया कि पद्मावती बड़ी आतुर सी शिविका–वाहक (पालकी उठानेवाले) के कक्ष की ओर जा रही है।

पद्मावती की संगीतशाला वाद्यों की सुमधुर ध्वनियों से गूंज उठी। आज स्वयं पद्मावती अंक में वीणा लिए उसके तारों पर अपनी कोमल उँगलियाँ थिरका रही थीं। वातावरण में मदिरा-सा उन्माद छा गया था। महाराज बिम्बसार अवन्तिकेश्वर प्रद्योत के पार्श्व में बैठे निर्निमेष दृष्टि से पद्मावती के मधु-लावण्य को निहार रहे थे। उनकी दृष्टि पद्मावती की दृष्टि से मिल कर स्थिर हो चुकी थी। वीणा की सरस स्वर-ध्वनि में उलझकर उनका हृदय पद्मावती की कला की गहराई में उतर कर न जाने कहाँ खो चुका था। उनके नेत्रों में तंद्रा के डोरे नाचने लगे।

वीणा को तीन ग्रामों में बजा कर सहसा पद्मावती ने उसे द्रुत से बिलंबित में लाकर बन्द कर दिया। वातावरण में सन्नाटा छा गया।

"श्रेष्ठ ! अद्वितीय !" बिम्बसार अनायास ही बोल उठे: अवन्ती सुन्दरी तुम्हारे स्वरों में तो चमत्कार है।..."

पद्मावती मुस्कुरायी भर, इस समय अर्धरात्रि बीत चुकी होगी। सहसा प्रद्योत उठ खड़े हुए। न चाहते हुए भी बिम्बसार को उठ जाना पड़ा। पद्मावती अपनी दासियों के साथ उन्हें द्वार तक छोड़ने आयी। दंडदीपिका लिए साथ में दो दासियाँ भी थीं। अवनत वदन होकर उसने दोनों महापुरुषों को विदा किया। महाराज प्रद्योत के साथ बिम्बसार अपने दिव्य रथ पर आ बैठे। संकेत पाते ही सारथी ने रथ को राजरथ्या की ओर बढ़ा दिया। पद्मावती दौड़ रहे रथ को अपलक निहारती रही, जब तक कि वह नेत्रों से अदृश्य न हो गया।

पद्मावती नियमित बिम्बसार के आमंत्रण को स्वीकार कर राज्य की अतिथि-शाला में पहुँचती, वहाँ उन्हें अपनी नृत्यसेवा से प्रसन्न करती। इसी प्रकार दिन से सप्ताह और सप्ताह से पक्ष बीतते चले गये। मगधपति बिम्बसार और पद्मावती का यह मिलन जन-चर्चा का विषय बन गया। हट्टिका, चौराहों, नगर-द्वार- जहाँ देखो वहाँ– सभी जगह यही चर्चा सुनने में आती कि पद्मावती के सौन्दर्य ने महाराज बिम्बसार के हृदय को जीत लिया है। उसके प्रणय में वे डूब गये हैं। निःसंदेह महाराज बिम्बसार देवी पद्मावती को मगध की पट्टमहिषी का पद देंगे। यह अवन्ती का परम गौरव होगा, जब मगध जैसे विशाल साम्राज्य की साम्राज्ञी अवन्ती सुन्दरी पद्मावती बनेंगी!"

कृष्णपक्ष की रात्रि थी। पद्मावती के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकाश पर दीप टिमटिमा रहे थे। लगभग दो दंड रात्रि का समय हुआ होगा जब राजरथ पद्मावती के आवास के समक्ष आकर रुका। दिव्य-रत्नों से सज्जित रथ के आवरण को एक सेवक ने अलग हटाया। महाराजा बिम्बसार नीचे उतरने का उपक्रम करने लगे। न जाने क्यों पद्मावती अभी तक द्वार पर ही खड़ी हुई थी। दौड़ कर स्वयं उसने अपने हाथों से एक स्वर्णपीठिका रथ के नीचे बिछा दी। उस पर पैर रख कर महाराज बिम्बसार रथ से नीचे उतर आये।

आज पद्मावती अधिक प्रसन्न थी। उसने अपने त्वगात्र को और दिनों से अधिक सजा-संवार रखा था। मुख पर पद्मराग का लेपन था। ललाट पर पुखराज की भांति तिलक चमक रहा था। नितम्ब तक झूल रही वेणु अनेकानेक सुवासित पुष्पों से आच्छादित थी। मृणालनाल सी भुजाओं को फैला कर उसने सादर निवेदन किया "महाराज! पधारें, अनुगृहीत करें!"

किन्तु बिम्बसार का मुख आज न जाने क्यों गम्भीरता लिये हुए था। उनके नेत्रों में उदासीनता स्पष्टतः झलक रही थी। रुंधे से शब्दों में बोले: "नहीं, देवी! आज मैं आवास में नहीं चल सकूँगा!"

"आर्य! क्यों..!" पद्मावती ने आश्चर्य से पूछा।

"मैं [illegible] तुमसे अंतिम विदा लेने आया हूँ।"

"महाराज....!" पद्मावती पर जैसे भारी शिला टूट पड़ी।

"हाँ देवी!' बिम्बसार गम्भीर होते हुए बोले: "कल ही एक चर आया है। गंगा पार के वज्जीगण मगध पर आक्रमण करने की चेष्टा कर रहे हैं। यदि मैं ऐसे अवसर पर नहीं पहुँचा, तो अनर्थ होगा। शुभे, मुझे बिदा दो ताकि मैं विद्रोहियों का दमन करने में समर्थ हो सकूं।"

पद्मावती के नेत्रों से सहसा अविरल अश्रु धारा बह निकली। फिर भी धैर्य रख कर बोली: "आपको ऐसे अवसर पर रोक कर मैं किसी अनर्थ की भागी नहीं बनूंगी। मैं आपको बिदा देती हूँ– आप जायें और विजयी होवें!"

"देवी!" बिम्बसार का कंठ रुग्ण हो गया। बोले: "लगता है, तुम मुझे हृदय से बिदा नहीं दे रही हो।'.

पद्मावती के नेत्रों में अब अश्रु प्रवाह और भी बढ़ गया। वह बोली: आर्य! यह स्मरण रहे, पद्मावती ने जीवन में प्रथम बार किसी को अपने शरीर के स्पर्श का अवसर दिया, तो वह मगधपति बिम्बसार को! जिस सौन्दर्य को पाने में अवंतीपति प्रद्योत भी वंचित रहे, वह सदा–सदा के लिए आप का बन गया। आप सुखपूर्वक जायें, किन्तु आपके प्रेम की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरोहर मेरी क्षुद्र [illegible] कोख में बनी रहेगी। और....."

"पद्मावती!" बिम्बसार चौंक उठे: "तुम गर्भवती हो?"

पद्मावती कुछ भी नहीं बोली। उसने अपने झरते नेत्रों को अवनत कर लिया।

"महाराज! बिलम्ब हो रहा है!" समीप खड़े राजसेवक ने आग्रह किया। बिम्बसार विचलित थे। बोले: "देवी! वह शुभ दिन आये, तो मुझे मगध में संदेश भिजवाना....मैं तुम्हें लिवाने स्वयं दौड़ा आऊँगा!"

पद्मावती अधिक अधीर थी। कुछ भी न-बोली। बिम्बसार चले गये, पर उसने अपनी दृष्टि फिर भी ऊपर न उठायी। अश्वों की पद्ध्वनि से ही उसने यह आभास पा लिया था कि अब बिम्बसार उससे बहुत दूर चले गये हैं। और पागल की भाँति दौड़कर वह अपने आवास में आ गयी। पर्यंक पर पड़ी अपनी भुजाओं में मुख छिपाकर न जाने कब तक रोती रही।

पूरे दस वर्ष बीत गये!

इस मध्य इतिहास ने अनेक करवटें लीं। बिम्बसार अब प्रौढ़ हो चुके थे। उन्होंने काशी के समान ही वज्जीराज्य से भी वैवाहिक संबंध जोड़ लिये थे। परिणामस्वरूप वज्जियों से उन्हें पर्याप्त मात्रा में संपदा तो मिली ही, साथ ही वे उनके परम हितू हो गये। वज्जीसाम्राज्य [illegible] की कुमारी [illegible] को पत्नी के रूप में पाकर बिम्बसार फूले न समाये। बाद में उन्हें जिससे अजातशत्रु जैसा रूपवान पुत्र हुआ। अब उनके जीवन में चहुँदिश सुख ही सुख था। वे मगध को छोड़कर राज-गिरि को अपनी राजधानी बना चुके थे, जिसकी मृत्तिका को स्वयं भगवान अभिज्ञान (बुद्ध) ने अनेकों बार पवित्र किया।.. फिर भला बिम्बसार से बढ़ कर बड़भागी कौन?

उस दिन मगध में महोत्सव मनाये जा रहे थे। महाराज बिम्बसार के जन्म-दिवस का समारोह था। राजसभा हर्षो-ल्लास से परिपूरित थी। चहुँदिश जय-निनाद गुंजित हो रहा था। महाराज के समक्ष नगर के सभी श्रेष्ठियों ने भेंट प्रस्तुत कीं। कवि-कोविदों ने गीत गाये। संगीतज्ञों ने संगीत सुरभि से वातावरण को सरस बना दिया। सभा का वातावरण सुखमय बना हुआ था। सभा विसर्जित होने को थी कि उसी क्षण जनभीड़ को चीरती हुई एक भद्र युवती सभा के मध्य उपस्थित हो गयी। उसके पार्श्व में एक सुकुमार किशोर भी था। उस सुकुमार को महाराज बिम्बसर के चरणों पर झुकाती हुई वह बोली: "महाराज, चिरायु होवें! महाराज के जन्मदिवस के उपलक्ष में मैं अवन्ती की नर्तकी पद्मावती अपनी ओर

[शेष पृष्ठ ६४ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...शचन्द्र शाह

...चना के सन्दर्भ : एक जिज्ञासा

[लेखांक : २]

रचना चिरन्तन मानव प्रकृति है, और विशिष्ट स्वभाव भी। वह रचनाकार का स्वधर्म, उसकी कल्पना और उसका अध्ययनानुभव भी है। पर जैसा कि प्रस्तुत-चर्चा से स्पष्ट है, वह इन सब चीजों के अलावा कुछ और भी है। 'उस कुछ और' के अन्तर्गत युग, परिवेश, प्रक्रिया...गरज़ यह कि कुछ भी आ सकता है।

किन्तु, जब एक ही व्यक्ति के अन्दर रचना और आलोचना दोनों शक्तियों का समरस विकास देखने को मिलता है, तो इस टाइप वाली बात की प्रामाणिकता में सन्देह होने लगता है। कॉलरिज का 'टाइप' क्या माना जाय—आत्मोन्मुख विचार? या आत्मोन्मुख अन्तर्वेधि? इसी प्रकार अज्ञेय के कृतित्व का वैविध्य भी किसी एक 'टाइप' के अन्तर्गत नहीं समझा जा सकता। किन्तु, आलोचक कवियों को छोड़ भी दें, तो केवल कवियों, मसलन धर्मवीर भारती और वीरेन्द्रकुमार जैन में जो अन्तर्मुख विचार, अन्तर्मुख 'फीलिंग' और बहिर्मुख ऐन्द्रिकता का एक संयुक्त विस्फोट परिलक्षित होता है, उसे किसी एक 'टाइप' के अन्तर्गत कैसे समझा जा सकता है। कोई ऐसी चीज़ अवश्य होनी चाहिए, जो रचनाकार को उसके अपने स्वभाव-स्वधर्म से निरपेक्ष (अतिरिक्त) इतर संवेदनाओं को वहन करने की सामर्थ्य देती है। कॉलरिज और स्वयं युंग ने भी 'कल्पना' में यह सामर्थ्य देखी थी। किर्केगार्ड शायद 'अध्ययनानुभव' पर अधिक बल देते। टी. एस. इलियट 'अध्ययन' का रचनात्मक महत्व स्वीकारेंगे ही। इस अध्ययन की बात पर भी रचनाकारों को तीन प्रकारों में बाँटा जा सकता है। एक तो वे जो अध्ययन से लगभग उदासीन रहते हैं और जिनकी रचना 'आत्मलीन' रहकर ही संतुष्ट और सुरक्षित अनुभव करती है;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे वे, जिनमें अपने रचनात्मक व्यक्तित्व को अपने अध्येता से अस्पृष्ट रखने का आग्रह काम करता है; और तीसरे वे जिनके लिए सृजनशीलता और अध्ययनशीलता समान रूप से अनिवार्य होती हैं और जो बिना एक सुदीर्घ अध्ययन चिन्तन के रचना में प्रवृत्त होते ही नहीं। ऊपर चार्ल्स डिकेन्स और लैम्ब की चर्चा हुई है। हम पाते हैं कि जहाँ तक कल्पकशक्ति और 'ह्यूमर' का प्रश्न है, दोनों तुलनीय हैं, किन्तु यह लैम्ब की 'स्कालरशिप' ही है, जो उसे डिकेन्स से अलग उसका शिष्ट व्यक्तित्व प्रदान करती है। दोनों के रचना-प्रकारों व रचना-शैलियों में जो गहरा अन्तर है, उसका एक प्रमुख कारण यह 'अध्ययन' है। अध्ययन 'रचना' को प्रभावित भी कर सकता है और प्रेरित भी। यहाँ पर इस सन्दर्भ में वाणभट्ट की 'आत्मकथा' का उल्लेख भी प्रासंगिक होगा।

रचना के प्रेरक तत्त्वों तथा रचना और रचनाकार के सम्बन्ध पर विचार कर लेने के बाद रचना के 'क्यों' और 'कैसे' पर भी थोड़ा बहुत चंचुप्रहार किया जा सकता है। यहाँ भी सीधे सिद्धांत-चर्चा में न उलझ कर दृष्टांतों को लेकर चलना श्रेयस्कर होगा, क्योंकि 'रचना' की परिस्थितियाँ तथा उसकी प्रक्रिया भी हर रचनाकार के साथ बदलती रहती हैं— उसके स्वभाव, अध्ययन और शक्ति के अनुरूप। रडयार्ड किपलिंग ने रचना-प्रक्रिया के प्रश्न पर कहा था कि "प्रेरणा का भूत (Demon) जब अन्दर से हावी होने लगे, तो रचनाकार को अपना सारा तर्क और विचार स्थगित करके चुपचाप उसे आत्मसमर्पण कर देना चाहिए।" किपलिंग जैसे आत्मतुष्ट अबौद्धिक रचनाकार के लिए यह सीख देना बहुत सरल था। किंतु आज के शंकाग्रस्त, दिग्मूढ़ सर्जक के लिए रचना-प्रक्रिया का प्रश्न इतना सरल नहीं हो सकता। मूल्यमूढ़ता से ग्रस्त इस युग में हर प्रेरणा रचनाकार की बुद्धि के सम्मुख प्रश्नचिह्नित होकर आती है। एक अजीब, किन्तु दुर्निवार आत्मचेतना के वशीभूत वह अपने ही कथ्य के प्रति–उसके प्रभाव, यहाँ तक कि उसकी सार्थकता के प्रति संशयालु हो उठा है। सिर्फ कथ्य ही नहीं, संप्रेषण के स्तर पर भी यही संशयात्मकता उस पर छायी रहती है। विज्ञान ने शब्द की महिमा घटा दी है। रूपकाभिव्यक्ति का परम्परागत मार्ग भी अवरुद्ध कर दिया है, क्योंकि रूपक की सम्प्रेष्यता उसके बारे में कुछ सर्वमान्य धारणाओं पर निर्भर करती है। विज्ञान एक-एक करके इन धारणाओं का ही आपरेशन किये दे रहा है। इस तरह रूपक निर्जीव हुए जा रहे हैं और अभिव्यक्ति-संप्रेषण की समस्या जटिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गी है। पहले युगों की रचना के समक्ष सुचिन्तित लक्ष्य अथवा परिणाम रहता क्योंकि प्रेरणा और संप्रेषण दोनों स्तरों रचनाकार अपने आप में और अपने क में आश्वस्त रहता था। स्पष्टही, संप्रेषित वस्तु की पूर्णता रचनाकार का होती है, तब स्वतः उसकी रचना-प्रक्रिया में सचेतन तत्त्वों का प्राधान्य होता है। किन्तु, जब एक विघटित, वाता-वरण के दवाव में रचनाकार अन्दर-बाहर कोई निश्चिति, कोई उद्देश्य, कोई आश्वासन नहीं पाता, तो उसकी रचना व्यक्तित्व की किसी सार्थक, समग्रात्मक उपलब्धि से निराश होकर 'व्यक्तित्व' से पलायन की ओर अग्रसर होने लगती है। एक ओर वह स्वयं को प्रेरणात्मक उत्साह और संकल्पजनित आस्था से वंचित अनुभव करता है, तो दूसरी ओर बुद्धि के स्तर पर गलत समझे जाने या अधूरा समझे जाने की भयभीत आत्मचेतना से अर्थात् असम्प्रेष्यता के नरक से घिरा हुआ स्वयं को पाता है। ऐसी हालत में उसकी सारी रचनात्मक प्रतिभा 'प्रक्रिया' पर केन्द्रित हो जाती है। जो संकल्प, जो आस्था उसे किसी धर्म, दर्शन या सामाजिक व्यवस्था से नहीं मिल पाती, उसको वह रचना-प्रक्रिया के रहस्यान्धकार में निमज्जित होकर पाना चाहता है। प्रक्रियावाद एक प्रकार का रहस्यवाद ही है–बुद्धिवादी का रहस्यवाद। अत्यधिक आत्म-चेतना की घुटन और व्यक्तित्व-हीनता के आतंक से बचने का ही उपक्रम है यह। आज शिल्प और रूपतंत्र के प्रति जो एक अभूतपूर्व अनुरक्ति दीखती है, उसके मूल में यही युग की मूल्यमूढ़ धुरीहीनता से आक्रान्त मानव की एक 'डेस्परेट' चेष्टा है : अपने 'व्यक्तित्व' की (वीरेन्द्रकुमार जैन के शब्दों में 'सत्ता के ध्रुव केन्द्र' की) तलाश की चेष्टा। शायद इसीलिए आज के अधिकांश कवियों की शुरुआत 'कथ्य' की बजाय 'शब्द' से और प्रेरणा की जगह 'बिम्ब-दर्शन' से होती है। मेरा आशय यह नहीं है कि यह एक वाञ्छनीय स्थिति है; न यही कि यह मनोवृत्ति अनिवार्य और निरपवाद रूप से युग की विशिष्ट रचनात्मक विवशताओं से प्रेरित,–अतः ईमानदार है। सचाई तो यह है कि बड़ा रचनाकार वही है, जिसमें अपने युग की इतिहासजन्य विवशताओं से पूर्णतः संपृक्त हो चुकने पर भी–उनसे जूझते हुए और उन्हें अभिव्यक्ति देते हुए भी–उनके पार देखने और पार पहुँचने की तड़प और निष्ठा सक्रिय रहती है। तथा जो अपने चारों ओर फैले संकट और विघटन के बीच भी 'स्थिति के सम्यक् दर्शन' की बात कर सकता है–जिसके लिए रचना व्यक्तित्व से पलायन मात्र न होकर 'सत्ता का समग्र बोध

[शेष पृष्ठ ६८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमानन्द रस्तोगी

रवीन्द्रनाथ की संगीत साधना

कविगुरु रवीन्द्रनाथ केवल कवि ही नहीं थे, वे हमारे युग में भारत की रसेश्वरी आत्मा के अवतार-पुरुष थे। साहित्य, संगीत, कला, शिल्प तथा अन्य सारी ही जीवन-विद्याओं को उनकी देन अपूर्व है। कविता की तरह ही संगीत भी उन्हें जन्मजात सिद्ध था। उनकी संगीत-साधना पर यहाँ डाला गया प्रकाश, उनके व्यक्तित्व के एक महत् आयाम को उद्घाटित करता है।

साहित्य यदि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ का ऋणी है, तो संगीत एवं चित्रकला भी उनके चिर ऋणी हैं। साहित्य को उन्होंने नयी धारा दी, तो संगीत को नया जीवन। बंगाल के आधुनिक संगीत की आज जो सर्वाधिक लोकप्रिय शैली है, उसे रवीन्द्र संगीत की संज्ञा ही उपलब्ध हो गयी है। वह संगीत के जितने बड़े साधक थे, उतने ही बड़े युग-प्रवर्तक भी। बंगाल के संगीत को प्राचीन परम्पराओं से घिरी सीमित संकुचित चहारदीवारी से निकाल कर मुक्त वातावरण-प्रदान करने का महान श्रेय रवीन्द्रनाथ को ही है। उन दिनों बंगाल का संगीत, उस्तादों और धनी व्यक्तियों के घरों में ही क़ैद था। जन साधारण से उसका सम्पर्क उतना ही था, जितना राज-भवन में रहनेवाले राज्यपाल का फुटपाथ पर जीवन व्यतीत करनेवाले किसी लावारिस से होता है। जन साधारण अपना मनो-रंजन, लोक-संगीत तथा कीर्तन आदि से करता था। गवैयों की महफ़िलें पुरानी परम्पराओं में जकड़े हुए प्राचीन संगीत से ही मुखरित होतीं थीं, जिसका रसास्वादन करना जनसाधारण के वश के बाहर की बात थी। रवीन्द्रनाथ ने प्राचीन राग-रागिनियों के मुक्ति का मार्ग प्रदर्शित करके जनसाधारण के सम्पर्क में ला खड़ा किया।

भारतीय संगीत में समय-समय पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिवर्तन होते रहे हैं। जिस काल में जैसी जनरुचि होती है, उसी के अनुसार संगीत का स्वरूप भी बदलता रहता है। बंगाल में वैसे तो चौदहवीं शताब्दी के ही लगभग संगीत में परिवर्तन घटित हुआ था। विष्णुपुर के राजाओं की चेष्टा तथा दिल्ली एवं अवध के गायकों के सहयोग से वहाँ हिन्दी शैली पर नवीन शास्त्रीय संगीत धारा का सूत्रपात हुआ था। इस धारा का समय-समय पर विकास होता रहा। रवीन्द्रनाथ ने भी इसी विष्णुपुरी हिन्दी गान-शैली को ही अपना आधार बनाया था।

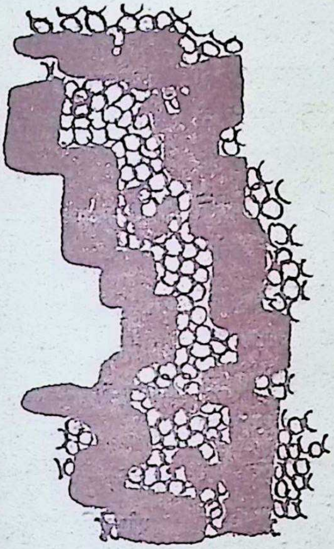

चित्र : ज्योतीन्द्र जैन

सामान्यत: भारतीय संगीत साधकों के तीन दल हैं– एक वह जो स्वर को प्रधान मानता है और गीत की शब्दावली एवं भाव को गौण; दूसरा वह जो भाव को प्रधान तथा स्वर को गौण मानता है एवं तीसरा वह, जो स्वर और भाव दोनों को ही समान महत्व देता है। रवीन्द्रनाथ इसी तृतीय श्रेणी के साधक थे। उनका विश्वास था कि संगीत की मधुरिमा भावग्राह्यता एवं रसानुभूति में सहायक होती है। सुन्दर से सुन्दर पद को पढ़ने मात्र से वह आनन्द प्राप्त नहीं हो सकता, जो उसे सुमधुर स्वर में गाये जाने पर सुनने से हो सकता है। गेय पद मानव हृदय पर शीघ्र एवं शाश्वत प्रभाव डालते हैं। परन्तु यदि भाव की उपेक्षा करके केवल ताल-स्वर का ही ध्यान रक्खा गया और शब्दों को केवल आलाप और तानों की भूलभुलैया में ही डाल दिया गया, तो वह क्षणिक चमत्कार-पूर्ण आवश्यक हो सकता है, पर चिरन्तन आह्लाद-कारी नहीं हो सकता। संगीत में स्वर और भाव का पति-पत्नी सा अविच्छिन्न संबंध है, इस सत्य को रवीन्द्रनाथ ने समझा था और अनुभव किया था। इसी अनुभूति को साकार करने के लिए उन्होंने अपने मधुर गीतों को नयी मधुर राग-रागनियों के धागे में पिरोया, जिससे गीत की आत्मा व्यर्थ की तानों और आलापों के जाल में खो न जाये और न ही कर्णकटु शब्दों की भरमार रागिनी का गला ही घोंट दे।

ज्ञान मानव जीवन की सार्थकता है, परंतु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुष्क ज्ञान जीवन में सरसता नहीं ला सकता, उल्लास नहीं भर सकता। ज्ञान और सरसता दोनों ही जीवन के आवश्यक अंग हैं। एक के बिना दूसरा अपूर्ण है। रवीन्द्रनाथ ने इसकी अनुभूति की थी और उसी का प्रतिफल शान्तिनिकेतन की स्थापना थी। उन्मुक्त विश्व प्रकृति की गोद में नियति के हास और उल्लास के संस्पर्श में ज्ञान की उपलब्धि कराने के लिए ही उन्होंने शान्तिनिकेतन की स्थापना की थी। इसीलिए सामान्य पाठ्य-पुस्तकों की शिक्षा के साथ-साथ शिल्पकला, नृत्य-संगीत, नाट्याभिनय आदि की भी उन्होंने उचित व्यवस्था की थी। नृत्य, संगीत तो शान्तिनिकेतन के पावन वातावरण का प्राण ही रहा है। ब्राह्म मुहूर्त में जागरण-गान से निद्रा भंग होकर जहाँ कर्म में रत होने की प्रेरणा मिलती है, वहाँ दिवावसान के पश्चात् दैनिक कर्म की समाप्ति पर मधुर गान दिन भर की कर्म-कोलाहल-जन्य क्लान्ति को क्षण भर में धो देता है।

शान्तिनिकेतन में विशेष उत्सव, अनुष्ठानादि अवसरों पर गुरुदेव स्वयं उपस्थित रहते थे तथा नाट्याभिनय एवं संगीतादि के कार्यक्रमों में भाग लेते थे। मधुर राग-रागनियों से आवेष्ठित उनके हृदय-स्पर्शी गीत मानस-पटल पर अंकित हो जाते थे और लोग विमुग्ध होकर उन गीतों की मधुरिमा एवं भावधारा में खो जाते थे। उन्होंने कतिपय गीतिनाट्यों की भी रचना की थी, जो शान्तिनिकेतन के समारोहों के अवसर पर अभिनीत होते थे। इन गीतिनाट्यों में भावानुकूल रागिनी तथा छन्दों की संयोजना जिस प्रकार उन्होंने की थी, उससे उनकी संगीत सचना की अद्वितीय क्षमता का परिचय मिलता है। उन्होंने भारतीय उच्चांग संगीत एवं बंगाल के लोक-संगीत दोनों को ही उनमें संजोया था। इसी कारण उनके नृत्य-नाट्य एवं गीति नाट्य बंगाल के संगीत जगत की एक अपूर्व सृष्टि हैं।

यहाँ यह उल्लेख कर देना अप्रासंगिक न होगा कि रवीन्द्रनाथ को संगीत प्रेम अपने पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ से उत्तराधिकार स्वरूप मिला था। देवेन्द्रनाथ भारतीय संगीत के रसज्ञ एवं परम पुजारी थे। संगीत से उन्हें बड़ा अनुराग था। इसलिए उन्होंने अपने पुत्र-पुत्रियों को भी संगीत शिक्षा दिलवाने के लिए तत्कालीन श्रेष्ठ संगीताचार्यों को नियुक्त करके समुचित व्यवस्था की थी। बाल्यकाल में रवीन्द्रनाथ के कोमल मन में संगीत की जिस सुन्दर एवं गम्भीर प्रतिमा को प्रस्थापित किया गया था, वह उनके जीवन में चिरकाल के लिए आसीन हो गयी थी। परवर्ती काल में उसी प्रतिमा पर अपनी साधना के फूल चढ़ा कर वह सतत उसकी पूजा में निरत रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीत उनके अःन्तकरण की स्वतः प्रेरणा थे। उन्हें गीत लिखने के लिए प्रयत्नशील होकर बैठना नहीं पड़ता था। पर्वत के छोटे छिद्र से निकलने वाले स्रोत के समान गीत स्वतः उनके अन्तःकरण से प्रस्फुटित होते थे, उनकी वाणी स्वयं उन्हें स्वर प्रदान करती थी। उनकी भावाभिव्यक्ति का माध्यम ही गीत थे।

प्राचीन काल में गीत-काव्य रचयिताओं के लिए आवश्यक था कि वे संगीतज्ञ तथा सुरज्ञ भी हों, कारण उस समय संगीत के आदर्श को अक्षुण्ण रखने की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था। जिस राग-रागिनी की नींव पर गीत की इमारत खड़ी की जाती थी, उसे राग-रागिनी के पूर्णतया अनुकूल होना आवश्यक समझा जाता था। परन्तु आधुनिक युग में पाश्यात्य प्रभाव के कारण हमारे देश में कतिपय कविगण गीत-काव्य में स्वर के बंधन को अनावश्यक मानने लगे। परन्तु वे चिरसंचित संगीत प्रेम एवं गीतों में स्वर की उपादेयता की उपेक्षा न कर सके। रवीन्द्रनाथ ने भी इस अन्तर्निहित प्रबल कामना की अनुभूति की ओर देश के अन्यान्य कवियों की ही भांति प्राचीन राग-रागिनियों की विशाल प्राचीर पर खड़े होकर स्वच्छंद रूप से अनेक भावों और रूपों में गीतों की रचना की। उनके गीतों के छन्दों में भी इसी कारण परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। अपने पूर्ववर्ती कवियों की भाँति लम्बी-लम्बी पंक्तियों वाले छन्दों का उन्होंने प्रयोग नहीं किया। ध्रुपद के समान ही उनके गीत भी प्रायः चार विभागों में विभक्त रहते हैं—स्थायी, अन्तरा, संचारी और आभोग। ये विभाग उन्होंने ध्रुपद के अनुकरण पर ही किये थे।

उनके गीतों में वहुधा विचित्र राग-रागिनियों का समावेश देखने में आता है, जिससे वहुतों को यह भ्रम होना स्वभाविक है कि वह कुशल संगीतज्ञ नहीं थे। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं था। यह उनकी वहुज्ञता का प्रतिफल था। हिन्दी राग रागिनियों ने उन्हें अत्यधिक प्रभावित किया था। उनकी मधुरिमा में वह आत्म विस्मृत हो उठते थे और उन्हीं को गुनगुनाते-गुनगुनाते उन्हीं स्वरों को वह बंगला भाषा में साकार कर देते थे। उनके बहुत से गीतों का आधार हिन्दी गीत हैं। हिन्दी के काफी राग के ध्रुपद—

"रुमझुम बरखे आजु बदरवा पिय
विदेश मोरे।

थर-थर छतिया न निशदिन मन भावे,
नैन न नींद आये दामिनी दमक लागे,
उन बिन कल न पड़त नाथ नाथ धारे।

के आधार पर बंगला गान की रचना इस प्रकार की थी—

शून्य होते फिरि हे नाथ, पथे-पथे,
फिरि हे द्वारे-द्वारे,
चिर भिखारी हृदि मम निशिदिन
चाहे कारे"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी-किसी गीत में तो हिन्दी गीत से एकदम सादृश्य परिलक्षित होता है। सिंधु रागिनी के गीत–

"मुरली धुनि सुनि अरी माय जमुना तीरे,
तब सों हम अपन जीवन सों बिकाई।"

का बंगला रूपान्तर इस प्रकार है–

"चरणध्वनि सुनि तव नाथ जीवन तीरे।"

हिन्दी गीतों की मधुर शब्दावली ने भी उनको अनेक समय पर प्रेरणा दी थी, इसीलिए किसी-किसी गीत में भावसाम्य भी दृष्टिगोचर होता है।

"बीना बजाय रे मन ले गयो।
मधुर-मधुर धुन अधर न धर रे,
रस भरी तान सुनाय रे मन ले गयो।"

इसका बंगला रूपान्तर उन्होंने इस प्रकार किया है–

"बीना बजाओ हे मम अन्तरे,
सजने विजने बन्धु, सुखे, दुखे विपदे,
आनन्दित तान सुनाओ हे मम अन्तरे।"

विहाग रागिनी का निम्न गीत उन्हें अत्यन्त प्रिय था–

"कैसे काटूँगी रैन सो पिया बिना।
अकेली जागूं सजनी आज मोरे,
नयन में नींद न आवे छोड़ि सैंया।"

इसी पर आधारित धर्म गीत–

"तिमिर विभावरी काटे केमने, शून्य जीवने, जीर्ण भवने"

की रचना की थी। सिक्खों के प्रसिद्ध दोहा "वादे-वादे रम्य वीन वादे" सुनकर उन्होंने "वाजे-बाजे रम्य वीणा वाजे" की रचना भी की। इसी प्रकार कतिपय गुजराती, मराठी तथा तामिल गीतों और रागों के साम्य पर भी उन्होंने गीत रचना की थी।

यहाँ पर एक आशंका का निराकरण कर देना आवश्यक है। किसी भाषा के पद-साम्य अथवा भाव-साम्य से यह अर्थ निकालना सर्वथा अनुचित होगा कि रवीन्द्रनाथ ने अन्य भाषाओं के गीतों की अनुकृति की अथवा भावानुवाद किया। जिन गीतों में साम्य पाया जाता है, वे उनके अन्तर में गूंजने वाले अन्य भाषाओं के गीतों एवं रागों की प्रतिध्वनि मात्र हैं, जो बाहर आकर यद्यपि बाह्यरूपेण एक से लगते हैं, परन्तु उनकी आत्मा पूर्णतया स्वतंत्र एवं भिन्न है।

रवीन्द्रनाथ के आरम्भिक वयस (बाल्य तथा यौवन काल) के गीतों में हृदय की कोमल भावनाओं के प्रकाशन की चेष्टा प्रमुख रूप से पायी जाती है, परन्तु परवर्ती काल में भाव-प्रकाशन के स्थान पर सौंदर्य-निरूपण को ही प्रधानता मिली है। प्रथम कोटि के गीतों में लोक-संगीत जैसे सरल एवं ठुमरी जातीय जैसे मधुर रागों की बहुलता पायी जाती है, परन्तु परवर्ती काल के गीतों में ध्रुपद जातीय जैसे उच्च राग-रागिनियों की गम्भीरता एवं स्वर

[शेष पृष्ठ ६३ पर]
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णावतार

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

धारावाहिक पूर्ण-पुरुष लीला

चित्र : हिन्दी विश्व भारती, लखनऊ
के सौजन्य से : चित्रकार पन्नालाल

[३६]

महामल्ल चाणूर

कंस को स्वस्थ होने में कुछ समय लगा। देवकी के पुत्रों ने दरबार में प्रवेश किया। उन्होंने सुन्दर वस्त्र धारण कर रखे थे। 'जय जय नन्दनंदन' की उल्लास-पूर्ण जयध्वनि से वातावरण गूंज उठा। घनश्याम वर्ण का छोटा भाई तुरन्त पहचाना जा सकता था, अपने ज्येष्ठ बन्धु के पीछे-पीछे वह विनम्र भाव से आ रहा था।

क्या यही छोकरा उसका नाश करेगा ? कंस-अजेय विजेता कंस के अहम् को गहरी चोट लगी। उसने दांत पीसे और प्रण किया कि भविष्यवाणी को वह अवश्य असत्य सिद्ध करेगा; वह आखिरी दम तक लड़ेगा और देवकी के दोनों पुत्रों को अपने दोनों हाथों से पीस कर रख देगा। कंस ने ताली बजायी। तुरन्त परिचारक उपस्थित हुआ।

अपने श्रद्धेय सलाहकार अद्य को बुलाने की आज्ञा उसने दी।

अद्य देखने में कोई विशिष्ट व्यक्ति नहीं जान पड़ता था। उसके वृद्ध चेहरे पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुशामदभरी मुस्कराहट सदा खिली रहती थी। अपने स्वामी कंस को प्रसन्न रखने के लिए जो-जो दांव-पेंच उसने खेले थे, वे सब उसके चेहरे पर की क्रूर रेखाओं से स्पष्ट परिलक्षित होते थे।

'अद्य, नन्द का पुत्र दरबार में आया ? कुवलयापीड को क्या हुआ ?' कंस ने पूछा।

'कोई कहता है कि कृष्ण ने उसे मार डाला; कोई कहता है कि स्पर्श मात्र से उसने हाथी का स्वभाव बदल दिया ! मैंने आदमी को सही खबर लाने के लिए भेजा है;' अद्य ने उत्तर दिया।

'अब अंगारक कुछ काम न आ सकेगा। लगता है अपने मल्ल दरबार में आ गये हैं। थोड़ी ही देर में मेहमानों के साथ मुझे दरबार में जाना पड़ेगा।'

'जैसी कृपानाथ की आज्ञा,' अद्य ने आज्ञा की प्रतीक्षा करते हुए कहा।

'मल्ल मैदान में उतरें' इसके पहले ही चाणूर को वह संदेश दे देना कि नन्द के पुत्र को ठिकाने लगाने का काम अब उसके जिम्मे है।'

'यह कैसे होगा ?' अद्य ने नम्रता से पूछा, 'चाणूर एक बालक को बाहुयुद्ध में कैसे ललकार सकता है ? शास्त्रों में तो इसका निषेध है।'

आगन्तुक अतिथियों की पदचाप आंगन में सुनायी पड़ी। कंस ने अद्य की ओर आग्नेय नेत्रों से देखा और पैर पछाड़ता हुआ बोला, "यह कैसे होगा, यह जानने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है। यह मेरी आज्ञा है और उसे इसका पालन करना है, मैं तो यही जानता हूँ। नहीं तो...' कंस ने दुर्भावना सूचक दृष्टि अद्य की ओर डाली।

राज्य के अतिथि आ पहुँचे थे। बड़ी कठिनाई से कंस ने स्वयं पर नियंत्रण किया और अद्य को हाथ के इशारे से विदा देकर मेहमानों का स्वागत करने आगे बढ़ा। राजमहल के बीचों बीच एक चतुष्कोण सभाखंड था। उसके एक ओर कंस, उसके अतिथि राजपुरुष, विविध कुलों के सरदार, उच्च अधिकारी इत्यादिकों के बैठने के लिए विशिष्ट शामियाना बनाया गया था। सभाखंड की दूसरी ओर ब्राह्मण, विभिन्न यादव मंडलियाँ, ग्रामवासी और प्रजाजनों के लिए विशाल और सुशोभित मंडप बनाया गया था, और सभाखंड के बीच में मिट्टी और रेत बिछा कर मल्लयुद्ध के लिए वर्तुलाकार स्थान बनाया गया था।

सभी शामियाने ठसाठस भर गये थे। खिड़कियों और अटारियों में से रंगबिरंगी साड़ियाँ और शाल पहने स्त्रियाँ झाँक रही थीं। ग्रामवासियों का मण्डप तो सभी के आकर्षण का केन्द्र बन गया था। उसमें सबसे आगे नन्द के नेतृत्व में वृन्दावन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ अप्रैल १९६४

के गोप-ग्वाल बैठे थे। कृष्ण और बलराम को सहज ही पहचाना जा सकता था। सब की ज़बान पर उनका नाम था और उन्हें देखने के लिए शामियाने के पास छोटे-छोटे अनेक दल जमा हो रहे थे।

शंखध्वनि हुई, और कंस तथा उसके अतिथियों के आगमन की सूचना मिलते ही सर्वत्र सन्नाटा छा गया। सदा की भांति उनके स्वागतार्थ जो हर्षनाद सुनायी पड़ता था, वह आज कहीं नहीं सुनायी पड़ा। कंस ने बड़ी मुश्किल से अपना चेहरा प्रसन्न रखा और आसपास दृष्टि डाल कर अपना आसन ग्रहण किया। उसके दाहिनी ओर मेहमान बैठे; बायीं ओर वसुदेव, अक्रूर तथा अन्य यादव सरदारों ने आसन ग्रहण किया। प्रद्योत कंस के पीछे बैठा; उसके बगल में और वसुदेव के ठीक पीछे राजकुमार वृत्रघ्न और मागधी सरदार बैठे। केवल कुछ लोगों को छोड़कर, जिन्हें आनेवाले गंभीर मुहूर्त की पूर्वसूचना नहीं थी, सभी के चेहरे गंभीर थे।

बाहुयुद्ध के क्षेत्र में चाणूर, मुष्टिक और तोषल अपने स्वामी कंस के आगमन पर विनयपूर्वक नमस्कार कर रहे थे। प्रत्येक के दोनों ओर उनके बारह पट्टशिष्य खड़े थे। अब ये शिष्य शंखध्वनि कर आज की प्रतियोगिता के आरंभ की सूचना दे रहे थे। इन मल्लश्रेष्ठों और उनके शिष्यों के अतिरिक्त प्रायः दो सौ मल्ल और भी खड़े थे। उन्होंने लंगोटें पहन रखी थीं और शरीर पर शालें ओढ़ रखी थीं, जिसका अर्थ था कि वे सभी राजाश्रित मल्ल थे। चाणूर तो मल्लयुद्ध का सम्राट ही माना जाता था, इसलिए उसकी शाल सुनहरी थी।

बाहुयुद्ध का वह स्वर्णकाल था। द्वंद्वयुद्ध और रणक्षेत्र में भी बाहुयुद्ध का प्रचुर प्रयोग होता था। आदमी-आदमी के बीच झगड़ों के निराकरण के लिए आदि-काल से मानव बाहुयुद्ध का आश्रय लेता आया है; उसने इसे एक कला के रूप में भी विकसित कर लिया। उस समय श्रेणीबद्ध हथियारों का उपयोग होता था। जन-साधारण लाठी और भाले का उपयोग करते थे; सैनिक तलवार अथवा कटार का उपयोग करते; उच्च कुल के योद्धा गदा, परशु, लोह चक्र और धनुष का उपयोग करते। युद्ध कला के स्वामी परशुराम के प्रियशस्त्र परशु का उपयोग तो इनेगिने लोग ही कर सकते थे। लोह चक्र के उपयोग के लिए चपल हाथ और तीक्ष्ण दृष्टि की आवश्यकता रहती। धनुष-बाण का युद्ध में उपयोग करने के लिए दीर्घकाल तक शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक था। इन सभी शस्त्रों के किसी समय भी हाथ से नीचे गिर जाने अथवा छीने जाने की सम्भावना रहती। ऐसे अवसर पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहु युद्ध की प्रवीणता ही सुरक्षा के लिए काम आती। इसीलिए इस युग में सभी लोग न्यूनाधिक प्रमाण में बाहु युद्ध में कुशलता अवश्य प्राप्त करते थे। राज-दरबारों में और समाज में भी निष्णात् मल्लों का आदर होता था। राज्य द्वारा बड़ी-बड़ी व्यायामशालाएँ चलायी जातीं और यदि कोई राज पुरुष बाहुयुद्ध में श्रेष्ठता प्राप्त न करता, तो रणक्षेत्र में उसके लिए अपनी प्राण-रक्षा करना कठिन हो जाता। कोई भी उत्सव बाहु युद्ध की प्रतियोगिता के बिना सूना लगता। इस प्रकार बाहु युद्ध के प्रति जनता में प्रबल आकर्षण था।

रणक्षेत्र के अतिरिक्त, अन्य स्थानों पर होनेवाले बाहुयुद्धों में शास्त्रों द्वारा निश्चित नियम निर्धारित थे। ऐसे बाहु-युद्धों में थोड़ी देर के लिए 'चित्त' हो जाने-वाले प्रतिस्पर्द्धी को हारा हुआ मान लिया जाता और उसे फिर से नहीं ललकारा जा सकता था। ऐसे युद्धों में प्रतिस्पर्द्धी की हत्या तो शास्त्रों द्वारा सर्वथा निषिद्ध थी।

भेरी बज उठी, शंखनाद हुआ और चाणूर द्वारा संकेत दिये जाने पर सभी प्रतिस्पर्द्धी जोड़ियों ने अपने-अपने शाल उतार कर अनुचरों को दे दिये और स्पर्द्धा के लिए तैयार हो गये। चाणूर के हाथ ऊँचा करते ही प्रतियोगिता प्रारम्भ हो गयी। तत्काल ही वातावरण गम्भीर हो गया। मल्लों ने एक-दूसरे को गिराने में अपना-अपना कमाल दिखाना शुरू किया। दावपेंच चलने लगे। किसी अच्छी जोड़ी की भिड़न्त होने पर लोगों में भारी उत्तेजना फैल जाती।

अन्त में विजयी प्रतिस्पर्द्धियों को पराजितों से अलग किया गया। एक ओर विजेता खड़े थे, दूसरी ओर परास्त मल्ल खड़े हो गये। अब चाणूर, मुष्ठिक और तोषल बाहर निकले। दोनों के आगे-पीछे दो-दो शिष्य शंख फूंकते हुए चल रहे थे। चाणूर ऊँचे डील-डौल का था। गोल, सफाचट खोपड़ी और बड़ी तोंद वाली उसकी विशाल काया को देखते हुए डर लगता था। उसके स्नायु मांसल थे; वह चलता तो उसके एक-एक अंग में से सौष्ठव झलकता था।

चाणूर प्रसन्न मुद्रा के साथ, एक के बाद एक शामियाने के पास खड़ा होकर विशेष अतिथियों के लिए सुरक्षित स्पर्द्धाओं के लिए प्रतिद्वंदियों को ललकार रहा था। वृन्दावन के ग्वाले जहाँ बैठे थे, उस शामियाने के पास वह रुका। आगे सुन्दर वस्त्रों में सज्जित कृष्ण और बलराम बैठे थे। उन्हें देखकर वह हँसा।

"नन्दराज, ये आप के पुत्र हैं'? चाणूर ने नन्द से पूछा, 'राजपुत्रों जैसे दीखते हैं! ये प्रतियोगिता में भाग क्यों नहीं लेते?'

'नहीं; ये प्रतियोगिता में भाग नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों', नन्द ने कहा, ये तुम्हारी तरह प्रवीण नहीं; आखिर हम तो गांववासी ही ठहरे!'

जब चाणूर इन दो भाइयों के सामने आकर ठहरा, तब प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति की दृष्टि उस ओर उठी। सभी यह जानने के लिए उत्सुक थे कि अब क्या होगा? नन्द के पुत्रों से प्रभावित व्यक्ति तो इन किशोरों की बाहुयुद्ध कला की एक झांकी देखने को उत्सुक थे। दूसरी ओर किसी भी प्रकार के संभावित छल-कपट के प्रति सशंकित यादव सरदारों को चाणूर की यह चेष्टा कुत्सित जान पड़ी।

ग्रामवासियों के शामियाने के पीछे महल की अटारी पर यादव सरदारों के कुल की स्त्रियाँ खड़ी थीं; जिनमें से देवकी तो चाणूर को अपने पुत्रों के साथ बात चीत करते देखकर बहुत विचलित हो गयी। दीवाल का सहारा लेकर उसने किसी तरह अपने को सम्हाला। 'मेरे प्रभु, मेरे प्राणप्रिय कृष्ण....' इस प्रकार स्वगत कुछ बड़बड़ाते हुए उसने अपनी आँखें मूंद लीं। फिर किसी तरह अपने को सम्हाल कर देखने लगी कि नीचे क्या हो रहा है?

'अपने बूढ़े बाप की बात क्यों सुन रहे हो?' चाणूर ने कृष्ण-बलराम से कहा, 'मैंने तो सुना है, कि तुम दोनों कुशल खिलाड़ी हो। तुम्हारे असाधारण पराक्रमों की बात भी लोगों की जबान पर सदा रहती है।' चाणूर के शब्दों में उपहास की स्पष्ट ध्वनि सुनायी पड़ रही थी। कृष्ण और बलराम चुप रहे।

'मैदान में आओ और अपना जौहर दिखाओ, छोकरो! चाणूर ने ललकारा और अपनी जाँघ पर हाथ पटका। उसके एक शिष्य ने शंखनाद किया। शंखध्वनि और चाणूर के हाथ पटकने की आवाज़ सुनकर प्रत्येक यादव का हृदय फड़क उठा। एक मात्र कंस ही जानता था कि अब क्या होगा। उसके हाथ मूछों पर फिर रहे थे और होठों पर एक सहज मुस्कान थिरक रही थी।

चाणूर के उपाहस भरे शब्द सुन कर बलराम खौल उठा। नंद की ओर देख कर उसने आज्ञा मांगी, परन्तु नन्द तो स्तब्ध ही बन गये थे।

'इस प्रकार मूर्ख की तरह पिता के सामने क्या देख रहा है?' चाणूर ने इतनी ऊँची आवाज में कहा कि सारी सभा को सुनायी पड़े, और फिर कृष्ण की ओर देख कर अपमान सूचक स्वर में प्रश्न किया, 'तुझे लड़ना नहीं आता?'

'तेरे साथ'! कृष्ण ने प्रतिप्रश्न किया। कृष्ण के शब्दों में भी यथेष्ट उपहास था। 'मैं तो अभी बहुत छोटा हूँ।'

चाणूर की ललकार को स्वीक़ार करना प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया था, परन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्ण को चाणूर के इरादे की खबर पड़ गयी थी और वह जहाँ तक अति आवश्यक न हो जाय, वहाँ तक इस चुनौती को स्वीकार करने की इच्छा नहीं रखता था।

'चल-चल, नन्दकिशोर'! चाणूर ने कहा, 'इस बूढ़े के पास तुझे कुछ ऐसे दांव-पेंच सीखने को मिलेंगे, जो जीवन में कभी नहीं भुलाये जा सकते।' चाणूर ने फिर एक बार चुनौती दी और जांघ पर हाथ पटका। कृष्ण ने मस्तक हिलाया। चाणूर कृष्ण को बाहर खींच लाने के लिए आगे बढ़ा।

'नहीं, नहीं, नहीं!' अक्रूर पुकार उठे। उन्होंने खड़े होकर कंस की तरफ देखा और कहा, 'चाणूर इस बालक के साथ बाहु-युद्ध नहीं कर सकता'।

यादव सरदारों ने इस विरोध का समर्थन किया। वसुदेव शान्त होकर चारों ओर देख रहे थे, परन्तु उनके हृदय में तो आशा और आशंका के बीच एक भयंकर द्वन्द्व चल रहा था। चाणूर के खूनी दांव-पेंच से वे अपरिचित नहीं थे। चाणूर जब किसी के साथ गम्भीर रूप में बाहु-युद्ध करता, तब वह खेल के नियमों का उल्लंघन नहीं करता था, परन्तु अपनी विशाल और दीर्घ काया का भार प्रति-स्पर्द्धी पर इस प्रकार डाल देता कि या तो उसका दम घुट जाता अथवा उसकी हड्डी-पसलियाँ टूट जातीं।

यादव स्त्रियाँ भी 'नहीं, नहीं, नहीं....' की पुकार मचा रही थीं। परन्तु, शामियाना में जो गाँववासी उपस्थित थे, उन्होंने तो आज सवेरे 'जय कृष्ण, 'जय नन्दकिशोर' का जो जयसूत्र उच्चारित किया था, वह फिर उनके कंठों से फूट पड़ा। उनको लगा कि बाहु-युद्ध के सम्राट चाणूर ने अपने साथ लड़ने के लिए जब कृष्ण को पसन्द किया है तो यह तो गौरव का ही विषय है। अब बाहुयुद्ध अच्छी तरह जमेगा।

कृष्ण ने चाणूर की आखों में निर्भयता से झांक कर मुस्कुराते हुए फिर मस्तक हिलाया।

'मेरे साथ लड़ने में डर लगता है, दोस्त?' चाणूर ने मज़ाक में पूछा।

अक्रूर ने कंस की ओर देखा। चाणूर की चेष्टा से कंस के चेहरे पर जो प्रसन्नता छा रही थी, उसे स्पष्ट देखा जा सकता था।

'अन्धकराज, यह तो घोर अन्याय है! बाहु-युद्ध की प्रणाली भंग हो रही है' अक्रूर ने कहा।

कंस ने कुछ उत्तर नहीं दिया।

'नहीं, नहीं, नहीं ... !' यादव सरदार फिर से पुकार उठे।

क्यों, डर लगता है ?' चाणूर ने फिर से अपमान भरे स्वर में पूछा।

'मेरे पिता की आज्ञा नहीं'।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'आज्ञा कैसे दे?' चाणूर ने कहा। वह जानता है कि तू तो केवल गोपियों के साथ रासलीला ही रच सकता है; क्या है न'!

'हाँ मुझे रास रचाना आता है'! कृष्ण ने कहा। वह खड़ा हो गया और नन्द के सामने हाथ जोड़ कर ऊँची आवाज़ में बोल उठा, पिताजी, अब मुझे नहीं रोकें।'

कृष्ण ने निडरता से मस्तक ऊँचा उठाया, शिरस्त्राण, धोती और शाल अपने मित्र उद्धव के हाथ में सौंप दिये। केवल लंगोट में खड़ा यह किशोर लावण्य और रूप में कामदेव को भी पराजित करे, इतना सुन्दर लग रहा था।

चाणूर, मैं तैयार हूँ,' उसने कहा।

चाणूर के खूनी इरादों से अपरिचित प्रजा जन, 'जय-जय' पुकार उठे।

[क्रमशः]

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

★

[जब स्वामी दयानन्द ने......पृष्ठ ३१ का शेष]

स्वामी दयानन्द: ब्रिटिश राज में मुझे अपने धर्म के प्रचार की पूर्ण स्वतंत्रता उपलब्ध है। मुझे नहीं लगता कि मेरे जीवन को कोई ख़तरा है।

वायसराय: यदि ऐसा है तो क्या आप–पंडित दयानन्द– इस तथ्य को प्रशंसात्मक रूप में स्वीकार करना चाहेंगे कि ब्रिटिश राज आपके देश के लिए वरदान सिद्ध हुआ है।

स्वामी दयानन्द: मैं ऐसा कभी नहीं मानता। कारण, मेरा दृढ़ विश्वास है कि मेरे देशवासियों की मर्यादा-वृद्धि तथा अन्तरराष्ट्रीय सौजन्य में मेरे देश की अप्रतिम स्थिति बनने के लिए यह अनिवार्य है कि भारतवर्ष को पूर्ण स्वाधीनता मिले। भगवान की प्रार्थना करते समय, मैं प्रभु से यही निवेदन करता हूँ कि मेरा देश शीघ्रातिशीघ्र विदेशी राज्य के चंगुल से मुक्त हो।

स्वामी दयानन्द के ऐसे निर्मल विचार सुनकर वायसराय महोदय को बड़ी निराशा हुई, और जैसा कि स्वाभाविक था, बातें आगे नहीं बढ़ीं। इस घटना का उल्लेख इंडिया आफिस (लन्दन) को भेजे गये एक डेस्पैच' में करते हुए लार्ड नार्थब्रुक ने लिखा कि उन्होंने अपनी सरकार को इस 'विद्रोही फकीर" पर कड़ी निगाह रखने का आदेश दे दिया है।

कलकत्ता से आने के एक वर्ष पश्चात् चैत्र सुदी ५, सम्वत् १९३१ (मार्च, १८७४) को स्वामी दयानन्द ने आर्य-समाज की स्थापना की थी।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[समाजवाद कैसे लाया जाये...... पृष्ठ २९ का शेष]

भी प्रवेश हो जाता है।

हमें सत्य और अहिंसा को समाजवादी व्यवस्था में ढालना है। किन्तु ऐसा करने के लिए समाजवाद के उपासकों को ईश्वर में पूर्ण आस्था रखनी होगी। सत्य और अहिंसा में मात्र कहने भर की आस्था रखना या यंत्रवत् उसे स्वीकार करना फलदायक नहीं हो सकता, क्योंकि ऐसा होने पर संकट की स्थिति में हम तुरन्त विचलित हो सकते हैं और इन पर दृढ़ नहीं रह सकते। जैसा कि मैंने बताया, सत्य ही ईश्वर है। ईश्वर एक सनातन शक्ति है। हमारा जीवन उसी शक्ति से संचालित होता है।

अब प्रश्न है कि क्या कोई भी समाजवादी ईश्वर में विश्वास नहीं करता? यदि वास्तव में ऐसा है, तो क्यों वे अब तक प्रकट रूप में कोई उन्नति नहीं कर सके हैं? इसी तरह, ईश्वर में विश्वास रखने वाले लोगों की तरफ देखिये—क्यों नहीं ये अभी तक समाजवादी राज्य की स्थापना में सफलता पा सके हैं? इन शंकाओं के संबंध में हम यह कह सकते हैं कि ईश्वर में विश्वास रखने वाले एक समाजवादी व्यक्ति ने शायद कभी इस पर विचार नहीं किया कि उसके समाजवादी विचारों और ईश्वर में विश्वास रखने के बीच भी कोई संबंध है। इसी तरह यह कहना भी असंगत नहीं होगा कि आस्तिक लोगों द्वारा लोगों में समाजवाद की भावना पैदा करने का प्रयत्न कभी नहीं किया गया।

संसार में अंधविश्वास आस्तिक लोगों के होते हुए भी खूब फैल चुका है। स्वयं हिन्दुओं में अभी तक जाति भेद और छुआछूत का बोलबाला है। वास्तव में इन अंधविश्वासों से उस महानशक्ति का कोई संबंध नहीं है। उस शक्ति को जानने, उससे साक्षात्कार करने और उसकी अदृश्य संभावनाओं की खोज में मनुष्य सदा से उद्योगशील रहा है। मेरा इस संबंध में यह दावा है कि उसे जानने के प्रयत्न में सत्याग्रह की खोज बहुत महत्वपूण साबित हुई है। यद्यपि मैं यहाँ यह दावा नहीं कर रहा हूँ कि सत्याग्रह के सभी नियम स्थिर कर लिये गये हैं और उन्हें प्रस्तुत कर दिया गया है। मैं पूर्ण निर्भयता और दृढ़ता से केवल इतना कह सकता हूँ कि किसी भी शुभ उद्देश्य की प्राप्ति सत्याग्रह द्वारा की जा सकती है। यह एक निर्भ्रान्त और प्रभावशाली साधन हैं, एक फलदायक शक्ति है। समाजवाद की प्राप्ति सत्याग्रह के अतिरिक्त अन्य किसी भी साधन से संभव नहीं है। सत्याग्रह ही समाज को सब बुराइयों से छुटकारा दिला सकता है—चाहे वे राजनीतिक हों या आर्थिक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[रवीन्द्र की संगीत-साधना......पृष्ठ ५४ का शेष]

सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है। उच्च राग-रागिनियों के गीतों की भी उन्होंने खयाल तथा ठप्पा जैसे संगीत की व्यर्थ तानों और आलापों से रक्षा की तथा अपने गीतों के स्वाभाविक सौंदर्य को नष्ट नहीं होने दिया। इसी कारण जन साधारण के मानस-पटल पर उनके गीतों ने अपेक्षाकृत सहज रूप से ही स्थान बना लिया।

रवीन्द्रनाथ जितने महान गीतकार थे, उतने ही महान गायक भी थे। अपने गीतों को अपने ढाले हुए स्वरों में वह उतनी ही निपुणता से गा भी सकते थे, जितनी निपुणता से उनकी रचना हुई थी। रवीन्द्रनाथ संगीत के बहुत से गायक उनके गीतों को कोमल स्वरों में तथा मृदु कण्ठ से गाना ही वास्तविक रवीन्द्र शैली मानते हैं। परन्तु रवीन्द्रनाथ की गायन प्रणाली इसके सर्वथा विपरीत थी। वह भावानुकूल स्वर-प्रयोग के पक्षपाती थे। पुरुषों द्वारा स्त्रियोचित महीन एवं कोमल कंठ से गाने के तो वह घोर विरोधी थे। महिलाओं द्वारा कोमल कंठ से गाये गए अपने गीतों को सुनना वह पसन्द करते थे। परन्तु पुरुष कंठ में पुरुषोचित ओज का अभाव देखकर वह विचलित हो उठते थे। जिन्हें रवीन्द्रनाथ का कंठ-संगीत सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वह यह स्वीकार करने को बाध्य हैं कि वैसा पुरुषोचित ओजपूर्ण कंठ-स्वर आज-कल कम ही सुनने को मिलता है। ऐसा नहीं था कि वह सभी गीतों को ओजपूर्ण कंठ से ही गाने के पक्षपाती थे। प्रार्थना-गान, प्रेम-गीत, ऋतु-संगीत आदि वह भावानुकूल कोमल कंठ से भी गाते थे। उनके गायन में एक अपूर्व रस होता था, अजीब मिठास रहती थी और चमत्कारपूर्ण मोहकता रहती थी।

संगीत में स्वर और ताल का बड़ा घनिष्ट संबंध है। एक के बिना दूसरा अपूर्ण है। प्रत्येक गायक को ताल का सहारा लेना पड़ता है। परन्तु इस दिशा में भी रवीन्द्रनाथ का स्वभावगत वैचित्र्य दृष्टिगोचर होता है। अपने प्रारम्भिक जीवन में उन्होंने ताल और लय के नियम का पूर्णतया पालन किया। इसीलिए उनकी उन दिनों की रचनाओं में शीर्षक रूप में राग और ताल का नाम दिया रहता था। परन्तु परवर्ती काल में ताल की अनिवार्यता पर जैसे उन्हें संदेह होने लगा था और कदाचित वह यह सोचने लगे थे कि उनके गीत ताल के इतना अनुगत होकर क्यों चलें? इसीलिए उनके परवर्ती काल के गीतों में ताल का इतना महत्व नहीं दिखायी पड़ता।

संगीत के प्रत्येक क्षेत्र में रवीन्द्रनाथ ने संकीर्णता को हटाकर उन्मुक्तता लाने का प्रयास किया। अपनी प्रतिभा के स्वर्णिम रंग से उन्होंने संगीत की जीर्ण प्रतिमा को नव सौंदर्य प्रदान किया। उनके कविता कानन ने तो देश को सुरभित किया ही, पर उनकी संगीत लहरी भी युग-युग तक दिशाओं को मुखरित करती रहेगी। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[पद्मावती......पृष्ठ ४६ का शेष]

से यह उपायन सेवा में प्रस्तुत करती हूँ, सम्राट इसे स्वीकारें!"

"कौन, देवी पद्मावती ?" सहसा बिम्बसार चौंक उठे।

"हाँ, आर्य!" पद्मावती अवनत हुई। शृंगार रहित उसका तन्वगात सभासदों के लिए जिज्ञासा का विषय बन गया। सभी चित्रलिखित से उसे ताक रहे थे। बिम्बसार गद्गद हो गये थे। पद्मावती आगे बोली: "देव! यह आपका पुत्र अभयकुमार है!.'

"अभयकुमार! ..मेरा पुत्र !" बिम्बसार अपने आपको सम्हाल न सके। नेत्रों से वात्सल्य फूट पड़ा। अवनत अभय को उन्होंने अपनी बाहुओं में समेट लिया। सभी अवाक् थे। इस रहस्य को कोई भी न जान सका; किन्तु महाराज के पार्श्व में बैठी रानी चेलना ने इस रहस्य का थाह पा लिया था। कभी बिम्बसार ने उसके समक्ष इस रहस्य को प्रकट किया था। उसने अपने ओठ काट लिये। समीप ही बैठे अपने पुत्र अजातशत्रु से बोली: "पुत्र, चल। अब यहाँ बैठना योग्य नहीं।"

बिम्बसार दुष्यंत की भाँति निःचेष्ट नहीं थे जो द्वार पर आयी शकुन्तला को भूल जांये। बिम्बसार की शालीनता से तो सारा आर्यावर्त परिचित था। पद्मावती को उन्होंने अपनाया, पुत्र अभय को पिता के समान ही प्रेम दिया। दोनों ही अब प्रासाद के अंतःपुर में रहने लगे। किन्तु रानी चेलना को भय था कि कहीं महाराज बिम्बसार पुनः पद्मावती के सौन्दर्य जाल में फंस कर मगध साम्राज्य के अधिपति होने का अधिकार अजातशत्रु के हाथ से छीन कर पद्मावती के पुत्र अभय को न दे दें। चेलना ने पद्मावती और उसके पुत्र अभय के विपरीप अनेक प्रकार के षड्यंत्र आरम्भ कर दिये। चेलना साध्वी पद्मावती को नर्तकी कहती और उदण्ड अजातशत्रु अभयकुमार को दासीपुत्र कहकर तिरस्कृत करता।

तिरस्कार की ज्वाला धधकती आग से भी अधिक उत्तेजक होती है। इसी ज्वाला से झुलसी पद्मावती, पुत्र अभय को अश्रुमुख छोड़ बिम्बसार से विदा लेकर पुनः उज्जयिनी लौट आयी। बिम्बसार इस रहस्य से अनभिज्ञ थे। इसीलिए उन्होंने पुत्र अभय को अपने समीप ही रोक लिया था। किन्तु पद्मावती को रोकने में फिर भी असमर्थ रहे।

पद्मावती उज्जयिनी लौट आयी, पर अब उसके आवास में से रुन-झुन पैजनियों की सरस ध्वनि सुनने में नहीं आती, न अब वहाँ से उठती थी मृदंग की मेघगर्जन की सी गूंज। आवास के प्रत्येक द्वार और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वातायन सदा बन्द रहते। अब उस दिशा में मतवाले युवक भी घूमते दृष्टिगोचर नहीं आते। आवास के चारों ओर एक प्रकार से गंभीरता छायी रहती। इसी प्रकार पूरा वर्ष व्यतीत हो गया, किन्तु उज्जयिनी का कोई भी नागरिक यह नहीं जान सका कि देवी पद्मावती आवास में ही है या अन्यत्र कहीं ....

उस दिन अम्बर में अरुणोदय की अरुणाई छायी हुई थी। हरित दूर्वादलों पर ओसबिन्दुएँ चमक रही थीं। क्षिप्रा-पुलिन प्रशांत था। वहाँ अंजलिबद्ध, उगते रवि की दिशा में खड़े विप्रगण मन्त्रोच्चारण कर रहे थे। दूसरी ओर भगवान बुद्ध के परमप्रिय शिष्य महाकात्यायन के संघाराम में से" बुद्धं शरणं गच्छामि ! धम्मं शरणं गच्छामि ! संघं शरणं गच्छामि !" की ध्वनि उठकर वायुमण्डल में विलीन हो रही थी। आवास में बैठी पद्मावती की तो इसी ध्वनि में जैसे बंध गयी और वह स्वयं भी इसी ध्वनि का उच्चारण करने लगी।

उसे लगा जैसे यह ध्वनि धीरे-धीरे उसके अधिक समीप चली आ रही है।

"स्वामिन !" दासी ने उसकी ध्यानतन्द्रा को भंग कर दिया।

"हाला, क्या है ?.' अपने अलसित नेत्रों को उसने सेविका की दिशा में फेरा।

"देवी ! आज संघ के भिक्खु एक अवधि पश्चात् इस मार्ग पर से आ रहे हैं, आज्ञा हो तो रोकूँ ?"

"हाँ हाला ! रोक !" पद्मावती के नेत्रों में एक विशिष्ट ज्योति चमकी और वह तत्काल प्रमुख द्वार को पार कर बाहर हो गयी। सेविका देखती ही रह गयी।

"बुद्धं शरणं गच्छामि !

"धम्मं शरणं गच्छामि !

"संघं शरणं गच्छामि !

सामूहिक स्वर में ध्वनि करते हुए अवंती संधाराम के भिक्खुगण अवनत वदन इसी दिशा में चले आ रहे थे। उनके हाथों में रिक्त भिक्षापात्र थे।

"उपासकों जरा ठहरो !" पद्मावती ने पुकारा। सभी भिक्षु उसी क्षण रुक गये। पद्मावती आगे बढ़ी। भिक्षुओं के मध्य, समुन्नत ललाट, आजानुभुज, और गौरवगात्र के एक अल्पवय के भिक्षु को देखकर वह सहसा चौंक उठी।

"देवी ! शीघ्रता करें !" वह भिक्षु बोला। कितनी मार्दवपूर्ण थी उसकी यह वाणी कि पद्मावती का धैर्य चूर-चूर हो गया और उसके नेत्रों में अश्रुबूदें उभर आयीं। वह अधीर होती हुई बोली. "मेरे पुत्र अभय ! तुम शिक्षु के रूप में !"

"नहीं !" भिक्षु का मुख निर्विकार था, बोला: "देवी ! मैं कभी अभय था, किन्तु अब भिक्षु हूँ !"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह क्या कहते हो, अभय! तुम्हें पलक की भाँति पाला था, बिम्बसार ने जिसे अपनी आँखों से ओझल होने देना भी उचित नहीं समझा था, अभय आज भला किस प्रयोजन से भिक्षु बना पथ-पथ पर भटक रहा है?"

"देवी! भगवान बुद्ध के वचनामृत का जो पान करता है, उसे फिर किसी भी वस्तु की तृषा नहीं रहती।..मुझे साम्राज्य की तनिक क्षुधा नहीं..मगध का साम्राज्य अजात शत्रु को मिले, माता चेलना की यह हार्दिक इच्छा थी..अन्त.पुर में मेरे रहने से उसे अधिक पीड़ा थी। उसकी इच्छा पूर्ण हो, इसलिए मैं मगध छोड़कर भगवान बुद्ध की शरण में चला गया। मुझे दिव्य मार्ग मिल गया है और अब मैं अधिक सुखी हूँ!'

"पुत्र मुझे भी वह दिव्य मार्ग प्रशस्त कर..मैं भी प्रवज्या हूँगी। इस सृष्टि ऐश्वर्य में मेरा अब कोई मोह नहीं।" पद्मावती आतुर हुई।

"देवी! फिर अभय को पुत्र नहीं भिक्षु कहना होगा!"

"हाँ, भिक्षु! मुझे स्वीकार है!" पद्मावती की अश्रुगंगा का प्रवाह द्विगुणित हो गया।

"उपासकों! तुम सब आगे जाओ। मैं लौटूंगा। देवी पद्मावती आज प्रवज्या लेकर अवन्तीप्रदेश की प्रथम अनुवर्तिनी होंगी। भिक्षु महाकात्यायन इन्हें दिक्षा देंगे।"

अन्य आजिवक भिक्षु आगे बढ़ गये। अभय ने प्रथम बार अपनी माँ के मुख की ओर देखा। वह अब भी अश्रु बहा रही थी। किन्तु अभय फिर भी पूर्ववत् गम्भीर था। बोला: "देवी, अब विलम्ब न करें....चलें!"

भिक्षु अभय आगे बढ़ चला और पद्मावती उसके पीछे।

इस समय सूर्य कुछ अधिक ऊपर को चढ़ आया था, जिसकी तीक्ष्ण किरणें पृथ्वीमंडल पर बिखरी हुई थीं। पीछे पदचिह्न छोड़ते अवन्ती के भव्य संघाराम की ओर दोनों चले जा रहे थे, जहाँ से वही मेघगर्जन-सी गम्भीर ध्वनि अब भी गूंज रही थी...

"बुद्धं शरणं गच्छामि!
धम्मं शरणं गच्छामि!"
सघं शरणं गच्छामि!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[महाकवि रिल्के......पृष्ठ २५ का शेष]

में उपरोक्त अनुभव मुहूर्त की शक्ति ही समाहित रही होगी, जैसे कि बीज होती है। उसने उस दूसरे केप्री उद्यान तायी घड़ी को याद किया, जब उसके र और बाहर दोनों ही में एक पक्षी प्रकार संगत रूप से विद्यमान थी, जो शरीर के सीमा-बन्धनों पर नहीं रही थी बल्कि जो भीतर और र दोनों को एक अविच्छिन्न अन्तरिक्ष युक्त कर रही थी, जिसमें अत्यन्त त्मक रूप से संरक्षित, एकमात्र तम, गहिरतम चेतना विद्यमान । उस समय उसने आँखें बन्द कीं थीं, ताकि अपनी देह की रेखाकृति से, उसके इस वृहद् अनुभव के क्षेत्र में भंग न पड़े; और तब हर ओर से अनन्त ने उसके भीतर ऐसी घनिष्ठता से प्रवेश किया, कि उसे स्पष्ट प्रतीति हुई कि पूर्व में आविर्भूत तारों का प्रकाश, उसकी अपनी ही छाती के भीतर से उद्भूत हो रहा है।..."

सम्भवतः अपने ऐसे ही सीमान्तगामी अनुभवों के कारण रिल्के ने अपने 'समग्र सत्ता' के विलक्षण दर्शन को उपलब्ध किया था और मृत्यु का जीवन के एक अन्य पक्ष या अप्रकाशित पक्ष के रूप में दर्शन किया था।

बेंगाल केमिकल का
सुगंधित ब्राह्मी केश तैल
बड़ी कारीगरी के साथ सुगंधित यह आयुर्वैदिक केश तैल मस्तिष्क को शीतल और शान्त रखता है। ब्राह्मी केश तैल के नियमित व्यवहार से मानसिक क्लान्ति दूर होती है और आराम की नींद आती है। केशों की स्वस्थ वृद्धि में भी यह सहायता करता है।
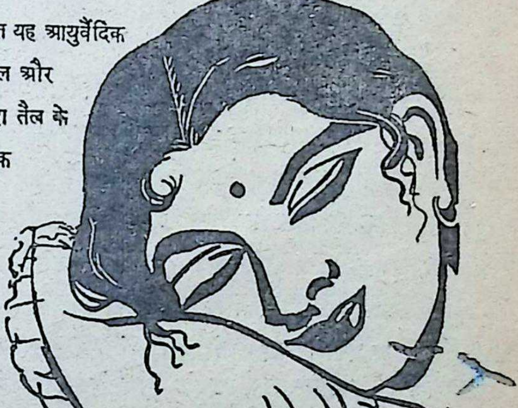
बेंगाल केमिकल
कलकत्ता ∘ बम्बई ∘ कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[रचना के सन्दर्भ......पृष्ठ ४९ का शेष]

और आनुभूतिक साक्षात्कार' है।

डी. एच. लारेन्स ने 'कला किसके लिए ?' इस प्रश्न का उत्तर देते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा है कि "कला मेरे लिए, सिर्फ मेरे लिए है।" लारेन्स की यह आत्म-स्वीकृति एक प्रकार से आज के अधिकांश रचनाकारों की आत्मस्वीकृति बन गयी है। साहित्य के वर्तमान स्वरूप को देखकर बहुधा यही प्रतीत होता है कि अब 'कला कला के लिए' और 'कला जीवन के लिए' ये दोनों ही सिद्धान्त हमारे कलाकारों के लिए व्यर्थ हो चुके हैं। लेख के प्रारम्भ में एक प्रश्न उठाया गया था कि रचना की सार्थकता किसमें है—उसकी सुन्दरता में, सम्पूर्णता में, कि मार्मिकता में ? बहुत सम्भव है कि आज का 'आधुनिक' रचनाकार इन तीनों में से किसी भी चीज़ में रचना की सार्थकता मानने को तैयार न हो। 'सुन्दर' में रमना तो जैसे उसके लिए सम्भव ही नहीं रह गया है। उसकी अपेक्षा असुन्दर और प्रतिकूल वेदनीय ही उसके वेदन-तंत्र को अधिक स्पर्श करते हैं, क्योंकि आधुनिक सभ्यता के परिवेश की स्वाभाविकता यही है। पूर्णता की साधना का उसे अवकाश नहीं है, क्योंकि बाहर की वस्तुएँ और अन्दर की अनुभूतियाँ दोनों ही एक अजीब असहायता में उसके हाथ से छूटी जा रही है—बिखरती जा रही हैं: उनको अन्विति और अर्थ देने वाला रागात्मक सूत्र जो विच्छिन्न हो गया है। रही मार्मिकता; सो आज का रचनाकार अपनी अनिवार्य बौद्धिकता और सन्देहाकुलता के कारण सहज संवेदना को न तो ग्रहण कर पाता है और न उसे ग्रहण करके सम्प्रेषित करने को ही प्रेरित हो पाता है। वह महसूस करता है कि उसकी संवेदना 'जटिल' है—इतनी जटिल कि उसमें साधारणीकरण जैसी पुरानी चीज़ का प्रश्न ही नहीं उठता। प्रक्रिया के अन्दर से ही जो एक मिला-जुला 'कन्फ्यूज़्ड' चित्र उसके दिमाग में बनता है, वही उसका संवेदन है। उसी को यथावत् अंकित कर देना ही उसका रचना-सुख है। सम्प्रेषण हो ही नहीं सकता, यह मान लेने पर वह जैसे सारे दायित्वों से एक साथ मुक्त हो जाता है. फिर रचना है किसके लिए ? क्या कला के लिए ? नहीं। ऐसा कहकर तो वह उल्टे विज्ञान-युग के प्रखर बुद्धिवाद की चुनौती से पलायन कर जाने का आरोप मोल लेता है और एक प्रकार की हीनभावना को आमंत्रित करता प्रतीत होता है। नहीं, यह उसके अहं को स्वीकार्य नहीं। तो ?

....तो क्या कला जीवन के लिए...?

शायद हाँ...पर नहीं। फ़िलहाल तो सबसे बड़ा प्रश्न अस्तित्व के कायम रखने का है। मृत्यु ही उसकी दृष्टि में आज यथार्थ है। जब यह अनस्तित्व का आतंक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

..., तब कहीं जाकर जीवन को सँवारने की बात हो। अभी तो ऐसी चर्चा ही विडम्बनापूर्ण लगती है। फिलहाल तो सामने विज्ञान और राजनीति हैं—अपनी प्रलयंकरी शक्ति के साथ मानवता के शव पर ताण्डव करने को सन्नद्धः और यही सबसे बड़ा यथार्थ है, जिसके सामने कला और साहित्य के सारे संकल्प सहमे खड़े हैं—किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर। विध्वंस के दानव ने जैसे एकाएक योजनों लम्बा डग भर कर निर्माण के देवता को पकड़ लिया है। ऐसी अवस्था में रचना भी विध्वंस के लक्षणों से छा गयी हो, तो इसमें विस्मय की बात क्या है? संप्रति रचना की प्रेरणा, कथ्य, संवेदन और रूप सब रचना-प्रक्रिया का ही मुंह जोहते प्रतीत होते हैं। इसीलिए अंग्रेजी कवि डब्लू. एच. आडेन को कहना पड़ा कि "किसी व्यक्ति से पूछे जाने पर कि 'तुम कविता क्यों लिखते हो', अगर वह जवाब में यह कहे कि उसके अन्दर बहुत बड़ी प्रेरणा का उद्रेक होता है, तो निश्चय ही वह और कुछ भले हो ले, कवि तो हर्गिज़ नहीं हो सकता। हाँ, यदि वह कहे कि 'मैं शब्दों का मंत्र-

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब्र (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बागीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यु. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुग्ध की तरह अनुसरण करते-करते और उन्हीं की बात सुनते-सुनते कवितामय हो जाता हूँ' तो बहुत सम्भव है कि वह सचमुच कवि बन जाये ।"

ऑडेन का उपरोक्त उद्धरण देने की जरूरत इसलिए महसूस हुई कि यह आज की रचना में निहित एक सर्वव्यापी तथ्य को रेखांकित कर देता है । यों तो वैसे ऑडेन के कथन का दूसरा पहलू स्पष्ट है—कविता में शब्द-संवेदना का विशिष्ट महत्त्व । पर इस सर्वमान्य और चिरस्वीकृत तथ्य की इतने भारपूर्वक घोषित करने की आवश्यकता कवि को महसूस हुई, यह बात क्या वर्तमान कविता—बल्कि रचनामात्र में परिव्याप्त प्रक्रियात्मक प्रवृत्तियों को प्रकारान्तर से संकेतित नहीं करती ? कविता के कथ्य (और संप्रेरणा) के प्रति जो एक व्यंगदृष्टि उक्त उद्धरण में साफ झलक आयी है, वह वास्तव में कविता तक ही सीमित नहीं है । प्रसिद्ध उपन्यास-लेखिका फ्रैंक्चा सैगाँ ने स्वीकार किया है कि "लिखना शुरू करने से पहले मेरे मन में कोई भाव, कोई उमड़न नहीं होती । लिखने की प्रक्रिया ही मुझमें स्फुरण जगाती है ।"

सबसे रोचक और सबसे मार्मिक वक्तव्य उपन्यासकार विलियम स्टाइरान का है, जो अपनी रचना की पलायनधर्मिता को बहुत सहजभाव से स्वीकार लेते हैं, उनका कथन है कि "रचना के क्षण ही मेरे लिए निरुद्विग्न शान्ति के क्षण होते हैं । मेरा ख्याल है कि जो लोग मेरी तरह चौबीसों घण्टे तरह-तरह की अनाम आशंकाओं एवं भीतियों से आक्रान्त रहते हैं, उनके लिए यह रचना प्रक्रिया एक बहुत अच्छा उपचार सिद्ध हो सकती है । मेरे लिए तो अस्तित्त्व की इस अहर्निश ताड़ना से बचने का एकमात्र उपाय 'रचना' ही है । वहीं जाकर मुझे शरण मिलती है ।"

यहाँ पर आप कह सकते हैं कि इसमें तत्त्व की बात क्या है ? यह तो अपने-अपने स्वभाव का प्रश्न है, व्यक्तिगत मामला है । पहले ही कहा जा चुका है कि रचना 'स्वभाव' भी है । पर मुझे यह मानने में ज़रा कठिनाई होती है कि बीसवीं सदी के पहले किसी रचनाकार ने इस प्रकार की आत्मस्वीकृतियाँ दी होंगी। अस्तु, रचना चिरन्तर मानव-प्रकृति है और विशिष्ट स्वभाव भी। वह रचनाकार का स्वधर्म, उसकी कल्पना और उसका अध्ययनानुभव भी है। पर जैसा कि उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है, वह इन सब चीजों के अलावा कुछ और भी है। उस 'कुछ और' के अन्तर्गत युग, परिवेश, प्रक्रिया,. . . गरज़ यह कि कुछ भी आ सकता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री ज्योतीन्द्र ह. दवे का षष्टि-पूर्ति सम्मान

गत २७ मार्च को भारतीय विद्या भवन के प्रमुख सभा-गृह में गुजराती भाषा में अपूर्व हास्यरस की समृद्धि एवं मौलिक नव शैली का निर्माण करने वाले शीर्षस्थ साहित्यकार श्री ज्योतीन्द्र ह. दवे के सम्मान में उनके षष्टि-पूर्ति के लिए एक समारोह का आयोजन किया गया था। इस अभूतपूर्व समारोह की अध्यक्षता श्री गगन बिहारी लल्लू भाई मेहता ने की। स्वागताध्यक्ष के रूप में कुलपति श्री मुन्शीजी ने अतिथियों का स्वागत किया और अपने भाषण में श्री ज्योतीन्द्र दवे के साथ अपने प्राचीन परिचय का विस्तृत रूप से वर्णन किया। श्री गगन बिहारी मेहता ने अपने भाषण में एक महान सर्जक के रूप में श्री ज्योतीन्द्र दवे के प्रत्येक पहलुओं पर विस्तृतरूप से प्रकाश डाला।

श्री हरसिद्ध भाई दिवेटिया, श्री रामप्रसाद बक्षी, श्री गौरी प्रसाद झाला, श्री मनसुखलाल झवेरी, श्री अमृतलाल याज्ञिक, श्री मोहनलाल मेहता, 'सोपान', श्री गुलाबदास ब्रोकर आदि व्यक्तियों ने भी ज्योतीन्द्र दवे को मानाञ्जलि अर्पित की।

श्री ज्योतीन्द्र दवे ने अपने सम्मान का उत्तर बड़े ही भावभीने शब्दों में देते हुए कहा कि मैंने साहित्य के क्षेत्र में जो कुछ पाया है और जो कुछ दिया है, उसमें श्री कन्हैयालाल मुन्शी का सब से महत्त्व पूर्ण हाथ है।

षष्टि–पूर्ति उत्सव समिति की ओर से श्री ज्योतीन्द्र दवे को 'वाङ्गमय विहार' नामक अभिनन्दन ग्रंथ एवं १०००१ रु. समर्पित किया गया।

उत्सव समिति के एक मंत्री श्री प्रागजी डोसा ने आरम्भ में संदेश पढ़कर सुनाये और अन्त में दूसरे मन्त्री श्री मधुकर रांदेरिया ने आभार प्रकट किया।

पुरस्कार-वितरण समारोह

वाम्बे एग्री-हॉर्टिकल्चरल सोसायटी द्वारा बम्बई में आयोजित दो पुष्प-प्रदर्शनियों में विजेताओं को पुरस्कार वितरण करने के लिए भारतीय विद्या भवन में गत २४ मार्च को एक समारोह का आयोजन किया गया था। कुलपति श्री मुन्शी जी ने पुरस्कार वितरित किया। इस अवसर पर पुष्पों के महत्व पर बोलते हुए श्री मुन्शी जी ने कहा कि पुष्पों का पुष्परूप में वर्णन करना शब्दातीत है। उन्होंने इस प्रकार की प्रदर्शनी के आयोजन के लिए बाम्बे एग्री-हार्टिकल्चरल सोसायटी को हृदय से धन्यवाद दिया। अन्त में सोसायटी के उपाध्यक्ष श्री अब्दुल रहमान यूसुफ ने सबको धन्यवाद दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय विद्या भवन द्वारा द्वितीय सांस्कृतिक विकास यात्रा का आयोजन

●

दक्षिण–भारत

●

सम्भवत: आप जानते ही होंगे कि भवन ने अपनी प्रथम सांस्कृतिक विकास यात्रा समाप्त कर ली है, जिसमें नेपाल की राजधानी काठमाण्डू में भगवान पशुपतिनाथ तथा मार्ग में आये उत्तर भारत तथा पूर्व व दक्षिण भारत के कुछ धार्मिक एवं दर्शनीय स्थानों के दर्शन का लाभ यात्रियों ने उठाया। अब भवन अपनी द्वितीय सांस्कृतिक विकास यात्रा का आयोजन दक्षिण भारत के महत्त्वपूर्ण स्थानों तथा तीर्थ स्थलों पर ले जाने को कर रहा है, जिसमें केरल के सुन्दर, दर्शनीय स्थान एवं पर्वतीय सौन्दर्य, विश्व प्रख्यात 'दक्षिण का उपवन' मैसूर, और मद्रास के भव्य मन्दिर तथा अन्य विख्यात सांस्कृतिक स्थलों के दर्शन का लाभ यात्री-दल उठायेगा। सम्पूर्ण यात्रा में यात्रीगण सत्संग, भजन, संवाद गोष्ठियों तथा एक अपूर्व सांस्कृतिक वातावरण का आनन्द भी उठाते रहेंगे। सम्पूर्ण स्थानों की सूची इस प्रकार है–

दर्शनीय स्थान : तिरूपती, कालहस्ती, मद्रास, महाबलिपुरम्, कांचीपुरम्, तीरुवन्नामलाई, पाँडीचेरी, कडलोर, चिदम्बरम्, कुम्बकोनम्, तंजौर, त्रिची, श्रीरंगम, शडनी, कोडैकनल, मदुराई, रामेश्वरम्, धनुषकोड़ी, तीरूचेन्दूर, कुर्टलम्, त्रिवेन्द्रम्, सुचीन्द्रम्, कन्याकुमारी, वारकलाई, कोट्टयम्, इट्टूमनूर, त्रिपुनिथुरा, चोट्टानिक्करा, अलवाई, कालडी, त्रिचूर, गुरुवायूर, इरिंजलकुडा, क्रैंगनोर, त्रिप्रयार, चेरूडुर्डी, पालघाट, कोयम्बतोर, बंगलोर, मैसूर, तिरूतन्नी।

यात्रा-दल बम्बई से २४ अप्रेल १९६४ को प्रस्थान करेगा और सभी स्थानों को देखते हुए ९ जून १९६४ को बम्बई वापस लौट आयेगा।

भवन के सदस्य, उनका परिवार तथा अन्य मित्रगण सांस्कृतिक विकास यात्रा के नियमों के अनुसार इस यात्रा-दल में सहर्ष सम्मिलित हो सकते हैं।

यात्रा का सम्पूर्ण व्यय, जिसमें भोजन तथा दर्शनीय स्थानों को देखने का व्यय सम्मिलित है, तृतीय श्रेणी के लिए ८५० रु. तथा प्रथम श्रेणी के लिए १२५० रु. होगा। ऐसा निश्चित किया गया है कि यात्रा दल में तृतीय श्रेणी में ४० सदस्य और प्रथम श्रेणी में २० सदस्य ही सम्मिलित किये जायेंगे और इस संख्या के पूर्ण होते ही तत्काल और लोगों को सम्मिलित किया जाना स्थगित कर दिया जायगा।

भारतीय विद्या भवन, चौपाटी रोड, बम्बई ७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

स. रामकृष्णन द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कहीं आप मज़ाक तो नहीं कर रहे ?—
क्या आप सचमुच मुझसे बचत करने की उम्मीद रखते हैं ?"

हम मानते हैं कि आजकल बचत करना आसान नहीं है। लेकिन ज़रा सोचिए कि बिना बचत के काम चल सकता है क्या? बिना बचत किये क्या आप आकस्मिक खर्च उठा सकेंगे। बच्चों की पढ़ाई, उनका भविष्य, उनकी खुशहाली आदि कितने ही सवाल हैं। और फिर सेवा-निवृत्त होने पर खुद के लिए भी तो कुछ चाहिए ही।

बचत करनेका सही तरीका यह है कि आप दी बैंक ऑफ इंडिया लि. के सेविंग्स बैंक खाते में अपनी आय का लगभग १०% भाग जमा कर दिया करें और बाक़ी के पैसे से खर्चा चलाने की योजना बना लें।

"बचत क्यों? उसके ६ कारण"
नामक हमारी मुफ़्त पुस्तिका अवश्य मँगवाइए।

दी बैंक औफ इन्डिया लि.

टी. डी. कन्सारा
जनरल मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2 MAY 1964

Read

BHAVAN'S JOURNAL

India's Most Popular English Fortnightly

Devoted to

LIFE, LITERATURE & CULTURE

Single Copy 30 nP.
Obtainable from all news agents and railway bookstalls.

Annual Subscription
Rs. 6.50.
Send your subscription to the Circulation Manager,
Bhavan's Journal
Bharatiya Vidya Bhavan,
Chowpatty, Bombay-7.

BHARATIYA VIDYA BHAVAN, BOMBAY-7.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१९ अप्रैल १९६४
राम नवमी अंक]

भारती
[भवन की पत्रिका]

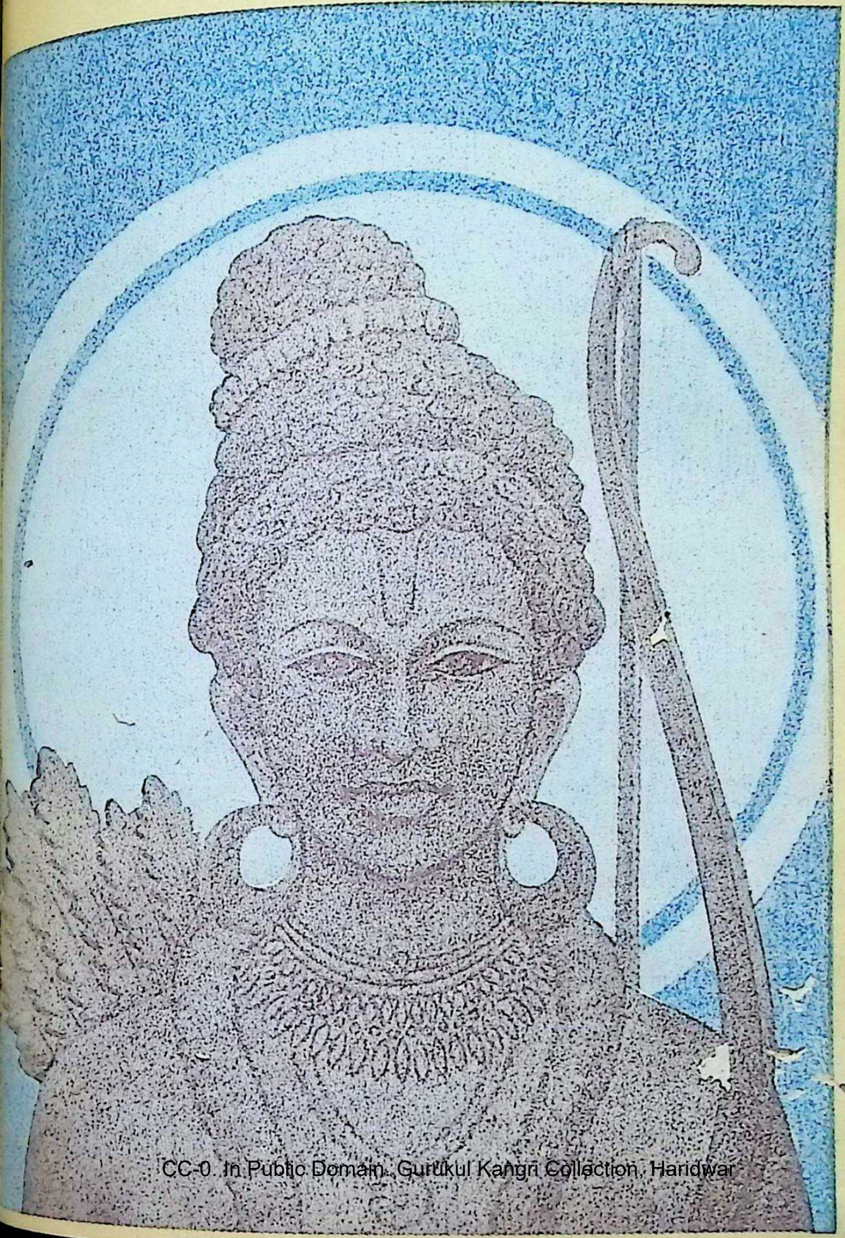

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब !

आप का मनपसंद

लोमा

ट्यूब

में भी मिलता है !

(पोमेड के रूप में)

● बर्बादी नहीं ● छलकता नहीं ● टूट-फूट नहीं

कम से कम चिकना होने के कारण
यह महिलाओं के लिए भी अच्छा है।

सोल एजेंट्स और निर्यातक :
एम. एम. खंभातवाला, अहमदाबाद-१.

एजेंट्स : सी. नरोत्तम एंड कं., बम्बई-२.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र्ष ८ : अंक १६]

भारती

[१९ अप्रैल १९६४

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

स्थापक :
न्हैयालाल मुन्शी

प्रधान सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० न.पै.
वार्षिक : ६.५० न.पै.
अर्धवार्षिक : ३.५० न.पै

रामचरित मानस : प्रशस्ति ३
कन्हैयालाल मुन्शी : कुलपति का पत्र ४
कबीर : नाम संकीर्तन ९
श्री अरविन्द : सात्विक मानवता के अनन्य अवतार-पुरुष : श्रीराम १०
— : भगवान महावीर ने बोले १४
प्रभाकर माचवे : दो कविताएं १७
रवीन्द्रनाथ ठाकुर : भारत की आत्मा का महाकाव्य : रामायण १८
ज्योत्स्ना मिलन : दो कविताएं २२
कुन्तल कुमार जैन : आस्था की पुकार २३
चक्रवर्ती राजगोपालाचारी : रामायण का हार्द २६
डॉ. कन्हैयालाल मुन्शी : श्रीराम : मेरी दृष्टि में ३०
चन्द्रमौलि उपाध्याय : अस्थि शेष ३३
-- : अयोध्या ३४
श्याम व्यास : मरण शय्या पर लेटा रावण और सीख लेने को तत्पर लक्ष्मण ३८
प्रेमशंकर रघुवंशी : दो कविताएं ४१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी ३ मई के अंक में

- प्राण-शक्ति का प्रचण्ड सर्जक: शेक्सपीयर : श्री अरविन्द
- जब भगवान मेरे जीवन में आये : रवीन्द्रनाथ ठाकुर
- विज्ञान और यन्त्र हमारे प्रभु नहीं, सेवक हों : डॉ. राधाकृष्णन्
- संसार को जैसा मैंने देखा है : अल्बर्ट आइन्स्टीन
- जहाँ शेक्सपीयर ने जन्म लिया था : डेनिस वारडेन्स
- शेक्सपीयर का चेहरा : रमेशचन्द्र शाह
- मातृ-भक्षक, वह अवधूत केसरी : नरेशचन्द्र मिश्र
- पशुपतिनाथ की तीर्थयात्रा (सचित्र लेखमाला) : के. एस. रामस्वामी
- भारत के भव्य मंदिर : अयोध्या [सचित्र]

वी. एस. श्रीनिवास शास्त्री : वीरांगना सीता
मदनमोहन तरुण : महान रावण
गोस्वामी बालक : राम-रावण युद्ध और राजनीति
कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार
धर्मचन्द सरावगी : वननेवाली माताओं से
भवन समाचार : —

इस अंक के सज्जाकार :
सर्वश्री अमृता भारती, कुमार ज्योतीन्द्र जैन,

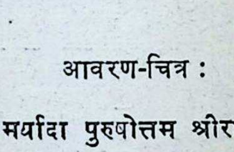

आवरण-चित्र :
मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

चित्रकार :
कमलाक्ष शेनॉय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भारती

भवन की पत्रिका

आगामी विश्व विकास का सूचक :

जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

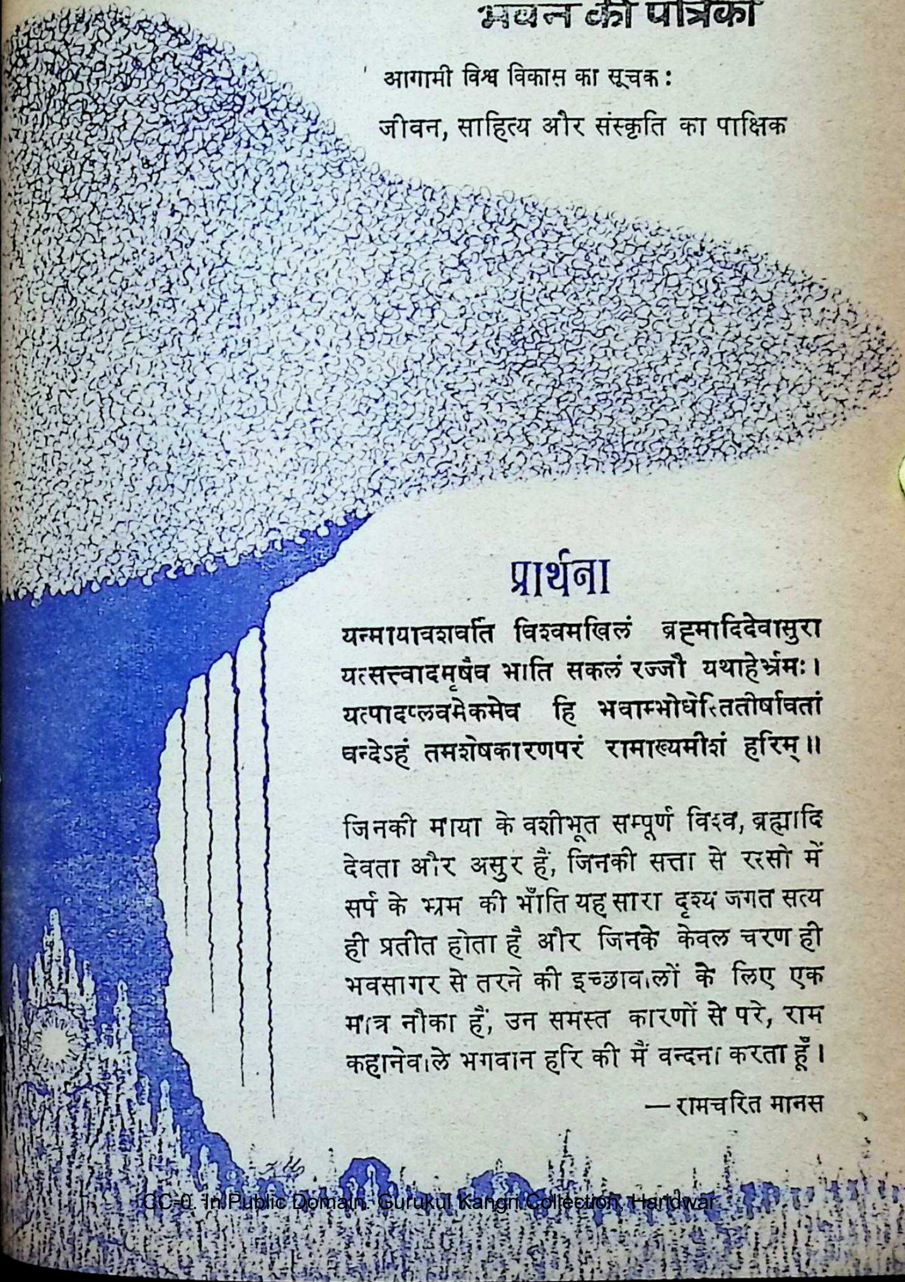

प्रार्थना

यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरा
यत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रमः।
यत्पादप्लवमेकमेव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां
वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्॥

जिनकी माया के वशीभूत सम्पूर्ण विश्व, ब्रह्मादि देवता और असुर हैं, जिनकी सत्ता से रस्सी में सर्प के भ्रम की भाँति यह सारा दृश्य जगत सत्य ही प्रतीत होता है और जिनके केवल चरण ही भवसागर से तरने की इच्छावालों के लिए एक मात्र नौका हैं, उन समस्त कारणों से परे, राम कहानेवाले भगवान हरि की मैं वन्दना करता हूँ।

— रामचरित मानस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

- राम राज्य
- समाजवादी राज्य

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बंबई,
१९ अप्रैल १९६४

मेरे युवा मित्र,

हमारा देश श्रीरामचन्द्र की जन्म-तिथि राम नवमी का उत्सव शीघ्र ही मनाने जा रहा है। हमारे जो महान उत्सव-पर्व हमारी प्रजा के बीच आनन्द, बन्धुत्व और धर्म का भाव प्रसारित करते हैं, उनमें से शायद ही कोई अन्य पर्व रामनवमी उत्सव की तरह दक्षिण और उतर भारत में समान रूप से लोक प्रिय हो।

श्रीरामचन्द्र हमारे नैतिक पूर्णत्व के आदर्श हैं– निजी जीवन में भी और सार्वजनिक जीवन में भी। इसी से स्वभावतः इस समय मेरा ध्यान रामराज्य की ओर चला गया।

गांधीजी ने हमको रामराज्य की आशा दी थी और पिछले अठारह वर्षों से पंडित नेहरू हमें बराबर ही "समाजवादी राज्य" के डोज़ दिये चले जारहे हैं। आशा और पूर्ति के बीच की खाई नहीं पाटी जा सकी है; और वह तब तक नहीं पाटी जा सकेगी जब तक हम तथाकथित "आगे बढ़े हुए राष्ट्रों" के अनुकरण का प्रयत्न करते रहेंगे।

वाल्मीकि ने रामराज्य का, श्रीरामचन्द्र के शासन में अयोध्या की स्थिति का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। 'समाजवादी राज्यपरस्तों' ने, समाजवादी राज्य क्या है, यह हमें निस्सन्देह समझा दिया है। उसे हम अपने चारों ओर हर दिन देख रहे हैं।

समाजवादियों का कहना है कि उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकल्पित राज्य में गरीबी और रता नहीं रहेगी। लेकिन हम आसपास हर दिन चरित्रहीन ता और असन्तुष्ट गरीबी बढ़ते रहे हैं। समाजवादी लोग योजना अपने स्वप्न का राज्य लाना चाहते दूसरे शब्दों में कहें तो उच्चतर ों की अवज्ञा करके कानूनी और शाही पाबन्दी द्वारा जीवन की री हालतों में जबर्दस्ती परिवर्तन चाहते हैं। वे कानून स्वत्वों के द्वारा और स्वत्व-अपहरणकारी टैक्सों धन की सामाजिक असमानता को करना चाहते है। वे दलबन्दों और रशाहों का एक नया वर्ग खड़ा चाहते हैं जो अकेला धनवान के अवसरों, साधनों का ठेकेदार रहेगा। यह एक प्रकार का नया ति वर्ग होगा।

रामराज्य में दुष्टों के द्वारा किसी भी पीड़न का भय नहीं था। फिल- जिस समाजवादी राज्य को लाया है, उसमें ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न गयी हैं जिनमें लोग नौकरशाहों टैक्स वसूल करने वालों से डरते शासक-दल से भयभीत होते हैं, यों के कोप से आतंकित रहते इसके अतिरिक्त इस राज्य में कानून ने वालों, डाकुओं, बलात्कारी प्रदर्शकों और भूख हड़तालों का भय भी सदा बना रहता है। रामराज्य में हर व्यक्ति सुखी था और 'सब लोग जीवन में अपनी प्रतिष्ठा और स्थिति के अनुसार धर्म के समुचित परिपालन के लिए तत्पर रहा करते थे।'

समाजवादी राज्य में अधिकांश लोग काम से बचना और गैरकानूनी लाभ उठाना चाहते हैं। 'जीवन स्तर को उठाने' का नारा देकर गरीबों को वैभव-विलास बढ़ाने की शिक्षा दी जाती है, वैभव को जीवन की आवश्यकता बताया जाता है, और इस तरह असन्तोष को उभारा जाता है।

रामराज्य में, श्रीराम द्वारा प्रस्तुत आदर्श को सन्मुख रखकर ही लोग अपने जीवन का निर्माण करते थे और पारस्परिक विद्वेष तथा घात-प्रतिघात में संलग्न नहीं होते थे। समाजवादी राज्य में सामान्य लोग अयोग्य भ्रष्टाचारी शासकों के आचरण को सामने रखकर ही अपने चरित्र का निर्माण करते हैं। समाजवादी राज्यपरस्त लोग निरन्तर पारस्परिक वि षि में डूबे रहते हैं। परस्पर एक दूसरे को चोट देकर सत्ता की एक प्रमत्त आपाधापी चलायी जाती है।

रामराज्य में सांसारिक सम्पदा आत्मकल्याण के साथ संयुक्त होती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाजवादी राज्य में भौतिक सम्पत्ति की सदा ही कमी बनी रहती है और आत्म-कल्याण का कोई महत्व नहीं माना जाता। राम की प्रजा धर्म की अनुगामिनी थी, उनके मन और उनके वचन में असत्य के लिए कोई स्थान नहीं था। समाजवादी राज्य में बिना किसी प्रत्यक्ष साधन के काँग्रेसी लोग धनवान होगये हैं। कोई सिर्फ दिल्ली चला भर जाये, तो वह देख सकेगा कि वहाँ किस कदर समाजवादी राज्यपरस्त लोग एक दूसरे के विरुद्ध निरन्तर कानाफूसियों का हंगामा मचाये हुए हैं।

श्रीराम ने कैकेयी से कहा था, "पूज्या देवी, सांसारिक सम्पदा मेरा लक्ष्य नहीं है; मुझे केवल धर्म में तत्पर ऋषियों के समान जानो।" जबकि समाजवादी राज्यपरस्त शायद शपथ उठा कर यह कहेगा: "मैं सत्ता प्राप्त करना चाहता हूँ और उसके द्वारा संसार की सम्पदा। धर्म का कोई मूल्य नहीं। वह हमारी समझ में नहीं आता है क्योंकि हम एक धर्म निरपेक्ष राज्यवादी हैं।"

रामराज्य, श्रीराम के व्यक्तित्व और चरित्र की आध्यात्मिक गुणवत्ता में प्रतिबिम्बित था। समाजवादी राज्य उन समाजवादी राज्य-परस्तों के व्यक्तित्व और चरित्र का प्रतिबिम्ब है, जो एक दूसरे को धक्का देकर निकाल फेंकना चाहते हैं, जिनके भाई-भतीजे इतना ... जमा कर लेते हैं कि अगर वे ... महोदय के परिवार में जन्म लेने ... सौभाग्य न पाते तो शायद कभी ... कर सकते थे।

किसी भी कीमत पर सत्ता से चि... रहने को श्रीराम अपनी प्रकृति से विरु... और अनुदात्त समझते थे। समाजवादी ... सरकार में सत्ता के लिए प्रबल भू... और उसे तुष्ट करने के लिए वह ... भी कर सकती है।

कुल की प्रतिष्ठा और उनके चरि... में कलंक न लग जाये, इसीलिये श्रीरा... ने सीता को तब तक स्वीकार न... किया, जब तक सीता ने देवों, मानवों, वानरों, राक्षसों की उपस्थिति में अ... के भीतर से गुज़र कर अपनी पवित्र... को प्रमाणित नहीं कर दिया। उन्होंने अपने निजी और सार्वजनिक जीवन ... बीच कभी कोई भेद नहीं किया। उन... सम्बन्धित किसी भी व्यक्ति पर बात... की छाया भी आजाये, यह उन्हें ... नहीं था।

समाजवादी राज्यपरस्त मानता है कि शासन करने का उसे दैवी अधिकार प्राप्त है। सत्ता पर आसीन अपने ... के लोगों तथा अपने से सम्बन्धित अ... लोगों का, उनकी बड़ी से बड़ी भू... और अपराधों के बावजूद, समाजवादी ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचाव करते हैं।

...राम का चारित्रिक धरातल तब ...पराकाष्ठा पर पहुँचा था जब ...अविकल्प प्रामाणिकता के बल पर ...शासक के ऊँचे चारित्रिक नियम-...को शिरोधार्य किया था और ...उन्होंने अन्त तक निर्वाह किया। ...के नाते जीवन के सभी पक्षों ...प्रयोजन और आचरण की सम्पूर्ण ...के व्रती थे। जब उनकी परम ...पत्नी को लेकर, जिसकी पवित्रता ...अटल विश्वास था, लोगों में ...र लांछना की कानाफूसी होने ...तो उन्होंने स्पष्ट अनुभव किया कि ...सामने दो ही रास्ते हैं: या ो वे ...का त्याग कर दें या अपनी पत्नी ...ाग कर दें। तब प्रजा के प्रति अपने ...को लक्ष्य में रखकर उन्होंने ...पत्नी का त्याग कर दिया।

...माजवादी राज्यपरस्त अपने सार्व-...या निजी जीवन को अलग-...दायरों में बन्द करके रखता है। ...तब तक सत्ता से चिपटा रहता है ...वह अपनी फिसलनों के लिए ...करण दे सकता है या अपने नेता ...संरक्षण प्राप्त कर सकता है।

...रामराज्य में प्रजा की यह प्रत्याशा ...थी कि उसके शासक का नैतिक ...सम्पूर्ण और अखण्ड होना चाहिए। ...मामले में अपने राजा के चरित्र में ...भी प्रकार का स्खलन या ढीलापन ...सहन नहीं कर सकती थी। जैसा कि ...दास ने कहा है—"शासकों से 'यशो-धन' होने की प्रत्याशा की जाती थी।" सत्ता के भोग और सारे भौतिक लाभों से परे तब के शासक अपने उज्ज्वल नाम को ज्यादा महत्त्व देते थे। 'दास कमीशनों' के लिए तब कोई गुंजाइश नहीं थी।

समाजवादी राज्य में जब भी शासकों पर कोई कलंक आ जाता है, तो पहले तो उनकी भूलों की अवज्ञा की जाती है फिर उन भूलों को किसी बेईमान विरोधी दल पर लाद दिया जाता है; और अन्त में सम्पूर्ण सत्ता की माँग और कानूनी चाल द्वारा उसे प्रतिरोध दिया जाता है।

अभी हमें यह देखना बाकी है कि यह समाजवादी सरकार अब क्या करने जा रही है। जो भी हो, राम का अभाव तो इसमें है ही, पर उन सब बातों का अभाव भी है जिनका विधान रामराज्य करता है।

कोई भी राज्य, फिर वह किसी भी नाम से क्यों न पुकारा जाये, तब तक कोई सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक सर्वोपरि रूप से श्रीराम की प्रभुता को स्वीकार न करे—अर्थात् जब तक वह शासकों के जीवन में नैतिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक प्रामाणिकता की प्रभुता को स्वीकार न करे।

आपका

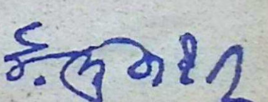

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीरामचन्द्र यों बोले

एक बार दरबार में गुरु, मुनि, द्विज और पुरवासी यथास्थान विराजमान थे। उन्हें सम्बोधित करते हुए भगवान श्रीराम यों बोले—

मेरी भक्ति सब सुखों की खानि है और वह बिना सत्संग के नहीं मिलती।

कहहु भगति पथ कवन प्रयासा।
जोग न मख जप तप उपबासा॥
सरल सुभाव न मन कुटिलाई।
यथा लाभ संतोष सदाई॥

कहो तो, भक्तिमार्ग में कौन-सा परिश्रम है? इसमें न योग की आवश्यकता है, न यज्ञ, जप, तप और उपवास की! यहाँ इतना ही आवश्यक है कि सरल स्वभाव हो, मन में कुटिलता न हो, और जो कुछ मिले उसी में सदा सन्तोष रक्खे।

मोर दास कहाइ नर आसा।
करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा॥
बहुत कहउँ का कथा बढ़ाई।
एहि आचरन बस्य मैं भाई॥

मेरा दास कहला कर यदि कोई मनुष्यों की आशा करे, तो तुम्हीं कहो, उसका क्या विश्वास है? (अर्थात् उसकी मुझ पर आस्था बहुत ही निर्बल है।) बहुत बात बढ़ा कर क्या कहूँ? हे भाइयो! मैं तो इसी आचरण के वश में हूँ।

बैर न बिग्रह आस न त्रासा।
सुखमय ताहि सदा सब आसा॥
अनारंभ अनिकेत अमानी।
अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी॥

न किसी से वैर करे, न लड़ाई-झगड़ा करे; न आशा रक्खे, न भय ही करे। उसके लिए सभी दिशाएँ सदा सुखमयी हैं। जो कोई भी आरम्भ (आसक्तिपूर्वक कर्म) नहीं करता, जिसका कोई अपना घर नहीं है (घर में ममता नहीं है), जो मानहीन, पापहीन और क्रोधहीन है, जो (भक्ति करने में) निपुण और विज्ञानवान है,

प्रीति सदा सज्जन संसर्गा।
तृन सम बिषय स्वर्ग अपबर्गा॥
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई।
दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई॥

संतजनों के संसर्ग (सत्संग) से जिसे सदा प्रेम है, जिसके मन में सब विषय यहाँ तक कि स्वर्ग और मुक्ति तक (भक्ति के सामने) तृण के समान हैं, जो भक्ति के पक्ष में हठ करता है, पर मूर्खता नहीं करता तथा जिसने सब कुतर्कों को दूर बहा दिया है,

मम गुनग्राम नाम रत गत ममता मद मोह।
ता कर सुख सोइ जानइ परानंद संदोह॥

जो मेरे गुणसमूहों के और मेरे नाम के परायण है, एवं ममता, मद और मोह से रहित है, उसका सुख वही जानता है, जो परमात्मा रूप परानन्द राशि को प्राप्त है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम संकीर्तन

बहुरि नहिं आवना या देस
जो जो गए बहुरि नहिं आए,
पठवत नाहिं सन्देस
सुरनर मुनि अरु पीर औलिया,
देवी देव गनेस
धरि धरि जनम सबै भरमें हैं,
ब्रह्मा विष्णु महेस
जोगी जंगम औ सन्यासी,
दीगम्बर दरवेस
चुण्डित, मुण्डित, पण्डित लोई,
सरग रसातल सेस
ज्ञानी, गुनी, चतुर अरु कविता,
राजा रंक नरेस
कोइ राम कोइ रहिम बखानै,
कोइ कहै आदेस
नाना भेस बनाय सबै मिलि,
ढूंढ़ि फिरे चहुँदेस
कहै कबीर अन्त ना पैहो,
बिन सतगुरु उपदेस

—कबीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री अरविन्द

सात्विक मानवता के अनन्य अवतार-पुरुष : श्रीराम

[कुछ पत्रांश]

सर्वोपरि रूप से श्रीराम का जीवन-कार्य था, ऐसी चीजों की स्थापना करना जिन पर सामाजिक भाव और उसका स्थायित्व निर्भर करते हैं। सत्य, मर्यादा, धर्मभावना सार्वजनिन ... और सुव्यवस्था की चेतना, ऐसे ही तत्व थे जिनकी संस्थापना के लिए श्रीराम अवतरित हुए थे।

श्रीराम पर लगाये गये तुम्हारे आरोपों ने मुझे उलझन में डाल दिया है। वाल्मीकि के राम को कायर कहना तो सम्भव ही नहीं है। राम सदा ही एक योद्धा माने गये हैं, और भारत के युद्धजीवी क्षत्रियों ने ही उन्हें अपना देवता बनाया है।...जहाँ तक रूढ़ नैतिकता की बात है, सारी ही नैतिकता रूढ़ि है। मानसिक या नैतिक रूढ़ियों के बिना मनुष्य जीवित नहीं रह सकता : ऐसी किसी परम्परा या रूढ़ि के अभाव में मनुष्य अपने आपको प्राणिक प्रकृति की अराजक शक्तियों के बेकाबू समन्दर में खोया हुआ महसूस करता है। रूढ़ियों के भंजन का दावा करने ... रसेल और बर्नार्ड शॉ भी, एक ... जाल को तोड़कर अन्ततः उसकी ... दूसरे रूढ़ि-चक्र की रचना करके ही वि... लेते हैं। मन से परे जाकर ही कोई ... से ऊपर उठ सकता है। श्रीकृष्ण ... करने में समर्थ हुए थे, क्योंकि वे मान... मानव प्राणी नहीं थे, बल्कि उपरिमान... ईश्वर थे, जो मानुषिक से, महत्तर ... के भीतर से, मुक्तभाव से कर्म करता ... श्रीराम वह नहीं थे; वे सात्त्विक मान... अवतार थे—मानसिक, भावात्मक, ... सात्विक मानस के अवतार : इसीसे ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...युग और जाति के धर्म का अनुसरण ...था।

●●

...यह आवश्यक नहीं कि कोई अवतार ...आत्मिक द्रष्टा भी हो ही। असल में ...र निरा द्रष्टा ही नहीं होता है : एक साक्षा- ...और संस्था- ...होता है—केवल ...वस्तुओं का ...यद्यपि बाह्य ...वह कुछ ...ओं को साक्षात् ...ता है) पर ...ऐसी मौलिक ...प्रगतिशील ...सत्ता का जो ...विकास के ...आवश्यक ...है। यह ...विकास, ...भूमिकाओं ...कर भाग- ...भूमिका तक ...गी, सदेह आत्म-चैतन्य की एक ...यात्रा होती है। उस विकास की ...आत्मिक भूमिका स्थापित करना ...का काम नहीं था, इसीसे उन्होंने ...उसे अपना प्रयोजन नहीं बनाया। ...काम था रावण को मार कर राम-

राज्य की स्थापना करना। दूसरे शब्दों में कहें तो यह कि उनका प्रयोजन था भविष्य के लिए एक ऐसी व्यवस्था को स्थापित करना, जो उस सात्विक सभ्य मानव-प्राणी के अनुरूप हो, जो अपने जीवन का परिचालन विवेक, सूक्ष्म संवेदना, नैतिकता और सत्य, आज्ञाकारिता, सहकारिता, संवादिता जैसे नैतिक आदर्शों से करता है, जो गार्हस्थिक और सार्वजनिक जीवन को एक अनुशासन प्रदान करता है। यह सब वह स्थापित करता है एक ऐसी दुनिया में, जहाँ अराजक शक्तियोंका प्रभुत्व हो, जहाँ पाशविक मन और प्राणिक अहं का साम्राज्य हो—जो अपनी ही तृप्ति को जीवन का अधिनियम बनाकर चलता है। वानर और राक्षस ऐसी ही शक्तियों के प्रतिनिधि थे। श्रीराम और उनके जीवन-कार्य का प्रयोजन केवल इतना ही है। श्रीराम अवतार थे या नहीं, इसका निर्णय इसी बात से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो सकता है, कि किस हद तक उन्होंने अपने इस प्रयोजन या मिशन को पूरा किया था। आवश्यक रूप से उनका प्रयोजन पूर्णत्व की प्राप्ति नहीं था: उनके व्यक्तित्व की सार्थकता इस बात में थी कि वे सात्विक मानव के महत्तर प्रतिनिधि हों, वे एक एकनिष्ठ पति और प्रेमी हों, वे एक स्नेही और आज्ञाकारी पुत्र हों, वे एक कोमल हृदय और परिपूर्ण भाई हों, पिता हों, मित्र हों। यह सब श्रीराम निश्चय ही थे। उनकी मैत्री और बन्धुत्व का परिकर वहुत विस्तृत और व्यापक था। अन्त्यज गुहक, प्राणीजगत के नेता सुग्रीव और हनुमान, गिद्ध जटायु, और राक्षस विभीषण—सभी उनकी मैत्री के अधिकारी हो सके थे।

सर्वोपरि रूप से श्रीराम का जीवन-कार्य था, ऐसी चीजों की स्थापना जिन पर सामाजिक भाव, और उसका स्थायित्व निर्भर करते हैं। सत्य, मर्यादा, धर्म-भावना, सार्वजनीन चेतना, और सुव्यवस्था की चेतना, ऐसे ही तत्व थे, जिनकी संस्थापना के लिए श्रीराम अवतरित हुए थे। पितृ-प्रेम और पितृ-आज्ञापालन के लिए, उन्होंने अपने राजसिंहासन के वैयक्तिक उत्तराधिकार की बलि चढ़ा कर, जीवन के सर्वश्रेष्ठ चौदह वर्षों तक बनवास भोगना स्वीकार किया था। सार्वजनीन चेतना और सार्व व्यवस्था (जो प्राचीन भारतीयों, यू नियों और रोमनों की दृष्टि में म और परमतम नागरिक गुण क्योंकि उन युगों में व्यक्ति का निजी विकास और परितुष्टि नहीं, पूरे समाज की सुव्यवस्था का निर्वाह मानव-विकास की सर्वोपरि आवश्य थी) की संस्थापना के लिए उन्होंने वैयक्तिक सुख, गार्हस्थ्य जीवन सीता के सुख की बलि चढ़ा दी अन्ततः श्रीराम का प्रयोजन था, रा की आसुरिक प्रभुता का विनाश सात्त्विक मानवता के आदर्श की स्था के लिए जगत को सुरक्षित बना दे अपने व्यक्तित्त्व और कर्म के भीतर ऐसा दिव्य उन्मेष लेकर उन्होंने सब किया था, कि आज हजारों बीत जाने पर भी उनकी व्यक्तित्व भारत के सांस्कृतिक मानस पर अ रूप से अंकित और जीवन्त है। चीज़ के लिए श्रीराम खड़े रहे, जो कुछ उन्होंने किया, वह आज भूमण्डल के सभी देशों के आदर्शों मानव मन के विवेक को प्रभावित प्रशासित करता है। मानवप्राण निरन्तर विद्रोही विस्फोटों के बाव श्रीराम की यह आदर्श-चेतना, तब मानव-हृदय को परिचालित करती रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक, उससे महत्तर किसी आदर्श की स्थापना नहीं हो जाती। हमारे, तुम्हारे सारे वितर्कों के बावजूद, निश्चय ही श्रीराम का स्थान, सर्वकाल के लिए, मानव-जाति की विरल विभूतियों और अवतारों के बीच रहेगा। मानव-विकास की विराट योजना में, सात्त्विक मानवता के अवतार-पुरुष का स्थान, श्रीराम के व्यक्तित्व के अभाव में रिक्त पड़ जायेगा। उस रिक्त को श्रीराम ही भर सकते हैं। जैसे मानव-विकास के उत्तरकाल में श्रीकृष्ण अधिमानसिक अतिमानवत्व के एकमेव परम अवतार थे, वैसे ही उसके पूर्वगामी काल में श्रीराम सात्त्विक परम मानवत्व के एकमात्र और अनन्य अवतार-पुरुष थे।

★

कर्मवीर बनो

यदि तुम संसार का भार उठाने के लिये सचमुच तत्पर हो, तो प्रसन्नतापूर्वक उसे उठाओ; किन्तु हमारे कानों में तुम्हारी कराह और अभिशापों की ध्वनि नहीं पड़नी चाहिए। हमें अपनी मुसीबतों से डराओ मत, ताकि हम समझने लगें कि हम भी अपनी मुसीबतों के साथ तुमसे ज्यादा सुखी हैं। जो मनुष्य वास्तव में बोझ उठाता है वह संसार को धन्यवाद देता हुआ चुपचाप अपने मार्ग पर चलता है। उसके मुख से निन्दा, भर्त्सना का एक भी शब्द नहीं निकलता। इसलिए नहीं कि कहीं कोई बुराइ नहीं है, बल्कि इसलिए कि उसने स्वेच्छा से, स्वप्रेरणा से उस बोझ को अपने कंधे पर उठाया है।

— स्वामी विवेकानन्द

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[भगवान की जन्म-जयन्ती चैत्र
शुक्ला त्रयोदशी के उपलक्ष्य में]

भगवान महावीर यों बोले

लोग इस जीवन के सत्कार, मान और पूजन के लिए, अथवा जन्म-मरण से मुक्ति प्राप्त करने के लिए, अथवा दुःख का प्रतिकार करने के लिए, विविध प्रवृत्तियाँ करते हैं। अपनी उन प्रवृत्तियों द्वारा, वे आतुर जन सर्वत्र दूसरे प्राणियों की हिंसा करते और उन्हें परिताप देते हैं। यह वस्तु उनके लिए अहितकर है, और सच्चे ज्ञान की प्राप्ति में बाधक है। विविध जीवों का घात करना ग्रंथ (बन्धन) है, मार (मृत्यु) है तथा नरक है।

प्रत्येक प्राणी की शान्ति का विचार करके तथा उसे ठीक-ठीक समझ कर मैं कहता हूँ कि, सभी भूत प्राणियों को पीड़ा अशान्ति या भय दुःख रूप है। इसी से मेधावी पुरुष को चाहिए कि न उनकी हिंसा करे, न करवाये।

जो मनुष्य विविध प्राणियों की हिंसा में अपना ही अनिष्ट और अहित देख सकता है, वही उसका त्याग करने में समर्थ हो सकता है। जो मनुष्य अपना दुःख जानता है, वह बाहर के प्राणियों का दुःख भी जानता है। और जो बाहर के प्राणियों का दुःख जानता है, वह अपना दुःख भी जानता है।

मनुष्य को अन्य जीवों के प्रति बेदरकार नहीं रहना चाहिए। जो अन्य जीवों के प्रति बेदरकार रहता है, वह अपनी आत्मा के प्रति भी बेदरकार रहता है। और जो अपनी आत्मा के प्रति बेदरकार रहता है, वह अन्य जीवों के प्रति भी बेदरकार रहता है।

● ● ●

एक बार कुछ मतवादी जन, एक गोल घेरा बनाकर एक स्थान पर बैठे थे। उसी समय एक आदमी, जलते अंगारों से भरी लोहे की एक कढ़ाई, लोहे की संडसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पकड़े, वहाँ आया और कहने लगा : 'हे मतवादियो, तुम सब अपने-अपने र्म-मार्ग के संस्थापक हो, और परिनिर्वाण तथा मोक्ष का उपदेश करते हुए विचरते हो। तुम यह जलते अंगारों से भरी कढ़ाई एक मुहूर्त भर के लिए खुले हाथों में पकड़ कर रक्खो।'

ऐसा कहकर वह मनुष्य जलते अंगारों से भरी कढ़ाई प्रत्येक वादी के हाथ में धरते गया। पर उनमें से प्रत्येक वादी ने अपने-अपने हाथ पीछे खींच लिये। तब उस मनुष्य ने उनसे पूछा : 'हे धर्म-संस्थापको, तुम सब अपने हाथ क्यों पीछे खींच रहे हो? हाथ जल न जायें इसीलिए न? और जल जायें तो क्या हो जाये? दुःख? दुःख होता है, इसी से तुम अपने हाथ वापस खींच लेते हो, यही न?

"तो इसी गज़ और माप से औरों के बारे में भी विचार करना ही, क्या धर्म-विचार न कहा जायेगा? बस, तो फिर हमें मापने का गज, प्रमाण और धर्म-विचार प्राप्त हो गया। इसी से जो श्रमण-ब्राह्मण यह कहते और उपदेश देते हैं कि सारे ही भूत-प्राणियों को मारना चाहिए, उनसे बलात्कार-पूर्वक काम करवाना चाहिए, अथवा उनका शोषणपीड़न करना चाहिए, वे सब भविष्य में ऐसे ही छेदन-भेदन, जन्म-जरा-मरण पायेंगे और अनेक योनियों में भटकते हुए भव-प्रपंच की यातनाएँ सहेंगे। उन्हें मातृ-मरण, पितृ-मरण, भ्रातृ-मरण, तथा उसी प्रकार भार्या, पुत्र, पुत्री, तथा पुत्र-वधू के मरण का दुःख भोगना होगा। उन्हें दरिद्रता, दुर्भाग्य, अप्रिय-प्राप्ति, प्रिय-वियोग आदि अनेक प्रकार के दुःख-दौर्मनस्य झेलने होंगे। उन्हें सिद्धि या बोध प्राप्त होना असम्भव है, तथा वे सारे दुःखों का अन्त लाने में समर्थ नहीं हो सकेंगे।

परन्तु जो श्रमण-ब्राह्मण अहिंसा-धर्म का उपदेश करते हैं, वे ये सारे दुःख नहीं पायेंगे, तथा वे सिद्धि और बोध प्राप्त करके, सारे दुःखों का अन्त लाने में समर्थ हो सकेंगे।

—सूत्रकृतांग

• • •

कांपिल्य नगर में संयत नामा एक राजा राज्य करता था। वह एक बार चतुरंगी सेना और वाहक लेकर मृगया करने के लिए कांपिल्यपुर के पास ही स्थित केसर नामक उद्यान में गया। मृगया के उन्माद में प्रमत्त हो कर, वह राजा घोड़े पर बैठकर मृगों पर बाण चलाता हुआ, उस उद्यान में घूमने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस उद्यान के एक लता-मंडप में बैठे एक मुनि ध्यान धर रहे थे। राजा ने मृगया की धुन में उस ओर भी बाण छोड़े थे और कई मृग उन मुनि के आस-पास ही मरे हुए पड़े थे। अचानक राजा को वे मुनि दिखायी पड़ गये। उन्हें देखकर राजा घबरा गया। वह यह देखने को घोड़े पर से उतर पड़ा, कि कहीं उसके बाणों ने मुनि का घात तो नहीं किया है ? सो विनयपूर्वक मुनि को नमस्कार कर अनजान में किये अपने अपराध के लिए वह उनसे क्षमा माँगने लगा।

पहले तो ध्यानस्थ मुनि ने राजा को कोई उत्तर नहीं दिया। इससे और भी घबरा कर, वह राजा मुनि को अपना परिचय देता हुआ कहने लगा: 'हे भगवन्, मैं संयत राजा हूँ। आप मुझे उत्तर दीजिए। मैंने सुना है, कि क्रुद्ध हो जाने पर मुनि अपने तेज से करोड़ों मनुष्यों को जलाकर भस्म कर देते हैं।'

यह सुनकर मुनि ने राजा को उत्तर दिया, 'हे राजा, तू निर्भय हो जा, तथा उसी प्रकार अन्य प्राणियों को भी अभय देने वाला बन। तू जिस मृत्यु के भय से उद्विग्न होकर, इस प्रकार क्षमा-याचना करता है, उसी मृत्यु के मुख में तू प्राणियों को क्यों ढकेलता है ? इस अनित्य जीव-लोक में सुख की इच्छा से मनुष्य को क्यों अन्य प्राणियों की हिंसा करनी चाहिए ? जब हर प्राणी को मरण आने ही वाला है, तो फिर बिजली के चमकारे जैसे इस क्षणिक जीवन या उसके सुखों में आसक्ति किसलिए ? तुम जिन्हें प्रिय मानते हो वे सुख तथा स्त्री-पुत्र सम्बन्धी इत्यादि सुख के साधन मरने के बाद साथ आनेवाले नहीं हैं। उलटे मरे हुए पिता को पुत्र, तथा मरे हुए पुत्र को पिता घर से बाहर निकाल देते हैं। फिर उस मनुष्य द्वारा उपार्जित द्रव्य से अलंकृत होकर पर-पुरुष, उसके द्वारा सुरक्षित रखी गयी स्त्रियों के साथ हृष्ट और तुष्ट होकर क्रीड़ा करते हैं। परन्तु वह मनुष्य तो अपने किये हुए शुभाशुभ कर्मों के साथ ही परलोक में जाता है।'

गद्दमाली मुनि के इस उपदेश से संयत राजा ने संवेग और निर्वेद प्राप्त कर, राज-पाट का त्याग कर दिया और उनके निकट जैनश्वरी दीक्षा ले ली।

— उत्तराध्ययन सूत्र

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

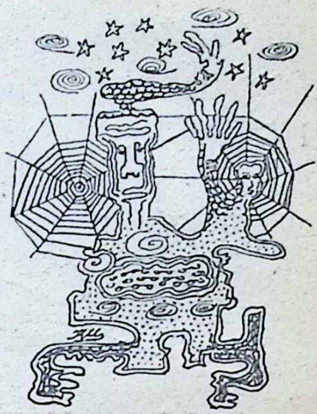

प्रभाकर माचवे

●

दो कविताएं

…ों का स्पर्श

…ोटा, मनोना
…जमी झील, विस्तार–दस मील
…र वसन्त
…ें ललाई लिये नये वृन्त
…ियाँ जमेंगी,
…र आयेगी दक्खिन से अबाबील
…ोटा, मनोना
…ायेंगे पाल
…ें नावों के, डोंगियों के,
…ें खेल
…र खिलखिलाती तरुणियाँ
…यान–तरणियाँ
…ों की होड़ चलेगी सुनील
…ों में आकाश पक्षी के पंख-पाश
…र किसी देश में सुधि की पतंग ढील
…न बने गीतमय
…ों में जैसे 'स्केट' करती लय :
…ोटा, मनोना और
…ोना, मैंडोटा

●

…न

…न दो मुझे
…अपने से जूझ सकूँ
…ण हवा से मिलकर गर्मी बनती है
…र भी प्रकाश औ' हवा अलग अस्तित्व पहनती है
…आदि-पहेली बूझ सकूँ
…न दो मुझे
…ों से ऊपर उठ कर पूज सकूँ
…दीपक मिलकर लौ एक बनाते हैं
…ी खिड़की से आती किरणें छायाएँ एक रचाते हैं
…सूने में नयी ऋचा बन गूँज सकूँ।

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

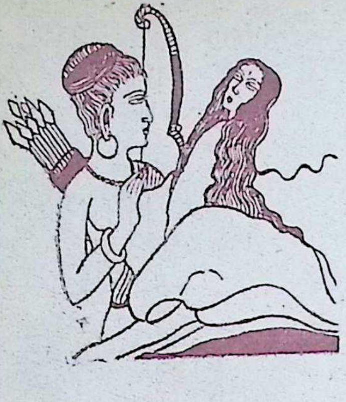

श्रीराम द्वारा अहिल्या का उद्धार

'रामायण' और 'महाभारत', भारत की शाश्वती आत्मा की महागाथा हैं, इतिहास हैं। अन्य इतिहास समय के साथ परिवर्तित हुए हैं, पर 'रामायण' और 'महाभारत' में परिवर्तन नहीं हुआ। भारतवर्ष की जो साधना, जो आराधना, जो संकल्प हैं, उन्हीं का इतिहास इन दोनों विशालकाय काव्य-प्रासादों के भीतर चिरकालिक सिंहासन पर विराजमान है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

भारत की आत्मा का महाकाव्य : रामायण

साधारणतः काव्य के दो विभाग किये जा सकते हैं। एक तो वह जिसमें केवल कवि की बात होती है और दूसरा वह जिसमें किसी बड़े सम्प्रदाय या समाज की बात होती है।

केवल कवि की बात कहने से यह न समझना चाहिए कि यह बात ऐसी है, जो औरों की समझ में नहीं आ सकती; ऐसा होने से तो उसे एक प्रकार का प्रलाप ही कहा जायेगा। कवि की बात का तात्पर्य उसकी सामर्थ्य से है, जिसमें उसके सुख-दुःख, उसकी कल्पना और उसके जीवन की अभिज्ञता के अन्दर से, संसार के सारे मनुष्यों के चिरन्तन हृदयावेग और जीवन की मार्मिक बातें आप ही आप प्रतिध्वनित हो उठती हैं।

जैसे ये एक प्रकार के कवि हैं, वैसे ही दूसरी श्रेणी के कवि वे हैं, जिनकी रचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...अन्तस्तल से एक सारा देश, एक सारा ...अपने हृदय को और अपनी अभिज्ञता ...प्रकट करके, उस रचना को सदा के ...समादरणीय सामग्री बना देता है। इस दूसरी श्रेणी के कवि ही महाकवि ...जाते हैं। ...देशों और ...जातियों ...सरस्वती ...का आश्रय ...ती है। ये जो ...ना करते हैं, ...किसी व्यक्ति ...की लिखी ...म नहीं ...ती। कहने ... अभिप्राय ...है कि उनकी ...तियाँ देश- ...और जाति- ...को मान्य ...ती हैं। उनकी ...ना उस बड़े ... की–सी ...होती है, जो देश के हृदयरूपी ...से उत्पन्न होकर उस देशभर को ...रूपी छाया देता हुआ खड़ा हो। ...न्तला और कुमारसम्भव में कालिदास ...कलम का कौशल दिखानी पड़ती है,

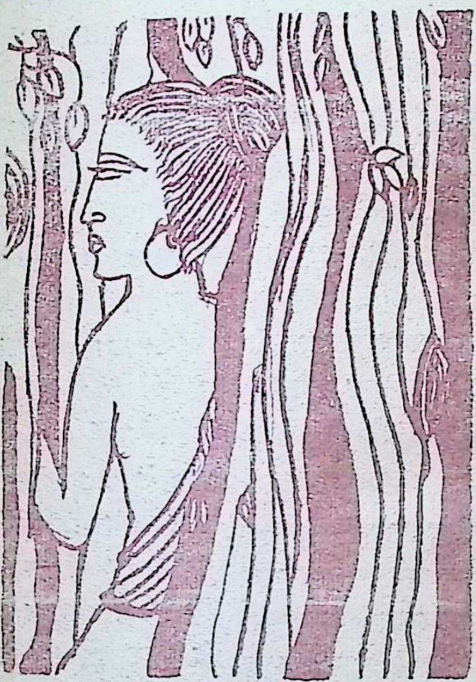

सीता की खोज में वन-वन भटकते श्रीराम

किन्तु रामायण और महाभारत, हिमालय और गंगा की भाँति ही, भारत के मालूम होते हैं– वाल्मीकि और व्यास तो उपलक्ष्य मात्र हैं। भावार्थ यह कि इनके पढ़ने से भारत झलकने लगता है, व्यास और वाल्मीकि नहीं।

वस्तुतः वाल्मीकि और व्यास किसी का नाम नहीं था; नामकरण मात्र ही इनका उद्देश्य है। इतने महान दो ग्रन्थ, समस्त भारत व्यापी दो काव्य, अपने रचयिता कवियों के नाम लुप्त कर बैठे हैं। कवि अपने काव्यों के अन्दर ही लुप्त हो गये हैं। सारांश यह कि आज समस्त भारतवासी रामायण और महाभारत के नाम लेने के सिवा उनके रचयिता वाल्मीकि और व्यास के नाम नहीं लेते।

हमारे देश में जैसे रामायण और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभारत हैं, वैसे ही ग्रीस में इलियड था। वह सारे ग्रीस के हृदय-कमल से जन्मा था और उसी हृदय कमल में आसीन था। कवि होमर ने अपने देश और काल को अपनी भाषा का कंठ दिया था—देश-काल की अवस्था को भाषा-निबद्ध किया था। ऐसे महाकवियों के वाक्य झरनों के समान अपने-अपने देश के अन्तस्तल से निकलकर बहुत दिनों से उसे आप्लावित करते आये हैं।

किसी आधुनिक काव्य में ऐसी व्यापकता नहीं देखी जाती। मिल्टन के 'पैराडाइज़ लॉस्ट' में भाषा का गाम्भीर्य, छन्दों का औचित्य, रसों का परिपाक कितना ही क्यों न हो, पर वह देश का धन नहीं है; उससे केवल पुस्तकालय की ही शोभा हो सकती है।

अतएव कुछ प्राचीन काव्यों को एक श्रेणी में रखकर यदि उनका नामकरण किया जाये, तो वह नाम 'महाकाव्य' के सिवा और क्या होगा? ये महाकाव्य प्राचीन काल के देवताओं और दानवों के समान ही विशालकाय थे। अब इनकी जाति लुप्त हो गयी हैं। अब संसार भर में कहीं भी महाकाव्यों का अवतार नहीं होता।

प्राचीन आर्य-सभ्यता की एक धारा यूरोप में और दूसरी भारत में प्रवाहित हुई है। यूरोप की धारा दो महाकाव्यों में और भारत की धारा भी दो महाकाव्यों में अपने-अपने देशों के वृत्तान्तों और संगीतों को सिंचित करती आ रही है।

हम लोग विदेशी हैं, इससे हम निश्चय से नहीं कह सकते कि ग्रीस का प्राकृतिक चित्र पूर्णतः उसके काव्यों में उतरा है कि नहीं; पर रामायण और महाभारत में भारतवर्ष का सर्वांग सम्पन्न चित्र उतरने में कुछ भी कोर-कसर नहीं रही है।

अतएव शताब्दियों पर शताब्दियाँ बीतती चली जाती हैं, किन्तु रामायण और महाभारत का स्रोत भारत में नाम को भी शुष्क नहीं होता। प्रतिदिन गाँव-गाँव घर-घर उनका पाठ होता रहता है। क्या बाज़ार की दूकानों पर और क्या राजा के दरवाज़ों पर; सर्वत्र उनका समान भाव से आदर होता है। वे दोनों महाकवि धन्य हैं, जिनके नाम तो काल के महाप्रान्तर में लुप्त हो गये हैं; किन्तु जिनकी वाणी आज भी करोड़ों नर-नारियों के द्वार-द्वार पर अपनी निरन्तर प्रवहमान धाराओं से शक्ति और शान्ति पहुँचाती फिरती है और सैंकड़ों प्राचीन शताब्दियों की उपजाऊ मिट्टी को दिनों-दिन वहा लाकर भारत की चित्त-भूमि को उर्वरा बनाये हुए है।

ऐसी अवस्था में रामायण और महाभारत को केवल महाकाव्य कहने से ही काम न चलेगा। वे इतिहास भी हैं;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ु घटनावलियों के नहीं। क्योंकि इतिहास किसी विशेष समय की विशेष ा के आधार पर खड़े होते हैं, पर ण या महाभारत भारतवर्ष के ं इतिहास हैं। अन्यान्य इतिहास समय-पर परिवर्तित हो गये हैं, पर रामायण महाभारत में परिवर्तन नहीं हुआ। वर्ष की जो साधना, जो आराधना जो संकल्प हैं, उन्हीं का इतिहास दोनों विशाल-काय काव्य-प्रसादों के चिरकालिक सिंहासन पर विराज- है।

एव रामायण और महाभारत की चना अन्यान्य काव्यों की आलोचना आदर्श से स्वतंत्र है। राम का चरित्र है या नीच, लक्ष्मण का चरित्र अच्छा मालूम होता है या बुरा, ही आलोचना यथेष्ट नहीं समझी गी। संयत होकर श्रद्धा के साथ र करना होगा कि समस्त भारत ों वर्ष से इन पुरुषों को किस दृष्टि खता आ रहा है।

रामायण में भारतवर्ष क्या कहता है, रत में भारतवर्ष ने किस आदर्श महान स्वीकार किया है, इसी विषय इस समय हमें विचार करना है।

साधारण की यह धारणा है कि रस-प्रधान काव्य ही 'ऐपिक' कहलाते इसका कारण यह है कि जिस देश में जिस समय वीररस के गौरव को ही प्रधानता मिली है, उस देश में, उस समय, स्वभावतः ही 'एपिक' वीर-रस-प्रधान हो गया है। रामायण में भी युद्ध-व्यापार यथेष्ट है; राम का बाहुबल भी सामान्य नहीं है, तथापि रामायण में जो रस सर्वापेक्षा प्रधान है, वह वीररस नहीं है। उसमें बाहुबल की विजय-दुन्दुभि नहीं बजी है। युद्ध-घटना उसके वर्णन का मुख्य विषय नहीं है।

देवता की अवतार–लीला का आलम्ब लेकर यह काव्य बनाया गया हो, सो भी नहीं है। कवि वाल्मीकि के निकट राम अवतार नहीं थे, मनुष्य ही थे, इस बात को पण्डित-मण्डली ही मण्डित करेगी। यहाँ संक्षेप में सिर्फ यही बात कही जा सकती है कि कवि यदि रामायण में नर-चरित्र का वर्णन न करके देव–चरित्र का वर्णन करते, तो रामायण के गौरव का ह्रास हो जाता; महत्व में न्यूनता आ जाती। इतना ही नहीं वह काव्यांश में भी क्षति-ग्रस्त हो जाता। मनुष्य होने से ही राम–चरित्र इतना महत्वपूर्ण है।

बालकाण्ड के प्रथम सर्ग में वाल्मीकि ने अपने काव्य के उपयुक्त नायक के अनुसंधान में सारे गुणों का उल्लेख कर नारद से पूछा—

[आगे पृष्ठ २४ पर देखें]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

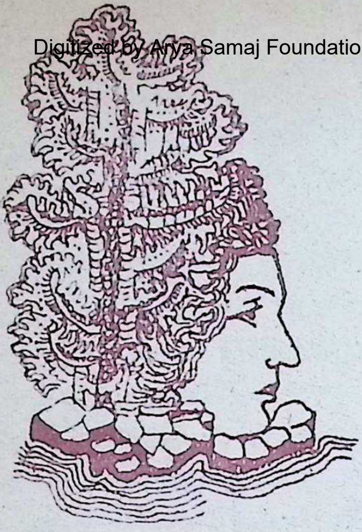

हवा से

हलका गुलाबी परस आँकती
हवा की उँगलियों से
मैंने कहा था
"जाकर—
फूलों में सोयी गंध को
उनींदी घटाओं को
वन पर्वत-सागर को
सूरज को
सब कुछ को गुदगुदा दो.....
पगला दो.....!
वे आयेंगे".....!
पर आनेवाले क्षणों की
हर सीढ़ी चुप है
कहीं भी कोई आहट नहीं.
और मैंने हवा से कह दिया है:
"तुम इन सब को
पगलाती रहो
वे आयेंगे....
बस आते ही होंगे......."!

ज्योत्स्ना मिलन

दो कविताएं

अनीप्सित

मेरी बंद खिड़की के
काँचों से चिपक कर
अंधेरा बेतरह रो रहा है...
लेकिन...?
मैं उसे भीतर नहीं आने दे सकूंगी
नहीं बिल्कुल भी नहीं!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हें चुभते हुए कांटे की तरह
न किया करता हूँ।
र तब, भगवान
वीर को दंश मारते हुए
कौशिक-सर्प को
किया करता हूँ।
बो; कभी तो मेरे अंगूठे से
के बदले....
के बदले.....
निकलेगा।
देखा करता हूँ बिम्बों प्रतिबिम्बों को,
मुझे कुहरे के कितने चश्में पहनाओगे,
ह के बैल की तरह।
सुनता हूँ: सन्नाटों के नीचे दबी हुई,
दोलन को आतुर,
नी सम्बोधन के लिए भटकती हुई
जों की प्रेतात्माओं को।
नो, तुम कब तक? मेरे कानों पर
लटकाओगे?
तर,
ही उस चरवाहे की तरह
कानों में कीले ठोकने पड़ेंगे
में हूँ जो,
, और आज के बाद कल
की उतरती हुई
यों पर बैठकर
रा असंख्य बार इन्तजार करता रहूँगा।

•

कुन्तल कुमार जैन

•

आस्था की पुकार

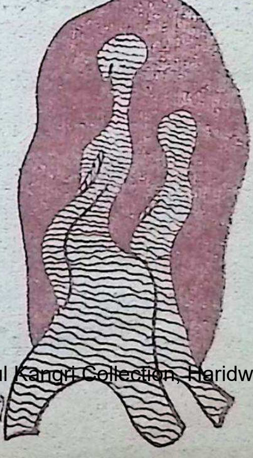

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"समग्रा रूपिणी लक्ष्मी : कमेकं संश्रिता नरं।"

मूर्तिमती समग्र लक्ष्मी ने किस एकमात्र मनुष्य का आश्रय लिया है? तब नारद ने कहा—

देवेष्वपि न पश्यामि कश्चिदेभिर्गुणैर्युतम् ।
श्रूयतां तु गुणैरेभिर्यो युक्तो नरचन्द्रमाः ॥

इन गुणों से युक्त पुरुष तो देवताओं में भी नहीं है। हाँ, जो नर-चन्द्र इन गुणों से पूर्ण है, उनकी बात सुनो।

रामायण में उसी नर-चन्द्र का वृत्तान्त है, देवता का नहीं। रामायण में देवता को हीन बनाकर मनुष्य नहीं हुआ है, बल्कि मनुष्य ही अपने गुणों से उच्च होकर देवता हो गया है।

मनुष्य के चूड़ान्त आदर्श की स्थापना के लिए ही कवि ने इस महाकाव्य की रचना की है और उस दिन से आज तक मनुष्य के उस आदर्श-चरित्र-वर्णन का पाठ भारतवासी अत्यन्त आग्रह और परम समादर के साथ करते आ रहे हैं।

रामायण की मुख्य विशेषता यही है कि उसमें घर की बातें अत्यन्त विस्तृत रूप से वर्णित हुई हैं। पिता-पुत्र में, भाई-भाई में, स्वामी-स्त्री में जो धर्म-बन्धन है, जो प्रीति और भक्ति का सम्बन्ध है, उसको रामायण ने इतना महत् बना दिया है कि वह बहुत ही सहज में महाकाव्य के उपयुक्त हो गया है। साधारणतः महाकाव्यों में देश विजय, शत्रु-संहार, दो प्रवल प्रतिद्वन्दियों के प्रचण्ड घात-प्रतिघात, आदि सारे व्यापार आन्दोलन और उद्दीपन के संचारक होते हैं। किन्तु रामायण की महिमा राम-रावण के युद्ध से नहीं है; यह युद्ध-घटना राम और सीता की दाम्पत्य–प्रीति को उज्ज्वल बनाने के लिए उपलक्ष्य मात्र है। पिता के प्रति पुत्र की वश्यता, भाई के लिए भाई का आत्मत्याग, पति-पत्नी में परस्पर की निष्ठा और प्रजा के प्रति राजा का कर्त्तव्य कहाँ तक पहुँच सकता है, यही रामायण में दिखलाया गया है। इस प्रकार प्रधानतः व्यक्ति विशेष के गृह-चरित्र किसी भी देश के महाकाव्य में इस प्रकार वर्णनीय विषय नहीं समझे गये हैं।

इसमें केवल कवि का ही परिचय नहीं होता, भारतवर्ष का भी परिचय होता है। भारत में गृह और गृहधर्म का कितना महत्व है, यह इसी से समझा जा सकता है। हमारे देश में गार्हस्थ्य-धर्म सबसे ऊँचा था, इस बात को यह काव्य प्रमाणित करता है। गृहस्थाश्रम हमारे निज के सुख और सुविधा के लिए नहीं था, वह सारे समाज को धारण किये रहता था और मनुष्य को यथार्थतः मनुष्य बनाये रखता था। गृहस्थाश्रम भारतीय आर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ज की भित्ति है और रामायण उसी महाकाव्य। रामायण ने उस गृह-...श्रम को विसदृश अवस्था में डालकर ...ास के दुःख से गौरवान्वित किया है। ...रा और कैकेयी के कुटिल कुचक्र के ...न आघात से आयोध्या का राजगृह ...त्यापन्न हो गया था; तथापि गृहधर्म ...का त्यों दृढ़ बना रहा था और इसी ...धर्म की दुर्भेद्य दृढ़ता की घोषणा ...यण कर रही है। रामायण ने ...ल को नहीं, जिगीषा को नहीं, राष्ट्र-...त को नहीं, केवल शान्त-रसास्पद ...र्म को ही, करुणा के अश्रु-जल से ...षिक्त कर, महान् शौर्य-वीर्य के ऊपर ...ष्ठित किया है।

...श्रद्धालु पाठक कह सकते हैं कि ऐसी ... में चरित्र-वर्णन अतिशयोक्ति से ...र्ण हो जाता है। यथार्थता की सीमा ...तक है और कल्पना की कौन-सी ...न है, जिसके लांछन से काव्य-कला ...शयोक्ति में परिणत हो जाती है; ...की मीमांसा हो ही नहीं सकती। ...नी समालोचकों ने यह जो कहा है रामायण में चरित्र-वर्णन अप्राकृत ...अतिरंजित हो गया है, उनको यह ...र दिया जा सकता है कि प्रकृति-भेद ...जो एक के निकट अप्राकृत है, वही ...रे के निकट प्राकृत है। भारतवर्ष नहीं देखता कि रामायण में अप्राकृत की अधिकता है।

जहाँ का जो आदर्श प्रचलित है, वह यदि अतिरंजित कर दिया जाये, तो वहाँ वालों को वह अरुचिकर हो जायगा। वे उस आदर्श को ग्राह्य ही नहीं कर सकेंगे। हम अपने कानों में शब्द-तरंगों के जितने आघात उपलब्ध कर सकते हैं, उनकी एक सीमा है। उस सीमा के ऊपर सप्तक में सुर बढ़ाने से हमारे कान उसे ग्रहण नहीं कर सकते; वह बर्दाश्त के बाहर हो जाता है। काव्य में चरित्र और भावों की उद्भावना के सम्बन्ध में भी यही बात घटती है।

राम हमारे लिए देवता स्वरूप हैं; साथ ही मनुष्य स्वरूप भी हैं। यह महाग्रन्थ हमारी भक्ति का और साथ ही प्रीति का भी पात्र हुआ है। ऐसा होना कभी सम्भव नहीं था, यदि रामायण का कवित्व भारत के लिए केवल सुदूर कल्पना-लोक की ही सामग्री होता; हमारी संसार-सीमा के भीतर न होता। रामायण में उसे वही मिला है।

रामायण और महाभारत को मैं विशेषतः इसी भाव से देखता हूँ। इनके सरल छोटे-छोटे अनुष्टुप् छन्दों में भारत का हृत-पिण्ड स्पन्दित हो रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

रामायण का हार्द

जो रामायण को एक दृष्टांत कथा मानते हैं, वे सीता को एक विशिष्ट आत्मा और राम को परम पुरुष के रूप में व्याख्यायित करते हैं। भगवान मानव आत्मा को खोजता है और उसका तब तक अनुसरण करता है, जब तक उसे पा नहीं लेता। वह हमारी रक्षा के लिए उत्सुक है; बस केवल हम बाधक न हों, अवरोध पैदा न करें।

एक समय की बात है जब गांधीजी और मैं, एक ऐसी लड़की के बारे में बात कर रहे थे, जो हम दोनों को ही बहुत प्यारी थी।

मैंने कहा : "आजकल की प्रेम-कथाओं को पढ़े बग़ैर कैसे उसने प्रेम के इन संवादों, विचारों और वाक्यों को सीख लिया?"

गांधीजी ने उत्तर में कहा : "लेकिन क्या उसने रामायण नहीं पढ़ी? क्या रामायण भी एक प्रेम-कथा नहीं है?" यह बात मेरे गहरे अतल को छू गयी। फिर हम दूसरी बातचीत में लग गये।

दशरथ की कठिनाइयाँ प्रेम के साथ ही शुरू होती हैं। अयोध्याकांड का विषय और सार ही राम-सीता का प्रेम है।

जिस प्रेम में धर्म का विरोध नहीं होता, वहाँ हम भगवान का प्राकट्य पाते हैं। अर्जुन को अपना विराट-रूप-दर्शन कराते समय श्रीकृष्ण ने इस बात की पुष्टि की है।

रामायण में, दुहरा विषय होने के कारण, ऐसा प्रेम भी है, धर्म के लिए जिसका विरोध भी हुआ है। निःसन्देह रामायण एक महान प्रेम-कथा है।

जो रामायण को एक दृष्टान्त कथा मानते हैं, वे सीता को एक विशिष्ट आत्मा और राम को परम पुरुष के रूप में व्याख्यायित करते हैं। भगवान मानव आत्मा को खोजता है और उसका तब तक अनुसरण करता है, जब तक उसे पा नहीं लेता। वह हमारी रक्षा के लिए उत्सुक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस केवल हम बाधक न हों, अवरोध
न करें।

रामायण की और भी अनेक व्याख्याएँ
त की जाती हैं। परमपुरुष की नारी
मूर्ति सीता है, जो करुणा और कृपा
साकार रूप है। करुणा परम माता
जो भगवान के हृदय
निवास करती है।
उसकी दया-दृष्टि
पर पड़ती है, हम
नन्द-चरणों को पा
ते हैं। शिव के
दर्भ में पार्वती
र हरि के सन्दर्भ
लक्ष्मी का कार्य-
दर्श एक ही है;
नन्द-कृपा पर
र रहो' इस
तन धर्म के ये भिन्न
मात्र हैं। पितृरूप
वान् और मातृ-
भगवान में भेद
ीं किया जा सकता। यदि हम करुणा
भगवान से अलग कर दें, तो हमारी
ति उस रावण के समान होगी, जिसने
ता को राम से अलग किया था।

त्य मानवीय प्रेम के अनुभव द्वारा हम
नन्द-आज्ञा के गुण को समझ सकते हैं।

सीता की अग्नि-परीक्षा

रामायण का ग्रहण अनेक रूपों में और अर्थों में किया जा सकता है और इसकी प्रशंसा भी उस हीरे के समान अनेक प्रकारों से की जा सकती है, जिसमें विविध प्रभावपूर्ण रंग प्रकाशित होते हैं।

बच्चों के लिए भी मुझे एक शब्द कहना है। राम, लक्ष्मण और हनुमान को उन्हें अपने पिता और बड़े भाइयों के समान मानना चाहिए, जो सदा उनके आस-पास उनकी सहायता के लिए प्रस्तुत रहते हैं। भरत, लक्ष्मण और हनुमान के समान अपना विकास करो, जो सुन्दर और बहादुर आत्माएँ थीं, प्रेम और शक्ति से सम्पूर्ण थीं।

माताएँ भी इस कथा को आनन्द से पढ़ती रही हैं। जो कुछ भी हम करते हैं, अपने बच्चों की खातिर करते हैं; क्या ऐसा नहीं है? केवल स्त्रियाँ ही सीता के अनुभवों और अनुभूतियों को प्रतीत कर सकती और पुनः जी सकती हैं। वाल्मीकि और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम्बन के द्वारा कही गयी सीता की कथा केवल स्त्रियों से ही पूर्ण प्रशंसित हो सकती है। जटायु के साहस और हनुमान की ताकत की पूरी सराहना उन्हीं के मुख से हो सकती है। सीता के दुःखों की परिणति केवल रामायण में ही नहीं हो जाती। वे आज भी हमारी स्त्रियों के जीवन में व्याप्त हैं।

राम-अवतार में, राम यह नहीं जानते थे कि वे भगवान के अवतार हैं। कृष्ण को मालूम था कि वे अवतार हैं और उसके अनुसार ही उन्होंने जीवन में कर्म किया। मन में इस अन्तर को रखकर ही हमें इन दो कथाओं को पढ़ना चाहिए। जो निराशा और दुःख मानव राम ने अपने जीवन में अनुभव किया, कृष्ण उस अनुभव के बाहर थे। जब उन्होंने राक्षसी पूतना का वक्ष चूस डाला था, जब वे रस्सी से बाँधे गये और उन्हें उनकी शरारतों के लिए डपटा गया, उन्होंने उसकी न तो चिन्ता ही की और न कुछ दुख ही माना। युद्ध में निःशस्त्र खड़े रहकर उन्होंने दुर्जन के विनाश के लिए योद्धा के रथ का संचालन किया। कृष्ण की हर घटना में हम इन दो अवतारों का भेद जान लेते हैं।

जहाँ तक मैं सोचता हूँ—वाल्मीकि के समय के पहले से ही एक लोकोक्ति चली आती है कि सीता की पुर्नप्राप्ति के बाद लोकापवाद के भय से राम ने उन्हें वन में रहने के लिए भेज दिया।

यह दुखद घटना हमारी स्त्रियों के वेदनापूरित कल्पना की उपज लगती है। रामायण के उत्तरकाण्ड के रूप में उसने आकार लिया है। उत्तरकाण्ड में सौन्दर्य है, फिर भी मेरा अन्तःकरण इसका विरोध करता है। युद्ध क्षेत्र में अग्नि-परीक्षा द्वारा वाल्मीकि ने इस पुरानी कथा को समाप्त कर दिया था। यहाँ तक कि अग्निपरीक्षा की घटना को राम-चरित के साथ जोड़ना भी मुझे उचित नहीं लगता। इसे पढ़ना भी दुखदायी है।

राजपुत्र के मिथिला से लौटने पर ही उनकी भेंट परशुराम से हो जाती है। मैंने यह कहते हुए सुना है कि इस भेंट के पश्चात् परशुराम का अवतार समाप्ति पर आ जाता है। यदि हम इसी तरह सोचें तो रावण-वध के बाद राम का अवतार भी समाप्त हो जाना चाहिए। उस युद्ध के बाद राम केवल इक्ष्वाकु-कुल के राजा मात्र रह जाते हैं।

इस सिद्धान्त के अनुसार युद्ध के बाद उत्तरकाण्ड में सीता के प्रति राम का व्यवहार, समय के रीति-रिवाजों के अनुरूप एक राजा का व्यवहार कहकर व्याख्यायित किया जाना चाहिए।

लेकिन हज़ारों बरसों पहले लिखे गये और संशोधित, वर्धित भोज-पत्रों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाण्डुलिपियों पर प्राप्त किसी ग्रन्थ ... हम कैसे टिप्पणी कर सकते हैं। यदि युद्धकाण्ड की अग्निपरीक्षा के वाद भी, उत्तरकाण्ड में सीता को वन भेजने की बात कही जा सकती है, तो वह घटना जो हमारी स्त्री जाति की निशब्द, अन्तहीन यातनाओं का दर्पण बन जाती है। दुःख और सुख दोनों ही भगवान की लीलाएँ हैं। भगवान ने खुद अपने साथ अपनी दिव्य-पत्नी को लिया, जो स्वयं उनकी अपनी ही परम करुणा का मूर्तिमान रूप है। वे उसे स्त्रियों और पुरुषों के संसार में ले गये, और रामायण में उसके साथ सुख-दुख का एक महान नाटक खेला।

आसमान में से गिरता हुआ वर्षा का पानी नदियों में बहता है और समुद्र की ओर दौड़ने लगता है। सागर से पानी फिर सूर्य के द्वारा सोख लिया जाता है और आकाश में उठता है, फिर यह बरसात के रूप में पृथ्वी पर गिरता है और नदियों के रूप में बहने लगता है। इसी प्रकार मनुष्यों की अनुभूतियाँ और उनके मूल्य उठते हैं और कवि–हृदय को स्पर्श करते हुए एक कविता में रूपान्तरित हो जाते हैं, वही कविता फिर मनुष्यों को ही आनन्द और प्रेरणा देती है। इस प्रकार हर देश में कवि और समाज एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। स्त्रियों की कोमलता, पवित्रता और अनकही पीड़ाओं ने उत्तर रामायण का आकार लिया है। किसी अविकम्पित दीपक के समान यह उनके हृदय के गुणों पर प्रकाश डालती है। सामान्य लोक-विश्वासों और विचारों ने किसी राष्ट्र के महाकाव्यों और गीतों को जन्म दिया या राष्ट्र के साहित्य ने राष्ट्र के विचारों और विश्वासों की उद्‌भावना की, इसका उत्तर स्वेच्छा पर निर्भर है। बीज को पौधे ने जन्म दिया या वौधे को बीज ने पैदा किया? पक्षी या अंडा कौन पहले था? बादल समुद्र से उठे या समुद्र आकाश के पानियों से भर गया? ये सब जिज्ञासाएँ हमें भगवान के चरणों में ले जाती हैं, जहाँ वाणी और विचार अतीत हो जाते हैं।

एक और बात। रावण सीता को कैसे उठाकर ले गया, इस वर्णन में वाल्मीकि से कम्बन का मतभेद है। कम्बन की रामायण में, रावण सीता को इस प्रकार नहीं पकड़कर ले जाता, जैसा वाल्मीकि ने वर्णन किया है। वह सीता का स्पर्श किये बिना ही उन्हें उस धरती के सहित उठाकर ले जाता है, जिस पर वे खड़ी थीं। कम्बन का यह वर्णन अनेक लोकप्रिय व्याख्याताओं द्वारा ग्रहण किया गया है, क्योंकि इससे हमारी भावनाओं को कम चोट पहुँचती है।

किसी निर्दोष स्त्री के लिए यह कोई पाप

[शेष पृष्ठ ४९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

डॉ. कन्हैयालाल मुन्शी
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराम : मेरी दृष्टि में

मानव की मूलभूत अभीप्सा 'सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्' के लिए है। श्रीरामचन्द्र मनुष्य की इस चरम-परम अभीप्सा के अवतार थे। इसी से मानव जाति के लिए वे सनातन प्रेरणा के स्रोत होकर रह गये हैं।

भारतीय विद्या या भारतीय संस्कृति के तीन स्वरूप हैं: सत्यं, शिवं, सुन्दरम्। सत्य शिव का ही एक मूलभूत अंश है। जब अविचल सत्य निरहंकार शिव से जुड़ जाता है, तब सुन्दर का प्रादुर्भाव होता है।

श्री रामचन्द्र के चरित में रामायण इन तीनों रूपों का चित्रण करती है। राम की सत्यनिष्ठा जगत-प्रसिद्ध है। उनके मित्रों और शत्रुओं ने समान रूप से उसे स्वीकारा। यह राम की सत्यनिष्ठा ही थी कि कैकेयी उनके बनवास के आयोजन में सफल हो सकी। दशरथ, व्यर्थ ही, यह कामना करते हैं कि उनका पुत्र सत्य के प्रति इतना आग्रहशील न होकर उनके वचनों की अवहेलना कर देगा। सीता को सम्पूर्ण विश्वास है कि उसका पति दो आसुरी पापों से पूर्णतया मुक्त है—असत्य और परस्त्री के प्रति दुर्भावना; राम के प्रति अकारण विरोध की सम्भावना ही उसकी आन्तर शान्ति को भंग कर देती है। लक्ष्मण मेघनाद को लक्ष्य कर, श्रीरामचन्द्र (धर्मात्मा) की शक्ति और सामर्थ्य से परिपूर्ण प्राणघातक दिव्यास्त्रों को फेंकते हैं।

श्री राम शिव का प्राकट्य हैं। अयोध्यावासी राम के राज्याभिषेक के बारे में वृद्ध राजा के निश्चय को स्वीकृति देते हैं, क्योंकि युवराज ने अपने असाधारण गुणों से उनके हृदय में स्थान बना लिया है। जब प्रजा दुखी होती है; तब राम का हृदय भी रोता है। उसके सौभाग्य में वे सुखी होते हैं। वे साधारण से साधारण जन के कल्याण के लिए भी उत्कण्ठित रहते हैं। उनकी श्रेष्ठता प्रसरणशील है। प्रजा उनके जीवन को अपना आदर्श

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ती है। राम के राज्याभिषेक के ं उनकी तीव्र अभिलाषा का पता तब ता है, जब राज्याभिषेक न होने की ना उन्हें मिलती है और वे दुख–ताप के सागर में डूब जाते हैं।

राम समान रूप से सबके लिए कल्याण-ी थे। उन्होंने छोटे–बड़े, ऊँच-नीच का नहीं माना। निषादराज गुह, जंगली-ी शबरी, पंखीले जन्तु जटायु सबसे का मित्र-भाव ।

श्री राम का सौन्दर्य उनकी ा के सौन्दर्य प्राकट्य मात्र जिसमें सत्य, के साथ एकी-र हो गया था। के चरित की र्णता सौन्दर्य की ही वस्तु है। इसके ण ही, जो कोई भी उनके समीप ा, वे उसके प्रिय हो गये।

राम-कथा यह बताती है कि धर्म स्कृति) कैसे अपने परमतम अर्थ में त है। दूसरी ओर युगधर्म (जिसे र सभ्यता भी कह सकते हैं) जन्म, कास, क्षय और अभाव (अन्त) का य है, धर्म अथवा संस्कृति शाश्वत मूलभूत मूल्यों पर आधारित होती है; जबकि सभ्यता सामाजिक और भौतिक जीवन के क्षणिक संयोजन या निर्माण पर निर्भर करती है। इस 'अन्तरिक्ष-युग' की उपलब्धियाँ उस प्रगति का प्रकाशन करती हैं, जो हमारी सभ्यता की देन है, लेकिन वह दुस्साहसी व्यक्ति होगा, जो कहे कि मैं ऐसे राम से ज़्यादा सांस्कृतिक हूँ, जिन्होंने वल्कल वसन धारण कर एक जीर्ण तरी में गंगा को पार किया।

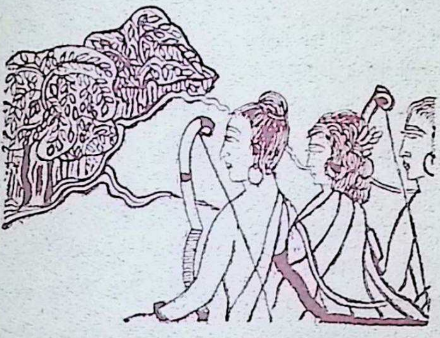

वन-गमन को उद्यत श्रीराम

सत्यं, शिवं, सुन्दरम मनुष्य की मूलभूत अभिलाषाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। मानवजाति के लिए अनन्तकाल तक श्रीरामचन्द्र एक ऐसा सनातन महत्वपूर्ण व्यक्तित्व हैं, जिनमें इन तीनों तत्वों का अवतरण हुआ है। जिनके बीच मूलभूत मूल्यों का ऐसा प्राकटच मौजूद है, सदासर्वदा के लिए, जिनके पास प्रस्तुत करने को एक ऐसा उदाहरण है, यदि वे अपनी परम्परा पर अभिमान करते हैं, तो वह उचित ही है। इस अमूल्य सम्पत्ति को विनाश अथवा क्षय से बचाना हम सभी का कर्त्तव्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शील-सिन्धु श्रीराम

[गोस्वामी तुलसीदासकृत 'रामचरित मानस' का एक पावन प्रसंग। वनगमन के अवसर पर माता कैकेयी, पिता दशरथ तथा माता कौशल्या से विदा मांगते हुए श्रीराम की शील-युक्त वाणी की झांकी]

श्रीराम कैकेयी से कहते हैं :–

सुनु जननी सोइ सुत बड़ भागी।
जो पितु मातु बचन अनुरागी॥
तनय मातु पितु तोषनिहारा।
दुर्लभ जननि सकल संसारा॥

हे माता, वही पुत्र बड़ भागी है, जिसका माता-पिता के वचनों में अनुराग हो। माता-पिता को संतुष्ट करनेवाला पुत्र संसार में बड़ा दुर्लभ है।

भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू।
बिधि सब बिधि मोहि सनमुख आजू॥
जौं न जाउँ बन ऐसेहु काजा।
प्रथम गनिअ मोहि मूढ़ समाजा॥

मेरे प्राणों के समान प्रिय भरत राज्य पायेंगे, इससे पता चलता है, ब्रह्मा सब प्रकार मेरे अनुकूल हैं। यदि मैं ऐसे काम में भी वन न जाऊँ तो मूर्ख समाज में मेरी पहली गिनती होनी चाहिए।

श्रीराम पिता दशरथ से कहते हैं :–

तात कहौं कछु करौं ढिठाई।
अनुचितु छमब जानि लरिकाई॥
अतिलघु बात लागि दुखु पावा।
काहुँ न मोहि कहि प्रथम जनावा॥

हे पिताजी, मैं कुछ कहने की धृष्टता कर रहा हूँ; यदि अनुचित हो तो मेरे बचपन को देखते हुए क्षमा कीजिएगा। आप अत्यन्त छोटी बात के लिए इतने दुखी हुए। किसी ने पहले मुझे बताया ही नहीं।

मंगल समय सनेह बस,
सोच परिहरिय तात।
आयसु देइअ हरषि हिय,
कहि पुलके प्रभु गात॥

हे पिता जी, इस शुभ समय में स्नेह के कारण होनेवाले सोच को त्याग दीजिए। ऐसा कह कर श्रीराम पुलकित हो गये।

जब माता कौशल्या श्रीराम से कहती हैं कि 'वे आज तुम्हारा राज्याभिषेक करेंगे,' तो श्रीराम मन्द-मन्द मुस्काते हुए अत्यन्त मधुर शब्दों में कहते हैं :

पिता दीन्ह मोहि कानन राजू।
जहँ सब भाँति मोर बड़ काजू॥
आयसु देहि मुदित मन माता।
जेहि मुद मंगल कानन जाता॥
जनि सनेह बस डरपसि भोरे।
आनंदु अंब अनुग्रह तोरे॥

रामने कहा, माँ, पिताजी ने मुझे वन का राज्य दिया है, जहाँ सब प्रकार मेरा बहुत बड़ा काम बनेगा। तू भी प्रसन्न हो कर आज्ञा दे दे, जिससे वन जाते समय मुझे आनन्द और मंगल हो। स्नेह के कारण भूल कर भी तू किसी बात का डर नहीं करना। हे माँ, तेरी कृपा से मुझे आनन्द ही आनन्द होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

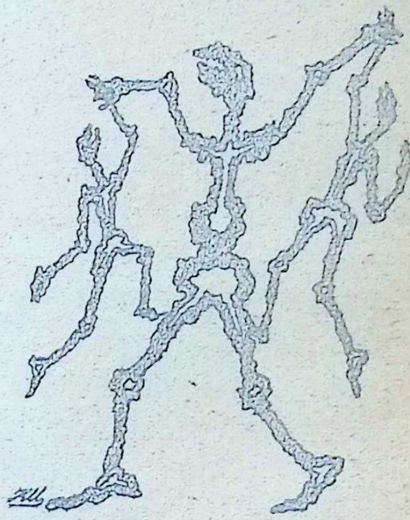

अस्थि शेष

चन्द्रमौलि उपाध्याय

बस्तियों के घोंसले
मुगबुगाते तक नहीं हैं,
शायद बाज है कहीं !

सागर-तल के युद्ध-सा
यह निश्चल मौन
सह रही हैं फसलें
जिनके बीच
सूनी डगर पड़ी है
जिसे प्रतीक्षा है
उन लोगों की
जो
युग-पुरुष का
अस्थि शेष ले आयेंगे
इन बस्तियों पर
उसके रक्त की बूंदें
छिड़क देंगे;
और फिर
क्रौञ्च-मिथुन
उड़ जायेंगे
शकुन-खञ्जनों को
बुलाकर लायेंगे,
शरद
किसी श्रमण-सा
उसी समय लौटा होगा
समय-चेता की समाधि से !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयोध्या

[८]

श्री युगल माधुरी कुंज

[कलाकार : शिल्पी]

युगल माधुरी कुंज का भव्य बाहरी भाग

भगवान श्रीराम का विवाह जनकपुर में जनकनन्दिनी सीता से हो गया और वे जब अपनी महारानी के साथ अयोध्या वापस आये तो प्रमुख दुर्ग के भीतर स्थित कनक भवन में नव-दम्पति के रहने की व्यवस्था की गयी। स्मरण रहे इस दुर्ग के सामने ही एक उद्यान भी है, जिसे अब नज़र बाग कहा जाता है। यह नाम काफी पुराना है। कहते हैं ऐसी प्राचीन परम्परा थी कि महल या दुर्ग के सामने जो बाग होता है, और महल या दुर्ग से निकलते ही जिस बाग पर प्रथम दृष्टि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

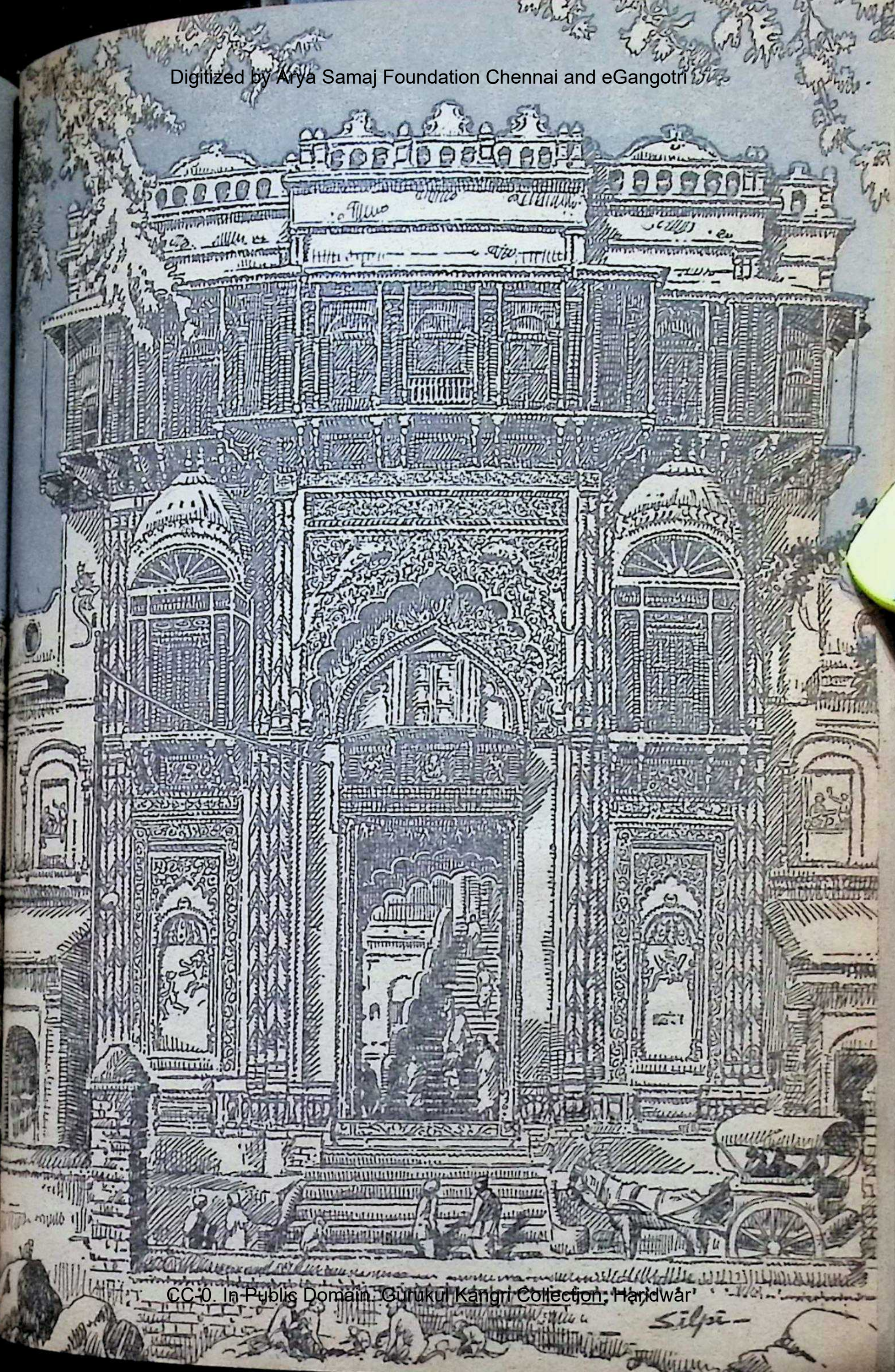

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

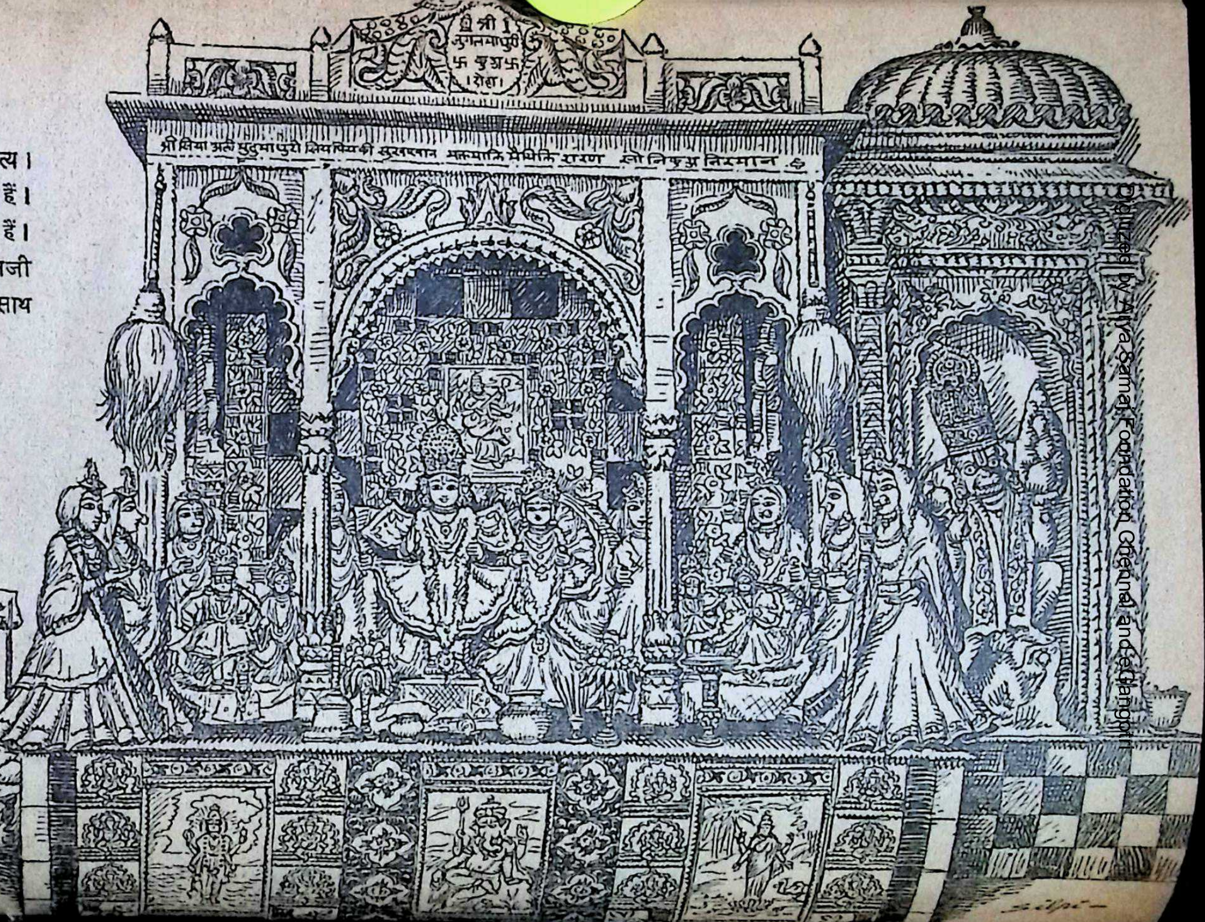

प्रासाद के अन्तर्गृह का चैत्य। श्रीराम तथा सीता बैठे हैं। दोनों ओर दासियां खड़ी हैं। दायीं ओर हनुमानजी संजीवनी-पर्वत के साथ दिखायी दे रहे हैं।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ जाय, उसे ही नया बाग कहा जाता है। महारानी सीता की एक प्रमुख अंगजा सहेली थी, जिसका नाम यूथेश्वरी था। उसके रहने के लिए इसी उद्यान में एक महल का निर्माण किया गया था, जिसका नाम श्री युगल माधुरी कुंज रखा गया। यहीं पर सीता जी अपनी सहेलियों के साथ नित्य विहार किया करती थीं। कनक भवन तथा अन्य प्राचीन स्थलों की भांति इस स्थान का भी समय-समय पर उदय-अस्त होता रहा।

महाराजा विक्रमादित्य ने कनक भवन का पुनर्निर्माण करते समय श्री युगल

[शेष पृष्ठ ४० पर]

प्रस्तुत चित्र में श्री युगल माधुरी कुंज में जाने के लिए सीढ़ियाँ दृष्टिगोचर हो रही हैं।

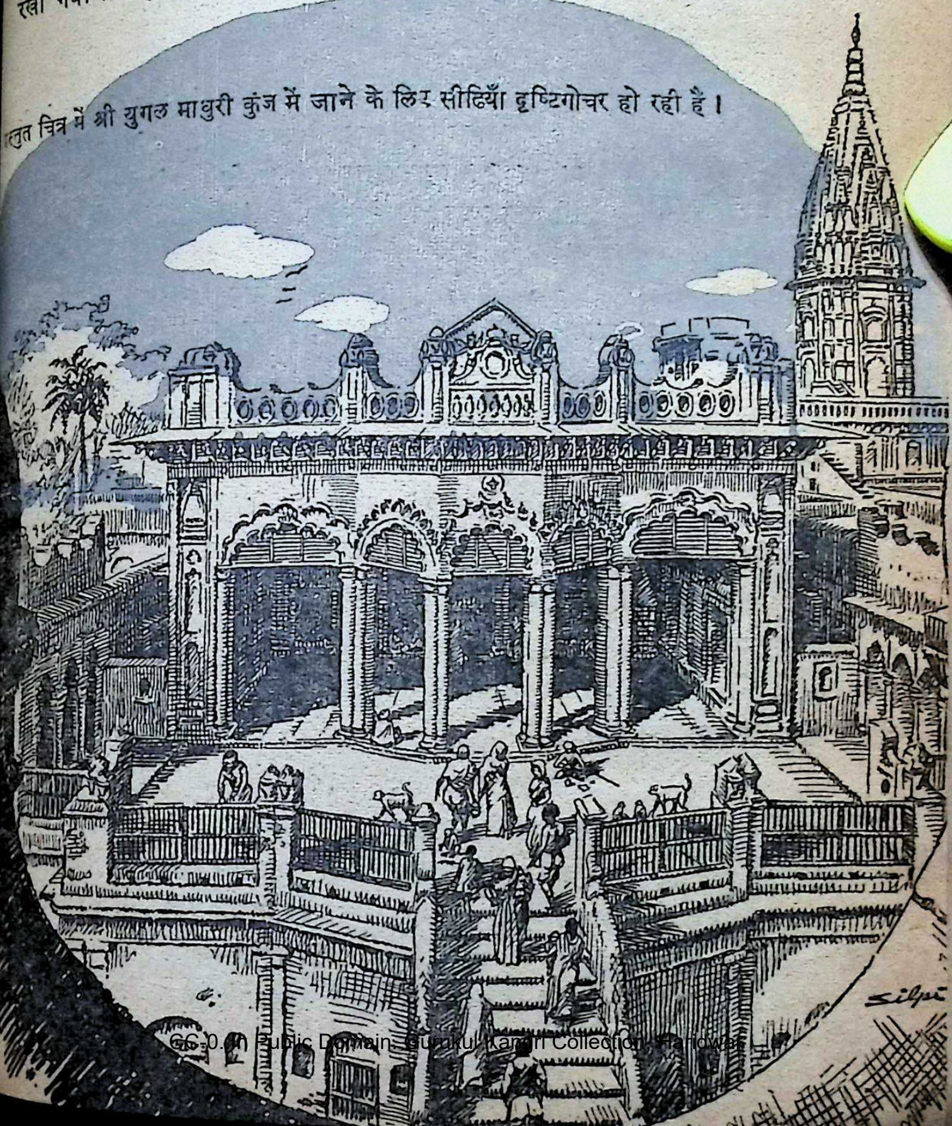

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्याम व्यास

मरण-शय्या पर लेटा रावण, और सीख लेने को तत्पर लक्ष्मण

'एक बात याद रखो बन्धु, जब किसी से कुछ सीखना हो तो हमें नम्र बनना चाहिए। जाओ उस महामानव के चरणों में खड़े हो कर अभ्यर्थना करो-इस घड़ी उसके मुख से प्रस्फुटित एक वाक्य भी महान आदर्श बन सकता हैं।'

यों तो वाल्मिकि रामायण और तुलसी रामायण में कई ऐसे मर्मस्पर्शी स्थल आते हैं जिन्हें पढ़ते हुए समूचा मन-प्रान्तर करुणा से अभिभूत हो उठता है, आंख छलछला आती हैं औ निरुपित आदर्शों के समक्ष मस्तक नत हो जाता है। लेकिन राधेश्याम रामायण में एक स्थल ऐसा है जो बराबर मन में जमा हुआ है और प्रायः आँखों के आगे चित्रपट की भांति तिरने लगता है।

राधेश्याम रामायण का वह स्थल है: राम–रावण युद्ध में रावण की पराजय होती है। महाप्रतापी एवं चक्रवर्ती सम्राट रावण युद्धभूमि में मरण शय्या पर पड़ा हुआ है। इस प्रतापी का समूचा शरीर तीखें बाणों से बिधा हुआ है और वह मृत्यु का आह्वान कर रहा है। ऐसे में मर्यादा पुरुषोत्तम राम अपने अनुज लक्ष्मण से कहते हैं कि "हे बन्धु, आज एक महाप्रतापी, उद्भट विद्वान, चक्रवर्ती सम्राट की मृत्यु होने वाली है। तुम जाओ उस शय्या तक, और रावण से नीतिशास्त्र की दो बातें सीखकर आओ। क्योंकि ऐसे विद्वान धरती पर कम पैदा होते हैं।"

आदेश राम का, सो भला लक्ष्मण कैसे टालते। परन्तु उन्हें बात जंची नहीं। फिर भी वे युद्ध भूमि में गये, जहाँ रावण निहायत शान्ति के साथ मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था। लक्ष्मण को देखा रावण ने, परन्तु वह एक शब्द भी नहीं बोला। उसी प्रकार स्थिर बना रहा।

फनफनाते हुए लक्ष्मण लौट आये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...शिविर में और राम के समक्ष खड़े गये।

भगवान राम मुस्कुराये और पूछा—'लक्ष्मण, कुछ सीख पाये ?'

क्रोध से भरे लक्ष्मण ने कहा—'प्रभु रावण का अहंकार अभी भी नहीं टूटा है। वह मर रहा है लेकिन दंभ आज भी वही है। उसने मुझसे बात तक नहीं की !'

राम समझ गये सारी स्थिति। फिर उन्होंने उसी मृदुल मुस्कान के साथ कहा—'लक्ष्मण तुम उस महाप्रतापी सम्राट के पास गये थे सो कैसे और कहाँ खड़े रहे ? जरा यह तो बताओ !'

"भगवन् ! रावण का समूचा शरीर खून में सना हुआ था। मैं जाकर उसके सिर के पास खड़ा हुआ। मैं खड़ा का खड़ा रह गया; परन्तु वह अहंकारी मुझसे न बोला। हारकर मैं लौट आया।" लक्ष्मण बोले।

"लक्ष्मण! वह अपने युग का महान तपस्वी है। अद्वितीय विद्वान है— और ...र चक्रवर्ती सम्राट है। क्या हुआ वह हार गया और आज मरण शय्या पर पड़ा है। एक बात याद रखो बन्धु, जब किसी से कुछ सीखना होता है तो हमें नम्र बनना चाहिए। तुमने यही तो गलती कीं जो सिर की ओर खड़े हुए। अब जाओ और उस महामानव के चरणों में खड़े होकर अभ्यर्थना करो। इस घड़ी में उसके मुख से प्रस्फुटित एक वाक्य भी महान आदर्श बन सकता है। लक्ष्मण, फुर्ती करो, जाओ !"

भगवान राम इतना कह चुप हो गये और लक्ष्मण पुनः रावण की शय्या के निकट जा, नम्रता के साथ करबद्ध हो चरणों की ओर खड़े हो गये।

रावण के जख्मों से भरे हुए मुख पर एक मृदुल सी मुस्कान खिल उठी और उसने आँखों ही आँखों में लक्ष्मण को प्रणाम किया और फिर मन्द-मन्द स्वर में बोला—

"हे वीर लक्ष्मण, अब तो मेरा सब कुछ समाप्त हो गया है। मेरे पास कुछ भी नहीं है। लेकिन एक बात लगती है बराबर कि अच्छा काम करने में मैंने देरी कर दी, उसे कल पर टाल दिया। मैंने सोचा था कि लंका से स्वर्ग तक एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्ण की सीढ़ी बनवाऊँगा ताकि लंका-निवासी सशरीर स्वर्ग तक आ-जा सकें। मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग पहुँचने की जो आशा हम सभी रखते हैं वह मैं लंका-वासियों के जीते-जी ही संभव करना चाहता था। और मैंने सोचा था कि समुद्र का यह जो खारा जल है इसकी जगह दुग्ध रूपी अमृत भरवा दूंगा, ताकि लंकावासी अमरत्व प्राप्त करलें। लेकिन इस शुभ काम को मैं टाल गया और जो शुभ कार्य एक बार टला सो बस टलता ही गया! मैं इस कार्य को पूर्ण न कर सका, अब कौंन ऐसा तपस्वी इस पृथ्वी प्रर जन्म लेगा जो स्वर्ण की सीढ़ी बनवा सके और खारे समुद्र को दुग्ध सागर में परिवर्तित कर सके। बस जो काम रह गया सो रह गया। इसका मुझे पछतावा है कि एक शुभ-कर्म को मैं टाल गया।

फिर कुछ क्षण रुककर रावण पुनः बोला—"और एक बुरा कर्म था जिसे टालना चाहिए था, वह करने में मैं जल्दी कर बैठा। लक्ष्मण, मैंने राजा राम की पत्नी सीता के चुराने के काम को फौरन कर डाला और उसका परिणाम सामने है। एक अपराजेय पौरुष आज तुम्हारे सामने जर्जरित युद्धभूमि में पड़ा हुआ है। इसका भी मुझे पछतावा है कि एक अशुभ कार्य को करने से पहले मैंने जरा भी नहीं सोचा, उसे फौरन कर डाला।" कहते कहते एक अथाह पछतावा रावण के रक्त-रंजित मुख पर पुंजिभूत हो गया और उसने नयन वन्द कर लिये।

लक्ष्मण का समूचा अहम् पिघल गया, उनके नयन खुल गये और एक बार जीभर उस महाप्रतापी, चक्रवर्ती, रावण को देखा और श्रद्धा से मस्तक झुका दिया!

★

[अयोध्या......पृष्ठ ३७ का शेष]

माधुरी कुंज का भी जीर्णोद्धार किया था। बाद में और भी कितने भक्त-भाविकोंको इसके पुर्ननिर्माण का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अन्त में जब बुन्देलखण्डान्तर्गत अडिछाधीश्वरी महारानी वृषभान कुमारी ने कनक भवन का नवनिर्माण किया हो उसी सम्वत् में अपने गुरुदेव श्री स्वामी जगदेवदासजी के आदेशानुसार लखनऊ जिलान्तर्गत तालुका महौना की अधिष्ठात्री श्रीमती शिवराजरानी तथा उनकी वहू महाराज रानी ने श्री युगल माधुरी कुंज का नव निर्माण कराया। उपरोक्त तीनों रानियाँ श्री १०८ स्वामी जगदेवदास जी महाराज की शिष्या थीं। उन्हीं के शिष्य श्री मैथिलीशरण जी भक्तमाली आजकल श्री युगल माधुरी कुंज की सेवा में संलग्न हैं। आज भी यहाँ अष्ट सखियों के सहित सेवा होती है और अनगिनत भक्तगण यहां के दर्शन का लाभ उठाकर कृत कृत्य होते हैं।

—क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ाधना के राम
ुम्हारी भृकुटियों का शिवधनुष
ी सौ प्रणेशों के
ुक से,
ों से, उठता नहीं
ौर वह इतना निबल

ाधना के राम के हाथों
ुतरकर टूट जाता है।
ब तुम्हारे हृदय में
ंद्ध सीता का—
ात्मसमर्पण
ुक्तिकामी गीत गाता है।

•

ुग कवि

ोप्तवर्तिका
ौहिल और पूत......,
ार मूक प्रेरणा
ेतना में आ समायी
ब उदात्त नवोन्मेष हुआ उसमें
ु उठे दिक्-दिगन्त
ुक उठा विश्व का तार तार
ुक गये चाँद, सूरज और तारे

ुख कह उठा
रे।
ह तो युगकवि है।

•

प्रेमशंकर रघुवंशी

•

दो कविताएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वी. एस. श्रीनिवास शास्त्री

वीरांगना सीता

सीता की पतिपरायणता, एकनिष्ठता और समर्पणशीलता अद्वितीय है। पर उसके ये गुण भय और परवशता में से नहीं निपजे थे, अपनी परिपूर्ति के लिए सत्य की यज्ञ-शिखा में उसकी अपनी आत्माहुति से प्रसूत हुए थे। वह एक पराधीन अबला का नहीं, वीरांगना का समर्पण था।

सा तमुत्तमसंविग्ना सीता विपुलवक्षसम्।
प्रणयाच्चाभिनाच्च परिचिक्षेप राघवम्॥
किं त्वामन्यत वैदेहः पिता मे मिथिलाधिपः।
राम जामातरं प्राप्य स्त्रियं पुरुषविग्रहम्॥

"मैं अपने पिता का विचार करती हूँ। उन्होंने मेरा वर पाने के लिए संसार खोज डाला और अन्ततः तुम्हें पाया। यदि वे सोचते हों कि उन्होंने मेरे लिए सर्वोत्तम व्यक्ति ढूंढ़ा है, तो यह उनकी भूल है। उन्होंने जिसे पाया, वह एक स्त्री निकली, पुरुष-विग्रह में एक भीरु स्त्री।"

प्रायः इन शब्दों को सीता के विरोध में उद्धृत किया जाता है, यह उनके हक में कर्त्तव्य की सीमा का अतिक्रमण और परिधि-भंग का उदाहरण है, जिसे किसी भी स्त्री को विकट दुख की घड़ियों में भी उच्चारित नहीं करना चाहिए। रामायण के महान टीकाकार गोविन्दराज ने तो इसे 'भगवदपचार' तक कह दिया है।

लेकिन मैं इस बात से सहमत नहीं हूँ। मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि सब शंकाओं से परे उसके ये वचन सीता को मेरे निकट एक सच्ची, वीर, राजपूत नारी प्रमाणित करते हैं।

अनृतं बन लोकोऽयमज्ञानाद्यद्धि वक्ष्यति।
तेजो नास्ति परं रामे तपतीव दिवाकरे॥
कं हि कृत्वा विषण्णस्त्वं कुतो वा भयमस्तिते
यत्परित्यक्तुकामस्त्वं मामनन्यपरायणाम्॥

"तुम मलिन वदन क्यों हो गये? तुम्हें किस बात का भय है कि तुम मुझ अनन्यपरायणा पत्नी को छोड़ कर जाने की इच्छा करते हो? मैं सम्पूर्णतया तुम्हारी हूँ और तुम मुझे अलग कर देना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...हते हो। तुम्हारा साहस क्या हुआ ? ...दुष्कर कामों के करनेवाले रहे हो। मैं ...किसी के भी आश्रय में नहीं रहूँगी। ...भरत के आधीन मत करो।"

...वह राम के शब्दों की तीक्ष्ण, कठोर ...ख्या प्रस्तुत ...ती है। जब ...ने सीता से ..., "तुम भरत ... साथ रहो," ...उन्हें समझने ...विपरीत वह ...को मोड़कर ...शब्द कहती है: ...मैं बालिका थी, ...से तुमने मेरा ...लन-पोषण ...या है, और ...तरह से ...अपने समीप ...या है, तो अब ...शैलूष की ...ति मुझे दूसरे ...हाथों में सौंपते ...एक ऐसे ...ति की तरह, जो एक स्त्री पालित होता ...तुम्हारे साथ रहते हुए मुझे सुस्वादु ...जन की आवश्यकता नहीं है; सादा ...हार मुझे पकवानों-सा आनन्दकारी होगा। बन में जिस धूलि पर तुम्हारे चरण पड़ेंगे, वह मेरे लिए चन्दन हो जायगी। घास मेरे लिए विलास की शैया होगी। कोई भी दृश्य मेरी आँखों को कष्ट नहीं देगा। मेरी चिन्ता मत करो। मैं तुम पर भार नहीं बनूंगी। जिस स्थल पर मैं तुम्हारे साथ हो सकूं, चाहे वह कोई भी स्थान क्यों न हो, मेरे लिए स्वर्ग के समान है। और जहाँ तुम नहीं हो, वह स्थान ही मेरे लिए नरक है। यह तुम निश्चय जानो। मुझे अपने साथ ले चलो; मैं वचन देती हूँ, तुम्हें अधिक आनन्द मिलेगा। मैं एक क्षत्रिय बाला हूँ, मैं कैकेयी या भरत या अन्य किसी के भी अधीन नहीं रहूँगी। यदि तुमने मुझे छोड़ दिया, तो मैं जीवित रहना नहीं चाहती। जब मैं एक पल के लिए भी तुम्हारे बिना

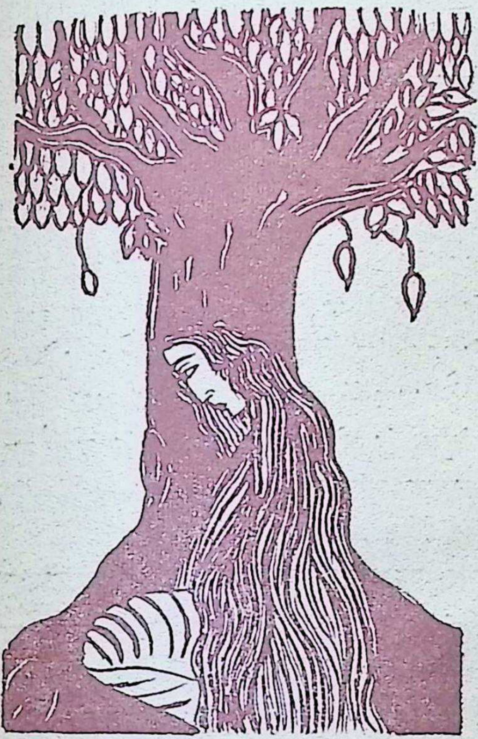

अशोक वाटिका में सीता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं रह सकती—तो इतनी दीर्घावधि काटने की बात तुम कैसे कहते हो ?.'

मैं आपको सीता की भावनाओं के परम गुणों से परिचित कराना चाहता हूँ। उस व्यवहार पर प्रकाश डालना चाहता हूँ, जिसे उसने विशिष्टतम क्षणों में व्यक्त किया। सीता के इस प्रतिवादन में, महाकवि ने अपना परम चातुर्य, भर्त्सना, अनुसरण, विनय, कर्त्तव्योपदेश, वैवाहिक पवित्रता का प्रकाशन आदि अनेक बातों को सीता के मुख द्वारा एक ही सर्ग में प्रस्तुत किया है।

यह मेरी समझ के बाहर है कि किसी घमण्डी पुरुष को छोड़कर और कोई भी पु ष कैसे इस तथ्यपूर्ण विवाद में एतराज़ कर सकता है। कठोरता से बोले गये ये शब्द भारी मानसिक ऊहापोह की स्थिति में बोले गये हैं। क्षत्रिय कुल में जन्मी और विवाही गयी एक स्त्री, जिसका पति संसार के श्रेष्ठतम पुरुष के रूप में मान्य हो, क्या अपने बारे में यह सुन सकती है कि वह अबला है और अपने पति के साथ वन में नहीं रह सकती ?

जब उसने राम को यह बार-बार कहते सुना तो वह अधिक न सह सकी। उसके ये कथन उसके लिए गौरवपूर्ण ही हैं, क्योंकि एक स्त्री को यह अधिकार है कि वह साहसपूर्वक ये बातें अपने पति से कह सके। उसका पति और वह एक हैं। किसी भी पति को अपनी पत्नी की साहसी बातचीत का बुरा क्यों मानना चाहिए ? यह एक ऐसा दुर्विचार है, जो संकीर्ण और क्षुद्र-हृदय लोगों के मन में आता है। सीता के प्रति दुर्वचन कहना अक्षम्य है।

राम ने इस बात को कैसे ग्रहण किया, यह इसका सर्वोत्तम न्याय है। राम निश्चय ही जानते थे कि आदर्श पत्नी कैसी होनी चाहिए। क्या वे अप्रसन्न या रुष्ट हुए। जब राम ने ही ऐसा नहीं किया, तो हम मामूली प्राणियों को क्षुब्ध होने का क्या कारण है ? महान राम, अपराजेय राम, धर्म के मूर्तिमान स्वरूप राम ने इन व्यंग्यों को सहा। उन्होंने शान्ति से उन्हें सुना। राम कहते हैं :

तां परिष्वज्य बाहुभ्यां विसंज्ञामिव दुःखिताम्।
उवाच वचनं रामः परिविश्वासयंस्तदा॥

यदि सीता के वचन उन्हें दुखित करते तो वे ऐसा न कहते। उसे विश्वस्त करते हुए वे कहते हैं : "तुम्हें कठिनाई में डालकर मैं स्वर्ग में आनन्द करने जा रहा हूँ, ऐसा तुम्हें नहीं सोचना चाहिए। मैंने वन की जिन विभीषिकाओं को तुमसे कहा, मैं उनसे भयभीत नहीं था। मैं जानता था कि मैं तुम्हारी रक्षा करने में समर्थ हूँ : मुझमें शक्ति है, कौशल और जागृति है। तुम्हें न ले जाने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक मात्र कारण यही था कि मैंने तुम्हें एक साधारण नारी सोचा। मुझे नहीं मालूम था कि वस्तुतः तुम कितनी साहसी नी हो। अब मैं तुम्हारा सही रूप-ान कर रहा हूँ कि तुम कौन हो, और ता हो, अब मैं तुम्हारे निर्देशों का पालन रूँगा। मैं पीछे तुम्हें कैसे छोड़ सकता हूँ? ी अभिप्राय के लिए ब्रह्मा ने तुम्हारा निर्माण किया है। एक ऐसा मनुष्य, जिसने अपनी सारी कामनाओं को जीत लिया है, और जो सारे संसार को अपना कुटुम्ब मानता है, जिस प्रकार अपनी 'कोमलता' को अपने से अलग नहीं कर सकता, क्योंकि वह उसकी प्रवृति का एक आविभाज्य अंग हो गयी है, उसी प्रकार मैं भी तुम्हें अपने से पृथक नहीं कर सकता। मैं दशरथ और कैकेयी की आज्ञा से बन जाता हूँ। मैंने तुम्हें भी अपने साथ ले जाने का निश्चय कर लिया है। चलो मेरे साथ, और वन में मेरे कार्यों की सहकर्मिणी बनो।"

इस सन्दर्भ में यह श्लोक विशेष दर्शनीय है:

सर्वथा सदृशं सीते मम स्वस्य कुलस्य च।
व्यवसायमनुक्रान्ता सीते त्वमतिशोभनम्॥

निष्कर्ष में राम कहते हैं "तुम्हारे कारण मेरा कुल यशस्वी है। तुम्हारे कारण तुम्हारा कुल यशस्वी है। तुमने मुझे ऐसा कार्य करने की प्रेरणा दी है कि तुम्हारे और मेरे कुल के योग्य है।"

मैंने जितने भी नारी–चरित पढ़े–देखे हैं, उनमें से कोई भी वाल्मीकि की सीता के सदृश नहीं है। वह अनतिक्रमणीय है। नारी के समस्त आकर्षणों को उन्होंने सीता में ढाल दिया है। सौन्दर्य, हृदय की कोमलता, परम करुणा, अनुराग, सत्य-विवेक, साहस, सहनशीलता आदि सम्पूर्ण गुण ही सीता को पाकर धन्य हो गये थे। ऐसा क्या था, जो सीता में नहीं था!

वह प्रकृति का ऐसा टुकड़ा है, जिसका सादृश्य न कभी हुआ और न ही हो सकता है।

★

नारी को अबला कहना उसका अपमान करना है।

—महात्मा गांधी

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदन मोहन तरुण

•

महान रावण

[स्थान– युद्धभूमि। एक ओर रावण आहत हैं और मस्तक के निकट लक्ष्मण शिक्षार्थ बैठे हैं।]

रावण–लक्ष्मण! तुम्हारा विवेक बड़ा
उद्धत है,
जिससे कुछ लेना है
उसको कुछ देना भी पड़ता है
हर भिक्षा-याचक को द्वार पर
देर तक
मिथ्या भी गुण जन का गाना ही
पड़ता है।
शिक्षा को आग्रे हो
अपेक्षित है आदर
अपेक्षित है श्रद्धा।

लक्ष्मण–क्षमा रावण, क्षमा।
चाहता हूँ किन्तु मेरी निष्ठा नहीं
जमती है,
रक्त से रंगे तेरे हाथ
ऋषियों का लिया रक्तदान
मानवता का किया रक्तपान,
सीता का हरण, दंभ का वरण,
सत् पथ विचलन, मिथ्या चरण
गुरु तुझे कैसे कहूँ
एक-एक आँखों में नृशंसता उमड़ती है।

रावण–रक्त तो जीवन है!
(साश्चर्य, अट्टहास पूर्वक) मैंने कब
लिया भला ऋषियों का रक्त दान!
वह उनकी नस-नस में बहती
अकर्मण्यता थी
धरती से विच्युत गगन की अर्चना थी
रक्त वह ऋषियों का नहीं
रक्त अकर्मण्यता का लिया मैंने, और
उस रक्त की साधना से उत्पन्न हुई
कर्म-जननी सीता स्वयम् शक्ति
उसी से सम्पन्न हुई दानवता पर विजय।
नहीं, वह रक्त-घट नहीं था
वह तो था मंगल-घट
वह था महान् रावण का अस्त्र जिससे
हुआ दानव कुल नष्ट, और लक्ष्मण
भ्रम तेरा–
विनाश मानवता का नहीं होता
विनष्ट सदा दानवता होती है।
आज का अमृत दिवस देखते हो–
रात्रि की तिमिर–प्याली में
दिवा का ज्योतिर्ज्वल अरुणाभ अमिय
छलका है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९ अप्रैल १९६४

तनिक देर तिमिर से घिरा था
पर सूरज यह कल का है।
सीता की चोरी नहीं–
लंका में राम का बुलावा था
और मेरी नृशंसता
मात्र पहनावा थी।

लक्ष्मण–किन्तु कुलश्रेष्ठ !
शंका एक मन में है अब भी शेष,
आप निज तपोबल से
निज दानव कुल को
देवत्व वर सकते थे
त्रिलोकजयी हाथों से
तिमिर हर सकते थे,
पुनः यह अंध पथ वरण क्यों ?
यह मिथ्या चरण क्यों ?

रावण–लक्ष्मण; यह ठीक ही कहा तुमने
किन्तु एक सत्य है
आग्रह वर्त्तमान का असत्य नहीं होता है।
युद्ध यह नहीं था
परम्पराओं के भूत से हारे वर्त्तमान की
यही एक विजय थी।
ब्राह्मण पर क्षत्रिय की विजय।
सत्य चुप नहीं रहता
सत्य छुप नहीं सकता
उसका आचरण सदा विजयी हुआ करता है।
यह है विधान
जब भी सिर उठेगा अनय का

बाहु उसे काटेंगे,
और लक्ष्मण, तुम मुझसे सीखने कुछ आये हो
अतः यह भी है सत्य
विजय भी पराजय से सीख कुछ सकता है।
युद्ध यह नहीं था,
यह था प्रतिमान
जिसकी कसौटी पर हर युग आँका जायेगा।

लक्ष्मण– (सश्रद्धं) साधु रावण– आर्य रावण।

रावण–और सुनो लक्ष्मण
रावण का जीवन–
राम की पृष्ठभूमि पर विरचित बृहत्
प्रतीक महाकाव्य
यह काव्य महत् का
सत्य का असत् का
धर्म का अधर्म का
विजय का पराजय का,
इसका रचयिता भी मैं ही हूँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि पौरुष परावलम्बी नहीं होता।
मेरा प्रतीक जीवन, कर्म का नया वेद,
राम जिसके व्याख्याता हैं।
दुःख है, मैं खारे सिन्धु को क्षीर
नहीं बना सका;
दुःख है, मैं दुर्लभ स्वर्ग तक
सीढ़ियाँ नहीं लगा सका,
यह भार सौंप जाता हूँ आनेवाली
पीढ़ी पर
जिसमें जन्म लेगा प्रबल महात्वाकांक्षा
का देवता
मुझसे भी कर्मठ, मुझसे भी महान।
(राम की उज्वल छाया का आविर्भाव)

लक्ष्मण– विप्र रावण! आर्य रावण!
देखिए सम्मुख हुए श्रीभ्रातृ राघव।

रावण–राम मेरे पास?

राम–हाँ-हाँ सत्यसार, कुलश्रेष्ठ मैं ही तव
पास।
निर्विकार, तिमिर पार आप हैं महान्
प्रणति हो स्वीकार।

रावण–आपको आना था,
यज्ञ की समाप्ति पर लेनी थी दक्षिणा।

राम–हे महर्षे! आप अब श्लथ हो चुके हैं
अमरता के द्विव्य आसन को सुशोभित
करें आकर
आज उर का द्वार उद्घाटित हुआ है।

रावण–(साश्रु गद्गद्) छलो मत मेरे
सदन!

लक्ष्मण– आर्य रावण! मुझे क्या आज्ञा–
हमारी पूर्ण शिक्षा हो चुकी?

रावण– नहीं लक्ष्मण,– एक शिक्षा और
तेरी शेष है,
शेष मेरे काव्य का है शेष अंतिम पृष्ठ
अब भी
इधर देखो

हुआ अंतिम पृष्ठ पूरा
राम के उर में समाहित हुआ
रावण राम बन कर

आज रावण-काव्य सारा हुआ पूरा।
(मंच पर [विलयन] चतुर्दिक घिरे अंध-
कार के बीच एक मोटी ज्योति धारा।
दिव्यवाद्य। राम और लक्ष्मण दोनों
सस्मित पलकें मूंदते हैं।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[रामायण का हार्द: पृष्ठ २९ का शेष]

...ा लज्जा की बात नहीं है यदि कोई अधम ...क्ति उसके साथ ऐसा असभ्य बर्ताव ...रता है। किन्तु, दुर्भाग्यवश, हम इस ...में किसी दुष्ट की हिंसा को नारी की ...वित्रता पर कलंक का कारण मान लेते ...हैं। इस ग़लत धारणा के कारण ही कम्बन ...ने यहाँ वाल्मीकि का अनुसरण नहीं किया। और इसी कारण तुलसीदास ने कहा कि रावण द्वारा उठाकर ले जायी गयी सीता वास्तविक सीता नहीं थी, बल्कि वास्तविक सीता के द्वारा त्यक्त एक प्रत्यक्ष छाया थी। यह कहानी सम्पूर्ण उत्तरभारत में कही जाती है। अग्नि-परीक्षा के समय मायारूपिणी सीता ओझल हो जाती हैं और वास्तविक सीता पुनः उद्भूत होकर ज्वालाओं में से लौट आती हैं।

★

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यु. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम और रावण का युद्ध, सृष्टि की द्वंद्वात्मक लीला में सनातन काल से चल रहे देवासुर संग्राम का प्रतीक है। आज की राजनीति में भी दैवी और आसुरी शक्तियों के बीच ही युद्ध चल रहा है। देखना यही है कि, राजनीति अमांगलिक असुर-शक्ति का हथियार न बने; वह जन-कल्याणकारी दैवी शक्ति से संचालित हो।

गोस्वामी बालक

राम-रावण युद्ध और राजनीति

राम और रावण– रघुकुलभूषण और निशाचरनाथ, दोनों अमर हैं। एक इसलिए अमर हैं कि वे आनन्द के आदि-श्रोत हैं–'**सकल लोक-अभिराम** और दूसरा इसलिए प्रसिद्ध है कि उसने तीनों लोकों को रुलाकर दुःख की असह्य तीव्रता से उन्हें परिचित कराया–'**रावणो लोकरावणः**'।

रावण न होता तो पृथ्वी श्री हरि को क्यों पुकारती ? और साथ ही साथ, यदि राम न आते तो ऋषि-पत्नी कैसे तरती, सुग्रीव का भय कौन दूर करता, जनक-लाड़िली का कल्याण कैसे होता. और हमारी असह्य पीर कौन हरता ?

राम और रावण–एक सुखद, तापहर जलधर सदृश्य श्यामसुंदर और दूसरा पाप-गर्भित-रात्रि की कालिमा–जैसा असुंदर। राम–कोमलतम कुसुम से अधिक कोमल और अति कठोर-कुलिश से भी महाकठोर; पर रावण–केवल कठोर। यही राम या रावण हमारे स्वामी हैं। पर यदि हम पुरुषोत्तम राम के सेवक हैं, तो मानव कहलाने के अधिकारी हैं; नहीं तो मनुष्य होते हुए भी निशाचर राज के दास तो हैं ही– '**देह धरे मनुजाद**। इन दोनों में ऐसा अ-सादृश्य है कि लंका का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध उतना ही अनिवार्य था, जितना रवि-कर निकर द्वारा तम-पुंज-संहार। युद्ध का आदि कारण चाहे एक ललना से संबंध रहा हो, परंतु उसका उद्देश्य प्रियतमा हरण का प्रतिकार ही नहीं था।

राम-रावण-युद्ध आदर्शों का संघर्ष था। रावण का आदर्श था—स्वार्थ, विलास, परधन एवं परदारा का हरण, विश्व-विजयोचित अहंकार, राजमुकुट-स्पर्श से चरणों को मणि-धूलि-धूसरित-करना, देव गणों से दासता कराना, देवता बन बैठना तथा कलि-निवास कनक-प्रासादों में चमचमाती और अनंग-आह्लादिनी नूपुरध्वनि से गुंजित-इन्द्रलोक-सी लंकापुरी का राजा बनना और राम का आदर्श था—एकमात्र लोकहित, जनकल्याण।

धनुर्वेद के देवता

मादकता पूरित मनोन्मादकारी लंका-नगरी के नृपति ने यह न समझा कि स्वार्थ-कल्पित जीवों की असमानता भ्रम है, विलास-प्रिय देह को भी राख बनकर एक दिन पथ की धूल बनना पड़ेगा और अहंकार एक मनमोहक मृगतृष्णा है। क्योंकि 'मैं' नहीं है, जो कुछ यहाँ है, वह मात्र 'वह' ही है। अंधकार क्या है? अंधकार प्रकाश का अभावमात्र ही तो है; असत्य ही तो है। जो सत्य है, वह प्रकाश है— यह बात निशाचरनाथ ने न समझा और असत्य की निद्रा के मादक स्वप्नों को उसने सत्य की पदवी दी। इसलिए जब राम-रावण-युद्ध हुआ, तब रावण की हार हुई और राम की जीत। और राम की जीत सत्य की है। फिर विजय सर्वदा सत्य की ही तो होती है!

दीनबंधु करुणा-निधान राजा रामचन्द्र की यह क़तई इच्छा न थी कि वे रावण को मारकर उसके साम्राज्य के अधिपति बन बैठें। यदि वे ऐसा करते तो साम्राज्य-वादियों में और राम में कुछ अंतर ही नहीं रहता। हाँ, यह सत्य है कि एक के बाद दूसरे देश की विजय से विजेता की कीर्ति-कौमुदी दूर-दूर तक फैल जाती, जैसे बत्तियों की संख्या बढ़ाने से दीपक का आलोक स्वतः विस्तृत होता जाता है। परंतु एक दिन दीपशिखा की ज्वाला में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह विजेता स्वयं पतंग भी बन जाता है। इस आलोक से मोहित होकर वह अपनी पराक्रम-ज्वाला से एक के बाद दूसरा कीर्ति-दीप प्रज्वलित कर अपने प्रकाश-विस्तार से दो दिन सुखी हो लेता है, दो दिन घी के दिये जला लेता है औरों को रुलाकर, लाखों की हत्या करके अपनी अमरता के मादक स्वप्न देखकर। फिर उसे भी दीपक की लपलपाती ज्वाला की भूख मिटाने को पतंग बनना पड़ा है, जिसको उसने अपने हाथों से जलाया था। साम्राज्य-प्रसार-कर्त्ताओं की दशा की पुनरावृत्ति ही इतिहास की कहानी है।

राम यह जानते थे—और कवि सम्राट तुलसी भी। साम्राज्य-विस्तारकी आकांक्षी-नींव स्वार्थ, अहंकार और लोभ में गहरी धँसी है। परंतु पतितपावन दीनानाथ में ये मनोविकार कहाँ? न युद्ध के पहले, न उसके पश्चात्; सरकार की कभी यह इच्छा हुई कि लंकेश की अतुल सम्पति ले लें। दैत्यराज का राज्य और धन उन्होंने निशाकर को ही, दिया। यही उपयुक्त था। परंतु विभीषण रावण का भाई होते हुई भी रावण से भिन्न था। यह रामभक्त था। वह उस आदर्श को पवित्र समझता था, जिसका प्रचार राम ने श्रीमुख से कहकर और अपने जीवन में चरितार्थ करके किया। जब विभीषण ने रावण से कहा—"परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस।"

—और माल्यवंत ने इसका समर्थन किया।

"सो उर धरहु जो कहत बिभिषन।"

—और वालिकुमार ने यह शिक्षा दी

'प्रनत पाल रघुबंस मनि त्राहि-
त्राहि अब मोहि।
आरत गिरा सुनत प्रभु अभय करैंगे तोहि॥"

—तथा मंदोदरी ने समझाया—

"कृपा सिंधु रघुनाथ भजि नाथ विमल
जसु लेहु॥"

—तब इन सबका अभिप्राय यही था कि रावण अपना विचार बदल दे और राम-भक्त बन जाये। रामाश्रित होने से रावण के राज्य छिन जाने का भय किसी को भी नहीं था। "मम पन सरनागत भयहारी" इस श्रीवचन की प्रसिद्धि जगद्-व्यापिनी थी और इसपर लोगों का अटूट विश्वास था। मन्दोदरी अपने पतिदेव का पराक्रम जानती थी। अर्द्धांगिनी होने के नाते लंकापति को जैसा वह जान पायी थी, वैसा और कोई नहीं जान पाया उसे उसमें संदेह नहीं था कि तीनों लोकों को रुलानेवाले रावण में आदर्श परिवर्त्तन होने से वह दूसरे प्रकार से भी अद्वितीय सिद्ध होगा। इसीसे उसने कहा—"बिमल जसु लेहु।' रावण ऐसा पराक्रमशील था कि वह जिस स्थिति में होता, उसी में अग्रगण्य और यशस्वी होता। उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...पताका अब तक शोणितरंजित थी। ...ने पश्चाताप की अश्रुधारा से रावण उस ...ता को विमल —यही पतिव्रता मंदोदरी ...आशा और आकांक्षी थी। यशपताका ...रावण के ऊपर रहती ही। इसी जिज्ञासा ...रानी ने कहा था—

"बिमल जसु लेहु।"

...परमपावनी श्री अयोध्यापुरी में छः ...त बीतने पर राम ने अपने सखाओं ...ो बताया—

...ब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि
दृढ़ नेम।
...ा सर्बगत सर्बहित जानि करेहु अति
प्रेम॥"

-उसमें उन्होंने 'भजेहु मोहि' को ...लिए महत्ता दी कि राम के रहन-...न को और उस लोककल्याणकारी ...दर्श को न भूल जायँ, जिसे राम ने ...पने जीवन में चरितार्थ करके उसके ...त्मक होने का प्रमाण दिया। जिस ...दर्श को पुनर्जीवित करने के लिए ...म ने परधाम छोड़कर इस क्रंदन-पूरित ...वी पर अवतरित होने की दया की तथा ...सके अनुसरण से श्री राम ने संतों को ...पने भक्तभय-भंजन होने का विश्वास ...लाया और उन पददलित जनों को ...शा का पाठ पढ़ाया, जिनके लिए ...षों की विपत्तियों की अटूट श्रृंखला ने ...राशा, मृगतृष्णा और असत्य को पर्याय-...वाची कर दिया था। उस आदर्श को ...पा-सिंधु भगवान श्रीराम ने हमारे कल्याण के लिए श्रीमुख से बहुत थोड़े शब्दों में स्पष्ट करने की कृपा की है—

"पर हित सरिस धर्म नहि भाई,
पर पीड़ा सम नहि अधमाई॥
निर्नय सकल पुरान बेद कर।
कहेउँ तात जानहि कोबिद नर॥"

जब श्रीराम ने अपने सखाओं से कहा—"भजेहु मोहि" उस समय उनकी इच्छा थी कि दूर-दूर देशों में उस जन-कल्याण-प्रद आदर्श का प्रचार हो, जिनके द्वारा धर्म और परमानन्द प्रजा में फैले और राजा के विमल यश का विस्तार हो। "भजेहु मोहि" में मानव-दशरथ कुमार की ओर, जो हरिरूप से हमारा कष्ट हरते हैं, राम बनकर हमारे मानस में रमण करते हैं और कृष्ण-स्वरूप से अपनी वशीकरण-बाँसुरी द्वारा हमें बरबस अपनी ओर आकृष्ट कर लेते हैं। 'भजेहु मोहि किसी अहंकार ग्रस्त अवनीपति की पूजा करने का आदर्श नहीं था। यह कहकर तो राम ने अपने सखाओं को उस परमादर्श की स्मृति चिरस्थायी रखने का उपदेश दिया, जो करुणानिधान को परम-प्रिय था। उस चरम आदर्श की चिर स्मृति बिना रामभजन के—बिना "राम बिलोकनि बोलनि चलनी" की निरंतर याद के नहीं हो सकती थी। रामभजन की

[शेष पृष्ठ ६० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णावतार

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

धारावाहिक पूर्ण-पुरुष लीला

चित्र : हिन्दी विश्व भारती, लखनऊ
के सौजन्य से : चित्रकार पन्नालाल

[३७]

भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई

बलराम क्रोध से कांपने लगा। चाणूर ने जब उसे ललकारा, तभी वह शायद उससे लड़ने के लिए तैयार हो जाता; किन्तु जब उचित समय और संयोग देखकर ही आगे बढ़ना होता, तब वह अपने छोटे भाई के पहल की प्रतीक्षा करता। कृष्ण का संकेत न मिले, तब तक वह स्वयं कभी कोई काम पहले नहीं करता। कृष्ण ने जब चाणूर की चुनौती स्वीकार कर ली, तब भारी डीलडौल और सुपुष्ट देह वाला मुष्टिक बलराम के पास आया।

"क्यो तेरा क्या विचार है छोकरे? तू क्यों हिचकिचा रहा है? अथवा तू भी छोकरी ही है?' बलराम के पास आकर उसने कहा।

बलराम की आँखों से अंगारे बरसने लगे। कृष्ण ने चाणूर के साथ लड़ने की जब तत्परता दिखायी तो बलराम को फिर रोकने वाला कौन था? उसने तो शिरस्त्राण, धोती इत्यादि भी खोलने की जरूरत नहीं समझी। वह तत्काल खड़ा हो गया। और उसका सुपुष्ट दाहिना हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक मुष्टिक पर एक ऐसा प्रबल र कर बैठा कि जिससे मुष्टिक खड़ा गया और गिरते-गिरते बचा। क्षण भर में बलराम अखाड़े में उतर आ और मुष्टिक के स्वस्थ होते ही उस र बाघ की तरह टूट पड़ा। दोनों कर रूप से एक-दूसरे से गुंथ गये र ज़मीन पर गिर पड़े। प्रेक्षक सांस क कर इस बाहु युद्ध को निहारने लगे। ई तो उत्तेजित होकर खड़े भी हो गये। भी मुष्टिक नीचे गिरता, तभी हजारों ों से हर्षध्वनि गूंज उठती।

कृष्ण भी अब अखाड़े में उतर आया। उसकी तीक्ष्ण दृष्टि ने अपने सामने ड़े विशालकाय प्रतिद्वंदी की सुपुष्ट देह, र्घ बाहु और चंचल नेत्रों को माप लिया। र, अपनी भुजाओं और जांघ पर हाथ क कर जैसे ही चाणूर उसकी तरफ ढ़ा कि धीरे-धीरे राजपुरुषों के लिए सुरक्षित शामियाने की ओर कृष्ण सरकने लगा। वह इस महामल्ल की देह और सके आगे बढ़ते कदमों को भली प्रकार ोल रहा था। चाणूर की आँख और ति में भूखे अजगर की सी मोहिनी थी, जो अपने प्रतिस्पर्धी को जड़वत कर देती। परन्तु कृष्ण ने देखा कि चाणूर की वास्तविक शक्ति तो उसकी भारी देह और मांसल स्नायुयों में थी। इसी का उपयोग प्रतिस्पर्धी अपने लाभ के लिए भी कर सकता था। तब कृष्ण के मन में एक नया विचार उत्पन्न हुआ। चाणूर का बायां पैर धरती पर धीरे पड़ता था, किसी अकस्मात् के कारण वह पैर ज़मीन पर अच्छी तरह टिक नहीं सकता था।

कृष्ण धीरे-धीरे चाणूर को राजपुरुषों के लिए सुरक्षित शामियाने की ओर ले जा रहा था। ऊपर से देखने पर तो वह चाणूर के चंगुल में फँसता दीख रहा था; परन्तु वास्तव में वह प्रत्येक बार चाणूर के प्रहार से बच निकलता था। अब वह कंस के ठीक सामने पहुँच गया था। कृष्ण की चपल गति के साथ-साथ आगे बढ़ने में चाणूर का दम फूल गया था। उसने कृष्ण को मात्र एक बालक ही समझा था और कभी सोचा भी नहीं था कि कृष्ण उसकी पकड़ में से इस खूबी के साथ निकल जायगा। उसने दृढ़ता से अपने होंठ भींचे और नज़दीक आकर अपनी दोनों बाहुओं में कृष्ण को जकड़ने का प्रयत्न करने लगा।

कृष्ण बड़ी सफाई के साथ चाणूर की पकड़ से निकल गया और मौका मिलते ही उसके बाँयें पैर पर प्रहार किया। कृष्ण का अनुमान ठीक निकला। उसका वह पैर निर्बल था। अचानक प्रहार होने पर वह अपना सन्तुलन खो बैठा और उसकी भारी देह लगभग धराशायी हो गयी; परन्तु अपनी शक्तिशाली बाहुओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सहायता से वह गिरते-गिरते बचा।

इस महाकाय और दुःसह मल्ल को खड़े होने में तकलीफ़ हो रही थी। उसके इस प्रयत्न को देख कर समस्त समुदाय में हास्य की लहर फूट पड़ी। आज तक अनन्य माने जानेवाले बाहुयुद्ध के इस सम्राट को प्रतीति हुई कि लोगों की नज़र में वह हास्यास्पद हो गया है। उसका क्रोध भड़क उठा। दूसरी ओर उसका सुकोमल प्रतिस्पर्धी उतना ही स्वस्थ और प्रसन्न था और अपने संतुलित पैरों पर कूद रहा था। साधुवाद के नादों ने दोनों प्रतिस्पर्धियों का ध्यान विचलित किया और दोनों कुछ क्षण रुक कर एक दूसरे की ओर ताकने लगे। चारों ओर तालियों की गड़गड़ाहट सुनायी पड़ रही थी। बलराम ने भी मुष्टिक को इतने जोर से धरती पर पटका कि उसकी खोपड़ी टूट गयी। अखाड़े में वह बेहोश होकर पड़ा था। उसकी नाक में से रक्त बह रहा था।

चाणूर इससे उत्तेजित हो उठा; परन्तु कृष्ण बिलकुल स्वस्थ था। एक दूसरे के सामने आकर वे फिर गुंथ गये। भयंकर द्वन्द शुरू हुआ। दोनों तरह-तरह के दाव-पेंच आज़मा रहे थे और प्रतिपक्षी के दाव को विफल बना रहे थे। चाणूर को अपने भारी शरीर और दीर्घ अनुभव का सहारा था। परन्तु कृष्ण भी वृन्दावन में बाहुयुद्ध लड़ चुका था और उसके तमाम दाव-पेंचों से परिचित था। इसलिए वह चाणूर के प्रत्येक दाव को निष्फल कर देता था। चाणूर के हाथ लम्बे थे तो कृष्ण की देह चपल थी। चाणूर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए अधीर हो उठा था। परन्तु कृष्ण उतना ही शान्त और धीर था।

चाणूर को जान पड़ा कि वह प्रायः थक चुका है, जबकि कृष्ण में थकावट का कोई चिह्न नहीं दिखायी पड़ता था। इसलिए उसने अपनी मुष्टि का प्रयोग करने का निश्चय किया। उसका मुष्टि-प्रहार कभी खाली नहीं जाता था। जब भी उससे अपनी जीत की शंका होने लगती, तभी वह मुष्टि युद्ध पर उतर आता था। अपने लम्बे हाथों में वह प्रतिस्पर्धी को जकड़ कर और सारा ज़ोर लगा कर एक सबल मुष्टि प्रहार से उसे जमीन पर पटक देता और फिर अपनी देह का सारा वज़न उस पर डाल कर उसकी हड्डी-पसलियाँ तोड़ देता, अथवा उसका दमघोट कर बेभान कर देता। इस शस्त्र का किसी के पास प्रतिकार न था। कई बार तो प्रतिस्पर्धी को इसमें अपनी जान भी गवानी पड़ती। ऊपर से देखने पर तो यह मृत्यु आकस्मिक ही जान पड़ती, क्योंकि बाहु युद्ध के किसी भी नियम का भंग इसमें नहीं होता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाणूर ने यही दाँव आज़माया। वह पर पूरे बल के साथ टूट पड़ा। लड़खड़ा गया और धराशायी होने को था कि असाधारण समय-सूचकता के उसने अपना सन्तुलन प्राप्त कर लिया र चाणूर के हाथ को अपनी समग्र क्ति से मोड़ना शुरू कर दिया। दोनों ही जमीन पर गिर पड़े; परन्तु ूर कृष्ण के ऊपर गिर पड़ने के अपने ल में निष्फल रहा। उसका प्रति-ी असामान्य चपलता से सरक गया। ूर हताश होकर क्रोध से पागल बन ा। उसका अचूक माना जानेवाला भी निष्फल गया। अपनी पकड़ में कृष्ण को बच निकलते देख कर उसकी ारी वृत्ति जाग उठीं; अपने स्वामी की ा उसे याद आयी। उसके दोनों हाथ के गले को टीपने के लिए लालायित उठे।

कृष्ण ने पहले से ही समझ लिया था ऐसा कुछ होगा। चाणूर उसके गले जकड़ सके, इसके पहले ही वह खिसक और उसने कहा, "धिक्-धिक् चाणूर!" कों ने भी चाणूर को धिक्कारना शुरू ा और चारों ओर 'धिक्-धिक्' की ाजें आने लगीं।

चाणूर के हाथ हवा में ही फैल कर रह । अन्त में वह ज़मीन पर हाथ टेक खड़ा हुआ। रक्त-पिपासु दृष्टि से उसने कृष्ण की ओर देखा और आगे बढ़ा। कृष्ण अगल-बगल, आगे-पीछे खिसक कर उसे खूब छका रहा था। वह चाणूर के हाथ का स्पर्श कर उसकी पकड़ में से छूट जाता और बग़ल में कूद पड़ता। चाणूर अब थक गया था। अपने कुशल प्रतिद्वन्दी के सामने और अधिक लड़ने की सामर्थ्य उसमें नहीं रह गयी थी। उसकी दृष्टि भी अब क्षीण होने लगी थी। एकाएक चाणूर संभले इसके पहले ही कृष्ण चीते की सी चपलता के साथ टूट पड़ा और उसे धराशायी कर दिया। बिजली के गिरने से जैसे कोई विशाल वृक्ष गिर पड़ता है, उसी तरह यह महा-मल्ल ज़मीन पर निढाल हो गया। फिर भी कृष्ण ने चाणूर पर की अपनी पकड़ को ढीला नहीं किया। वह उसकी छाती पर चढ़ बैठा। चारों ओर से सुनायी पड़नेवाली तालियों की गड़गड़ाहट की ओर ध्यान दिये बिना कृष्ण ने चाणूर की रक्तपिपासु आँखों की ओर देख कर कहा, "चाणूर, हार मान ले; बचने का केवल यही रास्ता है।"

इसके उत्तर में चाणूर ने अचानक कृष्ण को अपनी देह पर से फेंक देने का प्रयत्न किया; परन्तु कृष्ण ने चाणूर का मस्तक मज़बूती के साथ ज़मीन पर दबा रखा था, इसलिए लाख कोशिश करने पर भी चाणूर अपने प्रयत्न में सफल नहीं हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सका। उसकी शक्ति क्षीण होने लगी। मस्तक ऊँचा करने के व्यर्थ प्रयत्नों के परिणामस्वरूप उसकी आँखों के स्नायुयों पर सूजन आ गयी थी। चाणूर नें एक बार और प्रयास किया। उसने कृष्ण के गले को फिर से पकड़ने का प्रयास किया। चाणूर का इरादा कृष्ण से छिपा नहीं था। अब और उसकी तरफ दया दिखाने का कोई कारण नहीं रह गया था। उसने चाणूर का मस्तक छोड़ कर उसकी नाक पर मुष्टि प्रहार किया और उसकी आँख, मुँह और नाक पर भी घूंसे मारे। चाणूर की नाक टूट गयी, उसके दांत उखड़ गये, उसकी आँखे निस्तेज हो गयीं और नाक तथा मुंह से खून बहने लगा। वह बेहोश हो गया और उसका सारा चेहरा लहू लुहान हो गया।

चारों ओर से 'साधु', 'साधु' की पुकार मच गयी। यादवगण उत्साहित हो उठे और अपने-अपने स्थान से दौड़ कर कृष्ण को अभिनन्दन देने लगे। घटनाएँ बड़ी तीव्र गति से घट रही थीं। कृष्ण ने कंस पर एक नज़र डाली। उसने देखा कि जबसे चाणूर बेहोश हुआ, तब से कंस हिंस्र-पशु की तरह दांत पीस रहा है। फिर कंस अपने आसन पर से उठा, हाथ में तलवार ली और शामियाने से बाहर जाने के लिए आगे बढ़ा ही था कि अक्रूर ने आकर उसका रास्ता रोका।

उसी क्षण एक मागधी सरदार ने कृष्ण के पिता वसुदेव के ऊपर तलवार का वार किया। वसुदेव भी अक्रूर के साथ ही खड़े हो गये थे। परन्तु मागधी सरदार प्रहार करे, इससे पहले ही सरदार प्रद्योत ने उसे धराशायी कर दिया। राज्य के अतिथि भी अपने-अपने आसन पर से उठ खड़े हुए और आवश्यकता होने पर प्राण रक्षा के लिए अपने हाथों में शस्त्र संभालने लगे।

तभी कृष्ण ने राजाओं के लिए सुरक्षित शामियाने में भारी कोलाहल सुना। यादव सरदार अपने-अपने शस्त्र निकाल रहे थे। मागधी सरदारों ने उन पर अचानक हमला कर दिया था। यह सब एक साथ घटित हुआ। फिर भी कृष्ण ने सारी परिस्थिति को अच्छी तरह समझ लिया। मृत्यु के नजदीक पहुँचे चाणूर को छोड़ कर उसने एक डग आगे भरा और अक्रूर जहाँ कंस का रास्ता रोके खड़ा था, वहाँ पहुँच गया। उसने देखा कि कंस की आँखों में हत्या का भाव झलक रहा था। कंस वृष्णियों के सरदार अक्रूर की ओर मुड़ा और एक जोरदार धक्का मार कर उसने उन्हें गिरा दिया।

अक्रूर को भूमि पर पछाड़ने के बाद कंस कृष्ण की ओर मुड़ा। उसका मुकुट मस्तक पर से खिसक गया था और उसके लम्बे बाल बिखर कर कंधों पर आ गिरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्ण पीछे से उस पर कूदा और के बाल खींच कर उसे जमीन पर ड़ दिया। कंस के हाथ से तलवार गयी। वह जमीन पर गिर पड़ा। भर में उसे आकाशवाणी और उसके से बचने के लिए किये गये अपने लों का स्मरण हुआ। अपने आजन्म का उसने प्रभु के रूप में दर्शन किया। प्रभु का उसने सदा अनादर किया उस प्रभु का भय आज उसके हृदय समा गया।

इसी बीच बलराम को वसुदेव पर रा रहे भय का स्मरण हुआ। एक धी योद्धा से तलवार छीन कर वह ने पिता की रक्षा के लिए लड़ते यादवों सहायता के लिए दौड़ पड़ा। भयंकर वस्था प्रवर्तित थी। निःशस्त्र लोग रहे थे । स्त्रियाँ चीख-पुकार कर थीं, तलवारे चमक रही थीं, यादव मागधी योद्धा एक दूसरे के साथ रहे थे।

कृष्ण ने देखा कि इस उन्मत हत्या-ड को रोकने का एक ही उपाय है। वह घड़ी आ चुकी थी !

ने कंस के पैर के पास पड़ी हुई तलवार ली। एकाएक तलवार चमकी और भर बाद कंस का मस्तक उसकी देह अलग होकर भूमि पर गिर पड़ा।

कृष्ण ने कंस के स्कन्ध-प्रदेश पर रहनेवाले सुनहरी किनारी का शंख भूमि पर से उठा लिया और उसे फूंका। यह तीव्र नाद सारे वातावरण में गूंज उठा। सारा शोरगुल तत्काल समाप्त हो गया। सभी लोग प्रथम तो स्तब्ध रह गये, फिर उन्हें खयाल हुआ कि क्या हो गया है। उन्होंने देखा कि वसुदेव का पुत्र एक हाथ में तलवार लेकर अत्याचारी कंस की मृत देह पर खड़ा है और विजय का शंखनाद फूंक रहा है।

आनन्द की प्रचण्ड लहरें चारों ओर से उठने लगीं। सभी लोग इस तारणहार की ओर दौड़े। कृष्ण ने तलवार फेंक दी और वहाँ गया, जहाँ हलधर से रक्षित वसुदेव खड़े थे। उसने अपने पिता को साष्टांग दंडवत् कर प्रणाम किया और नम्र भाव से कहा, 'पिताजी, आपके आशीर्वाद की याचना करता हूँ।' वसुदेव का कंठ अवरुद्ध हो गया। उन्होंने अपने पुत्र को उठाया और हृदय से लगा लिया। अब अब उनके लिए आँसू रोकना असम्भव हो गया था। जिस पुत्र की उन्होंने इतने समय से राह देखी थी, उसके कंधे पर मस्तक डाल कर वे फफक पड़े।

आकाशवाणी सत्य सिद्ध हुई।

[क्रमशः]

अनु. ओंकारनाथ शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
[राम-रावण युद्ध......पृष्ठ ५२ का शेष]

आवश्यकता का अनुभव भक्तवर विभीषण ने भी किया था।

यही कारण था कि उन्होंने रावण से--"भजेहु कोसलाधीस" और "कृपासिंधु रघुनाथ भजहु" के लिए प्रार्थना की।

परंतु उसे यह मान्य नहीं था; क्योंकि यह निशाचरपति था, लंकेश था, रावण था। इसलिए युद्ध हुआ और जिस आदर्श की स्थापना राम रावण के मत-परिवर्तन द्वारा करना चाहते थे, वह उन्हें लंकापति और उसके अनुचर तथा भक्तों को मारकर करनी पड़ी; क्योंकि आदर्श की सफलता ने एक निशाचर को **'रावणों लोकरावणः'** बनाया था, उसका संहार लोक-कल्याणकारी था।

साम्राज्य पिपासा विजय में अतीत की कटु स्मृति विजित का भविष्य दुःखपूर्ण बना देती है और प्रतिकार की शोणित-लिप्त कामना उसकी कल्पनायें युद्ध और पुनर्विजय के स्वप्न खोचा करती हैं। फलतः एक बार फिर तलवारें चमकती हैं, और सहस्रों शांतिपूर्ण गृहों के सुख पर बिजली बरसती है; परंतु आदर्श की जीत में यह सब नहीं होता। न भूत की कटु स्मृति रहती है, न भविष्य के रक्त-रंजित स्वप्न। धर्मरथ वीर श्रीराम का विश्वास था कि उच्चादर्श के द्वारा विजय श्रेष्ठ और चिरस्थायी होती है तथा इसका परिणाम भी सुखद और जन-कल्याणकारी ही होता है। यही कारण था कि न बालि का राज्य उन्होंने लिया न रावण की कनक-मंडित लंका ही ली; बल्कि वानर के स्थान पर वानर को ही रखा और राक्षस की गद्दी पर राक्षस को। राम ने दोनों राज्यों को जिन्हें सौंपा, वे रामभक्त थे—अर्थात् निःस्वार्थ जनसेवा और लोक-प्रेम के आदर्श अनुयायी थे। ऐसे ही भक्तों की व्याख्या महेश्वर ने इस प्रकार की है—

"उमा जे राम चरन रत बिगत काम मद क्रोध।
निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं बिरोध॥"

आदर्श की जीत ही सच्ची विजय है। इससे लोहा सोना बन जाता है और चीन को आज हमें यही सिखाना है कि भारत की राजनीति सदा से क्या रही है और स्वयं उसकी भी नीति क्या होनी चाहिए? अभी दो आदर्शों की काट का युद्ध चल रहा है। परंतु यह सभी को समझ रखना चाहिए कि चीन का आदर्श साक्षात् रावण का आदर्श है और भारत रामराज्य के शांतिप्रिय सत्यादर्श को फैलाकर ही दम लेगा।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्मचन्द सरावगी

बननेवाली माताओं से

श्री धर्म चन्द सरावगी प्राकृतिक चिकित्सा के माने हुए मिशनरी, साधक और चिकित्सक हैं। बननेवाली माताओं के लिए उनके द्वारा प्रयोजित यह जीवन-चर्या अत्यन्त उपादेय है।

एक चिकित्सक से मेरी बात हुई, तो उन्होंने बताया—तीस—पैंतीस साल पहले जब उन्होंने चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन प्रारम्भ किया था, और बच्चे के जन्म के बारे में पढ़ना शुरू किया, तो उनको ऐसा लगा कि बच्चों को जन्म देना माता के जीवन का सबसे कष्टसाध्य विषय है। इसके साथ ही माता के जीवन के लिए यह सबसे खतरनाक मौक़ा है, और अगर वह बच्चे को जन्म देकर सकुशल रह जाती है, तो यह उसका नया जन्म है। उनकी यह धारणा इस आधार पर बनी कि डेलिवरी के बारे में जो कुछ चिकित्सा-शास्त्र की पुस्तकों में पढ़ा जाता है, वह डेलिवरी के भयानक और उलझे हुए केसों के बारे में ही बताया जाता है।

ऐसी ही बातें हम आज के सभ्य परिवारों में भी सुनते हैं। किसी स्त्री के पेट में बच्चा आते ही औरतें इस तरह बातें करती हैं, मानों अब यह स्त्री बड़े संकट में पड़ गयी है और इसकी जान बच जाय तो गनीमत समझनी चाहिए। जब बच्चे को वे जन्म दे लेती हैं, तो लोग कहते हैं कि यह उसने नया जीवन पाया है।

अब ऊपर की इन बातों से यह बात साफ हो जाती है कि न तो आजब के चिकित्सक और न आज के सभ्य कहे जाने वाले समाज के लोग, बच्चे को जन्म देने को एक स्वाभाविक कार्य मानते हैं और उनकी यह धारणा बैठी हुई है कि इसमें स्त्री की जान चली जाने की संभावना ज़्यादा है, और अगर बच जाती है, तो उसके भाग्य अच्छे थे और उसने नया जीवन पा लिया है।

इसमें कोई शक नहीं कि आज की मौजूदा परिस्थितियों में बच्चे को जन्म देना स्त्रियों के लिए एक समस्या हो गयी है। आज के सभ्य कहे जाने वाले समाज में स्त्रियों के लिए यह जीवन-मरण की बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उनकी देखरेख इस तरह की जाती है, मानो बच गयी तो उसके भाग्य प्रबल हैं। डाक्टर, नर्स, अस्पताल सभी जैसे किसी भयंकर रोग के रोगी की जान बचाने की कोशिश कर रहे हों, इस तरह से प्रसव के केस को देखते हैं।

उनके ऐसा करने से बेचारी स्त्री के प्राण तो सूख ही जाते हैं, उसके परिवार और रिश्तेदारों के मन में भी भय और आशंका समायी रहती है, कि देखें बेचारी बचती है या जान गवाँ बैठती है।

लेकिन बच्चे को जन्म देना, सभ्य कहे जाने वाले लोगों के लिए जो एक समस्या है, वही प्राकृतिक जीवन बिताने वाले आज के युग में असभ्य कही जानेवाली जातियों के लिए कोई समस्या नहीं है। हमारे कहने का मतलब यह नहीं कि हमें उस पुराने युग में लौट जाना चाहिए। मेरे कहने का मतलब केवल इतना है कि कुछ बातों में असभ्य और जंगली कही जाने वाली जातियों के रहन-सहन के नियम प्राकृतिक होने के कारण अच्छे हैं और वे ठीक रूप से जीते हैं और अपना स्वास्थ्य अच्छा रखते हैं। बच्चे को जन्म देने के बारे में भी यही बात है। गर्भ धारण करना और बच्चे को जन्म देना उनके लिए कोई विकट समस्या नहीं है। इसके लिए न तो उन्हें डाक्टर का मुंह देखना पड़ता है न नर्सों का, न अस्पतालों के लिए ही इन्तज़ार करना पड़ता है। यहाँ पर वे, सभ्य कहे जाने वाले समाज से आगे हैं।

आज सभ्यता के नाम पर जो भोजन किया जाता है, वह अधिकतर अप्राकृतिक होता है। रही-सही कसर स्वाद के बनाने में पूरी हो जाती है। तली हुई चीजें, मिर्च-मसाले और इसी तरह के खाद्य से हमारा जीवन अप्राकृतिक हो जाता है। जो भोजन हम करते हैं, उससे शरीर ठीक से स्वस्थ नहीं रह पाता। इसके सिवा बड़े-बड़े शहरों में रहने की समस्या ऐसी विकट है कि एक-एक कमरे में पूरा-परिवार रहता है, फिर ऐसी हालत में स्वस्थ और शुद्ध हवा और सूर्य की रोशनी कैसे प्राप्त हो सकती है। इस तरह गर्भवती को न तो ठीक से प्राकृतिक आहार मिल पाता है और न शुद्ध हवा-पानी ही मिल पाता है। ऐसे ही वातावरण में रहने वालों के लिए बच्चे को जन्म देना एक समस्या होती है। शरीर के उनके और अंग भी ठीक से स्वस्थ नहीं होते, क्योंकि जब उनका शरीर ही ठीक नहीं रहता, तो शरीर के अन्य अंग कैसे ठीक रहेंगे। असभ्य कही जाने वाली जातियों में न तो दांत की खराबी सुनी जाती है, और न कैंसर, न हृदय की बीमारी, न डायबीटिज, जब कि सभ्य कही जाने वाली जातियों में यह बीमारियाँ प्रायः अपना घर जमाये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहती हैं और दिन पर दिन बढ़ती जाती हैं। इसलिए बिगड़े स्वास्थ्य में बच्चे को जन्म देना सभ्य जातियों के लिए एक समस्या है और उन्हें ऐसे मौक़े पर कष्ट भोगना पड़ता है।

इस विषय में हम एक प्रसिद्ध डाक्टर का उद्धरण देते हैं जो वर्षों गाँवों में रहे हैं। उन्होंने उनके जीवन का अध्ययन किया, उनके खान-पान, रहन-सहन का अध्ययन किया। खास कर बच्चे को जन्म देने वाली माताओं का, उनकी गर्भावस्था में जाँच किया। उनका नाम डाक्टर बेस्टन प्राइस है। उन्होंने अपना अनुभव लिखा है कि उन लोगों में बच्चे को जन्म देना इतना स्वाभाविक और प्राकृतिक है कि उसके लिए किसी को कोई परेशानी नहीं उठानी पड़ती। बच्चे के जन्म होने के कुछ पहले तक वे काम करती रहती हैं और उन्हें इस बात का लक्षण मालूम हो जाता है कि अब बच्चा कुछ देर में ही पैदा होगा। वैसी हालत में घर की किसी स्त्री को लेकर किसी कमरे में चली जाती हैं और वहीं बिना किसी तकलीफ़ के बच्चे को जन्म देती हैं। न उनको अस्पताल की ज़रूरत पड़ती है, न नर्स की, न चिकित्सक की, न दर्द रोकने वाली दवा की। इसका एक मात्र कारण यही है कि उनका जीवन, रहन-सहन और खानपान प्राकृतिक है।

डाक्टर बेस्टन प्राइस ने एक ऐसी स्त्री से पूछा जिसने बीस बच्चों को जन्म दिया था। उसने बताया कि रात में जब किसी बच्चे का जन्म हुआ, तब अपने सोते हुए पति को जगाने की भी उसने ज़रूरत नहीं समझी। यह कोई ऐसी बात नहीं है, जिसके लिए किसी को जगाकर परेशान किया जाय।

अब इस बात की मिलान ज़रा हमारे आज के सभ्य कहे जाने वाले समाज से कीजिए। जहाँ बच्चा होने के पहले ही डाक्टरों और नर्सों को तय कर लिया जाता है। मातृ-सदन में सीट रिज़र्व करा ली जाती है और उसके साथ इतनी तैयारी की जाती है, मानो कि युद्ध भूमि में जाना हो।

हमारा कहने का मतलब यह है कि यदि रहन-सहन और खानपान- सन्तुलित रहे, हम प्रकृति के नज़दीक रहें, तो बच्चे को जन्म देना कोई समस्या न रहे। पशु-पक्षियों में बच्चे को जन्म देना कोई समस्या नहीं है। वे बच्चे को स्वाभाविक रूप में जन्म देती हैं और उन्हें उसके बाद कमजोरी नहीं होती और न महीनों आराम ही करना पड़ता है। यदि हम लोगों में भी स्वास्थ्य ठीक रहे, जीवन प्राकृतिक रहे तो यह समस्या मिट सकती है। एक बात और, बच्चे के जन्म के लिए सबसे अच्छा स्थान अस्पताल नहीं, बल्कि घर ही है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी किताबें
नयी संस्कृति
नया मानव

समीक्षाकार : श्रीहरि [बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना के प्रकाशन]

प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण, भाग ३ और, ४ सम्पादक-आचार्य **नलिन विलोचन शर्मा**, पृष्ठ सं. क्रमशः ८४ और ७८, मू. क्रमशः सवा रु. और एक रु.।

प्रस्तुत दो पुस्तकें, स्पष्टतया पोथियों की सूचियाँ हैं, जो नाम से ही प्रकट है। इनमें, बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् में संग्रहीत हिन्दी की प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण दिया गया है। प्राचीन अमूल्य ग्रन्थों की हस्तलिखित प्रतियों का संग्रह, परिषद् के द्वारा की गयी एक बड़ी सेवा है। इसमें स्व. शर्मा का प्रयास सराहनीय और विद्वत्तापूर्ण है। पुस्तकें शोध एवं अनुसन्धान करनेवाले व्यक्तियों के लिए अधिक उपयोगी हैं। इसमें सूची के विभाजन का ढंग भी सुन्दर है और उससे पाठकों को सुगमता और सुविधा होगी। ऐसी सूचियाँ प्रस्तुत करने के और भी प्रयास होने चाहिए।

हिन्दी साहित्य और बिहार—सम्पादक **शिवपूजन सहाय**, पृ. २६१, सजिल्द मू. साढ़े पाँच रुपये।

यद्यपि बिहार में हज़ार-बारह सौ वर्षों से, अनेक भाषाओं में साहित्य-सृजन हुआ है, किन्तु प्रस्तुत पुस्तक में सातवीं शती से लेकर अठारहवीं शती तक के सर्जित और ज्ञात साहित्यिक सामग्री एवं रचनाकारों का परिचय दिया है, जिनका सम्बन्ध केवल हिन्दी से है। साहित्यकारों के रेखा-चित्र देने का इस तरह का प्रयास नया-सा लगता है। लगभग बारह सौ वर्षों के साहित्य का लेखा-जोखा प्रस्तुत ग्रन्थ में है, जो शोध-कार्य अथवा अनुसन्धान करनेवालों के लिए अधिक सुविधाप्रद है।

शिवपूजन-रचनावली, चौथा खण्ड, स्व. शिवपूजन सहाय, पृष्ठ ६५६, सजिल्द, मूल्य साढ़े आठ रुपये।

स्व. आचार्य शिवपूजन सहाय की रचनाएँ कई खण्डों में प्रकाशित हुई हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खण्ड में उनके द्वारा लिखित जीवनियाँ, स्मरण तथा सम्पादकीय लेख संग्रहीत ये गये हैं। जैसा कि 'वक्तव्य प्रकट है कि स्व. आचार्य जी इसमें म्पूर्ण सामग्री नहीं दे पाये, अनेक रचनाएँ हीं मिलीं। अब उनके दिवंगत हो जाने र उन रचनाओं को प्रकाश में लाने का ायित्व परिषद् का ही है, जिसमें सभी कारों एवं समकालीन साहित्यकारों था साहित्य-प्रेमियों का योग चाहिए, ो कृतियों को खोजनें में सहायता र सकें।

स्व. आचार्य सहाय ने महापुरुषों, समाज-सेवियों, साहित्यकारों, विद्वानों तथा सुधारकों आदि की जीवनियाँ सम्पूर्ण मन से रम कर लिखी हैं और उनके चरित्र के प्रेरक पहलुओं को उभारकर पाठकों को उद्बुद्ध करने की वेचैनी का परिचय दिया है, जो उनकी समाज-निष्ठा, विश्व-निष्ठा का ही प्रतीक है। सम्पादकीय टिप्पणियों में आप का विवेक बोलता है।

परिषद् ने इस प्रकाशन के द्वारा अन्य संस्थाओं के सामने एक आदर्श

टैक्समाको

टेक्सटाइल मशीनरी कारपोरेशन लि.

वेलघरिया (२४ परगना)

भारत के आधारभूत उद्योगों की सेवा करता है
सुप्रसिद्ध विदेशी प्रतिष्ठानों के सहयोग से निर्माण करता है

- **टेक्सटाइल मशीनरी**
- **विविध किस्म के रॉलिंग स्टाक**
- **वाटर ट्यूब बायलर सहित सभी प्रकार के बायलर्स**
- **स्ट्रक्चरल्स**
- **शक्कर मिल मशीनरी**
- **कैप्सटन लेथ**
- **स्टील कास्टिंग और सी. आई. कास्टिंग**

मैनेजिंग एजन्ट्स :

बिरला ब्रदर्स (प्राइवेट) लि.

१५, इंडिया एक्सचेंज प्लेस, **कलकत्ता--१**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखा है, जो भावी पीढ़ी तथा साहित्य सेवियों ही नहीं, साहित्य-शोधकों तथा अनुसन्धान कर्त्ताओं को भी आकृष्ट और लाभान्वित करेगा।

पंचदशलोकभाषानिबन्धावली (संकलन) पृ. सं. ३०४, सजिल्द, मू. साढ़े चार रु.।

प्रस्तुत पुस्तक में मैथिली, मगही भोजपुरी, मंगिका, नागपुरी, संथाली डराँव, अवधी, बैंसवारी, ब्रजभाषा, राजस्थानी, निमाड़ी, छत्तीसगढ़ी, तथा नैपाली भाषाओं अथवा लोक भाषाओं का संक्षिप्त परिचय देकर उनके साहित्य की विशेषताओं और महत्त्व की ओर भी संकेत किये गये हैं। इन पन्द्रह भाषाओं अथवा बोलियों पर अलग-अलग विद्वानों ने लिखकर इस ग्रन्थ की पूर्णता में योग दिया है। साथ में निवन्धकारों के परिचय और चित्र भी दिये गये हैं। परिषद्-द्वारा इस प्रकार के प्रकाशनों से साहित्य के भण्डार की वृद्धि हो रही है और अनेक कमियों की पूर्ति भी। प्रयत्न सराहनीय और अनुकरणीय है।

★

न्यू इण्डिया
द्वारा
आप सदैव सुरक्षित हैं।

चाहे कैसा भी संकट या विशेष उत्तरदायित्व आपके ऊपर हो, **न्यू इण्डिया** की पॉलिसी आपकी रक्षा के लिए आपके साथ है। सभी प्रकार के जनरल बीमा के क्षेत्र में **न्यू इण्डिया** का प्रमुख स्थान है। सभी प्रकार के दावों को आसानी तथा शीघ्रतापूर्वक निबटाने के लिए **न्यू इण्डिया** प्रसिद्ध है।

अपनी सुरक्षा के लिए आप

न्यू इण्डिया

द्वारा बीमा कराइए

दी न्यू इण्डिया

एश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड,

महात्मा गांधी रोड, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीक्षाकार : देवेश ठाकुर [भारतीय ज्ञानपीठ के प्रकाशन]

जैसे उनके दिन फिरे (कहानी संग्रह)
लेखक : हरिशंकर परसाई; मूल्य : रुपये ५० नये पैसे; पृष्ठ : १२६

वर्तमान दशक के लोक प्रिय कथाकार श्री हरिशंकर परसाई की १९ व्यंग्यात्मक कहानियों का प्रस्तुत संग्रह व्यक्ति-जीवन के विविध क्षेत्रों में उत्पन्न पथ-विभ्रष्ट वृत्तियों को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। आज के राजनैतिक और सामाजिक परिवेश में शीर्षस्थ लोगों के मिथ्या दम्भ का अनावरण और उस पर चुटीला व्यंग्य आरम्भ से ही परसाई की लेखनी का वैशिष्ठ्य रहा है। प्रस्तुत संकलन में यह और भी तीव्रता और शक्ति के साथ उभरा है। उन्होंने नेताओं से लेकर अध्यापक तक, बूढ़ों से लेकर युवकों तक तथा उच्चतर राजनीति से लेकर पंचायत तक सभी पर सटीक और सार्थक व्यंग्य उपस्थित किये हैं, जो एक बार सामान्य पाठक के मन को गुदगुदा देने तथा उस प्रकार का कृत्रिम जीवन जीने वाले व्यक्ति को तिलमिला देने की क्षमता रखते हैं। 'जैसे उनके दिन फिरे,' सुदामा के चावल, मेनका का तपोभंग, त्रिशंकु बेचारा, पाठक जी का केस, आमरण अनशन आदि व्यंग्य कथाएँ करारी हैं और जीवन के असत्य आदर्शों का पर्दाफ़ाश करने में सक्षम हैं। इन व्यंग्य कथाओं का वैशिष्ठ्य इसलिए भी बढ़ जाता है कि अपनी अभिव्यक्ति में लेखक पूर्ण शिष्ट, गम्भीर और शालीन है। हिन्दी के कुछ व्यंग्य लेखक व्यंग्य के नाम पर हास्यास्पद लिखते हैं, किन्तु शिष्ट हास्य के संदर्भ में परसाई का स्थान सबसे महत्वपूर्ण है। परसाई की व्यंग्य कथाओं द्वारा हिन्दी के एक रिक्त स्थान की पूर्ति हो रही है, यह निर्विवाद है।

खोयी हुई दिशाएँ (कहानी संग्रह)
लेखक : कमलेश्वर; मूल्य : २ रुपये ५० नये पैसे; पृष्ठ : १४३

ग्यारह कहानियों का प्रस्तुत संग्रह श्री कमलेश्वर की एक नितान्त 'बदली हुई मनःस्थिति' की कहानियाँ हैं। इलाहाबाद के विस्तृत शान्ति प्रदेश को छोड़ने के पश्चात् दिल्ली के जन-सागर में प्रवेश करने पर परिवर्तित परिवेश ने लेखक को सोचने समझने की नयी दिशा प्रदान की है और उसी संदर्भ में कहानियों का सृजन हुआ है। 'एक अश्लील कहानी' चन्द्रनाथ की बदलती हुई मनःस्थिति' की कहानी है, जो पाठकों के सम्मुख जीवन के निषेधात्मक मूल्यों की अश्लील व्याख्या करती हुई अन्त में, एक झटके के साथ श्लील बन जाती है। ये झटके कमलेश्वर की लेखनी का वैशिष्ठ्य भी हैं, और पराभव भी। प्रेमिका, दिल्लीमें एक मौत, एक थी विमला, साँप, और एक रुकी हुई जिन्दगी आदि ऐसी कहानियाँ हैं, जो जीवन के तथ्यों से आरम्भ होकर अन्त में कथा-शिल्प की कृत्रिमता में परिणत हो जाती हैं। कमलेश्वर की इन कहानियों में बौद्धिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्लेषण भरा पूरा है, किन्तु सामान्यतः इनका अन्त स्वाभाविक न होकर कलात्मक अधिक है और यह कलात्मकता प्रयास करके लादी गयी प्रतीत होती है। प्रयास के कारण इन कहानियों में कहानी का सहज प्रवाह प्रायः लुप्त हो गया है। हाँ, वातावरण निर्माण की दृष्टि से कमलेश्वर की लेखनी काफी सशक्त है और उच्च वर्गीय सामाजिकों पर जो अप्रत्यक्ष व्यंग्य हुए हैं, उनमें भी सप्राणता है। 'दिल्ली में एक मौत' इसी संदर्भ की सुन्दर कहानी है। किन्तु नयी कहानियों की शिल्पात्मक कलात्मकता के प्रति अत्यधिक रुझान होने के कारण कहीं-कहीं कहानियों का मूल्य निश्चित ही कम हो गया है।

चाय पार्टियाँ (नाटक) लेखक: सन्तोष नारायण नौटियाल; मूल्य: २ रुपये पृष्ठ: १२४

'चाय पार्टियां' आज के तथाकथित सभ्य समाज में प्रचलित चाय पार्टियों में निहित केन्द्रीय स्वार्थ का उद्घाटन करते हुए उस वर्ग पर व्यंग्य प्रस्तुत करता है। वर्तमान सामाजिक जीवन में व्याप्त स्वार्थ-भाव ही इन चाय पार्टियों का मूल है। रमेश अपने भतीजे को नौकरी दिलाने के लिए एक कम्पनी के डाइरेक्टर मिस्टर बैजल को चाय-पार्टी देना चाहता है। इसी संदर्भ में पति-पत्नी के संबन्ध, अन्य संबन्धियों के प्रति अनुरक्ति व अलगाव

अपर गैंजेज सुगर मिल्स लिमिटेड
दि अवध सुगर मिल्स लिमिटेड
न्यू इण्डिया सुगर मिल्स लिमिटेड
दि न्यू स्वदेशी सुगर मिल्स लिमिटेड
भारत सुगर मिल्स लिमिटेड
गोबिन्द सुगर मिल्स लिमिटेड
★
विशुद्ध उज्ज्वल चीनी के निर्माता
★
मैनेजिंग एजेन्ट्स
दि काटन एजेन्ट्स प्राइवेट लिमिटेड
इंडस्ट्री हाउस बम्बई–१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाव, सामाजिक मनोविज्ञान और व्यावसायिक प्रवृति-- सभी का चुटीले ...ों के माध्यम से सुन्दर निरूपण है। श्री नौटियाल ने जीवन के तथ्यों की अभिव्यक्ति के लिए हास्य-व्यंग्य को ...ो कहीं, अतिशयोक्ति पूर्ण ही बनाया है ...न उसे अशिष्ट और कुलषित ही होने ...ा है। संवादों में प्रवाह और प्रभाव ..., नाटकीय दृष्टि से रगमंच के योग्य ...कृति कई बार सफलता पूर्वक अभिनीत ...हो चुकी है। इसमें ऊंचे कहे जाने वाले ...विशेषों की व्यवहारशीलता का ...लापन' जितनी भोली शैली में प्रस्तुत ...का है, उसे लेखक की स्वस्थ संस्कार ...ता ही कहा जाना चाहिए।

हम सब और वह (निबन्ध संग्रह) लेखक : श्री दयानन्द वर्मा; मूल्य : २ रुपये; पृष्ठ: ८१

...ो ललित निबन्धों का प्रस्तुत संग्रह ...ी गम्भीरता में व्यापक है। अपने ...ारों को मनोवैज्ञानिक तथ्यों के अनुकूल ...कर प्रस्तुत करना और उनके माध्यम ...स्वयं निर्मित निष्कर्ष उपस्थित करना, ...तः बड़ी साधना और परिश्रम का ...है। श्री दयानन्द वर्मा के इन ...न्धों में सुपरिचित, सामान्य से लगने ...विषयों पर अध्ययन और अनुशीलन ...विवेचना हुई है। 'बेईमान का जीवन ...', मनोवृत्तियाँ और धर्म, भीखः ...स्या और निराकरण, इच्छा-शक्ति ...र तर्क-शक्ति आदि निबन्ध वर्तमान ...स्थितियों के परिवेश में पाठक को ...और चिन्तना का अवसर प्रदान करते हैं। लेखक की यह दूसरी ही कृति है, किन्तु विषय वस्तु के निरूपण कौशल, भाषा-शैली की प्रांजलता, अभिव्यक्ति का सहज चमत्कार तथा विचारों की प्रौढ़ता इसे हिन्दी साहित्य में उपलब्ध श्रेष्ठ निबन्ध कृतियों की कोटि में ला देती है। इस कथन से निश्चित ही असहमति नहीं हो सकती।

[हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी के प्रकाशन]

रामायण—(कथा) ले० : श्री रघुनाथ सिंह; मूल्य ४ रुपये ५० पैसे; पृष्ठ : ३२४

'राम-कथा' को औपन्यासिक कृति के रूप में प्रस्तुत कर श्री रघुनाथ सिंह ने 'इस पौराणिक आख्यान को आज के गद्यात्मक बुद्धिजीवी पाठक के लिए भी रुचिकर बना दिया है। एक नितान्त नये प्रकार से उपर्युक्त कथा का प्रस्तुतीकरण हुआ है। वैसे तो सम्पूर्ण पुस्तक ६ खण्डों में विभक्त, है किन्तु कथा प्रसंग के साथ ही प्रमुख पात्रों एवं घटनाओं का स्वतंत्र वर्णन भारतीय संस्कृति के सामान्य से जानकार के लिए भी पर्याप्त रोचक हो सकता है। 'सीता निर्वासन' और 'राम का शरीर विसर्जन' इस कथा के सर्वाधिक हृदय स्पर्शी प्रसंग हैं। भाषा-शैली की प्रांजलता राम-कथा के पौराणिक परिवेश को उभारने के संदर्भ में सक्षम है। समग्रतः, पुस्तक सभी-प्रकार से उपयोगी तथा राम-कथा के विस्तृत प्रचार की दृष्टि से पूर्ण समर्थ है। भाषा की काव्यात्मकता ने पुस्तक के महत्व को और भी बढ़ा दिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी में सरकारी काम-काज करने की विधि लेखक: श्री राम विनायक सिंह; मूल्य : ३ रुपये; पृष्ठ संख्या: २३५

ग्यारह अध्यायों में विभक्त उपर्युक्त पुस्तक मूलत: सरकारी पत्र-लेखन, टिप्पणि, लेखन, सार-लेखन तथा अनुवाद के संदर्भ में सैद्धान्तिक और व्यावहारिक सामग्री प्रस्तुत करती है। प्रत्येक विषय के सैद्धान्तिक पक्ष को समझाकर व्याख्या की गयी है और उसको आज की सामाजिकता के अनुकूल अभिव्यक्ति प्रदान की है। आज जब सरकारी काम-काज में मन्थर गति से हिन्दी का प्रवेश होने लगा है—ऐसी पुस्तकों की उपयोगिता बढ़ जाती है। हाँ, भाषा, कहीं-कहीं दुरूह हुई प्रतीत होती है। किन्तु, शास्त्रीय विवेचन में इस अनिवार्य बुराई से बचा भी नहीं जा सकता।

पुस्तक सभी प्रकार से उपयोगी बन पड़ी हैं तथा सरकारी कार्यालयों में इसकी आवश्यकता अवश्य ही अनुभव की जाती रहेगी।

भारती

भवन की पत्रिका

ऑर्डर फ़ॉर्म

श्री व्यवस्थापक **'भारती'**, भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, **बम्बई–७,**

प्रिय महाशय,

मैं 'भारती' का वार्षिक सदस्यता शुल्क ६.५० न.पै. / अर्द्धवार्षिक ३.५० न.पै. मनीऑर्डर / पोस्टल ऑर्डर द्वारा भेज रहा हूँ / रही हूँ। कृपया निम्नांकित पते पर दि०———से प्रति भेजने का कष्ट करें :—

नाम ______________________________

पूरा पता ______________________________

____

____

तिथि············ भवदीय/भवदीया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मद्रास केन्द्र द्वारा आयोजित नाट्य प्रतियोगिता

वर्ष भारतीय विद्या भवन, मद्रास द्वारा आयोजित तृतीय अन्तर-महा लय नाटच प्रतियोगिता में तीन जों ने भाग लिया और कुल छ क प्रस्तुत किये गये, जिसमें एक जी, दो सस्कृत, दो तामिल तथा एक भाषा में था। प्रतियोगिता में लेने वाले कालेज विवेकानन्द, डेन्सी तथा जैन, कालेज थे। प्रति- गिता के दूसरे दिन प्रख्यात अभिनेता टी. के. शन्मुगम तथा कवि के. एम. फ उपस्थित थे। उन्होंने भारतीय भवन के कार्यों की सराहना की कुलपति श्री मुन्शी जी द्वारा प्राचीन तीय संस्कृति के पुनरुत्थान के लिए जाने वाले प्रयासों की प्रसंसा की। स केन्द्र के मानद मन्त्री श्री के. सुब्रमानिया अय्यर ने नाटच प्रति- गिता का उद्घाटन करते हुए बताया भविष्य में इस प्रतियोगिता का योजन सितम्बर या अक्टूबर माह किया जायगा और तब अधिक ता में कालेज भाग ले सकेंगे। रतीय विद्या भवन के सिद्धान्तों, तिविधियों एवं उसकी सफलताओं भी उन्होंने प्रकाश डाला।

प्रतिदिन बड़ी संख्या में दर्शकगण उपस्थिति रहते थे। विवेकानन्द कालेज ने मुन्शीजी चल रजत कप को जीतने का श्रेय प्राप्त किया। अन्य ट्राफी भी उसने जीतीं। व्यक्तिगत पुरस्कार भी दिये गये। इस अवसर पर सोवेनियर भी प्रकाशित किया गया था।

अखिल भारतीय महिला खाद्य परिषद

गत ४ अप्रैल को दिल्ली में अखिल भारतीय महिला खाद्य परिषद का ९ वाँ वार्षिक अधिवेशन मनाया गया। इस अधिवेशन का उद्घाटन केन्द्रीय खाद्य मन्त्री श्री ए. एम. थामस ने किया।

प्रारम्भ में परिषद की अध्यक्षा श्रीमती लीलावती मुन्शी ने श्री थामस का स्वागत करते हुए कहा कि हर्ष का विषय है, श्री थामस जी परिषद की प्रवृत्तियों में पर्याप्तरूप से रुचि लेते हैं। परिषद की प्रगति पर विस्तृत-रूप से प्रकाश डालते हुए श्रीमती मुन्शी ने आगे कहा कि आज जब चीनी आक्रमण तथा हर वस्तुओं की बढ़ती मंहगाई जैसी विकट समस्याएँ देश के सामने हैं, परिषद ने गत दो वर्षों में आशाप्रद प्रगति की है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश के सुरक्षा प्रयासों में भी परिषद तथा उसके सदस्य पर्याप्तरूप से सहायता करते रहे हैं। परिषद का प्रमुख केन्द्र दिल्ली, लखनऊ और गाजियाबाद है। इसके अतिरिक्त बम्बई, पूना और कलकत्ता जैसे प्रमुख शहरों में भी इसके कार्यालय हैं। इन स्थानों पर परिषद अन्नपूर्णा के नाम से ३० उपहारगृह सफलतापूर्वक चला रही है।

श्रीमती मुन्शी ने अपना भाषण जारी रखते हुए आगे कहा कि यद्यपि परिषद अपने कार्य-क्षेत्र को और भी विस्तृत करना चाहती हैं; किन्तु इस दिशा में सरकार की ओरसे न तो कोई सहायता मिलती है और न ही प्रोत्साहन। उन्होंने खेद प्रकट करते हुए कहा कि लोगों की भोजनसम्बन्धी आदतों को बदलने सम्बन्धी विषय पर सरकार पैसे को पानी की तरह बहा रही हैं; किन्तु इस दिशा में ठोस कार्य करनेवाली परिषद जैसी संस्था को सरकारी सहायता नहीं मिलती। उन्होंने बड़ी स्पष्टता से कहा कि कोरे कागजों पर विशाल योजनाओं को जन्म देने मात्र से ही सफलता नहीं मिल जाती, इसके लिए तो एक ध्येयवादी मानवशक्ति को संचय करने की आवश्यकता होती है। अन्त में उन्होंने कहा कि हमें पूर्ण-रूप से विश्वास है कि सरकार परिषद की कठिनाइयों को समझने और उसे हल करने में हमारी सहायता करेगी।

✱

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Read

BHAVAN'S JOURNAL

India's Most Popular English Fortnightly

Devoted to

LIFE, LITERATURE & CULTURE

Single Copy 30 nP.
Obtainable from all news agents and railway bookstalls.

Annual Subscription
Rs. 6.50.
Send your subscription to the Circulation Manager,
Bhavan's Journal
Bharatiya Vidya Bhavan,
Chowpatty, Bombay-7.

BHARATIYA VIDYA BHAVAN, BOMBAY-7.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औद्योगिक स्वावलम्बन की दिशा में कमाणी का प्रगतिशील प्रस्थान

सत्वर औद्योगीकरण आज की परम आवश्यकता है। भारत को औद्योगिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनाने की दिशा में योगदान करते हुए कमाणी उद्योग गौरव अनुभव करता है।

कमाणी इन्जीनियरिंग कार्पोरेशन लिमिटेड
कमाणी मेटल्स एण्ड एलायज लिमिटेड
कमाणी मेटलिक ऑक्साइड्ज़ प्रा. लिमिटेड
जयपुर मेटल्स एण्ड इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड
कमाणी ट्यूब्ज प्राइवेट लिमिटेड

बम्बई, कलकत्ता, जयपुर, मद्रास, नयी दिल्ली, पटना, शिलोंग, बडोदा, त्रिवेन्द्रम्

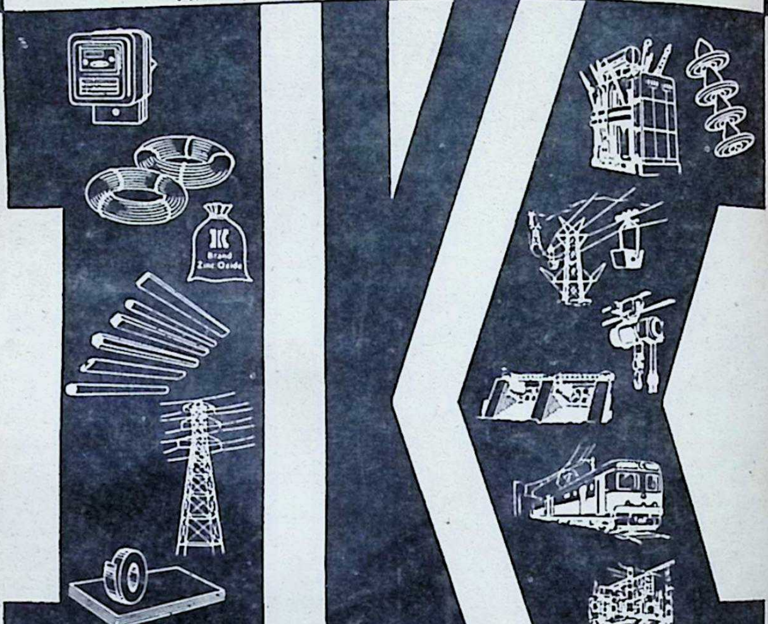

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

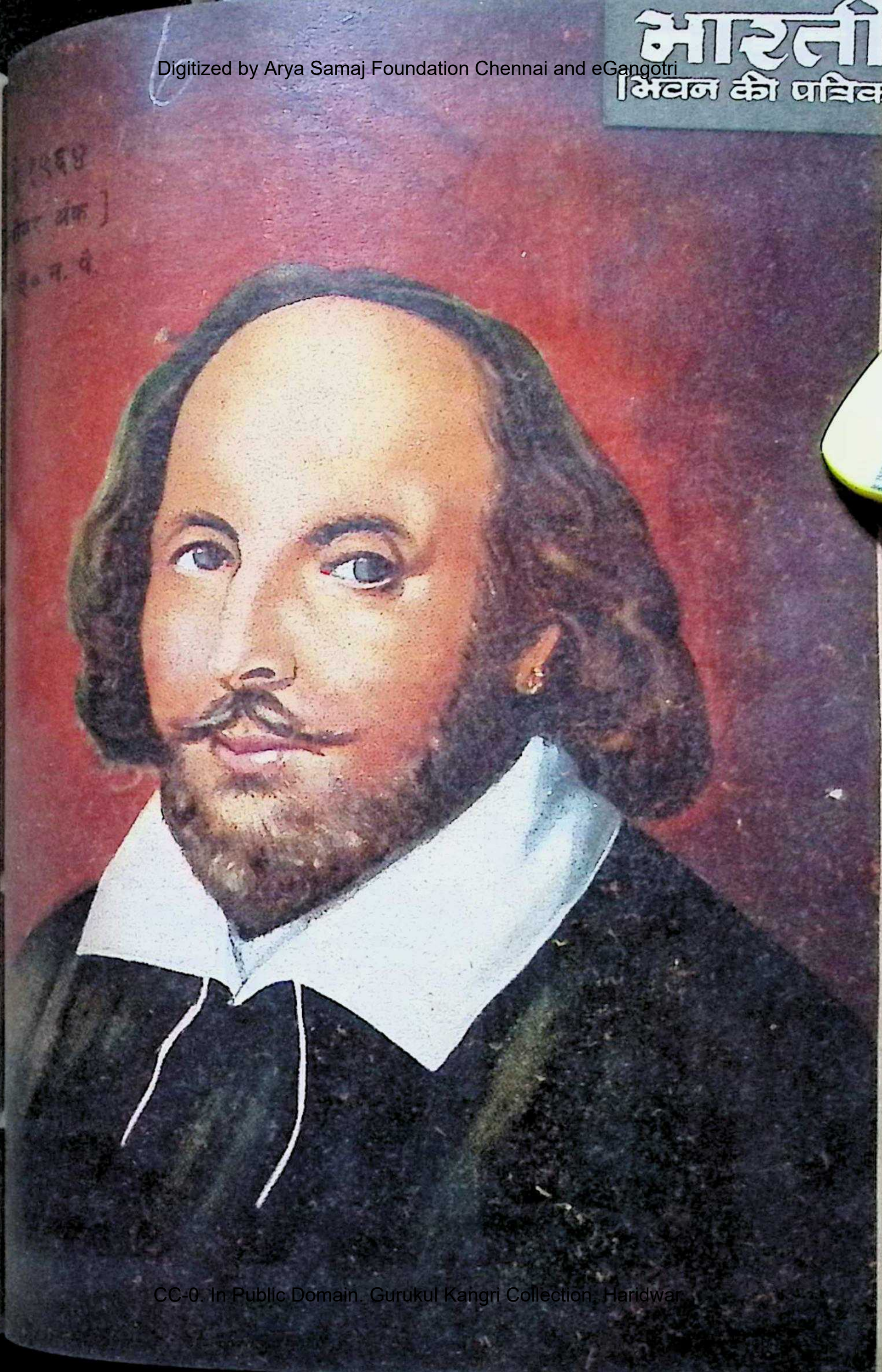

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल में तो मेरे भी है!

सच है, एक महिला के दिल में कितनी ही इच्छाएँ होती हैं...वह अपने परिवार के लिए, घर के लिए और स्वयं अपने लिए कितनी ही चीजें चाहती है। अगर आपके पास पहले से ही बहुत-सा धन नहीं है तो आप अपनी बचत के पैसों से ही अपनी इच्छाओं को पूरा कर सकती हैं।

काश, ऐसा हो सकता...

आपको पैसे बचाने में मदद करने और बैठे-बिठाये आमदनी करने के लिए हमारी बचत-योजना आपकी सेवा में प्रस्तुत है। कुछ न कुछ पैसा, चाहे वह ज़्यादा हो या थोड़ा, हर महीने नियम से बचाइए। आपकी रकम आपके बचत के पैसों से बढ़ती जायगी और फिर उस पर ३% का ब्याज भी मिलेगा। कुछ समय बाद आपको यह देखकर आनन्द होगा कि अपनी मनचाही चीजें खरीदने के लिए आपके पास काफ़ी पैसे जमा हो गये हैं। हमारे सेविंग्ज एकाउण्ट में जमा करने के लिए नियम से पैसे बचाने की आदत डाल लीजिए। हमारे बैंक की सबसे पासवाली शाखा में अपना खाता खोल लीजिए।

*** सेविंग्ज़ एकाउण्ट पर ब्याज ३%**

साल में १०० चेक तक भुनाये जा सकते हैं

हमारी फ़िक्स्ड डिपॉज़िट योजना:
४% से ५% तक ब्याज मिलता है

हमारी उपहार योजनाएँ:
उपहार के चेक और चाँदी की छोटी छोटी घड़ें

देना बैंक

देवकरण नानजी बैंकिंग कं. लिमिटेड

रजिस्टर्ड ऑफ़िस: देवकरण नानजी बिल्डिंग
१७ हॉर्निमैन सर्कल, बम्बई-१

१३० से अधिक ऑफ़िस तथा ४० सेफ डिपॉज़िट वॉल्ट • आम बैंकिंग और वैदेशिक मुद्रा विनिमय व्यवसाय भी होता है।

प्रवीणचंद्र व. गांधी मैनेजिंग डायरेक्टर

1964-DB

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र्ष ८ : अंक १७]

भारती

[३ मई १९६४

ापक :
हैयालाल मुन्शी

ल्य सम्पादक :
न्तकृष्ण ह. दवे

ाशक :
रामकृष्णन्

ादक :
ेन्द्रकुमार जैन

योगी :
राम मिश्र
ारनाथ शर्मा
लाल शुक्ल

ालय :
रतीय विद्या भवन,
ाटी रोड,
ई ७

अंक : ३० न.पै.
क : ६.५० न.पै.
र्षिक : ३.५० न.पै.

अथर्ववेद : प्रार्थना ३

कन्हैयालाल मुन्शी : कुलपति का पत्र ४

श्रीअरविन्द : प्राण-शक्ति का प्रचण्ड सर्जक : शेक्सपीयर १०

रवीन्द्रनाथ ठाकुर : जब भगवान मेरे जीवन में आये १४

भक्त रैदास : नाम संकीर्तन १७

रमेशचन्द्र शाह : शेक्सपीयर का चेहरा १८

अलबर्ट आइन्स्टीन : संसार को जैसा मैंने देखा है २६

अनिलकुमार : हरिद्वार में गंगातट पर ३१

सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन् : विज्ञान और यंत्र, हमारे प्रभु नहीं, सेवक हों ३३

विष्णुचन्द्र शर्मा : सन्धि-पत्र ३६

सन्तोष व्यास : मैंने मुझको जाना ४१

डेनिस बार्डेन्स : स्ट्रेटफोर्ड-अपॉन-एवन : जहाँ शेक्सपीयर का जन्म हुआ था ४२

नरेशचन्द्र मिश्र : वह मातृ-भक्षक अवधूत केसरी ४६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी १७ मई के अंक में

- ईश्वर है भी, नहीं भी : विनोबा भावे
- एक असंगत प्रश्न : भगवान बुद्ध का उत्तर : सुधाकर दीक्षित
- हमारा शरीर भी अमर हो सकता है : जोएल गोल्डस्मिथ
- कला का रसास्वादन : डा. वासुदेव शरण अग्रवाल
- हरबंस कुँवर (गुजराती कहानी) : चुन्नीलाल मड़िया
- हिमालय के योगी शिवानन्द : लक्ष्मी शंकर व्यास
- जागृत शक्ति-पीठ : दन्तीवाड़ा : अनिलकुमार
- श्री नेहरू के बाद कौन ? एक असंगत प्रश्न : प्रभातकुमार मित्तल
- वैज्ञानिक प्रयोग शाला में जीवनतत्त्व का निर्माण निकट ? : एन्ड्रिला

जगत नित-नवीन : दाँत गिरने पर अब नये जीवित दाँत लगाये जा सकेंगे

श्री हरि : चण्डीदास की राधा-रानी ४८

कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार ५०

५४

के. एस. रामस्वामी : पशुपति नाथ की यात्रा ६६

इस अंक में प्रकाशित शेक्सपीयर सम्बन्धी चित्रों के चित्रकार हैं, रॉबर्ट हॉजसन : अन्य सज्जाकार हैं श्री कमलाक्ष शेनॉय, अमृता भारती।

आवरण-चित्र :

विलियम शेक्सपीयर

चित्रकार :

शरद नवरंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः।

भारती

भवन की पत्रिका

आगामी विश्व विकास का सूचक :

जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

गुरुकुल पुस्तकालय काँगड़ी

प्रार्थना

यस्यवातः प्राणापानौ
चक्षुरङ्गिरसोऽभवन्
दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीः,
तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥

यह वायु जिसके प्राण और अपान रूप है, यह प्रकाशमान पिंड जिसने नेत्र हैं, जिसने दिशाओं को ज्ञान-पताकाओं के समान बनाया है, उस सर्वतोमहान् ब्रह्म को नमस्कार है।

—अथर्व. १०.६.३४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

• शेक्सपीयर का सृजन-साम्राज्य

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बंबई,
३ मई १९६४

मेरे युवा मित्र,

सारी दुनिया इस समय इंग्लैण्ड के महा-कवि शेक्सपीयर का पाँचवाँ जन्म-शताब्दि उत्सव मना रही है।

शेक्सपीयर के सृजन-जगत् ने, भारतीय नव जागरण पर कितना बड़ा प्रभाव डाला है, इसकी स्पष्ट प्रतीति बहुत कम लोगों को है। इसने हमें यूरोपियन नव-जागरण का प्राणभूत स्पर्श दिया है; इसने एक नयी रूमानियत को जन्म दिया है; इसने हमें हमारा आधुनिक **नाटक** और रंगमंच दिया है। जब मैं कॉलेज में पढ़ता था, तब छुट्टियों के दिनों में शेक्स-पीयर के पात्रों का अभिनय अपने कमरे के एकान्त में शीशे के सामने किया करता था; और तब मैंने उसके प्रभाव की शक्ति को जाना था।

शेक्सपीयर १५६४–१६२० के एलिज़ा-बेथन इंगलैण्ड में रहता था; कम उम्र में ही उसका विवाह एनी हैथवे से हुआ जो उससे उम्र में कई बरस बड़ी थी और उसी से उसके कई सन्तानें हुईं।

अपने प्रारम्भिक दिनों में शेक्सपीयर शिकार की चोरी करता था; एक बार एक हिरन चुराते हुए वह पकड़ लिया गया, उसी प्रसंग में सर थॉमस ल्यूसी के साथ उसकी झंझट हो गयी। बाद में, धन और यश की खोज में वह लन्दन चला गया, जहाँ उसका सम्पर्क नाटककारों और अभिनेताओं से हुआ। उसके कुछ साहित्यिक मित्र भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी

जिनमें से एक का नाम बेन जॉन्सन वह भले युवकों का उपजीवी था इच्छुक अभिनेताओं का साथी था। उसने जीवन के सुरूप और कुरूप पक्षों में अनुभव प्राप्त किया, उसने और पंक दोनों का ही आनंद लिया। बड़ी भारी लालसा और मांसल आसक्ता थी। वह भद्दी मजाकों की झुक सकता था और उदात्ततम की ओर उठ सकता था।

...सपीयर के ...स उसके ...निक जीवन ...र्दा हटाते ...म उसे एक ... युवक को ... के लिए ...ाते हुए ... हैं, जो ...तः उसके

...आश्रयदाताओं में से था। वह 'मच ...बाउट नथिंग' में 'बेनेडिक' उद्धृत ...के लिए 'डियर लेडी डिस्डेन' का ...हो गया, जो एक धनिक महिला थी जिसने कवि की कल्पना को मुग्ध ...था, लेकिन फिर भी एक दूरी बनाकर ...थी। सम्भवतः वह प्रारम्भिक 'कॉमे-...डी' की रूमानी और तीक्ष्ण बुद्धि ...पात्रों का मूल थी; तो भी उन पात्रों में जो प्रखर चमकदमक और आकर्षण है, वह कवि की 'जीनियस' का सृजन है। मैंने १९५० में न्यूयार्क में कैथेरीन हेप्बर्न को रोज़ेलिण्ड की भूमिका में काम करते देखा था, 'एज यू लाइक इट' में इस अभिनायिका की सनातन मोहिनी से मैं चमत्कृत हो गया था।

बाद को कवि एक शोख़ औरत की वासनात्मक मोहिनी का शिकार हो गया, जो उसके सॉनेट्स की 'डार्क लेडी' के नाम से प्रसिद्ध हुई। पता चलता है कि उसकी आँखें काली थीं और उसकी त्वचा साँवली थी; वह अपने प्रेमी से उम्र में छोटी थी, वह झूठ बोलती थी और उसने अपने पति के साथ विश्वासघात किया था। शेक्सपीयर उसे जरा भी आकर्षक नहीं लगा था, वह उस पर जुल्म करती थी और कहती थी कि वह उससे नफ़रत करती है। साथ ही उसने कवि को पागल कर दिया था, और उसे पाप करने और यातना झेलने को मजबूर कर दिया था। इस पागलपन के भीतर से 'लेडी मेकबेथ', 'क्लियोपेट्रा' और स्वच्छन्दा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारिणी 'क्रेसेडिया' जैसी शक्तिशाली नारियों का सृजन हुआ। सम्भवतः एक मित्र ने ज़बरन उसे 'डार्क लेडी' से बिछुड़ा दिया, और उसके फलस्वरूप उपजनेवाली ईर्ष्या ने कवि के भीतर वह मूड जगाया, जिसमें 'ओफीलिया' और 'डेस्डीमोना' का निर्माण हुआ।

शेक्सपीयर ने एक सार्वभौमिक मानस पाया था, जो किसी भी भूमिका को अंगीकार कर उसे अच्छी तरह अदा कर सकता था। पर अपनी प्रिया की बाहुओं में कैद होकर उसकी कल्पना सारी ऊँचाइयों को मात कर देती थी। तब विवेक और तर्क ख़ामोश हो जाते थे, कला का नियम-विधान भुला दिया जाता था। वह अपने को एक नया आदमी महसूस करता था। एक ऐसा विजेता, जो स्वयं अपने से ऊपर उठ जाता है। प्रचण्ड सर्जक-शक्तियों से वह उन्मेषित हो उठता था, जीवन को उसके सारे पहलुओं और विविधताओं में समझ लेता था। वह एक महान सर्जक हो उठता था।

बाद को यह उच्छृंखल वासना उसके जीवन से चली गयी। शायद नफ़रत और निराशा से भर कर उसने लन्दन छोड़ दिया, और एक युवती ने (शायद उसकी अपनी बेटी ने) उसके भीतर पितृ-वात्सल्य की शांति जागृत कर दी, जिससे 'पेरडिटा' और 'मिरान्डा' जैसे पात्रों की सृष्टि हुई।

एलिजाबेथन काल एक ऐसा युग था, जो किसी भी कवि की सर्जनात्मक शक्ति को उसकी सम्पूर्ण गहराइयों के साथ जगा देता था। फ्रांस और इटली में होनेवाले नवजागरण ने जीवन के हर पहलू में सौन्दर्य का आविष्कार किया। उसने देह, इन्द्रियों, बुद्धि, कर्म और वाणी सब में सौन्दर्य का उद्घाटन किया। शेक्सपीयर इस नूतन उद्घाटन का गायक और दृष्टा था। कालिदास के भीतर जो एक परिपूर्ण संगति की चेतना थी, शेक्सपीयर में उसका अभाव था। व्यास की तरह उसने उच्च अभीप्साओं के आकाश में संचरण भी नहीं किया था। मानव-स्वभाव के सभी पहलुओं को जिस गहरायी से उसने जाना था, वैसा कोई दूसरा साहित्य-स्वामी नहीं जान सका था; हाँ, मानव-मन की उच्च अभीप्साओं में उसकी गति नहीं थी।

पिछले मई में मैंने एक बार फिर से 'हेमलेट' पढ़ा। शेक्सपीयर की समूची नाट्यमाला में यह अपना जोड़ नहीं रखता। एक नाटकीय त्वरा वाले दृश्य के साथ नाटक का पर्दा उठता है। सभी पात्रों के भीतर एक नामहीन भयानकता का भान है, जिससे वे चारों ओर से घिरे हुए हैं। आनेवाली भयानक घटनाओं की अशुभ सूचनाएँ बराबर मिलती चली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ही हैं। साधारणतः ऐसा वातावरण ...भी महान् नाटक के अन्त में ...जाता है। केवल शेक्सपीयर ही ...को इस तरह आरम्भ कर उसे दूसरे ...भी चरमोत्कर्ष तक ले जा सका।

...टक 'एल्सीमोर' में खुलता है। ...णधारी संतरी रुक कर एक दूसरे से ...लगते हैं कि उन्होंने अभी-अभी दो ...कोई भयानक दृश्य देखा है। हमारी ...सी जाग उठती है। हम साँस ...र हेमलेट के पिता के भूत के ...की प्रतीक्षा करते हैं, जो पहले ...न्दर योद्धा के रूप में दिखायी पड़ ...था। आगामी दुर्घटना की छाया पड़ ...: राज्य में किसी अजीब विस्फोट ...त्याशा छायी हुई है।

...जा ने अपने भाई की हत्या कर ...है और उसकी विधवा से विवाह ...या और सता के उन्माद से पागल ...बेचैन और बेताब वह सिंहासन पर ...था। यह अपने आप में एक गर्भित ...है जिसमें से नाटक बुना जाता है। ...लेट प्रवेश करता है; वह गहरी ...ना से आक्रान्त है; उसके हृदय की ...यों से चीत्कार उठती है :

...रे यह ठोस से भी ठोसतर मांस
गल जायेगा
...ल जायेगा, और विसर्जित कर
...गा अपने को एक ओस-बिन्दु में;
या कि फिर सनातन सत्ता ने निर्धारित
नहीं किया था
अपना नियम-विधान आत्म-हत्या के
प्रतिरोध में !
ओ भगवान ! ओ भगवान !
कितने थकानभरे, घिसे-पिटे, सपाट
और निरर्थक
लगते हैं मुझको दुनियाँ के
सारे व्यापार !'

बाद के साहित्य के सारे ही 'वरदरों' और 'चाइल्ड हेरेल्डों' का पूर्वज था हेमलेट। वह आज के उन सारे थके स्त्री-पुरुषों का अग्रगामी था, जो इस घड़ी पृथ्वी पर चल रहे हैं, यह नहीं जानते हुए कि उन्हें अपने जीवन के साथ क्या करना चाहिए : जो चाहते हैं कि काश ज़िन्दगी बेहतर होती, फिर भी जिनके भीतर ऐसी इच्छा–शक्ति का अभाव है, जिसके द्वारा जीवन के भीतर से कोई शक्तिशाली आकार-प्रकार बुना जा सके।

भूत फिर से प्रवेश करता है और हेमलेट को उसके चाचा की दग़ाबाजी और उसके पिता की हत्या की सूचना देता है। उस दृश्य के सम्मुख हेमलेट भय और आश्चर्य से बौखला जाता है, उसके सामने उसके चाचा को एक 'बलात्कारी', 'व्यभिचारी पशु' के रूप में उद्घाटित किया जाता है। जब कि उसकी माँ को मात्र एक सदाचारिणी दिखायी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ती रानी के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रतिशोध की चाह से हेमलेट उद्वेलित हो उठता है।

इस प्रकार यह अनोखा राजकुमार क्रमशः पहले रक्ताक्त, फिर दयार्द्र, फिर सन्देहों और कुचक्रों से आक्रान्त, सदा भय से ग्रस्त, सदा तात्कालिक के साथ परोक्ष को जोड़ने में सचेष्ट होता चला जाता है। वह एक बारगी ही उदात्त है, विरूप है, पाशविक है, सच्चा है: "कभी वह एक तीव्र सत्य से प्रेरित हो उठता है, कभी दार्शनिक हो उठता है, कभी प्रतिशोध के उन्माद से पागल हो उठता है और निरन्तर उसे यह भान रहता है कि यह सब कुछ ठीक नहीं है।"

उस प्रसिद्ध स्वगत-भाषण में उसकी चरम विफलता की गहराइयाँ उद्घाटित होती हैं। हेमलट स्वयं जीवन पर ही सन्देह कर उठता है, और फिर भी उन सपनों से भयभीत होता है, जो मरण-निद्रा में उसे सता सकते हैं। वह अन्त कर देना चाहता है: "हृदय की उस टीस का और उन हज़ारों स्वाभाविक आघातों का, जो हमारे रक्तमांस को उत्तराधिकार में मिलते हैं," पर जिनसे बचने का कोई उपाय नहीं है और जिन पर विजय पाने की शक्ति हममें नहीं है। वह क्रुद्ध और कराल हो उठता है और काल के कोड़ों तथा तिरस्कारों पर, पीड़क के अन्याय पर, अभिमानी के औद्धत्य पर लानत फेंकता है। वह आज के मानवों के कितन क़रीब आ जाता है!

●●●

'आफीलिया' भी एक अद्भुत सृष्टि है। मधुर और कोमल-हृदया, चिपटी जाती-सी विवशता की वह प्रतिमूर्ति है। केवल शेक्सपीयर ही ऐसे दुर्बल प्राण के भीतर से सुन्दर रागिनियों का ऐसा वैविध्य उत्पन्न कर सकता था। नाटक के आरम्भ में नितान्त आज्ञाकारिता से वह अपने आप को अपने पिता की योजना के प्रति समर्पित कर देती है, और इसी हीन प्रयोजन की शिक्षा उसे दी जाती है। नाटक जैसे-जैसे आगे बढ़ता है, वह और अधिक कुँवारी और अधिक विवश होती चली जाती है।

इस नाटक में केवल एक ही दृश्य ऐसा है, जो हमें महसूस कराता है कि जीवन में कहीं कोई आशा ज़रूर है: हेमलेट अपने चाचा को, जो कि राजा था, प्रार्थना में लीन देख कर छोड़ देता है। दुष्ट आदमी के भीतर भी जब भगवान की श्रद्धा जागती है, तो उसके भीतर आत्मसंयम का उदय होता है।

ग़लती से वह उस मामले में हस्तक्षेप करनेवाले आफीलिया के पिता की हत्या कर देता है, जो कि टेपेस्ट्री के पीछे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ पाया जाता है। और, उसके उसका सामना अपनी रानी मां से है। उसके इस नवविवाह के वह उसकी भर्त्सना करता है और वह उस पर ऐसा क्रूर कलंक लगाता ऐसा कि शायद ही कभी किसी पुत्र अपनी पुंश्चली मां पर लगाया होगा।

इस दृश्य के दौरान फिर वही भूत करता है और हेमलेट उसे देख है। लेकिन वह अपनी भूतपूर्व रानी नहीं दिखायी पड़ता।

जब अगली बार हम फिर से आफी- को देखते हैं, तो उसका मस्तिष्क होता है और वह धार्मिक गीत सुनायी पड़ती है : "सभी क्रिश्चियन आओं के बीच केवल मैं ही भगवान र्थना करती हूँ! भगवान तुम्हारे हों!" ये उसके अन्तिम शब्द हैं।

मारी आफीलिया को कब्र के भीतर शान्ति नहीं मिलती। जब उसे या जा रहा था, ठीक उसी समय और उसका भाई लार्टिस आपस लड़ते हैं। हेमलेट का अनिश्चित क अपने लक्ष्य-सिद्धि के दौरान हीन है। उसकी प्रतिशोध की ना बड़ी आसानी से अपने बलात्कारी व्यभिचारी चाचा की ओर से र उस अभागिनी कुमारिका के भाई पर टूट पड़ती है, जिसे र करता था।

के बाद नाटक की गति तेज होती जाती हैं। एक के बाद एक तेज रफ़्तार से मौतें होती चली जाती हैं। हेमलेट के लिए तैयार किया हुआ जहर रानी खुद पी लेती है। लार्टिस अपनी ही घुटन से मर जाता है। हेमलेट की तलवार से राजा का खात्मा हो जाता है। अन्तिम क्षण, में पितृ-शोध ले लिया जाता है। "मैं भी अपनी मां के पीछे जाता हूँ", हेमलेट चिल्ला उठता है। उसके बाद स्वयं हेमलेट मर जाता है।

जो भी साहित्यिक कृतियाँ मैंने पढ़ी हैं, उनमें हेमलेट ने ही मुझे सबसे अधिक आश्चर्यचकित किया है। उसमें शेक्सपीयर ने अपनी पारगामी अन्तर्दृष्टि से उस आगामी युग का पूर्वाभास लिया है जो उसके जीवनकाल में आरम्भ हो चुका था। चरित्र के रूप में हेमलेट उस विफल जगत का प्राणी है, जिसमें हम सब जीते हैं।

क्या शेक्सपीयर पैग़म्बर था? या उसने हमारे वर्तमान युग जैसे काल के आगमन की सिर्फ चेतावनी दी थी, जो भगवान को भूल जाना चाहता है और मनुष्य के मस्तिष्क को सीमाहीन निराशा के पंजे में जकड़ देता है? मानो कि एक आशा की किरण देते हुए उसने एक उपाय प्रस्तुत किया है : "अपने प्रति सच्चे रहो" स्वधर्मे निधनं श्रेयः।

आपका

कृष्णलाल मुखर्जी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री अरविन्द

प्राण-शक्ति का प्रचण्ड सर्जक : शेक्सपीयर

शेक्सपीयर जीवन की अन्ध द्वंद्वात्मक लीला का अप्रतिम द्रष्टा और सृष्टा था। मानव मनोविकारों की जैसी सूक्ष्म, अन्तर्गामी, जटिल–कुटिल, अन्धी गलियों का उद्‌घाटन उसने अपने सृजन में किया है, वैसा शायद ही जगत के अन्य किसी लेखक ने किया हो। जीवन की संचालिका प्रचण्ड प्राण-शक्ति का वह 'यत्परोनाऽस्ति' सर्जक था।

अपने युग और समूचे अंग्रेज़ी साहित्य में शेक्सपीयर एक अप्रतिम प्रतिभा-पुरुष के रूप में सामने आता है। उसके युग के अनेक सर्जक रूप-शिल्प के वैशिष्ठ्य के प्रति आर्कषित हुए थे, और इ[स] प्रकार की प्रतिभा के लिए परिस्थिति[याँ] भी अनुकूल थीं; पर रूप-दक्षता [में] शेक्सपीयर का कोई मुक़ाबला नहीं क[र] सका। और सच्चे अर्थों [में] एक महान् और मौलि[क] नाट्य-कवि के नाते भी समू[चे] अंग्रेज़ी वाङमय में वह अके[ला] खड़ा दिखायी पड़ता है। अप[नी] मूलगत चेतना और गुणव[त्ता] में भी वह नितान्त अप्रति[म] कहा जा सकता है। क्योंकि उसके समकालीन सर्जक मा[त्र] उसकी कला के बाह्य रूप [में] ही साम्य रखते हैं, इसलि[ए]

शेक्सपीयर का प्रणय और दाम्पत्य

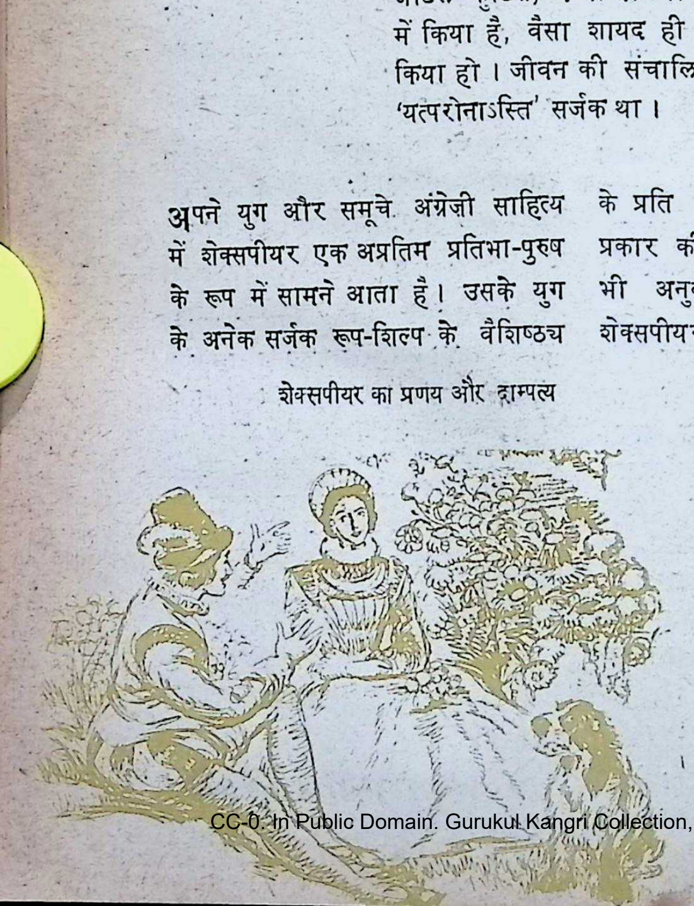

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कच्ची सामग्री और बाह्यावरण सपीयर जैसा ही है। पर उनकी तरी नाट्यरीति वही नहीं है, नके द्वारा शेक्सपीयर अपने रूप-शिल्प र कच्चे द्रव्य को रूपान्तरित करके, हैं एक सर्वथा भिन्न अर्थ और मूल्य न करता था। उत्तरकालीन रूमानी क ने यद्यपि शेक्सपीयर के कलागत य और संस्पर्श का अनुसरण करने कठिन प्रयास किया है, पर उसका यन और नियमन एक दूसरी ही र की काव्य-मनीषा द्वारा हुआ है। री काव्य-रीति से भिन्न उसकी आंतर या भी सर्वथा भिन्न प्रकार की है। जीवन पर पकड़ बैठाता है, उसके धारण प्रभावों को एकसूत्र में बांधता और उसे निराला, तेजस्वी, रंगीन र उजागर बनाने के लिए कठिन प्रयास ता है। शेक्सपीयर ने ऐसा कभी किया, सिवाय अपनी आरम्भिक करणशील कृतियों के, या कि जब प्रेरणाशून्य रहा होगा। जीवन को कर पकड़ने, और ज़बर्दस्ती रूमानी देने की उसे कभी ज़रूरत नहीं पड़ी। कि, उसकी अन्तःप्रतिमा के रूप में सृजित होने के लिए, जीवन स्वयं सपीयर पर हावी हो जाया करता। वह स्वयं अपने भीतर जीवन के में बैठ जाता था, और जीवन की सहज जिजीविषा में से प्राणियों की एक समूची सृष्टि उंड़ेल देता था। ये व्यक्ति सत्ताएँ उसकी सृजित दुनिया में भी उतनी ही वास्तविक और जीवन्त होती थीं, जितनी कि बाहर की इस यथार्थ दुनिया के मनुष्य होते हैं, जहाँ से वह सुझाव संकेत लिया करता था। गहन सत्यों को प्रकाशित करनेवाली वाणी के नाना रंगी समुद्र, और गतिमत्ता के अचूक ज्वार पर ज़ीवन्त व्यक्तिमत्ताओं की एक विप्लवी बाढ़-सी उमड़ती चली आती थी। निश्चय ही ऐसा जान पड़ता है कि उसकी नाट्य-प्रक्रिया का सामान्यतः और कोई अन्य बौद्धिक प्रयोजन, सौन्दर्यमूलक आशय या आध्यात्मिक रहस्य नहीं था। साधारणतया उसकी नाट्य-वृत्ति का प्रयास यही है कि, नानामुखी जीवन, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणिक सृष्टि के आनन्द का काव्यात्मक 'विज़न' प्रस्तुत किया जाय। स्वयं जीवनी शक्ति के सिवाय, इस सृष्टि का और कोई केन्द्र नहीं था। जीवन की अनियंत्रित ऊर्जा के द्वारा अनायास ही उद्भूत होने वाले सामंजस्य के अलावा उसमें और कोई तारतम्य नहीं था, प्रकृति में यथार्थ रूप में विद्यमान मनुष्य और जीवन-चैतन्य का जो एकत्व उसके भीतर और उसकी आँखों के सामने क्रियाशील था, उसके अतिरिक्ति उसमें और कोई गहिरतर एकत्व का आधार नहीं था। जीवन-चैतन्य का यह निरा सृजनात्मक आनन्द ही शेक्सपीयर है। काव्यात्मक आत्म-दर्शन के रसास्वाद के लिए, उस युग में शेक्सपीयर के भीतर जीवन के इसी प्राकृत सृजनानन्द ने अवतार लिया था।

आज हम शेक्सपीयर की सीमाओं की बात कर सकते हैं। तब कहा जा सकता है, कि शेक्सपीयर की सारी शक्तियों और सीमाओं के लिए जीवन-चैतन्य की यही ऊर्जा ज़िम्मेवार है, जिसमें से उसकी काव्यवाणी उच्चारित हुई है। प्रथमतः वह कलाकार नहीं है, न वह मूलतः कविर्मनीषि हैः वह है प्राण-शक्ति का प्रचण्ड सर्जक, और एक सीमा के भीतर, जीवन का दृष्टा। उसकी कला में जीवन ने अपने ही ज्वारों और उन्मेषों में से, अपने आपको नाना रूपाकृतियाँ प्रदान की हैं। इन रूपाकारों में आवश्यक रूप से कोई समाकृत संगति नहीं है, न कोई सूक्ष्म सम्वादिता है। पर उसकी स्वच्छन्द गतिमत्ता में भी उसकी अपने ढंग की उत्कृष्ट और आत्मीय छान्दसता है। गतिमान दूर-परिप्रेक्ष्यों में सफल और तुष्टिप्रद नव-नवीन राहों की एक अन्तहीन परम्परा है। यद्यपि उसने काव्यात्मक चिन्तन को एक अद्भुत भाषा प्रदान की है, पर वह चिन्तन के लिए चिन्तन न करके, जीवन के लिए चिन्तन करता है। उसकी कला में कवि स्वयं जीवन का चिन्तन नहीं करता। उसके यहाँ तो अनेक मनोदशाओं और क्षणों में जीवन स्वयं अनेक मुखों से, कवि के भीतर से चिन्तन करता है। अति सूक्ष्म, सुन्दर वैचारिक परिणामों-प्रवाहों से यह चिन्तन सम्पन्न संश्लिष्ट होता है। पर बौद्धिक 'विजन' के किसी स्पष्ट समीकरण, अथवा किसी आदर्श या आध्यात्मिक परिणाम की उच्च शक्तिमत्ता की उपलब्धि के लिए यह चिन्तन नहीं होता।

मानव-चरित्रों की उसकी विकास-प्रक्रिया में, उसकी अपनी सीमा में, एक प्रबल सामर्थ्य होती है। पर, उसमें मानव-आत्मा का अन्वीक्षण वाह्य चरित्र, विकार-वासना, क्रिया, जीवनगत आत्मा के माध्यम से होता है। चिन्तनगत आत्मा, गहिरतर चिन्मय चेतना या मानव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्य के गभीरतर सत्य के माध्यम से मानव-चरित्र का दर्शन नहीं करता। वस्तुएँ आंशिक रूप से उसमें मिल ती हैं, पर मात्र इनकी कुछ छायाएँ रंगीन काँच के भीतर से पड़नेवाले तिविम्ब रूप में ही इनका बोध मिल ता है, अपने क्रियाशील रूप में वे लब्ध नहीं होतीं। अपने 'विज़न'— न में और इसीलिए अपने काव्यगत ोजन में शेक्सपीयर न तो वह जीवन ऊपर उठ पाता है और न उसके पीछे क पाता है। न तो वह जीवन की च के चरम परम मुक़ामों को पकड़ ता है, न वह जीवन के भीतर क्रियाशील न अगोचर शक्तियों का दर्शन कर ता है। कभी, एक दो बार अपने ान्त नाटकों में, वह इस दिशा में ास करता दिखायी पड़ता है। पर तब कुछ प्रचण्ड जीवनी शक्तियों के दोलनों भर को देख पाता है, जिन्हें या तो किसी जीवन्त प्रतीक में ाकृत करता है, या उन्हें मानव-व्यापार पीछे कार्य करते दिखाता है, जैसा कि ने 'मैंकबेथ' में किया है। या फिर ान्तक रूप से अपने चरित्रों की सत्ता अधिकार करते हुए, इन शक्तियों को ाता है, और उन्हें देहाकृत करता जैसा कि उसने 'किंग लीयर' में किया। फिर भी यह तो मानना ही होगा, कि उसका नाटक केवल बहिर्गत व्यापार का नाटक नहीं है, क्योंकि वह हमारे बहिरंग जीवन की अपेक्षा, भीतर से और अधिक गहराई से निःसृत होता और जीता है। उसका नाट्य-सृष्टा, मात्र स्थूल रूपों का दृष्टा और सृष्टा 'विरल' नहीं है। वह सपनों का ज्योतिर्मय मनस् हिरण्य-गर्भ है, जो उन रूपों के पीछे विद्यमान अपने ही विम्बों को देखने के लिए, उनके भीतर झाँकता है। अन्य किसी भी कवि से अधिक शेक्सपीयर ने मानसिक रूप से प्रचण्ड ऋषि विश्वामित्र सा दुर्द्धर्ष कर्म-व्यापार सिद्ध किया है। उसकी 'विज़न' की शक्ति न उसकी अपनी एक शेक्सपीरियन दुनियां का निर्माण किया है। और यह दुनियां, अपने वास्तव मूलक तत्वों के बावजूद शब्द के सच्चे मानों में एक रूमानी दुनिया है। यह रूमानी दुनिया अद्भुत आश्चर्य और जीवन की उन्मुक्त शक्ति का जगत है। वह मात्र वाह्य वास्तविकताओं का जगत नहीं है। जो कुछ हमारी वास्तविक दुनिया में फीका और बाधित है, वह उस जगत में एक महत्तर, विशालता प्राण की भूमि में जीने और श्वास लेने लगता है। उस जगत में सौन्दर्य, औत्सुक्य और विपुलता की एक अति प्राकृत लीला दिखायी पड़ती है।

[शेष पृष्ठ ७१ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

जब भगवान मेरे जीवन में आये

महाकवि रवीन्द्रनाथ थे जीवन-देवता के आराधक। जीवन-जगत की ऐन्द्रिक लीला के भीतर से ही उन्होंने भगवान की अक्षय माधुरी का परस पाया था। निरन्तर मुग्ध विस्मय और उल्लास की जिस चेतना में जीकर, उन्होंने अपना सृजन किया है, वह निश्चय ही सनातन सत्ता का प्रदेश था। उस सनातन सत्ता के प्रत्यक्ष समान अनुभव के मुहूर्त-क्षणों का कवि-गुरु ने यहाँ आत्म-निवेदन किया है। उनकी जन्म-जयन्ती ७ मई के उपलक्ष्य में हम उनकी यह अमृत वाणी नतशिर झेलते हैं।

यदि मैं अपने आकस्मिक आध्यात्मिक उन्मेष के अनुभव का विवरण प्रस्तुत करूँ, जो मुझे हुआ, तो यह एक दिलचस्प बात हो सकती है। यह वह अनुभव था, जो किसी सनातन धारा की भूगर्भित तरंग के समान अप्रत्याशित रूप से सतह पर फूट आया।

जब मैं अठारह वर्ष का था, अकस्मात् आये वसन्त-पवन की तरह धार्मिक-अनुभव मेरे जीवन में पहले-पहल आया, और मेरे स्मृति-पटल पर आध्यात्मिक सत्य का स्पष्ट संदेश छोड़कर चला गया। एक दिन जब मैं सवेरे-सवेरे वृक्षों के पीछे से किरणों को फैलाते हुए सूर्य को देख रहा था, मुझे अचानक लगा कि पलक मारते एक कोई पुरातन धुंध मेरी दृष्टि से हट गया है, और संसार के चेहरे पर उस सुबह के प्रकाश ने आनन्द के एक आन्तर प्रकाश आलोक को अनावरित कर दिया है। वस्तुओं और मनुष्यों पर से सामान्यत्व का अदृश्य पर्दा हट गया था, और उनका मूलगत महत्त्व मेरे मन में तीव्रता से प्रवेश कर गया था, और यही सौन्दर्य की परिभाषा है। इस अनुभव में जो कुछ स्मरणीय था, वह था इसका मानवीय सन्देश, मनुष्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है अति-वैयक्तिक संसार में मेरी चेतना का आकस्मिक विस्तार। अपने इस प्रथम विस्मयकारी दिन मैंने एक कविता लिखी, जिसका शीर्षक था, "निर्झरेर स्वप्न-भंग" जिस निर्झर की चेतना अपने बर्फीले वन्द एकान्त में निद्रित पड़ी थी, सूर्य से स्पर्शित हो वह मुक्ति के एक बड़े जलप्रपात के रूप में बह रही थी। अनन्त यज्ञ में, समुद्र के साथ अपने सतत मिलन में उसने अपने लक्ष्य को पा लिया था। चार दिन के बाद 'विज़न' हट गया, और मेरी अन्तर-दृष्टि के ऊपर एक पर्दा सा पड़ गया। अंधेरे में, संसार ने एक बार फिर साधारण तथ्य का तिमिर-वेश धारण कर लिया।

जब मैं बड़ा हुआ और मुझे एक गाँव में किसी उत्तरदायित्वपूर्ण काम में लगा दिया गया, मैंने एक ऐसा समीपवर्ती आवास अपने लिए चुना, जहाँ समय की गति धीमी थी और सुख-दुख की धूप-छाँव अपने शुद्ध और सादे रूप में थी। सामान्य जीवन की अपनी समस्त संचित मामूलियतों के साथ वह दिन आया, जिसका मेरे निकट विशेष महत्त्व है। सुबह का मोटा-मोटा काम अब समाप्तप्राय था, स्नान के लिए जाने से पहले ही मैं पल भर के लिए अपनी खिड़की से उस बाज़ार को खड़ा देखता रह गया, जो एक ऐसी सूखी नदी के पाट के किनारे था, जिसमें धारा के साथ ही साथ वर्षा का प्रथम प्रवाह भी मिल गया था। अचानक मैं अपने भीतर आत्मा की प्रदीप्ति के प्रति चेतन हो गया। एक पल के भीतर मेरा अनुभव का संसार रोशन होने लगा, और वे बातें, जो धुँधली और असंगत हो गयी थीं, अब अर्थवत्ता से परिपूर्ण लगने लगीं। उस समय जो अनुभूति मुझे हुई, वह उस आदमी की तरह थी, जो कुहरे में बिना अपना ठौर-ठिकाना जाने राह टटोल रहा है और अचानक वह क्या देखता है कि वह अपने घर के सामने ही खड़ा हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने बचपन का वह दिन मुझे आज भी याद है, जब मैं पहले प्राइमरी में अपने पाठों के साथ जोत दिया गया था, और अलग-अलग शब्दों के हिज्जे करने के भार से रुँधा हुआ था। सुबह का समय मेरे लिए उस पृष्ठ के समान था, जो एक बार प्रकाशित होकर अब धूमिल और धूलभरा हो गया है, जो असम्बद्ध चिह्नों से बेरंग और कीड़ों से खायी गयी निरर्थकता के कारण कष्टपूर्ण हो गया है। अकस्मात् मैंने संयुक्त शब्दों से एक वाक्य पढ़ा, जिसका अनुवाद यों होगा: "वर्षा हो रही है, पत्तियां कम्पित हैं।" तत्काल मैं एक ऐसे संसार में चला आया, जहाँ मैंने अपना सम्पूर्ण अभिप्राय समझ लिया। मेरे अन्तःकरण ने अभिव्यक्ति की, सृजन-जगती में प्रवेश किया, और तब मैं केवल वह विद्यार्थी ही था, हिज्जों के पाठों से जिसका मन बांध दिया गया है और जो कक्षा तक ही सीमित है। वर्षा-ताड़ित कम्पित पत्तियों की लयात्मक तस्वीर ने मेरे सामने उस विश्व को अनावरित किया, जिसमें केवल एक जानकारी ही नहीं थी, बल्कि मेरी सम्पूर्ण सत्ता से एक अजीब एकतानता थी। निरर्थक अंशों ने अपनी एकान्तिक सत्ता खो दी और 'विज्ञान' की समग्रता से मेरा अन्तर छलाछल आनन्द से भर गया। उसी तरह, गाँव की उस सुबह में मेरे जीवन के तथ्य अचानक ही मुझे सत्य की प्रकाशमान समग्रता में भासित होने लगे। वे सब चीजें जो उच्छृंखल लहरों की तरह लगती थीं, निःसीम सागर की तरह मेरे सामने उजागर हो गयीं। मैंने निश्चय जाना कि अपने समस्त अनुभवों में मेरा संसार जिसकी श्रेष्ठ अभिव्यक्ति चाह रहा था, उस 'सत्ता' ने मुझे ग्रहण कर लिया है, और मेरे अनुभवों को एक ऐसी नित-विस्तृत व्यक्तिसत्ता के साथ जोड़ रही है, जो कला का आध्यात्मिक कर्तृत्व है।

इस 'सत्ता' के प्रति मैं उत्तरदायी हूँ, क्योंकि मुझमें जो सृजन है, वह जितना मेरा है, उतना ही उसका भी है। ऐसा हो सकता है कि यह वही सृजन-'मन' हो, जो अपने शाश्वत विचार से विश्व को रूपायित कर रहा है, लेकिन मुझमें यह एक ऐसे व्यक्ति की तरह था, जिसका मुझमें व्यक्तिगत सम्बन्ध के समान अपना विशेष केन्द्र था और जो गहराती चेतना में विकसित हो रहा था। मेरे अपने दुख थे, जिन्होंने मेरे समय के पार एक लम्बी जलती पगडण्डी पर अपनी याद छोड़ी है, लेकिन उस समय मैंने यह महसूस किया कि उन दुःखों में मैंने अपने आपको एक ऐसी सृजन-पीड़ा को दे दिया है, जो मेरी वैयक्तिक

(शेष पृष्ठ ६४ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम संकीर्तन

पावन जस हैं माधो तेरा
तू दारुन अघमोचन मेरा
कीरति तेरी पाप विनासै
लोग वेद यों गावैं
जो हम पाप करत नहिं भूधर
तौ तू कहा नसावै
जब लग अंग पंक नहिं परसै
तौ जल कहा पखारै
मन मलीन विषयारस लम्पट
तौ हरिनाम सँभारै
जो हम विमल हृदय चित अन्तर
दोष कौन परिहरि हौ
कह रैदास प्रभू दयाल हौ
अबन्ध मुक्त का करिहौ

—भक्त रैदास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रमेशचन्द्र शाह

शेक्सपीयर का चेहरा

शेक्सपीयर का चेहरा...! 'ग्लोब' थिएटर में उमड़ते चेहरे...! पाठकों और आलोचकों की दस पीढ़ियों के अनगिन चेहरे...! कॉलरिज ने हैमलेट में अपना ही चेहरा देखा था। गेटे ने हैमलेट में अपना ही चेहरा देखा था। उसकी रंगशाला में उमड़ते दर्शकों की भीड़ में से प्रत्येक ने उसमें अपना चेहरा चीन्हा था।

शेक्सपीयर का चेहरा...कौन कह सकता है कि यही शेक्सपीयर का चेहरा रहा होगा! एक अजीब-सी भावुक निराशा होती है इस चित्र को देखकर। मिल्टन का चित्र देखकर किसी को शंका नहीं होती कि यह मिल्टन का ही चित्र है, उसको एक नजर देख लेना ही जैसे उसकी सच्चाई

एलिज़ाबेथन रंगमंच पर शेक्सपीयर के 'जूलियस सीज़र' नाटक का अभिनय

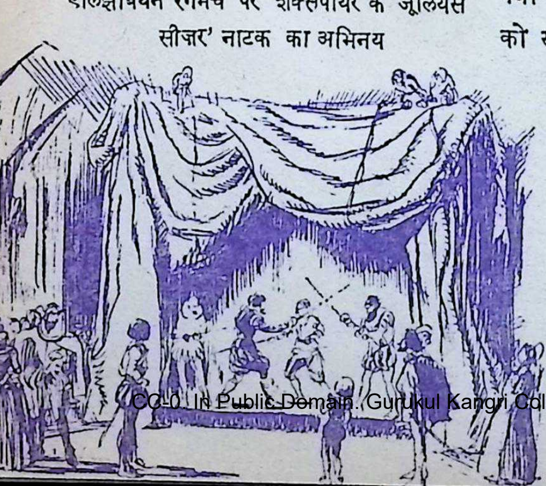

का प्रमाण पा लेना है। पर शेक्सपीयर? क्या पता, स्ट्रैटफोर्ड चर्च की उस समाधि पर सन् १६२२ में जो मूर्ति स्थापित की गयी वह ठीक-ठीक गढ़ी भी गयी थी या नहीं। मृत्यु के आठ साल बाद की मूर्ति। और जो सन् २३ के फोलियो संस्करण पर छपा चित्र है, वह? अजी इसका भी क्या भरोसा कि वह चित्रकार शेक्सपीयर को सचमुच निकट से जानता ही होगा।

जाने क्या सोचकर बेन जॉनसन कह गया— नहीं लिख गया कि "तुम उसकी तस्वीर को मत देखो। उसकी क़िताबों को देखो।" उसकी किताबों को। किताबें यानी करीबन पैंतीस-छत्तीस ड्रामे, दो लम्बी-चौड़ी कविताएँ और शायद डेढ़ सौ से कुछ ऊपर सॉनेट। ढूंढ़िए इनमें और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

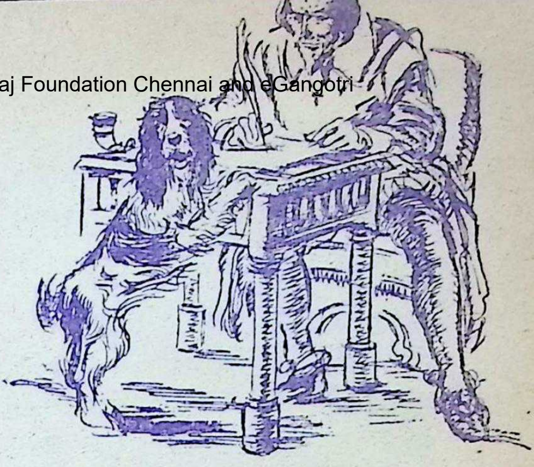

शेक्सपीयर अपने
अन्तिम दिनों में

शेक्सपीयर का चेहरा। × × ×

ाए शेक्सपीयर का चेहरा। × × × ...ंड में शेक्सपियर का समारोह मनाया रहा है। ठीक चार शताब्दियों पूर्व सन् ...६४ में शेक्सपीयर ने वहाँ जन्म लिया ...। २६ अप्रैल की उस सुबह एक शिशु ...बपतिस्मा देते हुए स्ट्रैटफोर्ड चर्च के ...पादरी को क्या पता था कि हजारों ...नों के साथ एक और नाम जो उसके ...जस्टर में आज दर्ज हुआ है—वह नाम ...दिन संसार के कोने-कोने में, शिखरों ...र सागरों पर गूंजेगा। उसे क्या पता ...कि यह जन्म, एक छोटे से परिवार के ...ए ही नहीं, एक कस्बे, एक प्रांत, एक ...के ही लिए नहीं, बल्कि समूचे विश्व ...लिए एक घटना है]

...चार सौ साल साहित्य के इतिहास में ...त नहीं होते। दान्ते का समय और ...न शताब्दी पहले का है। पर हम दान्ते ...बारे में क्या नहीं जानते? और शेक्स...पीयर? क्या उसकी जीवनी, उसका ...व्यक्तित्व उसके इस चेहरे जितना भी ...विश्वसनीय बन पाया है—विद्वानों की दस...पीढ़ियों की अनवरत शोध के बावजूद? ...चार सौ साल पहले के इस कवि का ...व्यक्तित्व और जीवन-वृत्त हमारे सामने ...पन्द्रह सौ साल पहले के कालिदास की अपेक्षा ...अधिक उजागर है? और कृतित्व? वहाँ ...क्या कम बखेड़ा है? यहाँ तो एक ...ऋतुसंहार को लेकर विद्वानों का सिरदर्द

क़ायम है। जबकि वहाँ एक-एक नाटक एक-एक 'सीन' का घपला मच रहा है। अकेले 'हैमलेट' के तीन-तीन समकालीन 'क्वार्टो' संस्करण मौजूद हैं, किसको प्रामाणिक मानें, किसको नहीं? हम जो आज ये छत्तीस नाटक देख रहे हैं, इनमें से अधिकांश का नामोनिशान भी नहीं रहता अगर दो अभिनेता-मित्रों को सन् १६२३, में अपने दिवंगत मित्र के सारे नाटकों को एक साथ इकठ्ठा एक जिल्द में छपवा डालने की न सूझती। लेखक के न रहने पर कितना कुछ स्वैराचार उन पाण्डुलिपियों के साथ न हुआ होगा? जी नहीं। वे पांडुलिपियाँ भी कहाँ थीं? शेक्सपीयर के हाथ की एक भी पाण्डुलिपि शायद उपलब्ध नहीं है। छपी हुई मूल प्रतियाँ जितनी भी हैं, उनमें से अधिकतर तत्कालीन नाटक-मंडलियों के द्वारा व्यवहार में लायी हुई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। जगह-जगह काट-छाँट, रद्दोबदल; कहीं कहीं पूरे के पूरे संवाद ही ग़ायब। 'रामचरित मानस' के संपादकों को कहाँ उतनी परेशानी पड़ी होगी, जितनी कि शेक्सपीयर के नये-पुराने संपादकों को। कभी-कभी सोच में पड़ जाता हूँ कि क्या उस आदमी को कभी हमारा—अपने पाठकों का भी ध्यान आया होगा, अपने उन भावी पाठकों का जो उसके 'न्यू प्लेस' में या 'ग्लोब थियेटर' में उमड़ती एलिज़ाबेथन भीड़ों में शामिल नहीं थे? क्या उसका अभिनेता, उसका निर्देशक-प्रबन्धक, उसका दर्शक उसके आन्तर-पुरुष को, उसके स्रष्टा को परिपूर्ति का सुख दे सके थे? वह अपने कृतित्व के प्रकाशन के प्रति, उसकी समुचित देख-रेख के प्रति इतना उदासीन क्यों था? क्यों नहीं वह अपने जीवन-काल में अपनी समस्त कृतियों का व्यवस्थित प्रकाशन देख गया?

क्या वह अपने कृतित्व के विराट् महत्व के प्रति पूरी तरह सचेत था? क्या वह अपने आपको खूब अच्छी तरह जानता था? क्या शेक्सपीयर अपना चेहरा खुद पहचानता था?

कुछ भी हो, वह अपनी शक्ति से अनजान नहीं था। अपने एक सॉनेट में उसने लिखा है: — "बड़े-बड़े सम्राट इस धरती से लुप्त हो जायेंगे; उनके बनाये हुए संगमर्मर के प्रासाद ढह जायेंगे; सुनहले स्मारकों का भी पता न रहेगा। पर मेरी ये पंक्तियाँ तब भी उतनी ही जीवन्त, उतनी ही प्रभावशालिनी रहेंगी, जितनी कि आज। समय उन्हें नहीं छू सकता।" क्या महाकवि भवभूति को भी अपने नाटकों की अजरता का ऐसा प्रचण्ड विश्वास रहा होगा?

तो क्या उसकी अथाह, अविरल निर्वैयक्तिकता, अपने-आपके प्रति वह चरम उदासीन तटस्थता, वह निर्लेप अयशः प्रार्थित्व इस प्रचण्ड आत्मविश्वास का ही परिणाम है? क्या यह निस्संगता कवि से भी अधिक एक दार्शनिक की नहीं है?

कुमारावस्था से लेकर प्रौढ़ वय के अन्तिम दिनों तक निरन्तर सुबह-शाम रंगमंच में डूबे रहनेवाला यह व्यक्ति शेक्सपीयर क्या जीवनमात्र को–और अपने स्वयं के जीवन को भी–रंगमंच की क्षणिक लीला से अधिक महत्व देता था?...नैतिकता के हर मानवी अहसास से विच्छिन्न मैकबेथ जब लेडी मैकबेथ के अंत का समाचार पाकर मृत्यु की निदारुण अन्तिमता के समक्ष स्वगत चीत्कार कर उठता है; तब क्या एकाएक नहीं लग उठता कि सृष्टि, जीवन और मानव-नियति पर शेक्सपीयर का यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ता बोध, अपना निर्णय ही बोल उठा "आउट, आउट ब्रीफ़ कैन्डिल ! फ़ इज़ बट ए वाकिंग शैडो; ए पुअर र ! दैट स्ट्रट्स एण्ड फ़्रैट्स हिज़ र अपान द स्टेज, एण्ड दैन इज़ नो मोर।"

तब क्या यह सोचने को मन नहीं ता कि राग-विराग, आसक्ति-अनासक्ति छोरों के बीच झूलते हुए इस व्यक्ति, कलाकार ने भी जीवन और सृष्टि वही विज़न देखा था जिसको हमारे हरि ने सातवीं शताब्दी में श्लोक किया था?

●

नहीं! भर्तृहरि का विज़न वैसा होते भी वही नहीं है। वह अपेक्षाकृत ल है। वह एक अनुभव-परिपक्व, ु अन्ततः सरलमना, सहजश्रद्धालु तिक व्यक्ति का भावोद्गार है। र भर्तृहरि उतना देख पाते, उतनी देख पाते, चेतना के उन कगारों से क चुके होते तो उनका वैराग्य इतना न्दमूल, इतना सहज-आश्वस्त होता— में सन्देह है। वे मुमुक्षु थे। मोक्ष के न्द को प्रतिपादन करनेवाले एक न जीवन-दर्शन के वे अनुयायी थे।

शेक्सपीयर के पास परलोक का वैसा स आश्वासन नहीं था। शेक्सपीयर लौकिकता बहुत अधिक मानवीय, बहुत अधिक सम्पृक्त है। सम्पूर्ण मानवीयता, सम्पूर्ण मानव-बोध किसी एक जीवन-दृष्टि से नहीं बँध सकता।

सत्य के उस विराट्-दर्शन को कोई समाधान सन्तोष नहीं दे सकता, कोई सान्त्वना नहीं छू सकती। रचना शेक्सपीयर के लिए व्यक्तिगत मोक्ष का साधन नहीं है। शेक्सपीयर मुमुक्षु नहीं है। वह भोक्ता, अभिनेता, दर्शक है। द्रष्टा है। व्यक्तिगत मोक्ष का प्रश्न उसके निकट अप्रस्तुत है।......

क्या शेक्सपीयर कोई दार्शनिक दृष्टि दे सका है? निस्सन्देह अनेक लोगों ने उसके 'दार्शनिक' होने में विश्वास किया है। आज भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है। इस 'शेक्सपीरियन दर्शन' को नाटकों से निचोड़ कर सूत्रबद्ध व्यवस्था भी विद्वानों द्वारा प्रदान की गयी है। कुछ पुस्तकें इसी विषय पर सहज सुलभ हैं।

हाँ—शेक्सपीयर दार्शनिक दृष्टि देता है। पर उस अर्थ में नहीं, जिस अर्थ में कालिदास या प्रसाद, या रवीन्द्रनाथ,— मिल्टन तक, एक खास दार्शनिक भाव बोध प्रस्तुत करते प्रतीत होते हैं। शेक्सपीयर का दर्शन एक नहीं है। 'अनेक' और अस्थिर है। दृष्टियां वहाँ उतनी ही विविध हैं, जितनी कि परिस्थितियाँ और पात्र। हर विशिष्ट चरित्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर परिस्थिति-विशेष शेक्सपीयर में अपना विशिष्ट दर्शन प्राप्त कर लेते हैं। यही शेक्सपीयर की दार्शनिकता है। शेक्सपीयर की प्रज्ञा वस्तु से अलग और स्वतंत्र अमूर्त धारणाओं का आविष्कार नहीं करती। वह धरती और आकाश में एक साथ विचरण करती है। उसके लिए किंग् लियर का ट्रैजिक दर्शन भी उतना ही सार्थक और 'सत्य' है, जितना कि एक अतिसामान्य विदूषक का परिहास।

शेक्सपीयर का विदूषक (Fool) संस्कृत नाटकों के विदूषक की तरह एक जड़ हास्य का पुतला भर नहीं होता। वह एक प्रकार का लोकदार्शनिक-सा है। ऊपर से ऊटपटांग लगनेवाली उसकी हास्योक्तियाँ हमेशा किसी न किसी गम्भीर और स्वतन्त्र अनुभव-सत्य का उद्घाटन करती हैं। उनमें सर्वेण्टीज़ के सांकोपांजा की तरह सहज ग्रामीण विवेक और नार्मल यथार्थ का सत्य प्रकाशित होता है।

शेक्सपीयर की कला किसी एक जीवन-दर्शन से अनुशासित या प्रभावित नहीं है। असामान्य और अत्यन्त सामान्य दिव्य और गर्हित सभी विरोधी दशाओं के प्रति वह समान निष्ठा के साथ समर्पित है। उसे पढ़ते हुए लगता है वह जिस किसी व्यक्ति या वस्तु या स्थिति का चित्रण करने बैठता था, वह व्यक्ति, वस्तु और स्थिति वह स्वयं हो जाता था। जैसे वह व्यक्ति नहीं था, एक सच्चा दर्पण भर था, जिसमें हर चीज अपनी यथातथ तद्वत्ता में प्रतिच्छायित हो जाती थी—तत्काल, उसी क्षण, सोच-विचार की लम्बी प्रक्रिया से किसी स्थिति या चरित्र को देखने और उसे चित्रित करने में, जो एक अनिवार्य कलागत अन्तराल आता है, उसका शेक्सपीयर में जैसे आभास ही नहीं मिलता। जैसे वह व्यक्ति नहीं था, एक सूक्ष्म सर्वव्यापक माध्यम था—ईथर का—जो कहीं भी अप्रतिहत, अनवरुद्ध आ-जा सकता था। कहीं भी पैठ सकता था। हर मन से, हर मनोदशा से एकाकार हो सकता था। जैसे वह स्वयं में एक ब्रह्माण्ड था, जिसमें सब कुछ समा सकता था।

दार्शनिक वह नहीं था। वह मनुष्य में देवत्व का साक्षात् कर सकता था। वह एक राक्षस के अन्दर भी मनुष्यता के कण देखने और दिखा सकने में समर्थ था। उसने मनुष्य की संभावनाओं को उनकी पराकाष्ठा में मूर्त कर दिया था। उसने गुलाब की पंखुड़ियों से ओफेलिया की रचना की और उसके तुरन्त बाद रीगन और गोनरिल जैसी पितृघातिनी पिशाचिनियों की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ती की निर्मम अनैतिक शक्ति का म साक्षात्कार 'लेडी मैकबेथ' में किया। ने पाप और असत्य के अतल में ना और इयागो जैसे अकारणद्रोही पिशाच की सृष्टि की। मगर यह क्यों है, किसलिए है ?

इसका कोई समाधान या संकेत शेक्स-र नहीं देता। हम पूछना चाहते हैं वार ऐसा क्यों है? क्या कारण है औथेलो का औदार्य और डैस्डेमोना निर्दोष उज्ज्वल सरलता और कैसियो निर्मल विश्वास सब एक इयागो अकेली कुटिलता के सामने व्यर्थ द्ध होते हैं? ओ कवि ! बोलो यह ना विधान है? क्या सच्चाई और च्छाई सचमुच इतनी निष्प्रभ, इतनी हाय चीजें हैं ?

ओ कवि ! अनुभव के किस अतलांत झांककर तुमने इस रौरव की रचना ? इस निरर्थक यातना के मूल में है? क्यों है यह व्यक्ति और परि-का, इच्छा और क्रिया का, सम्भावना र परिपूर्ति का यह सनातन वैषम्य ? यह दुनियाँ होरेशियो के ही लिए ! हैमलेट के लिए नहीं? तुम्हारा वह क आखिर तक एक सचमुच का गाह बनकर रह गया है, जिसमें दुरात्मा लॉडियस और पापिष्ठा रानी ही नहीं, पराध पोलोनियस और ले आर्टस भी अकालमृत्यु के शिकार हो जाते हैं; अभागा हैमलेट ही नहीं, उसके दो सदा-शय मित्र भी परिस्थिति की चपेट में आकर उसी निद्रारूप नियत की भेंट चढ़ते हैं—वह भी अपने प्यारे युवराज के हाथों !

हम पूछते हैं, बोलो कवि ! किंग लियर इतना उदाराशय था, फिर भी उसे तुमने आमानुषिक यातनाओं से गुज़ारा है। क्या उसके स्वभाव का ज़रा सा दौर्बल्य, ज़रा चिड़चिड़ापन इतनी नारकीय दुर्गति का एक मात्र कारण हो सकता है ? क्या उसकी यातना अकारण और अर्थहीन नहीं है ? तो क्या यही तुम्हारी दृष्टि में ईश्वरीय न्याय है ? क्या तुम ईश्वर पर विश्वास करते थे ? क्या तुमने पाप-पुण्य, सत्-असत्, जीवन-मृत्यु के अन्तिम प्रश्नों का उत्तर अपनी चेतना के अन्दर खोज लिया था ? या तुम चिरन्तन ऊहापोहों के एक सूक्ष्म वेदन-तंत्र मात्र होकर रह गये थे ? मानवीय ट्रेज़ेडी के मानव-भाग्य की चरम बेबसी के असहाय मूक दृष्टा भर थे ? क्या तुम्हारे पास इस पीड़ित मानवता के लिए कोई आश्वासन, कोई सन्देश नहीं था। क्या मिल्टन, दाँते और दॉस्ताएवस्की की तरह तुम मनुष्य की आत्मा के उद्धार का प्रश्न हल कर पाये ? हल करने की परवाह की ?

ओ कवि ! तुमने अनास्था का रौरव भी भुगता होगा। तुम्हारा कृतित्व अचूक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमाण देता है कि तुमने 'ईविल' के अन्दर जितनी दूर तक झाँका था, असत् और अन्धकार का जितना गहरा अनुभव किया था, उतना तुमसे पहले और बाद का शायद ही कोई कलाकार कर पाया हो। हम समझ सकते हैं कि चेतना के किस भयानक संकट के भीतर से 'किंग लियर' और 'हैमलेट' का प्रादुर्भाव हुआ होगा। तब वह कौन शक्ति थी, जो तुम्हें उस अंधकार से, उन अतलान्त गह्वरों से बाहर निकालकर तुम्हें एक बार फिर तुम्हारा संतुलन वापस दे गयी। वह कौन सी आस्था थी, जिसने तुम्हें उस नरक से, उस हाहाकार से समूचा उबारकर, उठाकर तुम्हें टैम्पेस्ट के अपार्थिव स्वप्न-संसार की सर्जना को प्रेरित किया। किसने तुम्हें उस दिव्य सौन्दर्य, उस निर्विकल्प शान्ति का साक्षात्कार कराया? बोलो ओ कवि! वह किसकी विभूति थी कि तुम चरम आह्लाद और चरम विषाद, चरम नैतिक सौंदर्य और चरम दौरात्म्य को इस संसार के सिरजनहार की तरह निःस्पृह लीलाभाव से अपनी सृष्टि में उतार सके? क्या तुम अपने इस अपौरुषेय लाघव का रहस्य जानते थे?

...तुमने हैमलेट के एक दृश्य में अभिनेताओं को जो सीख हैमलेट द्वारा दिलवायी है, तुम्हारी एक-एक पंक्ति उसका साक्ष्य देती है। ओ कवि! ओ महान्! यह अतिमानवी संतुलन, यह चरम आवेग और चरम संयम का एकत्र-निर्वाह तुम किस तरह कर पाये? तुम्हारी भयानक से भयानक ट्रेजड़ी का असर भी हमारे मन को उस तरह कुंठित और विषण्ण नहीं करता, जिस तरह एक आधुनिक अस्तित्ववादी उपन्यास किये बिना नहीं रहता। यह संतुलन, यह विराट् नैतिक-बोध तुमने कहाँ पाया? निस्संदेह तुम विराट् से विच्छिन्न नहीं थे। तुममें हार्डी और दॉस्ताएवस्की से कम करुणा नहीं थी। तुम शाइलॉक और इयागो जैसे अधम प्राणियों को भी संवेदना दे सके हो। पर तुम उन दोनों महान कलाकारों की अपेक्षा अधिक 'पुरुष' थे। आनन्द की सत्ता तुम्हारे लिए दुःख की सत्ता से कम 'सच्ची' नहीं थी। अगर तुम्हारा दर्शन सचमुच स्पष्ट अभिव्यक्त हो सका होता, तो क्या वह दॉस्ताएवस्की के 'आत्मपीड़न' से अधिक स्वस्थ, अधिक सुन्दर न होता? ओ कवि! अगर तुम आज हमारे बीच होते, तो समसामयिक साहित्य को पढ़कर तुम्हें कैसा लगता? क्या तुम अस्तित्ववाद को सह सकते—उसे स्वीकृति दे पाते?

ओ मानवात्मा के विराट रंगमंच के सूत्रधार! ओ सम्राट, मनुष्य के अश्रुहास के उदात्त चितेरे! बोलो क्या आज भी अगर तुम हमारे बीच होते, तो जादूगर प्रोस्पेरो की तरह निर्लिप्त और संतुलित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...रह पाते ! बोलो जादूगर ! बोलो...
...तो बोलो......

नहीं ! वह कुछ भी नहीं बोलेगा। ...तमाम प्रश्नों के उतर में उसके पास ...ल एक मौन है। केवल एक अटूट, ...स्यमय मौन.........

कई पीढ़ियाँ गुजर गयीं......इसी तरह ...-व्यथित, जिज्ञासाकुल.........उसकी ...हिमा से आतंकित......उसके मौन से ...मुग्ध...। शेक्सपीयर का चेहरा उसी ...ह निर्विकार, निरुद्विग्न मुस्कुराता रहा। ...ढ़ियाँ प्रश्न आँकती रहीं...गुजरती रहीं। ...सपीयर मुस्कराता रहा...। अपने उस ...अभेद्य मौन को धारण किये वह ...री व्याकुलता पर मुस्कराता रहा...

"Others abide our questions;
...u art free. We ask and ask;
...ou smilest and art still
...ttopping knowledge."

शेक्सपीयर का चेहरा...! नहीं। हम ...में अपने प्रश्नों के समाधान नहीं ...सकते। वह दार्शनिक का चेहरा नहीं ......वह प्रॉफेट का चेहरा नहीं है। ...किसी संत या धर्म-प्रवर्तक का चेहरा ...नहीं है।......वहाँ बुद्ध की तरह ...पारमिता करुणा का आश्वासन नहीं ......वह मुस्कान हमारे जाने-पहचाने ...रों की मुस्कान नहीं है। वह कठोरता मिल्टन की असहिष्णु कठोरता नहीं है। तब क्या है। कोई नहीं जानता। 'द रेस्ट इज साइलेन्स'—उसने कहा था, 'हैमलेट' में।

दार्शनिक वह नहीं था। पर बिना दार्शनिकता के ही उसकी सृष्टि विराट दर्शन की भाँति हमें आतंकित-अभिभूत कर देती है। हमारी दशा उसके 'फर्डीनेण्ड', उसकी 'मिराण्डा' की तरह हो जाती है—विस्मित-चकित, व्याकुल।...

पर वह प्रॉस्पेरो,—नहीं, वह अपना जादू समेटता हुआ शेक्सपीयर खुद, अपनी लीला समाप्त करता हुआ सूत्रधार स्वयं, हमारे विस्मय-वैकल्य पर ममता से मुस्करा देता है। वह हमारे कन्धे पर हाथ रख देता है और कहता है, "अरे, इसमें इस तरह घबराने की बात क्या है? सुनो—यह सब एक भ्रम था, जिसे मैंने अपनी माया से उत्पन्न करके तुम्हारा मनोविनोद किया। और अब मैंने जादू समेट लिया—बस इतनी सी बात है। सुनो भाई ! वह अप्सराओं का नृत्य, जो मैंने तुम्हें दिखाया, वह तो माया थी ही; किन्तु ये तमाम आलीशान, मेघ-चुम्बी अट्टालिकाएँ राजा-महाराजों की, ये बड़े-बड़े नगर, ये हरे-भरे गाँव, यह तुम्हारी सारी पृथ्वी भी मेरे इस इन्द्रजाल की तरह क्षणिक और अवास्तविक है। स्वप्नों की मिट्टी से हमारा

[शेष पृष्ठ ४० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

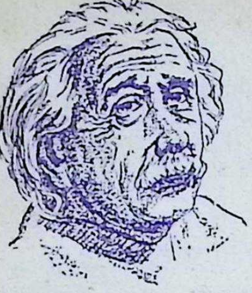

अलबर्ट आइंस्टीन

संसार को जैसा मैंने

मानव जीवन का अर्थ क्या है ? जो भी सचेतन अथवा आवयविक जीवन हम जिये जा रहे हैं, उसका अभिप्राय क्या है ? इस प्रश्न के उत्तर में हमें धर्म पर विचार करना ही पड़ेगा। फिर इस प्रश्न का और मतलब ही क्या हो सकता है ? मेरा उत्तर है कि अपने और दूसरों के जीवन को निरर्थक अथवा निरुद्देश्य समझनेवाला व्यक्ति न केवल अभागा है, बल्कि वह जीने योग्य भी नहीं है।

हम मर्त्यों की भी स्थिति असाधारण है। हममें से प्रत्येक, इस धरती पर जैसे अल्प प्रवास के लिए आया है, किसलिए आया है, वह स्वयं भी नहीं जानता, यद्यपि वह सोचता है कि उसे इस सम्बन्ध में अवश्य ही कुछ न कुछ महसूस होता है। नित्य के जीवन को ध्यान में रखते हुए, बिना गहराई में सोचे भी, हम सभी यह जानते हैं कि हम स्वजनों के लिए जीते हैं, जिन्हें हम प्रसन्न और सुखी देखना चाहते हैं तथा जिनकी प्रसन्नता और सुख में हम स्वयं अपना सुख और आनन्द मानते हैं। इसके अलावा, हमारा जीवन उन दूसरे लोगों से भी जुड़ा है, जिनके प्रति हमारे मन में सहानुभूति है और जिनके जीवन के सुख-दुःख में व्यक्तिगत रूप से हमारी गहरी दिलचस्पी है।

प्रायः नित्य ही, मैं सैकड़ों बार स्वयं से कहा करता हूँ कि जो भी मेरा आन्तरिक अथवा बाह्य जीवन है, वह निर्भर है उन व्यक्तियों द्वारा किये गये परिश्रम और अध्यवसाय पर, जिनमें से अनेक जीवित हैं और अनेक काल के गाल में समा गये हैं। अतः मैं ऐसा मानता हूँ कि मैं, कम से कम, आगे आनेवाले लोगों को उतना तो दे पाऊँ, जितना मैंने अपने पूर्ववर्ती अथवा समकालीन जनों से पाया है और अब भी पाता जा रहा हूँ।

मैं जीवन पर विचार करने को बाध्य होता हूँ और यह भावना मेरे मन पर एक बोझ की तरह होती है कि मैंने अपने साथी एवं सहयोगियों के अगाध परिश्रम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीसवीं शती विश्व के ज्योतिर्धरों में थे, अलबर्ट आइन्स्टीन! उनके व्यक्तित्व के भीतर भौतिक सत्ता ने अपनी सीमाओं को अतिक्रान्त करके, निःसीम के ज्योतिर्मय साम्राज्य में प्रवेश किया था। आइये, उनकी अगम-दर्शी आँखों से हम भी संसार को देखें।

जैस मैंने देखा है

र एकाधिकार-सा कर रक्खा हैं !

मैं वर्ग-भेद को एक अन्याय मानता हूँ र यह समझता हूँ कि उसका आधार छ एक जबर्दस्ती है ! मेरा यह भी श्वास है कि शारीरिक एवं मानसिक गी के साथ ज़िन्दा रहना सभी के ए उत्तम है।

दार्शनिक अर्थों में, जहाँ तक मानवीय ातन्त्र्य का सम्बन्ध है, अवश्य ही ा विश्वास नहीं है । प्रत्येक व्यक्ति, ल वाह्य परिस्थितियों के दबाव में ही र्य नहीं करता, बल्कि उसकी भीतरी वश्यकताओं का भी हाथ इसमें होता है। ेनहार का कथन है कि—"मनुष्य अपनी च्छा और संकल्प के अनुसार तो कार्य कर कता है, किन्तु, स्वयं इच्छा अथवा संकल्प र उसका कोई वश नहीं है।" यह बात रे मन पर मेरी जवानी के दिनों से ही मी है। तब से अब तक मुझे बराबर इस त से सान्त्वना मिलती आयी है और वन के संघर्षों तथा कठिनाइयों में धैर्य रहा है—न सिर्फ मुझे, बल्कि दूसरों को भी।

इस धारणा के कारण यह हुआ कि जिन बातों के लिए हम खुद को बुरी तरह ज़िम्मेदार ठहराते रहे, उनके लिए अपने को कम दोषी समझने लगे और दूसरों के दोष देखने की जो प्रवृत्ति रही, वह भी कम हो चली । इसके साथ ही जिन्दगी को कुछ इस ढंग से समझने की आदत हुई—कि बहुत सी बातों पर महज़ हँसी आकर रह जानी चाहिए।

मोटे तौर पर, मुझे हमेशा ही यह बेकार लगा है कि अपने अथवा दूसरों के जीवन और कृतित्व के अर्थ के सम्बन्ध में पूछ-ताछ की जाय ! फिर भी, प्रत्येक व्यक्ति के अपने कुछ आदर्श हुआ करते हैं, जो उसके जीवन के कार्यों और निर्णयों की दिशा निर्धारित करते हैं । इन अर्थों में, सुख और आराम को, मैंने अपने आप में कोई लक्ष्य नहीं माना है, बल्कि यह समझता रहा हूँ कि मात्र सुख और आराम केवल घृणित पशुओं का ही अभीष्ट हो सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन आदर्शों ने मुझे पथ पर प्रकाश दिया और समय-समय पर, प्रसन्नतापूर्वक कष्टों को झेलने की प्रेरणा दी, वे हैं— सत्यम्, शिवम्, और सुन्दरम्। यदि अपने जैसे लोगों के प्रति सौहार्द एवं सहयोग का भाव न रहा होता, उद्देश्यों पर डटे रहने की निष्ठा न रही होती और कला एवं विज्ञान-सम्बन्धी अनुसन्धान के क्षेत्र में स्थायी उपलब्धियों के प्रयत्न न किये गये होते, तो मेरे लिए जीवन मात्र शून्य था! सम्पत्ति, भौतिक उन्नति, विलास एवं साधारण मानवजीवन में प्रिय वस्तुओं के प्रति, सर्वदा, एक घृणा का भाव ही मेरे मन में रहा है।

एक ओर, मुझमें, सामाजिक न्याय एवं सामाजिक उत्तरदायित्व की उत्कट चेतना रही है और दूसरी ओर, मैं अन्य व्यक्तियों और जातियों के सम्पर्क से मुक्त रहना चाहता था, इन दो बातों का परस्पर कोई मेल है ही नहीं। मेरा अपना रास्ता और अपनी दुनिया रही है। अपने देश, गाँव-घर, इष्ट-मित्र, यहाँ तक कि परिवार का जहाँ तक सम्बन्ध है, मैं सर्वथा अलग रहा हूँ और दिनोंदिन अधिकाधिक एकान्तप्रिय होता गया हूँ।

समाज के अपने लोगों के प्रति सहानुभूति रखने अथवा पारस्परिक मेल-मिलाप की सीमित संभावनाएँ हैं, यह सभी को मालूम है और किसी को इस बात का अफ़सोस भी नहीं है। फिर भी जो व्यक्ति लोगों से दूर है, वह न ज़िन्दादिल रह पाता है और न अपना जी हलका कर पाता है। यह भी होता है कि उसे किसी के मत और राय से कुछ लेना-देना नहीं रहता। लोगों की आदतों और फैसलों का उस पर कुछ असर नहीं होता और सच तो यह है कि लोगों की राय और विचार का कोई ठिकाना नहीं। यह एक दुर्बल आधार होता है।

जहाँ तक मेरे राजनीतिक आदर्शों का सम्बन्ध है, मेरा विश्वास जनतन्त्र में है। प्रत्येक व्यक्ति का, व्यक्ति की भाँति सम्मान हो और कोई एक व्यक्ति मूर्ति की तरह पूजा नहीं जाने लगे! भाग्य का यह एक व्यंग्य ही है कि मैं स्वयं अपने लोगों-द्वारा इतना यश और सम्मान पाता रहा हूँ। जब कि गुण-अवगुण मेरा कुछ भी नहीं। शायद, इसका कारण यह रहा है कि मैंने एक-दो सिद्धान्तों के लिए अनवरत संघर्ष किया और उनकी स्थापना करने में सफल हो सका, जैसी कि मेरी उत्कट इच्छा रही है। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि अगर किसी पेचीदे सिद्धान्त के बारे में सफलता प्राप्त करनी हो तो एक ही व्यक्ति उसपर सोचे, क़दम उठाये और पूरी ज़िम्मेदारी लेकर चले। किन्तु, जनता पर वह थोपा नहीं जाय और लोगों को स्वतन्त्रता हो कि वे अपना मार्गदर्शक चुन लें। मेरी राय में, तानाशाही लेकर चलनेवाली कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ी प्रणाली नष्ट होकर रहती है, क्योंकि नैतिक दृष्टि से तुच्छ व्यक्ति ही बल-प्रयोग की ओर आकृष्ट होते हैं और मेरा विश्वास है कि ज़ोर-ज़बर्दस्ती के साथ कुछ भी हो जाय, किन्तु, अन्ततोगत्वा वह सब दुष्ट और निरंकुश व्यक्तियों के हाथ में चला जाता है।

इसीलिए मैं उन पद्धतियों का कट्टर विरोधी रहा हूँ, जो आज (१९३५) रूस और इटली में प्रचलित हैं। आज के यूरोपीय जनतन्त्र को बदनाम करने वाली जो बातें हैं, उनके लिए जनतान्त्रिक विचारों को दोष नहीं दिया जा सकता, दोषी हैं वे प्रशासक प्रधान जिनकी सरकार को स्थायित्व नहीं मिलता और निर्वाचन-प्रणाली ऐसी है कि योग्य व्यक्तित्वों के चुने जाने में कठिनाइयाँ हैं। मेरा ख्याल है कि इस सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्र अमरीका ने सही मार्ग अपनाया है। उनका एक उत्तरदायी राष्ट्रपति होता है, जिसके अधिकाधिक अधिकार होते हैं और यह काफी लम्बे अर्से के लिए चुना जाता है, तभी वह बहुत ज़िम्मेदार भी होता है। अपनी राजनीतिक प्रणालियों में, जिस बात का अधिक मूल्य मैं समझता हूँ, वह है वैयक्तिक आवश्यकताओं और बीमारियों के लिए दी जानेवाली सहायता।

मानव जीवन में जो मुझे सब से अधिक चमत्कृत करनेवाली बात दिखायी देती है, वह मनुष्य-निर्मित शासन-व्यवस्था नहीं है, बल्कि वह है रचनात्मक प्रतिभा सम्पन्न चैतन्य-बुद्धि व्यक्ति का व्यक्तित्व। वही जीवन में पावन और श्रेष्ठ को जन्म देता है, जब कि जन-समूह विचार शक्ति-विहीन और अनुभूति-रहित हुआ करता है।

अब मैं सामूहिक प्रकृति के निकृष्टतम परिणाम के सम्बन्ध में कुछ कहूँगा। वह है सैनिक प्रशासन-पद्धति, जिससे मुझे बहुत घृणा है। मेरे भीतर घृणा जाग्रत करने के लिए यह एक पर्याप्त कारण है कि कोई व्यक्ति एक मज़बूत गिरोह बनाकर मनुष्यों को बलपूर्वक हाँकने में आनन्द का अनुभव करे। किसी ग़लती से ही उसे दिमाग़ मिल गया है, उसे तो केवल एक मज़बूत रीढ़ की ज़रूरत थी। सभ्यता का यह ज़बर्दस्त रोग हर संभव उपाय और शीघ्रता से नष्ट किया जाना चाहिए। आज्ञाओं-द्वारा प्रभुत्व-स्थापन, निष्प्रयोजन हिंसा, भयानक कृत्य, और वह सब देशप्रेम के नाम पर? मुझे घोर घृणा है इस बात से। युद्ध को मैं निकृष्टतम और विकट रूप से घृणास्पद समझता हूँ। इस बीभत्स व्यापार में भाग लेने की अपेक्षा मैं पसन्द करूँगा कि मेरे टुकड़े-टुकड़े कर दिये जायँ।

मनुष्य जाति की सदाशयता में मेरा अटूट विश्वास है और इसीलिए मैं ऐसा मानता हूँ कि यदि व्यापारिक और राज-नीतिक हितों के कारण राष्ट्रों का नैतिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पतन न हुआ होता और उन्हें शिक्षण-और प्रचार-द्वारा प्रोत्साहन न मिला होता तो, यह बुराई बहुत पहले दूर हो गयी होती।

जिस सुन्दरतम वस्तु का अनुभव हमें हो सकता है, वह प्रायः रहस्यमयी ही होती है। सच्ची कला और सच्चे विज्ञान के हिंडोले पर यह आधारभूत भाव झूलता है। जो इसे नहीं जानता, इसे देखकर विस्मित-विमुग्ध नहीं होता, वह मुर्दा है और उस मोमबत्ती की तरह है, जिसे बुझा दिया गया है। वह रहस्यानुभव था, यद्यपि उसमें भय का अंश भी रहा, जिससे धर्म के बीज अंकुरित हुए।

उस सत्ता की स्थिति का ज्ञान, जिसकी सीमा में हमारा प्रवेश संभव नहीं है; उन गहनतम आधारभूत सिद्धान्तों की अभिव्यक्ति का ज्ञान, जो अस्तित्व रखते हैं, और उस प्रोज्ज्वल सौन्दर्य-प्रकाश का ज्ञान, जो विश्व में अन्तर्निहित है, हमारी पहुँच के भीतर इतना ही है कि हमें उसका आभास मात्र है। जिसकी यह धारणा और भावना है, वास्तव में उसी की प्रवृत्ति धर्म की ओर समझनी चाहिए। इन्हीं अर्थों में मैं स्वयं को एक धार्मिक व्यक्ति समझता हूँ।

वह ईश्वर मेरी कल्पना में नहीं आ सकता जो प्राणियों को दण्डित अथवा पुरस्कृत करता है, अथवा जिसमें वैसी ही इच्छा और संकल्प वर्तमान है, जो हम मनुष्यों में। मैं सोच भी नहीं सकता कि एक मनुष्य मरने के बाद फिर उसी तरह आ जाय और न मैं चाहता हूँ कि ऐसा हो। यह सब दुर्बल आत्माओं का भय, संशय अथवा निरर्थक अहंकार है। जीवन की चिरन्तनता का रहस्य ही मेरे लिए पर्याप्त है, सत्य के दिव्य स्वरूप के संकेत मेरे लिए अहं हैं। अकेले ही यदि मैं उस रहस्य और सत्य के किसी अंग का साक्षात्कार करने की क्षमता पा सका तो मेरे लिए यही उत्तम है, यह और बात है कि असीम प्रकृति में भासमान उस चरम सत्ता के किसी अत्यन्त छोटे अंश के ही दर्शन मुझे हो सकें।

लेखकों से आवश्यक निवेदन :

- इधर कविताएँ 'भारती' कार्यालय में इतनी अधिक जमा हो गयी हैं, कि विरल ही कोई नयी कविता स्वीकारना सम्भव होगा। अच्छी होने पर भी कविताएँ अस्वीकृत हो सकती हैं; कवि-मित्र इसे हमारी विवशता जान, क्षमा करेंगे।
- भविष्य में 'भारती' में आनेवाले लेख 'भारती' के अधिक से अधिक ५–६ पृष्ठों से ज्यादा विस्तृत नहीं होने चाहिए। अधिक लम्बे लेख, स्वीकारने में हम असमर्थ होंगे।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनिल कुमार

●

हरिद्वार में गंगा-तट पर

ंगा-तट पर सतत खुली हैं जमींदारियाँ
रम-करम की,
ड़ों के दल जुटे हुए हैं
ग-चील से,
र आगन्तुक जैसे शव हो।
रा हुआ मन,
वेदन खोया शरीर जड़,
ंग-माँग कर पली पीढ़ियाँ,
ीवन भिक्षा-पात्र बन गया!
ाचक की हैं जमींदारियाँ!!
कितना कल्मष
तित-पावनी गंगा अपने संग बहाती?
कितनी पावनता कगार पर
ाचक की अंजुलि में रखती?
ानी के मुख पर सन्तोष
कीरी की रौनक है लेकिन,
ाचक का मन
ाजे शव पर भिनक रही मक्खी जैसा ही
ृणाजनक है!
ंगा नहीं नदी,
ह माता।
ुबह-शाम हर की पैड़ी पर
स्थि, फूल, दीपक, सिक्कों के हार पहनती।
न के अंगारों पर ममता भरे करों से
घी उलीचती!
हवन-गंध धूमायित होता मन का कोना!

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दी बिडला काटन स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स लिमिटेड, दिल्ली

अत्युत्तम भारतीय रुई से
मीडयम और कोर्स कैटेगरीज में
उच्चकोटि के सूती वस्त्रों

के

निर्माता एवं निर्यातक

धोतियां, साडियां, मारकीन, शर्टिंग, टर्किश तोलिये, फलालेन

और

मनोरम डिजायनों और मोहक रंगों में

छींटें

उनकी विशेषताएं

बम्बई सेलिंग एजेन्ट्स : **मेसर्स घनश्यामदास चूडीवाला,**
२०१, कालवादेवी रोड, बम्बई २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञान और यंत्र
मारे प्रभु नहीं, सेवक हों

•

भौतिक विज्ञान के द्वारा जो सुख-सुविधा, ऐश्वर्य हमें मिला है, उसमें भगवान की अनन्त विभूति ही प्रकट हुई है। पर यह विभूति अपने आप में हमारा साध्य नहीं, यह हमारे आत्म-देवता की सुन्दरतम अभिव्यक्ति का एक स्थूल साधन मात्र है। लेकिन विज्ञान आज हमारी समस्त सत्ता का स्वामी हो उठा है, और हम हो गये हैं उसके पद-दलित दास। इसीसे आज आत्म-देवता की मृत्यु हो गयी है और अस्तित्व-धारण कठिन हो उठा है। आवश्यक है कि हम विज्ञान के स्वामी होकर रहें, दास नहीं, तभी उसका ऐश्वर्य अमृत का साधक हो सकेगा।

•

रा मन यह स्वीकार करना चाहता कि टेक्नॉलॉजी की ति ही सच्ची प्रगति और भौतिक सफलता सभ्यता का माप-दण्ड । यदि पूर्वीय देशों के वासी मशीनों और नीक के प्रति आक-त हों और पश्चिमी ट्रों की तरह उनका योग विशाल औद्यो-क संस्थानों या सैनिक स्थाओं की स्थापना में ने लगें, तो वे शक्ति की राजनीति में उलझ कर मृत्यु का ख़तरा मोल ले लेंगे।

वैज्ञानिक और टेक्नॉलॉजिकल सभ्यता में अच्छे अवसर और अच्छी संभावनाएँ हैं और साथ ही बड़े-बड़े ख़तरे और प्रलोभन भी हैं। मशीनों का प्रभुत्व स्थापित हो गया, तो हमारी सम्पूर्ण प्रगति व्यर्थ हो जायगी। हमारे सामने सार्वभौमिक समस्या है। पूर्व और पश्चिम दोनों के सामने एक ही ख़तरा है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों का भविष्य समान है। विज्ञान और टेक्नॉलॉजी न अच्छे हैं न बुरे। उनके निषेध की आवश्यकता नहीं है, वरन् उन्हें नियन्त्रित रखने और उचित स्थान देने की ज़रूरत है। उनका स्वामित्व ही ख़तरनाक है।

उस सुदूर धुंधले अतीत से लेकर, जब मानव ने पहला पत्थर का औज़ार बनाया था, सारे युगों को पार करते हुए आज तक–जब मानव ने संसार पर रेडियो का जाल बिछा दिया है और आसमान से बम गिराकर दुनिया भर के नगरों का विनाश करने की योजना बना डाली हैं–मानव जीवन की यात्रा भौतिक विजय और यांत्रिक उपलब्धियों की कहानी है। कलम, कूंची, पहिया, फावड़ा, हल, नाव, 'लीवर,' घिर्री, इंजिन, अन्तर्ज़्वलन इंजिन क्रमिक विकास के अंग हैं। सैद्धान्तिक रूप में नाभिकीय भंजन की क्रिया अग्नि के अविष्कार से भिन्न नहीं है। मशीन पदार्थ पर मस्तिष्क की विजय की प्रतीक है। वह स्वयं अपनी लक्ष्य नहीं है। वह एक साधन है, जिसका आविष्कार मानव ने अपने आदर्शों को प्रत्यक्ष रूप देने के लिए किया था। हमारे आदर्श ही आदर्श न हों तो इसकी ज़िम्मेवारी हमारी है, मशीनों की नहीं। हमारे आदर्श सचमुच ही आदर्श हों, तो मशीनों का उपयोग अन्याय के निवारण, मानवता की स्थिति सुधारने और आत्मा की पूर्णता प्राप्त करने में सहायक हो सकता है। मोटरकार में ऐसी कोई बात नहीं है कि हम उसे तेजी से चलाकर पैदल आदमी को मार डालें। विमान में ऐसी कोई बात नहीं है, जो हमें अपने सहजीवियों पर बम गिराने को बाध्य कर दे। मशीनों में स्वयं कोई दोष नहीं। उनमें दोष प्रमाणित हो जाने का कारण यही है कि हम स्वयं दुष्ट हैं।

कुछ लोगों का कथन है कि दैनिक जीवन में मशीनों के अधिकाधिक प्रयोग से ही हमारी परिस्थिक खतरे से पूर्ण हो गयी है। उनका यह कथन वास्तव में आधुनिक सभ्यता की अत्यधिक तेज़ रफ़्तार, जीने की प्रतिस्पर्धा से सम्बद्ध चिन्ता, जीवन की अनिश्चितता, अनेक कामगारों के जीवन की शुष्कता और एक रसता––जिन्हें घंटों तक एक ही प्रकार का काम मशीनों की भाँति करना पड़ता है—हमारे मनोरंजनों की उत्तेजक प्रकृति, और बेहद तेज़ रफ़्तार व कान के पर्दे फाड़नेवाली आवाज़ों की तरफ संकेत करता है।

श्रम की बचत करनेवाली पुरानी तरकीबों का उपभोग मानव की शक्ति के भीतर ही किया जाता था। मानवीय नियंत्रण से मुक्त हो जाने के बाद टेक्नॉलॉजी अपना अर्थ खो बैठती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र साध्य पर साधन की विजय हो जाती
औद्योगिक क्रान्ति से पहले, लोग
तों को नियन्त्रित करके वस्तुएँ तैयार
ते थे। अपने काम को वे धर्म-तुल्य
ते थे। ऐसे काम के बारे में हीगेल
कथन है: "नृत्य के अंग-चालन से
र स्थापत्यकला की विस्मयकारी
काय कृतियों तक...ये सारे काम
की श्रेणी में आते हैं...क्रिया स्वयं
हैं; इस उपलब्धि में भेंट...जो केवल
वाह्य वस्तु न रहकर आन्तरिक वस्तु
जाती है...एक आध्यात्मिक क्रिया-
ता है और यह प्रयास, आत्मचेतनता
नकार कर अन्तर्वासी और कल्पना-
ी उद्देश्य की पूर्ति करता है, तथा
जगत के लिए प्रस्तुत करता है।"

टेक्नॉलॉजी की सभ्यता में, जहाँ हम
ल के एक अंश पर ही ध्यान देते हैं,
रे काम को आत्मा का संस्पर्श नहीं
ता। उत्पादन की रफ़्तार बढ़ाने की
में, कारखानों में काम को इतने
-छोटे अंशों में बाँट दिया जाता है
कुशलता अथवा बुद्धि की आवश्यकता
नहीं पड़ती। इस पुनरावृत्तिवाले काम से
ड़ों कामगार अब शुष्क और एकरस
गये हैं। इसके द्वारा वे अपनी व्यक्तिगत
ति खो देते हैं और चेतना की सतह
जीवित रहते हैं। हम मानव के सर्व-
ठ अंश का प्रकाशन नहीं करते।

उच्चतर मानदण्डों के लिए उत्सुक इस युग में हम सरल और पवित्र जीवन के अनिवार्य मूल्य को नजरन्दाज़ कर रहे हैं। किसी व्यक्ति विशेष का महत्त्व उसकी सम्पत्ति से नहीं, बल्कि जीवन-यापन के ढंग से आँका जाता है। भौतिक आवश्यकताओं और सांसारिक इच्छाओं के सन्दर्भ में भारत ने सन्तोष और आत्मसंयम के मूल्य पर ज़ोर दिया है। इस टेक्नॉलॉजी-सभ्यता में उत्पादक या उपभोक्ता किसी भी हैसियत से खो जाने वाला आदमी व्यक्तित्वहीन हो जाता है, अपनी जड़ें खो बैठता है, अपने स्वाभाविक सन्दर्भ से अलग जा पहुँचता है, और मानो शून्य व्योम में फेंक दिया जाता है। व्यक्ति के असीम मूल्य मानव के अभिमान, अधिकारों और आत्मा की स्वाधीनता को टेक्नॉलॉजी के युग में संरक्षित रखना आसान काम नहीं है। आस्था के पुनर्जीवन—जिसका अर्थ है मानव की गहराइयों में आत्मा की परिपूर्ति और जिसमें मानव अपने से ऊपर उठकर अपनी सत्ता के स्रोत से जुड़ जाता है—से ही यह संभव है।

दुर्भाग्यवश, विज्ञान और टेक्नॉलॉजी की उपलब्धियों से आकृष्ट होकर हमारे युग के कुछ नेता मनुष्य को एक विशुद्ध यांत्रिक, भौतिक और स्वयंचालित इच्छाओं

[शेष पृष्ठ ३९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

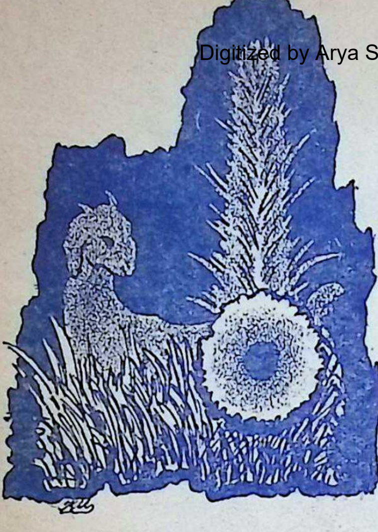

विष्णुचन्द्र शर्मा

सन्धि-पत्र

[१] शिला : स्पष्टीकरण

"पत्थर नहीं हूँ मैं !
शिला की तरह जल कर ताप वहन करती हूँ !
विवश हूँ !

"अपने अस्तित्व की जटिलता का बूंद-बूंद जल
तुम्हे सौंपती हूँ !
रिसती शिला हूँ—बंधु !
रोती हूँ !

"खुशी मेरे हाथों में कभी भी समायी नहीं
मैना सी !
मैंने तुम्हें अक्षत, फूल, चंदन से सजाया नहीं
संज्ञाहीन आँखों से देखा है मैंने तुम्हें
मैना-सा।

"निराधार,
चारों ओर अपनी पराजय के प्रेत मुस्कराते हैं !
भयानक एक खड्ग हूँ – ! प्रत्याहार !
खीझ, बौखलाहट में पली हूँ ! बंधु !
तुम्हें याद करती हूँ !

"गहरे में नदी है
आकाश है चँदोवे सा !
सब से मुझे मोह है
सबने मुझे चाहा है
विवश हूँ—प्रत्याहार !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३ मई १९६४

खुद में जल कर ताप वहन करती हूँ!
मैं सब की पूरक हूँ!

"रिक्तता के मौसम की जननी हूँ!
खाली पड़े सप्तपर्णी को दुलारती हूँ!
विवश मैं तुम्हारी ऋतु हूँ--
प्रत्याहार!
पत्थर नहीं हूँ मैं!
शिला की तरह जल कर ताप वहन करती हूँ।"

[२] प्रत्याहार : धारण

"फलों में रस,
पर्वतों को तोड़ कर अंकुरित जीवन!
यही मैं हूँ!
——जोकि छन कर आ रहा है!
यही तुम हो!
यही है आलोक!
समय का,
अपना!

"तना है जो शीश पर निष्पत्र तरुवर
बंधु है--अपना!
राग-रंजित साँझ सुग्गों और कौओं की
सुहृद है।

"घिरी सागर में अचल चट्टान, ऋतु है!
ठोस जीवन पर शिला! तुम, कुशल लय
संचारिणी हो लहर की,
मेरी!

"रिक्तता मेरी बंधु है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं तुम्हारा,
रिक्त, ऋतु, पति !
फला हूँ--
उजले असंख्य स्वरूप में फूला !

"फले हैं,
उजले कसैले नीम,
पर्वतों के फूल
मेरी रिक्तता में !

"देखते हैं--घेर मुझ को !
नभ,
समुद्र,
असंख्य, संज्ञाशून्य !

"मैं पसारे,
समूचा सुख दुःख खड़ा हूँ !
सुहृद भूतल में बराह !

"यह असंख्य बबूल के ही फूल
युग नद हैं !

"हमीं ने
अनगिनत भूतल,
विवश,
अपना देह मन,
मथ कर निकाला है !

"सुहृद भूतल पर हमीं हैं
शिला, ऋतु, आकाश,
हमीं हैं वाराह !
सुहृद भूतल पर।"

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[विज्ञान और यंत्र हमारे प्रभु नहीं, सेवक हों......पृष्ठ ३५ का शेष]

से निर्मित प्राणी समझते हैं। वे मानव की भौतिक प्रवृत्तियों पर तो ज़ोर देते हैं, किन्तु उसके अन्तस् में उपस्थित उच्चतर पवित्रता को भूल जाते हैं।

अपने भौतिक वातावरण को काबू में रखने की हमारी असीमित क्षमता से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है, स्वयं अपने सहयोगियों के साथ हमारे सम्बन्ध। मानवता की गारंटी विवेक की उपस्थिति नहीं है। मानव बनने के लिए हमें विवेक के अतिरिक्त किसी और वस्तु की आवश्यकता है।

विज्ञान और टेक्नॉलॉजी को ही नयी सभ्यता का आधार नहीं बनाया जा सकता। वे एक सुदृढ़ नींव का निर्माण नहीं कर सकते। संभाव्य विनाश को दूर करने के लिए ज़रूरी है कि हम किसी से नये आधार पर जीना सीखें। हमें निश्चय ही अध्यात्मिकता की खोज करनी होगी, मानवीय व्यक्तित्व का समादर करना होगा, सभी धार्मिक परम्पराओं में व्याप्त मानवता की भावना को पाना होगा और उनके उपयोग से एक नये मानव का निर्माण करना होगा, जो इस नवीन अनुभूति के साथ अपने आविष्कृत उपकरणों का प्रयोग कर सके कि वह प्रकृति को नियन्त्रित करने से अधिक महान कार्यों की सम्पूर्ति में सक्षम है। मानव को मानव की, उसके भीतर की चेतना की सेवा में लौट आना चाहिए। मानवीय चेतना का ध्यान रखना अत्यन्तावश्यक है।

★

प
रि
वा
र

स
हा
य
क

प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।

नांजनगुड टुथपावडर

सोल एजेन्ट्स :
दी युनायटेड कन्सर्न
५४, बन्दर स्ट्रीट,
मद्रास—१

बम्बई-शाखा—२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
[शेक्सपीयर का चेहरा......पृष्ठ २५ का शेष]

निर्माण हुआ है और यह हमारा जीवन केवल दो अटूट निद्राओं के बीच का स्वप्निल जागरण मात्र है—इस मेरे इन्द्र-जाल की तरह पलक मारते अन्तर्धान हो जानेवाला...। प्रिय पुत्र ! उदासी छोड़ो और खुशी मनाओ। क्योंकि हमारा राग-रंग बीत चुका है और तुम एक नये जीवन में पदार्पण करने जा रहे हो।"

शेक्सपीयर का चेहरा......बेन ने कहा था "तुम उसका चेहरा मत देखो। उसकी कृति देखो।" उसकी कृति। जिसे वह–कृतिकार खुद, शायद एक माया से अधिक महत्त्व नहीं देता होगा। कहाँ है उस कृति में उसका—बस उसीका, वह एक चेहरा जो सिर्फ उसका था। और किसी का नहीं था !

शेक्सपीयर का चेहरा...! 'ग्लोब' थिएटर में उमड़ते चेहरे......। उसके पाठकों और आलोचकों की दस पीढ़ियों के अनगिन चेहरे......कॉलरिज ने हैमलेट में अपना ही चेहरा देखा था। गेटे ने हैमलेट में अपना ही चेहरा देखा था। उसकी रंगशाला में उमड़ते दर्शकों की भीड़ में से प्रत्येक ने उसमें अपना चेहरा चीन्हा था......।

और आज चार सौ साल बाद स्ट्रेट-फोर्ड-ऑन-एवन की उस समाधि पर संसार के कोने कोने से लोग श्रद्धांजलि अर्पित करने उमड़े चले आ रहे हैं। Shakespeare is not of us; but of the world, किसी ने कहा है। स्ट्रैटफोर्ड-ऑन-एवन का वह स्थल मनुष्य मात्र का तीर्थ है। तीर्थ यात्रियों की भीड़ में प्रत्येक व्यक्ति उस चेहरे को देखना चाहता है, जो 'शेक्सपीयर' था...।

समाधि पर की मूर्त्ति उसी तरह शताब्दियों से मौन-अभेद्य उसी रहस्य में लीन, अपने चारों ओर उमड़ती मानवता को निर्विकार दृष्टि से निहारती है... वह दृष्टि मानो उन सब को सम्बोधित करती कह रही है "यह मेरा चेहरा नहीं है...मेरा चेहरा 'तुम' हो–तुम सबके सब। **तुम में से कौन चेहरा है, जो मेरा नहीं है ?**"

× × × नहीं... उससे कुछ मत पूछो। वह हमारे सभी प्रश्नों से परे है। "Ripeness is All" ...उसने कहा था। × × ×

"We ask and ask; Thou Smilest and art Still."

"The Rest is Silence..."

"Ripeness is All......"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

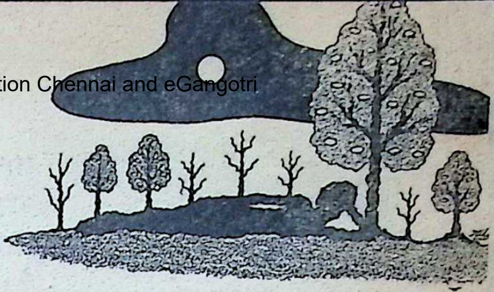

मैंने मुझको जाना

संतोष व्यास

एक समय—
जब मैं,
वायु से भी पतला और पृथ्वी से भी अधिक
मोटा था;

मैंने देखा—
यह विशाल, क्षितिज-तट तक पहुँचा हुआ
सागर—

एक बूंद का लघुतम अंश है !
और, वह धधकता हुआ सूर्य का विशाल
प्रखर-पिंड,
लघुतम चिंगारी के किंचित "रंच" सा,
मुझसे बहुत नीचे,
कहीं, किसी तागे में लटक रहा है, घूम रहा
है !

ग्रह, नक्षत्र और अगणित तारे,
लालायित से,
मुझको पा जाने को, मेरी शक्ति से,
मेरे चारों ओर घूम रहे हैं।
और, क्षितिज परिधि से आवृत्त वायु
मुझको खुश करने के लिए, हौले-हौले,
मेरे शरीर को स्पर्शकर,
मुझे सुख दे रहा है !
तब मैं जागा,
मैंने मुझको जाना—
मैं विराट हूँ, अमर हूँ, अमृत हूँ।
यहाँ रहकर भी वहाँ हूँ !
(जहाँ से बहुत नीचे हैं सब ग्रह, नक्षत्र
और तारे)
और वहाँ रह कर भी यहाँ हूँ !
(जहाँ से बहुत ऊपर हैं, ग्रह, नक्षत्र और तारे)

●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह मकान, जिसमें
शेक्सपीयर का जन्म हुआ था

आज सारे संसार में जीवनी-शक्ति के अप्रतिम सर्जक महाकवि शेक्सपीयर का चौथा जन्म-शताब्दि उत्सव मनाया जा रहा है। आइये, आज चारसौ वर्ष बाद, इस अवसर पर हम उसके जन्म-तीर्थ स्ट्रैटफोर्ड-अपॉन-एवन की यात्रा करें। देखें वह घर, वह स्कूल, वे गली-बाजार, आंगन, जहाँ वह जन्मा, विचरा, पढ़ा-लिखा, जिया और उस माटी को अमृत का मुद्रा-लेख बना गया।

डेनिस बार्ड़न्स

स्ट्रैटफोर्ड-अपॉन-एवन : जहाँ शेक्सपीयर का जन्म हुआ

वर्त्तमान औद्योगिक नगरों के अशान्त और गंदे वातावरण से स्ट्रैटफोर्ड नगर अभी अछूता है। वहाँ के बाज़ारों और सड़कों, मकानों और बग़ीचों को देखकर प्राचीन समय का एक सुन्दर और स्पष्ट चित्र सामने खिंच जाता है। इमारती लकड़ी सेबने बड़े-बड़े पुराने मकान, आंग्लदेशके तड़क-भड़कवाले रंग-बिरंगे फूल, हरी मख़मली घास के मैदान, सुन्दर झाड़ियों से घिरे अहाते और कला में दूर तक चले गये पेड़ नगर को एक अद्‌भुद सौंदर्य प्रदान करते हैं। और इन सबसे अधिक स्वप्न की भांति सुन्दर नदी एवोन है, जो नगर में जगह-जगह मोड़ लेकर बहती है और जिसपर झुंड में तैरती बत्तखों की छाया अनोखा दृश्य प्रस्तुत करती हैं। इसी नदी के किनारे खड़ा है, शेक्सपीयर मेमोरियल थियेटर, जिसकी जगमगाती आकृति नदी के जल में भी देखी जा सकती है।

यह थियेटर शेक्सपीयर का वास्तविक मेमोरियल कहा जा सकता है, क्योंकि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस महान नाटककार और कवि की कृतियों का प्रदर्शन यहाँ बार-बार किया जाता है, जिसमें सभी कुछ उत्कृष्ट और असाधारण रहता है। उसकी कृतियों के अनुरूप ही सैंटिग किया जाता है और मंजे हुए कलाकारों को ही अभिनय के लिए चुना जाता है। लिवरपूल कैथेड्रल के शिल्पकार की चचेरी बहन मिस एलिजावेथ स्कॉट ने इस आधुनिक लाल पत्थर की बनी विल्डिंग का डिज़ाइन तैयार किया था और इसे सन् १९३२ में जनता के लिए खोल दिया गया था। १९२६ में आग से नष्ट हुए थियेटर की जगह इसका निर्माण हुआ था। इस नये थियेटर के निर्माण के लिए तथा इसकी देखभाल करने संबंधी खर्च के लिए आवश्यक धनराशि की प्राप्ति संसार के सभी भागों से हुई थी।

एवोन के किनारे बसे स्ट्रैटफोर्ड नगर का वास्तविक संगमस्थल शेक्सपीयर का जन्म स्थान है। इसके हीरे के आकार के लकड़ी और सीसे से बने झरोखों के कारण इसकी सुन्दरता और शान निराली मालूम होती है। पहले यह स्थान दो भागों में था। एक शेक्सपीयर का निवासस्थान था और दूसरे भाग में उसके पिता जॉन शेक्सपीयर की दुकान और गोदाम था, जो हाथ के दस्ताने बनाने का काम करते थे। भगवान का शुक्र है कि सन् १८४७ में इसे राष्ट्रीय मेमोरियल बनाने के उद्देश्य से खरीद लिया गया और इसका पूरा प्रबन्ध स्ट्रैटफोर्ड नगर के लोगों में से ही कुछ को ट्रस्टी बनाकर सौंप दिया गया। यद्यपि चार सौ वर्षों के लम्बे काल में इसकी रक्षा के लिए कुछ मरम्मत और सुधार का कार्य इसमें किया गया है। किन्तु फिर भी अपनी मूल अवस्था में इसे बहुत अच्छी तरह सुरक्षित रखा गया है।

जिस कमरे में शेक्सपीयर का जन्म हुआ था, उसका सभी फर्नीचर तथा अन्य साजसामान उस समय की झांकी प्रस्तुत करते हैं। इसमें हेनरी आठवें का एक सुन्दर कारीगरी-युक्त लकड़ी का सन्दूक है, १७वीं शताब्दी का बच्चे का एक हिंडोला है, उस समय के सुन्दर ज़रदोशी के काम का सामान है तथा एलिजाबेथ

वह ग्रामर-स्कूल, जहाँ शेक्सपीयर ने शिक्षा पायी थी

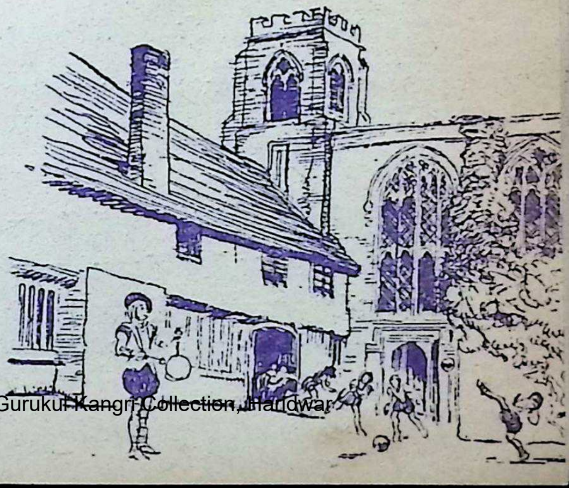

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल का एक अति सुन्दर बेलूत लकड़ी का बना पलंग है। शेक्सपीयर का मकान एक सुन्दर बग़ीचे के बीच स्थित है, जिसमें उन झाड़ियों, फूलों, पौधों, पेड़ों को उगाया गया है, जिनका उल्लेख उसकी रचनाओं में है। घर का एक भ.ग संग्रहालय के रूप मे हैं, जहां शेक्सपीयर के जीवन संबंधी तथा उस समय से संबंधित अमूल्य पुस्तकों, पांडुलिपियों, चित्रों तथा अन्य वस्तुओं को प्रदर्शन हेतु रखा गया है।

एनी हॉथवे का कॉटेज जो एक बगीचे मे स्थित है और जिसकी अपूर्व ढंग से छायी गयी फूस की छत तथा लाल पत्थर, लकड़ी तथा धातु से बने झरोखे आज भी ऐसे ही दिखते हैं, जैसे उस समय रहे होंगे, जब शेक्सपीयर की पत्नी इसमें रहती थी। यह मूलरूप में एक कृषिघर था। उस काल की गृह-निर्माण-कला का यह एक दुर्लभ नमूना है। सन् १८९२ तक यह हाथवे परिवार के स्वामित्व में ही रहा, किन्तु १८९२ में इसे शेक्सपीयर-जन्म दिन-ट्रस्ट द्वारा खरीद लिया गया और अब यह ट्रस्ट ही इसकी देखभाल और संरक्षण करता है।

स्ट्रैटफोर्ड के दर्शनीय स्थलों में एक विशेष स्थान वह है, जिसे 'नई जगह' के नाम से पुकारा जाता है, शेक्सपीयर ने अपने अंतिम दिन यहीं गुजारे थे और यहीं सन् १६१६ में उसकी मृत्यु हुई। किसी समय यह स्थान नगर के बड़े-बड़े निवासस्थानों में से एक था, जहाँ बड़े-बड़े लोग ठहरते थे और जिसमें एक बार सम्राट चार्ल्स प्रथम की पत्नी रानी हेनरिटा मेरिया भी ठहरी थी। १८ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में इसे दुबारा बनवाया गया, किन्तु १७५९ में नींव को छोड़कर यह पूरा का पूरा ढह गया। किन्तु नॉट-उद्यान जो फूलों और अन्य वनस्पतियों की क्यारियों से सजाया गया है, एलिजावेथ के समय के उद्यान का बिलकुल प्रतिरूप म.लूम होता है। इस उद्यान को भी शेक्सपीयर की यादगार के रूप में सुरक्षित रखा गया है। हरी मखमल जैसे घास के मैदानों से घिरे इस उद्यान में अब भी एक स्थान पर एक प्राचीन शहतूत का पेड़ फिर उग आया है, जबकि शेक्सपीयर ने स्वयं ही यहाँ के पौधों को काट दिया था। यह वह जगह है, जहाँ फल तरकारियों के पेड़-पौधे थे और जहाँ शेक्सपीयर को बैठना बहुत प्रिय था।

नॉट-उद्यान के पार्श्वभाग में अब ईसाइयों के एक संघ का गिर्जाघर खड़ा है। इसकी बगल में स्थित है प्राचीन ग्रामर स्कूल जिसकी स्थापना १२९१ में पवित्र-क्रॉस के संघ द्वारा की गयी थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जिसमें संघ के सदस्यों को शिक्षा दी जाती थी। सन् १५५३ से इसे सम्राट एडवर्ड षष्ठ के ग्रामरस्कूल के नाम से जाना जाता है। ऐसा विश्वास है कि शेक्सपीयर ने भी इस स्कूल में शिक्षा पायी थी। स्कूल के नीचे संघ का एक बड़ा हॉल है, जहाँ बाहर से कलाकार आकर अपनी कला का प्रदर्शन करते थे। ऐसा माना जाता है कि इन कलाकारों के प्रदर्शन से शेक्सपीयर के सहज स्वाभाविक थियेटर के प्रति प्रेम को बहुत बढ़ावा मिला। सब से ऊपर है पवित्र त्रिमूर्ति का पैरिश-चर्च जिसके शानदार शिखर का प्रतिबिम्ब नदी के जल में झलकता रहता है। शिल्पकला का यह एक अद्भुद नमूना है। इस पुण्यस्थल के दरवाज़े के कड़े उस समय की याद दिलाते हैं, जब चर्च की अबाध एकान्तता लोगों का एकमात्र आश्रयस्थल थी और निर्वासित शरणार्थियों को जहाँ आश्रय मिलता था।

यहीं बाइबिल की एक प्राचीन प्रति है। यहां पादरियों के रजिस्टर में शेक्सपीयर के बपतिस्मा संबंधी और उसके दफ़न के विवरण भी देखे जा सकते हैं।

गिर्जे के पूर्वी भाग में शेक्सपीयर की यादगार में उसकी मृत्यु के कुछ वर्ष बाद उसकी एक ऊर्ध्वकाय मूर्ति स्थापित की गयी, जिसके हाथों में पंख की कलम है और नीचे कब्र का एक पत्थर है, जिसपर उसके विश्राम स्थल का विवरण दिया हुआ है। प्रतिवर्ष कवि को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए उसके जन्मस्थान से एक जलूस निकाला जाता है, जो उसकी समाधि पर जाकर समाप्त होता है, जहाँ लोग पुष्प चढ़ाते हैं।

प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में अमरीकी लोग स्ट्रैटफोर्ड नगर में आते हैं और शेक्सपीयर-मेमोरियल ट्रस्ट को, जो उस महान व्यक्ति की यादगारों को इतनी अच्छी तरह संजोये हुए हैं, खुले हाथों दान देते हैं। अमरीकियों का इस नगर से एक भावनात्मक संबंध भी है। इसी नगर में अमरीका के प्रसिद्ध हारवर्ड विश्वविद्यालय के संस्थापक श्री जॉन हारवर्ड का सजाधजा मकान है, जो आधा लकड़ी से बना हुआ है और जिसका निर्माण १६ वीं. शताब्दी में हुआ था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरेशचन्द्र मिश्र

वह मातृ-भक्षक अवधूत केसरी

[एक शाक्त तांत्रिक की कथा]

क्रोध से दाँत किटकिटाता महाशक्ति का लाड़ला, माँ की मूर्ति के निकट जाकर चीख़ने लगा, 'तूने निराधार, निराहार रखकर मेरी परीक्षा लेनी चाही है; किन्तु मैं तेरा योग्य पुत्र नहीं, जो शान्ति के साथ अभाव का यह दैन्य सह लूँगा। मैं अयोग्य पुत्र हूँ। अवधूत पुत्र! घृणा, लज्जा, भय, शंका के पाशों से मुक्त, सदाशिव स्वरूप, स्वच्छन्दचारी।'

भैरव कुन्ड की गुफ़ा में बैठे अवधूत बटुकनाथ का हृदय आज तामसी क्रोध का शिकार हुआ जा रहा था। नवरात्रि के उत्सव भरे दिन, विंध्य अंचल के चारों ओर दुर्बादल अंकुरित मंगल घंटों, दीपों, आरतियों और सप्तशती पाठों की धूम! किन्तु बटुक के हृदय में पराजित मान की कुंठा और खीझ....।

महाराज दरभंगा ने जब से वृत्ति निश्चित की, अवधूत ने भैरव कुंड से नीचे उतरना भी छोड़ दिया था। महीने की निश्चित तारीख़ पर डाकिया गुफ़ा में रुपया लेकर आ जाता था, किन्तु नवरात्र के उस पर्व मास पर मनीआर्डर का कहीं पता नहीं। विशेष पूजन की कौन कहे; अक्षत, धूप दीप की भी व्यवस्था नहीं–!

खीझ से अपनी जटाएँ खींचता अवधूत उठ कर गुफ़ा में टहलने लगा। 'तूने मेरा अपमान कराया माँ, तूने उस मूढ़ 'राजन्य' को यह प्रेरणा दी कि वह अवधूत बटुक की उपेक्षा करे, मुझ दुराचारी को वृत्ति देकर अपव्यय न करे। क्यों, यही बात है न?'

क्रोध से दाँत किटकिटाता महाशक्ति का लाड़ला, मूर्ति के निकट जाकर चीख़ने लगा, 'तूने निराधार, निराहार रख कर मेरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षा लेना चाही है, किन्तु मैं तेरा योग्य पुत्र नहीं, जो शांति के साथ अभाव का यह दैन्य सह लूंगा। मैं अयोग्य पुत्र हूँ। अवधूत पुत्र! घृणा, लज्जा, भय, शंका के पाशों से मुक्त सदा शिव स्वरूप, स्वच्छंद चारी...'

और मूर्ति को काँपते हाथों पकड़ कर वटुक नाथ अंगार बरसाते नेत्रों से उसे घुरने लगा। 'तू चाहती है कि मैं अपने कठिन तप का अंश नष्ट कर तेरे अर्चा की व्यवस्था करूँगा। किंतु तू नहीं जानती मैं उस कोष के व्यय में कितना कृपण हूँ। मुझे विवश करेगी, तो मैं सिंह शावक की तरह तेरा ही उदर विदीर्ण करूँगा। क्षुधा सता-येगी तो मैं तुझे ही खाऊँगा ...'

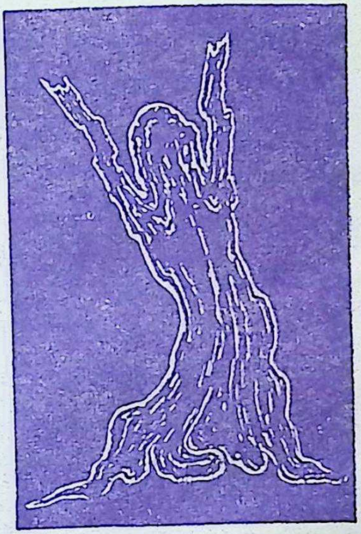

और काँपते होठों वाले अवधूत ने किट-किटा कर मां दुर्गा की मूर्ति का कंधा चबा लिया। दो क्षण में ही पत्थर का वह 'मांस खंड' विदीर्ण हुआ, तो होश में आया साधक उसे देख कर स्तब्ध रह गया। उसके होठों पर लाल-लाल रक्त की बूंदें छिटकी थीं। मूर्ति के घाव भरे कंधे से भी ताजे रक्त की धार बह रही थी।

'माँ, माँ, ये क्या किया, क्या किया तूने? मेरे साथ तू भी निर्दय हो गयी क्षमावती.....?'

मूर्ति के चरणों पर सर पकट कर लाड़ला अवधूत मूर्च्छित हो गया।

उधर नये मैनेजर की लापरवाही से वृत्ति भेजने में देर करने वाले महाराज की गति ही अवरुद्ध हो गयी। मूत्र, निद्रा, भोजन सब कुछ बन्द हो गया। डाक्टर, वैद्य हैरान थे, किन्तु आस्थावान महाराज को शीघ्र ही अंतः प्रेरणा मिली। रुपये के साथ सेवक तुरन्त दौड़ाये गये, तब कहीं जाकर प्राण रक्षा हुई।

विन्ध्य तीर्थ के भैरव कुंड गुफा में आज भी 'स्कंध प्रदेश खंडित' वह मूर्ति स्थिर भाव से अपने एक क्रोधी लाड़ले की निर्दयता की कहानी कहती है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दाँत गिरने पर, अब नये जीवित दाँत लगाये जा सकेंगे

दंत-रोगियों को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता होगी कि अब उन्हें कृत्रिम दाँत लगाने की आवश्यकता नहीं रहेगी। नवीनतम खोजों के अनुसार, दंत-चिकित्सक अब ऐसे प्रयोगों में जुटे हैं, जिनसे दुबारा जो दाँत बैठाये जायें, वे स्थायी और जीवित हों।

रक्तदान और नेत्रदान की चर्चा तो आप ने बहुत सुनी होगी, पर दंतदान आप के लिए अवश्य ही एक नया विषय होगा। घबराइए नहीं, अधिकांश दंत-चिकित्सक भी अभी इससे पूर्णतया परिचित नहीं हैं, क्योंकि अभी यह शोध और प्रयोग की अवस्था में ही है और इसके सफल प्रयोग का श्रेय केवल वाशिंगटन के दंत-विशेषज्ञ, डा. मिकिओस सेरेफाल्वी को ही है। इन्होंने पिछले दो वर्षों में पचास ऐसे प्रयोग सफलतापूर्वक किये हैं, जबकि एक पुरुष के दांत दूसरे पुरुष के और एक स्त्री के दांत दूसरी स्त्री के लगाये गये। इस प्रकार २५ पुरुष और १३ स्त्रियों के उन्होंने दूसरों के जीवित दांत 'रोपे'। ये दाँत उन्होंने सात से नौ वर्ष तक के बच्चों के मुंह से लिये थे। एक व्यक्ति के तो सड़ा दाँत उखाड़ने के कुछ ही मिनट बाद नया दाँत लगाया गया। दो रोगियों के प्रति व्यक्ति चार दाँत लगाये गये। एक के तीन और चार के दो दाँत प्रति व्यक्ति लगाये गये। ३१ रोगियों के प्रति रोगी एक दाँत लगाया गया।

डा. सेरेफाल्वी का कहना है कि आपरेशन के तीन हफ्ते बाद नये बैठाये गये दांत अन्य दाँतों की तरह काम करने लगते हैं और तीन या चार महीनों में उनका रंग भी सामान्य हो जाता है। अमेरिका आने से पहले हंगेरी में उन्होंने इस प्रकार के ८६ आपरेशन सफलतापूर्वक किये थे। उन्होंने बताया कि इस प्रकार दाँत 'रोपने' के तीन तरीके हैं। प्रथम आॅटो-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्रान्सप्लांटेशन, अर्थात् उसी व्यक्ति के मुंह में एक जगह से दाँत उखाड़ कर दूसरी जगह पर लगाना; दूसरा है होमोट्रान्सप्लांटेशन, अर्थात् एक पुरुष के दाँत दूसरे पुरुष के और एक स्त्री के दाँत दूसरी स्त्री के लगाना; तीसरा है, हेटरोट्रान्सप्लांटेशन, अर्थात् पुरुष का दाँत स्त्री के और स्त्री का दाँत पुरुष के मुंह में लगाना। तीसरा तरीका अभी संतोषजनक नहीं माना जाता, क्योंकि इससे शरीर में कुछ अवांछनीय रासायनिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं।

जो दाँत डा. सेरेफाल्वी ने होमोट्रान्सप्लांटेशन पद्धति (पुरुष-पुरुष; स्त्री-स्त्री) से लगाये, वे या तो मसूढ़ों से बाहर नहीं निकले थे, अथवा अंशतः ही बाहर निकले थे। ये उन शिशुओं के मुंह में से लिये गये थे, जिनके आवश्यकता से अधिक दाँत थे और इसलिए मुंह में भीड़ करते थे। इनमें से प्रत्येक दाँत का ऊपरी हिस्सा तो अच्छी तरह बन चुका था, परन्तु जड़ का विकास पूर्णतया नहीं हो पाया था। डा. सेरेफाल्वी के अनुसार उखाड़े हुए दाँत अपने पोषक अंग के सहित विशेष रूप से तैयार किये लवण घोल में कम से कम तीन हफ़्ते तक निर्विघ्न रखे जा सकते हैं। छः सप्ताह तक रखे गये दाँतों से भी अच्छे परिणाम उन्होंने प्राप्त किये हैं। जो पचास दाँत उन्होंने होमोट्रान्सप्लांटेशन पद्धति से लगाये, उनमें छः तो दो हफ़्ते या उससे कम समय तक रखे गये थे; तेंतीस दाँत तीन हफ़्ते और ग्यारह दाँत तीन से छः हफ़्तों तक के रख हुए थे। डाक्टर साहब ने बताया कि नये दाँतों को 'रोपने' के लिए आवश्यकतानुसार गड्ढे सीकर बनाये जा सकते हैं, और यदि सड़ा दाँत उखाड़े काफी समय बीत चुका हो तो, मसूढ़े में आपरेशन कर नया गड्ढा भी बनाया जा सकता है।

नये दांत लगाने पर डाक्टर ने रोगियों को प्रथम दो सप्ताह तक इन दातों को ब्रश न करने और उपयोग में नहीं लाने की सलाह दी; परन्तु तीसरे हफ़्ते के प्रारंभ में दाँत का सामान्य उपयोग करने की हिदायत भी उन्होंने दी, क्योंकि मसूढ़े के घाव के अच्छी तरह भरने के लिए चबाना बहुत अच्छा रहता है। तीसरे सप्ताह के अंत तक यह नया दाँत सामान्य रूप से स्वस्थ और सुदृढ़ हो जाता है, और उसका उपयोग करने में रोगी को कोई कठिनाई नहीं होती। डाक्टर सेरेप्लाल्वी का कहना है कि इस प्रकार बैठाये हुए दाँत दिखने में और दाँतों की तरह ही होते हैं और काफी वर्षों तक काम में आते हैं; सफलता का अंतिम प्रमाण तो रोगियों का कई वर्षों तक सतत निरीक्षण कर ही पाया जा सकता है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीहरि

चण्डीदास की राधा-रानी

वास्तव में, चण्डीदास की राधा के रूप में उनका कृष्णभक्ति-आप्लावित मानस ही साकार हो गया है। जो तड़प, छटपटाहट और बेचैनी राधा में है, वह निस्सन्देह भक्त चण्डीदास की आत्मा की अपनी पुकार है, कृष्ण के प्रति उनका अपना समर्पण है।

चण्डी ठाकुर की राधा का स्वरूप, उसकी बेसुध तन्मयता और आतुर समर्पण की आकुल विकलता के स्वरों में स्पष्ट होता है। वह अपनी पुकारों से पहचानी जाती है, अपने निवेदनों में अंकित होती जाती है :–

सखि, कहिबि कानुर पाय।
से सुख-सायर दैबे सुखायल तियाषे परान जाय॥

सखी, कानू के पैर पकड़कर कहना–उस सुख के सागर को दैव ने सुखा दिया, तृषा से मेरा प्राण जा रहा है।

सखि, यतेक मनेर साध शयने स्वपने करितु भावने
विहि से करल बाद सखि, हाम से अबला हाय।
विरह आगुन हृदये द्विगुन सहन नाहिक जाय।

सखी, शयन में, स्वप्न में मन ने जो कामनाएँ कीं, विधाता ने सब की सब बरबाद कर दीं। सखी, मैं अबला हूँ। विरह की आग हृदय में दूने वेग से जल रही है, इसीलिए सही नहीं जाती।

राधा के ये कातर वचन सुनकर उसकी सखी मन-ही-मन तिलमिला जाती है और श्रीकृष्ण के प्रति आक्रोश से भर जाती है, क्योंकि वह राधा की दारुण अवस्था से खूब-खूब परिचित है। तभी तो वह 'कालिया' को उसकी निष्ठुरता के लिए धिक्कारती है और पूरी लानत-मलामत करती है। एक और भी ज़ोरदार कारण जो है–

सोनार प्रतिमा धूलाय गड़ागड़ि कुबुजा बसिल खाटे!

सोने की प्रतिमा तो धूल में लोट रही है और कुब्जा खाट पर बैठी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसीलिए सखी के मन का समूचा विद्रोह चण्डी ठाकुर की इन पंक्तियों में मुखर हो उठता है —

यतेक तोमारे पिरीति करुक तेमन पिरीति हबेना।
राधानाथ विने कुबुजार नाथ केह त तोमारे कबेना।।

कोई कितनी भी प्रीति क्यों न करे, राधा की-सी प्रीति किसी की नहीं हो सकती। राधानाथ के स्थान पर कोई तुम्हें कुब्जानाथ नहीं कहेगा।

सखी कृष्ण की भर्त्संना करने के बाद कुछ संयत और फिर कोमल होकर राधा की करुण स्थिति का चित्र उनके सम्मुख प्रस्तुत करती है और कृष्ण को अपनी विरह-विगलिता सखी राधा के प्रति द्रवित करना चाहती है :—

चम्पक वरणी धनी लाख वान हेम गनि
से राधा मलिन मुख चाँदे,
गिया निप तरु मूले लोटा इया भूमि तले
निशि दिवि पिया बलि काँदे,
खलित नयन जले से अंग भासिया चले
तिते अंग निलेर वसन,
खंजन नयनी राइकाँदिया आकूल ताइ
देखि येन अरुण वरण।

चम्पा के रंग वाली सुन्दरी, जिसके निखरे हुए रंग के सामने लाख-लाख स्वर्णाभाएँ मात हैं, ऐसी राधा का मुख-चन्द्र मलिन हो उठा है। रात-दिन कदम्ब के तले जाकर धरती पर लोट-लोट वह वियोगिनी 'पिया-पिया' रटती रहती है। आँखों से बहती हुई जल की धार से उसका शरीर और नीला वसन भीगता रहता है। खंजन नयनी राधा के नयन रोते-रोते अरुणाभ हो गये है।

ऐसी विरह-व्यथिता राधा को, जिसकी दशम अवस्था आ गयी है—मृतप्राय है, देख आने के लिए—तुरन्त देख आने के लिए, श्रीकृष्ण से आग्रह करती है और उन्हें बता देना चाहती है कि राधा के प्राण अपने प्रियतम के दर्शनों की आशा में ही अटके हुए हैं :—

तुया दरसन आशे तेंइ से परान आछे
चण्डीदास भाल मते जानि।

और सखी के इन वचनों का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। श्रीकृष्ण द्रवीतभू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होकर बार-बार राधा के बारे में पूछते हैं। आँखें भर आती हैं, अश्रु झरने लग जाते हैं। वे राधा की सखी से कहते हैं कि मैं ज़रूर राधिका को देखने वृन्दावन आऊँगा। वे सखी को विश्वास दिलाते हैं कि वे जब बैठते हैं, तब भी राधा को देखते हैं, गाते हैं तब भी राधिका को देखते हैं, हर गुण में उन्हें राधिका के ही दर्शन होते हैं। भोजन में भी राधिका, गमन में भी राधिका, जब देखो तब राधिका का ही साथ है—

वसिते राधिका गाइते राधिका
गुणे ते राधिका देखि।
भोजने राधिका गमने राधिका
सदाइ राधिका साथी॥

इसलिए वियोग की मर्मान्तिक यातनाओं भरी अनेक घड़ियों के बाद जब प्राण-वल्लभ पधारते हैं, तब राधा क्या करती हैं :—

केशपाश दिया चरण मुछाये विचित्र
पालंके लइ।
अति सुवासित वारि ढालि राधा धोयल
चरण दुइ॥
मृग मद भरि चन्दन कटोरि अगोर
तिमिर ताय।
मनेर मानसे सुनागरी राधा लेपिछे
श्यामेर गाय॥
नाना फूलदाम अति सुशोभन गले
पराइल राधा।
रूप निरीक्षण करें छन-छन तिलेक
नाहिक बाधा॥
कानुर श्रीमुख येन शशधर येमन
पूर्णिमार शशी।
राइ से चकोर पाइ निरन्तर पियइ
अमृत राशि॥

राधा ने बिखुरे केश-पाश से चरण पोंछ लिया, सुवासित जल से दोनों चरण धो लिये और सुखद पलंग पर (श्रीकृष्ण को) बैठा दिया। कस्तूरी और अगरु से सुगन्धित चन्दन की कटोरी लेकर मन की पूरी साध से श्याम के शरीर में लेप करने लगीं। नाना सुशोभन फूलों की माला गले में डाल दी और निर्बाध भाव से प्रियतम के रूप-माधुर्य को देखने लगीं। एक पल भी नहीं गँवाया। पूर्ण चन्द्र की भाँति कृष्ण-मुख के रूपामृत को चकोरी की भाँति अपलक पीती रहीं।

इतना ही नहीं कि चण्डीदास की राधा ने मान नहीं किया, बल्कि उसके मन में भी मान कहीं से सर नहीं उठा सका। वह तो कभी था ही नहीं। सम्पूर्ण समर्पण के उद्वेलनों से व्याप्त हृदय-सागर में भला मान कहाँ टिकता? वह प्रेम-विह्वल हो अपना सम्पूर्ण उन्हें दे डालना चाहती थी। उसे प्रणयाभिसार और विलास नहीं चाहिए था। वह मिलने के लिए मिलन भी नहीं चाहती थी। वह तो मिलन केवल इसलिए चाहती थी कि प्रियतम को अपना सर्वोत्तम दान कर सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चण्डीदास की राधा को यही दुःख है कि यदि वह मर गयी होती, तो उसे प्रियतम भगवान के दर्शन कैसे होते। वह पाषाणी भी होती, तो इस मर्मयातना से पिघल कर वह गयी होती, किन्तु, अबला थी वह तो, इसीलिए सब झेल गयी। वह तो केवल अपने प्राण-प्यारे का सुख, उन्हीं का मंगल चाहती है और कामना करती है कि वे मथुरा नगर में कुशल-क्षेम से रहें। राधा को यही सन्तोष है कि वह अपने प्राणेश्वर की है। वह उनसे सुख, विलास, रास कुछ भी नहीं चाहती, वह तो केवल उनके चरणों पर अर्पित हो जाने में ही स्वयं को सम्पूर्ण समझती है।

वास्तव में चण्डीदास की राधा के रूप में उनका कृष्ण-भक्ति-आप्लावित मानस ही साकार हो गया है। जो तड़प, छटपटाहट और बेचैनी राधा में है, वह निस्सन्देह भक्त चण्डीदास की आत्मा की अपनी पुकार है, कृष्ण के प्रति उनका अपना समर्पण है। वे श्रृंगार-साधक नहीं थे, विरह-वर्णन उन्हें अभिप्रेत नहीं था, वे तो कृष्ण के प्रति माधुर्य-भाव से स्वयं समर्पित थे, इसीलिए उनकी समस्त भक्ति-विह्वलता और अनुराग-व्याकुलता मूर्तिमती राधा बनकर आराध्य के चरणों पर लुढ़क गयी।

चण्डीदास की राधा और कृष्ण के बीच श्रृंगार की जो हलकी झलक मिल भी जाती है, वह जड़ जगत् का निकृष्ट श्रृंगार नहीं है। सच तो यह है कि भगवान से सम्बद्ध होकर श्रृंगार मधुर रस में परिणत हो जाता है और उसे भक्तिशास्त्र श्रृंगार नहीं मानता। भगवान साक्षात् श्रृंगार-स्वरूप हैं इसीलिए नव-नव वर माधुरी की आधार-स्वरूपा परमाद्भुत किशोरियाँ, जिनके अंग-अंग प्रभु की प्रणय-तरंगों से करम्बित हैं, रमण-रूप से हरि का भजन करती हैं—

नव नव वर माधुरी धुरीणाः प्रणयं
तरंग करम्बित(ङ्गाङ्गाः।
निज रमणतया हरिं भजन्ती प्रणमत
ताः परमाद्भुताः किशोरीः॥

'भक्ति रसामृत सिन्धु' की इन दो पंक्तियों में चण्डीदास की मधुर उपासना का मर्म है, जिसने उनकी राधा का स्वरूप निर्धारित किया। वास्तव में, 'ताः परमाद्भुताः किशोरीः' मानस की अनेकानेक वृत्तियों की प्रतीक हैं, जिन्हें सम्पूर्ण रूप से प्रभु के प्रति समर्पित हो जाना चाहिए, तभी जीवन की सार्थकता है। वैष्णव भक्ति-साधना को यह माधुर्य-भाव सहज ग्राह्य प्रतीत हुआ, क्योंकि इसमें जड़ जगत् का श्रृंगार भी प्रभु की ओर उन्मुख होकर बहुत ऊपर उठ सकता था और पारमार्थिक सत्ता में विलीन हो सकता था। तभी वैष्णव भक्ति-क्षेत्र में समस्त मधुर भावों में राधा-भाव को प्राधान्य मिला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय खण्ड

रुक्मिणी-हरण

यहाँ से इस कथा का नया खण्ड आरम्भ होता है और उसके साथ ही श्रीकृष्ण के जीवन-प्रसंगों के आलेखन में जो कठिनाइयाँ हैं, वे और भी बढ़ जाती हैं।

अपने जीवनकाल में ही जो प्रतिष्ठा के शिखर पर पहुँच गया था, उस नरोत्तम के जीवन के सत्य प्रसंगों को खोज निकालकर उनका वर्णन करना अत्यन्त कठिन है। ऐसे पुरुषों के पराक्रम चमत्कार बन जाते हैं, उनके अनुयायी व्यक्ति पूजक बन जाते हैं और उनके शत्रुओं को असुर समझा जाने लगता है।

श्रीकृष्ण की जीवन कथा के आलेखन का काम तो इससे भी हजार गुना कठिन बन गया है; क्योंकि अपने जीवनकाल में ही वे ईश्वर के अवतार माने जाने लगे थे। तीन हजार वर्षों से लोग उन्हें पूर्णावतार मानते आ रहे हैं, युग-युग से भक्ति सम्प्रदाय की विविध शाखाएँ उनकी उपासना परम तत्त्व के रूप में करती आ रही हैं। इसीलिए ऐसा लगता है कि मैंने एक ऐसा कार्यभार स्वयं पर ले लिया है, जिसे लगभग अशक्य कहा जा सकता है। जिन चमत्कारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा दिव्य शक्ति का आरोपण श्रीकृष्ण पर किया गया है, उसके कारण एक मानव के रूप में उनका सत्य स्वरूप ढंक-सा गया है। मानव के लिए दुसाध्य कहे जा सकें ऐसे चमत्कारों का एक गहरा रंग उनके जीवन की वास्तविक घटनाओं पर चढ़ गया है। फिर भी इतना तो कहना ही पड़ेगा कि इनमें दैवी शक्ति अद्भुत प्रमाण में थी। दुर्भाग्यवश सदियों के अन्तर से रचे गये विभिन्न पुराणों ने अपने-अपने युग के अनुकूल प्रसंगों तथा मान्यताओं को उनकी जीवन-गाथा में स्थान देने में संकोच नहीं रखा।

श्रीकृष्ण के जीवन की सर्वाधिक प्रमाणभूत साधन सामग्री 'महाभारत' में मिलती है। श्रीकृष्ण के बाल्यकाल के प्रसंगों का उसमें विस्तार से वर्णन नहीं है; फिर भी उनके बाल्यकाल के अधिकांश पराक्रमों का उल्लेख इस ग्रन्थ में देखने में आता है। इसके बाद कालानुक्रम में आता है 'हरिवंश'। ऐसा लगता है कि श्रीकृष्ण के जीवन और पराक्रमों का वर्णन करने के लिए ही इस ग्रन्थ की रचना हुई है। व्यास के मूल महाभारत की रचना के बाद बहुत काल पश्चात्– सदियां बीत गयीं तब–इस ग्रन्थ की रचना हुई। परन्तु जिस परम्परा, विशेष कर मथुरा के यादवों की परम्परा, के आधार पर उसकी रचना की गयी है, वह प्रमाणभूत मानी जा सकती है। उसमें के प्रसंग स्वाभाविक लगते हैं और उद्देश्य तथा प्रयोजन भी मानव सदृश्य, लौकिक प्रकार के दिखायी पड़ते हैं।

'वायु', 'विष्णु' तथा 'मत्स्य' पुराण में भी इसी परम्परा का आलेखन किया गया है, परन्तु अत्यन्त संक्षिप्त रूप में। आठवीं सदी में रचे गये भागवत पुराण में हमें कृष्ण-पूजा का भक्ति सम्प्रदाय दृढ़ता से स्थापित देखने को मिलता है। उस पुराण में वर्णित प्रसंग प्रधानतया 'हरिवंश' से लिये गये है; परन्तु इन प्रसंगों की नये सिरे से रचना की गयी है, घटना के पूर्वापर सम्बन्धों को आगे पीछे कर दिया गया है और इस ग्रन्थ की प्रधान भावना के अनुरूप हर संभव तरीके से उनके तारतम्य पर जोर दिया गया है। बहुत से प्रसंगों के मानव अथवा लौकिक भावों को पहचाना न जा सके, इस प्रकार उलट-फेर भी कर दिया गया है। भागवत पुराण की शास्त्र-ग्रन्थ के रूप में बड़ी प्रतिष्ठा है और विश्व साहित्य के एक सर्व श्रेष्ठ काव्य के रूप में उसकी गणना की जाती है; परन्तु श्रीकृष्ण के जीवन प्रसंगों की साधन-सामग्री के लिए वह 'हरिवंश' से भी कम उपयोगी है।

इतिहास अथवा दंतकथाओं में वर्णित सभी पुरुषों में लोकोत्तर दैवी पुरुष के रूप में गिने जाने का जिसे सबसे विशेष अधिकार है और जो अन्य सभी की तुलना में उच्चतम जीवन यापन के लिए सर्वश्रेष्ठ पुरुष गिना जा सकता है, ऐसे श्रीकृष्ण के वास्तविक जीवन-प्रसंगों का संशोधन कार्य करने के लिए ब्रह्मवैवर्त्त जैसे उत्तरकालीन पुराण बिल्कुल व्यर्थ हैं; क्योंकि उनमें श्रीकृष्ण के जीवन प्रसंगों में भांति-भांति की घटनाएँ तथा हेतु जोड़ दिये गये हैं।

पहले खण्ड में श्रीकृष्ण के बाल्यकाल के प्रसंगों का आलेखन किया गया है, जिसमें राधाविषयक प्रसंग के बारे में ऐतिहासिक आधार शंकास्पद होने पर भी उसका वर्णन किया गया है, क्योंकि श्रीकृष्ण के साथ राधा का नाम इस प्रकार संलग्न हो गया है कि उसके उल्लेख के बिना काम चल ही नहीं सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस दूसरे खण्ड के लिए मैंने मुख्यतः 'हरिवंश' का आधार लिया है। इसमें भी श्रीकृष्ण के चमत्कारों का वर्णन है; फिर भी जिन आधारभूत प्रसंगों का उल्लेख इसमें किया गया है, वह प्रमाणभूत परम्परा का ही अनुसरण करता है। यहाँ पर जिन्हें दिव्य और अलौकिक चमत्कार दिखाया गया है, उनमें मैंने मानव भाव तथा हेतुओं का दर्शन करने का प्रयत्न किया है। मैं आशा करता हूँ कि यह क्षम्य समझा जायगा।

भगवान श्रीकृष्ण ने इस पृथ्वी पर जिस प्रकार अवतार लिया, जीवन व्यतीत किया और विविध पराक्रम किये, उन सब का पुनः संस्करण कर उनके आलेखन का लगभग अशक्य कहा जा सके ऐसा कार्यभार मैंने स्वयं पर लिया है और यदि इसमें मेरे द्वारा कहीं कोई प्रमाद हो गया हो तो मुझे विश्वास है कि भगवान श्रीकृष्ण मेरे इस दोष को क्षमा करेंगे।

--कन्हैयालाल मुन्शी

[१]

राजमुकुट का परित्याग

कृष्ण का अनुमान सही था। कंस का सहसा संहार हो जाने पर सभी स्तब्ध एवं जड़वत् बन गये थे; फलस्वरूप नृशंस हत्याकाण्ड एवं संभ्रम की जो सम्भावना थी वह समाप्त हो गयी थी।

क्षण भर के लिए सभी किंकर्तव्यविमूढ़ बन गये। बाद में उन्हें घटना का सही भान हुआ और एक स्वर से सभी के कंठों से मुक्तिदायक उद्घोष फूट पड़ा, "परित्राता का पदार्पण हो चुका है! अत्याचारी का अन्त हुआ, भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई!"

मागधी सैनिक भी किंकर्तव्य-विमूढ़ खड़े थे। जिस प्रतापी कंस की आज्ञाओं का पालन करते वे अघाते नहीं थे, उसका अन्त हो चुका था। उनकी अपेक्षा यादवों की संख्या अधिक थी। यद्यपि प्रद्योत को वे कंस का स्वामिभक्त सेनापति सदा से समझते थे; किन्तु उसने ही मागधियों के प्रधान वृत्रिघ्न का वध कर डाला था। सभी यादव आनन्दातिरेक से पुलकित हो उठे। संक्षुब्ध एवं सेनापति-विहीन उनके प्रतिपक्षियों में अब आक्रमण करने का साहस नहीं रहा।

यादवों के जिस अगुवा, महाशक्तिशाली तरुण ने मुष्टिक का मर्दन किया था, उसने यादवों को आक्रमण न करने का आदेश दिया। हाथ में विशाल गदा लेकर वह दोनों पक्षों के मध्य में खड़ा हो गया और आग्नेय नेत्रों से सभी को निहारता हुआ गरज उठा, "अगर अब किसी ने अपना शस्त्र उठाया तो निश्चय ही मैं उसका शिरच्छेद कर डालूंगा।" उसकी इस आज्ञा का अनुसरण कर सभी ने अपने शस्त्र भूमि पर डाल दिये। इसी बीच वसुदेव, जो अक्रूर एवं प्रद्योत से मन्त्रणा कर रहे थे, राज-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिथियों के पास पहुँचे। शस्त्रों से सज्जित एवं अनुचरों से घिरे, सभी बड़ी अधीरता से इसकी प्रतीक्षा कर रहे थे कि आगे क्या होता है।

"राजोत्तम, आप सब को चिन्ता करने का कोई कारण नहीं। आप यादवों के भी सम्मान्य अतिथि हैं। आप सब मेरे साथ आयें, मैं आप सब को राज महल में ले जाऊँगा, जहाँ सभी के ठहरने की व्यवस्था की गयी है। हम सब आपकी सेवा के लिए उपस्थित हैं!" वसुदेव ने कहा।

कंस के शव को महल में ले आने का राजप्रतिहारी को आदेश देकर अक्रूर शोक-निमग्न रानियों को सांत्वना देने के लिए अन्तःपुर की ओर चल पड़े।

इस बीच प्रद्योत ने राजमहल एवं नगर की सुरक्षा का भार संभाल लिया था। उसने अपने सहयोगियों को शहर में शान्ति स्थापित रखने के लिए सदैव सचेष्ट रहने का आदेश दिया।

घेरा तोड़ कर लोगों के दल के दल कृष्ण के आस पास एकत्र हो गये और हर्ष ध्वनि के साथ 'जय कृष्ण, जय वासुदेव' पुकार उठे। कितनों ने भूमि पर गिरकर साष्टांग दण्डवत् किया, कितनों ने उसके चरण छुए। वह जो उनका तारण हार था!

शोकभरी दृष्टि से कृष्ण ने सभी को निहारा। कंस के रक्त से रंजित अपने हाथ को उसने ऊपर उठाया। सभी शान्त हो गये। "यह आनन्द और उल्लास का समय नहीं है। सभी शान्तिपूर्वक कृपया अपने-अपने घर जायँ। यह शोक का समय है। हमारे राजा की मृत्यु हो गयी है!" उसने कहा।

कृष्ण की गम्भीर वाणी सुनकर सभी ने अपने-अपने घर की राह ली। बाद में कृष्ण, वहाँ गया जहाँ नन्द गोपों के साथ खड़े थे।

"हे तात्, मुझे मेरे इस कृत्य के लिए क्षमा करने की कृपा करें!" वसुदेव के चरणों में गिरते हुए कृष्ण ने कहा। "दुष्ट का अन्त एक दिन होना ही चाहिए, विधि का विधान ही ऐसा है।"

'कृष्ण, मेरे प्रिय पुत्र!' भावाविभोर हो नन्द ने कहा, "शत्-शत् वर्ष जियो मेरे गोविन्द!" कृष्ण के मित्र उद्धव ने उसे धोती निकालकर पहनने के लिए दी। मामा की मृत्यु पर शोक-चिन्ह के लिए धोती ही पहनना आवश्यक था। ऐसे अवसर पर अन्य प्रकार के वस्त्र धारण करना वर्जित था।

"पिताजी आप अपने शिविर में पधारें, मैं मामा की अन्त्येष्टि क्रिया पूरी करके शीघ्र ही आता हूँ," कृष्ण ने कहा।

उत्तल पर से उतर कर देवकी अन्तरा-वेदी पर उपस्थित हुई और उसकी दृष्टि जहाँ कृष्ण खड़ा था, वहीं स्थिर सी हो गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाणूर ने जब कृष्ण को युद्ध के लिए ललकारा था तो उसका हृदय भय से प्रकंपित हो उठा था। जब से वह सुहागन बनी, तब से ही, पच्चीस वर्षों जैसी लम्बी अवधि, उसने शोक-शैय्या पर ही काट दी। अब तक उस का सम्पूर्ण जीवन दुख की छाया में ही पला था। कितनी क्रूरता से उसकी सन्तानों का वध होता रहा, इसके स्मरण मात्र से वह भय से विचलित हो उठी। अत्याचारी भाई के भय से ही उसके दो पुत्र विचित्र परिस्थितियों में पल रहे थे। 'मेरा आठवां पुत्र एक दिन अवश्य मेरे पास आयगा,' इसी विश्वास पर वह अब तक जी रही थी।

साँस रोक कर वह इसी घड़ी की प्रतीक्षा कर रही थी। क्षण मात्र के लिए भी अपने हृदय से यह बात वह नहीं निकाल सकी थी। नन्हें से पालने में नन्हीं सी स्वर्ण प्रतिमा को वह झुलाती रहती, वह प्रतिमा ही जैसे उसके विश्वास का आधार-स्तम्भ हो। वह उस प्रतिमा को ही जीता-जागता कृष्ण समझती। उसे लगता,.... जैसे उसके साथ वह हँस रहा है, खेल रहा है, ठनगन कर रहा है, अपनी सुकोमल भुजाओं में उसे लपेट लेने का प्रयास कर रहा है और बालसुलभ क्रोध के पश्चात् उसकी गोद में छुप रहा है... उसके जीवन-जगत में बस दो ही प्राणी थे, एक वह और दूसरा उसका लाडला कृष्ण। आशा की मिटती-उभरती ज्योति में वह किसी अटल विश्वास के सहारे प्रतीक्षा कर रही थी कृष्ण के आने की।

उसे यह भी बताया गया था कि भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होने के पूर्व कृष्ण उसके पास नहीं आयेगा। ऐसा करने से उसके अनिष्ट की पूरी सम्भावना है। और इसलिए वह इस घड़ी की प्रतिक्षा सांस रोक कर करती रही थी।

यादव सरदारों के मध्य मतभेद की लपटें किस भयानकता से प्रज्ज्वलित हो रही हैं, यह बात उसके कुलगुरु आर्य गर्गाचार्य ने उसे बता दी थी। उसने तत्काल ही यह निश्चित कर लिया था कि अगर वह जीवित रहेगी तो मात्र अपने प्यारे पुत्र के लिए। अगर उसका भी बध हुआ तो भविष्यवाणी असत्य सिद्ध हो जायगी, तब उसके जीने का कोई अर्थ नहीं रह जायगा। अतः वह दृढ़प्रतिज्ञ हो गयी कि अगर उसके पुत्र का अनिष्ट हुआ तो वह अग्नि-स्नान करेगी। उसने यादव सरदारों को भी अपनी इस दृढ़ धारणा से अवगत करा दिया था।

किन्तु आज ..... वह .. उसका प्यारा पुत्र ....एक दूसरे के समक्ष थे...। प्रवेशद्वार से होकर आते हुए उसने देखा था उसे। और उसके पीछे आते हुए देखा था अपने सातवें पुत्र को भी, जो विश्व की दृष्टि में रोहिणी का पुत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ा। वह सलोनी सूरत उसके नेत्रों में नाच रही थी....सुवर्णमय वस्त्रों से अलंकृत, केशों में मोर-पंख खोंसे, विशाल कमल नेत्रों वाले, सौन्दर्य एवं लावण्य की अप्रतिम प्रतिमा के रूप में भुवन मोहिनी मुस्कान बिखेरते, जैसे उसने सभी का हृदय पलक मारते जीत लिया हो...ऐसे अपने पुत्र को आते हुए उसने देखा।

उसके बाद चाणूर आता है और मल्ल युद्ध के लिए उसे चुनौती देता है। भय से प्रकम्पित हृदय की गति को वह किसी प्रकार संभाल पाती है। उसे लगा जैसे उसके विश्वास के अचल पर्वत में दरारें पड़ रही हों। 'नहीं....नहीं! कुछ नहीं हो सकेगा'–यही उसका आठवां पुत्र था–अवतार पुरुष, परित्राता, उसका कुछ भी अनिष्ट नहीं हो सकता।

पुनः एक के बाद एक चमत्कार घटित होते गये। दुर्जेय चाणूर को किशोर कृष्ण न केवल भूमि पर धराशायी कर देता है, अपितु उसका संहार कर डालता है, दुष्ट कंस का केश पकड़ कर उसका शिरच्छेद कर देता है। भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होती है। उसका हृदय आनन्द और उल्लास से छलक उठता है, गत पच्चीस वर्षों में ऐसे आनन्द का अनुभव वह प्रथम बार कर रही थी, उसे लगा जैसे सारा प्रासाद आनन्द और उल्लास के सागर में तैर रहा है।

उसके कर्ण पुनः उसी ध्वनि से गूंज उठे, "जय कृष्ण! जय वासुदेव!" अपने पति के साथ उसे लिपटते हुए भी उसने देखा। आह! कितना सुखद समय था... पिता-पुत्र का आलिंगन! नवजात शिशु की अवस्था में ही नन्द के यहाँ पहुँचा आने के बाद आज प्रथम बार पिता-पुत्र एक दूसरे से इस प्रकार मिले थे।

अब वह लोगों से बातचीत कर रहा था। लोगों ने उसके लिए मार्ग दिया। शीघ्रता से वह अपनी दासियों के साथ उत्तल से उतर कर अन्तरावेदी पर आ खड़ी हुई। वह बड़ी अधीरता से प्रतीक्षा कर रही थी कि उसका लाल उसे कब देखता है। वह तो उसी की ओर आ रहा था। मार्ग में पालक पिता नन्द को उसने साष्टांग दण्डवत् किया। हाँ..वह उसी की ओर बढ़ रहा था...निश्चित रूप से उसके पग उधर ही बढ़ रहे थे...उसे देख कर कृष्ण एक हृदयहारी मुस्कान बिखर देता है। आह! कैसी मनोहर मुस्कान......ऐसी ही मुस्कान तो वह स्वप्न में देखा करती थी, क्षण भर के लिए भी उसे नहीं बिसरा सकी थी। वह आ पहुँचा था.....एक पग और आगे बढ़ते ही माँ की ममताभरी गोद में समा जायगा...उसके नेत्रों में उदधि उमड़ पड़ा और उसे ऐसा प्रतीत हुआ, मानों कृष्ण उसी में तैरता उसकी ओर बढ़ रहा है...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने अपनी लालायित भुजाओं को उन्मुख रूप से पसार दिया, और तब कृष्ण ने भी वैसा ही किया।

'माँ!' कह कर कृष्ण उससे लिपट गया। वह तो चित्रलिखित सी खड़ी थी। उसकी वाणी अवरुद्ध हो गयी। उसे मूर्छा सी आ गयी। कृष्ण ने उसे सहारा दिया।

वसुदेव के प्रासाद–प्रांगण में यादव सरदार एकत्र हुए। सभी ने सन्तोष की सांस ली। उसी समय गर्गाचार्य के साथ वसुदेव वहाँ पधारे।

कुछ समय पश्चात् आचार्य सांदीपनि भी वहाँ आ गये। कंस के राज अतिथि के रूप में आये अवन्ती के विन्द एवं अनुविन्द राजकुमारों के गुरुभार को उन्होंने स्वीकार कर लिया था। मुनिश्रेष्ठ वेद व्यास के आदेशानुसार कृष्ण एवं बलराम के साथ वे कुछ समय तक वृन्दावन में भी रहे थे। उसी समय दो यादव सरदारों के साथ प्रद्योत भी वहाँ आ पहुँचा। वह मथुरा में शान्ति-स्थापना के लिए अब तक प्रयत्नशील था।

'शूरश्रेष्ठ, हम इस समय बड़ी विकट परिस्थिति में पड़ गये हैं। हमारे विपरीत परिस्थिति इतनी द्रुतगति से बदलती जा रही है कि यदि हम अपने विरोधियों से अधिक गतिवान न हुए तो निश्चय ही मथुरा शत्रुओं के हाथ में चली जायगी,' वसुदेव को सम्बोधित करते हुए प्रद्योत ने कहा।

'मैं जानता हूँ', वसुदेव ने उत्तर दिया। 'हमारे कुछ अतिथि कंस के परम मित्र थे। निश्चय ही वे हमारे विपक्ष में हो जायेंगे।'

'बात इतनी ही नहीं है। मगध सम्राट जरासंघ अपने दामाद के वध का बदला लेने का अवश्य प्रयत्न करेगा। दोनों रानियाँ, अस्ति एवं प्राप्ति भी हमारे पक्ष में नहीं होंगी। हमारे मध्य अभी भी दो सहस्त्र मागधी सैनिक उपस्थित हैं। हम कह नहीं सकते कि, वे क्या करेंगे!'

'हमें शीघ्रता से इस दिशा में कुछ करना होगा। हमारे मध्य किसी भी प्रकार के मतभेद के लिए स्थान नहीं होना चाहिए', वसुदेव ने कहा।

'राजा उग्रसेन वयोवृद्ध हो चले हैं। हमें इसी समय किसी को अपना राजनेता चुन लेना चाहिए', प्रद्योत ने कहा।

कुछ यादव सरदारों को यह भी शंका हुई कि प्रद्योत स्वयं राजा बनने की इच्छा तो नहीं रखता।

'अभी इतनी शीघ्रता भी क्या है?' कुछ यादव सरदारों ने बल देते हुए कहा।

कुछ समय तक विचारमग्न रहने के बाद प्रद्योत के सुझाव पर वसुदेव ने अपनी सहमति प्रकट की। 'कंस के स्थान पर किसी को बैठना तो है ही। फिर इस कार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में विलम्ब क्यों किया जाय ? इससे हमारे शत्रुओं को भी उत्तर मिल जायगा।'

'आर्य गर्गाचार्य क्या सोच रहे हैं ?' प्रद्योत ने पूछा। 'मैं भी तुमसे सहमत हूँ,' गर्गाचार्य ने कहा।

'मथुरा के विनाश के लिए अवश्य षड़यन्त्र रचा जा रहा है। हमें शत्रुओं की चेष्टा को विफल करने के लिए शीघ्र ही शक्ति का संचय करना होगा।'

'किन्तु हमारा राजनेता कौन बनेगा ?' एक वरिष्ठ यादव सरदार ने पूछा। 'जिसमें सभी का सम्पूर्ण विश्वास हो, ऐसा होना चाहिए उसे।'

'शूरश्रेष्ठ वसुदेव ही हमारे राजनेता होने के अधिकारी हैं !' एक यादव ने सुझाव दिया।

'मेरा समस्त जीवन शोक-सरिता बन कर ही बहा है। मैं सदैव चिन्ता की चिता में जलता रहा हूँ। तुम सब जिसे चुनोगे, मैं उस की सदैव सहायता करूँगा। किन्तु मैं यह भार वहन नहीं कर सकता,' वसुदेव ने कहा।

'मैं तो समझता हूँ, इस दिशा में हमें शीघ्रता से किसी निर्णय पर पहुँच जाना चाहिए। हमें उन यादव सरदारों को वापस बुला लेना चाहिए, जो देश निष्कासित कर दिये गये हैं, अथवा जो कहीं और जा कर बस गये हैं। हमें उनके साथ संधि कर लेनी चाहिए।'

बहुत से लोग प्रद्योत को सशंकित दृष्टि से देखने लगे। वह भले ही कितना ही शक्तिशाली एवं कुशल क्यों न हो; किन्तु राजनेता के रूप में लोग उसे नहीं चाहते थे।

कृष्ण आकर अपने पिता के पार्श्व में बैठ गया। करबद्ध सभी ने उसका स्वागत किया। क्योंकि वह केवल सोलह वर्ष का किशोर ही नहीं, उन सब का तारणहार था।

'अब तक कहाँ थे कृष्ण ? मैं कब से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ,' वसुदेव ने कहा।

'माताजी को यहाँ लाने के पश्चात् मैं यह देखने चला गया कि मामा कंस की अन्त्येष्टि क्रिया उचित ढंग से की जा रही है या नहीं ?' कृष्ण ने उत्तर दिया।

'वसुदेव-पुत्र, हम सब का अभिवादन स्वीकार करो। निश्चय ही तुमने चमत्कारपूर्ण कार्य किया है।'

'मैं प्रसन्नता का अनुभव नहीं करता,' शोक से सर हिलाते हुए कृष्ण ने कहा। 'रानियों का करुणक्रन्दन मुझसे सहा नहीं जाता। मेरे मामा निश्चय ही एक सुन्दर और स्नेही पति थे। रानियों का हृदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदीर्ण हुआ जा रहा है!' कृष्ण ने शोकसंतप्त स्वर में कहा।

कुछ लोगों को कृष्ण के इस निबल स्वभाव पर आश्चर्य भी हुआ। उसने आगे कहा, 'अब उनका जीवन विषमय बन जायगा।' सभी शान्त भाव से कृष्ण की वाणी सुन रहे थे। 'लेकिन मैं क्या कर सकता था?' दुष्ट को उसकी दुष्टता का दुष्परिणाम भोगना ही पड़ता है। यह विधि का विधान है,' कृष्ण ने पुनः कहा।

कृष्ण के कुछ और कहने के पूर्व ही वयोवृद्ध एवं निर्बल उग्रसेन को साथ लेकर अक्रूर वहाँ पधारे। उनके पीछे-पीछे वज्र अन्धक को सहारा देते हुए बलराम भी पहुँचे। तीन दिन पूर्व ही कंस के आदेशानुसार वृत्रिघ्न ने अंधक को बड़ी निर्दयता से चोट पहुँचायी थी और अभी भी उनके घावों पर पट्टियाँ बंधी थीं। सभी ससम्मान खड़े हो गये। राजा उग्रसेन वसुदेव की बगल में बैठ गये। उनके पीछे अन्धक और अक्रूर बैठे। बलराम ने कृष्ण के पास आसन ग्रहण किया।

तभी बाह्य एवं आन्तरिक परिस्थितियों पर गम्भीरतापूर्वक विचार-विमर्ष होने लगा। घड़ी बीतती गयी। सभी परिस्थितियों पर सविस्तार मन्त्रणा हुई।

तभी वयोवृद्ध उग्रसेन यादवों को सम्बोधित करते हुए बोले, "मैं सब सुन चुका हूँ। मैं प्रद्योत से सहमत हूँ कि संकट की इस घड़ी में हमें किसी का नेतृत्व प्राप्त हो। मैं आपके विचारों से भी परिचित हो चुका हूँ। मैं वयोवृद्ध एवं शक्तिहीन हो चला। अपने जीवन का प्रमुख भाग मैंने कारागार की कोठरियों में बिताया और संसार के साथ मेरा सम्पर्क भी समाप्त सा हो गया है। मेरे एक पुत्र था, वह भी अब न रहा। मैं पुत्रविहीन बन गया हूँ। मैं कृष्ण को अपने पुत्र के रूप में अंगीकार करना चाहता हूँ और उसे ही राजा के रूप में अपना उत्तराधिकारी मानता हूँ।'

सभी ने इस सुझाव का हार्दिक स्वागत किया। वस्तुतः राजा ने सभी के हृदय की बात जान ली और सब की मनचाही बात कह दी।

वरिष्ठों की इस विचार-मन्त्रणा के समय शान्तभाव से कृष्ण बैठा रहा और उसका नाम आते ही सभी की दृष्टि कृष्ण की ओर उठ गयी; किन्तु बड़ी विनम्रता से वह सब की दृष्टि से बचने का प्रयास करने लगा।

सभी के मुखों से एक साथ 'साधु-साधु' (अति उत्तम) निकल गया।

करबद्ध, ससम्मान स्वर में कृष्ण ने कहा, 'राजन्, आपने मुझे बहुत बड़ा आदर प्रदान किया है, सम्भवतः विश्व में सर्वश्रेष्ठ आदर! क्योंकि मथुरा धरती का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मणि-मुकुट है। मैं इतना बड़ा उत्तरदायित्वपूर्ण भार सहन करने में समर्थ नहीं। मैं तो ग्वालसुलभ कार्यों को ही जानता हूँ। मैं राजा नहीं बन सकता।'

'नहीं, नहीं, पुत्र, तुम्हीं इसके लिए सर्वश्रेष्ठ पात्र हो।'

'हे यादवनाथ, मुझपर कृपा करें! मैं जानता हूँ, एक शासक में कौन से गुण होने चाहिए। जननायक, आप में ही वे सर्व गुण सन्निहित हैं और आप ही सभी यादवों को एकता के सूत्र में बांध रख सकते हैं। आप अत्यन्त जनप्रिय हैं। आप स्वयं राज-पद पर आसीन रहें। आपके निर्देशन में पूज्य पिताजी, काका अन्धक तथा प्रद्योत सभी भार संभाल लेंगे। और मैं सदैव आप की सेवा के लिए तत्पर रहूँगा। प्रथम हमें क्षत्रिय धर्म की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए, वेदों में पारंगत हो जाना चाहिए और युद्ध विद्या में निष्णात!'

दोनों भाई तथा उद्धव एक दूसरे के बगल में ही सो गये। अन्धकार में बलराम स्वतः हँसने लगा। उसका यह हास्य विचित्र था। पूर्णिमा के दिन वे मात्र ग्वालवाल थे और तीन दिन के भीतर ही युवराज बन गये। इतना ही नहीं, कृष्ण ने तो राजगद्दी भी अस्वीकार कर दी। सम्भवतः उसने ऐसा करके अपनी अज्ञानता का ही परिचय दिया है, किन्तु वह तो अति कुशाग्र बुद्धिवाला है। हो सकता है इतने बड़े उत्तरदायित्व को उसने समझ बूझ कर ही अस्वीकार कर दिया हो।

बलराम ने सोचा, ये तीन दिन विजय के दिन थे। और इसका श्रेय छोटे भाई को ही है। उसने भविष्वाणी को सत्य सिद्ध कर दिया। कृष्ण भगवान का अवतार है, इस बात को वह नहीं मानता था। किन्तु कृष्ण उसका लघु भ्राता है, वह भी कितना मधुर, कितना आज्ञाकारी, और कितना चतुर! वह प्रेम से विह्वल हो उठा और उसने कृष्ण को अपने अंक में समेट लिया।

कृष्ण ने अपने नेत्र खोले और सामने देखा। 'भाई कृष्ण, तुम विलक्षण हो,' बलराम ने कहा। 'क्योंकि मुझे तुम जैसा भाई जो मिला है!' कृष्ण ने धीरे से कहा।

और दोनों एक दूसरे को हृदय से चिपका कर निद्रा की गोद में निमग्न गये। [क्रमशः]

★

लेखक मित्रों से

निवेदन है कि अस्वीकृत रचनाओं की सूचना नहीं दी जा सकेगी, केवल स्वीकृत रचनाओं की सूचना एक महीने के भीतर तक चली जायेगी। केवल वही अस्वीकृत रचनाएँ लौटायी जा सकेंगी, जिनके साथ आवश्यक टिकट होगा।

—सम्पादक

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[जब भगवान......पृष्ठ १६ का शेष]

सीमाओं से सदा आगे गयी है, उन सितारों की तरह आगे गयी है, जो अपनी एकाकी प्रभामयता में विश्व-इतिहास को प्रकाशित कर रहे हैं। सृजन-सहकार में दो के मिलन के रहस्य के प्रति मेरे अलगाव की अनुभूति ने मुझे जीवन में महान आनन्द दिया। मैंने महसूस किया कि अन्ततः मैंने अपना धर्म पा लिया है, वह जो मानव-धर्म है, जिसमें, अनन्त मानवता में सीमित हो गया है और मेरे समीप आया है, मानो उसे मेरे प्रेम और सहयोग की ज़रूरत है।

बाद के दिनों में मेरे इस विचार ने मेरी कई कविताओं में अभिव्यक्ति पायी, और जिसे मैंने 'जीवन-देवता' से सम्बोधित किया:

" हे अन्तरतम,
मेरे अन्तर में आकर क्या तुम्हारी
सभी प्यास मिट गयी?
निष्ठुर पीड़ा सहकर दलित द्राक्षा के समान
अपने वक्ष को निचोड़कर
मैंने सुख दुःख की लाखों धाराओं में
पात्र भर कर तुम्हें दिया है।
कितने रंगों, कितनी गंधों
कितनी रागिणियों और कितने छंदों
को गूंथ-गूंथ कर तुम्हारी सुहाग-शैया
बुनी है–
वासनाओं के सोने को गला-गला कर
तुम्हारे क्षणिक खेल के लिए प्रतिदिन
मैंने की है
नित्य नव मूर्ति की रचना।
अपने आप ही मुझे कर लिया था वरण
न जाने किस आशा से।
क्या तुम्हें प्रीतिकर लगे हैं, हे जीवननाथ,
मेरी रात्रि और मेरे प्रभात–
मेरे स्वप्न, मेरे कर्म तुम्हारे एकान्त वास में?
वर्षा, शरद्, वसन्त, शीत में
ध्वनित हुए जो संगीत हृत् में
क्या तुमने उन्हें सुना है अकेले बैठकर
अपने सिंहासन पर?
हृदय-कुसुम को अंचल में चुनकर
क्या तुमने माला गूँथी है, और अपने
गले में पहनी है–
अपनी कल्पना में मेरे यौवन-वन में क्या
तुमने भ्रमण किया है?
मर्म में दोनों आँखें रखकर क्या देख
रहे हो प्रिय?
मेरे स्खलन, पतन और त्रुटिओं को
क्या क्षमा कर दिया?
पूजा-हीन दिन, सेवा-हीन रात
कितनी बार आकर लौट गये, नाथ–
निर्जन विपिन में अर्घ्य-कुसुम खिलकर
झर गये।
जिस सुर में बांधा है यह वीणा का तार
उतर गया है वह बार-बार–
हे कवि, तुम्हारी रची रागिणी क्या मैं
गा सकता हूँ
तुम्हारे कानन में सिंचन करने गया
और छाया में पड़ कर सो गया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब सन्ध्या-समय आँखों में अश्रु भर
लाया हूँ।
जितना सौन्दर्य, जितने गान, जितना प्राण
जागरण और निद्रा–
हे प्राणेश, जो कुछ मेरा था क्या अब
शेष हो गया ?
शिथिल हो गया है बाहों का बन्धन
मदविहीन हैं मेरे चुम्बन–
जीवन-उपवन में अभिसार निशा, क्या
आज भोर हो गया ?
कर दो भंग आज की सभा,
ले आओ नव रूप, ले आओ नव शोभा
मुझ चिर-पुरातन को नूतन कर ग्रहण
करो।
नूतन विवाह कर मुझे नवजीवन-डोर
में बाँधो ॥"

इससे आप समझ सकेंगे कि कितने अनजाने मैं उस प्रतीति से गुज़र गया, जिसे मैं जुलाई-दिन के एक अलस-क्षण में चूक जाता। यह वह दिन था, जब प्रात-मेघों ने पूर्वी क्षितिज को बोझिल कर दिया था और एक दुलराती छाया कम्पमान बाँसों की शाखाओं पर लेटी थी, जबकि बहुत से उल्लसित ग्रामीण लड़कों का समूह किनारे से एक पुरानी मछली पकड़नेवाली नैया को ज़ोर-शोर के साथ खींच रहा था; मैं नहीं बता सकता कैसे उस पल विचारों की एक अप्रत्याशित शृंखला मेरे मन से उस अजनबी कारवाँ की तरह आर-पार गुज़र गयी, जो किसी अनजाने राज्य का ख़ज़ाना ढोये लिये जा रहा है। ●

अपर गैंजेज सुगर मिल्स लिमिटेड
दि अवध सुगर मिल्स लिमिटेड
न्यू इण्डिया सुगर मिल्स लिमिटेड
दि न्यू स्वदेशी सुगर मिल्स लिमिटेड
भारत सुगर मिल्स लिमिटेड
गोबिन्द सुगर मिल्स लिमिटेड
★
विशुद्ध उज्ज्वल चीनी के निर्माता
★
मैनेजिंग एजेन्ट्स
दि काटन एजेन्ट्स प्राइवेट लिमिटेड
इंडस्ट्री हाउस बम्बई–१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के. एस. रामस्वामी

पशुपतिनाथ की यात्रा

भारतीय विद्या भवन द्वारा सन् १९५७ में शुरू किया गया शिविर आयोजन का दायरा बढ़ा कर अब उसे सांस्कृतिक विकास यात्रा का रूप दे दिया गया है, जिसमें, प्राध्यापकों, विद्वानों तथा विद्यार्थियों की मंडली देश के महत्वपूर्ण तीर्थों और विकास केन्द्रों को देखने जाती है। इस योजना के अन्तर्गत 'प्रथम यात्रा' का विवरण लेख के रूप में क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है।

कुलपति श्री मुन्शीजी के प्रेरणादायक निर्देशन में भारतीय विद्याभवन प्रारम्भ से ही आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के समन्वय के साथ भारतीय संस्कृति का पुनः उद्धार करने का प्रयत्न करता आ रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य भारतीय संस्कृति को पुनः एकता के सूत्र में पिरोना है और इसके लिए 'भारती' के अतिरिक्त कई अन्य पत्रिकाएँ विद्याभवन से प्रकाशित की जाती हैं और समय-समय पर पुस्तकों का प्रकाशन भी किया जाता है। भवन की २४ शाखाएँ बम्बई व भारत के अन्य नगरों में सफलतापूर्वक कार्य कर रही हैं। भवन के सहयोगियों और मित्रों के ज्ञानलाभ के उद्देश्य से भवन ने पूर्णतः शिक्षा संबंधी प्रयोग के आधार पर इस 'सांस्कृतिक विकास यात्रा' का आयोजन किया है।

साँची का स्तूप

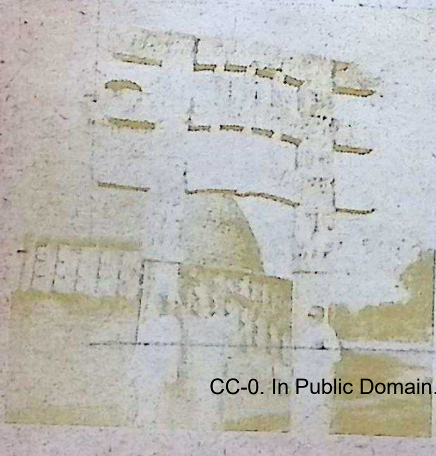

इस तरह की प्रथम यात्रा बम्बई से २० जनवरी, १९६४ को प्रारम्भ हुई और २४ फ़रवरी को समाप्त हुई। इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य नेपाल में काठमांडू स्थित भगवान पशुपतिनाथ मंदिर का दर्शन करना और योजनानुसार महाशिवरात्रि का पवित्र दिवस (११ फरवरी) भी हमें वहीं बिताना था। कुलपति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

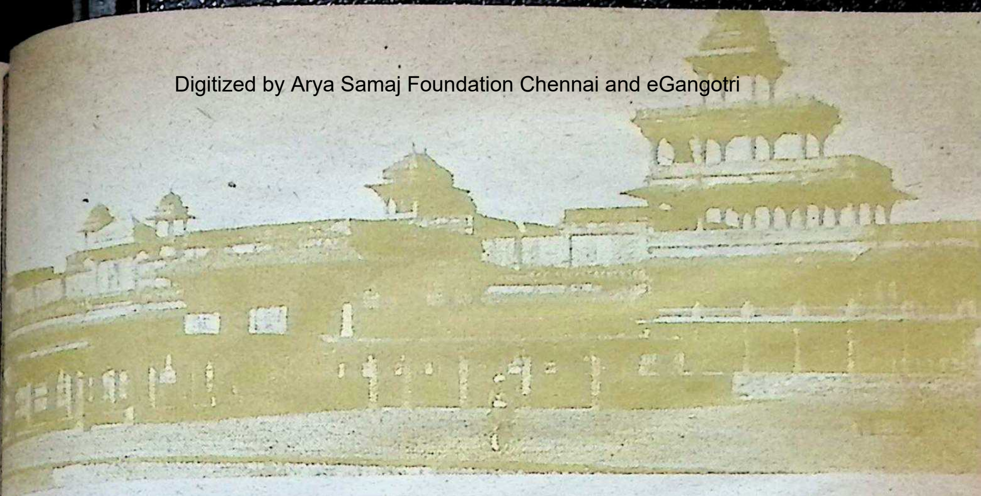

फतहपुर सीकरी के भव्य महल

मुंशीजी के कहे अनुसार मुझे यात्रा का वर्णन बराबर 'भारती' में भेजते रहना था। इस लेखमाला की प्रथम कड़ी में यात्रा के पहले कुछ दिनों का वर्णन है, जिनमें हमने भारत के मुख्य तीर्थ-स्थानों और आर्थिक व ऐतिहासिक महत्त्व के नगरों की यात्रा की।

यात्रा प्रारम्भ करने से पूर्व २० जनवरी को प्रातःकाल भवन में गणपति-होम का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री मुंशी ने ऐसी यात्राओं का महत्त्व बताते हुए यात्रियों के समक्ष भाषण दिया। दिन में पौने तीन बजे विक्टोरिया टर्मिनस से एक स्पेशल यात्रा बोगी में हम पंजाब मेल द्वारा रवाना हुए। अगले दिन सवेरे भोपाल में हमारी बोगी ट्रेन से अलग कर दी गयी। भोपाल में, जो पहले भोपाल राज्य की राजधानी था और अब मध्यप्रदेश की राजधानी है, हैवी इलेक्ट्रिकल्स का सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित विशाल कारखाना है, जहाँ विभिन्न पंच-वर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत प्रारम्भ की गयी विभिन्न विद्युत योजनाओं की पूर्ति के लिए भारी विद्युत का सामान तैयार किया जाता है। यहाँ हजारों की संख्या में नवयुवक वैज्ञानिकों और टैक्नीशियनों को काम करते देख हमें बहुत प्रसन्नता और गर्व का अनुभव हुआ। यह एक नये भारत का दर्शन था। यहाँ पावर ट्रान्सफॉरमर्स, कैपेसिटर्स, स्विच-गियर्स, ट्रैक्शन मोटर्स तथा अन्य इसी तरह के सामानों का उत्पादन होता है। योजनानुसार चौथी योजना के अन्तर्गत कुल उत्पादन प्रतिवर्ष ३२ करोड़ रुपये तक पहुँचा देने का लक्ष्य है। इस फैक्टरी की अनुमानित पूंजीलागत लगभग ६२ करोड़ रुपये है, जिसमें नया नगर खड़ा करने संबंधी १० करोड़ रुपये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

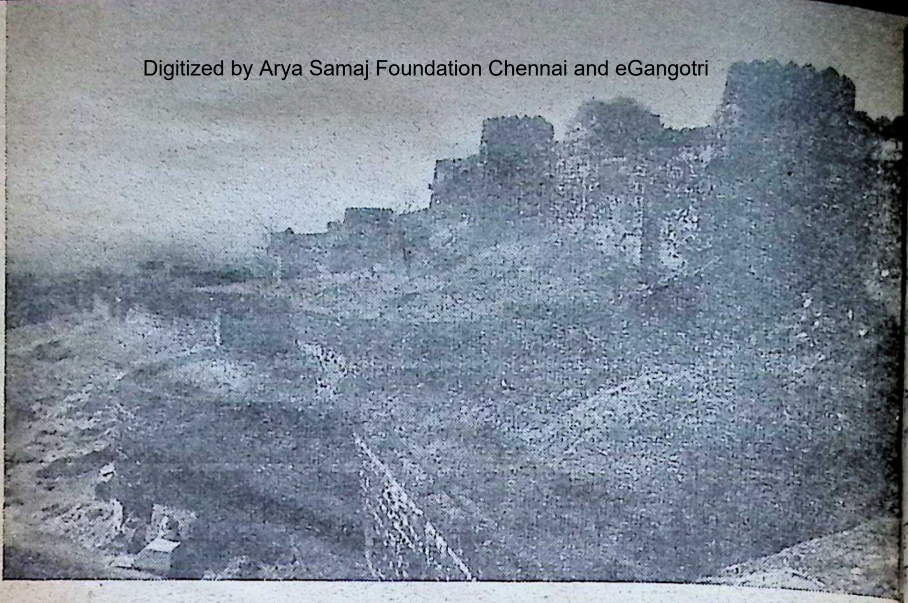

झांसी का ऐतिहासिक दुर्ग

भी सम्मिलित हैं। इस तरह के तीन कारखाने अब हरद्वार, तिरुचिरापल्ली तथा हैदराबाद में बनाये जा रहे हैं।

हैवी इलेक्ट्रिकल्स देखने के बाद यात्रा पार्टी सांची पहुँची, जो भोपाल से लगभग ४६ मील दूर है। सांची भारतीय बौद्धवाद की मूर्तिकला का अन्यतम स्थान है जहाँ की मूर्तिकला (Sculptures) न केवल भारत में बल्कि विश्व में अपना विशेष स्थान रखती है। यहाँ की मूर्तिकला पूर्णत: ऐतिहासिक है और भारतीय कलाकारों के लिए उच्च रचनात्मक ज्ञान का और बहुमूल्य अनुभव का प्रकाशन करती है। कोई भी व्यक्ति जब सांची स्थित स्तूपों को ध्यान से देखता है, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इनपर थोड़ा-बहुत विदेशी मूर्तिकला का, खास तौर पर ग्रीककला का प्रभाव अवश्य पड़ा है। बीसों आक्रमणों के बावजूद सांची के ये प्राचीन स्मारक चिह्न अपने को सुरक्षित रखे हुए हैं और उनकी कला और इतिहास ने पिछले दो हज़ार वर्षों से हमारे सामने एक अटूट परम्परा क़ायम रखी है। भगवान बुद्ध से संबंधित बुद्धगया, सारनाथ, लुम्बिनी तथा कुशिनारा आदि स्थानों ने एक पवित्र प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर लिया है। किन्तु सांची को केवल ऐतिहासिक महत्त्व ही प्राप्त हुआ है, धार्मिक नहीं। यहाँ का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माणिक इतिहास अशोक के काल से रम्भ होता है। सांची के मूर्त्तिकारों अपनी अद्वितीय कला का परिचय वान बुद्ध के जीवन को चार य भागों में साकार करके दिया। ये हैं--(१) सिद्धार्थ का जन्म (२) त्व की प्राप्ति (३) प्रथम उपदेश था (४) महा-परिनिर्वाण।

यात्रा के तीसरे दिन हम झांसी से उतरे और हमने झांसी का किला देखा। झांसी का उल्लेख होते ही हमारे सामने रानी लक्ष्मीबाई का चित्र आ जाता है। झांसी के किले ने अपने जीवन में बुन्देलों, मुगलों, मराठों और अंग्रेजों का उत्थान और पतन होते देखा है।

झांसी के बाद हम आगरा पहुंचे। आगरा का नाम लेते ही ताजमहल आँखों में झलकने लगता है। ताज की सुन्दरता और शान को शब्दों में प्रकट करना संभव नहीं है। संगमर्मर से बनी, कला की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट डिज़ाइन की यह इमारत संसार का एक आश्चर्य है। इसका निर्माण सम्राट शाहजहां ने अपनी प्रियतमा मुमताजमहल के मक़बरे के लिए करवाया था। कोई भी व्यक्ति जब ताजमहल को जानेवाले गेट में प्रवेश करता है, तो यह सोचे

न्यू इण्डिया

द्वारा

आप सदैव सुरक्षित हैं।

चाहे कैसा भी संकट या विशेष उत्तरदायित्त्व आपके ऊपर हो, **न्यू इण्डिया** की पॉलिसी आपकी रक्षा के लिए आपके साथ है। सभी प्रकार के जनरल बीमा के क्षेत्र में **न्यू इण्डिया** का प्रमुख स्थान है। सभी प्रकार के दावों को आसानी तथा शीघ्रतापूर्वक निबटाने के लिए **न्यू इण्डिया** प्रसिद्ध है।

अपनी सुरक्षा के लिए आप

न्यू इण्डिया

द्वारा बीमा कराइए

दी न्यू इण्डिया

एश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड,

महात्मा गांधी रोड, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिना नहीं रहता कि इस महान मक़बरे के विषय में वह विस्तृत रूप से कुछ नहीं जानता, भले ही वह इतिहास का विद्यार्थी रह चुका हो। अब जबकि ताज़ पुरातत्व विभाग के संरक्षण में हैं, मैं सोचता हूँ कि एक छोटा सा बोर्ड नियुक्त किया जाना चाहिए, जो इसे देखने आये लोगों को इसके बनानेवाले शिल्पियों के बारे में तथा इसकी लागत, निर्माण की अवधि आदि के बारे में प्रमाणिकरूप से कुछ बता सके। ऐसा करने से इसे देखने आनेवाले लोगों का बहुत हित होगा, जिन्हें छलने के लिए झूठी–सच्ची कहानी सुनानेवाले और अपने को गाइड कहने वाले लोग यहां चक्कर लगाते रहते हैं।

आगरा से यात्रा पार्टी फतेहपुर सीकरी पहुँची, जिसे अकबर ने अपनी राजधानी बनाने के उद्देश्य से बनवाया था। किन्तु इसके बन जाने के बाद यह पता चलने पर कि इस क्षेत्र में पानी की कमी है, उसने अपना विचार त्याग दिया था। यहाँ की शिल्पकला कुछ मायनों में ताजमहल से भी उत्कृष्ट मालुम हुई। यह देखकर दुख हुआ कि महल के आसपास का क्षेत्र बहुत गंदा है। शासन को इस ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए।

—क्रमशः

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टैंक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यु. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

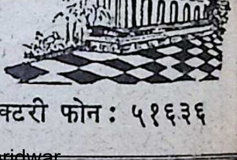

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२

फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[प्राण-शक्ति का प्रचण्ड सर्जक : पृष्ठ १३ का शेष]

काव्य के विकास को दृष्टि में रखते ए, उन सीमाओं को पहचानना ज़रूरी जिनमें शेक्सपीयर ने अपना काम ग्या था, ताकि उसकी पहुँच के मुकाम ठीक तरह चीन्हा जा सके। लेकिन यं उसके काम के भीतर, उसकी मोमाएँ कोई मानी नहीं रखतीं। उसके निश्चित दोष, और उसकी भूलें भी सके दर्जे को कम नहीं करतीं, क्योंकि सके संस्पर्श में शक्ति की एक ऐसी चूक दिव्यता है, जो उसकी त्रुटियों ौर दोषों को नगण्य कर देती है। ग्ने हिस्से में पड़नेवाली एलिज़ाबेथन ग की अनगढ़ताओं, उग्रताओं और तिरंजनाओं को उसने बहुत कुछ सौम्य ना दिया है। उसके कृतित्व में ये सारी ीज़ें शक्ति के दुर्दान्त प्रवाह में बह ाती हैं, और उसकी सृजन-योजना ी सामान्य महिमा के भीतर तिरोधान ा जाती हैं। उसकी सृजना कभी-कभी र्थ गद्यात्मक अभिव्यक्तियों की ओर ी मुड़ी है, उसने यदा-कदा घिसी-घिसाई ौर बुरी कविता भी लिखी है; लेकिन ो चीज़ें उसकी सामर्थ्य की विफलता की ूचक नहीं। इन दोषों को हम वैसे ही वीकार लेते हैं, जैसे किसी महान व्यक्तित्व की भयंकर भूलों को हम वीकार लेते हैं। उसकी सीमाएँ उसकी ामर्थ्य की शर्त में से ही प्रसूत होती हैं। निश्चय ही वह कोई सार्वभौमिक सत्य का साक्षात्कारी नहीं था, जैसा कि उसके मूर्ति पूजक उसे मानना चाह सकते हैं। क्योंकि मानव की जीवनमूलक आत्मा में भी कई ऐसी वस्तुएँ हैं, जहाँ तक शेक्सपीयर की पहुँच नहीं थी। पर इस कोटि और सामर्थ्य के जीवन-विज़न को, ऐसी तीव्र काव्यात्मक अभिव्यक्ति के उन्मेष द्वारा, ऐसा आश्चर्यकारी, विविधमुखी और अमर जीवन्तता से परिपूर्ण स्वरूप प्रदान करना ही अपने आप में काव्यात्मक प्रतिभा की एक अप्रतिम उपलब्धि है। यह नितान्त संभव है कि भविष्य गहिरतर, सूक्ष्मतर और गभीरतर, प्राण-वत्ता से आपूरित नाट्य-प्रयोजन और नाट्य-स्वरूप का आविष्कार करे, जिसका सपना भी किसी शेक्सपीयर ने न देखा हो। पर जब तक शेक्सपीयर के समान ही शक्ति, पकड़, विज़न की पूर्णता, और साक्षात्कारी वाणी की ज्वलन्तता के साथ, कोई कवि ऐसा महत्तर आविष्कार नहीं कर देता, तब तक शेक्सपीयर की प्रभुता अपने क्षेत्र में अक्षुण्ण रहेगी। उसके नाम पर जो यह दावा किया जाता है, कि विश्व के महान कवियों के बीच वह सर्वोपरि था, इस दावे को चुनौती दी जा सकती है। निश्चय ही वह महानतम कवि नहीं था। पर नाट्य-कवियों के बीच शेक्सपीयर शीर्षस्थानीय कवि था, इस तथ्य पर कोई प्रश्न चिह्न नहीं आँका जा सकता।

अनु. ऐन्द्रिला

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहमदाबाद में भवन के नये सभागृह का शिलान्यास

'साम्यवाद के विरुद्ध आज का संघर्ष धर्म एवं अधर्म के बीच का संघर्ष है। साम्यवाद भौतिकवाद का अन्तिम लक्ष्य है, ऐसा मैं मानता हूँ।' उक्त शब्द भूतपूर्व केन्द्रीय वित्त मन्त्री श्री मोरारजी देसाई ने गत १७ अप्रैल को अहमदाबाद में भारतीय विद्या भवन के पटेल जेठालाल अमृतलाल सभागृह का शिलान्यास करते हुए कहा।

उन्होंने आगे अपने भाषण में कहा कि भारतीय विद्या भवन की सांस्कृतिक उपासना एवं उसके लिए सतत प्रयत्नशील भवन के कुलपति श्री कन्हैयालाल मुन्शी का जीवन्त पुरुषार्थ एक आदर्श उपस्थित करता है। उन्होंने आगे कहा कि भारतीय संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार तथा उसे नयी परिस्थिति के अनुरूप प्राणवान बनाये रखने का जो प्रयास भारतीय विद्या भवन कर रहा है, उसका मैं हृदय से स्वागत करता हूँ।

प्रारम्भ में भवन के कुलपति श्री मुन्शी जी ने इस शुभकार्य के लिए दाताओं का आभार माना और बताया कि भवन मात्र शिक्षण संस्था ही नहीं, उसका मुख्य उद्देश्य भारतीय संस्कृति के सनातन मूल्यों को सुदृढ़ करते हुए उसकी प्रेरणा से अपने जीवन को ऊर्ध्वगामी करना है।

स्मरण रहे भवन की इस इमारत के लिए अहमदाबाद नगरपालिका ने साबरमती के तट पर ५०८३ वर्ग गज भूमि प्रदान की है। इस इमारत की लागत लगभग आठ लाख रु. होगी, जिसमें अब तक जेठालाल अमृतलाल ट्रस्ट की ओर से ५ लाख रु. तथा कुबेरदास ट्रस्ट की ओर से १ लाख रु. प्राप्त हो चुका है। आर्टस् और सायन्स कालेज के लिए श्री नवनीतलाल रणछोड़दास तथा श्री दीपक नवनीतलाल की ओर से तीन लाख रु. की घोषणा की गयी है। समारोह की अध्यक्षता गुजरात के राज्यपाल ने की।

मुनि श्री बुद्धमल का प्रवचन

अणुव्रत आन्दोलन के प्रचारक कवि, साहित्यकार एवं प्रकाण्ड पंडित मुनि श्री बुद्धमल जी ने गत १६ अप्रैल को भवन में 'साहित्य एवं अध्यात्म' विषय पर भाषण दिया। उन्होंने अपने प्रवचन में बताया कि आचरणरहित ज्ञान अर्थहीन है। कर्तव्य ही श्रेष्ठ वस्तु है। कर्म और ज्ञान का समन्वय आवश्यक है। ज्ञान और कर्तव्य गाड़ी के दो पहिये हैं। शुरू में कुलपति श्री मुन्शी जी ने मुनि जी तथा उनके साथियों का स्वागत किया। अन्त में श्री शान्तिलाल तोलाट ने आभार प्रकट किया।

श्री भाईशंकर पुरोहित

भारतीय विद्या भवन की सरल संस्कृत परीक्षा विभाग के मन्त्री श्री भाईशंकर पुरोहित ने ३ अप्रैल से १७ अप्रैल १९६४ तक भवन द्वारा संचालित विविध केन्द्रों का दौरा किया। केन्द्रों में होनेवाली परीक्षाओं का उन्होंने निरीक्षण किया। उन्होंने कई स्थानों पर भाषण भी दिये और स्कूलों तथा कालेजों में संस्कृत के अध्ययन की अनिवार्यता पर बल दिया। ★

सु. रामकृष्णन द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोटी-छोटी बचत को एक बड़ी पूँजी

बनाने के लिए

अपने रुपये बैंक ऑफ़ बरोडा में जमा कीजिए!

सेविंग्स एकाउण्ट पर **3%** ब्याज

फ़िक्स्ड डिपॉज़िट पर मियाद के अनुसार **5%** तक ब्याज

बैंक ऑफ़ बरोडा में सेविंग्स एकाउण्ट खोलने के लिए सिर्फ़ एक ही रुपया काफ़ी है। अपनी बचत की छोटी-छोटी रक़में जमा करने से आपको अपनी मनपसन्द चीज़ें ख़रीदने के लिए रुपये बचाने का सुनहरा मौक़ा मिलता है। इसके अलावा इस एकाउण्ट से संबंधित सभी सुविधाएँ मिलती हैं। तीन प्रतिशत ब्याज हासिल कीजिए और बिना नोटिस दिये साल में १०४ बार अपनी रक़म में से चाहे जितने रुपये निकालिए। ये सभी सुविधाएँ १४ साल और इससे ज़्यादा उम्र के नवयुवकों के लिए भी हैं।

बैंक ऑफ़ बरोडा के फ़िक्स्ड डिपॉज़िट एकाउण्ट को तो आप एक ठोस आमदनी का ज़रिया बना सकते हैं। इस एकाउण्ट में आप एक से पाँच साल और इससे भी ज़्यादा मियाद के लिए रक़म जमा कर सकते हैं। ब्याज साल में दो बार—३० जून और ३१ दिसम्बर को—दिया जाता है। ५ साल और इससे ज़्यादा मियाद पर ऊँची दर का ब्याज ५% प्रति वर्ष दिया जाता है।

फ़्री मेल ट्रांस्फ़र:
अगर आप चाहें तो अपने एकाउण्ट में से बैंक ऑफ़ बरोडा की किसी भी भारतीय शाखा के खातेदार के एकाउण्ट में दिन में एक बार रुपये ट्रांस्फ़र कर सकते हैं। बड़ी शाखाओं में रु. १०,००० तक और छोटी शाखाओं में रु. २,००० तक ट्रांस्फ़र बिना चार्ज लगाये किया जाता है। बैंक की इस मुफ़्त सेवा का लाभ अवश्य उठाइए।

जहाँ हमारी शाखाएँ हैं, वहाँ के चेक, डिविडेण्ड वारंट, हुंडी इत्यादि की रक़म हम अपने ग्राहकों के लिए मुफ़्त वसूल करते हैं।

पूरी जानकारी के लिए बैंक ऑफ़ बरोडा की अपनी पासवाली शाखा में पधारिए।

'आइए हम आपकी मदद करें...' नामक पुस्तिका मँगाइए। हम आपकी क्या-क्या सेवाएँ कर सकते हैं, यह इसमें विस्तारपूर्वक बताया गया है।

दि बैंक ऑफ़ बरोडा लि.

(संस्थापित: १९०८) प्रधान कार्यालय: बड़ौदा

भारत में २०० से अधिक शाखाओं के अलावा पूर्वी पाकिस्तान, लन्दन, पूर्वी अफ़्रीका, फ़ीजी द्वीपों तथा मोरिशस में भी शाखाएँ हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिरते बाल

आसानीसे रोके जा सकते हैं।

आप केवल यही करें कि........

आप जिस हेअर ऑईलका इस्तेमाल करते हैं, उसमें अथवा आधा किलो खोपरेके तेलमें या एरण्डीके तेलमें झरण की एक बोतल मिलालें। इस तरहसे बना हुआ विशेष गुणकारी तेल, हररोज इस्तेमाल करके बाल गिरनेकी मुसिबतसे आप छुटकारा पाईये! इतनाही नहीं बल्की आप फिरसे घने और लम्बे बाल प्राप्त किजीये।

झरण

घने और लम्बे बाल के लिए ....

सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स:- सुगंध घर, अहमदाबाद-१.

एजेन्ट्स:- सी. नरोतम एन्ड कं. बम्बई-२.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७ मई १९६४
३० न. पै.

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

भारती
[भवन की पत्रिका]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ८ : अंक १८] [१७ मई १९६४

भारती

संस्थापक :
कन्हैयालाल मुन्शी

प्रबन्ध सम्पादक :
जयन्तकृष्ण ह. दवे

प्रकाशक :
सु. रामकृष्णन्

सम्पादक :
वीरेन्द्रकुमार जैन

सहयोगी :
श्रीराम मिश्र
ओंकारनाथ शर्मा
रामलाल शुक्ल

कार्यालय :
भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड,
बम्बई ७

प्रति अंक : ३० न.पै.
वार्षिक : ६.५० न.पै.
अर्धवार्षिक: ३.५० न.पै

ऋक्‌वेद : प्रार्थना ३
कन्हैयालाल मुन्शी : कुलपति का पत्र ५
— : भगवान बुद्ध यों बोले ११
प्रमोद कुमार चटर्जी : श्री रमण महर्षि का दर्शन: एक साक्षात् अनुभव १२
वीरेन्द्र कुमार जैन : द्यावा की डायना : पृथ्वी का गड़रिया १४
डॉ. रामदरश मिश्र : दो कविताएं १७
डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल : कला का रसास्वादन १८
जोएल गोल्डस्मिथ : हमारा शरीर भी अमर हो सकता है २२
प्रेमलता वर्मा : दो कविताएँ २६
विजेन्द्र : अनी गीत २७
आचार्य विनोबा भावे : ईश्वर है भी, नहीं भी २८
चुन्नीलाल मड़िया : हरबंस कुँवर ३०
प्रभात कुमार मित्तल : श्री नेहरू के बाद कौन: एक असंगत प्रश्न ३३
पेशन्स स्ट्रॉङ्ग : सपनों का घर ३६
हरिमोहन शर्मा : अन्तरिक्ष युग के पौराणिक देवता ३९
राजेन्द्र अनुरागी : आसमानी रोटी ४१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगामी ३१ मई के अंक में

- वैज्ञानिक भौतिकवाद की स्थायी उपलब्धियाँ: श्री अरविन्द
- आज की विघटित, विपथगामी मानवता : डॉ. एलेक्सी केरल
- महाकाल का वैज्ञानिक महत्त्व : पं. सूर्यनारायण व्यास
- साहित्यकार और पत्नी : विष्णु प्रभाकर
- सौन्दर्य का रूपान्तर : गणपतिराय पुरोहित
- कुछ नूतन फ्रेंच कविताएँ : पियरे रेवरेडी
- अमंगल तिरिया : सुमंगला धरणी: शैलेश मटियानी
- भारतीय साहित्य और पश्चिम: वसंत कुमार जैन

एन्द्रिला द्वारा प्रस्तुत : वैज्ञानिक प्रयोगशाला में जीवन तत्व का निर्माण निकट ४२
लक्ष्मी शंकर व्यास : हिमालय के योगी: स्वामी शिवानन्द ४७
कन्हैयालाल मुन्शी : कृष्णावतार ५०
अनिलकुमार : जागृत शक्तिपीठ : दन्तेवाड़ा ५८
के. एस. रामस्वामी : पशुपति नाथ की यात्रा ६६
जनक दवे : प्रसन्नमुखी प्रतिभा के धनी: डॉ. हरिवल्लभ भायाणी ७०

इस अंक के सज्जाकार :

श्री कमलाक्ष शेनॉय, अमृता भारती

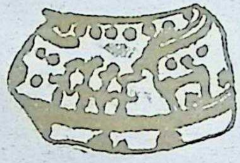

आवरण-चित्र :

वन-कन्या

चित्रकार :

कौशिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती

भवन की पत्रिका

आगामी विश्व विकास का सूचक :

जीवन, साहित्य और संस्कृति का पाक्षिक

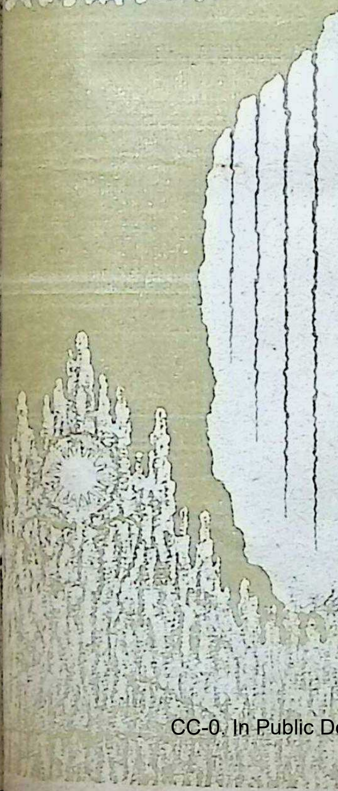

प्रार्थना

सोम ! गीर्भिष्ट्वा वयं,

वर्धयामो वचोविदः ।

सुमृडीको न आविश ॥

हे सोम ! हम वाग्मी अपनी वाणियों द्वारा तेरा कीर्तिगान करते हैं । तुम सुखदायी होकर हमारे अन्दर प्रविष्ट होओ ।

ऋक् — १.९१.११ :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति का पत्र

जीवन साहित्य तथा संस्कृति से संबंधित

- इस बार जब नयी दिल्ली को देखा
- राजनीतिक वायु-मण्डल
- जो कभी विधान गृह था

भारतीय विद्या भवन,
चौपाटी रोड, बंबई,
१७ मई १९६४

मेरे युवा मित्र,

महीनों बाद मैंने नयी दिल्ली में एक पखवाड़ा गुज़ारा। सामान्यतः लोग विभिन्न उद्देश्यों को लेकर राजधानी में जाते हैं। उनका सम्बन्ध राजनीति या आज्ञापत्रों, व्यापार या अन्य जलते प्रश्नों से हो सकता है। मगर मैं कुछ थोड़े से अपवादों में था। मैं दिल्ली की अनुकूल आबोहवा में विश्राम की ख़ातिर गया था।

इस प्रवास में मैं बहुत ही कम बाहर निकला। मैं घंटों सोया रहता और खाली समय में ऐसे अनेक मित्रों से मिलता जिनका जीवन विभिन्न ढर्रों पर चल रहा था। उनकी बातचीत से मैं नयी दिल्ली के तात्कालिक राजनैतिक वातावरण के प्रति अपनी धारणाएँ बना सका।

नयी दिल्ली की राजनैतिक आबोहवा किसी परिवर्तन की प्रत्याशा से बोझिल हो गयी है। किसी को यह स्पष्ट मालूम नहीं है कि वह परिवर्तन क्या होगा और कब आयेगा? लेकिन वे सब महसूस करते हैं कि वह आ रहा है।

पहले मौकों पर, बातचीत का मुख्य विषय, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मनुष्यों और वस्तुओं के प्रति प्रधानमंत्री की प्रतिक्रियाओं के इर्दगिर्द ही चक्कर काटता रहता था। यह बहुत स्वाभाविक भी है, क्योंकि किसी दीर्घकाय मूर्ति की तरह वे नयी दिल्ली को छाये हुए हैं। वे एक ऐसी स्थिर धुरी हैं जिससे आन्तरिक राजनीति और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

म्बद्ध सभी मामले जुड़े हुए हैं।

इस बार का विषय भिन्न था, जिसमें यादातर मित्रों की दिलचस्पी थी। धानमंत्री के बारे में उनकी यह निश्चिति ो कि अब वे घटनाचक्रों की पतवार ो थामने में समर्थ नहीं हो रहे हैं, गोकि उम्र और अस्वास्थ्य के सभी उपद्रवों प्रति अविचल खड़े रहने का प्रयत्न र रहे हैं। कुछ ने कहा, वे सुधार पर , दूसरों ने कहा, ऐसा नहीं है।

कुछ लोगों का कहना था कि सत्ता अब ी उनके हाथ में है। लेकिन ज़्यादा- र व्यक्तियों का यह विश्वास था कि धे उत्तरदायित्व से प्राप्त होनेवाली ता और पहल के बिना दूसरे लोग नके नाम पर और उनका लबादा ओढ़ र बोल रहे हैं।

नेपोलियन तृतीय, हिन्डेनबर्ग और सीडेण्ट विलसन के समय में यही स्थितियाँ ी, जिनसे इतिहास जाननेवाले भलीप्रकार रिचित होंगे। देश ऐसी हर स्थिति में सी तेजस्वी नेतृत्व के अभाव के कारण कसान उठाता रहा है।

हम हिन्दुओं के यहाँ आश्रम-व्यवस्था : जब शरीर वृद्धावस्था के आगमन ी सूचना देता है, मनुष्य वानप्रस्थ ले ता है और क्रियाशील जीवन से अव- श ग्रहण कर लेता है। इस व्यवस्था पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। लेकिन यह एक पुरातन ज्ञान है और डाइनामिक युग के हम जैसे व्यक्तियों के लिए इस पर विचार करने की आव- श्यकता नहीं रह गयी है।

'कामराज योजना' प्रायः नहीं के बराबर ही सफल हुई है। कांग्रेस में शासन की भावना को जागरूक करने में यह विफल हुई है; और न ही इसने मिशन की भावना को जगाया है। कुछ दृष्टियों से तो इससे कुछ चीजें और भी बदतर हो गयी हैं; खासतौर पर इस मानी में कि प्रादेशिक सरकारों को अन- र्गल रूप से पार्टी हाइ कमाण्ड के मातहत कर दिया गया है।

तो भी, इसमें एक अच्छाई है। इसने तीन अच्छे आदमियों—लालबहादुर शास्त्री, गुलजारीलाल नन्दा और कामराज नादर— को एक बड़े उत्तरदायित्व की स्थिति में डाल दिया है। सम्भवतः एक सम्मि- लित नेतृत्व पंडितजी की उपस्थिति और उनकी प्रसन्न स्वीकृति के साथ सामने आ रहा है।

यह परिवर्तन अच्छे के लिए साबित होगा या नहीं, यह उस पहलू और शक्ति पर निर्भर करेगा जिसे देश की कठिना- इयों को सामने रखते हुए, जो निश्चय ही उपेक्षणीय नहीं है, यह सम्मिलित नेतृत्व विकसित करेगा।

पूर्ण स्वास्थ्य के समय भी, कठिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थितियों के प्रति पंडितजी का नेतृत्व हिचकिचाहटपूर्ण रहा है। जो शक्ति, आत्मविश्वास और मिशन की भावना हममें गांधी जी और सरदार पटेल के जीवनकाल में थी, उनके इस रुख ने राष्ट्र को उससे वंचित कर दिया है।

पंडितजी अपनी ऐतिहासिक स्थिति और जन मानस की कल्पना पर अपनी सम्मोहक प्रभुता के कारण इस भावना का उच्छेद करने में समर्थ हो सके। जो भी हो, अब जो कोई उनका स्थान लेता है, उसे नयी स्थितियों से जूझने के लिए लोगों को जुटाना होगा—यह एक बहुत ही कठिन काम है जो हमारे नेता राजनीतिज्ञों में सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति की साधन-सम्पन्नता का परीक्षण करेगा।

कठिनाइयाँ बहुत हैं, जो उम्मीदवारी के इस वातावरण में उत्कण्ठा का और जोड़ देती हैं।

कांग्रेस में अन्दरूनी कलह है, और देश में विभिन्न दलों में झगड़े फसाद हैं।

हिन्द-पाकिस्तान के सम्बन्ध इस वातावरण में विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ में श्री छागला की महान कूटनीतिपूर्ण विजय के बाद भी, इस सत्य की अवहेलना नहीं की जा सकती कि संकटकालीन स्थिति में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की ईमानदारी के बारे में पहले से कुछ नहीं कहा जा सकता। मुठभेड़ करने के लिए हर एक राष्ट्र की अपनी कठिनाइयाँ होती हैं; समय पर कठिनाइयाँ घटती बढ़ती रहती हैं और हरबार राष्ट्र को अपने फ़ायदे के लिए अपने तरीके से युद्धनीति या कपट नीति को अपनाना पड़ता है।

पिछले वर्ष लगातार सामूहिक प्रदर्शनों का जो दौर साम्यवादी दल ने चलाया उसके पीछे एक षड़यंत्री आशय से भरी चाल काम करती रही। यह प्रदर्शन एक सामूहिक दबाव को बढ़ाने की दिशा में एक सुयोजित अभियान था, ताकि ठीक समय आने पर यह दबाव कांग्रेस के लिए और देश की स्थिरता के लिए एक चुनौती बनकर खड़ा हो जाए।

जब भी यह दबाव आयेगा और कांग्रेस इसका मुकाबला करने में विफल होगी तो यह स्थिति अत्यन्त घातक हो जायेगी। क्योंकि तब कांग्रेस के वामपक्षी तत्त्व सत्ता हथियाने के लिए साम्यवादी सहायता का उपयोग करने को तैयार हो जायेंगे, और अन्ततः साम्यवादी स्वयं उनसे सत्ता हथिया लेंगे।

और, हर समय हमारी सरहदों पर आक्रमणकारी चीन की भयानक उपस्थिति के मुकाबले में हमें जबर्दस्त ताक़त और प्रखर कूटनीति की जरूरत होगी ताकि सम्भावित संघर्ष को रोका जा सके।

○ ○ ○

इस बार की दिल्ली यात्रा में पिछली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ारी यात्राओं से अधिक दिल्ली में होने ाले परिवर्तन मेरी निगाह में आये। १९३८ की नयी दिल्ली की मेरे मन ें बड़ी स्पष्ट स्मृतियाँ हैं। तब बम्बई ांत के एक मंत्री के नाते "इंडियन काँसिल ऑफ एग्रीकल्चर रिसर्च" की एक मीटिंग ें मैं शरीक होने गया था जिसका सभा-तित्व तब के एग्रीकल्चरल मेम्बर सर ागदीश प्रसाद कर रहे थे। उस अवसर र एक रात काफी देर हो जाने पर मेरे ाजवान श्री एम. सी. मेहता और मैं क्रेटेरिएट के सामने के उस चौक के ौन्दर्य का मजा लेने निकले जिसे अब विजय चौक' कहा जाता है। रात की उस ामोश घड़ी में जब सारा यातायात बन्द ा चुका था, चौक आलीशान रोशनी से ागमगा रहा था, फब्बारे उड़ रहे थे, ाइस रीगल लॉज—जो अब राष्ट्रपति वन है—का गुम्बद दूर पर भव्यता से सर ाये खड़ा था; तब मुझे महसूस हुआ ा कि वह बरतानवी सत्ता का एक शान-र स्मारक था, जो कि आने वाले कुछ ाों में उस सत्ता का प्रतीक नहीं रह ने वाला था।

१४ अगस्त १९४७ की मध्यरात्रि मुझे द आ रही है। कान्स्टीट्यूएन्ट एसेम्बली ब्रिटेन ने भारत को सत्ता हस्तान्तरित ा थी। पंडितजी के लाक्षणिक शब्दों कहें तो, 'जब दुनिया उस आधी रात में सोयी पड़ी थी तब भारत नये जीवन और स्वतन्त्रा के बीच जागा था।'

फिर एक दूसरे अवसर पर, ३० जनवरी १९४८ को मैंने दिल्ली की सड़कों को शोक-सन्तप्त जनसमुदाय से उमड़ते देखा था जो—गांधीजी की शवयात्रा का अनुसरण कर रहा था। फिर मुझे २६ जनवरी १९५० का वह आनन्दभरा अवसर याद आ रहा है जिस दिन भारतीय गणतन्त्र की स्थापना हुई थी।

तब से, दिल्ली की रौनक और उसके मरतबे में काफी वृद्धि हुई है। मीलों की दूरियों तक खुशनुमा घरों से बसे हुए उपनगर उठ खड़े हो रहे हैं। जहाँ कभी विस्तृत प्रांगणों में छोटी-छोटी कचहरियों के मकान थे, वहाँ अब सरकारी दफ़्तरों की भव्य इमारतें उठ रही हैं। विज्ञान-भवन अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का एक सीमा-चिह्न है। आलीशान चाणक्यपुरी का निर्माण हुआ है, जहाँ विभिन्न राष्ट्रों की लाक्षणिक वास्तुकलाओं के निदर्शन एक जगह पुंजीभूत हुए हैं।

जिन सीमाचिह्नों से कभी मेरा सम्बन्ध रहा था, वे या तो खत्म हो चुके हैं, या खत्म होने की राह पर हैं। क्वीन विक्टोरिया रोड के जिस इलाके में मैं कभी रहा था, वह गायब हो गया है। मेरे ज़माने में जो खाद्य-मन्त्रालय कुछ कॉटेजनुमा मकानों में चलता था, उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए अब एक भव्य भवन खड़ा हो गया है।

इस बार की अपनी यात्रा में जब मैंने विधान-भवन को भूमिसात् हुए देखा तो मुझे बड़ी कसकभरी पीड़ा हुई। मेरी स्मृति उन पुराने दिनों में लौट गयी, जब उसके हॉल में कई कई दिनों तक कान्स्टीट्यूएन्ट एसेम्बली के सदस्यों के बीच वैधानिक लड़ाइयाँ लड़ी जातीं थीं, और उसके बाद प्राथमिक निर्णय लिये जाते थे।

जब मैं भूसात् विधान भवन के उस मुकाम से गुज़रा, तो मेरे मन के भीतर सरदार पटेल, पुरुषोत्तमदास टण्डन, गोपालस्वामी अयंगार, अल्लादी कृष्ण-स्वामी अय्यर, गोविंदवल्लभ पंत और उन अनेक मित्रों की छाया-मूर्तियां चुपचाप गुजर गयीं, जिनके साथ गरमागरम बहसतलब मामलों पर बातचीत करते मैंने घंटों गुजारे थे।

सबसे सरगर्म लड़ाई इस बात पर हुई थी कि सम्पत्ति के अधिकार को मौलिक अधिकार मानकर उसे विधान में सम्मि-लित किया जाए या नहीं।

एक विचार-प्रणाली यह मानती थी कि सम्पत्ति की धारणा बदलती रहती है और उससे सम्बन्धित अधिकारों को पार्लियामेण्ट के निर्बन्ध निर्णय पर छोड़ दिया जाना चाहिए। दूसरी मान्यता, जिसके पक्ष में मैं भी था, दृढ़तापूर्वक यह महसूस करती थी कि एक स्थायी प्रजा-तंत्र के लिए, सम्पत्ति का बुनियादी अधि-कार आवश्यक था और उसको अमान्य करना तानाशाही सरकार का मार्ग मुक्त करना होगा।

अनेक उतार-चढ़ावों के साथ कई दिनों तक बहस चलति रही। तब के अर्थमंत्री की बात अन्तिम शब्द के रूप में सामने आयी। उन्होंने कहा कि विधान की ओर से सम्पत्ति के अधिकार को हटा दिये जाने पर यदि अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ-जगत में यह धारणा बनती है कि भारत सम्पत्ति के अधिकारों का आदर नहीं करता, तो वे अर्थ-मंत्रित्व का दायित्व नहीं सम्हाल सकेंगे। आखिर एक समझौते के हल पर पहुँचा गया और उसने विधान की उस इकतीसवीं धारा का रूप धारण किया जैसी कि वह १९५० के विधान में मौलिक रूप से विद्यमान थी।

पंडित जी दूसरी विचार-प्रणाली के थ। ज्यों ही सरदार का नियंत्रणकारी हाथ उठ गया, तो वैधानिक संशोधनों द्वारा साम्पत्तिक अधिकार को उसकी कार्यकारिता से वंचित कर दिया गया।

दूसरा मसला जिस पर कई हफ़्ते बहस चली, वह था हिन्दी को राज्य-भाषा बनाने के बारे में। कई-कई दिन इस पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ादविवाद होते रहे, और कई मौकों र इस प्रश्न पर लोकसभा समान रूप विभाजित हो गयी । लेकिन अन्त में वल बहुमत से विधानसभा द्वारा एक ल स्वीकार किया गया, जो अब विधान सत्रहवें भाग के रूप में विद्यमान है ।

एक कपोलकल्पित धारणा यह बना ी गयी है, कि हिन्दीभाषी प्रदेशों के दस्यों की प्रेरणा से विधान में इस ल को स्थान दिया गया था । लेकिन ार्थ में बात इससे ठीक उलटी थी । न्दी की लड़ाई का नेतृत्व करनेवालों लड़ाई में प्रमुख थे, डॉ. श्यामाप्रसाद खर्जी, श्री गोपालस्वामी अय्यंगर और स्वयं । हम तीनों ही अहिन्दीभाषी प्रदेशों थे । हम तीनों ही यह मानते थे कि अगर रत को एक होना है तो किसी भारतीय षा का राज्यभाषा के रूप में प्रतिष्ठित ना नितान्त अनिवार्य है ।

हमारी इन वैधानिक लड़ाइयों में एक का-फुलका मसला भी था । हमारे के नामकरण के बारे में एक जबर्दस्त द-विवाद हुआ; उसे 'भारत' कहा ये या 'इण्डिया' । अन्ततः एक समझौते इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया कि केवल डया न कह कर 'इण्डिया, जो भारत है' जाये । जब यह विवाद पार्टी के बीच रहा था तब अचानक ही एक विचित्र वितत्व रंगमंच पर अवतरित हुआ ।

एक सुहानी सांझ श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने हममें से कुछ लोगों को किन्हीं 'माता' से परिचित कराने के लिए अपने मकान पर आमन्त्रित किया । हम सब इस प्रत्याशा से गये थे कि वहाँ हम किसी वयोवृद्ध सन्यासिनी से मिलेंगे । लेकिन हमारे आश्चर्य की सीमा न रही जब वहाँ पहुँचकर हमने एक सुन्दर, सुगठित, भरावदार अवयवोंवाली सन्यासिनी तरुणी को देखा, जो शरीर पर मृगचर्म और पैर में लकड़ी की खड़ाऊँ पहने हुए थी और जिसे 'माता' कहकर हमसे परिचय कराया गया । एक दिव्य प्रेरणा से उन्मेषित पैगम्बर के आत्म-विश्वास के साथ वह अत्यन्त सुन्दर हिन्दी बोल रही थी । इस मुलाकात में उसके वाक्-चातुर्य को देखकर हममें से कुछ के तो पैर ही उखड़ गये । जब देश के नामकरण की बहस पार्टी की मीटिंगों में चल रही थी, तब यह माता हममें से कुछ लोगों के सतत सम्पर्क में रहीं और दिल्ली के एक उपनगर में उन्होंने इस प्रश्न को लेकर मरणान्तक अनशन भी किया । उनकी दलील यह थी कि यदि भारतवासी इतने अधःपतित हैं कि वे अपने देश को उसके सच्चे नाम 'भारत' से नहीं पुकार सकते तो बेहतर यही था कि वे ऐसे देश में जिन्दा न रहें ।

[शेष पृष्ठ १६ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र :
छाया दीक्षित

भगवान बुद्ध यों बोले

[भगवान की जन्म, ज्ञान. निर्वाण जयन्ती वैशाखी पूर्णिमा के उपलक्ष्य में]

एक साँझ भदन्त मालुंक्यपुत्त जब ध्यानमग्न थे, तो उनके मन में यह विचार आया :

भगवान बोधिसत्व ने कई महत्वपूर्ण प्रश्नों पर अपने विचार प्रकट नहीं किये है : और उठने पर उन प्रश्नों को प्रायः टाल दिया है। उन्होंने कभी यह स्पष्ट नहीं समझाया कि यह जगत शाश्वत है, या अ-शाश्वत है, अनन्त है या सान्त है; जीवन और शरीर एक ही वस्तु है, या दो भिन्न वस्तुएँ हैं; और सत्य को पा जानेवाला मृत्यु के बाद दूसरा जीवन धारण करता है या नहीं। मैं उनके पास जाऊँगा और उनके उत्तर प्राप्त करूँगा। यदि उनके उत्तर सन्तोषजनक नहीं होंगे, तो मैं भिक्खु का वेश त्यागकर, फिर से सामान्य जन हो जाऊँगा।

तब मालुंक्यपुत्त भगवान बोधिसत्व के पास गये और अपने सारे प्रश्न उनके सामने रखकर बोले कि यदि उन्हें सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलेंगे तो वे श्रमण-चर्या त्यागकर सामान्य जन हो जायेंगे।

उत्तर में भगवान बोले : "मालुंक्यपुत्त, क्या मैंने तुम्हें ऐसा कोई वचन दिया था कि यदि तुम मेरे शिष्य हो जाओगे, तो मैं तुम्हें यह बताऊँगा कि यह जगत शाश्वत है या अ-शाश्वत है, और इसी प्रकार के तुम्हारे अन्य सारे प्रश्नों के उत्तर दूंगा ?"

"नहीं, गौतम।"

"क्या कभी तुमने यह वचन माँगा था, कि यदि तुम मेरे अनुगत हो जाओगे, तो मुझे तुम्हारे इन सारे प्रश्नों के उत्तर देने होंगे ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं, प्रभु....।"

"तब यह स्पष्ट है कि न तो मैंने कोई वचन दिया था, और न तुमने ही ऐसी कोई माँग की थी, कि मेरे अनुगत होने के लिए तुम्हारी यह शर्त होगी, कि इन सारी बातों का समाधान मैं करूँ। और मालुंक्यपुत्त, यदि कोई मनुष्य शास्ता से कहे कि वह तब तक उनका अनुगत नहीं होगा, जब तक उसके प्रश्नों के उत्तर नहीं मिल जाते, तो शायद शास्ता से कोई उत्तर पाये बिना ही, उत्तर की प्रतीक्षा करते-करते ही वह मर जायेगा।

"उस मनुष्य की स्थिति ठीक वही है; जिसकी छाती में विष-बुझा तीर गहरा धँस गया है, और उसकी वेदना से वह छटपटाता रहा है। वह चिकित्सक और मित्रों को तीर नहीं निकालने देता है, और कहता है: 'पहले मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह तीर किसने मारा है; इसे मारनेवाला ब्राह्मण था या किसी और जाति का था। मैं उसका नाम, उसका कुल-गोत्र, उसकी ऊँचाई, उसका रंग-रूप, उसका निवास-स्थान जानना चाहूँगा। मैं जानना चाहूँगा कि उसका तीर बड़ा था या छोटा था। उसकी धनुष-प्रत्यंचा जूट की थी, बाँस की थी या ताँत की थी। उसके तीरों पर लगे पर गिद्ध के थे, कबूतर के थे या मोर के थे?....' और मौत का ग्रास बनने से पहले वह मनुष्य यह सब नहीं जान पायेगा, क्योंकि उसकी छाती में ज़हरीला तीर गड़ा है।

"उसी प्रकार, मालुंक्यपुत्त, कोई मनुष्य यह कहता है, कि वह शास्ता के अन्तर्गत तब तक उच्च-जीवन का अनुसरण नहीं करेगा, जब तक उसके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे दिया जाता, तो मौत का ग्रास बनने से पहले वह अपने प्रश्नों के उत्तर नहीं पा सकेगा।

"उच्च-जीवन का आधार नित्य और अनित्य के ज्ञान पर नहीं है। तुम्हें परेशान करनेवाले सारे ही प्रश्नों के मूल में तथ्य रूप से विद्यमान है—जन्म, जरा और मृत्यु। प्रश्नों का प्रश्न है—दुःख: और अभी, यहाँ, इसी क्षण उसका निराकरण करने के लिए ही मेरी उपदेश-वाणी है।

"जिन चीज़ों को तुम जानना चाहते हो, उनका प्रवचन मैंने नहीं किया है, क्योंकि उच्च जीवन के लिए वे आधारभूत नहीं हैं, और इसीसे असंगत हैं, अनावश्यक हैं। मैंने दुःख के मूल कारण पर प्रकाश डाला है, और उसके निराकरण का उपाय बताया है। एकमात्र यही वस्तु मनुष्य के लिए कल्याणकारी है, और उनके उच्च जीवन से संगति रखती है। केवल इसी राह से चलकर निर्वाण प्राप्त किया जा सकता है।...."

—चूल मालुंक्यसुत्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमोदकुमार चटर्जी

श्री रमण महर्षि का दर्शन : एक साक्षात् अनुभव

...उन्होंने सहायता की, केन्द्र को स्पर्श करके। सब, एकदम सहज, सरल हो गया। मेरा शरीर स्थिर हो गया, मैं केन्द्रस्थ हो गया, अपने 'मैं' को लेकर। क्रम से उर्ध्वगति प्राप्त हो गयीं।

भाषा भावप्रकाश का बहुत शक्तिशाली एवं सर्वोपरि माध्यम है; किन्तु अविनाश ने एक दिन बातों ही बातों में बताया कि उसने एक ऐसे व्यक्ति को पाया था जो भाषा का आश्रय न लेकर भी सब कुछ समझा, दिखा सकते थे।

अविनाश, मेरा बाल्यबन्धु, महर्षि रमण का भक्त-शिष्य है। मैं समझ गया, उसका इंगित किस ओर है; बोला,–"भगवान रमण की बात कह रहे हो ?"

उसने उत्साहित हो कर कहा,–"हाँ, वही तो।"

"कहो न भाई, उनकी कुछ बात सुनाओ।"

"बताता हूँ–" कहकर उसने आरम्भ कर दिया। "उन्होंने प्रारम्भ से ही एक ऐसी अवस्था को प्राप्त कर लिया था जिस के फलस्वरूप उन्हें योगशास्त्र अथवा भक्तिशास्त्र के मतानुसार किसी प्रकार भी साधना नहीं करनी पड़ी। उन्होंने स्वयं हमें परिष्कार भाव से समझा-दिखा दिया था और यह दृढ़ विश्वास प्रतिष्ठित कर दिया था कि जप आदि को लेकर साधना करना वास्तव में विपथ है, वास्तविक पथ को ढक देने का कौशलमात्र। यह सत्य, सिद्धि के पश्चात् इष्टलाभ हो जाय तभी जाना जा सकता है, उस से पूर्व नहीं।

"मुझे उनकी कृपा एक अद्भुत ढंग से प्राप्त हुई थी। पहले जिस दिन उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पास गया, देखा–वे बैठे हुए हैं। अनेक लोगों ने उन्हें घेर रखा है, ठीक ऐसा नहीं, बल्कि लोग उनके सामने बैठे हैं, यही कहना अधिक उपयुक्त होगा। किसी के मुख में बात नहीं; वे भी किसी से नहीं बोल रहे थे। एक ऐसा स्थान देख कर जहाँ से उन की ओर सीधा देखा जाय, मैं बैठ गया। जैसे ही बैठा उन्होंने मेरी ओर एक बार देख लिया। मेरे प्राणों में आनन्द की लहर सी दौड़ गयी, जैसे बिजली कौंध गयी हो–मैं मुग्ध हो गया। किन्तु इसके बाद उन्होंने फिर दृष्टि उठा कर नहीं देखा, न ही किसी के साथ बात की। स्थिर, समाहित अवस्था में जैसे थे, वैसे ही बैठे रहे।

"बैठे हुए व्यक्तियों में से कोई कोई बीच-बीच में धीमे स्वर में फुसफुसाकर बात भी कर लेता। मैं आसन पर बैठा, उन्हीं की ओर देख रहा था। क्रमशः मन में उठा,–मैं यहाँ क्या करने आया हूँ, ये तो बोलते ही नहीं, बात किये बिना किस प्रकार मन की बात जनाऊँगा। सोच रहा था–उठ जाऊँ कि नहीं? फिर विचार किया, थोड़ी देर और बैठकर देखता हूँ।

"अब तुम से यह कहने में मुझे तनिक भी संकोच नहीं कि मैं महात्मा रमण के पास ईश्वर-लाभ अथवा आत्मदर्शन का उद्देश्य लेकर नहीं गया था। गया था इसलिए कि, सब उन्हें सिद्ध महापुरुष कहते हैं–देखूँ वे कैसे हैं। कारण इससे पूर्व उस श्रेणी के किसी भी व्यक्ति से नहीं मिला था। यह भी तुम्हें बता दूँ कि इस से पहले मैं काशी में सांख्य, पातञ्जल, और वेदान्त का अध्ययन उत्तम रूप से कर चुका था,–इसलिए सृष्टि-रहस्य तो मेरा जाना ही हुआ था। जो मैं जानता हूँ, उस से अधिक और कौन जानेगा या बतलायेगा, इस प्रकार का अहङ्कार सर्वक्षण मन म जागृत रहता; यहाँ तक कि कोई कितना ही बड़ा साधु-संन्यासी, दण्डीस्वामी क्यों न हो, मुझ से अधिक

[शेष पृष्ठ ६६ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीरेन्द्रकुमार जैन

द्यावा की डायना : पृथ्वी का गड़रिया

उड़ते पंछियों की
पंख-पीछियाँ
आकाश में आँक गयीं
जो चित्रावलियाँ
उनमें मैंने किन्हीं
अगम शिखर-भवनों की
सीढ़ियाँ खुलती देखी हैं।

उछलते सागर की तरंगों ने
हवा में जो
बादलों के महल शिल्पित किये
उनकी वासिनी
चिर एकाकिनी
चिर प्रतीक्षायिनी
स्वप्न-कन्या के ज्योतिर्मय
पलंगों पर मैं सोया हूँ।

गगनगामी झाड़ों के शिखरों
और शाखा-तनियों में
जो अनन्तिनी
चुपचाप झूलती है
हवा के हिंडोलों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एण्डिमियॉन और डायना

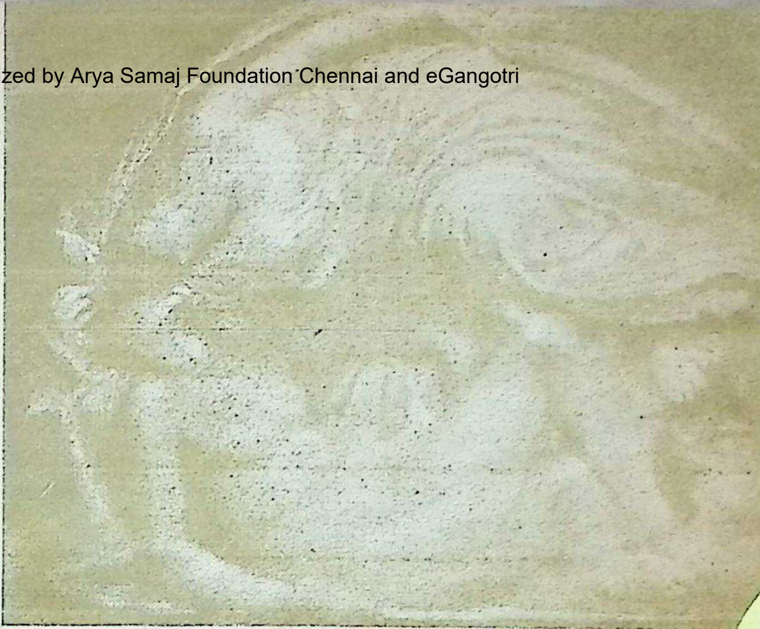

चित्र :
जी. एफ़. वॉट्स्

शरत की नीरव दुपहरिया में :
उसके संग
गलबाँही डाल मैं झूला हूँ।

कल रात जंगल में,
अपनी भेड़ें चरती छोड़, सोये
पृथ्वी के गड़रिये एण्डिमियॉन पर,
चुपचाप चन्द्राभ नीहार-सी झुक आयी
द्यावा की दिव्य कुमारी डायना ने,
जब उसकी स्वप्नलीन पलकें चूमीं...
...तो वह चुम्बन अचानक
मेरी आँखें खोल गया
ऐसी एक पृथ्वी की कोरों पर,
जिसका यह मोतिया जल-आलोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिर ईप्सित होकर भी
अजब अनपहचाना लगता है....

...और मैं देख रहा हूँ
खुली आँखों आज सुबह :
डायना का वह स्वप्न-चुम्बन–
एण्डिमियॉन की पृथ्वी-छाती के तटों पर
खिल पड़े असंख्य पीले गुलाबों में
खुलता-सा आकार लेता-सा।

★

[कुलपति का पत्र ......पृष्ठ ९ का शेष]

हममें से कुछ लोग समय समय पर उनसे मिलते रहते थे और वे हमें प्रेरणा के तगड़े डोज पिलाती रहतीं थीं जिनकी कि हमें जरूरत नहीं थी। जब 'भारत' जो इंडिया है' वाला हल कांग्रेस-पार्टी द्वारा स्वीकार कर लिया गया, तो कुछ मित्र मोसम्बी के रस का एक गिलास लेकर 'माता' को मृत्यु के मुख से बचाने के लिए उनके उपनगर वाले आवास पर झपट पड़े। मैं नहीं मानता कि उनके उपवास से हमारे निर्णय पर, या उनके स्वास्थ्य पर ही कोई खास असर पड़ा हो। हाँ, इतना ज़रूर हुआ कि इस तरह 'माता' ने किसी तरह सामयिक महत्व प्राप्त कर लिया।

जिस विधान-गृह में से निर्णय लिये गये थे, वह भूसात् हो चुका है, और कभी लौट कर नहीं आयेगा, और जिस भूमि पर वह विधान-गृह खड़ा था, वहाँ जब भी किसी नये भवन का निर्माण हो तो मैं आशा करता हूँ कि किसी की कल्पना में यह बात आसके कि उस भवन पर एक स्मारकशिला जड़ दी जाये, जिस पर ये शब्द अंकित हों; 'इस स्थान पर वैधानिक प्रश्नों पर प्राथमिक निर्णय लेने के लिए विधान सभा का कांग्रेसी दल एकत्रित हुआ था।'

आपका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

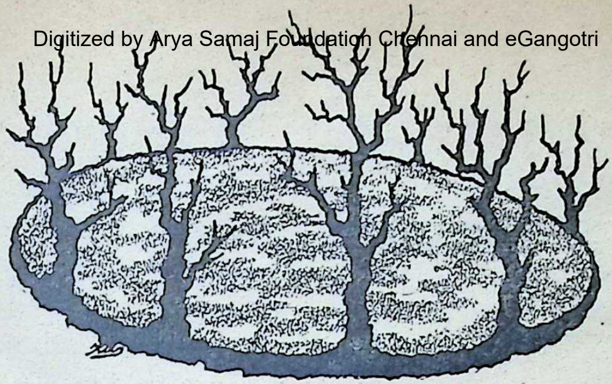

डॉ. रामदरश मिश्र

दो कविताएँ

पतझर की दोपहर

झरता है बाँस-वन
पीली पीली दोपहरी
ठहरी हैं राहें
ठहरी है चौमुहानी
पथ के किनारे
तीन चार सेमल खड़े हैं
उठाये हुए जलती वीरानी
सूने मैदान में देर से
नल एक
उगल रहा फफ्फ फफ्फ पानी।

वसंत का एक दिन

टहनी पर खिला
एक बड़ा सा पीला गुलाब
आभा से थरथराता हुआ
एक
एक
पंखड़ी
झरती
रही
शाम
तक
और अंत में जब कुछ नहीं रहा
तो एक अनुभूति गुलाब होने की
महकती हुई दिशाओं तक छा गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल

कला का रसास्वादन

कला के सृजन और उसके अनुभावन के अन्तरंग में जो प्रक्रिया काम करती है, उस पर यहाँ भारतीय विद्याओं के मनीषि डॉ. अग्रवाल ने मौलिक प्रकाश डाला है। उनका यह द्रष्टिकोण मननीय और चिन्तनीय है।

कला की वस्तु का निर्माण कलाकार के द्वारा होता है। कलात्मक वस्तु की रचना के लिए दो बातों की आवश्यकता है, (१) कलाकार के ध्यान की शक्ति और (२) उसका हस्तकौशल, अर्थात् कलाकार के मन और कर्म दोनों के सम्मिलन से कला की वस्तु की रचना होती है। कलात्मक वस्तु फोटोग्राफी का नाम नहीं ह। फोटो एक यान्त्रिक वस्तु है, जिसमें यन्त्र के द्वारा किसी बाह्य वस्तु की प्रतिकृति उतारी जाती है। किन्तु कलाकार जड़ यंत्र से कहीं अधिक महान् है। वह चेतन है और उसके भीतर चेतन मन का संस्मरण रहता है। मन की संस्मरणशील शक्ति ही कलाकार की विशेषता है। वह जितना सचेतन होता है, उतना ही उसका मन भी सशक्त होता है। मन की शक्ति का अर्थ है कलाकार की अंत:प्रेरणा। उस अंत:प्रेरणा का स्रोत कलाकार के भीतर ध्यान की शक्ति है। ध्यान की शक्ति को संस्कृत में समाधि कहते हैं। समाधि का तात्पर्य मनोबल या मन की विलक्षण एकाग्रता है, जिसके द्वारा कलाकार कला की इष्ट वस्तु के तात्त्विक स्वरूप का मन में विचार करता है। समाधि दो प्रकार की होती है। (१) दृढ़ या निरोध समाधि, जिसमें कलाकार इष्ट वस्तु या ध्येय वस्तु के साथ तन्मय हो जाता है। (२) शिथिल समाधि, जिसमें उसका ध्यान विचलित हो जाता है। दृढ़ समाधि को संकल्प और शिथिल समाधि को विकल्प कृत भी कहते हैं।

समाधि मन का अपूर्व बल है। इसकी मात्रा एवं शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न-भिन्न होती है। यों कहना चाहिए कि एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से भेंट मन की एकाग्रत शक्ति पर ही निर्भर है। किसी भी रचना के पूर्व मन में उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचना के स्वरूप का ध्यान आवश्यक है। जब हम ध्यान शब्द का प्रयोग करते हैं तो उसके साथ ही ध्येय वस्तु का होना आवश्यक है। ध्येय वस्तु का तात्पर्य उस रूप से है, जो प्रकृति में पहले से विद्यमान् है। यह वस्तु दो प्रकार की हो सकती है। (१) देवशिल्प, (२) मानुषी शिल्प। मानुषी शिल्प भी किसी दूसरे कलाकार द्वारा देव-शिल्प की अनुकृति ही होती है। अतएव कलाकार के लिए ध्यानगम्य वस्तु देव-शिल्प ही है। उत्तम कलाकार अपने मन में देवशिल्प का ही ध्यान करता है।

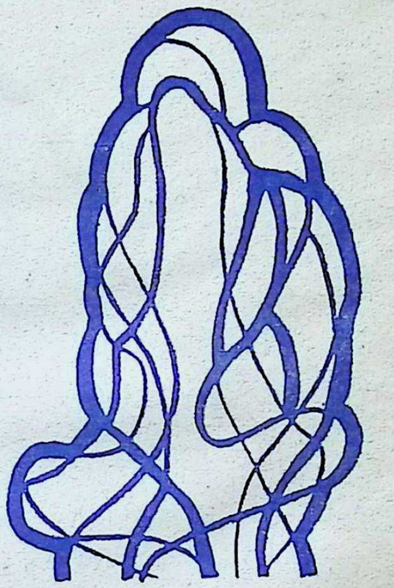

देवशिल्प क्या है ?

एक शब्द में कहना चाहें तो कह सकते हैं कि समस्त विश्व ही देवशिल्प है। यहाँ जो कुछ भी प्रकृति की रचना है, उन सबको ही देवशिल्प कह सकते हैं। समस्त प्राकृतिक रचना शिल्प है, इसका शिल्पी कोई देवात्मा पुरुष है, उसे ही वैज्ञानिक परिभाषा में प्राकृतिक सत्य कहते हैं। यह समस्त प्रकृति शिल्पात्मक कृतियों से भरी पड़ी है। उन्हें मूर्त-रूप भी कहा जाता है। प्रकृति में जितने मूर्त रूप या देवशिल्प हैं, उन्हीं की अनुकृति से मानुषी शिल्प की रचना होती है। इसका अर्थ यह है कि मानुषी शिल्प के नाना रूपों को रचनेवाला शिल्पी प्राकृतिक रूपों को अपने मन में लाता है और अपने ध्यान की शक्ति से उसकी प्रतिध्वनि या प्रतिबिम्ब अपने भीतर लाता है। जब वह ऐसा करता है तो देवशिल्प उसके चित्त में प्रतिबिम्बित हो जाता है। अर्थात् उसके चित्त में उनका चित्र बन जाता है। इस प्रकार की प्रतिबिम्बग्रहण क्रिया को आभास कहते हैं। आभास का अर्थ है झलकना या प्रतिबिम्बित होना। यह एक बड़ी प्रक्रिया है। इसके अनुसार सारा विश्व या प्राकृतिक जगत् व्यक्ति के चित्त में झलकता है। कोई भी व्यक्ति इस क्रिया के बिना नहीं रह सकता, जब हम संसार में हैं तो संसार के रूपों का प्रतिबिम्ब हमारे मन पर अवश्य पड़ता है। इसे यों समझना चाहिए कि हमारा चित्त चित्रण करने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाला एक दर्पण है। वाह्य की मूर्तियों को या मूर्तरूपों को बिम्ब कहना चाहिए। उनकी छाया या झलक व्यक्ति के चित्त पर पड़ती है। वह प्रतिबिम्ब कहलाता है। उसे ही आभास कहते हैं। कलाकार के चित्त पर, बाह्य जगत् के पदार्थों का जो प्रतिबिम्ब पड़ता है, उसकी संज्ञा आभास है। अभास की तीव्रता और शुद्धता चित्त की शुद्धि और तीव्र ध्यानशक्ति पर निर्भर है। इसे ही मन की पूर्णता कहा जाता है। साधारणत: यह शक्ति सभी में होती है, किन्तु कवि और कलाकार में आभास की शक्ति की मात्रा बहुत अधिक होती है। अर्थात् उनके ध्यान की शक्ति या क्षमता अत्यन्त उत्कट होती है। यह शक्ति जिसमें जितनी अधिक होती है, उसीके अनुसार उसके मन में प्रतिबिम्ब या आभास का स्वरूप भी सूक्ष्म और व्यापक होता है। इसीके कारण कवि का काव्य उत्तम, मध्यम और निम्न कोटियों में बंट जाता है। उसी शक्ति के कारण कलाकर की कृति भी तीन प्रकार की हो जाती है। (१) उत्तम कला वह है, जिसमें रस की मात्रा अत्यधिक हो अर्थात् कवि या कलाकार जब रस के स्रोत तक अत्यन्त निकट सान्निध्य प्राप्त कर लेता है, तब उसके काव्य या कृति में भी रस तत्त्व अधिक मात्रा में आ जाता है। किसी भी कलाकृति को देखकर यह सहज जाना जा सकता है कि उस कला की उस कृति में देव-शिल्प का आभास कितना तीव्र या सूक्ष्म है। मनुष्य जहां-जहां जाता है उसका चित्त उसके साथ रहता है। संसार के समस्त व्यवहार में चित्त ही प्रधान कारण है। चित्त एक दर्पण के समान है, उसमें अनेक दृश्यवस्तुओं की छाया पड़ती रहती है। कलाकार के चित्त में बाह्य मूर्तरूपों का जो प्रतिबिंब पड़ता है, वही उसका जगत् है। उसकी कला के लिए वही शय्या है। इसलिए एक ही प्राकृतिक संसार के भिन्न-भिन्न चित्र कलाकार की कृतियों में आते हैं। सूर्य, चन्द्र, आकाश, वन, अरण्य, समुद्र, पशु, पक्षी, प्रकृति में यद्यपि समान हैं, किन्तु कलाकार की कलात्मक कृति चित्र या शिल्प में उनका अंकन या चित्रण भिन्न-भिन्न प्रकार से होता है। कहीं सौन्दर्य और स्वाभाविकता, सकुंजन की विभिन्नता और कलात्मक पूर्णता होती है। जो सहृदय है, वही कलाकार की इस शक्ति को तुरन्त पहचान लेता है। भारतीय सौन्दर्य तत्त्व के समीक्षात्मक सिद्धान्त की विवेचना करते हुए आचार्यों ने कलाकार की इस क्षमता को सबसे मुख्य माना है और शक्ति नाम दिया है। शक्ति का अर्थ है कवि या कलाकार की ईश्वरप्रदत्त प्रतिभा अर्थात् उसके ध्यान की अपूर्व एकाग्रता जिसके द्वारा वह देवशिल्प का अपने मन में प्रतिबिम्बरूप धारण करके उन्हें अपने कला में उतारता है या अभिव्यक्त करता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ उत्तम एसीसी उत्पादन

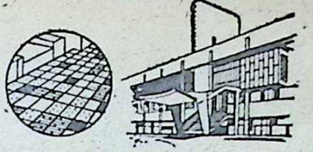

सिल्विक्रीट सफ़ेद सीमेंट
फ़र्शों और वाहरी तथा भीतरी सजावट के लिए बहुत ही वढ़िया है।

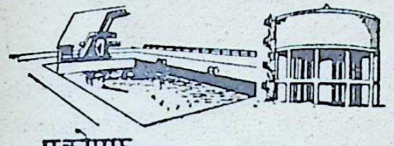

एकोप्रूफ़
सीमेंट को पानी के प्रति सुरक्षित बनानेवाला पदार्थ जिसका इस्तेमाल छतों, पानी की टंकियों, स्विमिंग पूल्स वगैरह मे किया जा सकता है।

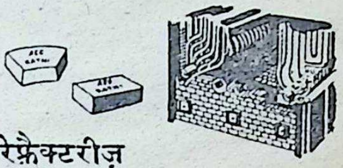

रिफ़ैक्टरीज़
अत्यधिक परिमाण में एल्युमिना मिली हुई फ़ायरब्रिक्स जो लोहा व इस्पात उद्योग तथा सीमेंट, ताँवा, काँच और ऐसे ही दूसरे उद्योगों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त हैं।

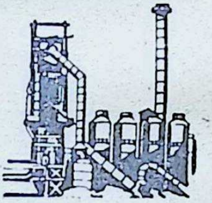

एकोसेट-५०
तेज़ गरमी के प्रति सुरक्षित रहनेवाला सीमेंट, जो सभी प्रकार के भट्ठों के लिए उपयोगी है।

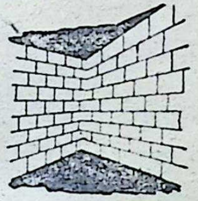

एकोसिड
तेज़ावों और रसायनों का मुक़ाबला करनेवाला सीमेंट।

एसीसी
...उत्तम उत्पादनों का प्रतीक

इन जगहों पर माल फ़ौरन मिल सकता है:
दि सीमेंट मार्केटिंग कंपनी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड
बम्बई • अहमदाबाद • बंगलोर • कलकत्ता • कोइम्बत्तूर • नयी दिल्ली
इन्दौर • कानपुर • मद्रास • पटना • सिकन्दराबाद
दि एसोसिएटेड सीमेंट कंपनीज़ लिमिटेड
दि सीमेंट मार्केटिंग कंपनी ऑफ़ इंडिया लिमिटेड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोएल गोल्डस्मिथ

हमारा शरीर भी अमर हो सकता है

"भगवान मेरे रूप की आत्मा और चेतना है । भगवान वैयक्तिक रूप से मेरे आकार में प्रकट होकर, जो कुछ मेरा है, उस सबका निर्माण करता है। भगवान मेरा जीवन है और इसीलिए मैं अमर हूँ – इस क्षण भी अमर हूँ, क्योंकि भगवान मेरी देह का सार है। मेरा शरीर तक अमर और आत्मस्वरूप है। मेरा शरीर रक्त और मांस नहीं है, जैसा कि यह दिखायी देता है। मेरा शरीर उतना ही आध्यात्मिक और अमर है जितना मेरा जीवन, जो भगवान है।"

"भगवान, जो मेरी सत्ता की दिव्य चेतना है! भगवान, जो मेरी सत्ता का आत्मा है! भगवान, जो मेरी सत्ता का धर्म है! भगवान, जो मेरी सत्ता का सार है–सब रूपों का सार है! भगवान, जो विश्व का सर्जक-हेतु है, मेरी सत्ता का धर्म है। भगवान, जो सार है, सब रूपों, सब रचनाओं का धर्म है। भगवान जो सार है, धर्म है, हेतु है, यहाँ तक कि सब परिणामों का रूप है! भगवान, जो सार है, धर्म है, सब रूपों का शाश्वत जीवन है। भगवान अर्थात् जीवन उसके अपने रूप से अलग नहीं किया जा सकता; रूप जो मैं हूँ।

भगवान मेरे रूप की आत्मा और चेतना है। भगवान, वैयक्तिक रूप से मेरे आकार में प्रकट होकर, जो कुछ मेरा है उस सबका निर्माण करता है। भगवान मेरा जीवन है और इसीलिए मैं अमर हूँ–इस क्षण भी अमर हूँ। क्योंकि भगवान मेरी देह का सार है, मेरा शरीर तक अमर और आत्मस्वरूप है। मेरा शरीर रक्त और मांस नहीं है जैसा कि यह दिखायी देता है। मेरा शरीर उतना ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आध्यात्मिक और अमर है जितना मेरा जीवन, जो भगवान है।"

इस ध्यान-चिन्तना में, हम रूप, आकार, रेखाएँ, वर्ण, सौन्दर्य के बारे में विचार नहीं कर रहे हैं, शरीर के अन्य किसी भी पक्ष के बारे में विचार नहीं कर रहे हैं। हम भगवान के बारे में विचार कर रहे हैं जो सब रूप, वर्ण, सौन्दर्य, रेखाओं का सार है—जो सम्पूर्ण देह का सार है।

शरीर पीड़ित हो, परिवर्तित हो, विनष्ट हो या मृत हो— इसका कोई कारण नहीं है। हम इसे ऐसा होने की अनुज्ञा देते हैं, क्योंकि हमने भगवान से अलग 'अपने होने' या एक 'स्वत्व' का विश्वास बना रखा है। हम इसे इसलिए अनुज्ञा देते हैं, क्योंकि जब हम भगवान को आध्यात्मिक सृष्टि का सार और आकार स्वीकार करते हैं, तब यह भूल जाते हैं कि वह समस्त सृष्टि का सार और आकार है। लेकिन तो भी भगवान सम्पूर्ण सृष्टि का रूप है, सार है, धर्म है, वह हमारे शरीर का, जो सृष्टि ही है, रूप, सार और धर्म है। हमारा शरीर स्थूल या भौतिक नहीं है, और न तो वह भोजन ही स्थूल या भौतिक है, जिसे हम खाते हैं। वह आध्यात्मिक या सूक्ष्म है। सृष्टि के बारे में यह मात्र हमारी धारणा ही है, जो स्थूल या भौतिक है। सृष्टि स्वयं भगवान है—इस अर्थ में भगवान है कि भगवान ही इसका सार, द्रव्य और रूप है। भगवान हमारी सत्ता का सार है।

● ● ●

अनन्त होने के कारण, भगवान अनन्त रूपों और भेदों में प्रकट होता है। भगवान सर्वदा एक रूप में ही हमारे निकट प्रकट नहीं होता है, और अपनी अनन्तता के कारण वह दो बार एक ही रूप में प्रकट हो भी नहीं सकता। अनन्तता का कभी अन्त नहीं होगा। जीवन का कभी अन्त नहीं होगा। जीवन का अन्त शताब्दी के बाद भी नहीं होगा, क्योंकि जीवन को, अनन्त होने के कारण, अनन्त रूप और भेदों में अनवरत और सनातन रूप से प्रकट होना है।

शरीर भी अनन्त रूपों में एक रूप है जिसमें विश्व के दिव्य द्रव्य और सार, भगवान प्रकट हो रहे हैं। यदि हम इस सांसारिक सत्य को स्वीकार न करें कि हमारे पास एक स्थूल शरीर है जो समय या स्थान में काम करता है, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर का कभी विनाश नहीं हो सकता। रक्त, मांस और अस्थि की तरह ही भगवान मेरा, तुम्हारा, सबका सार है, सत्व है। रक्त, मांस और अस्थि ये सब उसी दिव्य चेतना के अनेक नाम और अर्थ हैं, जो इन अनेक रूपों में व्यक्त हो रहा है। मेरा शरीर या तुम्हारा शरीर या भगवान जैसी अन्य कोई वस्तु नहीं है। यह भगवान ही है जो देहरूप में प्रकट हुआ है। यह वही सारभूत तत्व और चैतन्य है जिससे हमारी चेतना का निर्माण हुआ है। केवल यह अपने अनन्त रूपों और भेदों में से एक दूसरे रूप-भेद में है।

टेबुल की तरफ देखिये। वहाँ टेबुल और लकड़ी नहीं है। आप टेबुल से लकड़ी को अलग नहीं कर सकते। लकड़ी ही टेबुल के रूप में प्रकट हो रही है। आप और आपका शरीर, मैं और मेरा शरीर जैसी कोई वस्तु यहाँ नहीं है।

'मैं और मेरा पिता एक हैं।' मैं और मेरा शरीर एक है। मेरा शरीर कभी नहीं मरेगा – वह कभी नहीं मरेगा ! वह कभी भी आयु का ग्रास नहीं होगा। मेरी चेतना की स्थिति सदा भगवान में अवस्थित है, सत्य से संयुक्त है, और हर दिन मेरा निर्माण कर रही है। और क्योंकि काल जैसी कोई चीज नहीं है, मेरी चेतना नितनूतन निर्माण करती चली जायेगी।

जो कुछ हमें दिखायी पड़ता है, वह अनन्त रूपों और वैविध्यों में प्रकट भगवान के सिवा और कुछ नहीं है। इसीलिए भगवान तुम्हें शरीर के रूप में दिखायी पड़ रहा है। अभी जो तुम्हारे शरीर की धारणा है, वह निपट भौतिक हो सकती है, पर उसे तुमको बदल देना होगा। तुम्हारा शरीर एक आध्यात्मिक पदार्थ है, वह स्वयं भगवान के द्रव्य और चैतन्य से बना है। इसी से यदि तुम अपने शरीर को बदलना चाहते हो, तो तुम्हें शरीर के विषय में अपनी धारणा को बदल देना होगा। तब तुम्हारा शरीर तुम्हारा मनचाहा रूप धारण करेगा क्योंकि वह तुम्हारी चेतना का परिणाम है।

● ● ●

जीवन से मृत्यु तक का मानवीय अनुभव संयोग और परिवर्तन के अलावा और कुछ नहीं है। केवल क्राइस्ट की उपस्थिति ही मानवीय अनुभव को आध्यात्मिक उद्घाटन और प्रकाशन में परिणत कर सकती है। यदि हम भगवान और मूलभूत चैतन्य के इस उपस्थिति-बोध के बिना जीते हैं, तो हमारे पास शेष रह जाता है केवल एक भौतिक शरीर, जिसका तीस वर्ष की उम्र होने से पहले ही क्षय होना आरम्भ हो जाता है, और जीवन्त के अन्त तक यही क्षय की प्रक्रिया चलती रहती है।

जिस क्षण से मूलभूत चैतन्य हमारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेतना में एक जीवन्त सत्ता बनकर काम करने लगता है, एक सदा वर्तमान उपस्थिति-बोध के रूप में विद्यमान रहता है, तब शरीर वही हो जाता है, जो होने के लिए मौलिक रूप से उसका निर्माण हुआ था, और जो वह अपनी यथार्थ सत्ता में है, अर्थात् जीवन्त भगवान का मंदिर। तब आयु, परिवर्तन, क्षय, या मृत्यु जैसी कोई चीज नहीं रह जाती है। तब ऐसी कोई चीज़ नहीं होती है जो क्षणस्थायी हो या गुज़र जाने वाली हो।

क्या इसका अर्थ यही हुआ कि हमें इसी धरातल पर सनातन काल तक रहना है? और इसका उत्तर है : हाँ, यदि हम ऐसा चाहते हैं! यदि हम उस सीमा तक अपनी चैतन्य-स्थिति के प्रति जागृत हो जायें कि शरीर तक में स्वास्थ्य, शक्ति और चेतना का प्राकट्य कर लें, तब एक ऐसा समय आना चाहिए जब एक पुकार आती है, एक प्रतीति होती है कि कोई उच्चतर काम करना शेष है, उस समय हम चैतन्य की उच्चतर भूमियों पर उच्चतर काम करने को आगे बढ़ सकते हैं और यह धरातल छोड़ सकते हैं।

लेकिन किसी को भी एक पल के लिए यह विश्वास नहीं करना चाहिए कि रोगग्रस्त होकर शरीरतया मर जाना भगवद्-चेतना के महत्तर प्रकाशन का रास्ता है। यह सच नहीं है। हम अस्तित्व के इस स्थान का त्याग कर सकते हैं; इस शरीर का त्याग करके जा सकते हैं; हम चैतन्य के ऊँचे से ऊँचे धरातलों पर उठ सकते हैं, क्योंकि चैतन्य का वह स्थूल धरातल, जो पृथ्वी है निश्चय ही प्रथम या अन्तिम स्थिति नहीं है। किन्तु पहली से दूसरी स्थिति में हम विफलता के माध्यम से नहीं जा सकते—और मृत्यु विफलता है; मृत्यु शत्रु है, अन्तिम शत्रु।

रोग, और संसार जिसे आयु अथवा क्षय कहता है, सत्ता के महान सत्य की सचेतन स्वीकृति के द्वारा इन पर विजय पायी जा सकती है : इनकी विजय का यही एक मार्ग है। 'क्योंकि भगवान कृपालु है; उसकी दया अनन्त है; और उसका सत्य सब पीढ़ियों तक कायम रहता है।' यदि भगवान, भगवान का विधान, या यह सनातन मूलभूत चैतन्य कल्याणकारी है, तो यह एक पल के लिए भी हमें अपनी दिव्य रक्षा, संरक्षण और आध्यात्मिक प्रकाशन से वंचित नहीं कर सकता। चूंकि भगवान मंगलकारी हैं, इसलिए मानवी लीला में भी जो हमारा अनुभव है वह मांगलिक ही हो सकता है। यदि वैसा न हो तो हम अपने आपको मंगलमय भगवान की परम सुरक्षा से वंचित कर लेते हैं। जब भगवान की दया अनन्तकाली है तो यह कैसे संभव हो सकता है कि वे प्रभु हमें क्षय, विनाश और मृत्यु का ग्रास बना दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमलता वर्मा

दो कविताएँ

श्रेयस्

ओ प्रिय,
मैंने कब कहा कि
उपलब्धि मेरी
शाश्वत हो, रहे....!

बुझे दीवट में
स्याह शेष राख
अभी गर्म है:
जीवन का अनाविल
जीवन्त एक मर्म है।
श्रेय है
मेरा खंडित मर्म।

★

एक परस

गुलाबी पालों पे तिरता
मसृण ठहरा तटस्थ
ममत्व आवर्तित सुदीर्घ
एक चुम्बन
नयनों से अन्तर तक
आत्मा की अदृश्य स्रोतस्विनी
के नीर को
परस गया।....
बात केवल अधरों की न थी!
चेतना के पूर्णतम आनन्द के सीमान्त पर
देह-रूप तितिक्षा में हमसे
हाय, जिया न गया।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विजेन्द्र

अनी-गीत

तुम्हारे लिए
जन्म-दिन पर
बाँध दिया
पीत-बन्दन-वार
रच कर द्वार पर
नन्हा-सा
अनी-गीत

गूंथा तुम्हारे लिए
मात्र : तुम्हारे ही लिए
संग्रथित-जूड़े में
यह अद्यतन अपूर्व

मुहूर्त का नवागमन
भिनसारे मंजरी लहके जब
पुंस्कोकिल कातर हो खोले मुख
पीने को अमोघ अक्षत मधुमास-बूंद

गा देना अबूझ नक्षत्र-कल्प

रचा लेना नाम-हीन संज्ञा पर अशब्द
रहे जो अन्त तक अशेष: ऋचानुगूंजित-छंद

नन्हा-सा
अनी गीत : आकाश-वत्
तुम्हारे लिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनोबा भावे

ईश्वर है भी, नहीं भी

आप ईश्वर का काम करें तो ईश्वर मदद देना चाहता है, फिर उसका नाम भले ही न लिया जाय। फिर भी आपके हाथ से बुरे काम हुए और ईश्वर की मदद की आवश्यकता महसूस हुई तो ईश्वर मदद करेगा। इसलिए जो भक्तिमान होते हैं और नीति-नियम का पालन करते हैं, उनको दोनों ओर से फायदा है।

हमसे सवाल पूछा गया कि ईश्वर है या नहीं ? हमने कहा कि है भी, और नहीं भी। दोनों है। जैसे आप चाहें, वैसा है। क्या आप ईश्वर को चाहते हैं ? उसकी मदद की आपको जरूरत है तो आपके लिए वह है। और वह आप को मदद दे सकता है, अगर मदद माँगने का तरीका आप को मालूम है। अगर आप चाहते हैं कि ईश्वर न हो और आप के काम के बीच वह न आये तो वह नहीं आयेगा। आपको तकलीफ देगा नहीं और मदद भी नहीं करेगा। उसने नियम बना दिये हैं उसके अनुसार आप जैसा करोगे, पाओगे। बबूल का वृक्ष लगाया तो बबूल ही उगेगा। आम की गुठली बोयी तो आम मिलेगा। जो जैसा बोयेगा वैसा पायेगा। नियम के बीच आता नहीं। तो जिनको ईश्वर की जरूरत नहीं मालूम होती, वे कहते हैं कि ईश्वर है नहीं।

नियम है कि जो बोया वही मिलेगा। ऐसा नियम समझ लो और भले ही मेरा नाम न लो, मुझे न पहचानो तो चलेगा। कोई राजा होता है वह राजधानी में किसी जगह रहता है। कई लोगों को मालूम भी नहीं होता है कि राजा है। लेकिन उसके कानून हैं उन पर लोग अमल करते हैं। तो राजा का ध्यान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों को न हो तो भी चलता है। ऐसे ईश्वर ने न्याय बनाया कि भला करो तो भला पाओगे और बुरा करो तो बुरा पाओगे। इसको नीति-विचार धर्म-विचार कहते हैं। इसको मानो। नीति-विचार को मानो, ईश्वर संतुष्ट है। अगर मेरे बच्चे नियम का पालन कर रहे हैं और मेरे पास नहीं आते, तो सलाह पूछने के लिए आने की जरूरत नहीं है। नियम जानते हैं और उसका पालन करते हैं तो बहुत अच्छा है।

आप ईश्वर का काम करें तो ईश्वर मदद देना चाहता है, फिर उसका नाम भले ही न लिया जाय। फिर भी आप के हाथ से बुरे काम हुए और ईश्वर की मदद की आवश्यकता महसूस हुई तो ईश्वर मदद देगा। इसलिए जो भक्तिमान होते हैं और नीति-नियम का पालन करते हैं उनको दोनों ओर से फायदा है। कभी भूल होगी तो ईश्वर बचा लेगा। जो ईश्वर का नाम नहीं लेते हैं और नीति-विचार का पालन करते हैं तो उनको नीति का ही लाभ मिलेगा। ईश्वर को नहीं मानते और नीति-नियम नहीं पालन करते, वे दुनिया में बिलकुल मारे जायेंगे और दुःख पायेंगे। अब तुम लोग क्या तय करते हो ?

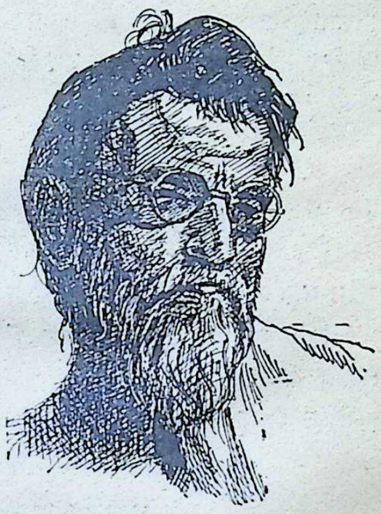

अकलवाले हो तो नीति-विचार को ग्रहण करो और साथ-साथ भगवान का नाम लो। चाहे भगवान न हो चिन्ता नहीं। अगर वह है तो मदद मिलेगी। नहीं है तो अच्छा शब्द निकला तो उसका लाभ होगा—ऐसा समझकर भगवान का नाम लो। जिनको ईश्वर का अनुभव है ऐसे लोग दुनिया में हो गये हैं। वे आज नहीं हैं। इसलिए श्रद्धा रखना अच्छा है। नीति-विचार का पालन करना चाहिए और ईश्वर पर श्रद्धा रखनी चाहिए तो दोनों प्रकार से लाभ होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुन्नीलाल मड़िया

हरबंस कुँवर

[गुजराती कहानी]

आधुनिक गुजरात के शीर्षस्थ कथाकारों में प्रतिष्ठित हैं श्री चुन्नीलाल मड़िया। साहित्य की सभी विधाओं में उन्होंने सफलतापूर्वक सर्जन किया है। पर कहानी के वे अपने ढंग के अनोखे शिल्पी हैं। उनकी यह मर्मगामी कहानी इसकी साक्षी देगी।

न युद्ध के जंगी ढोल बजे, न नगाड़ों का गर्जन सुनायी दिया। शौर्य जगानेवाला सिंधुराग भी कान में न पड़ा था। फिर भी न जाने किस अंतःप्रेरणा से गाँवभर के सशक्त लोग जो भी हथियार हाथ लगा उसे लेकर हमलाखोरों की ओर दौड़ पड़े।

दौड़ जाने के बाद मालूम हुआ कि स्थानीय प्रतिस्पर्धी जाति ने यह दंगा नहीं किया है, बल्कि रेकक्लिफ निर्णय के अनुसार मंजूर हुई नयी सीमाओं के उस पार से, प्रतिस्पर्धी जाति की एक बड़ी सी शस्त्रधारी टोली इस ओर उतर आयी है, और सामूहिक हत्या आरम्भ हो गयी है। केवल लूट और आग से ही उन्हें सन्तोष नहीं है, कत्लेआम करके भी उन्हें चैन नहीं है, मिल्कियत लूटने का भी उन्हें कोई बहुत मोह नहीं है, उनकी निगाहें तो लगी हैं जवान औरतों पर। इन औरतों पर किसी तरह का जुर्म न हो, इस बात की वे पूरी सावधानी बरतते हैं; किन्तु यह सब किसी उदात्त स्त्री-दाक्षिण्य की भावना से प्रेरित होकर वे नहीं कर रहे थे। पुरुष वर्ग को समाप्त करके औरतों को जिन्दा रखने में उन्हें किसी विशिष्ट प्रकार का "स्थापित-हित" नज़र आ रहा था।

ऊपर की मंज़िल पर खड़ी हरबंस कुँवर यह पूरी संहारलीला विस्फारित नेत्रों से देख रही थी। स्वयं नवोढ़ा थी। पति तेजासिंह तो भय की आवाज सुनते ही नंगी तलवार लिये गाँव के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौराहे पर जा पहुँचा था। कृपाण और कंघी संभालने का समय भी उसे नहीं मिला था। आसपास के अन्य जवान भी दौड़ गये थे। कान फाड़नेवाला शोरगुल सुनायी दे रहा था। 'मेरे पति ने अवश्य ही पाँच-पन्द्रह दुश्मनों को ज़मीदोस्त कर दिया होगा', कुछ इस तरह की कल्पना में खोयी हरबंस कुँवर आपत्ति के इस समय में भी हल्के से मुस्कुरा दी।

थोड़ी ही देर में गाँव के चारों ओर से अग्नि-शिखाएँ ऊपर को उठने लगीं। एक प्रचंड सी ज्वाला गुरुद्वारे पर जल रही थी। उसे देखते ही हरबंस का रोयाँ-रोयाँ काँप उठा। किन्तु इससे भी कई गुना ज़्यादा कंप अनुभव करना तो अभी बाकी था। पिछले मुहल्ले से एक साथ कई औरतों का आक्रंद सुनायी पड़ा। हरबंस ने झरोखेवाली खिड़की से उस ओर देखा। हमलाखोर अपनी अपनी शक्ति अनुसार एक-दो युवतियों को उठा कर भागते नजर आये। दिमाग़ खराब कर देनेवाला वह दृश्य था। बेशक कहीं कहीं से शौर्यभरा प्रतिकार हो रहा था और अपहरण करने आये लोग मकानों की देहलियों पर ही धूल चाटते नज़र आ रहे थे। गाँव के लोग हाथ आया सो हथियार मान के हाथ पड़ी चीज़ को हमलाखोरों पर फेंक रहे थे। एकाध जगह तो ऊपर की मंजिल से उबलते हुए

तेल की कड़ाई उँड़ेल दी गयी और हमलाखोर तड़पते-तड़पते ही निढ़ाल हो गये।

मगर औरतों का यह प्रतिकार लम्बे समय तक टक्कर ले सकने की स्थिति में नहीं था। चौराहे पर शोर कम होते ही लगा कि हमला करनेवालों की संख्या प्रतिकार करनेवालों की अपेक्षा कई गुना ज्यादा है, उनके शस्त्र भी ज्यादा आधुनिक हैं। मुहल्ले का द्वार-द्वार संगीनों से बींधा जाने लगा। गाँव का छोटा सा पुलिसदल तो कब का समाप्त हो चुका था। क़ानून और व्यवस्था के रक्षक आकर रक्षा करेंगे, यह कल्पना ही आकाशकुसुमवत् थी।

दृश्य देखते ही हरबंस का सर चकरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। पिछले मुहल्ले के संगीनवाले आम हमलाखोर एक जवान औरत पर ज़ुल्म कर रहे थे। दया, करुणा या स्त्री-सन्मान की अपेक्षा तो इस वक़्त किसी ने भी नहीं की थी, किन्तु मानवता के नाते सर्वस्वीकृत और सर्वमान्य लाज मर्यादा का भी लोप हो रहा था। सहज सुरुचि भी नहीं संभल रही थी। आँखें भी यकीन न कर सकें ऐसा वह दृश्य था। वह औरत बुरी तरह से चिल्ला रही थी और हमलाखोर बेतरह गालियाँ बोले जा रहे थे।

यह दृश्य देख कर हरबंस को चक्कर आ गया। किन्तु चकराकर गिर पड़ने का शौक़ इस समय बहुत महंगा पड़ जाता। कुछ ही क्षण बीतते न बीतते स्वयं के भी इसी अत्याचार का भोग बनने की संपूर्ण संभावना थी। आदमी इस वक्त पशु हो चुका था। वह क्या करेगा की अपेक्षा वह क्या नहीं करेगा यह सोचना अधिक मुश्किल था।

सामूहिक हत्याकांड के बाद तेजासिंह के लौट आने की आशा व्यर्थ ही थी। अब तो किसी तरह उन भयंकर संगीनों के अत्याचार से बच निकलना आवश्यक हो उठा था।

व्यक्ति की अपेक्षा समष्टि की समझ और अंतःसूझ अधिक सच होती है। इस मुहल्ले की औरतों ने पिछले मुहल्ले के दृश्य देख कर भागदौड़ शुरू कर दी थीं। किस ओर...? वहीं...और कहाँ...? तालाब पर, कुएँ की ओर। जिन्हें जिन्दा रहने का मौका न मिले उन्हें मनचाहे ढंग की मौत तो मिलनी ही चाहिए न?

और दिन भयावना लगनेवाला भम्मरिया कुआँ हरबंस को मुक्तिदाता सा लगा। सम्मानपूर्वक ज़िन्दा रह सकने की सहूलियत तो नहीं है, पर मर सकने का इतना सुन्दर और आसान तरीका है, यह जानकर वह फिर हल्के से मुस्कुरायी।

सोच विचार का या खुद जो क़दम उठा रही है उसके परिणामों की जोड़-बाकी करने का समय उसे नहीं था। कवि ने गाया है उसी तरह गुजरता हुआ हर क्षण इतिहास से भरा था, हर पल इतिहास का ही सर्जन हो रहा था। भले ही अख़बारी क़ानून और 'प्रेस-एटीकेट', इन क्षणिक घटनाओं को 'उकसानेवाली' मान कर अख़बारों में इस 'इतिहास' का एक अक्षर भी न छपने दे।

सिर्फ वह एक ही क्षण। और उस क्षण के आगे-पीछे का सोच किये बिना ही हरबंस दौड़ी। घर के दरवाजे खुले छोड़ कर ही वह भागी। दरवाजा बन्द करने जितना विलम्ब भी उसे सह्य नहीं

[शेष पृष्ठ ५७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभातकुमार मित्तल

श्री नेहरू के बाद कौन : एक असंगत प्रश्न

भारत की जनता दुख सहकर भी जो उनसे प्रेम करती है, वह इसलिए नहीं कि वे देश के शासक हैं। अतः इस तरह के प्रश्न उठाना कि एक प्रधान मन्त्री के बाद दूसरा कौन आयेगा, कैसा होगा, जहाँ भारत की जनतांत्रिक पद्धति का अपमान करना है, वहाँ स्वयं श्री नेहरू के हित में भी यह प्रश्न उचित नहीं है।

समय-समय पर अक्सर यह प्रश्न उठाया जाता है कि श्री नेहरू के बाद प्रधानमंत्री-पद कौन सम्भालेगा? इस सम्बन्ध में अपने देश में ही नहीं, बल्कि विदेश में भी अटकल-बाज़ियाँ लगायी जाती हैं। जो लोग इस तरह का प्रश्न उठाते हैं उनका मूल मन्तव्य यह जानने का नहीं होता कि नेहरू के बाद कौन व्यक्ति इस पद पर आसीन होगा बल्कि उनके प्रश्न में यह सन्देह निहित रहता है कि वह व्यक्ति क्या उतनी ही सुयोग्यता से देश का नेतृत्व कर सकेगा जितना श्री नेहरू ने किया है और कर रहे हैं। और मुझे तो उनके इस सन्देह में भी पूर्ण सत्यता का आभास नहीं मिलता। उनके मन में शायद और ही भावना रहती है।

हमें यह सोचना है कि क्या वास्तव में इस प्रश्न में कोई तथ्य है, कुछ वज़न है और क्या यह कोई समस्या है जिस पर हमें गम्भीरता से विचार करना चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि शासन का संचालन यदि योग्य हाथों से हो रहा हो तो देश की जनता उन हाथों का अभाव महसूस करती है और इस-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए उनके अभाव की दशा में क्या स्थिति पैदा हो, इस पर पहले से ही आशंकित रहती है। किन्तु इससे इस प्रश्न की यथार्थता सिद्ध नहीं होती। यदि वास्तव में यह प्रश्न समस्या बन जाये तो हमें अपने देश पर ही विश्वास खो देना होगा। इससे यह प्रकट होता है कि यद्यपि यह प्रश्न स्वाभाविक है किन्तु सारहीन भी है। किसी देश का शासनसूत्र चाहे कितने ही सुयोग्य व्यक्ति के हाथों से चलाया जा रहा हो, किन्तु यह सोच लेना कि उसके बाद देश में सुयोग्य व्यक्तियों का अभाव हो जायेगा, नितान्त मूर्खता है।

भारतवर्ष में इस समय जनता का राज्य है। पहले की तरह वंशानुक्रम से शासक नहीं बनते। अब प्रश्न है कि एक जनतन्त्रवादी देश में इस तरह के प्रश्न उठाना कहाँ तक उचित है? यदि किसी देश में वास्तविक जनराज्य है तो वहाँ अयोग्य शासक अधिक दिन पद पर नहीं बना रह सकता। इस तरह के सन्देह भी ऐसे देश में नहीं उठाये जाते। इसका सीधासच्चा अर्थ है कि भारत में अभी गणतन्त्रात्मक राज्य की खूबियों का विकास नहीं हो पाया है। इसे अपरिपक्व जनतन्त्र कहा जा सकता है। अमेरीका और इंगलैंड में रूजवेल्ट और चर्चिल ने अपने समय में बहुत ख्याति पायी। अपने देशों के लिए वे बहुत योग्य शासक साबित हुए। किन्तु वहाँ इस तरह के प्रश्न को कभी समस्या रूप में नहीं लिया गया कि उनके बाद कौन व्यक्ति प्रेसिडेन्ट या प्रधानमंत्री बनेगा, और वह योग्य भी होगा या नहीं। चर्चिल अब भी जिन्दा हैं और माने हुए राजनीतिज्ञ हैं, किन्तु ब्रिटेन के प्रधानमंत्री अपनी नीतियाँ उनकी राय से निर्धारित नहीं करते। नेहरू के बाद कौन, क्या, कैसे आदि प्रश्न भारत द्वारा स्वीकृत जनतांत्रिक पद्धति का अनुमोदन नहीं करते।

अब जरा संक्षेप में हम यह भी विचार कर लें कि श्री नेहरू क्या वास्तव में सुयोग्य शासक सिद्ध हुए हैं? उनका लोकप्रिय व्यक्तित्व, देश के प्रति अनुराग तथा मानवतावादी दृष्टिकोण उनकी सुयोग्यता के परिचायक हैं। किन्तु क्या एक शासक में केवल यही गुण होने चाहिए? यह सही है कि देश ने उनके नेतृत्व में बहुत तरक्की की है, किन्तु यह भी सही है कि इस तरक्की का लाभ भोगनेवाले व्यक्तियों का प्रतिशत देश की जनसंख्या में बहुत कम है। जितनी प्रगति उद्योग धन्धों में हुई है, उससे अधिक प्रगति-शासकवर्ग के स्वार्थ तत्वों में हुई है। देश बीसों ऐसे झमेलों में फँस गया है जिनसे छुटकारा पाना ही ज़बर्दस्त समस्या बनी हुई है। उनके शासनकाल में ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में ऐसे दुश्मन पैदा हो गये हैं, जो भारत की स्वतन्त्रता लील जाने को हरदम तैयार हैं। किसी भी अन्य योग्य व्यक्ति की सलाह पर विचार करना उन्होंने कभी गवारा नहीं किया है। भारत की संस्कृति, धर्म, दर्शन का न तो उन्हें विशेष ज्ञान है न उन्होंने उसे कभी महत्ता ही दी है। फिर भी, उनका व्यक्तित्व ऐसा है जिससे देश में स्थिरता बनी रही है। देश में प्रगति भी हुई है और इसे विदेशों में भी सम्मान मिला है। अतः चिन्ता इस पर करने के बजाय कि उनके बाद कौन व्यक्ति आता है, हमें यह आशा करनी चाहिए कि उनके बाद का व्यक्ति वह कार्य करेगा जिन्हें करने में श्री नेहरू असफल रहे हैं।

हम उनसे प्रेम करते हैं, इसलिए उनके विद्रोह की कल्पना हमारे मन में तकलीफ पैदा करती है, किन्तु हमारा यह प्रेम इसलिए नहीं है कि वे भारत के प्रधानमंत्री हैं। भारत की जनता दुख सहकर भी जो उनसे प्रेम करती है वह इसलिए नहीं कि वे देश के शासक हैं। अतः इस तरह के प्रश्न उठाना कि एक प्रधानमंत्री के बाद दूसरा कौन आयेगा, कैसा होगा, जहाँ यह भारत की जनतांत्रिक पद्धति का अपमान करना है, वहाँ स्वयं श्री नेहरू के हित में भी यह प्रश्न उचित नहीं है। इससे उनकी महत्ता या लोकप्रियता बढ़ती नहीं है। अतः इस तरह के प्रश्नों को समस्या मानकर चलना मेरी दृष्टि में, बिल्कुल असंगत और अनुचित है।

परिवार सहायक
सद्वैद्यशाला आयुर्वेदिक फैक्टरी नांजनगुड
जिंचीप अपचन दूर करते
ज्वरेग तापांतर
आल्मनाइन टॉनिक
प्रत्येक शहर के लिए हम एकही व्यापारी को अपना स्टाकिस्ट नियुक्त करते हैं।
नांजनगुड दुधपावडर
सोल एजेन्ट्स: दी युनायटेड कन्सर्न ५४, बन्दर स्ट्रीट, मद्रास–१
बम्बई–शाखा–२७७ विश्वास भवन, घेवदार रोड़, माटुंगा, बम्बई १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

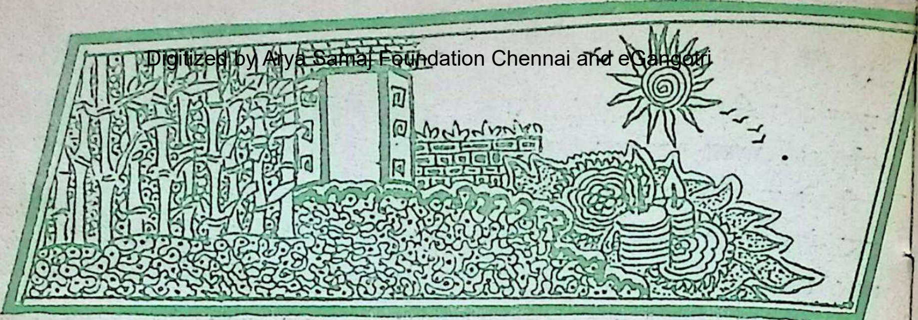

पेशन्स स्ट्रॉंग

सपनों का घर

[अंग्रेजी कविता]

पत्तियाँ

एक बार फिर प्रकटी हैं पत्तियाँ–
साल में आयी वसन्त-ऋतु में,
मृदुता से फूट रहीं कोमल कठिन कलियाँ–
जाग रहीं अपनी शिशिर-निद्रा से।
अखरोट, अंजीर, नाशपाती, भोज-पत्तियाँ
स्वच्छ, नवजात, हरी पत्तियाँ चमक रहीं
सब की सब वर्षा में नाच रहीं
प्रसन्न वृक्षों के सुन्दर नग्न शरीरों को
वसन पहना रहीं
बुने हुए पन्ने का अंगरखा, जो हवा में
डोलता–
मनुष्य गद्गद् होते और भूल जाते हैं,
पर भगवान ने हमें कभी नहीं दी विफलता।
यह सौन्दर्य लेने के लिए बना है—
अपनी आँखें उठाओ,
सब डरों को त्यागो।
पीड़ित मन को देता है भगवान
नयी हरी पत्तियाँ
अपनी नयी हरी पत्तियों का दान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धूप की एक लम्बी रेखा ने भेद दिया मेघों को
और प्रकाशित किया वर्षा-प्रक्षालित संसार
हर पत्ती और टहनी मुक्तामय होकर
झूल गयी
रत्नों और बिल्लौरी बूंदों से
पृथ्वी से उठने वाली सुगंधित सुवास
हवा से मिल गयी
हीरे कंपित थे वृक्षों के टपकते फूलों पर।
और अचानक, छतों के ऊपर मैंने देखा
एक धनुष प्रकाशमान
जो बन गया मेहराब संसार के आरपार,
जिसने किया आकाश को ज्योतिर्मान।
मानो दैवी इच्छा से प्रेरित हो घूम गया
कूची लेकर कोई कलाकार
चिन्हित कर दिया स्वर्ग के गुम्बद को
रंगीली अग्नि से चक्राकार।
और तब सोचता है मेरा अन्तर
इस सौन्दर्य (धनु) का क्या है प्रयोजन
और जब सूरज और फुहारें मिलती हैं,
क्यों होता है इस प्यारे धनुष्य का आगमन!
अपने शंकालु बच्चों को देने के लिए
आश्वासन
कि सत्य है भगवान का वचन
(उसने इसे भेजा है)
मनुष्य न कर दें विस्मरण
(इसलिए) नीलिमा में वह करता है
इस इन्द्रधनुष का अंकन।

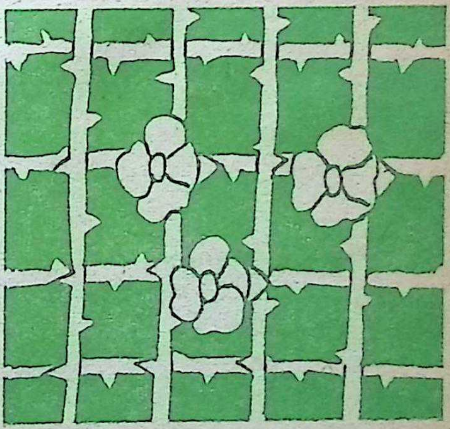

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवारम्भ

हर सुबह है एक नवारम्भ, हर दिन
एक और मौका खुद को प्रमाणित करने का
जब तुम होते हो अपनी राह पर
अपनी योग्यता दिखाने का एक और अवसर
हर दिन भगवान चित्रित करता है ऊषा को
अंधेरी, सोयी हुई पृथ्वी पर।

संकट आयेंगे—तुम निश्चय जान लो मेरे मित्र
यह जीवन है—तुम्हें नहीं मालूम
कौन क्या कर रहा है प्रतीक्षा मोड़ पर
लेकिन ये केवल चुनौतियाँ हैं तुम्हारे
परीक्षण की

इसलिए विश्वस्त मन से करो उनका
सामना
शेष 'वह' देखेगा।

यदि तुम्हारे कदम डगमगाते हैं और
तुम हो जाते हो विफल
या पड़ जाते हो दुर्बल
ऊपर देखो—न होओ निराश
भगवान सदा भेजता है अगले दिन का
प्रकाश।

—अनु. अमृता भारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिमोहन शर्मा

अन्तरिक्ष युग में पौराणिक देवता

अकल्पनीय रूप से सशक्त और सक्षम ये आविष्कार जो एक ओर विश्व का अन्त करने में समर्थ हैं, और दूसरी ओर नये-नये ग्रहों को मानव के लिए सहज बनाने की आशा दिखाते हैं, यदि अपने नामों के लिए पौराणिक देवताओं के नामों का सहारा लेते हैं, तो यह स्वाभाविक ही है, क्योंकि पुराणों में भी विनाशकारी युद्धों और अलौकिक स्थानों का ही वर्णन मिलता है।

अन्तरिक्ष-युग में पौराणिक देवताओं का महत्त्व घटने के स्थान पर दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। यह विस्मयजनक तथ्य, अन्तरिक्ष-युग के विचित्र उप-परिणामों में से एक है।

पश्चिम के विद्यार्थी, ग्रीक और लैटिन जैसी मृत भाषाएँ कम, तथा विज्ञान, गणित और रूसी भाषा अधिक सीख रहे हैं। पर ये नये वैज्ञानिक भी यूनान और रोम के देवताओं के बिना अपना काम नहीं चला पाते, क्योंकि प्रक्षेपास्त्रों, राकेटों और उपग्रहों के नाम, इन्हीं पौराणिक देवताओं के नाम पर ही रखे जा रहे हैं। आविष्कार और विध्वंस के इन नये यंत्रों के नाम रखने के लिए कोई कड़े नियम नहीं, फिर भी इन अविश्वसनीय यंत्रों के नामकरण के लिए विश्वसनीय पौराणिक देवताओं का ही सहारा लिया जा रहा है।

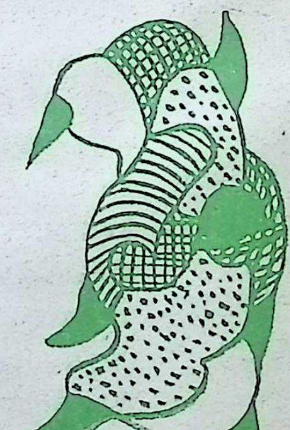

पश्चिम का एक पौराणिक देवता है, एटलस, जिसके कन्धों पर स्वर्ग के खम्भों का भार है, और जो सारे अंतरिक्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को सँम्भाले हुए है। और यही एटलस नाम है, अमरीका के सर्वाधिक शक्तिशाली अन्तरमहाद्वीपीय प्रक्षेपास्त्र का। लेकिन, इससे भी अधिक आश्चर्यजनक बात यह है कि अमरीका के कम शक्तिशाली प्रक्षेपास्त्रों के नाम एटलस से अधिक बलवान देवताओं के नाम पर रखे गये हैं। हमारे इन्द्रदेव के समान है, नार्वे के थोर देवता, जिनके नाम का उपयोग अमरीका ने अपने एक मध्यम श्रेणी के प्रक्षेपास्त्र के लिए किया है। इसी प्रकार, रोमनों के आकाश के देवता जुपिटर के नाम पर भी इसी श्रेणी का एक प्रक्षेपास्त्र है।

विमानवेधी प्रक्षेपास्त्रों के आविष्कारकों ने अपने अविष्कारों के नाम के लिए यूनानियों की विजय की देवी 'नाइक को आदर्श माना है। सबसे तेज़ विमानवेधी प्रक्षेपास्त्र का नाम 'नाइक ज़ियस' (Nike zeus) रखा गया है। यह नाम बड़ा विचित्र लगता है, क्योंकि यूनानियों के जियस देवता (जिनकी तुलना रोमनों के जुपिटर देवता से की जा सकती है) बेचारे कभी 'नाइक' देवी के प्रेम में नहीं फंसे, और 'राधाकृष्ण सीताराम' की तरह जियस के साथ' उनकी जुगलबन्दी उनके गाढ़े प्रेम की कहानी कहती सुनायी पड़ती हैं।

यूनानी दन्तकथाओं के विख्यात द्वीप सायोस का नाम अमरीकाके एक नये उपग्रह को दिया गया है। मिडास नामक राजा, जिनके स्पर्श से वस्तुएँ सोना बन जाती थीं, एक ऐसी यांत्रिक पद्धति के नाम का आधार बने हैं, जिसकी सहायता से प्रक्षेपास्त्रों के आक्रमणों को रोका जा सकता है।

अमरीका ने अपने पहले अन्तरिक्ष-यान का नाम रखा था, 'मर्करी', जो रोमनों की एक प्रमुख पौराणिक देवी हैं। एक आयोजन के अनुसार, 'मर्करी' यान का पीछा करनेवाला था "अपोलो" यान। "अपोलो" भी एक विख्यात पौराणिक देवता हैं।

अकल्पनीय रूप से सशक्त और सक्षम ये आविष्कार जो एक ओर विश्व का अंत करने में समर्थ हैं और दूसरी ओर नये-नये ग्रहों को मानव के लिए सहज बनाने की आशा दिखाते हैं, यदि अपने नामों के लिए पौराणिक देवताओं के नामों का सहारा लेते हैं, तो यह स्वाभाविक ही है क्योंकि पुराणों में भी विनाशकारी युद्धों और अलौकिक स्थानों का ही वर्णन मिलता है। देखना यह है कि जब भारतीय प्रक्षेपास्त्र और उपग्रहों का निर्माण होगा, तब भारतीय आविष्कारक उनके नामकरण के लिए किन पौराणिक देवताओं के नामों का सहारा लेंगे। वैसे, उन्हें नामों की कोई कमी नहीं रहेगी, क्योंकि हमारे देवी-देवता संख्या और गुणों की दृष्टि से पश्चिमी देवी-देवताओं से कहीं अधिक समृद्ध हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

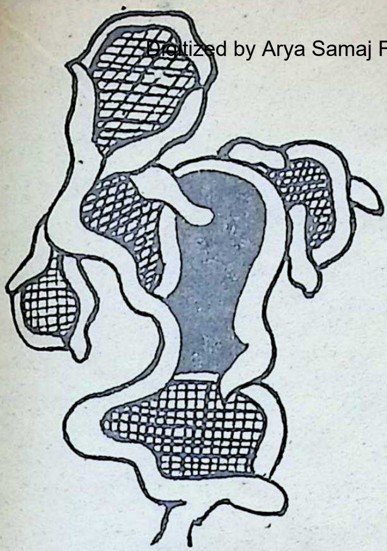

आसमानी रोटी

राजेन्द्र अनुरागी

बर्फ़ीले खेतों में भविष्य की आशाएँ बो
दूधिया धवल-पाखी
यहाँ गया–वहाँ गया;
सार्थ-बद्ध हो होकर !
    हर जगह शिकारी हैं,
    हर जगह थोड़े-बहुत इंसान के बेटे
    अभी भी वही हैं,
    जो पीढ़ियों पहले रहे थे,
    उस समय, जब
    आदमी को पसीने से फसल बोना
    नहीं आता था।
आदमी के नाम पर आबाद
अपनी सभ्य दुनिया से
गुज़रते
पाखियों का क़ाफ़िला
आधा हुआ !
हल-बखर से धरित्री पर
उगाने की अपेक्षा
इन्सान ने
बन्दूक से नभ में
सहज रोटी उगाई;––
खून से लथपथ !
घृणास्पद !!
    बीत गयी शीत
    धरा रीत चली।
    उड़ चले पाखी।
    जहाँ उनका भविष्यत्
    नरम पंखों के सतत आघात से
    निज आवरण चटका रहा है
भुखमरे संसार की खातिर
बरफ़ में
    आसमानी रोटियों के ढेर
फिर पनपा रहा है !

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एन्द्रिला द्वारा प्रस्तुत

वैज्ञानिक प्रयोगशाला में

परमाणु को दो टूक तोड़कर विज्ञान ने अचेतन भौतिक तत्त्व पर अपनी चरम विजय घोषित की है। इसके बाद आज मानव के विज्ञान-लोक की सबसे बड़ी पुकार है चेतन पर अपनी प्रभुता स्थापित करने की, चेतन के निगूढ़ उद्गम का भेद जानकर, उसकी निर्माण-प्रक्रिया को अपने स्वाधीन कर लेने की। हर असम्भव को सम्भव बना लेने के दावेदार विज्ञान के सामने आज प्रश्न है: क्या सचमुच वह अपनी प्रयोगशाला में कृत्रिम भौतिक-रासायनिक प्रक्रिया से जीवन-तत्त्व का निर्माण कर लेगा ?

फ़्लोरिडा स्टेट युनिवर्सिटी के एक वैज्ञानिक मंडल ने सम्पूर्ण आत्मविश्वास के साथ यह आस्था प्रकट की है कि हां, वह समय दूर नहीं है, जब वे निश्चय ही अपनी प्रयोगशाला में अन्ततः जीवन-तत्त्व का निर्माण कर लेंगे।

अभी तक वैज्ञानिक टेस्ट-ट्यूब में तो जीवन-तत्त्व का निर्माण नहीं कर पाये हैं, लेकिन वे एक ऐसे संयुक्त (सिंथेटिक) पदार्थ का निर्माण अवश्य कर चुके हैं जो जीवघटक (आरगेनिज्म) में पाये जानेवाले नैसर्गिक खाद्योज (प्रॉटीन) से बहुत अधिक समानता रखता है, और जिसके कुछ रासायनिक पृथक्करणों से पता चला है, कि उसमें और मौलिक जीवन-तत्त्व में कोई बुनियादी अन्तर नहीं है।

इस नवनिर्मित संयुक्त पदार्थ को प्रोटीनाइड कहते हैं। यह बेक्टीरिया का पोषण कर सकता है, और इसका पोषणात्मक मूल्य सिद्ध हो चुका है।

उपरोक्त वैज्ञानिक-मंडल के नेता हैं अमरिका के शीर्षस्तम्भ प्राणि रासायनिकों में से एक, डॉ. सिडनी डब्ल्यू. फॉक्स। वे केलीफोर्निया के एक छोटे-से,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह दिन दूर नहीं, जब विज्ञान की प्रयोगशालाओं में निर्जीव भौतिक-तत्त्व को जीवन-तत्त्व में परिणत करके मनुष्य रोग, जरा और मरण की विनाशक शक्तियों पर विजय प्राप्त करेगा।

जीवन - तत्त्व का निर्माण निकट

छरहरे-से वैज्ञानिक हैं। उन्हें पूर्ण आत्म-विश्वास है कि आज हमें उन भौतिक परिस्थितियों का भली प्रकार ज्ञान हो चुका है, जिनके संयोग से सबसे पहले पृथ्वी पर कोष्ठ (सेल) का विकास-प्राकट्य हुआ था।

इसके अतिरिक्त वे और उनके सहयोगी, उन रासायनिक प्रक्रियाओं के महत्त्वपूर्ण अंशों की ठीक दूसरी अनुकृति निर्माण कर सकते हैं, जो प्रकटतया प्रथम कोष्ठ में प्राण-प्रतिष्ठा करने के लिए जिम्मेवार रहे होंगे।

उपरोक्त वैज्ञानिक अनुसन्धान 'फ्लोरिडा स्टेट युनिवर्सिटी' की 'ओशियेनोग्राफिक इन्स्टिटयूट' में डा. फॉक्स के नेतृत्व में चल रहा है और इस योजना का मुख्य उद्देश्य है, उन भौतिक और रासायनिक परिस्थितियों की खोज जिन्होंने पृथ्वी पर जीवन-तत्त्व की सृजना की।

मूलतया सबसे पहले उक्त योजना के संगठन का हेतु यह नहीं था कि कृत्रिम उपायों से जीवित कोष्ठ तैयार किया जाये। पर यदि उपरोक्त अनुसन्धान के फलस्वरूप यह संभव हो जाता है, तो यह इस बात का सूचक होगा कि, अनुसन्धान-कर्ताओं के सामने इस तथ्य की एक सही तस्वीर है कि कैसे अरबों-खरबों वर्ष पहले स्वतः स्फूर्त रूप से पृथ्वी पर जीवन-तत्त्व का आविर्भाव हुआ था।

इस युग की महानतम सिद्धि

अमेरिका के एक अग्रणी खगोल-शास्त्री डा. हारलो शेपले ने हाल ही में इस योजना का अवलोकन करके उस पर अपना अभिप्राय व्यक्त करते हुए कहा था कि जीवन-तत्त्व का निर्माण अन्तरिक्ष-यात्रा और चन्द्रलोक-यात्रा से महत्तर कोटि की वैज्ञानिक सिद्धि होगी।

इस खोज को आरम्भ करने में सहज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिज्ञासा तो एक कारण था ही, पर डॉ. फॉक्स ने इसके कुछ व्यवहारिक कारण भी प्रस्तुत किये हैं। उनका कथन है कि "चाहे जीवित कोष्ठ का निर्माण हो या न भी हो, इस खोज से हम यह आशा तो करते ही हैं कि सभी प्रकार के कोष्ठों के बारे में हमें अधिक व्यापक-विशद ज्ञान प्राप्त हो सकेगा और उसके फलस्वरूप अनेक असाध्य रोगों पर काबू पाने में हमें बड़ी सहूलियत हो जायेगी। खास तौर पर, हम आदिम जीवन-तत्व का जितना ही अधिक ज्ञान प्राप्त करेंगे, उतनी ही जल्दी हम कैंसर को समझ सकेंगे। ऐसे अध्ययन के द्वारा बुढ़ापे के शरीर पर अधिकार करने की प्रक्रिया को भी अधिक अच्छी तरह समझा जा सकेगा। भोज्य-पदार्थों और पोषक तत्त्वों के बारे में भी हम अपनी इस खोज द्वारा, कुछ नवीनतम बुनियादी सूचनाएँ प्राप्त कर सके हैं।"

जीवन-तत्त्व कहाँ प्रगट हुआ ?

डॉ. फॉक्स ने यह भी कहा कि वैज्ञानिक अभी उन सारे ही रासायनिक परिवर्तनों को नहीं समझ पा रहे हैं जो निर्जीव भौतिक द्रव्य में, प्रथम-कोष्ठ को जन्म देते समय होते हैं। यही एक खास कारण है कि किसी भी वैज्ञानिक प्रयोगशाला में अब तक कृत्रिम जीवन-तत्त्व का निर्माण नहीं हो सका है। डा. फॉक्स का कथन है कि जीवनोत्पत्ति की पृष्ठभूमि में सर्वाधिक सुसंगत मान्यता यही हो सकती है कि सबसे पहले पृथ्वी के ज्वालामुखी प्रदेश में ही जीवन-तत्त्व प्रगट हुआ होगा। इस मान्यता के अनुसार जो द्रव्य प्रथम जीवित प्रकोष्ठ के भीतर नये होंगे, वे पृथ्वी के धरातल के नीचे रहे होंगे, जहाँ बहुत थोड़ा पानी रहने के कारण वे काफी तीव्र उष्णता और दबाव के भीतर से गुजरे होंगे। तभी संश्लिष्ट रासायनिक प्रतिक्रिया का आरंभ हो गया होगा; पर उस द्रव्य में तब भी जीवन-तत्त्व का अभाव था।

उसके बाद वे द्रव्य किसी उष्ण आदिम समुद्र में स्थानान्तरित हुए होंगे। जलमय परिवेश में होनेवाली प्रतिक्रिया ने एक ऐसे कोष्ठ को जन्म दिया होगा, जो अपने ही भीतर से दूसरे जीव-कोष्ठ का निर्माण कर सकता था। यह कोष्ठ जीवित था।

यह मान लेने में कि सारी ही प्रतिक्रिया समुद्र में ही हो गयी होगी, अनेक ऐसी समस्याएँ उपस्थित होती हैं, जिनका हल पाना संभव नहीं। प्रमुख समस्या यह है कि समुद्र में द्रव रस इतने सौम्य रहे होंगे, कि उनमें प्रतिक्रिया बहुत धीमी रही होगी। दूसरी समस्या यह है कि हम ऐसा कोई तरीका नहीं जानते जिसमें, जीवन के अभाव में, ऐसी परिस्थितियों में प्रमुख प्रोटीन जैसे द्रव्यों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एमीनोएसिड अपनी प्रतिक्रिया कर सकें।

कृत्रिम खाद्योज का प्रथम निर्माण

अब से चार वर्ष पूर्व सब से पहले प्रयोग कृत्रिम खाद्योज (प्रोटीन) के निर्माण की दृष्टि से किये गये थे। आरम्भिक प्रयोगों में वैज्ञानिक प्रोटीन के बारे में कुछ अधिक नहीं जान पाये। लेकिन अचानक ही प्रयोगों के दौर में यह देखने में आया कि प्रोटीन के निर्माता तत्व एमीनो एसिड को गरम करने पर कुछ ऐसी प्रतिक्रियाएँ हुईं जो जीवित पदार्थों से बहुत अधिक मिलती-जुलती थीं, और उनसे कुछ ऐसे द्रव्य पैदा हुए जो वनस्पतियों और पशु-प्राणियों में पाये जाते हैं।

'केलिफोर्निया इंस्टिटयूट आफ टेकनालाज़ी' के अनुसन्धानकर्ता डा. जी. डब्ल्यू. बीडल ने आरंभ में कुछ ऐसे चिन्ह देखे थे, जिनसे सूचना मिली थी कि जीवित कोष्ठ की प्रत्येक प्रतिक्रिया, एक विशिष्ट प्रकार की जीव-जाति (जिनी) द्वारा नियन्त्रित होती है। वह जीव-जाति अपना प्रभाव 'एन्झाइम्स' द्वारा उत्पन्न करती है और ये सारे ही 'एन्झाइम्स' प्रोटीन होते हैं।

इस जटिल अनुसंधान की एक मौलिक खोज यह थी कि इस प्रक्रिया में एक ऐसे द्रव्य का निर्माण होता है, जिसे 'यूराइडू-सस्सिनिक एसिड' कहा जाता है। इस एसिड का महत्त्व इस बात में है कि 'न्यूक्लीइक एसिड' की संयोजन प्रक्रिया में यह एक महत्त्वपूर्ण कदम होता है। उपर्युक्त जीव-जाति में यह एसिड ही एक प्रमुख द्रव्य होता है। मूल जीव-जातियों की उत्पत्ति को समझने की दिशा में प्रगति करते हुए, वैज्ञानिक अनुसंधानकर्त्ता जीवन के गहिरतम और मौलिकतम रहस्यों की थाह ले रहे हैं। मूल जीव-योनि ही वह पदार्थ-तत्व हैं, जिनमें से किसी भी व्यक्ति विशेष को अपनी आंखों का रंग तथा दिमागी क्षमता उत्तराधिकार में प्राप्त होते हैं।

डा. फॉक्स का कथन है कि प्रयोगशालाओं में पिछले छह महीने में जिन 'प्रोटीनाइड्स' का निर्माण हुआ है, उनमें नैसर्गिक प्रोटीन में पाये जानेवाले सभी अठारह प्रकार के 'एमीनो एसिड' विद्यमान हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि वे उसी अनुपात में नहीं हैं। सेन्फ्रांसिस्को के एक वैज्ञानिक सम्मेलन में डाक्टर फॉक्स ने तथा उनके सहयोगी काओर हेराडा तथा एलन सेवेगोट्स्की ने उपर्युक्त घोषणा की थी। गत वर्ष मास्को में हुए प्राणि-रासायनिकों के सम्मेलन में भी उन्होंने अमेरिका के प्रतिनिधि के नाते अपने इस काम का एक विवरण प्रस्तुत किया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भविष्य की रूप-रेखा

डा. फॉक्स ने कहा है, कि जीवन-प्रक्रियाओं में की जानेवाली खोज से यह परिणाम निकला है कि वैज्ञानिक अब एक ऐसी सम्भावना की रूप-रेखा तैयार कर सकते हैं, कि किस प्रकार निर्जीव भौतिक तत्त्व आवश्यक प्रतिक्रियाओं से गुजर कर विशिष्ट जीव-योनियों और एन्झाइमों में विकसित होता हुआ जीवन-तत्त्व में परिणित होता है। अभी एक सब से बड़ा प्रश्न जो अनुत्तरित है, वह यह है कि अभी स बात का पता नहीं चल सका है कि कैसे विशिष्ट जीव-योनियाँ 'एन्झाइमो' की मार्फत अपना प्रभाव उत्पन्न करती हैं।

लेकिन अन्ततः निष्कर्ष रूप में हम इतना तो कह ही सकते हैं, कि प्रस्तुत प्रतिक्रियाओं, एन्झाइमों, और जीव-योनियों की व्याख्या के आधार पर हम जीवन तत्त्व की उत्पत्ति का एक रेखा-चित्र तो बना ही सकते हैं। वह दिन दूर नहीं, जब विज्ञान प्रयोग शालाओं में निर्जीव भौतिक तत्व को जीवन-तत्त्व में परिणत करके मनुष्य रोग, जरा और मरण की विनाशक शक्तियों पर विजय प्राप्त करेगा।

★

अपनी आवश्यकता के लिए खरीदिए

Hind FLOORING TILES

हाइड्रालिक इटालियन मशीनों से

निर्मित : प्रीफ़ब (पूर्वनिर्मित) आर. सी. सी. गृह, सीमेण्ट पाइप, टँक, रंगाई की नाँदें व बाग़ीचों के सामान का निर्माण करते हैं। सरकार, रेलवे, म्युनिसिपैलिटी, पी. डब्ल्यु. डी. के कंट्राक्टर हैं और सामान मुहैया करते हैं।

हिन्दुस्तान सीमेन्ट पाइप्स एण्ड कंक्रीट कन्स्ट्रक्शन कं०

मुख्य कार्यालय : ओछवलाल गोरधनदास शाह

टाइल, पाइप्स एण्ड सेनीटरी मरचेण्ट्स

खाडीआ, चार रस्ता, अहमदाबाद

फैक्टरी : सुएज फार्म रोड, अहमदाबाद

कार्यालय तथा निवास फोन : ५२२९२ फैक्टरी फोन : ५१६३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्ष्मी शंकर व्यास

हिमालय के योगी; स्वामी शिवानन्द

जिनकी आवाज़ सुन कर जर्मनी की महिला भारत आयी और आध्यात्मिक आकर्षण के वशीभूत होकर, छह मास तक योगाभ्यास की शिक्षा लेती रही!

भस्ममण्डित भव्य विशाल ललाट, तप-तेज से चमकता मुखमण्डल, साधना और योग के ओज से दीप्त गैरिक वस्त्रों में दमकती कंचन-काया, सुदीर्घ अजानुबाहु और अधरों पर मन्द मुस्कान की रेखा सहज ही हिमालय के विश्वप्रसिद्ध सन्त शिवानन्द की मूर्ति हमारे कल्पना चक्षु के सम्मुख उपस्थित कर देती है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि के इस महान भारतीय सन्त का गत जुलाई मास में निधन हो गया। आप के निधन से भारत का असाधारण योगी तथा मानव का महान सेवक उठ गया।

स्वामी शिवानन्द जी का जन्म दक्षिण की गंगा ताम्रपर्णी के तट पर, दक्षिण की अयोध्या नगरी पदामडाई में सोलहवीं शताब्दी के महान पण्डित अप्पय दीक्षित के वंश में ८ सितम्बर, सन् १८८७ ईस्वी को हुआ। आप के पिता का नाम श्री. पी. एन. वेंगु अय्यर तथा माता का नाम श्रीमती पार्वती अय्यर था। सन्यास लेने के पूर्व शिवानन्दजी का नाम पी. वी. कुप्पूस्वामी अय्यर था। आप अपने बचपन से ही अपनी विलक्षण प्रतिभा के लिए प्रसिद्ध थे।

त्रिचनापल्ली में उच्च शिक्षण के साथ आपने बाइबिल का भी अध्ययन-मनन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया। ए[illegible] कर आपने चिकित्सा कार्य प्रारम्भ कर दिया। सन् १९१३में २५ वर्षकी अवस्था में आप मलाया गये और वहाँ के प्रसिद्ध अस्पताल के प्रधान चिकित्सक बने। सन १९२० में आप सिंगापुर चले आये। यहाँ आप मलाया 'ट्रिब्यून' में स्तम्भलेखक भी नियुक्त हुए। आप लेख लिखते, चिकित्सा करते और निर्धन रोगियों को पथ्य के लिए भी धन देते। दस वर्षों तक मलाया में रहने के बाद सन् १९२३ ई. में आप भारत चले आये। मद्रास में एक मित्र के यहाँ सामान रख ये सीधे बनारस का टिकट लेकर चले आये। काशी-विश्वनाथ के दर्शन के पश्चात् नासिक और पूना गये। पूना से ७० मील पैदल ही पहाड़पुर की यात्रा की। यहाँ से चल ८ मई, १९२४ ई. को डाक्टर कुप्पू स्वामी ऋषिकेश पहुँचे और शंकराचार्य से शास्त्रार्थ करने वाले मण्डन मिश्र की परम्परा में काशी के प्रसिद्ध स्वामी विश्वानन्द सरस्वती से दीक्षा ले, स्वामी शिवानन्द बने।

स्वामी शिवानन्द जी का जीवन कठोर साधना तथा संयम का जीवन रहा है। संन्यास लेने के बाद स्वर्गाश्रम में आपने छः वर्ष तक कठिन तपस्या की। सन् १९३० में आपने कैलाश-मानससरोवर की यात्रा की। चारों धाम की यात्रा के प्रसंग में आपने योगिराज अरविन्द तथा [illegible] के भी दर्शन किये थे। सन् १९३२ ई. में आपने ऋषिकेश में स्वर्गाश्रम के सामने गंगा तट पर आनन्द कुटीर की स्थापना की। इसका विस्तार आज अनेकानेक संस्थाओं में हो गया है और अब यह हिमालय का एक विश्वविख्यात साधना केन्द्र है।

सन्त शिवानन्द जी अपने जीवन के प्रत्येक क्षण का सर्वजन हिताय उपयोग करते थे। निष्काम सेवा को ही आप कर्मयोग मानते थे। प्रातः तीन बजे ब्रह्म मुहूर्त में उठ शुचि हो गंगास्नान कर भगवन्नाम लेते हुए वे कुटिया में आते थे। नौ बजे तक जप-ध्यान के बाद आप जन-सेवा और चिकित्सा कार्य में लग जाते थे। दस बजे आप देश-विदेश के साधकों के पत्रों के उत्तर, आश्रमवासियों के कार्य का निरीक्षण-निर्धारण, भोजनाध्यक्ष को सुझाव तथा दर्शनार्थियों से वार्ता करते थे। ११ बजे वे अपनी कुटी में फल और दूध का आहार ग्रहण कर अल्प विश्राम करते थे। इसके बाद लेखन का कार्य आरम्भ हो जाता था। विविध विषय की अनेक पुस्तकों को एक साथ ही लिखाने का आपका अभ्यास था। पत्र-पत्रिकाओं के लिए लेख भी आप इसी समय लिखते थे। दोपहर को पुनः जप का क्रम चलता। अनन्तर 'कैवल्य गुहा' में शिष्य वर्ग तथा बाहर से आये साधकों को उपदेश-मनन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अवसर मिलता। संध्या को ५ बजे स्वामी शिवानन्द जी हीरक जयन्ती भवन में दर्शनार्थियों से मिलते और उनकी शंकाओं का समाधान करते। इसी समय वे पात्रता के अनुसार साधकों को अपने आशीर्वाद से युक्त आध्यात्मिक साहित्य प्रदान करते थे। इसके बाद गंगातट पर बैठ आप चिन्तन-मनन करते। रात्रि में संकीर्तन भवन में आते तथा प्रवचन करते थे। इसी समय आप अतिथियों को स्वयं निर्देश करते। अनन्तर अध्ययन-मनन कर आप शयन करते।

स्वामी शिवानन्द जी स्नेह, सेवा और साधना की प्रतिमूर्ति थे। आपने योग, वेदान्त, उपनिषद्, धर्म, दर्शन, संस्कृति, प्राकृतिक चिकित्सा, आत्मोन्नति, तथा जीवन निर्माण सम्बन्धी दो सौ से अधिक पुस्तकें लिखी हैं। इन पुस्तकों का हिन्दी तथा प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। आपकी अनेक पुस्तकें जिन विदेशी भाषाओं में भी अनुदित हुई हैं उनके नाम हैं—जर्मन, फ्रेंच, स्पेनिश, जापानी, रूसी, बर्मी।

सन् १९५३ में विश्व धर्म परिषद का सम्मेलन हृषिकेश में सन्त शिवानन्द की युगानुरूप परिकल्पना के अनुसार ही आयोजित हुआ। स्वाधीन भारत में यह अपने ढंग का प्रथम सम्मेलन था जिसमें न केवल देश के विशिष्ट विद्वानों और दार्शनिकों ने भाग लिया, अपितु विदेशों से भी धर्म, दर्शन एवं संस्कृति के मर्मज्ञ आये थे। संसार के प्रमुख धर्मों के दो सौ प्रतिनिधि इसमें सम्मिलित हुए। सम्मेलन का उदघाटन डाक्टर सर सी. पी. रामस्वामी अय्यर ने किया तथा श्री अनन्तशयनम् अयंगार ने भी प्रमुखता से भाग लिया।

राष्ट्रपति डाक्टर राधाकृष्णन् इसी वर्ष आपके आश्रम के कार्यक्रम में विशेषरूप से सम्मिलित हुए थे।

सन्त शिवानन्द जी के आध्यात्मिक चमत्कार का एक प्रसंग विशेष उल्लेख्य है। २० दिसम्बर, १९५१ ई. को नूरेन्बर्ग, जर्मनी की ५१ वर्षीया महिला लेखिका फ्रण्ड चार्लोटी वलिन्स्की हेलर भारत आयीं। आपने बताया कि स्वदेश में मुझे यह सुनायी पड़ा—'दुनिया की समस्याओं के बारे में तुमसे बात करना चाहता हूँ।' उस दिन से प्रायः नित्य यही ध्वनि सुनायी पड़ने लगी। जर्मनी में मुझे जो ध्वनि सुनायी पड़ी वह स्वामी शिवानन्द जी की थी। मैं अपने गुरु स्वामीजी के दर्शनार्थ भारत आयी हूँ और छः मास तक यहाँ रहकर उनसे योगाभ्यास की शिक्षा प्राप्त करूँगी। यह एक ही घटना प्रसंग सन्त शिवानन्द की महान् साधना और आध्यात्मिक भक्ति का परिचायक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णावतार

• श्री कन्हैयालाल मुन्शी

धारावाहिक पूर्ण-पुरुष लीला

द्वितीय खंड

[२]

सांदीपनि गुरु

महल के एक कोने में राजकुमारी रुक्मिणी बैठी थी और उसके सामने ही विदर्भ के राजकुमार रुक्मी की पत्नी सुव्रता बैठी आँखें फाड़े उसे देख रही थी।

'कल सारा दिन तुम कहाँ थीं ? तुम्हारी चिन्ता में ही मेरा पूरा दिन खराब हो गया !' सुव्रता ने भारी आवाज में, गुस्से के साथ कहा।

'मैं त्रिवक्रा के साथ थी,' रुक्मिणी ने कहा, 'उसके बाद मैं रानी देवकी के महल गयी। तब आप कंस की रानियों से मिलने गयी थीं।'

'तुम देवकी के महल किस लिए गयी यह मैं अच्छी तरह जानती हूँ। तुम्हारे भाई को आ जाने दो, फिर देखना !' सुव्रता ने कहा, 'तुम्हारे लिए हमें शर्मिन्दा होना पड़ता है। विदर्भ नरेश भीष्मकराज के नाम पर तुमने कलंक लगा दिया है।'

'और तुम क्या करती हो ? यही कि और कुछ ?' चीख कर रुक्मिणी ने कहा और फिर अपनी भाभी की तरफ आँखें निकालती हुई, होंठ भींच कर और अपने गुस्से को किसी तरह दबा कर खामोश बैठ गयी।

• • •

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रातःकाल ही कंस की श्मशान-यात्रा में भाग लेने के लिए अन्य राज अतिथियों के साथ रुक्मी भी गया था। जीवित रहते जिसको सभी लोग धिक्कारते थे, उसी राजा की अन्तिम यात्रा में भाग लेने सभी लोग शरीक हुए। राजकुल के प्रति ऐसा सम्मान व्यक्त करना उनका धर्म था। राजा उग्रसेन और घायल होने के कारण चलने में अशक्त वृद्ध अन्धक भी चले आये थे। बलराम और कृष्ण को साथ लेकर वसुदेव तथा अक्रूर भी उपस्थित हुए। अन्तिम विधि राजा उग्रसेन ने सम्पन्न की। कंस की चिता जलायी गयी और राख यमुना के जल में पधरायी गयी। उसके बाद नदी में स्नानविधि सम्पन्न कर सभी लोग घर लौटे।

रुक्मी जब राज अतिथियों के लिए सुरक्षित महल में अपने निवासस्थान पर पहुँचा तब मध्यान्ह बीत चुका था। उस समय उसका मिजाज ठीक नहीं था। राजाधिराज जरासन्ध के आश्रम में जो कई तरुण नरेश अपने-अपने प्रदेशों का विस्तार कर रहे थे, उन सब में अग्रगण्य कंस ही था। अपने कुछ मित्रों के साथ रुक्मी कंस के विजयोत्सव में भाग लेने मथुरा इसी आशा से आया था कि सभी तरुण राजाओं और कंस के बीच की संधि और मित्रता इससे अधिक दृढ़ हो जायेगी। परन्तु जब से वह आया, तब से ही सब कुछ विपरीत होता जा रहा था। वे दो किशोर, जो पीछे से वसुदेव के पुत्र निकल आये, उन्होंने तो उसे बस मार डालना ही बाकी छोड़ा था। छोटे भाई ने जो चमत्कार किये, उससे रुक्मी का द्वेष-भाव और भी भड़क उठा था।

कंस उसका मित्र था। जरासंध के आश्रय में गठित राज मण्डल का वह प्रधान था। और, उसी कंस का कृष्ण ने वध कर दिया! अब मथुरा का क्या होगा, यह कोई नहीं कह सकता था। शायद वसुदेव अथवा उसका पुत्र मथुरा की गद्दी पर बैठे। जरासंध यादवों को कभी क्षमा नहीं करेगा। इसलिए उनके साथ संधि करना निरर्थक था। इस प्रकार सभी बातें उल्टी हो रही थीं। निराश और निरुत्साह मन से वह अपनी पत्नी तथा भगिनी के पास पहुँचा।

'आर्यपुत्र, मैं तो तुम्हारी बहन से तंग आ गयी हूँ। अब आप ही इसे संभालें। मेरा उसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा', सुव्रता ने कहा।

'और मैं तुम दोनों से तंग आ गयी हूँ,' कोने में बैठी रुक्मिणी रोष भर कर बोल उठी।

'बात क्या है?' रुक्मी ने गुस्से से पूछा, 'तुम दोनों तो ऐसे झगड़ रही हो जैसे मुझे तुम्हारे झगड़े सलटाने के सिवाय और किसी बात की कुछ चिन्ता ही नहीं!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या हुआ रुक्मिणी ?'

'क्या नहीं हुआ ? पूछो अपनी पत्नी से। मुझसे ये कितना जलती हैं !'

'और यह तो मुझ पर और आप दोनों पर ही जलती है !' सुव्रता बोल उठी, 'कल बाहु-युद्ध के समय झरोखे से नीचे झुक-झुक कर देख रही थी और असभ्यों की तरह नाचती और चिल्ला रही थी।'

'मुझे नाचना हो तो मैं जरूर नाचूँगी। अपने पैरों से नाचती हूँ, तुम्हारे पैरों से नहीं !' रुक्मिणी ने रोषपूर्ण स्वर में कहा।

'मुझे मालूम है, तुम क्या कर रही थी ! उस दुष्ट युवक की तरफ देख रही थी। आर्यपुत्र, हम लोग जब मथुरा पहुँचे, तब आप के साथ जिसने बुरा बर्ताव किया, वही था वह युवक !' सुव्रता ने कहा।

'ऐसा उन्होंने क्या बुरा बर्ताव किया था ? यही तो न, कि भाई को उठाकर मेरे पास रख गये। तुम चाहती थी कि भाई को वे यमुना में फेंक देते ?' रुक्मिणी ने धृष्टतापूर्वक कहा।

'और अन्धकराज मारे गये, तब भी तुम मगन होकर नाचने लगी थी,' सुव्रता ने कहा।

'किस चतुराई से उन्होंने उसका वध किया ! एक ही वार किया और बस खेल खतम ! उसका मस्तक धड़ से अलग हो गया !' रुक्मिणी ने कहा।

'अब तुम दोनों अपना बकवास बन्द करो। दर असल बात क्या है, यह भी कोई कहेगा या नहीं ?' रुक्मी ने पूछा।

'और फिर यह आपकी लाड़ली बहन अदृश्य हो गयी' सुव्रता ने कहा।

'मैं अदृश्य नहीं हुई। मैं तो त्रिवक्रा के साथ......' रुक्मिणी ने कहा।

'उस हत्यारे से मिलने... ' सुव्रता बोल उठी।

'नहीं, मैं रानी देवकी से मिलने गयी थी। यहाँ हर कोई उन्हें सती-साध्वी मानता है,' रुक्मिणी ने बीच में ही उसे रोकते हुए कहा।

'नहीं, तुम गयी थी उस कृष्ण के पास...' सुव्रता ने कहा।

'नहीं, मैं रानी देवकी के पास गयी थी। और, वे भी वहाँ थे,' रुक्मिणी ने कहा।

'बस, बहुत हो चुका ! अब तुम दोनों अपना बकवास बन्द करो !' रुक्मी चिल्ला कर बोल उठा।

'भाई, पहले तुम अपनी पत्नी को रोको, वह कुछ कहेगी तो मुझसे भी जवाब दिये बिना नहीं रहा जायगा,' रुक्मिणी ने चिढ़ कर कहा।

'हाँ, दोष तो सदा मेरा ही रहता है !' सुव्रता जरा नरम पड़ गयी। 'भाई-बहन दोनों एक हो जाते हो। सारे परिवार में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस मैं ही तो एक बुरी हूँ ! आँसू पोंछने का उपक्रम करते हुए सुव्रता ने कहा।

"तो क्या भाई और बहन एक हो ही नहीं सकते ?' रुक्मिणी ने इस प्रकार कहा, मानों स्वयं से ही कह रही हो।

'वसुदेव के महल में क्या हुआ, यह तो कोई बताएगा नहीं और व्यर्थ का बकवास किये जा रही हैं। मेरे तो एक अक्षर भी समझ में नहीं आता !' रुक्मी ने कहा।

'अपनी लाड़ली बहन से ही पूछो न ! मैं क्या वहाँ गयी थी ?' तिरस्कारपूर्वक सुव्रता ने कहा।

'हाँ, मैं वहाँ गयी थी,' रुक्मिणी ने कहा, 'रानी देवकी मूर्छित हो गयी थी; इसलिए उनके पुत्र उन्हें उठा कर भीतर ले गये। मैं भी उनके साथ-साथ भीतर गयी।'

'मुझसे बिना पूछे ही यह चली गयी थी।' सुव्रता ने शिकायत की।

'रुक्मिणी क्या कहती है, यह तो मुझे सुनने दो !' अधीर होकर रुक्मी ने कहा। 'वहाँ क्या हुआ, यह मैं जानना चाहता हूँ।' वसुदेव के महल में जो कुछ हुआ, उसका महत्त्व कितना है, इसका उसे ख्याल हो आया।

आकाश की ओर दृष्टि उठा कर, मानों अपनी बात सुना रही हो, इस प्रकार सुव्रता ने कहा, 'यही तो मैं कह रही थी कि भाई-बहन दोनों एक हो गये हैं। एक ही माँ के उदर में से दोनों ने जन्म लिया है न ! मेरा क्या ? मैं तो परायी हूँ।'

'चुप रह !' रुक्मी चीख उठा। रुक्मिणी को सम्बोधित करते हुए फिर उसने प्रश्न किया, 'हाँ– फिर क्या हुआ ?'

'और क्या होता ? मैं त्रिवक्रा के पास जाकर बैठ गयी। थोड़ी ही देर में रानी देवकी की मूर्छा भंग हुई और फिर माँ-बेटे गले मिले। माँ ने रोना शुरू किया। बेटा बड़ी देर तक मीठे-मीठे और सरस बोल बोलता रहा !' रुक्मिणी ने भावार्द्र होकर कहा, 'वासुदेव जब बोलते हैं, तो मानों मधु के झरने बहने लगते हैं।'

'हाँ, तब कृष्ण ने क्या किया ?' रुक्मी ने पूछा, 'और कौन वहाँ आया था ?'

'उसके बाद यादव सरदार एकत्रित हो, चौक में एक विशाल वृक्ष के नीचे आकर बैठे और देवकी के पुत्र कंस की रानियों से मिलने चले गये,' रुक्मिणी ने कहा।

'लो और सुनो ! यह उसका नाम तक नहीं लेती। भीष्मक राज के पुत्र, आप इसका अर्थ समझ गये न !'* सुव्रता ने कहा।

---

* भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही ऐसी परम्परा चली आ रही है कि पत्नी अथवा वाग्दत्ता अपने पति का नाम नहीं लेती। पति के नाम का उल्लेख करना असंस्कारिता का सूचक समझा जाता है। 'अमुक के पुत्र' के रूप में उसका उल्लेख किया जाता है। सन्तान होने के बाद स्त्री पति को 'अमुक के पिता' कह कर सम्बोधित करती है। निम्न वर्ग की स्त्रियाँ ही अपने पति का नाम लेकर अथवा तू कह कर बुलाती हैं। उच्च वर्ण की स्त्रियाँ पति का नाम कभी नहीं लेतीं और उनके लिए बहुवचन का प्रयोग करती हैं। परन्तु पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित कुछ आधुनिक स्त्रियाँ प्राचीन संस्कारों और संस्कारी लोगों की परवाह किये बिना पति का नाम लेकर और कई बार तो लाड़ में उसे छोटा बना कर अथवा तू कह कर बुलाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मेहरबानी करके ज़रा चुप रहो!' अधिकारपूर्ण स्वर में रुक्मी ने कहा, 'हाँ, तो फिर यादव सरदारों ने क्या किया ?'

'उन्होंने मथुरा नरेश के रूप में कृष्ण को पसन्द किया,' रुक्मिणी ने कहा।

'शिव, शिव!' दुखार्द्र स्वर में रुक्मी बोल उठा।

'भाई, इतने दुखी मत हो। उन्होंने मथुरा की गद्दी पर बैठना अस्वीकार कर दिया,' कटाक्षपूर्वक रुक्मिणी ने कहा।

'अस्वीकार कर दिया! राजगद्दी पर बैठना!'

'हाँ, उन्होंने कहा कि मैं तो केवल एक ग्वाला हूँ, राजपद के योग्य नहीं। अब तो आप संतुष्ट हुए न! परन्तु मुझे तो उन पर बड़ा गुस्सा आ रहा है। जाने दो; यहाँ मेरे गुस्से की परवाह ही किसे है!' रुक्मिणी ने रोषपूर्वक कहा।

'गुस्सा क्यों नहीं आयेगा? इसे तो उसकी रानी बनना था न!' कटुता के साथ सुव्रता ने कहा, 'बेचारी की सभी आशाएँ धूल में मिल गयीं।'

तभी एक प्रतिहारी कक्ष में आया और प्रणाम कर बोला, 'सांदीपनि गुरु और अवन्तीराज जयसेन के पुत्र कुमार विन्द और अनुविन्द आपसे मिलने के लिए आये हैं और बाहर प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

दोनों स्त्रियाँ एकदम उठ पड़ीं और आगन्तुक जब भीतर चले आये तब दोनों ने ही जाकर सांदीपनि के चरणों में प्रणाम निवेदन किया। रुक्मी ने भी उसी प्रकार प्रणिपात किया। अवन्ती के राजकुमारों का भी उसने योग्य आदर-सत्कार किया। लम्बे क़द और विशाल देह के स्वामी सांदीपनि गुरु के स्नायु सुबद्ध और बलवान थे। उनका तेजस्वी मुख-मण्डल काली दाढ़ी और सर पर की जटा से सुशोभित था। उनकी आँखें तेजस्वी, नासिका नुकीली और मुखमुद्रा प्रसादपूर्ण थी।

महा समर्थ ऋषि परशुराम भार्गव के आश्रम से शिक्षा प्राप्त कर पच्चीस वर्ष पूर्व वे बाह्य जगत में आये थे और फिर शस्त्रास्त्र-विद्या पारंगत हो कर उन्होंने विविध स्थानों का परिभ्रमण किया था। पन्द्रह वर्षों से अवन्ती में उनका आश्रम चल रहा था। शस्त्रविद्या की शिक्षा के लिए यह आश्रम श्रेष्ठ माना जाता था और उस प्रदेश के राजपुरुष अपने तथा अपने सरदारों के पुत्रों को वहीं शिक्षा प्राप्त करने भेजते थे। ऐसा कहा जाता था कि ऐसी कोई युद्धविद्या अथवा व्यूह-रचना नहीं, जो सांदीपनि गुरु से नहीं सीखी जा सकती। रुक्मी ने भी उन्हीं के आश्रम में रह कर शिक्षा प्राप्त की थी। विन्द और अनुविन्द उस समय उन्हीं के पास रहकर विद्याभ्यास कर रहे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ समय से करीब चालीस शिष्यों को साथ लेकर सांदीपनि गुरु प्रवास को निकले थे। भिन्न-भिन्न राजसभाओं में उनका यथोचित सत्कार किया गया। इन दिनों अपने शिष्यों सहित वे मथुरा आ पहुँचे थे और वहाँ से अपने आश्रम लौटने की तैयारी कर रहे थे।

'गुरुदेव, क्या आज्ञा है?' रुक्मी ने पूछा।

'रुक्मी, राजा उग्रसेन ने तुम्हें यहाँ पन्द्रह दिन और रुक जाने के लिए निवेदन किया है,' सांदीपनि ने उत्तर दिया।

'पन्द्रह दिन! नहीं, नहीं, राजा कंस मेरे मित्र थे; मुझे यहाँ अब और अधिक रहना पसन्द नहीं!' रुक्मी ने कहा।

'तुम्हारी भावनाओं को मैं समझता हूँ, वत्स! परन्तु राजा उग्रसेन का बड़ा आग्रह है। विधि की रचना को कोई अन्यथा नहीं कर सकता,' सांदीपनि ने कहा।

'कुमार, अवश्य रुक जाइए!' विन्द ने आग्रहपूर्वक कहा, 'गुरुदेव के साथ सभी मिल कर अवन्ती जायेंगे तो बड़ा अच्छा रहेगा।'

'नहीं, मुझे तो यहाँ से तत्काल चले ही जाना है। पन्द्रह दिन ठहर कर मैं क्या करूँगा?' रुक्मी ने यह समझते हुए कि सांदीपनि के वचन का अनादर करना कठिन है, कुछ संकोच के साथ कहा।

'यहाँ आकर शोक के बारह दिन पूरे हुए बिना चला जाना उचित नहीं और कार्तिक की पंचमी को बलराम तथा कृष्ण के उपवीत संस्कार का समारम्भ होने वाला है,' सांदीपनि ने कहा।

'इन दोनों युवकों का उपवीत संस्कार होगा? अभी तक उनका यह संस्कार नहीं हुआ?' रुक्मी ने आश्चर्यपूर्वक पूछा।

'तुम तो जानते ही हो कि अब तक इन दोनों का लालन-पालन ग्वालों के तरीके से ही हुआ है; परन्तु अब उन्हें योग्य संस्कार-दीक्षा देने की आवश्यकता है,' सांदीपनि ने कहा।

'गुरुदेव, क्या यह सच है कि कृष्ण ने मथुरा की राजगद्दी अस्वीकार कर दी?' रुक्मी ने पूछा।

'तुम्हें सभी कुछ मालूम है, ऐसा लगता है। वैसे तो इस बात को हम गुप्त ही रखना चाहते थे, परन्तु अब जब तुम पूछते ही हो, तो बता देता हूँ कि यह बात सच है,' सांदीपनि ने उत्तर दिया।

'उसने अस्वीकार क्यों कर दिया? मैं तो समझता था कि गद्दी प्राप्त करने के लिए वह बहुत उत्सुक है और इसीलिए उसने अपने मामा का वध भी किया,' रुक्मी ने कटाक्षपूर्वक कहा।

'विदर्भकुमार, कितने कम लोग इन बालकों को पहचानते हैं! वे उत्सुक हैं अधर्म का नाश करने के लिए, राजगद्दी पर बैठने के लिए नहीं!' सांदीपनि ने कहा।

'आपको कैसे मालूम? क्या यह सम्भव नहीं कि [illegible] भी उनके शत्रु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हों ?' रुक्मी ने शंका व्यक्त की।

'कोई उनका शत्रु नहीं है। सभी कृष्ण को राजपद पर स्थापित देखना चाहते थे,' सांदीपनि ने कहा।

'तो अब वह क्या करना चाहता है ?' रुक्मी ने प्रश्न किया।

'हमारे साथ शिक्षा प्राप्त करने के लिए दोनों भाई गुरुदेव के आश्रम में आनेवाले हैं,' अनुविन्द ने कहा।

'ओह! सचमुच!' रुक्मी ने आश्चर्य प्रकट किया।

'उनका आना क्या तुम्हें अच्छा नहीं लगता ?' सांदीपनि ने पूछा। 'वृन्दावन में कुछ मास मैं उनके साथ रहा चुका हूँ और यह भी तुम्हें बता देना चाहता हूँ कि उनके समान शिष्यों को सिखाने का लोभ मैं नहीं छोड़ सकता,' गुरुदेव ने कहा।

'तो क्या आप यह चाहते हैं कि हम लोग सब साथ ही यहाँ से रवाना हों ? क्यों, तुम्हारी क्या राय है ?' अपनी पत्नी की ओर देख कर रुक्मी ने पूछा। उसके मन में यह शंका उठ खड़ी हुई थी कि अधिक दिन रुकने के लिए उसके प्रति जो आग्रह दिखाया गया है, उसमें कोई गूढ़ रहस्य अवश्य होना चाहिए। उस रहस्य को जानने के लिए वह उत्सुक था। विचार करने के लिए भी उसे कुछ समय की आवश्यकता थी।

'मेरा तो यही विचार है, भाई, कि यहाँ कुछ दिन और रुका जाय। गुरुदेव के वचन को हमें शिरोधार्य करना चाहिए,' रुक्मिणी ने कहा। उसकी आँखें चमक उठीं। सुव्रता ने कठोर दृष्टि से उसकी ओर ताका और फिर अपने पति के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा, 'मेरे विचार से तो यहाँ से चले चलना ही ठीक है। गुरुदेव पीछे से अवन्ती के राजकुमारों के साथ पहुँच जायेंगे।'

'कुमार, इन दोनों नारियों के मन एक दूसरे से विपरीत मत के हैं,' सांदीपनि ने किंचित मुस्करा कर कहा। 'इसलिए अब तुम्हें अपना निर्णय स्वयं करना है। तुम जो भी निर्णय करोगे, उसका समर्थन इन दो में से एक तो करेगी ही। यहाँ रुकना ही शायद ठीक रहेगा। कुछ असाधारण समस्याएँ उत्पन्न होने की भी यहाँ सम्भावनाएँ हैं और तुम्हारे पिता भोजश्रेष्ठ भीष्मक स्वभावतः ही यह चाहेंगे कि तुम्हें इन सब बातों की जानकारी हो।'

'यदि आपकी ऐसी ही आज्ञा है, तो मैं रुक जाऊँगा। परन्तु यहाँ अधिक ठहरना मुझे अच्छा तो नहीं लगता,' रुक्मी ने कहा।

[क्रमशः]

—अनु. ओंकारनाथ शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[हरबंस कुँवर......पृष्ठ ३२ का शेष]

था, क्योंकि तब मौत को आलिंगन देने का मौका खो जाने का भय था।

भम्मरिया के तट पर जवान औरतें टूट पड़ी थीं, मानो किसी खज़ाने की लूट हो रही हो। जो पहले आये, उसकी जीत, इस बात की जैसे होड़ लगी हुई थी। जीवन के बदले मौत का आनन्द लेने की जैसे वहाँ स्पर्धा हो रही थी।

आँखें बंद करके हरबंस ने मोक्षदाता भम्मरिया में अपना शरीर झुका दिया।

किन्तु अन्य बहुत सी कमसिन औरतों की तरह, हरबंस की किस्मत में भी मौत नहीं बदी थी। और दिनों जिसमें ऊपर तक पानी उछलता रहता था वही भम्म-रिया कुआँ आज मानव देहों से भरा हुआ था। सहारा के रेगिस्तान में आदमी ज़िन्दा रहने के लिए पानी को तरसते हैं, यहाँ उसके बिल्कुल ही विपरीत परिस्थिति थी। भम्मरिया में स्त्रियाँ मृत्यु का आलिंगन करने के लिए व्याकुल थीं। पर बहुत बड़ी तादाद में जिन्दा मानवशरीरों के ढेर ने पानी को अदृश्य कर दिया था। मरने के लिए लोग तड़प रहे थे। किन्तु मौत महँगी हो बैठी थी। मानो मुनाफाखोरों ने मौत जैसी चीज़ को भी काला बाज़ार में ढकेल दिया था।

अनेकों का मुक्तिदाता हो जाने के बाद भम्मरिया कुआँ अब औरों को मौत की भेंट दे सकने में असमर्थ हो गया था। अपनी इस अशक्ति के कारण मानो वह शर्म और क्षोभ अनुभव कर रहा था, पर उसी क्षण उसकी लाज रखने हमला-खोर आ पहुँचे। इस भम्मरिये ने अनेकों स्त्रियों को जीवनदान दिया है, यह बात उन जीवनघातकों की दृष्टि से बाहर न रह पायी थी। पानी में न डूब पाने के कारण जिन्दा रह गयी औरतों को उन लोगों ने बीन-बीन कर बाहर निकाला। अन्त में हरबंस भी हमलाखोरों के हाथों में जा पड़ी, तब वह भम्मरिया की ओर देख कर मौन ही उलाहना देने लगी, 'धिक्कार है तुझे, ऐन मौके पर ही तूने मुझे धोखा दे दिया...!'

भम्मरिया बोल पाता तो कहता, 'इसमें मेरा क्या दोष...? मैंने तो अपनी शक्ति भर काम कर ही दिया है...!'

–अनु० ज्योत्स्ना मिलन

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माता दंतेश्वरी की मूर्ति

मध्य प्रदेश के बस्तर जिले में दंतेवाड़ा स्थित माता दंतेश्वरी का मंदिर एक सिद्ध मातृ स्थानक है। जानकार उपासक इसे जागृत मातृ-साधना पीठ कहते हैं। दंतेवाड़ा की दंतेश्वरी बस्तर के आदिवासियों की आराध्य देवता हैं। दुर्गा सप्तशती की रक्त दन्तिका ही यहाँ दंतेश्वरी के रूप में विराजमान हैं।

अनिलकुमार

जागृत शक्तिपीठ : दन्तेवाड़ा

दक्ष प्रजापति के यज्ञकुण्ड की आहुति बनी सती का अधजला शरीर कन्धे पर रखकर, विनाश का देवता महाशिव, रौद्र भाव से धरती को रौंदता हुआ वीराने में दक्षिणोत्तर भटकता रहा। सुख के हिमालय पर आसीन जगत-पिता का वह दारुण दुःखावेग कैसा रहा होगा? कल्पना मात्र से मानस-लोक गंगा, सिन्धु, ब्रह्मपुत्र बनकर उमड़ने लगता है।

चराचर के अणु-रेणु की सुधि रखनेवाले स्वयं ही सुध-बुध खोकर विचरते रहें तो क्या होगा? किन्तु सदाशिव की यह पीड़ा भी भक्तों के लिए कल्याण-तीर्थ बनी। कालान्तर में शिव के रौद्र से विश्व का अकल्याण होते देख, विष्णु ने अपने सुदर्शन-चक्र द्वारा सती के मृत शरीर को गुप्तरूप से छिन्न कर, स्थान-स्थान पर गिराकर शिवजी के कंधे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का बोझ एक दिन निःशेष कर दिया। कहते हैं, जगज्जननी का शरीरांश जहाँ-जहाँ गिरा वहीं एक जागृत शक्ति-पीठ बन गया। कंधे पर रखा अंतिम अंश भी जब भूमि पर गिर पड़ा तब शंकर की महानिद्रा टूटी। वे आवेश और उद्वेग से मुक्त हुए। ज्ञान की आँखों से घटित को जानकर वे उन-उन की ओर भैरव रूप में दौड़ पड़े जहाँ-जहाँ भैरवी के फूल विसर्जित हुए थे। शक्ति-पीठ में भैरव का निवास शास्त्र-संमत कहा जाता है।

मध्यप्रदेश के बस्तर जिले में दंतेवाड़ा स्थित माता दंतेश्वरी का मंदिर ऐसा ही सिद्ध मातृ स्थानक है। जानकार उपासक इसे जागृत मातृ-साधना-पीठ कहते हैं। दंतेवाड़ा की दंतेश्वरी बस्तर के आदि-वासियों की आराध्य देवता है। ग्रंथों में जिसकी भयंकरता का वर्णन आया है—

रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वांगभूषणा।।
रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तकेशातिभीषणा।
रक्ततीक्ष्णनखा रक्तवसना रक्तदन्तिका।।

वह रक्तदन्तिका ही यहाँ दंतेश्वरी के रूप में विराजमान हैं।

देवी स्वयं ही अपने उपासक पर प्रसन्न होकर दंतेवाड़ा नामक स्थान पर कैसे रुक गयीं और फिर सूक्ष्म तेजस्वरूप में यहाँ कैसे सदैव विराजने लगीं, उसकी कथा इस प्रकार कही जाती है।

बस्तर के वर्तमान शासन द्वारा अपदस्थ राजा भंजदेव के आदिम पूर्वजों में जीहा नामक क्षात्रतेजसम्पन्न व्यक्ति शक्ति का परम उपासक था। पुत्र की भक्ति से प्रसन्न माता ने एक दिन उसे दर्शन दिया और कहा—'बेटा, तुम

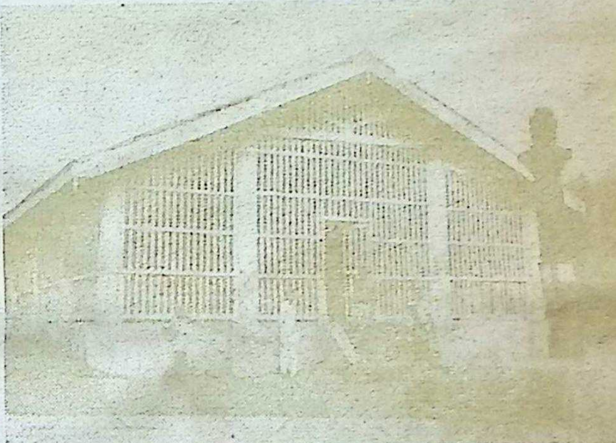

माता दन्तेश्वरी का मन्दिर

आगे चलो। मैं पीछे-पीछे आ रही हूँ। जहाँ तक चलोगे वहाँ तक की भूमि पर, तुम्हारा और तुम्हारे वंशजों का राज्य होगा।'

भक्त ने शंका की— 'मैं कैसे विश्वास करूँ माँ, कि तुम मेरे पीछे सचमुच चल रही हो!'

माता ने कहा—'मेरे पाँव के नूपुर बजेंगे। पर जिस क्षण तुम पीछे मुड़कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखोगे (अर्थात् मुझ पर अविश्वास करोगे) उसी समय उसी स्थल पर मैं अदृश्य हो जाऊँगी ।'

माता का उपासक धुर दक्षिण से उत्तर की ओर चला। काफी कोस चलने पर सामने शंखिनी और डाकिनी नदियों का संगम दिखायी देने लगा। पुजारी नदी तट की रेत में उतर कर आगे बढ़ा। तट की रेत में चलते हुए उसने पीछे नूपुर-ध्वनि नहीं सुनी; अतः माता की प्रतिज्ञा भूल कर उसने अविश्वासपूर्वक पीछे मुड़कर देखा। देवी वहीं अदृश्य हो गयीं। उपासक दुखी हुआ। इन दो नदियों के संगम पर ही दंतेश्वरी देवी का भव्य मंदिर है। नदी तट पर ही गाँव बसा है। देवी के नाम पर ही ग्राम दंतेवाड़ा कहलाया।

दूसरे वर्ष तक वहीं संगम भूमि पर रहकर साधक ने कड़ी साधना कर माता को प्रसन्न किया। माता ने पुनः कृपा कर दर्शन दिये। भक्त ने वचन दिया—

'माँ, तुम पुनः एक बार मेरा विश्वास कर, मेरे पीछे-पीछे चलो। अब मैं मुड़कर नहीं देखूंगा।'

आराधक आगे-आगे, आराध्य पीछे-पीछे; दोनों पुनः चल पड़े — उत्तर की ओर। भक्त राज्यलोभ में पड़ा, तेजी से धरती नापता चला जा रहा था। देवी ने मोह-परीक्षा लेने की ठानी। उसने अपने वस्त्र बदल कर सामान्य रूप धारण कर लिया। जहाँ देवी ने कपड़े बदले वह स्थान वस्त्र बदलने के कारण 'बस्तर' कहलाने लगा। यहाँ दंतेवाड़ा के उत्तर में बस्तर नामक छोटा सा गाँव है। वैसे यह पूरा भू-भाग ही बस्तर कहलाता है। पहले यह एक देशी राज्य था। अब मध्यप्रदेश राज्य का एक जिला है।

दंतेवाड़ा की देवी बस्तर के आदिवासियों की परम आराध्या है। वे उसकी पूजा अत्यन्त निष्ठा से करते हैं। नवरात्रियों में यहाँ विशेष यात्रा जुटती है। पूजन, तर्पन और बलिदान की रेल-पेल मची रहती है। पशुबलि से अक्षरशः रक्त की धारा बह निकलती है।

दशहरे पर अपनी-अपनी स्थानीय देवता की ध्वजा-पताका, मुकुट आदि सहित जुलूस बनाकर यहाँ उत्साही आदिवासी जुटते हैं, वह रंगीन उत्सव और अपूर्व उल्लास केवल देखने की वस्तु है।

ऐसा कहा जाता है कि जो यहाँ आकर सच्चे मन से जो भी कामना करता है, उसकी आकांक्षा निश्चिय ही पूर्ण होती है।

दंतेवाड़ा जानेवाले यात्री रायपुर से जगदलपुर तक बस द्वारा पहुँचते हैं। जगदलपुर जिले का स्थान है। यहाँ से आगे दंतेवाड़ा के लिए नियमित बसें जाती हैं।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

THE NATIONAL RAYON CORPORATION LIMITED

WHERE QUALITY AND QUANTITY GO TOGETHER

THE LARGEST AND LEADING MANUFACTURERS OF RAYON YARN IN

450, 300, 150, 120, 100, 75 AND 60 DENIERS

Head Office :
Ewart House, Bruce Street,
Fort, Bombay 1.
Gram :
"NARACORP" BOMBAY
Phone : **259291**(5 Lines)

Registered Office :
Eros Bldg., 42 Queen's Road,
Fort, Bombay 1.
Phone : **245151; 245157**

Plant :
Mohone, Kalyan (C.Rly.)
Phone : KALYAN NRC

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

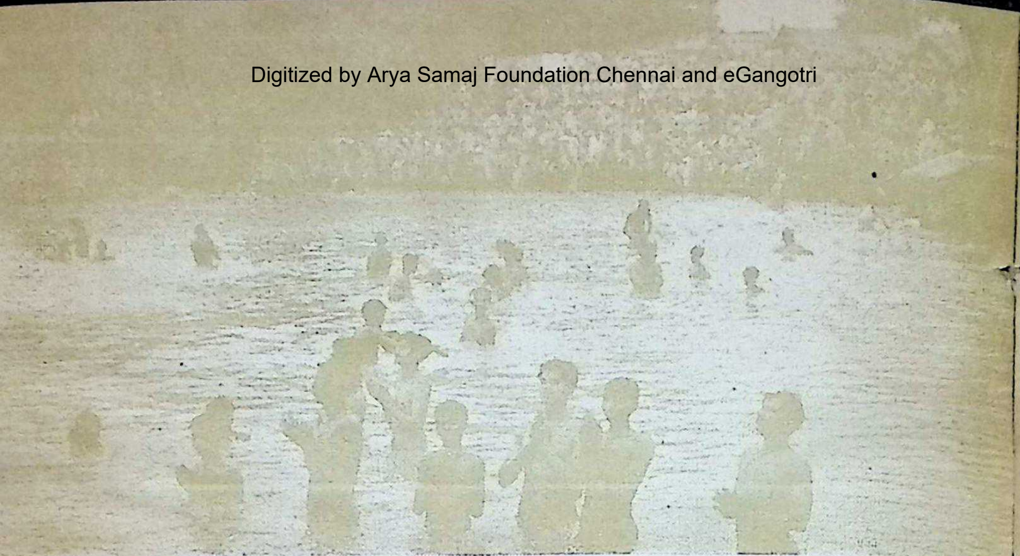

कुरुक्षेत्र में यात्रियों का गंगा-स्नान

के. एस. रामस्वामी

पशुपतिनाथ की यात्रा [२]

[यात्रा – डायरी]

आगरा देखने के बाद हम मथुरा और वृन्दावन पहुँचे। यह दोनों स्थान भगवान कृष्ण की बाललीला से संबंधित हैं। यहाँ की कण-कण भूमि में श्रीकृष्ण का बाल-जीवन रमा हुआ है। वृन्दावन में प्राचीन दर्शन केन्द्र स्थित है, जो अपने ढंग का देश में एक मात्र केन्द्र है। यहाँ आगरा और पंजाब विश्वविद्यालयों के अन्तर्गत दर्शन और संस्कृत में स्नातकोत्तर शोध का कार्य चलता है और रिसर्च स्कॉलर्स को पी. एच. डी. तथा डी. लिट्. की उपाधियाँ प्रदान की जाती हैं।

हमारी सांस्कृतिक-विकास यात्रा-पार्टी को नई-दिल्ली में २६ जनवरी को गण-राज्य दिवस परेड देखने का भी अवसर मिला, किन्तु हमने इसे राष्ट्रपति भवन से न देखकर विद्या भवन के दिल्ली स्थित केन्द्र के गीता हाल में टेलीविज़न पर देखा। इससे हमें २६ जनवरी के दिन की उस भयंकर ठंड से काफी राहत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही, जो दिल्ली में पिछले तीस वर्षों में सबसे अधिक पड़ी थी ।

तीन दिन दिल्ली में बिताने के बाद यात्रा-पार्टी ने कुरुक्षेत्र के लिए प्रस्थान किया, जिसके नाम से प्रत्येक हिंदू परिचित है। वास्तव में कुरुक्षेत्र का इतिहास भारत का इतिहास है। यह कहा जाता है कि कुरुक्षेत्र में सरस्वती के तट पर हर समय ऋषि-मुनियों का वेदपाठ गूंजा करता था, ब्रह्मा और देवगण यहाँ बड़े-बड़े यज्ञों में सम्मिलित होते थे और यहीं वसिष्ठ और विश्वामित्र ने ब्रह्मत्व की प्राप्ति की थी।

भाखरा नांगल बांध अगला स्थान था, जिसे देखने हम पहुँचे। यह भारत का सबसे ऊंचा बांध है और वह समय दूर नहीं है, जब इस बांध के कारण पंजाब, राजस्थान तथा इन राज्यों से मिले अन्य क्षेत्र संपन्नता का शिखर छूने लगेंगे। हमारे प्रधानमंत्री ने इस महान योजना को नये भारत के मंदिर के नाम से पुकारा है ।

पूर्व पंजाब, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश में समृद्धि का युग लाने की जिससे प्रत्याशा की जाती है उस बृहत् भाकरा नांगल योजना को देखने के बाद भवन की सांस्कृतिक विकास-यात्रा पार्टी ने सिक्खों के धार्मिक नगर अमृतसर में प्रवेश किया।

अमृतसर में हमारा यात्रा-संघ एक

राजधानी में गण-तन्त्र दिवस का जुलूस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन के लिए रुका। यह ३० जनवरी का दिन था जब हमने 'सर्वोदय दिवस' मनाया। ससे पहले ही यात्रिकों ने जालियाँवाला बाग देख लिया था। उन शहीदों के लिए हमारा हृदय गर्व से भर उठा था, जो देश को स्वतंत्र करने की अपनी साहसी माँग के कारण ही निर्दयता से मार दिये गये थे।

अमृतसर का स्वर्णमंदिर यहाँ सिक्खों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र है। अमृतसर सिक्ख-विश्वास का केन्द्रीय बिन्दु है जिसने अपने सिद्धान्त की सादगी और अविचल वीरता के कारण हमारे देश के इतिहास में सम्माननीय स्थान पाया है। अमृतसर का अर्थ है 'अमृत-सरोवर'। झील में स्वर्ण-मन्दिर का कम्पित प्रतिविम्ब एक देखनेवाला दृश्य है। इस मन्दिर की पहली मंजिल पर 'आदिग्रन्थ' रखा हुआ है। मन्दिर में कोई भी विधिवत् पूजन नहीं होता। सारे दिन भजन होते हैं, सब धर्मों के लोग इस मंदिर में आ-जा सकते हैं।

स्वर्ण-मंदिर, जिसे हरि-मंदिर भी कहते हैं, का अपना एक इतिहास है—मुगलों ने इसे बार-बार नष्ट किया, लेकिन सिक्खों ने अपनी बहादुरी से इसे दुबारा प्राप्त किया और एक बड़ा मूल्य चुका कर पवित्र वस्तु को दूषित करने का बदला लिया।

पहली फरवरी को हम हरद्वार पहुँचे। हरद्वार भारत के उन स्थानों में से है जिसे कोई भी धार्मिक हिन्दू गंगा में एक डुबकी लगाने के विचार से देखना चाहता है। गंगा के स्फटिक के समान स्वच्छ जल को देख कर ठण्ड के दिनों में भी स्नान का प्रलोभन हो आता है। हरद्वार में बहुत से आश्रम और मंदिर हैं।

हरद्वार और हृषिकेश से गर्वीले हिमालय को देखा जा सकता है, करीब दस मील पर जो भारत की प्राकृतिक सीमा के रूप में खड़ा है। हृषिकेश हिमालय का द्वार है। यात्रियों ने गीता-मंदिर, परमार्थ-आश्रम, जगद्गुरु-आश्रम और शिवानन्द आश्रम के दर्शन किये, वहाँ के प्रमुख व्यक्तियों से धर्म-वार्ता का लाभ मिला।

हरद्वार में संस्कृत-अध्ययन को बहुत प्रोत्साहन दिया जाता है। यात्रियों ने गुरुकुल काँगड़ी विश्वद्यालय को भी देखा जो सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय संस्था है।

अब हमें अयोध्या का भ्रमण करना था, कि हमारी रेलवे बोगी लखनऊ में कुछ घंटों के लिए रोक ली गयी। कुछ यात्रियों ने इस अवसर का लाभ लेकर उत्तरप्रदेश की राजधानी इस आकर्षक नगरी का दौरा किया। लम्बी चौड़ी सड़कों और उन्नत मकानोंवाला यह खूबसूरत नगर वास्तुकला की मुग़ल और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दू शैलियों का मिला हुआ रूप प्रस्तुत करता है।

फ़ैज़ाबाद स्टेशन पर उतरकर, यात्री साइकिल रिक्शा से राम के जन्म-स्थान अयोध्या गये। हमने पवित्र सरयू और राम के जीवन से सम्बद्ध कुछ स्थानों को देखा। लेकिन पुराणों में वर्णित वह अयोध्या, जिसमें दूध और मधु की नदियाँ बहती हैं, देखने पर कुछ और ही लगी। सारा इलाका गंदा था और वहाँ कुछ ही लोग समृद्ध मालूम दिये। श्रीराम की 'जन्म-भूमि' के मंदिर तक भी स्वच्छ नहीं थे। मुझे अचरज हुआ कि हिन्दुओं के ऐसे पवित्र स्थान को, राज्य-सरकार ने स्वच्छ और आकर्षक बनाने में क्यों नहीं कोई कदम उठाया। मन्दिरों के पास कोई साइनबोर्ड भी नहीं थे कि उनके सम्बद्ध महत्त्व को जाना जा सके। कुछ स्वयं-नियुक्त पथ-प्रदर्शकों की भीड़ वहाँ जरूर मिली, जो मंदिरों का दर्शन करने का आग्रह करते थे लेकिन देवी-देवता या स्थान के महत्व के बारे में एक भी शब्द नहीं कह सकते थे। वे केवल 'पैसा' चाहते थे।

श्रीराम का मन्दिर प्रेरणा का केन्द्र रहा, लेकिन शाम के समय वहाँ इतनी भीड़ थी कि कोई व्यवस्था न रह सकी। यात्रियों ने यही संतोष माना कि उस पवित्र मिट्टी पर उनके कदम पड़े जहाँ श्रीराम ने जन्म लिया और शासन किया, और सचमुच यह एक बड़ी बात थी।

इलाहाबाद अब हमारा अगला नगर था जहाँ हमें ठहरना था। इस नगर से हमें नेहरू-खानदान का विचार आता है जिन्होंने अपना जीवन देश के लिए समर्पित किया। यात्रियों ने नेहरू परिवार के वैभवशाली निवास, आनन्दभवन का निरीक्षण किया जो अब राष्ट्रीय सम्पत्ति है।

यात्रियों के लिए त्रिवेणी-संगम मुख्य आकर्षण की वस्तु है। यहाँ गंगा और यमुना जैसी महान नदियों का संगम होता है, भूगर्भित सरस्वती नदी का संगम भी यहाँ गंगा से कहा जाता है। संगम में स्नान पवित्र कार्य माना जाता है, यात्रियों ने वहाँ नाव से जाकर स्नान किया।

इसके बाद यात्रियों ने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी को देखा—यहाँ पर कई विभागाध्यक्षों से पार्टी के सदस्यों ने बातचीत की।

—क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[श्री रमण महर्षि का दर्शन......पृष्ठ १३ का शेष]

कुछ जानता है, ऐसी कल्पना करना भी मेरे लिए असम्भव था। रमण की बात सुन कर में अरुणाचल गया था केवल एक उद्देश्य को ले कर। पातञ्जल के योगदर्शन में सब कुछ पढ़ लेने पर भी उसकी साधना, जिस साधना के फलस्वरूप विभूति-लाभ होता है, उस प्रसंग में प्रैक्टिकल क्रिया के विषय में जो कुछ है, वह ग्रन्थ में एक सौ बार पढ़ने पर भी पाया नहीं जा सकता। उस सम्बन्ध में यदि स्पष्ट, प्रत्यक्ष कुछ शिक्षा का पथ हो तो, माथा नीचा कर कुछ दिन उनसे उपदेश ले साधना करूँगा। इससे अधिक और कोई भाव मेरे मन में न था। मैं ईश्वर-लाभ अथवा निर्विकल्प समाधि नहीं चाहता था—मेरे अन्तर की बात यही थी—वहाँ बैठे-बैठे मन ही मन इसी उधेड़बुन में व्यस्त था। मैं तब शक्ति चाहता था; तांत्रिक मत में जो सब शक्ति-लाभ होता है, मैं वही चाहता था। उस शक्ति को आयत्त कर लेने पर मनुष्य-समाज का बहुत कल्याण किया जा सकेगा, उसी से मेरा जीवन सार्थक होगा। यदि इन महात्मा के पास से उस सम्बन्ध में कोई निर्देश पाया जाय तो मेरा जन्म सार्थक हो जायेगा। यह चिन्तनधारा वहाँ उनके कक्ष में बैठे-बैठे ही मेरे भीतर चल रही थी। यह भी सोचा था कि यहाँ उपदेष्टा न मिलने पर तिब्बत जाऊँगा। वहाँ सुना था, महाशक्तिशाली, सिद्धयोगी हैं। उनमें से किसी एक को निश्चय ही पाऊँगा। अब जब उनकी ओर देखा तो, ठीक उसी समय उन्होंने पुनः एक वार मेरी ओर दृष्टिपात किया। मुझे लगा जैसे जो कुछ मैं सोच रहा हूँ, वे सब जानते हैं। किंतु यह बात केवल मन में उठी ही, विश्वास अभी नहीं हुआ था।

"उनके नेत्र विशाल नहीं थे, परन्तु वह दृष्टि अद्भुत थी; ऐसी तीक्ष्ण, अन्त-र्भेदी दृष्टि और कहीं नहीं देखी। मेरे लिए असह्य हो गया, और वहाँ बैठा न रह सका। उठ जाने की इच्छा प्रबल हो गयी, उठ ही पड़ा, जैसे किसी ने मुझे ठेल कर जबरदस्ती वहाँ से उठा दिया हो। बाहर आ गया, किन्तु आश्रम के बाहर नहीं; उनके कक्ष से तनिक दूर एक खुला, आंगन के समान हराभरा, पेड़-पौधों से पूर्ण स्थान है, वहीं खड़ा हो गया;—देखा—देखा वे भी बाहर आ गये हैं। जहाँ मैं खड़ा था, निकल कर सीधे वहीं चले आये।

"उनके पास आते ही मैंने प्रणाम करने के लिए सिर झुका कर हाथ बढ़ाये। वे सरक गये, मेरी पहुँच से बहुत दूर। मुझे लगा यह मेरे आत्म-अहंकार का दण्ड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। यह प्रथम अवसर है; इससे पूर्व मेरे अन्तर की बात कभी किसी के आगे प्रकट नहीं हुई, इसीलिए दण्ड भी नहीं पाया। वे अब भी बात नहीं कर रहे थे। जब मेरा प्रणाम ग्रहण न किया और मैंने इससे आघात पाया, उस समय उन्होंने मेरी ओर देखा था। उस दृष्टि में करुणा थी। अब मुझे कोई सन्देह न रहा कि वे अन्तर्यामी हैं।

"वे मेरा हाथ पकड़ कर चलने लगे। एक पत्थर बै ने के लिए पड़ा था, पास ही एक छायादार वृक्ष था; वहाँ मुझे बिठा दिया, स्वयं भी बैठ गये। साथ ही साथ मेरे अन्तर में भाषा फूट उठी— जैसे उन्होंने प्रश्न किया हो—इतना अहं लेकर शक्ति चाहते हो, वह शक्ति किस काम की होगी? इसका कोई उतर मेरे पास न था। वे समझ गये। जब मैं स्थिर हुआ तो बोले—'प्रथम आत्मसाक्षात्कार फिर और कुछ चाहने वा पाने की बात।'

'मैंने उनकी बात को ग्रहण कर लिया, मन प्राण में ले लिया। बोला—

'मैं वही करूँगा, कैसे तपस्या आरम्भ करूँ बता दें।'

'तपस्या नहीं करनी होगी, यह तो जीवन का सहज धर्म है।'

'क्या बिना तपस्या के ही?'

'हाँ, तपस्या करने की प्रवृत्ति ही प्रतिक्रिया का फल है, वह पथ ठीक नहीं, सहज पथ से आओ।'

'यह सत्य मैंने उनके कथन के साथ ही साथ अनुभव कर लिया। मेरी उस समय की अनुभूति कहने की वस्तु नहीं।

'कुछ क्षण पश्चात् महर्षि बोले,— 'तपस्या करना कौन चाहता था?'

मैंने तत्क्षण उत्तर दिया,—'मैं।'

'यह मैं कहाँ है?'

'निज बोध के रूप में वह 'मैं' रहता है।'

'शास्त्र की बात छोड़ कर सहज अनुभूति से बोलो, कहाँ, किस अंश में वह 'मैं' रहता है?'

'मुझे कुछ बात न सूझी। उन्होंने सहायता की, केन्द्र को स्पर्श कर के। सब एकदम सहज, सरल हो गया। मेरा शरीर स्थिर हो गया, मैं केन्द्रस्थ हो गया। अपने 'मैं' को लेकर। क्रम से ऊर्ध्वगति प्राप्त हो गयी। कुछ क्षण पश्चात्—देखा, वैसे ही सामने खड़े हैं। बोले,—

'वहीं ध्यान करना होगा और कोई कर्म नहीं। वह 'मैं' ही तुम्हारी चिन्ता, ध्यान एवं समाधि का विषय है। उसी से सब, सभी आयेगा, कामना की जो-जो श्रेष्ठ वस्तु है।'

"मैंने आसन नहीं छोड़ा। चले जाने के लिए मुड़ने से पूर्व उन्होंने तिरछी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्टि से मेरी ओर देख कर कई अचूक बातें कहीं,–

"'मैं' क्या है और क्यों है, इसीको लेकर धर्मानुसन्धान करना होगा; यही यहां का सर्वश्रेष्ठ विलास है। यह विलास उसी जगन्मय परमात्मा के विलास का अनुगर्मी है; चिरन्तन, अनन्तकाल से अविभक्त; केवल यही एकमात्र सत्य है। अनुभूति फूटने पर साधक जान जाता है कि तत्त्व की दृष्टि से यही गुह्यतम, गम्भीरतम सारतत्त्व है जो सब प्राणियों में सञ्चारित हो कर सब को प्राणमय एवं आनन्दमय रखता है। इसी से सभी जीवकोटि अपने अस्तित्व को ले कर दौड़धूप कर रहे हैं। बाह्य इन्द्रिय-भोग के प्रभाव से इसे सहजभाव से ग्रहण न कर सकने पर भी इसी के प्रभाव से अनुप्राणित, यहाँ तक कि जर्जरित हो कर रहते हैं।

"यही आकर्षण है उस परमतत्त्व और जीव में। यह आकर्षण और विकर्षण अविराम चलता है। यही आकर्षण मनुष्य मनुष्य में, मनुष्य और पशु में, मनुष्य और सभी जलचर, स्थलचर, नभचर जीवों में, वृक्षलताओं में एवं अन्तरिक्ष में विराजमान है, प्रत्येक अणुपरमाणु से लेकर सृष्टि के स्थूल वं सूक्ष्म सब स्तरों में प्रसारित है। यही वह मूल तत्त्व है जिसके द्वारा परमात्मा के अस्तित्व की अनुभूति होती है। यही एकमात्र सार की बात है।'

"एक अपूर्व आनन्द की सिहरन मेरे अन्तर में दौड़ गयी, उन की बात सुनते सुनते मुझे भी उस सत्य तत्त्व ने स्पर्श कर लिया। मैं चुपचाप स्थिर समाहित बैठा रहा।"

*

भारतीय विद्या भवन, बम्बई–७

[सरल-संस्कृत-परीक्षा-विभाग]

आगामी परीक्षाएं

परीक्षा – दिनाङ्क ३, ४ अक्टूबर, १९६४ ई.
आवेदन – पत्र १४ अगस्त. १९६४
प्रार्थना – पत्र ४ अगस्त, १९६४
(परीचय-कोविद के लिए) परीक्षामन्त्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

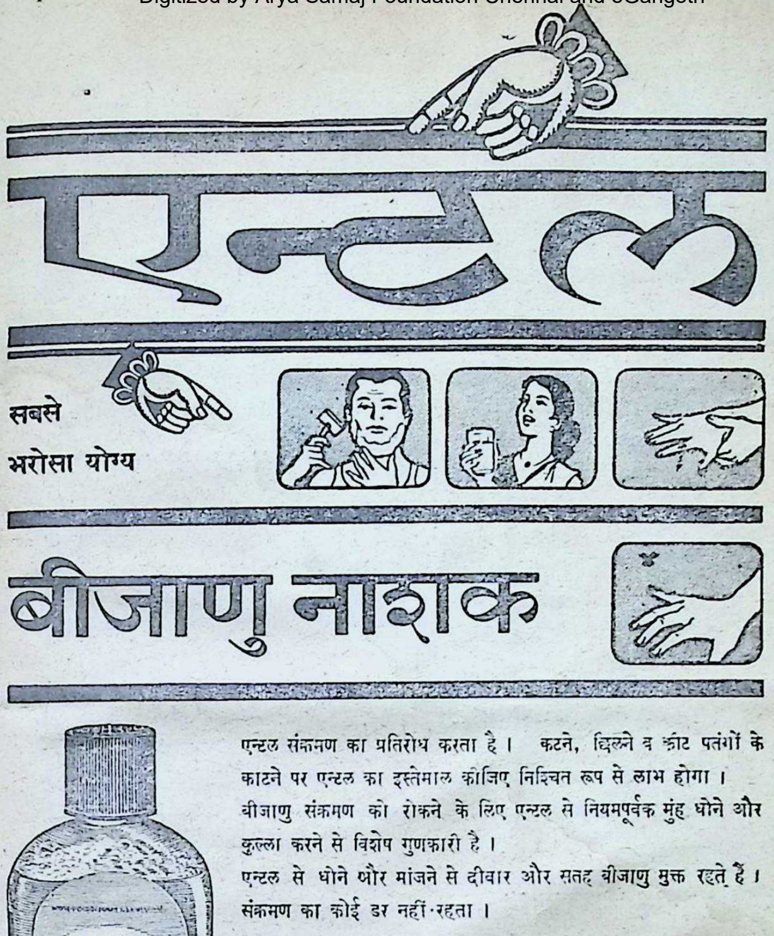

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

जनक दवे
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसन्नमुखी प्रतिभा के धनी : डॉ. हरिवल्लभ भायाणी

गुजराती साहित्य सभा ने 'रणजीतराम सुवर्ण चंद्रक' प्रदान कर जो सर्वोच्च सम्मान डा. भायाणी को दिया है वह भारतीय विद्या भवन के लिए एक विशेष गौरव और आनन्द की वस्तु है। भवन के भारतीय विद्याओं के संशोधन विभाग, तथा गुजराती और प्राकृत में पी. एच. डी. के मार्गदर्शक का उनका कार्य जितना स्तुत्य है उतना ही स्तुत्य और लोकप्रिय है, उनका सरल और हँसमुख स्वभाव। जितना उत्तुंग उनका पांडित्य है, उतना ही अगाध है उनका प्रेम और सरल व्यक्तित्व। प्रस्तुत लेख में इन्हीं दो चारित्रिक विशेषताओं की झांकी आपको मिलेगी।

संस्कृत, प्राकृत,, अपभ्रंश, और प्राचीन गुजराती के प्रकाण्ड विद्वान डॉ. हरिवल्लभ भायाणी का सरल और प्रसन्न वदन देखकर कोई नहीं कहेगा कि वे एक शुष्क और गम्भीर भाषाशास्त्री हैं। इसके विपरीत वे इतने स्नेही और मौजी जीव हैं कि उनके आसपास युवा रसिक विद्यार्थियों का सदा जमघट लगा रहता है। साहित्य और साहित्य जगत के विषय में नया कुछ जानने की इच्छा रखने वाले सदा ही उनसे मिला करते हैं। किसी को सर्जन अथवा विवेचना के विषय में कोई नया प्रश्न पूछना हो तो वह तत्काल भायाणी साहब के पास बिना हिचक के पास पहुँच जाता है और उसे अपने प्रश्न का सुखद समाधान मिल जाता है।

मार्मिक विनोद तो डॉ. भायाणी की विशेषता है कभी वे अर्थ गम्भीर वाक्य कहते हैं तो कभी ऐसा अर्थ करते हैं कि रोते हुए आदमी को भी हंसी आ जाय। कई बार सम्मेलनों, परिषदों, मुशायरों अथवा महफिलों में जब डॉ. भायाणी बैठे होते हैं तो उनके आसपास रसिक समुदाय एकत्र हो जाता है।

इस सरल और विनोदी प्रकृति के भायाणी ही क्या बी. ए. और एम. ए. में प्रथम श्रेणी में आनेवाले भायाणी हैं ? ऐसा प्रश्न सहज ही उपस्थित होता है। उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम्पेरेटिव फाइलोलॉजी' में एम.ए. किया। 'वाग् व्यापार' में संग्रहीत उनके लेखों तथा अन्य कई लेखों में, जो अभी ग्रन्थरूप में प्रकट नहीं हुए हैं, उनका भाषा शास्त्रीय पाण्डित्य प्रकट होता है। मुनि जिन विजय की प्रेरणा से उन्होंने प्राकृत में रस लिया। उनका 'पउमचरिउ' का प्रथम भाग पी. एच डी. के महानिबन्ध के रूप में प्रकट हुआ था; परन्तु डाक्टरेट प्राप्त करने पर ही उनकी यह रुचि समाप्त नहीं हुई, क्योंकि मात्र इस उपाधि के लिए ही उन्होंने अभ्यास नहीं किया था। उन्होंने अपना संशोधन कार्य जारी रखा और 'पउम-चरिउ' के दूसरे तथा तीसरे भाग भी प्रकट हुए। फलस्वरूप बारह हजार श्लोकों की विस्तृत जैन कथा संशोधितरूप में हमें प्राप्त हुई। आचार्य हेमचन्द्र के अपभ्रंश व्याकरण का भी अनुवाद टीका तथा टिप्पणी के साथ उन्होंने प्रकाशित किया और मुनि जिन विजयक की कृति 'सन्देशरासक' का सम्पादन किया। अम्वालाल जानी की सत्रह वार्ताओं तथा शामल की 'सिंहासन बत्तीसी' की १८ से २२ तक की वार्ताओं का सम्पादन भी उन्होंने किया; साथ ही 'सिंहासन बत्तीसी' की परम्परा पर भी प्रकाश डाला। अम्बालाल पटेल ने 'सिंहासन बत्तीसी' की बत्तीसवीं कथा का सम्पादन किया, उसमें भी श्री भायाणी जी का 'वैताल पच्चीसी' की पूर्व परम्परा पर लेख पाया जाता है। श्यामल की अन्य कृतियों में रुस्तम नो शलोको' और 'मदन मोहना' का भी उन्होंने सम्पादन किया है और आमुख भी लिखा है। उनकी नवीनतम पुस्तक 'शब्द-कथा' में उनकी विनोदी और गम्भीर दोनों ही प्रकृतियों का दर्शन होता है।

श्री भायाणी

गुजराती और प्राकृत में पी. एच. डी. करने-वाले विद्यार्थी भायाणी साहब का मार्ग-दर्शन प्राप्त करने के लिए सदा आतुर रहते हैं। जब ये मार्ग-दर्शन करने बैठते हैं तो अपने विषय की व्यापकता और गहराई में इतने डूब जाते हैं कि कई बार आनंद समाधि का अनुभव होता है।

डा. भायाणी की गौर देह, भूरी आँखें, असमय में ही पके बाल और हृदय की स्वच्छता प्रकट करती हुई हँसमुख छवि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

113531

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिण-भारत की सांस्कृतिक विकास यात्रा

भारतीय विद्या भवन के तत्त्वावधान में आयोजित 'सांस्कृतिक विकास यात्रा' के अन्तर्गत गत २४ अप्रैल को द्वितीय यात्रा, 'दक्षिण-भारत यात्रा' के लिए यात्री-दल ने प्रस्थान किया। इस यात्रा दल में महिलाओं सहित कुल २५ सदस्य हैं। यह यात्रा-दल मद्रास, केरल तथा मैसूर राज्य के सभी तीर्थ स्थानों एवं औद्योगिक विकास क्षेत्रों का भ्रमण करेगा।

उसी दिन प्रातःकाल भवन में भारतीय विद्या भवन की उपाध्यक्षा श्रीमती लीलावती मुन्शी की अध्यक्षता में यात्रियों एवं कुछ सम्माननीय सदस्यों का एक स्नेह-सम्मेलन हुआ। भगवान विघ्नेश्वर की पूजा एवं आचार्य भाईशंकर पुरोहित द्वारा वैदिक प्रार्थना व भजन प्रस्तुत किये जाने के बाद सभी यात्रियों ने अपना परिचय स्वयं दिया। श्रीमती मुन्शी ने संक्षेप में इस प्रकार की यात्राओं के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला और एक सुखद यात्रा की कामना प्रकट की। इस अवसर पर भवन के मानार्ह नियामक श्री जयन्तकृष्ण ह. दवे एवं प्रा. पी. शंकरनारायणन् ने भी इस प्रकार के तीर्थ-यात्राओं के आयोजन के महत्त्व पर विद्वतापूर्ण प्रकाश डाला।

यात्रा दल ने उसी दिन पूर्व के निश्चयानुसार रात्रि के १०.१५ बजे मद्रास मेल द्वारा प्रस्थान किया। यात्रियों के मित्रों, सम्बन्धियों और भवन के सदस्यों ने बड़ी संख्या में उपस्थित होकर प्रसन्नता के वातावरण में उन्हें विदा किया।

*

सहज ही मन को आकर्षित करती है। मुझे तो इसी बात का संशोधन करना है कि डा. भायाणी गुस्सा कब होते हैं। उनके व्यक्तित्व के दो पहलू हैं। उनकी अप्रतिम प्रतिभा का परिचय अनेक व्यक्तियों को हुआ है और उनका पाण्डित्य एवं विद्वत्ता अति व्यापक है। 'वर्ल्ड ऑरिएण्टल कान्फ्रेंस' के जैन विभाग के प्रमुख का पद भी उन्होंने सुशोभित किया था। और अब गुजराती साहित्य सभा जब उन्हें 'रणजीतराम सुवर्ण चन्द्रक' प्रदान करती है तो कौन धन्य होता है? डॉ. भयाणी कि स्वयं चन्द्रक? जो भी हो, इतना तो हम निस्संकोच कह सकते हैं कि इस सुखद समाचार से सारा गुजरात ही हर्षित हो उठा है।

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन के लिए बम्बई से प्रकाशित व मुद्रित तथा एसोसिएटेड एडवर्टाइजर्स एण्ड प्रिन्टर्स, तारदेव, बम्बई ३४ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सफेद बाल क्यों ?

हजारों व्यक्ति गलती नहीं कर सकते !

इस सुनहरे मौके का लाभ उठाइये और अपने सफेद बालों को कुदरती रंग का बनाइये।

देवियों और सज्जनों, अपने सफेद बालों को देख कर बूढ़ा न समझें और न परेशान हों ! ऐसा मौका आने ही न दीजिये।

काफी समय तक खोज करने के बाद मे. पोप्युलर ड्रग्स कं., बम्बई ने **एन्सोला** कन्सन्ट्रेटेड हेयर डार्कनर को प्रस्तुत किया है जो आपके सफेद बालों को कुदरती रंग दे कर सामाजिक तथा व्यापारिक सभी स्थानों में आपके व्यक्तित्व को निखारेगा। **एन्सोला कन्स.** ग्रीस रहित और सुगंधित है। **एन्सोला कन्स.** के व्यवहार से आपके सफेद बालों को कुदरती रंग मिलेगा। कुछ ही दिनों के व्यवहार का परिणाम साफ दिखाई पड़ेगा।

आपको फिर से बूढ़ा न होना पड़ेगा। जब आपके बालों का रंग कुदरती हो जाय तो आप इतना ही करें कि कभी कभी **एन्सोला कन्स.** को लगायें। बस आपके बालों का कुदरती रंग बना रहेगा। यह कितनी बड़ी बात होगी जब आप यह जानेंगे कि आप के व्यक्तित्व पर उम्र का कोई असर नहीं पड़ा है और आप पहले के से जवान ही बने हैं।

आज जरूरत है **जवान बनने और** जवान दिखने की और इसी कारण सब जगह सब लोग **एन्सोला कन्स.** को एक 'वरदान' के रूप में मानते हैं। और इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं कि **एन्सोला** की प्रशंसा में देश के हर कोने से कृतज्ञता भरे धन्यवाद के पत्र हर डाक में हमें मिलते हैं।

अपने व्यक्तित्व को शानदार बनाने के लिए आज ही से **एन्सोला** लगाना शुरू कर दीजिये। जितनी जल्दी आप शुरू करेंगे उतनी ही जल्दी लाभान्वित होंगे।

हमारी इस अनुपम योजना **"सन्तुष्ट होने पर पैसा दें"** के अन्तर्गत आपको केवल अपने सफेद बालों से ही छुटकारा पाना है। कृपया अपना आर्डर मे. बेलीराम चिमनलाल एण्ड कं., ३०८ प्रिन्सेस स्ट्रीट बम्बई २ को भेजें जो आपको **एन्सोला कन्स.** की एक सप्ताह तक चलनेवाली मुफ़्त सेम्पल शीशियों सहित एक बड़ी पूरी साइज की शीशियों का बक्स वी. पी. पी. से भेज देंगे। पहले मुफ़्त नमूने की शीशियों को इस्तेमाल कीजिये और जब आप पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हो जांय तभी **एन्सोला कन्स.** का बक्स खोलिये और उसका इस्तेमाल कीजिये। यदि नमूने की शीशियों के इस्तेमाल से आप पूरी तौर से सन्तुष्ट नहीं हैं तो कृपा कर **एन्सोला कन्स.** की फुल साइज की शीशी का बक्स बग़ैर खोले वापस भेज दीजिये। भारत भर में कहीं भी सभी आर्डर वी. पी. पी. से भेजे जायेंगे। मूल्य रु. १०) (पैकिंग, डाकखर्च और टैक्स सहित)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

BHARATI, May 17, 1964 Regd. No. 742…
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतुल

• रंग

• रसायन

• और औषधि

अ
अतुल
ATUL

अतुल प्रॉडक्ट्स लि.

अतुल, (वाया बलसार)

पश्चिम रेलवे.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
113531
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar